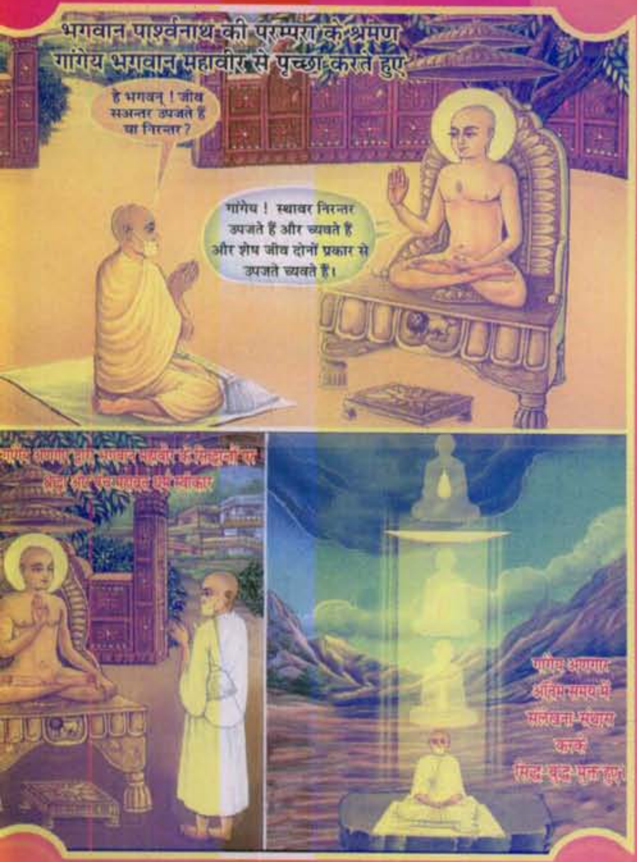

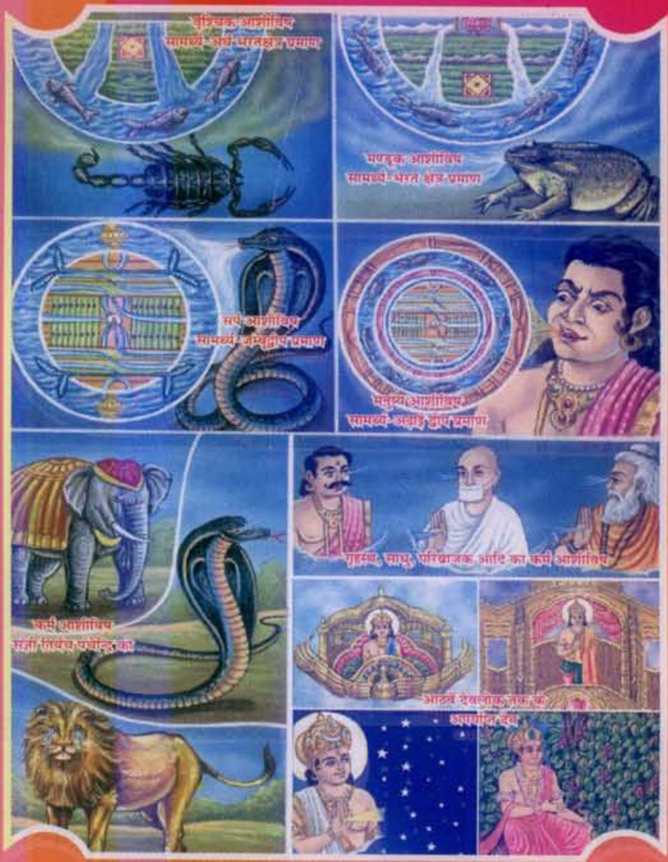

3

सचित्र

श्री भगवती सूत्र

प्रवर्तक श्री अमर मुनि

ILLUSTRATED

SHRI BHAGWATI SUTRA

Pravartak Shri Amar Muni

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रस्तुत पुस्तक श्री भगवती सूत्र

जैन आगमों में सर्वाधिक महत्त्व प्राप्त विशालकाय आगम का नाम है श्री भगवती सूत्र। प्रसिद्ध है कि इसमें जैन तत्त्वविद्या से सम्बन्धित विविध विषयों के ३६ हजार प्रश्नों का भगवान महावीर द्वारा प्रदत्त युक्ति पूर्ण समाधान है। ज्ञान-विज्ञान की अनेक शाखाओं के रहस्य पूर्ण सिद्धान्तों का वर्णन इस आगम में उपलब्ध है।

माना जाता है, विश्वविद्या की ऐसी कोई भी शाखा नहीं होगी, जिसकी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में चर्चा इस आगम में नहीं हो। दर्शन, अध्यात्म-विद्या, पुद्‌गल व परमाणु सिद्धान्त आदि सैकड़ों महत्त्वपूर्ण विषयों का वर्णन तथा उनका अनेकान्त शैली में समाधान इस आगम के अनुशीलन से प्राप्त हो जाता है।

आगमों के गम्भीर अध्येता प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म. ने टीका व अन्य अनेक ग्रन्थों के आधार पर इस आगम के गम्भीर विषयों का अपनी सरल सारपूर्ण शैली में विवेचन प्रस्तुत कर 'सागर' को 'गागर' में भरने का प्रयत्न किया है।

इस आगम का प्रकाशन लगभग ६ भाग में सम्पन्न होने की सम्भावना है। प्रथम तथा द्वितीय भाग पूर्व में प्रकाशित हो चुके हैं। जिसमें प्रथम शतक से आठवें शतक के प्रथम उद्देशक तक का समावेश है। इस तृतीय भाग में आठवें शतक के द्वितीय उद्देशक से नवें शतक तक लिया गया है।

This Book Bhagavati Sutra

The most important and voluminous among the Jain Agams is **Shri Bhagavati Sutra**. It is well known that this work contains logical answers given by Bhagavan Mahavir to 36,000 questions on a variety of ontological topics. This Agam contains discussions about many important and obsours principles from many branches of knowledge and special studies.

It is believed that there is no branch of universal knowledge that has not been discussed directly or indirectly in this Agam. Information about numberous subjects including philosphy, spiritualism, matter and particle theory can be acquired by studying this Agam.

Pravartak Shri Amar Muni ji, a profound scholar of Agams, has tried to condense a sea in a drop by presenting the complex topics of this Agam in a simple and lucid style with the help of commentaries and many other reference works.

- भगवान महावीर ने जिन शाश्वत सत्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया, वे आज के वैज्ञानिक युग में सर्वाधिक प्रासंगिक है। जैसे—किसी भी वस्तु को सर्वांग दृष्टि से समझने के लिए अनेकान्तदृष्टि और उसका सम्यक् स्वरूप कथन करने के लिए नय-निक्षेप की सापेक्षिक स्याद्‌वाद वचन-प्रणाली।
- धर्म, अधर्म, जीव, अजीव, पुद्‌गल-स्वरूप, परमाणु, लेश्या, तप-विधान, गति-सहायक द्रव्य धर्मास्तिकाय, कालचक्र-परिवर्तन का वर्णन, कर्म-सिद्धान्त, वनस्पति में जीव, पर्यावरण, मनोवर्गणा का स्वरूप, विभिन्न जीव योनियाँ आदि विषयों में हो रहे जीव-विज्ञान व भौतिक-विज्ञान सम्बन्धी अधुनातन अनुसंधान इन सबकी सत्यता सिद्ध करते हैं।
- भगवान महावीर के इन शाश्वत सिद्धान्तों को उन्हीं की भाषा व प्रतिपादन शैली में पढ़ने-समझने के लिए सचित्र **भगवतीसूत्र**, मूल अर्धमागधी, हिन्दी तथा अंग्रेजी अनुवाद के साथ आपके हाथों में प्रस्तुत है।
- The eternal and true principles Bhagavan Mahavir propagated are completely relevant in the modern scientific world. One example is the non-absolutistic viewpoint (Anekantavaad) to fully understand a thing and the relative methodology of Syadvad using naya and nikshep (standpoint and attribution) to realistically describe a thing.
- Virtue, vice, soul, non-soul, matter and its form, ultimate particle, soul complexion, codes of austerity, entity of motion, time-cycle and its changes, theory of karma, life in plants, environment, classification of mind and its activities, different genuses of life are being confirmed and authenticated by the latest researches in biology and physics.
- We place in your hands Illustrated **Bhagavati Sutra** (original Ardhamagadhi text with Hindi and English translations, elaboration and multicolored illustrations) to enable you to read and understand these eternal principles of Bhagavan Mahavir in his own language and style.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र

श्री भगवती सूत्र

भाग 3

प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि

LLUSTRATED

SHRI BHAGWATI SUTRA

Pravartak Shri Amar Muni

PART 3

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सादर भेंट

जय आत्म

सप्रेम भेंट

जय पद्म

जय अमर

जैनागम रत्नाकर आचार्य सम्राट पू. श्री आत्मा राम जी म. एवं राष्ट्र सन्त उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक भण्डारी श्री पद्म चन्द्र जी म. की पुण्य स्मृति में शासन शिरोमणि साहित्य सम्राट जैन धर्म दिवाकर प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म. द्वारा संपादित एवं पद्म प्रकाशन द्वारा विश्व में प्रथम बार प्रकाशित (सचित्र, मूल, हिन्दी, इंगलिश अनुवाद सहित) जैनागमों का सैट सादर सप्रेम भेंट ।

-: भेंट कर्ता :-

पद्म प्रकाशन

कार्यालय :- पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली - 110040 (भारत)
संपर्क सूत्र :- श्री शिव कुमार जैन (मंत्री) मोब: 098101-64071, 011-22783740
Website : www.jainvision.com E-mail : padamparkashan@gmail.com

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम गणधर भगवत् सुधर्मा स्वामी प्रणीत पंचम अंग

सचित्र
श्री भगवती सूत्र (व्याख्याप्रज्ञप्ति)
(तृतीय खण्ड)

मूल पाठ, हिन्दी-अंग्रेजी भावानुवाद, विवेचन तथा रंगीन चित्रों सहित

प्रधान सम्पादक

जैनधर्म दिवाकर अध्यात्म युगपुरुष

प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी महाराज

सह-सम्पादक

श्री वरुण मुनि `अमर शिष्य'

श्रीचन्द सुराना `सरस'

प्रकाशक

पद्म प्रकाशन, पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली-40

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. सा. द्वारा
सम्प्रेरित सचित्र आगममाला का तेवीसवाँ पुष्प

❑ सचित्र श्री भगवती सूत्र (व्याख्याप्रज्ञप्ति) (तृतीय खण्ड)

❑ *प्रधान सम्पादक :*
जैनधर्म दिवाकर अध्यात्म युगपुरुष
प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी महाराज

❑ *सह-सम्पादक :*
श्री वरुण मुनि 'अमर शिष्य'
श्रीचन्द सुराना 'सरस'
संजय सुराना

❑ *अंग्रेजी अनुवादक :*
सुरेन्द्र बोथरा, जयपुर

❑ *प्रथमावृत्ति :*
वि. सं. २०६५, कार्तिक
ईस्वी सन् २००८, नवम्बर

❑ *चित्रांकन :*
डॉ. त्रिलोक शर्मा

❑ *प्रकाशक एवं प्राप्ति-स्थान :*
पद्म प्रकाशन
पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली-११० ०४०

❑ *मुद्रक एवं वितरक :*
संजय सुराना
श्री दिवाकर प्रकाशन
A-७, अवागढ़ हाउस, एम. जी. रोड, आगरा-२८२ ००२
फोन : ०५६२-२८५११६५, मो. : ९३१९२०३२९१

❑ *मूल्य :*
छह सौ रुपया मात्र (६००/- रुपये)

© *सर्वाधिकार :* पद्म प्रकाशन, दिल्ली

Website : /http/jainvision.com
E-mail : padamprakashan@gmail.com

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

THE FIFTH ANGA WRITTEN BY THE FIFTH GANADHAR SHRI SUDHARMA SWAMI

ILLUSTRATED

SHRI BHAGAVATI SUTRA

(VYAKHYA PRAJNAPTI)

(THIRD VOLUME)

Original text with Hindi and English translations, elaboration and multicoloured illustrations

❐ EDITOR-IN-CHIEF ❐

Jain Dharma Diwakar Adhyatma Yugapurush

Pravartak Shri Amar Muni ji Maharaj

❐ ASSOCIATE-EDITOR ❐

Shri Varun Muni "Amar Shishya"

Srichand Surana 'Saras'

PUBLISHERS

PADMA PRAKASHAN, PADMA DHAM, NARELA MANDI, DELHI-40

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The twenty-third number of the Illustrated Agam Series Inspired by Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padmachandra ji M. S.

- ILLUSTRATED SHRI BHAGAVATI SUTRA (VYAKHYA PRAJNAPTI) **(Third Volume)**

- *Editor-in-Chief*
  Jain Dharma Diwakar - Adhyatma Yugapurush
  Pravartak Shri Amar Muni ji Maharaj

- *Associate-Editor*
  Shri Varun Muni "Amar Shishya"
  Srichand Surana 'Saras'
  Shri Sanjay Surana

- *English Translator*
  Surendra Bothara, Jaipur

- *First Edition*
  Kartik, 2065 V.
  November, 2008 A. D.

- *Illustrations*
  Dr. Trilok Sharma

- *Publishers and Distributors*
  Padma Prakashan
  Padma Dham, Narela Mandi, Delhi-110 040

- *Printers & Distributors*
  Sanjay Surana
  Shree Diwakar Prakashan, Agra
  A-7, Awagarh House, Opp. Anjna Cinema, M. G. Road,
  Agra-282 002. Ph. (0562) 2851165, Mob. : 9319203291

- *Price*
  Six Hundred Rupees only (Rs. 600/-)

© *Copyright :* Padma Prakashan, Delhi
Website : /http/jainvision.com
E-mail : padamprakashan@gmail.com

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राष्ट्रसन्त, उत्तर भारतीय
प्रवर्त्तक अनन्त उपकारी
पूज्य गुरुदेव
भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी
महाराज
की
पुण्य स्मृति में

सादर सविनय भेंट

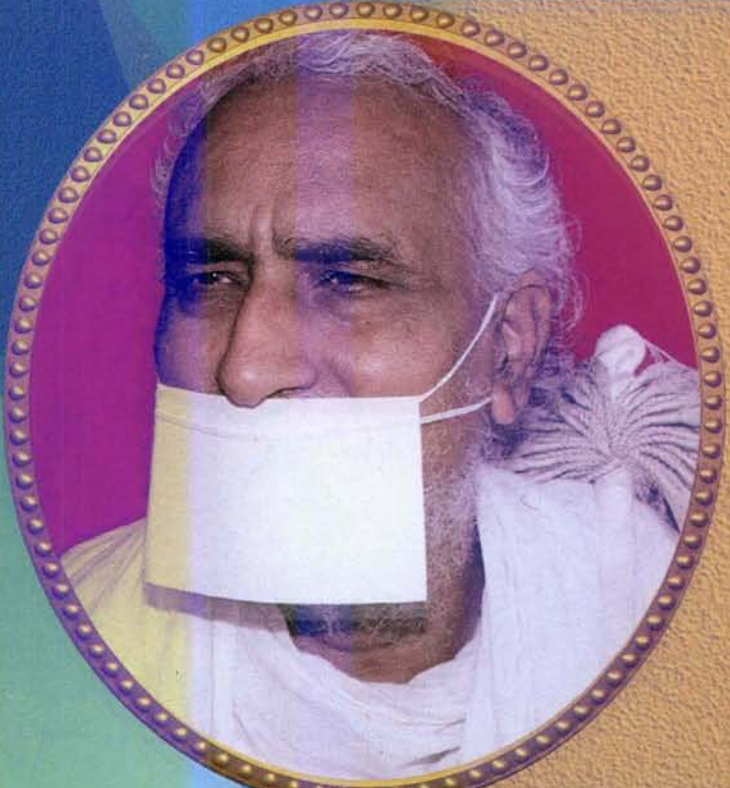

प्रवर्त्तक अमर मुनि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रुत सेवा में समर्पित गुरुभक्त

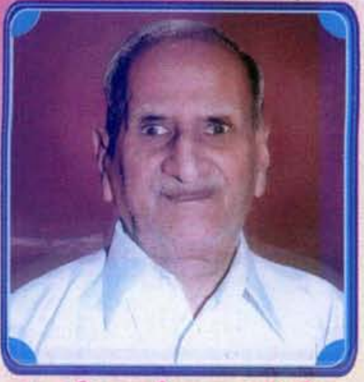

ला. श्री फकीरचन्द जी जैन
मानसा

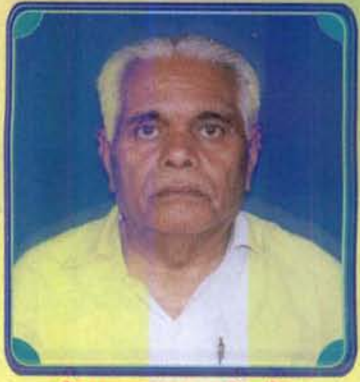

श्री शामलाल जी जैन
शास्त्री नगर, दिल्ली

श्री अभयकुमार –रेणु जैन
कोहाट इन्क्लेव, दिल्ली

श्री विरेन्द्रजी – नीरू अग्रवाल
खन्ना मण्डी

श्री अनिल जी – मंजू जैन
विश्वा अपार्टमेन्ट, दिल्ली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगम प्रकाशन के आधार स्तंभ

श्री त्रिलोकचन्दजी - विद्यावती जैन
(कसूर वाले) लुधियाना

श्री उग्रसैन जी - सुन्दरी देवी जैन
विवेक विहार, दिल्ली

श्री जयभगवान जी - विद्यादेवी जैन
योजना विहार, दिल्ली

श्री सुभाषचन्द जी - शशि जैन
विवेक विहार, दिल्ली

श्री सुशील कुमार जी - कौशल्या देवी जैन
योजना विहार, दिल्ली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगम प्रकाशन में सहयोगी गुरुभक्त

स्व. श्री दुर्गाचरण जी–स्वराजवती जी गोयल
मण्डी गोविंदगढ़

श्री सुंदरपाल जी–नीरू जैन
मंडी गोविंदगढ़, पंजाब

श्री अजय जी – स्वाती जैन
रोहिणी, दिल्ली

श्री आनंद जी–उपासना जैन
पानीपत

श्री सुभाषचन्द जी – सुलोचना जैन
हुड्डा कॉलोनी, पानीपत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

आध्यात्मिक जगत में जैनागम का वैशिष्ट्य सर्वविदित है। जैनागम सर्वजन हिताय है। यह प्राणीमात्र को सत्पथ पर ले जाते हुए सात्विक व आध्यात्मिक जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करता है। यह परम प्रसन्नता का प्रसंग है कि जैनागम के ग्यारह अंगों में पाँचवें अंगसूत्र '**भगवई**' (**वियाहपण्णत्ति**) (व्याख्या प्रज्ञप्ति) का तीसरा खण्ड सचित्र अंग्रेजी-हिन्दी भाषान्तर के साथ आपके हाथों में है।

सत्रह वर्ष पूर्व हमने सचित्र हिन्दी एवं अंग्रेजी भावानुवाद के साथ आगमों के प्रकाशन का जो भागीरथी कार्य प्रारम्भ किया था, वह अब अपने लक्ष्य के निकट पहुँचता हुआ दिखाई दे रहा है। यह सचित्र आगममाला का तेईसवाँ पुष्प है। अब तक इसके अन्तर्गत चौबीस सचित्र आगम व कल्पसूत्र प्रकाशित हो चुके हैं।

सन् 2005 में भगवती सूत्र का प्रथम भाग (शतक 1 से 4 तक) और सन् 2006 में द्वितीय भाग (शतक 5 से 7 व 8वें शतक के प्रथम उद्देशक तक) प्रकाशित हुआ था। अब इस तृतीय भाग में शतक 8 के द्वितीय उद्देशक से सम्पूर्ण नवें शतक तक की सामग्री गुम्फित है। अगले तीन भागों में इस विशाल आगम को सचित्र प्रस्तुत कर इसे सम्पूर्ण करने का सार्थक प्रयास रहेगा।

परम पूज्य गुरुदेव राष्ट्रसंत भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. सा. के आशीर्वाद और प्रबल प्रेरणा से आगमों के मर्मज्ञ साहित्य सम्राट प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म. सा. श्रुत सेवा के इस महान कार्य में अपने सम्पूर्ण मनोयोग से समर्पित हैं। उनके जीवन का लक्ष्य है कि वीर प्रभु की यह पावन वाणी जन-जन तक पहुँचे, इसलिए उन्होंने आगमों के अंग्रेजी अनुवाद और चित्रण का यह अभिनव एवं ऐतिहासिक कार्य सम्यक् श्रम के साथ सुसम्पन्न किया है। अब सर्वत्र इस महत् कार्य की प्रशंसा होने लगी है। जैन साहित्य के इतिहास में सचित्र आगम प्रकाशन का यह प्रथम प्रयास है।

सचित्र आगम प्रकाशन के इस कार्य में गुरुदेव के अंतेवासी शिष्य युवा मनीषी आगम रसिक श्री वरुण मुनि जी म. भी समभागी बने हुए हैं। सह-सम्पादक में साहित्यकार श्री संजय सुराना और अंग्रेजी अनुवाद में श्री सुरेन्द्र कुमार जी बोथरा भी अनवरत श्रम कर रहे हैं। चित्रकार श्री त्रिलोक शर्मा का सहयोग भी स्मरणीय है।

अनेक उदारमना गुरुभक्तों ने सदा की भाँति ही अपने परिश्रम से अर्जित अर्थ का बहुत ही श्रद्धापूर्वक समर्पण कर जिनवाणी के प्रति अनुराग और गुरुभक्ति का जो प्रदर्शन किया है, वह वस्तुतः श्लाघनीय व अनुकरणीय है। हम ऐसे जिनवाणी भक्तों के प्रति सद्भावना व्यक्त करते हैं।

—महेन्द्रकुमार जैन
अध्यक्ष : पद्म प्रकाशन, दिल्ली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Publisher's Note

It is a well-known fact that Jain Agams occupy a unique status in the spiritual world. This corpus of Jain scriptures is for the benefit of all. It directs every living being towards the noble path and inspires them to lead a pious and spiritual life. It is a matter of great joy that the third volume of Bhagavai (Viyahapannatti), the fifth among the eleven Angas in Jain Agams, duly translated in Hindi and English and with illustrations, is in your hands.

The Herculean mission of publication of Illustrated Agams with Hindi and English translations launched by us seventeen years back now appears to be nearing its goal. This is the 23rd book of the Illustrated Agam Series. Till date we have published twenty-four Illustrated Agams along with Kalpa Sutra.

In 2005 the first volume of Bhagavati Sutra (Shatak 1 to 4) was published and in 2006 came the second volume (Shatak 5 to 7 and first Uddeshak of Shatak 8). Now in this third volume we have included from Uddeshak 2 of Shatak 8 to complete Shatak 9). We are trying to complete this voluminous Agam in three forthcoming volumes along with translations and illustrations.

With blessings of late Gurudev Uttar Bharatiya Pravartak Bhandari Shri Padma Chandra Ji M. this mission of service to the scriptures is getting complete, earnest and devout attention of the profound scholar of Agams, Sahitya Samrat Pravartak Shri Amar Muni ji M. The goal of his life is to ensure that the pious sermon of Bhagavan Mahavir reaches the masses. And for this he has accomplished with great fervor and hardship this new and historic task of embellishing the original texts and Hindi translation with English translation and illustrations. Now this important work is drawing praise everywhere. In the history of Jain literature this is the first effort of publication of Illustrated Agams

Pujya Gurudev's able disciple, youthful scholar and devout researcher of Agams, Shri Varun Muni shares the responsibility of publication of Agams. We are getting continued assistance of contributing scholars like Shri Sanjay Surana in editing, and Shri Surendra Kumar ji Bothara in English translation. As in the past Shri Trilok Sharma has done the illustrations. We are, indeed, indebted to them.

As always, many generous devotees have displayed their earnest devotion for the Guru and love for the Jinavani by their financial contribution from their hard earned wealth. This gesture is laudable and worth emulating. Our well wishes for such devotees of Jinavani.

Mahendra Kumar Jain

President : Padma Prakashan

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राग्वक्तव्य

श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने अपने केवलज्ञान रूपी महासागर में से बहुत से बहुमूल्य रत्न हमें विरासत में दिये हैं, उनमें से सबसे विशाल और अतुलनीय रत्न है—**'श्री भगवती सूत्र'**। मूलत: भगवान द्वारा प्ररूपित बारह अंगों में दृष्टिवाद सबसे विशालतम और गहनतम अंग है पर समय के साथ इसका सम्पूर्ण विच्छेद हो गया। शेष ग्यारह अंगों में से वर्तमान में भगवती सूत्र की सामग्री अधिकाधिक उपलब्ध है।

भगवती सूत्र में चर्चित विषय बहुत गहन एवं गम्भीर हैं। इनको समझने के लिए नय, निक्षेप व प्रमाण आदि का ज्ञान होना आवश्यक है। जैन दर्शन को विशेष रूप से तथा तात्त्विक दृष्टि से समझने के लिए भगवती सूत्र का अध्ययन-अनुशीलन महत्वपूर्ण है। यह सूत्र जितना विशाल है, उतना ही दुरूह भी है। यह आगम श्रुत ज्ञान का विशाल महासागर है। इसमें द्रव्यानुयोग, चरणकरणानुयोग, गणितानुयोग और धर्मकथानुयोग—इन चारों अनुयोगों का अद्भुत समन्वय द्रष्टव्य है। वस्तुत: यह जिनवाणी के रहस्यों को समझने और समझाने की कुंजी है।

इस सूत्र से सम्बन्धित विषय-सामग्री प्रथम भाग की प्रस्तावना में सविस्तार वर्णित है। अत: यहाँ उसका पुनरावर्तन अपेक्षित नहीं है। प्रथम भाग में इस सूत्र के शतक 1 से 4 तक तथा द्वितीय भाग में शतक 5 से 7 व 8वें शतक के प्रथम उद्देशक तक का वर्णन पूर्व प्रकाशित है। अब तीसरा भाग जिसमें 8वें शतक के दूसरे उद्देशक से 9वें शतक के 34 उद्देशक (9वाँ शतक सम्पूर्ण) व्यवहृत हैं, आप सबके समक्ष प्रस्तुत है।

8वें शतक के प्रारम्भ में दाढ में होने वाले विष अर्थात् आशिविष लब्धि किन-किन जीवों में कितनी क्षमता वाली होती है, इसका विशद वर्णन है। तत्पश्चात् पाँच ज्ञान और जीवों की ज्ञानलब्धि सविस्तार वर्णित है। संख्यात, असंख्यात, अनन्त जीव वाले वृक्ष के भेद तथा कायिकी आदि पाँच क्रिया जीव को कैसे लगती हैं, इसका कथन भी सुन्दर ढंग से विवेचित है। पाँचवें उद्देशक में श्रावक के 12 व्रतों के 49 और 735 भंगों का विस्तृत वर्णन परिलक्षित है। छठे उद्देशक में श्रमणों को आहार दान का फल बताया गया है। सप्तम उद्देशक में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्यतीर्थिक साधुओं से संवाद करते स्थविर साधुओं का वर्णन अभिव्यक्त है, जो अन्यतीर्थिकों को निरुत्तर करके जैनधर्म की श्रेष्ठता और सर्वोपरिता सिद्ध करते हैं। नवम उद्देशक में सादि-अनादि, प्रयोग-विस्रसा आदि बंध के भेद-प्रभेद सविस्तार दर्शाये गये हैं। ज्योतिषी-वैमानिक देव, कर्म प्रकृति, ज्ञान, दर्शन, चारित्र की आराधना और कार्मण वर्गणाओं के विषय के साथ आठवाँ शतक पूर्ण होता है। इस प्रकार आठवें शतक में सृष्टिवाद, ज्ञान, सूक्ष्म परिमाणु विज्ञान एवं कर्म के अनेक सिद्धान्तों का वर्णन हुआ है।

9वें शतक में प्रथम दो उद्देशकों में जम्बूद्वीप व ज्योतिष्क देवों का संक्षिप्त वर्णन है। फिर लवण समुद्र में थोड़े-थोड़े अंतर पर रहे 28 अन्तर्द्वीप (युगलिक मनुष्यों के क्षेत्र) 28 उद्देशकों में व्यवहृत हैं। केवली की वाणी सुने बिना ही केवली होने वाले 'असोच्चा केवली' का भी सरसता और सरलता के साथ 31वें उद्देशक में वर्णन हुआ है।

बत्तीसवें उद्देशक में भगवान पार्श्वनाथ की परम्परा के ऋजु प्राज्ञ गांगेय अणगार का भगवान महावीर से मिलन, उनकी जिज्ञासा का समाधान, भगवान महावीर के पास दीक्षा और अंत में मोक्ष गमन। तेतीसवें उद्देशक में भगवान महावीर के प्रथम माता-पिता ऋषभदत्त और देवानंदा का भगवान के पास आना, दीक्षा लेना और अंत में मोक्ष जाना व जमालिकुमार, जमालि अणगार, उनकी मिथ्या प्ररूपणा, उग्र तपश्चर्या और अंत में किल्विषी देवों में उत्पत्ति अभिदर्शित है। इन सभी कथाओं का रोचक, विस्तृत और हृदय स्पर्शी वर्णन 9वें शतक में परिलक्षित है।

मूल सूत्र पाठ के भावानुवाद के साथ जहाँ-जहाँ आवश्यकता हुई, वहाँ-वहाँ संक्षिप्त विवेचन भी हमने किया है। क्योंकि ऐसे बहुत से दुरूह विषय हैं जिनका विवेचन होना आवश्यक है, बिना इसके पाठकवृन्द उस विषय को समझ पाने में प्रायः असमर्थ होते हैं। आगमकार ने अनेक स्थानों पर प्रज्ञापनासूत्र का सन्दर्भ देखने की सूचना देकर सामग्री को बहुत ही संक्षिप्त करने का सत्प्रयास किया है। किन्तु हमने प्रज्ञापनासूत्र का वह अंश भी सार रूप में यहाँ प्रस्तुत कर दिया है, इतना ही नहीं महत्वपूर्ण विषयों को विषयानुरूप रंगीन भावपूर्ण चित्रों के माध्यम से समझाने का भी सुप्रयास किया गया है। आशा है पाठकों व स्वाध्यायियों के लिए ये चित्र परम उपयोगी सिद्ध होंगे।

यहाँ हम एक बात कहना चाहते हैं कि भगवती सूत्र ज्ञान का विशाल भण्डार है। सुज्ञ पाठक इसका स्वाध्याय गम्भीरता से करें। यदि कोई विषय-विवेचन आदि पढ़ने के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पश्चात् भी समझ में नहीं आए तो गीतार्थ संतों की सेवा में जाकर उसको भली-भाँति समझने का प्रयास करें।

इसके विवेचन में हमारे द्वारा पूर्व में किये गये भगवती सूत्र के विवेचन के अधिकाधिक अंश लिये गये हैं, साथ ही पण्डित श्री घेवरचन्द जी शास्त्री का हिन्दी विवेचन भी बहुत उपयोगी बना है। इस आगम में आये हुये महत्त्वपूर्ण शब्दों का अंग्रेजी पारिभाषिक शब्द-कोष परिशिष्ट रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो आधुनिक युवा पीढ़ी के लिए विशेष महत्त्वपूर्ण प्रमाणित होगा, ऐसा हमारा विश्वास है।

हमारे परम श्रद्धेय, परम वंदनीय गुरुदेव उ. भा. प्रवर्त्तक राष्ट्रसंत भंडारी श्री पद्मचंद्र जी म. सा. का आशीर्वाद पग-पग पर हमारा सम्बल रहा है। हम उन परम उपकारी गुरुदेव के प्रति विनयावनत् हैं। आशा और विश्वास है कि अंग्रेजी अनुवाद के साथ यह सचित्र भगवती सूत्र अनेक दृष्टियों से नवीनता लिए सबके लिये उपयोगी सिद्ध होगा।

इसके संपादन आदि में सदा की तरह हमारे शिष्य श्री वरुण मुनि, स्व. श्रीचन्द जी सुराना 'सरस' के सुपुत्र श्री संजय सुराना एवं अंग्रेजी अनुवादक श्री सुरेन्द्र जी बोथरा ने पूर्ण सहयोग दिया है। इसी प्रकार इसके प्रकाशन में भी जिन गुरुभक्तों ने उदार हृदय से अर्थ-सहयोग प्रदान किया है, उन सबको हम हार्दिक साधुवाद देते हैं।

—प्रवर्त्तक अमर मुनि

जैन स्थानक,
रायकोट

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

Preface

Out of the ocean of his omniscience Shraman Bhagavan Mahavir has given us many invaluable gems to enrich our heritage. Of these the largest and incomparable gem is Shri Bhagavati Sutra. Originally Drishtivad was the largest and most profound Anga among the twelve Angas propagated by Bhagavan. However, it became extinct with passage of time. Among the remaining eleven Angas Bhagavati Sutra is the most voluminous in its content.

The topics discussed in Bhagavati Sutra are very complex and profound. In order to grasp them it is essential to have knowledge of intellectual tools including naya (system of variant perspectives), nikshep (system of attribution) and praman (system of validation). In order to understand Jain philosophy, specially from the metaphysical perspective, it is vital to study and understand Bhagavati Sutra. This work is as difficult as voluminous it is. This Agam is a large ocean of scriptural knowledge. Available in it is an astonishing assimilation of all the four thematic classifications (Anuyoga), namely Dravyanuyoga (metaphysics), Charanakarananuyoga (conduct), Ganitanuyoga (mathematics and other sciences) and Dharmakathanuyoga (narratives). In fact it is the key for understanding the secrets of the sermon of the Jina.

The details about the themes and subjects discussed in this work have been enumerated in the preface of the first volume; as such it would be out of place to duplicate it. . In the first volume we had included Shatak 1 to 4. The second volume contained Shatak 5 to 7 and first Uddeshak of Shatak 8. Now in this third volume we have included from Uddeshak 2 of Shatak 8 to complete Shatak 9 (34 Uddeshaks).

The 8th Shatak starts with detailed description of animals with poisonous fangs and their ranges of toxicity. This is followed by elaborate discussion about five kinds of knowledge and intellectual capacity of various living beings. Interesting details about plants with countable, innumerable and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

infinite have also been mentioned along with application of five types of activities including physical. In the fifth Uddeshak are detailed 12 vows of Shravak and their 49 and 735 options. The sixth lesson contains the merits of food donation to ascetics. The seventh lesson narrates the story of debate of senior ascetics (sthavirs) with heretics where they establish the superiority of Jain religion by silencing the heretics. In the ninth lesson are elaborated the categories and sub- categories of bondage including Prayoga and Visrasa bandh (bondage acquired by action and naturally). The eighth Shatak concludes with discussion of various topics including Stellar and Celestial-vehicular divine beings, species of karma, practice of knowledge-faith-conduct and classes of karmas. Thus the eighth Shatak contains many principles related to theory of creation, knowledge, science of ultimate particles and theory of karma.

The ninth Shatak starts with brief description of Jambu continent and stellar gods in two lessons. This followed by 28 lessons on the 28 middle islands (inhabited by twin-couples) in Lavan Samudra. The 31st lesson has simple and interesting description of self-enlightened omniscient who attains omniscience without hearing the sermon of an omniscient.

The 32nd lesson contains the story of ascetic Gangeya, a scholar from Bhagavan Parshvanath's tradition, who meets Bhagavan Mahavir, gets his doubts removed, gets initiated in Bhagavan Mahavir's order and attains liberation in the end. The story of Bhagavan Mahavir's first parents Rishabhdatt and Devananda coming to pay homage, getting initiated and attaining liberation in the end is narrated in the 33rd lesson. This lesson also contains the story of prince Jamali becoming ascetic Jamali, his false doctrine, tough austerities and reincarnation among lower Kilvishik gods. All these interesting and touching stories form part of the ninth Shatak.

With the free flowing translation of the original text I have included brief elaboration wherever needed. This is primarily because there are so many complex subjects that are difficult to understand by common readers without such explanations. At many places the author has informed to refer to Prajnapana Sutra in order to limit the volume of this Agam. But I have given the gist of those references. Effort has also been made to make

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

important themes easily understandable by giving suitable illustrations. I hope that these illustrations will be found very useful by lay readers as well as those who do regular self-study.

I would like to add here that Bhagavati Sutra is a voluminous compendium of knowledge. Earnest readers should study it seriously. If they find some topic complex even after studying the elaborations they should try to understand it properly with the able help of scholarly ascetics.

I have included maximum elaborations from my earlier commentary on Bhagavati Sutra. The Hindi commentary by Pandit Shri Ghevar Chand ji has also been very useful in giving final shape to this work. A glossary of important words with English meanings has been included as appendix. I believe that this will be very useful for the modern youth of this generation.

My preface would not be complete without the pious remembrance of my revered teacher Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padmachandra ji M. S. who always inspired me to work in service of the Shrut (Agams). My humble homage to him. It is my hope and belief that this Illustrated Bhagavati Sutra with its unique innovative style will prove to be useful for one and all.

As always, scholarly editors like my disciple Shri Varun Muni, Shri Sanjay Surana son of Late Shrichand Surana 'Saras', and Shri Surendra Bothara (English translator) have extended earnest cooperation to this project. In the same way generous devotees have extended their cooperation and contributions to this pious project of publishing Illustrated Agams. They all deserve thanks and commendations.

Jain Sthanak, Raikot

—Pravartak Amar Muni

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐

अनुक्रमणिका

अष्टम शतक : द्वितीय उद्देशक :
आशीविष १-९२

अधिकारी तथा विष-सामर्थ्य १
छद्मस्थ के दस स्थान अज्ञेय ११
ज्ञान और अज्ञान के प्रकार १२
जीवों में ज्ञान-अज्ञान १६
गति आदि आठ द्वारों की अपेक्षा ज्ञानी-अज्ञानी—
प्रथम : गतिद्वार २२
द्वितीय : इन्द्रियद्वार २३
तृतीय : कायद्वार २४
चतुर्थ : सूक्ष्म-बादरद्वार २५
पंचम : पर्याप्त-अपर्याप्तद्वार २६
छठा : भवस्थद्वार २९
सप्तम : भवसिद्धिकद्वार ३०
आठवाँ : संज्ञीद्वार ३१
नौंवा : लब्धिद्वार ३७
योग-उपयोग आदि में ज्ञान-अज्ञान—
दशम : उपयोगद्वार ६४
ग्यारहवाँ : योगद्वार ६७
बारहवाँ : लेश्याद्वार ६७
तेरहवाँ : कषायद्वार ६८
चौदहवाँ : वेदद्वार ६९
पन्द्रहवाँ : आहारकद्वार ७०
सोलहवाँ : (विषयद्वार) ज्ञान की व्यापकता ७४
सत्रहवाँ : ज्ञानी और अज्ञानी का स्थितिकाल ८३
अठारहवाँ : अंतरद्वार ८४
उन्नीसवाँ : ज्ञानी और अज्ञानी जीवों का अल्प बहुत्व ८४
बीसवाँ : पर्यायद्वार ८८
ज्ञान और अज्ञान के पर्यायों का अल्पबहुत्व ८९

अष्टम शतक : तृतीय उद्देशक :
वृक्ष ९३-९९

विविध जाति के वृक्षों का निरूपण ९३
जीव प्रदेशों पर शस्त्रादि का स्पर्श ९७
आठ पृथ्वियों का कथन ९८

अष्टम शतक : चतुर्थ उद्देशक :
क्रिया १००-१०१

पाँच क्रियाएँ १००

अष्टम शतक : पंचम उद्देशक :
आजीव १०२-११७

श्रावक के भाण्ड विषयक जिज्ञासा १०२
श्रावक व्रतों के उनचास भांगे १०५
आजीविकोपासक और श्रमणोपासकों का आचार भेद ११३
देवलोकों के चार प्रकार ११७

अष्टम शतक : छठा उद्देशक :
प्रासुक ११८-१३८

आहार-दान का फल ११८
पिण्ड-पात्र आदि की उपभोग-मर्यादा १२०
निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थी की आराधकता १२३
जलते हुए दीपक आदि में क्या जलता है? १३०
क्रियाओं का निरूपण १३१

अष्टम शतक : सप्तम उद्देशक :
अदत्त १३९-१५२

अन्यतीर्थिकों के साथ स्थविरों का वाद १३९
गतिप्रवाद और उसके पाँच भेदों का निरूपण १५०

卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अष्टम शतक : अष्टम उद्देशक :
प्रत्यनीक १५३-१९४

प्रत्यनीक-भेद-प्ररूपणा १५३
निर्ग्रन्थ के लिए आचरणीय पंचविध व्यवहार १५७
विविध पहलुओं से ऐर्यापथिक और साम्परायिक कर्मबन्ध से सम्बन्धित प्ररूपणा १६०
बावीस परीषहों का अष्टविध कर्मों में समावेश १७९
सूर्यों की दूरी और निकटता की प्ररूपणा १८७
ज्योतिष्क देवों और इन्द्रों का उपपात-विरहकाल १९३

अष्टम शतक : नवम उद्देशक :
'बंध' १९५-२७१

बन्ध के दो प्रकार : प्रयोगबन्ध और विस्रसाबन्ध १९५
विस्रसाबन्ध के भेद-प्रभेद और स्वरूप १९५
प्रयोगबन्ध : प्रकार, भेद-प्रभेद तथा उनका स्वरूप २०१
शरीरप्रयोगबन्ध के प्रकार २०९
वैक्रियशरीर-प्रयोगबन्ध के भेद-प्रभेद २२६
किस कर्म के निमित्त २२७
देश बंध-सर्वबन्ध २३१
काल सीमा २३२
अन्तर-काल २३४
अल्प-बहुत्व २३९
आहारकशरीर-प्रयोगबन्ध निरूपण २४१
तैजस् शरीर-प्रयोगबन्ध निरूपण २४५
कार्मणशरीर-प्रयोगबन्ध के भेद-प्रभेद का निरूपण २४९
आठ प्रकार के कर्मबन्ध के कारण २४९
बन्धक-अबन्धक की चर्चा २६१
देश-सर्वबन्धकों एवं अबन्धकों का अल्प बहुत्व २६८

अष्टम शतक : दशम उद्देशक :
'आराधना' २७२-३०५

श्रुत-शील की आराधना-विराधना २७२
ज्ञान-दर्शन-चारित्र की आराधना का फल २७६
पुद्गल-परिणाम के पाँच भेद २८४
पुद्गलास्तिकाय के एकप्रदेश से लेकर अनन्तप्रदेश तक अष्टविकल्पात्मक प्रश्नोत्तर २८५
लोकाकाश के और प्रत्येक जीव के प्रदेश २८९
आठ कर्मप्रकृतियाँ और संसारी जीव २९०
आठ कर्मों का परस्पर सहभाव २९४
पुद्गली और पुद्गल का विचार ३०२

नवम शतक : प्रथम उद्देशक :
जम्बूद्वीप ३०६-३०७

प्राथमिक ३०६
नौवें शतक की संग्रहणी गाथा ३०६
जम्बूद्वीपनिरूपण ३०६

नवम शतक : द्वितीय उद्देशक :
ज्योतिष ३०८-३१०

जम्बूद्वीप आदि द्वीप-समुद्रों में चन्द्र आदि की संख्या ३०८

नवम शतक : तृतीय से तीसवें उद्देशक तक :
अन्तर्द्वीप ३११-३१४

उपोद्घात ३११
एकोरुक आदि अट्ठाईस अन्तर्द्वीपक मनुष्य ३११

नवम शतक : इकतीसवाँ उद्देशक :
अश्रुत्वा केवली ३१५-३५२

उपोद्घात ३१५
धर्मश्रवण लाभालाभ ३१५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुद्ध बोधि का लाभालाभ ३१७
अनगारिता का ग्रहण-अग्रहण ३१८
ब्रह्मचर्य-वास का धारण-अधारण ३२०
शुद्ध संयम का ग्रहण-अग्रहण ३२१
शुद्ध संवर का आचरण-अनाचरण ३२२
ज्ञान-उपार्जन-अनुपार्जन ३२३
ग्यारह बोलों की प्राप्ति और अप्राप्ति ३२६
विभंगज्ञान एवं अवधिज्ञान प्राप्त होने की क्रमिक प्रक्रिया ३३०
पूर्वोक्त अवधिज्ञानी में लेश्या, ज्ञान आदि ३३२
केवलज्ञान-प्राप्ति का क्रम ३३७
असोच्चा केवली द्वारा उपदेश-प्रव्रज्या ३४०
सोच्चा से सम्बन्धित प्रश्नोत्तर ३४३
केवली आदि से सुनकर अवधिज्ञान की उपलब्धि ३४४
तथारूप अवधिज्ञानी में लेश्या आदि ३४५
सोच्चाकेवली द्वारा उपदेश, प्रवज्या आदि ३४८

नवम शतक : बत्तीसवाँ उद्देशक : गांगेय ३५३-४३१

उपोद्घात ३५३
चौबीस दण्डक ३५४
प्रवेशनक : चार प्रकार ३५७
नैरयिक-प्रवेशनक निरूपण ३५८
एक नैरयिक के प्रवेशनक भंग ३५८
दो नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ३५९
तीन नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ३६१
चार नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ३६७
द्विकसंयोगी ६३ भंग ३६८
त्रिकसंयोगी १०५ भंग ३७०
चतु:संयोगी ३५ भंग ३७२
पाँच नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ३७७
पाँच नैरयिकों के द्विसंयोगी ८४ भंग ३७७
पाँच नैरयिकों के त्रिसंयोगी भंग ३७९
पाँच नैरयिकों के चतु:संयोगी भंग ३८२
पाँच नैरयिकों के पंचसंयोगी भंग ३८४
छह नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ३८८
द्विकसंयोगी १०५ भंग ३८८
त्रिकसंयोगी ३५० भंग ३८९
पंचसंयोगी १०५ भंग ३९०
षट्संयोगी ७ भंग ३९१
सात नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ३९२
आठ नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ३९४
नौ नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ३९६
दस नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ३९७
संख्यात नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ३९८
असंख्यात नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ४०३
उत्कृष्ट नैरयिक-प्रवेशनक प्ररूपणा ४०४
नैरयिक प्रवेशनकों का अल्पबहुत्व ४०९
तिर्यञ्चयोनिक—प्रवेशनक : प्रकार और भंग ४१०
उत्कृष्ट तिर्यञ्चयोनिक—प्रवेशनक प्ररूपणा ४११
एकेन्द्रियादि तिर्यञ्च-प्रवेशनकों का अल्पबहुत्व ४१२
मनुष्य-प्रवेशनक : प्रकार और भंग ४१३
उत्कृष्ट रूप से मनुष्य-प्रवेशनक प्ररूपणा ४१६
मनुष्य-प्रवेशनकों का अल्पबहुत्व ४१६
देव-प्रवेशनक : प्रकार और भंग ४१६
उत्कृष्ट रूप से देव-प्रवेशनक प्ररूपणा ४१८
भवनवासी आदि देवों के प्रवेशनकों का अल्पबहुत्व ४१९
नारक-तिर्यञ्च-मनुष्य-देव प्रवेशनकों का अल्पबहुत्व ४२०
चौबीस दण्डकों में सान्तर-निरन्तर-उद्वर्तन प्ररूपणा ४२१
प्रकारान्तर से चौबीस दण्डकों में उत्पाद-उद्वर्तना ४२३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवलज्ञानी आत्मप्रत्यक्ष से सब जानते हैं ४२६
नैरयिक आदि की स्वयं उत्पत्ति ४२७
भगवान के सर्वज्ञत्व पर श्रद्धा और पंचमहाव्रत धर्म-स्वीकार ४३०

नवम शतक :
तेतीसवाँ उद्देशक : कुण्डग्राम (ऋषभदत्त और देवानन्दा) ४३२-५०३

संक्षिप्त परिचय ४३२
भगवान की सेवा में वन्दना-पर्युपासनादि के लिए जाने का निश्चय ४३३
ब्राह्मण-दम्पत्ति की दर्शनवन्दनार्थ जाने की तैयारी ४३५
देवानन्दा की मातृ-वत्सलता ४३९
ऋषभदत्त द्वारा प्रव्रज्या ग्रहण ४४०
देवानन्दा द्वारा दीक्षा ग्रहण ४४३
जमालि चरित्र
क्षत्रियकुमार जमालि ४४४
दर्शन-वन्दनादि के लिए गमन ४४५
प्रवचन-श्रवण और प्रव्रज्या की अभिव्यक्ति ४५०
माता-पिता से दीक्षा की अनुज्ञा ४५१
माता शोकमग्न हुईं ४५३
माता-पिता के साथ जमालि का संलाप ४५४
जीवन की चंचलता का कथन ४५६
शरीर की नश्वरता का कथन ४५८
कामभोगों की असारता ४५९
धन वैभव की नश्वरता ४६१
संयम की दुष्करता ४६२
प्रव्रज्या-ग्रहण की अनुमति ४६६
अभिनिष्क्रमण-महोत्सव ४६७
केश मुण्डन ४७०
शिविकारोहण ४७३
प्रव्रज्या ग्रहण ४८१
जमालि का पृथक् विहार ४८४
जमालि का श्रावस्ती में और भगवान का चम्पा में विहरण ४८६
जमालि अनगार के शरीर में रोगातंक ४८७
रुग्ण जमालि की सिद्धान्त-विरुद्ध प्ररूपणा ४८८
श्रमणों द्वारा जमालि के सिद्धान्त का स्वीकार, अस्वीकार ४९०
जमालि द्वारा सर्वज्ञता का मिथ्या दावा ४९१
गौतम के प्रश्नों का उत्तर देने में असमर्थ जमालि ४९२
भगवान द्वारा समाधान ४९३
मिथ्यात्वग्रस्त जमालि की विराधकता ४९४
किल्विषिक देवों में उत्पत्ति ४९५
किल्विषिक देवों में उत्पत्तिकारण ४९७
जमालि की उत्पत्ति का कारण ५००
जमालि का भविष्य ५०२

नवम शतक :
चौंतीसवाँ उद्देशक : पुरुष (पुरुष और नोपुरुष का घातक) ५०४-५१५

उपोद्घात ५०४
पुरुष द्वारा अश्वादिघात सम्बन्धी प्रश्नोत्तर ५०४
ऋषिघातक ५०६
घातक व्यक्ति को वैरस्पर्श की प्ररूपणा ५०८
जीवों की परस्पर श्वासोच्छ्वासी सम्बन्धी प्ररूपणा ५१०
श्वासोच्छ्वास करते समय क्रिया-प्ररूपणा ५१२
वृक्षमूलादि कँपाने-गिराने सम्बन्धी क्रिया ५१४

परिशिष्ट ५१७-५७६

शब्दकोष ५१७
आगमों का अस्वाध्याकाल ५६८
प्रकाशित आगम सूची ५७३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

CONTENTS

Eighth Shatak (Chapter Eight) : Second Lesson : Ashivish (The Poisonous) 1-92

Bearer and Intensity 1
Ten Things Unknown to Chhadmasth 11
Types of Knowledge and wrong Knowledge 12
Knowledge in Living Beings 16
Jnani-Ajnani in Context of Eight States—
First State : Gati 22
Second State : Indriya 23
Third State : Kaaya 24
Fourth State : Sukshma-Baadar 25
Fifth State : Praryapt-Aparyapt 26
Sixth State : Bhavasth 29
Seventh State : Bhavasiddhik 30
Eighth State : Sanjni 31
Ninth State : Labdhi 37
Knowledge and its Absence in Activity Etc...
Tenth State : Upayoga 64
Eleventh State : Yoga 67
Twelfth State : Leshya 67
Thirteenth State : Passions 68
Fourteenth State : Gender 69
Fifteenth State : Aahaarak 70
Sixteenth State : Scope 74
Seventeen State Sustenance of Knowledge 83
Eighteen State Intervening Period 84
Ninteen Comparative Numbers 84
Twentieth State : Mode 88
Comparative Numbers of Paryayas 89

Eighth Shatak (Chapter Eight) : Third Lesson : Vriksha (Tree) 93-99

Trees of Various Species 93
Touch of Weapon on Soul-Spacepoints 97
Eight Worlds 98

Eighth Shatak (Chapter Eight) : Fourth Lesson : Kriya (Activity) 100-101

Five Activities (Kriyas) 100

Eighth Shatak (Chapter Eight) : Fifth Lesson : Aajiva (Ajivaks) 102-117

Inquiry about Belongings of a Shravak 102
Forty-nine Sub-divisions of Householder's Vows 105
Comparative Conduct of Followers of Ajivak and Shraman 113
Four Kinds of Divine Realms 117

Eighth Shatak (Chapter Eight) : Sixth Lesson : Prasuk (Fault-Free) 118-138

Benefits of Food Donation 118
Limitations of Use 120
Steadfastness of Ascetics 123
What Burns in a Lamp 130
Description of Activities 131

Eighth Shatak (Chapter Eight) : Seventh Lesson : Adatt (Not Given) 139-152

Heretics Discuss with Sthavirs 139
Flow of Movement 150

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Eighth Shatak (Chapter Eight) : Eighth Lesson : Pratyaneek (Adversaries) 153-194

Types of Adversaries 153
Five Types of Ascetic Behaviour 157
Types of Bondage 160
Inclusion of Twenty-two Afflictions in Eight Karma Species 179
Distance of the Suns 187
Period of Birth of Stellar Gods 193

Eighth Shatak (Chapter Eight) : Ninth Lesson : Bandh (Bondage) 195-271

Two Types of Bondage 195
Types of Natural Bondage 195
Prayoga Bandh : Types and Description 201
Types of Sharira-Prayoga-Bandh 209
Types of Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh 226
Causative Karma 227
Bondage of a Part : Bondage of the Whole 231
Time Limit 232
Intervening Period 234
Comparative Number 239
Types of Aharak-Sharira-Prayoga-Bandh 241
Types of Taijas-Sharira-Prayoga-Bandh 245
Types of Karman-Sharira-Prayoga-Bandh 249
Causesg bondage of eight type of karmas 249
Acquisition and Non-acquisition of Bondage 261
Comparative Numbers 267

Eighth Shatak (Chapter Eight) : Tenth Lesson : Araadhana (Spiritual Endeavour) 272-305

Spiritual Endeavour of a Righteous Ascetic 272
Fruits of the Path of Jnana-Darshn-Chaaritra 276
Five Types of Transformation of Matter 284
Eight Alternatives of Space-points of Matter 285
Space-points of Lokakaash and Jiva 289
Eight Karma Species and Worldly Being 290
Co-relation Between Eight Karmas 294
Matter and Possessor of Matter 302

Ninth Shatak (Chapter Nine) : First Lesson : Jambudveep (Jambu Continent) 306-307

Introduction 306
Collative Verse 306
Jambu Continent 306

Ninth Shatak (Chapter Nine) : Second Lesson : Jyotish (Stellar Gods) 308-310

Number of Moons in Jambudveep and other Areas 308

Ninth Shatak (Chapter Nine) : Third to Thirtieth Lesson : Antardveep (Middle Islands) 311-314

Introduction 311
Humans of Twenty Eight Middle Islands Including Ekoruk 311

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

卐卐

Ninth Shatak (Chapter Nine) : Thirty-First Lesson : Ashrutva Kevali (Self-Enlightened Omniscient) 315-352

Introduction 315
Benefit of Hearing the Sermon 315
Benefit of Right Perception/Faith 317
Initiation as Homeless Ascetic 318
Courting Celibacy 320
Endeavour for Ascetic-Discipline 321
Perfect Blockage of Inflow of Karmas 322
Knowledge-acquire-Not-acquire 323
Perfection of Eleven Acts 326
Gradual Process of Rising from Vibhangaa-Jnana to Avadhi-Jnana 330
Qualities of the Said Avadhi-Jnani 332
Progression into Keval-Jnana 337
Sermon and Initiation by Ashrutva Kevali 340
Questions about Sochcha 343
Acquiring Avadhi-Jnana by Hearing 344
Leshyas and Other Attributes 345
Preaching, Intitiation Etc. by Sochcha Kevali 348

Ninth Shatak (Chapter Nine) : Thirty-Second Lesson : Gangeya 353-431

Introduction 353
Twenty Four Places of Suffering (Dandak) 354
Entrance : Four Types 357
Nairayik-Praveshanak .358
Options for One Infernal Being 358
Options for Two Infernal Beings 359
Options for Three Infernal Beings 361
Alternatives for Four Infernal Beings 367
63 Options for Sets of Two 368
105 Options for Sets of Three 370
35 Alternatives for Sets of Four 372
Alternatives for Five Infernal Beings 377
84 Alternatives for Sets of Two 377
210 Alternatives for Sets of Three 379
140 Alternatives for Sets of Four 382
21 Alternatives for Sets of Five 384
Alternatives for Six Infernal Beings 388
105 Alternatives for Sets of Two 388
350 Alternatives for Sets of Three 389
105 Alternatives for Sets of Five 390
7 Alternatives for Sets of Six 391
Alternatives for Seven Infernal Beings 392
Alternatives for Eight Infernal Beings 394
Alternatives for Nine Infernal Beings 396
Alternatives for Ten Infernal Beings 397
Alternatives for Countable Infernal Beings 398
Alternatives for Innumerable Infernal Beings 403
Alternatives for Maximum Number of Infernal Beings 404
Comparative Numbers of Infernal Entries 409
Tiryanch-Yonik-Praveshanak—Types and Alternatives 410
Alternatives for Maximum Number of Animals 411
Comparative Numbers of Animals 412
Manushya-Praveshanak—Types and Alternatives 413
Alternatives for maximum number of Humans 416
Comparative Numbers of Humans 416
Dev-Praveshanak—Types and Alternatives 416
Alternatives for Maximum Number of Divine Beings 418

卐卐

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Comparative Numbers of Divine Beings 419
Comparative Numbers of All Beings 420
Birth and Death with and without Gap 421
Birth & Death from Another Angle 422
Direct Cognition of Omniscients 426
Birth of living beings of their own accord 427
Belief in Omniscience and Embracing of the Five-Vow Path 430

Ninth Shatak (Chapter Nine) : Thirty-Third Lesson : Kundagram (Rishabh-datt and Devanada) 432-503

Brief Introduction 432
Decision to Pay Homage to Bhagavan Mahavir 433
Preparations to go to Pay Homage 435
Devananda's Motherly Affection 439
Initiation of Rishabh-datt 440
Initiation of Devananda 443
Story of Jamali
Prince Jamali 444
Going to Pay Homage 445
Discourse and Desire for Initiation 450
Permission from Parents for Initiation 451
Mother's Grief 453
Dialogue with Parents 454
Life is Ephemeral 456
Fleeting Nature of the Body 458
Worthlessness of Pleasures 459
Transience of Wealth and Grandeur 461
Hardships of Ascetic-discipline 462
Permission for Initiation 466
Festive Renunciation 467
Tonsuring 470
Boarding the Palanquin 473
Initiation 481
Independent Movement of Jamali 484
Jamali in Shravasti and Bhagavan in Champa 486
Ascetic Jamali's Ailment 487
Antithetical Theory of Jamali 488
Acceptance and refusal of Jamali's Theory 490
False Claim of Omniscience by Jamali 491
Jamali Fails to Answer Gautam's Questions 492
Answer by Bhagavan 493
Falsehood Inspired Defiance of Jamali 494
Birth as Kilvishik God 495
Cause of Reincarnation as Kilvishik Gods 497
Reason for Jamali's Reincarnation 500
Future of Jamali 502

Ninth Shatak (Chapter Nine) : Thirty-Fourth Lesson : Purush (Man) 504-515

Introduction 504
Questions about killing horse and others 504
Sage Killer 506
Feeling of Malice in a Killer 508
Respiration of Living Beings 510
Involvement in Activity During Respiration 512
Involvement in Activity During Uprooting Trees 514

Appendix 517-576

Technical Terms 517
Inappropriate time for study of Agams 568
List of Published Agams 573

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ॐ नमो समणस्स भगवओ महावीरस्स

Om Namo Samanassa Bhagavao Mahavirassa

श्री भगवती सूत्र

(व्याख्याप्रज्ञप्ति)

BHAGAVATI SUTRA

(VYAKHYA PRAJNAPTI)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बीओ उद्देसओ : 'आसीविसे'

अष्टम शतक : द्वितीय उद्देशक : आशीविष

EIGHTH SHATAK (Chapter Eight) : SECOND LESSON : ASHIVISH (THE POISONOUS)

आशीविष : अधिकारी तथा विष–सामर्थ्य BEARER AND INTENSITY

१. [प्र.] कइविहा णं भंते ! आसीविसा पण्णत्ता !

[उ.] गोयमा ! दुविहा आसीविसा पन्नत्ता, तं जहा–जातिआसीविसा य कम्मआसीविसा य।

१. [प्र.] भगवन् ! आशीविष कितने प्रकार के कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! आशीविष दो प्रकार के कहे हैं। यथा–(१) जाति–आशीविष, और (२) कर्म–आशीविष।

1. [Q.] *Bhante* ! How many types of poisonous beings (*ashivish*) are there ?

[Ans.] Gautam ! There are two types of poisonous beings (*ashivish*)—(1) *jaati-ashivish* (poisonous by birth or innately poisonous) and (2) *karma-ashivish* (poisonous by action).

२. [प्र.] जातिआसीविसा णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! चउव्विहा पण्णत्ता, तं जहा–विच्छुयजातिआसीविसे, मंडुक्कजातिआसीविसे, उरगजातिआसीविसे, मणुस्सजातिआसीविसे।

२. [प्र.] भगवन् ! जाति–आशीविष कितने प्रकार के कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! जाति–आशीविष चार प्रकार के कहे हैं। जैसे कि–(१) वृश्चिकजाति–आशीविष, (२) मण्डूकजाति–आशीविष, (३) उरगजाति–आशीविष, और (४) मनुष्यजाति–आशीविष।

2. [Q.] *Bhante* ! How many types of *jaati-ashivish* (innately poisonous beings) are there ?

[Ans.] Gautam ! There are four kinds of *jaati-ashivish* (innately poisonous beings)—(1) *vrishchik jaati-ashivish* (venomous breed of scorpions), (2) *manduk jaati-ashivish* (venomous breed of frogs), (3) *urag jaati-ashivish* (venomous breed of snakes) and (4) *manushya jaati-ashivish* (venomous breed of men).

३. [प्र.] विच्छुयजातिआसीविसस्स णं भंते ! केवतिए विसए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! पभू णं विच्छुयजातिआसीविसे अद्धभरहप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिगयं विसट्टमाणिं पकरेत्तए। विसए से विसट्टयाए, नो चेव णं संपत्तीए करेंसु वा, करेंति वा, करिस्संति वा १।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. [प्र.] भगवन् ! वृश्चिकजाति-आशीविष का कितना सामर्थ्य है ?

[उ.] गौतम ! वृश्चिकजाति-आशीविष, अर्द्ध-भरतक्षेत्र-प्रमाण शरीर को विषयुक्त-विषैला करने या विष से व्याप्त करने में समर्थ है। इतना उसके विष का सामर्थ्य है, किन्तु सम्प्राप्ति द्वारा अर्थात् क्रियात्मक प्रयोग द्वारा उसने न ऐसा कभी किया है, न करता है और न कभी करेगा।

3. [Q.] *Bhante* ! How strong is the venom of a scorpion of venomous breed (*jaati-ashivish vrishchik*) ?

[Ans.] Gautam ! A scorpion of venomous breed (*jaati-ashivish vrishchik*) can harm bodies living in half the area of Bharat. Its venom is as strong as that but it did not, does not and will not ever employ all that strength.

४. [प्र.] **मंडुक्कजातिआसीविसस्सपुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! पभू णं मंडुक्कजातिआसीविसे भरहप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिगयं०। सेसं तं चेव, नो चेव जाव करिस्संति वा २।**

४. [प्र.] भगवन् ! मण्डूकजाति-आशीविष का कितना सामर्थ्य है ?

[उ.] गौतम ! मण्डूकजाति-आशीविष अपने विष से भरतक्षेत्र-प्रमाण शरीर को व्याप्त करने में समर्थ है। शेष सब पूर्ववत् जानना, यावत् (यह उसका सामर्थ्य मात्र है), किन्तु सम्प्राप्ति से उसने कभी ऐसा किया नहीं, करता नहीं और करेगा भी नहीं।

4. [Q.] *Bhante* ! How strong is the venom of a frog of venomous breed (*jaati-ashivish manduk*) ?

[Ans.] Gautam ! A frog of venomous breed (*jaati-ashivish manduk*) can harm bodies living in the whole area of Bharat. Repeat the rest... and so on up to... will not ever employ all that strength.

५. एवं उरगजातिआसीविस्स वि, नवरं जंबुद्दीवप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिगयं०। सेसं तं चेव, नो चेव जाव करिस्संति वा ३।

५. इसी प्रकार उरगजाति-आशीविष के सम्बन्ध में जानना चाहिए। इतना विशेष है कि वह जम्बूद्वीप-प्रमाण शरीर को विष से युक्त एवं व्याप्त करने में समर्थ है। यह उसका सामर्थ्य मात्र है, किन्तु सम्प्राप्ति से उसने ऐसा कभी किया नहीं, करता नहीं और करेगा भी नहीं।

5. The same is true for a snake of venomous breed (*jaati-ashivish urag*). The only difference is that it can harm bodies living in the whole area of Jambu Dveep (one hundred thousand *Yojans*). Its venom is as strong as that but it did not, does not and will not ever employ all that strength.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

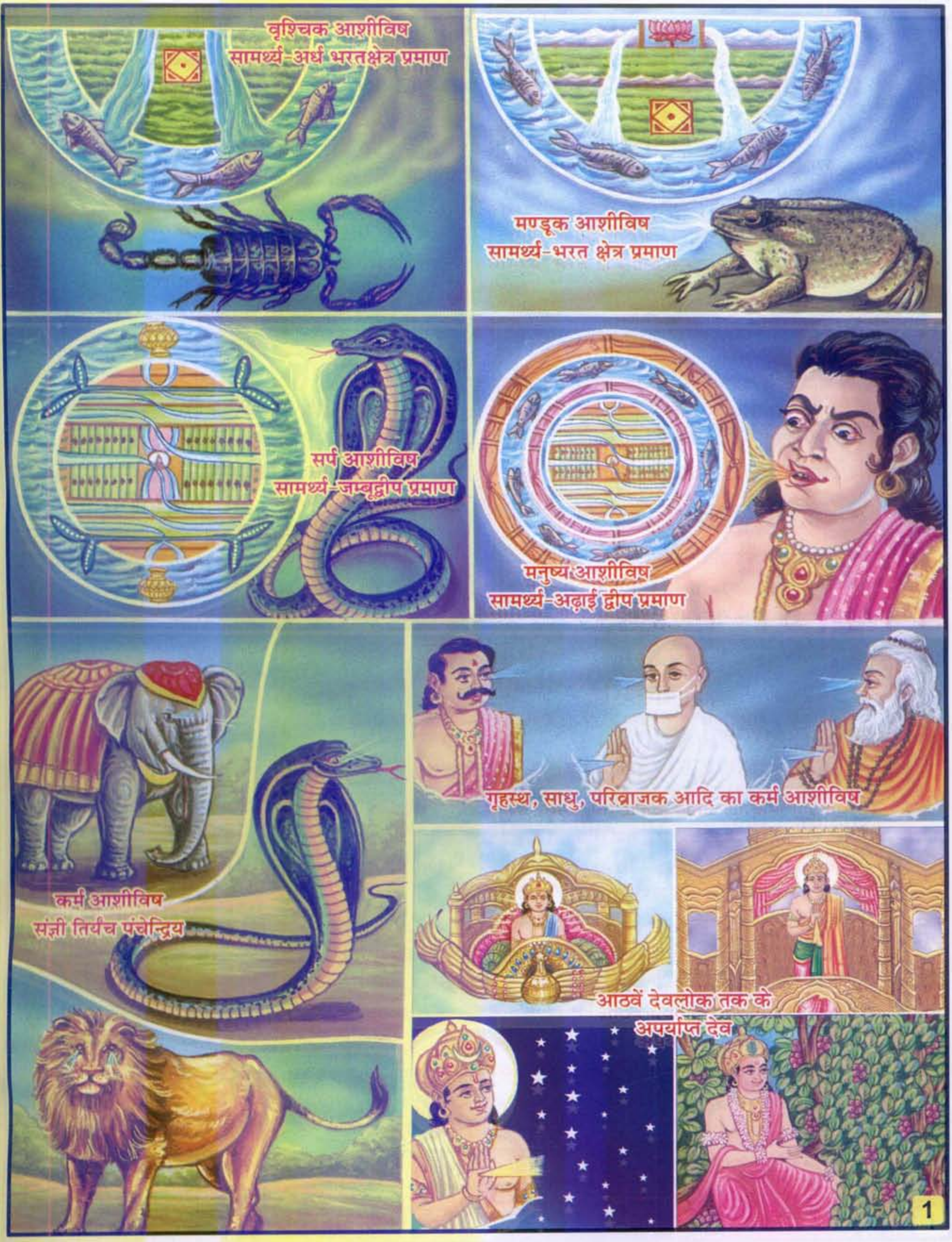

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 1 | Illustration No. 1

जाति आशीविष-कर्म आशीविष

जाति आशीविष—अमुक जीव जाति में जन्म लेने से दाढ़ में तीव्र विष-सामर्थ्य प्राप्त होना जाति आशीविष कहलाता है। जैसे—

1. **वृश्चिक**—बिच्छु। इसका उत्कृष्ट सामर्थ्य अर्ध भरत क्षेत्र प्रमाण है।
2. **मण्डूक**—मेंढक। इसका उत्कृष्ट विष-सामर्थ्य सम्पूर्ण भरत क्षेत्र प्रमाण है।
3. **सर्प**—इसका उत्कृष्ट सामर्थ्य—जम्बूद्वीप प्रमाण है।
4. **मनुष्य**—इसका उत्कृष्ट सामर्थ्य—अढ़ाई द्वीप प्रमाण है।

—शतक 8, उ. 2, सूत्र 1 से 4

कर्म आशीविष—तपश्चर्या अथवा विद्या आदि की साधना से अथवा किसी अन्य गुण से पर्याप्त तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य को आशीविष की उपलब्धि हो जाती है, वे कर्म से आशीविष कहलाते हैं। ये जीव आशीविष लब्धि के प्रभाव से शाप देकर दूसरे का नाश करने की शक्ति पा लेते हैं।

1. संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय प्राणी, जैसे हाथी, साँप, सिंह आदि को तपश्चर्या आदि किसी गुण के प्रभाव से आशीविष लब्धि प्राप्त होने पर वे कर्म आशीविष होते हैं।

2. **मनुष्य**—गृहस्थ, साधु या परिव्राजक आदि को तप आदि कारणों के प्रभाव से आशीविष लब्धि प्राप्त होने पर उनमें शाप आदि देने की क्षमता आ जाती है।

3. **देव**—भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क तथा आठवें कल्प तक के वैमानिक देव, पूर्व भव में प्राप्त आशीविष लब्धि के प्रभाव से अपर्याप्त अवस्था तक आशीविष युक्त होते हैं।

—शतक 8, उ. 2, सूत्र 7 से 18

JATI ASHIVISH AND KARMA ASHIVISH

Jaati-ashivish— some living beings belong to species that are poisonous by birth. They are called Jaati-ashivish. For example -

(1) **Scorpions** – have a maximum capacity of killing half of Bharat area.

(2) **Frogs** – have a maximum capacity of killing the whole of Bharat area.

(3) **Snakes** – have a maximum capacity of killing half of Jambu continent.

(4) **Human beings** – have a maximum capacity of killing half of Adhai Dveep (two and a half continents).

— Shatak 8, Lesson-2, Sutra-1-4

Karma-ashivish — those capable of destroying living beings with special powers, like curses and spells are called Karma-ashivish. For example —

1. Sentient five sensed animals including elephants, snakes, or lions are called karma ashivish if they acquire venomous powers through some austere or other practices.

2. Human beings including householders, ascetics or Parivrajaks acquire venomous powers through austerities and other practices.

3. Divine beings including Bhavan-pati, Vanavyantar, Jyotishk and Vaimaniks up to the eighth heaven retain venomous powers acquired during past birth till they do not attain maturity.

— Shatak 8, Lesson-2, Sutra-7-18

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. मणुस्सजातिआसीविसस्स वि एवं चेव, नवरं समयखेत्तप्पमाणमेत्तं बोंदिं विसेणं विसपरिगयं०। सेसं तं नो चेव जाव करिस्संति वा ४।

६. इसी प्रकार मनुष्यजाति-आशीविष के सम्बन्ध में भी जानना चाहिए। विशेष इतना ही है कि वह समयक्षेत्र (मनुष्यक्षेत्र = ढाई द्वीप) प्रमाण शरीर को विष से विदलित एवं व्याप्त कर सकता है, किन्तु यह उसका सामर्थ्य मात्र है, सम्प्राप्ति द्वारा कभी ऐसा किया नहीं, करता नहीं और करेगा भी नहीं।

6. The same is also true for a man of venomous breed (*jaati-ashivish manushya*). The only difference is that it can harm bodies living in the whole area of Samaya Kshetra (forty five hundred thousand *Yojans*). Its venom is as strong as that but it did not, does not and will not ever employ all that strength.

७. [प्र.] जइ कम्मआसीविसे किं नेरइयकम्मासीविसे, तिरिक्खजोणियकम्मासीविसे, मणुस्सकम्मासीविसे, देवकम्मासीविसे ?

[उ.] गोयमा ! नो नेरइयकम्मासीविसे, तिरिक्खजोणियकम्मासीविसे वि, मणुस्सकम्मासीविसे वि, देवकम्मासीविसे वि।

७. [प्र.] भगवन् ! यदि कर्म-आशीविष है तो क्या वह नैरयिक-कर्म-आशीविष है या तिर्यञ्चयोनिक-कर्म-आशीविष है या मनुष्य-कर्म-आशीविष है या देव-कर्म-आशीविष है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक-कर्म-आशीविष नहीं, किन्तु तिर्यञ्चयोनिक-कर्म-आशीविष है, मनुष्य-कर्म-आशीविष है और देव-कर्म-आशीविष है।

7. [Q.] *Bhante* ! If there are *karma-ashivish* (poisonous by action), are they *nairayik-karma-ashivish* (poisonous by action among infernal beings), *tiryanch-yonik-karma-ashivish* (poisonous by action among animals), *manushya-karma-ashivish* (poisonous by action among humans) or *dev-karma-ashivish* (poisonous by action among divine beings)?

[Ans.] Gautam ! There are no *nairayik-karma-ashivish* (poisonous by action among infernal beings), but only *tiryanch-yonik-karma-ashivish* (poisonous by action among animals), *manushya-karma-ashivish* (poisonous by action among humans) and *dev-karma-ashivish* (poisonous by action among divine beings).

८. [प्र.] जइ तिरिक्खजोणियकम्मासीविसे किं एगिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे, जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे ?

[उ.] गोयमा ! नो एगिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे जाव नो चतुरिंदियतिरिक्खजोणिय-कम्मासीविसे, पंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे।

८. [प्र.] भगवन् ! यदि तिर्यञ्चयोनिक-कर्म-आशीविष है तो क्या एकेन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिक-कर्म-आशीविष है अथवा पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक-कर्म-आशीविष है ?

[उ.] गौतम ! एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय तिर्यञ्चयोनिक-कर्म-आशीविष नहीं, परन्तु पंचेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक-कर्म-आशीविष है।

8. [Q.] *Bhante* ! If there are *tiryanch-yonik-karma-ashivish* (poisonous by action among animals) then are they *ekendriya-tiryanch-yonik-karma-ashivish* (poisonous by action among one-sensed animals)... and so on up to... *panchendriya-tiryanch-yonik-karma-ashivish* (poisonous by action among five-sensed animals) ?

[Ans.] Gautam ! There are no *ekendriya*, *dvindriya*, *trindriya*, and *chaturindriya-tiryanch-yonik-karma-ashivish* (poisonous by action among one, two, three and four-sensed animals) but only *panchendriya-tiryanch-yonik-karma-ashivish* (poisonous by action among five-sensed animals).

९. [प्र.] जइ पंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे किं सम्मुच्छिमपंचेंदियतिरिक्खजोणिय-कम्मासीविसे, गब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे ?

[उ.] एवं जहा वेउव्वियसरीरस्स भेओ जाव पज्जत्तसंखेज्जवासाउयगब्भवक्कंतिय-पंचिंदियतिरिक्खजोणियकम्मासीविसे, नो अपज्जत्तासंखेज्जवासाउय जाव कम्मासीविसे।

९. [प्र.] भगवन् ! यदि पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक-कर्म-आशीविष है तो क्या सम्मूर्च्छिम पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिक-कर्म-आशीविष है या गर्भज पञ्चेन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिक-कर्म-आशीविष है ?

[उ.] गौतम ! (प्रज्ञापनासूत्र के इक्कीसवें शरीरपद में) वैक्रियशरीर के सम्बन्ध में जिस प्रकार कहा है, उसी प्रकार कहना चाहिए यावत् पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयुष्य वाला गर्भज कर्मभूमिज पंचेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक-कर्म-आशीविष होता है; परन्तु अपर्याप्त संख्यात वर्ष की आयुष्य वाला यावत् कर्म-आशीविष नहीं होता।

9. [Q.] *Bhante* ! If there are *panchendriya-tiryanch-yonik-karma-ashivish* (poisonous by action among five-sensed animals) then are they *sammurchhim panchendriya-tiryanch-yonik-karma-ashivish* (poisonous by action among five-sensed animals of asexual origin) or *garbhaj panchendriya-tiryanch-yonik-karma-ashivish* (poisonous by action among five-sensed animals born out of womb) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! What has been stated about *Vaikriya sharira* (transmutable body) in chapter 21 (Sharira Pad) of *Prajnapana Sutra* should be repeated here... and so on up to... there are *paryapt sankhyat varsh ayushya garbhaj panchendriya-tiryanch-yonik-karma-ashivish* (poisonous by action among fully developed five-sensed animals born out of womb with a life-span of countable years) but not *aparyapt asankhyat varsh ayushya garbhaj panchendriya-tiryanch-yonik-karma-ashivish* (poisonous by action among underdeveloped five-sensed animals born out of womb with a life-span of innumerable years).

१०. [प्र.] जइ **मणुस्सकम्मासीविसे** किं **सम्मुच्छिममणुस्सकम्मासीविसे**, **गब्भवक्कंतिय-मणुस्सकम्मासीविसे** ?

[उ.] गोयमा ! णो **सम्मुच्छिममणुस्सकम्मासीविसे। गब्भवक्कंतियमणुस्सकम्मासीविसे**, एवं जहा वेउव्वियसरीरं जाव **पज्जत्तसंखेज्जवासाउयकम्मभूमगगब्भवक्कंतियमणूसकम्मासीविसे, नो अपज्जत्ता** जाव **कम्मासीविसे।**

१०. [प्र.] भगवन् ! यदि मनुष्य-कर्म-आशीविष है तो क्या सम्मूर्च्छिम मनुष्य-कर्म आशीविष है, या गर्भज मनुष्य-कर्म-आशीविष है ?

[उ.] गौतम ! सम्मूर्च्छिम मनुष्य-कर्म-आशीविष नहीं होता। किन्तु गर्भज मनुष्य-कर्म-आशीविष होता है। (प्रज्ञापनासूत्र के इक्कीसवें शरीरपद में) वैक्रियशरीर के सम्बन्ध में जिस प्रकार जीव-भेद कहे हैं, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए; यावत् पर्याप्त संख्यात वर्ष के आयुष्य वाले कर्मभूमिज गर्भज मनुष्य-कर्म-आशीविष होता है; परन्तु अपर्याप्त संख्यात वर्ष की आयु वाले यावत् कर्म-आशीविष नहीं होता।

10. [Q.] *Bhante* ! If there are *manushya-karma-ashivish* (poisonous by action among humans) then are they *sammurchhim manushya-karma-ashivish* (poisonous by action among humans of asexual origin) or **garbhaj manushya-karma-ashivish** (poisonous by action among humans born out of womb) ?

[**Ans.**] Gautam ! There are no *sammurchhim manushya-karma-ashivish* (poisonous by action among humans of asexual origin) but only *garbhaj manushya-karma-ashivish* (poisonous by action among humans born out of womb). What has been stated about *Vaikriya sharira* (transmutable body) in chapter 21 (Sharira Pad) of *Prajnapana Sutra* should be repeated here... and so on up to... there are *paryapt sankhyat varsh ayushya karmabhumij garbhaj manushya-karma-ashivish* (poisonous by action among fully developed humans born out of womb

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

with a life-span of countable years in the land of endeavour) but not *aparyapt asankhyat varsh ayushya garbhaj manushya-karma-ashivish* (poisonous by action among underdeveloped humans born out of womb with a life-span of innumerable years).

११. [प्र.] जइ देवकम्मासीविसे किं भवणवासीदेवकम्मासीविसे जाव वेमाणियदेवकम्मासीविसे ?

[उ.] गोयमा ! भवणवासिदेवकम्मासीविसे, वाणमंतरदेव–, जोतिसिय–, वेमाणियदेवकम्मासीविसे वि।

११. [प्र.] भगवन् ! यदि देव-कर्म-आशीविष होता है तो क्या भवनवासी देव कर्म-आशीविष होता है; यावत् वैमानिक देव-कर्म-आशीविष होता है ?

[उ.] गौतम ! भवनवासी, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक; ये चारों प्रकार के देव-कर्म-आशीविष होते हैं।

11. [Q.] *Bhante* ! If there are *dev-karma-ashivish* (poisonous by action among divine beings) then are they *Bhavan-vaasi dev-karma-ashivish* (poisonous by action among abode dwelling divine beings) or... and so on up to... *Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial vehicular divine beings) ?

[Ans.] Gautam ! There are **dev-karma-ashivish** (poisonous by action among divine beings) in all the four classes of divine beings, namely *Bhavan-vaasi*, *Vanavyantar*, *Jyotishk* and Vaimanik (abode dwelling, interstitial, stellar and celestial vehicular).

१२. [प्र.] जइ भवणवासिदेवकम्मासीविसे किं असुरकुमारभवणवासिदेवकम्मासीविसे जाव थणियकुमार जाव कम्मासीविसे ?

[उ.] गोयमा ! असुरकुमारभवणवासिदेवकम्मासीविसे वि जाव थणियकुमार जाव कम्मासीविसे वि।

१२. [प्र.] भगवन् ! यदि भवनवासी देव-कर्म-आशीविष होता है तो क्या असुरकुमार भवनवासी देव-कर्म-आशीविष होता है, यावत् स्तनितकुमार भवनवासी देव-कर्म-आशीविष होता है ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमार भवनवासी देव-कर्म-आशीविष होता है, यावत् स्तनितकुमार भवनवासी देव भी कर्म-आशीविष होता है।

12. [Q.] *Bhante* ! If there are *Bhavan-vaasi dev-karma-ashivish* (poisonous by action among abode dwelling divine beings) then are they *Asur Kumar Bhavan-vaasi dev-karma-ashivish* (poisonous by action among *Asur Kumar* abode dwelling divine beings) or... and so on up to...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Stanit Kumar Bhavan-vaasi dev-karma-ashivish (poisonous by action among *Stanit Kumar* abode dwelling divine beings)?

[**Ans.**] Gautam ! There are *Asur Kumar Bhavan-vaasi dev-karma-ashivish* (poisonous by action among *Asur Kumar* abode dwelling divine beings)... and so on up to... *Stanit Kumar Bhavan-vaasi dev-karma-ashivish* (poisonous by action among *Stanit Kumar* abode dwelling divine beings) as well.

१३. [प्र.] जइ असुरकुमार जाव कम्मासीविसे किं पज्जत्तअसुरकुमारभवणवासिदेवकम्मासीविसे ? अपज्जत्तअसुरकुमारभवणवासिदेवकम्मासीविसे ?

[उ.] गोयमा ! नो पज्जत्तअसुरकुमार जाव कम्मासीविसे, अपज्जत्तअसुरकुमारभवण-वासिदेवकम्मासीविसे। एवं जाव थणियकुमाराणं।

१३. [प्र.] भगवन् ! यदि असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार भवनवासी देव-कर्म-आशीविष है तो क्या पर्याप्त असुरकुमारादि भवनवासी देव-कर्म-आशीविष है या अपर्याप्त असुरकुमारादि भवनवासी देव-कर्म-आशीविष है ?

[उ.] गौतम ! पर्याप्त असुरकुमार भवनवासी देव-कर्म-आशीविष नहीं, परन्तु अपर्याप्त असुरकुमार भवनवासी देव-कर्म-आशीविष है। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक जानना चाहिए।

13. [Q.] *Bhante* ! If there are *Asur Kumar Bhavan-vaasi dev-karma-ashivish* (poisonous by action among *Asur Kumar* abode dwelling divine beings)... and so on up to... *Stanit Kumar Bhavan-vaasi dev-karma-ashivish* (poisonous by action among *Stanit Kumar* abode dwelling divine beings) then are *Paryapt Asur Kumaradi Bhavan-vaasi dev-karma-ashivish* (poisonous by action among fully developed *Asur Kumar* and other abode dwelling divine beings) or *Aparyapt Asur Kumaradi Bhavan-vaasi dev-karma-ashivish* (poisonous by action among underdeveloped *Asur Kumar* and other abode dwelling divine beings)?

[**Ans.**] Gautam ! There never are *Paryapt Asur Kumar Bhavan-vaasi dev-karma-ashivish* (poisonous by action among fully developed *Asur Kumar* abode dwelling divine beings) but only *Aparyapt Asur Kumar Bhavan-vaasi dev-karma-ashivish* (poisonous by action among underdeveloped *Asur Kumar* abode dwelling divine beings). The same is true for... and so on up to... *Stanit Kumar* divine beings.

१४. [प्र.] जइ वाणमंतरदेवकम्मासीविसे किं पिसायवाणमंतरदेवकम्मासीविसे ?

[उ.] एवं सव्वेसिं पि अपज्जत्तगाणं। जोतिसियाणं सव्वेसिं अपज्जत्तगाणं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४. [प्र.] भगवन् ! यदि वाणव्यन्तर देव-कर्म-आशीविष है तो क्या पिशाच वाणव्यन्तर देव-कर्म-आशीविष है, यावत् गन्धर्व वाणव्यन्तर देव-कर्म-आशीविष है ?

[उ.] गौतम ! वे पिशाचादि सर्व वाणव्यन्तर देव अपर्याप्तअवस्था में कर्म-आशीविष हैं। इसी प्रकार सभी ज्योतिष्क देव भी अपर्याप्त अवस्था में कर्म-आशीविष होते हैं।

14. *Bhante* ! If there are *Vanavyantar dev-karma-ashivish* (poisonous by action among interstitial divine beings) then are they *Pishaach Vanavyantar dev-karma-ashivish* (poisonous by action among *Pishaach* interstitial divine beings) or... and so on up to... *Gandharva Vanavyantar dev-karma-ashivish* (poisonous by action among *Gandharva* interstitial divine beings) ?

[Ans.] Gautam ! There are poisonous by action among all those *Pishaach* and other interstitial divine beings in their underdeveloped state. In the same way all the *Jyotishk* (stellar) divine beings have poisonous by action among them in their underdeveloped state.

१५. [प्र.] जइ **वेमाणियदेवकम्मासीविसे किं कप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसे, कप्पातीतवेमाणियदेवकम्मासीविसे** ?

[उ.] **गोयमा ! कप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसे, नो कप्पातीतवेमाणियदेवकम्मासीविसे।**

१५. [प्र.] भगवन् ! यदि वैमानिक देव कर्माशीविष हैं तो क्या कल्पोपपन्नक वैमानिक देव-कर्माशीविष है, अथवा कल्पातीत वैमानिक देव कर्म-आशीविष है ?

[उ.] गौतम ! कल्पोपपन्नक वैमानिक देव कर्म-आशीविष होता है, किन्तु कल्पातीत वैमानिक देव-कर्म-आशीविष नहीं होता।

15. *Bhante* ! If there are *Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial vehicular divine beings) then are they *Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to *Kalps*) or *Kalpateet Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial Vehicular divine beings beyond the *Kalps*) ?

[Ans.] Gautam ! There are *Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to *Kalps*) but not *Kalpateet Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial vehicular divine beings beyond the *Kalps*) ?

१६. [प्र.] **जइ कप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसे किं सोधम्मकप्पोवग वेमाणियदेव कम्मासीविसे जाव अच्चुयकप्पोवग जाव कम्मासीविसे** ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! सोधम्मकप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसे वि जाव सहस्सारकप्पोवगवेमाणिय-देवकम्मासीविसे वि, नो आणयकप्पोवग जाव नो अच्चुतकप्पोवगवेमाणियदेवकम्मासीविसे।

१६. [प्र.] भगवन् ! यदि कल्पोपपन्नक वैमानिक देव कर्म-आशीविष होता है तो क्या सौधर्म-कल्पोपपन्नक वैमानिक देव कर्म-आशीविष होता है, यावत् अच्युत कल्पोपपन्नक वैमानिक देव कर्म-आशीविष होता है ?

[उ.] गौतम ! सौधर्म-कल्पोपपन्नक वैमानिक देव यावत् सहस्रार कल्पोपपन्नक वैमानिक देव-पर्यन्त कर्म-आशीविष होते हैं, परन्तु आनत, प्राणत, आरण और अच्युत कल्पोपपन्नक वैमानिक देव कर्म-आशीविष नहीं होता।

16. *Bhante* ! If there are *Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to *Kalps*) then are they *Saudharma Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to the *Saudharma Kalp*) or... and so on up to... *Achyut Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to the Achyut *Kalp*) ?

[**Ans.**] Gautam ! There are *Saudharma Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to the *Saudharma Kalp*)... and so on up to... *Sahasrar Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to the *Sahasrar Kalp*) but not *Anat*, *Pranat*, *Aran*, and *Achyut Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to *Anat*, *Pranat*, *Aran*, and *Achyut Kalps*).

१७. [प्र.] जइ सोहम्मकप्पोवग जाव कम्मासीविसे किं पज्जत्तसोधम्मकप्पोवगवेमाणिय० अपज्जत्तगसोहम्मगवेमाणियदेवकम्मासीविसे।

[उ.] गोयमा ! नो पज्जत्तसोहम्मकप्पोवगवेमाणिय०, अपज्जत्तसोहम्मकप्पोवगवेमाणिय-देवकम्मासीविसे। एवं जाव नो पज्जत्तसहस्सारकप्पोवगवेमाणिय जाव कम्मासीविसे, अपज्जत्त-सहस्सारकप्पोवग जाव कम्मासीविसे।

१७. [प्र.] भगवन् ! यदि सौधर्मकल्पोपपन्नक वैमानिक देव कर्म-आशीविष है तो क्या पर्याप्त सौधर्मकल्पोपपन्न वैमानिक कर्म-आशीविष है यावत् अपर्याप्त सौधर्मकल्पोपपन्न वैमानिक देव कर्म-आशीविष है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! पर्याप्त सौधर्मकल्पोपपन्न वैमानिक देव कर्म-आशीविष नहीं, परन्तु अपर्याप्त सौधर्मकल्पोपपन्न वैमानिक देव कर्म-आशीविष है। इसी प्रकार यावत् पर्याप्त सहस्रार-कल्पोपपन्न वैमानिक देव कर्म-आशीविष नहीं, किन्तु अपर्याप्त सहस्रार-कल्पोपपन्नक वैमानिक देव कर्म-आशीविष है।

17. *Bhante*! If there are *Saudharma Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to the *Saudharma Kalp*) then are they *Paryapt Saudharma Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among fully developed celestial vehicular divine beings belonging to *Saudharma Kalp*) or *Aparyapt Saudharma Kalpopapannak vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among underdeveloped celestial vehicular divine beings belonging to *Saudharma Kalp*)?

[Ans.] Gautam ! There never are *Paryapt Saudharma Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among fully developed celestial vehicular divine beings belonging to Saudharma Kalp) but only *Aparyapt Saudharma Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among underdeveloped celestial vehicular divine beings belonging to *Saudharma Kalp*). In the same way there are... and so on up to... no Paryapt *Sahasrar Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among fully developed celestial vehicular divine beings belonging to the *Sahasrar Kalp*) but only *Aparyapt Sahasrar Kalpopapannak Vaimanik dev-karma-ashivish* (poisonous by action among underdeveloped celestial vehicular divine beings belonging to the *Sahasrar Kalp*).

विवेचन : आशीविष और उसके प्रकारों का स्वरूप—आशी का अर्थ है—दाढ़ (दंष्ट्रा)। जिन जीवों की दाढ़ में विष होता है, वे 'आशीविष' कहलाते हैं। आशीविष प्राणी दो प्रकार के होते हैं—जाति-आशीविष और कर्म-आशीविष। साँप, बिच्छू, मेंढक आदि जो प्राणी जन्म से ही आशीविष होते हैं, वे जाति-आशीविष कहलाते हैं और जो कर्म यानी शाप आदि क्रिया द्वारा प्राणियों का विनाश करने में समर्थ हैं, वे कर्म-आशीविष कहलाते हैं। पर्याप्तक तिर्यञ्च-पंचेन्द्रिय और मनुष्य को तपश्चर्या आदि से अथवा अन्य किसी गुण के कारण आशीविष-लब्धि प्राप्त हो जाती है। ये जीव आशीविष-लब्धि के प्रभाव से शाप देकर दूसरे का नाश करने की शक्ति पा लेते हैं। आशीविषलब्धि वाले जीव आठवें देवलोक से आगे उत्पन्न नहीं हो सकते। जिन्होंने पूर्वभव में आशीविषलब्धि का अनुभव किया था, अतः पूर्वानुभूतभाव के कारण वे कर्म-आशीविष होते हैं। अतः वे अपर्याप्त अवस्था में ही आशीविषयुक्त होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाति-आशीविष वाले प्राणियों के विष का जो सामर्थ्य बताया है, वह विषयमात्र है। अर्थात् जैसे किसी मनुष्य ने अपना शरीर अर्द्ध-भरतप्रमाण बनाया हो, उसके पैर में यदि बिच्छू डंक मारे तो उसके मस्तक तक उसका विष चढ़ जाता है। इसी प्रकार भरतप्रमाण, जम्बूद्वीपप्रमाण और ढाईद्वीपप्रमाण का अर्थ समझना चाहिए। (सचित्र स्थानांग सूत्र भाग-2 पृष्ठ 5-6 पर इसका विस्तृत वर्णन दिया गया है।)

Elaboration—Poisonous beings and their types—*Ashi* means fangs (teeth or molars or sting). Living beings having poisonous fangs (etc.) are called *ashivish*. Poisonous beings are of two types—*jaati-ashivish* (poisonous by birth or physically poisonous) and *karma-ashivish* (poisonous by action). Snake, scorpion, frog and other living beings that are poisonous by birth are called *jaati-ashivish*. Those who can destroy living beings by their curse, spell or other action are called *karma-ashivish*. Fully developed five-sensed animals and human beings acquire toxifying power through penance or some other activity. Such beings have the power to destroy other beings by causing a spell using this power. Beings with such toxifying power are not born beyond the eighth heaven (divine realm). Those among divine beings who acquired this toxifying power in their previous birth are karma-ashivish in context of their earlier experience. That is the reason they are poisonous only in their underdeveloped state.

The capacity of innately poisonous beings stated here is conceptual only. For example if a human being is of huge dimension (as large as half of Bharat area) and is bitten by a scorpion on his foot then the poison reaches his head covering the large distance. The same is true for dimensions of Jambu continent and Adhaidveep (two and a half continents).

छद्मस्थ के दस स्थान अज्ञेय TEN THINGS UNKNOWN TO CHHADMASTH

१८. दस ठाणाइं छउमत्थे सव्वभावेणं न जाणति न पासति, तं जहा-धम्मत्थिकायं १, अधम्मत्थिकायं २, आगासत्थिकायं ३, जीवं असरीरपडिबद्धं ४, परमाणुपोग्गलं ५, सद्दं ६, गंधं ७, वातं ८, अयं जिणे भविस्सति वा ण वा भविस्सइ ९, अयं सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्सइ वा न वा करेस्सइ १०। एयाणि चेव उप्पन्ननाण-दंसणधरे अरहा जिणे केवली सव्वभावेणं जाणति पासति, तं जहा-धमत्थिकायं १ जाव करेस्सइ वा न वा करेस्सइ १०।

१८. छद्मस्थ पुरुष इन दस स्थानों (बातों) को सर्वभाव से (प्रत्यक्ष रूप से) नहीं जानता और नहीं देखता। वे इस प्रकार हैं-(१) धर्मास्तिकाय, (२) अधर्मास्तिकाय, (३) आकाशास्तिकाय, (४) शरीर से रहित (मुक्त) जीव, (५) परमाणुपुद्गल, (६) शब्द, (७) गन्ध, (८) वायु, (९) यह जीव जिन होगा या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं, तथा (१०) यह जीव सभी दुःखों का अन्त करेगा या नहीं ? इन्हीं दस स्थानों (बातों) को उत्पन्न (केवल) ज्ञान-दर्शन के धारक अरिहन्त-जिनकेवली ही सर्वभाव से जानते और देखते हैं। यथा-धर्मास्तिकाय यावत्-'यह जीव समस्त दुःखों का अन्त करेगा या नहीं।

18. A *chhadmasth* (one who is short of omniscience due to residual *karmic* bondage) does not know and see (directly perceive) ten things (*sthaan*) from all angles (*sarvabhaava*)—(1) *Dharmastikaaya* (motion entity), (2) *Adharmastikaaya* (rest entity), (3) *Akashastikaaya* (space entity), (4) *Asharira-pratibaddha* jiva (unembodied soul), (5) *Paramanu-pudgala* (ultimate particle of matter), (6) *Shabd* (sound), (7) *Gandh* (smell), (8) *Vayu* (air), (9) whether a soul will or will not become *Jina*, and (10) whether a soul will or will not end all misery. Only an *Arihant*, *Jina* or *Kevali* (different terms for an omniscient) endowed with omniscience and ultimate perception know and see these ten things from all angles—(1) *Dharmastikaaya* (motion entity)... and so on up to... (10) whether a soul will or will not end all misery.

विवेचन : छद्मस्थ का विशेष अर्थ-यों तो छद्मस्थ का सामान्य अर्थ है-केवलज्ञानरहित, किन्तु यहाँ छद्मस्थ का विशेष अर्थ है--अवधिज्ञान आदि विशिष्ट ज्ञानरहित; क्योंकि विशिष्ट अवधिज्ञान धर्मास्तिकाय आदि को अमूर्त्त होने से नहीं जानता-देखता, किन्तु परमाणु आदि जो मूर्त्त हैं, उन्हें वह जान-देख सकता है, क्योंकि विशिष्ट अवधिज्ञान का विषय सर्वमूर्त्त द्रव्य हैं। 'सव्वभावेणं' (सर्वभाव से) का अर्थ अवधि आदि विशिष्ट ज्ञानरहित छद्मस्थ, धर्मास्तिकाय आदि दस वस्तुओं को प्रत्यक्ष रूप से नहीं जानता-देखता। उत्पन्न ज्ञान-दर्शनधारक, अरिहन्त जिनकेवली, साक्षात् रूप से जानते-देखते हैं। *(वृत्ति, पत्रांक ३४२)*

Elaboration—*Chhadmasth* in this context—The general meaning of chhadmasth is a person short of omniscience. But here it has a special meaning and that is—devoid of higher knowledge like *Avadhi-jnana*. This is because a person endowed with *avadhi-jnana* cannot know and see intangible things like motion entity but he can see tangible things like ultimate particle of matter because all tangible things come under the purview of special *Avadhi-jnana*. *Savva-bhaavena* (*Sarva-bhaavaat*) conveys that a *chhadmasth* devoid of higher knowledge cannot directly perceive these ten things including motion entity. But *Arihant*, *Jina* and *Kevali* having omniscience can directly perceive the same. *(Vritti, leaf 342)*

ज्ञान और अज्ञान के प्रकार TYPES OF KNOWLEDGE AND WRONG KNOWLEDGE

१९. [प्र.] कतिविहे णं भंते ! नाणे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहे नाणे पण्णत्ते, तं जहा-आभिणिबोहियनाणे, सुयनाणे, ओहिनाणे, मणपज्जवनाणे, केवलनाणे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छद्मस्थ 10 बातें सर्व भाव से नहीं जानता

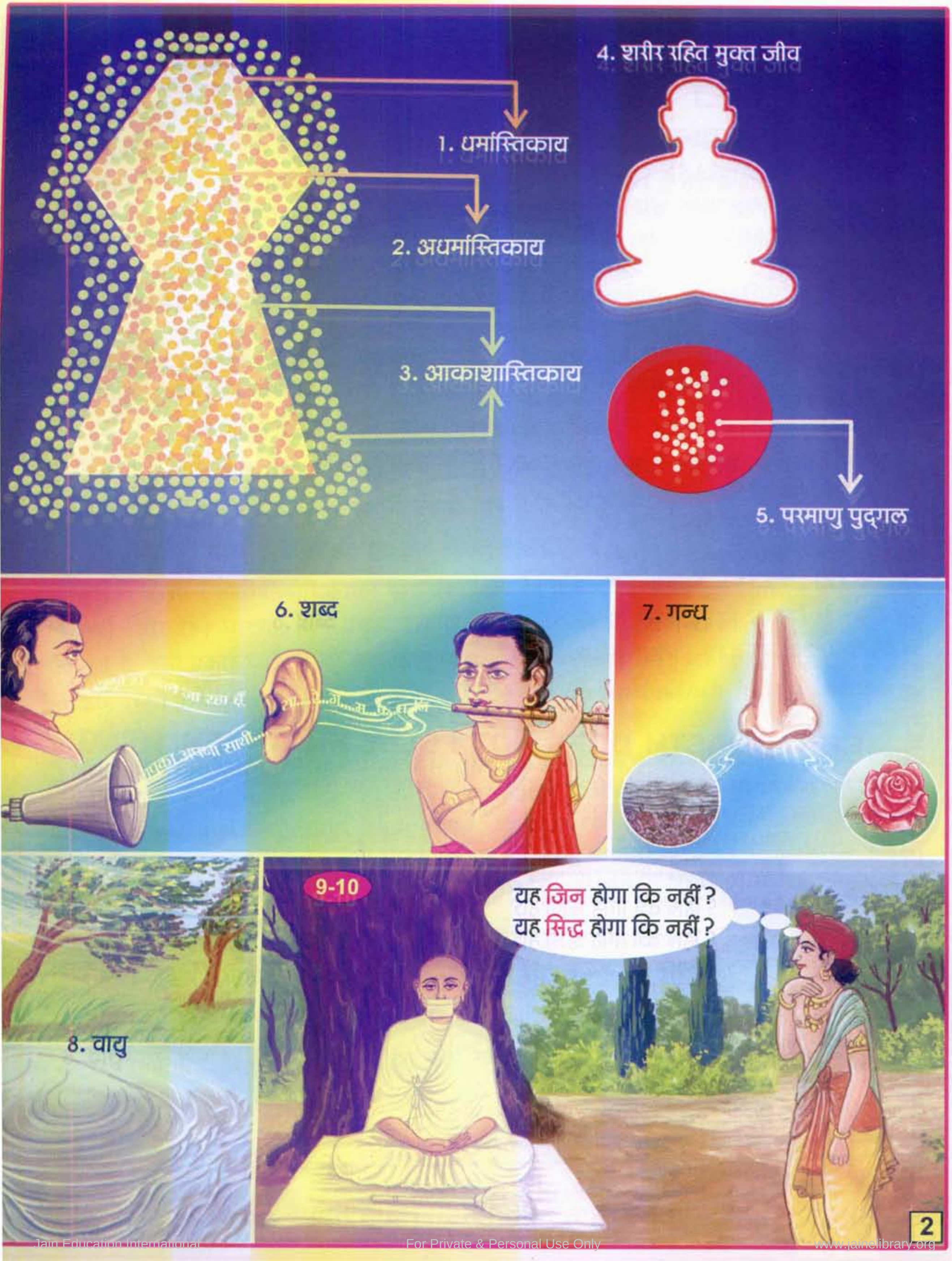

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 2

Illustration No. 2

छद्मस्थ ये 10 बातें सर्वथा नहीं जानता

छद्मस्थ जीव वे होते हैं, जिन्हें केवलज्ञान प्राप्त नहीं हुआ है। ये जीव निम्नलिखित दस बातों को सर्वथा (सर्वपर्याय से) नहीं जानते, केवल सामान्य रूप से ही जानते हैं—

1. **धर्मास्तिकाय**—जीव और पुद्‌गल की गति करने में सहायक जो द्रव्य है, उसे धर्मास्तिकाय कहते हैं। यह अरूपी है।

2. **अधर्मास्तिकाय**—जीव और पुद्‌गल को स्थिर रहने में सहायक जो द्रव्य है उसे अधर्मास्तिकाय कहते हैं। यह भी अरूपी है।

3. **आकाशास्तिकाय**—सब द्रव्यों को अवकाश (जगह) देने वाले द्रव्य को आकाशास्तिकाय कहते हैं। यह भी अरूपी है।

4. **शरीर रहित जीव**—केवल सिद्ध भगवान का होता है। वह भी अरूपी है।

5. **परमाणु पुद्‌गल**—वर्ण, गंध, रस, स्पर्श वाले रूपी द्रव्य, जिसके दो भाग नहीं हो सकते, ऐसे पदार्थ को परमाणु कहते हैं।

6. **शब्द**—जीव-अजीव की ध्वनि।

7. **गंध**—सुगन्ध एवं दुर्गन्ध।

8. **वायु**—हवा।

9. यह जीव **जिन** होगा कि नहीं ?

10. यह जीव सब दु:खों का अंत करेगा (**सिद्ध** होगा) या नहीं ?

—शतक 8, उ. 2, सूत्र 11

CHHADMASTH DOES NOT FULLY KNOW TEN THINGS

Chhadmasth is a living being short of omniscience. Such beings do not know and see the following ten things from all angles; they only know generally –

(1) **Dharmastikaaya** — motion entity that helps matter to move. It is formless.

(2) **Adharmastikaaya** — rest entity that helps matter in remaining stationary. It is formless.

(3) **Akashastikaaya** — space entity that provides place to things and entities. It is formless.

(4) **Asharira-pratibaddha jiva** – un-embodied soul; this relates to Siddhas only. It is formless.

(5) **Paramanu-pudgala** — ultimate particle of matter having properties of colour, smell, taste and touch; it is indivisible and has form.

(6) **Shabd** — sound produced by the living as well as the non-living.

(7) **Gandh** — smell, both pleasant and foul.

(8) **Vayu** — air.

(9) Whether a soul will or will not become Jina ?

(10) Whether a soul will or will not end all misery to become Siddha ?

- Shatak 8, lesson-2, Sutra-11, page-22

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९. [प्र.] भगवन् ! ज्ञान कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञान पाँच प्रकार का है। यथा-(१) आभिनिबोधिकज्ञान, (२) श्रुतज्ञान, (३) अवधिज्ञान, (४) मनःपर्यवज्ञान, और (५) केवलज्ञान।

19. [Q.] *Bhante* ! How many types of knowledge (*jnana*) are there ?

[Ans.] Gautam ! Knowledge is of five kinds—(1) *Abhinibodhik jnana* or *Mati-jnana* (sensory knowledge or to know the apparent form of things coming before the soul by means of five sense organs and the mind), (2) *Shrut-jnana* (scriptural knowledge), (3) *Avadhi-jnana* (extrasensory perception of the physical dimension; something akin to clairvoyance), (4) *Manah-paryav-jnana* (extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings, something akin to telepathy) and (5) *Keval-jnana* (omniscience).

२०. [प्र.] **से किं तं आभिणिबोहियनाणे ?**

[उ.] **आभिणिबोहियनाणे चतुव्विहे पण्णत्ते, तं जहा—उग्गहो, ईहा, अवाओ, धारणा। एवं जहा रायप्पसेणइए णाणाणं भेदो तहेव इह वि भाणियव्वो जाव से त्तं केवलनाणे।**

२०. [प्र.] भगवन् ! आभिनिबोधिकज्ञान कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! आभिनिबोधिकज्ञान चार प्रकार का है। यथा-(१) अवग्रह, (२) ईहा, (३) अवाय (अपाय), और (४) धारणा। जिस प्रकार राजप्रश्नीयसूत्र (सूत्र २४१ केशी प्रदेशी संवाद) में ज्ञानों के भेद कहे हैं, उसी प्रकार यहाँ भी कहने चाहिए, यावत् 'यह है वह केवलज्ञान'; यहाँ तक कहना चाहिए।

20. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *abhinibodhik jnana* (sensory knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! *Abhinibodhik jnana* (sensory knowledge) is of four kinds—(1) *avagraha* (to acquire cursory knowledge), *iha* (to study), *avaaya* (to conclude), and *dhaarana* (to absorb). The details about types of knowledge should be quoted from *Rajaprashniya Sutra* (Sutra 241, Keshi-Pradeshi dialogue)... and so on up to... 'this is that omniscience'.

२१. [प्र.] **अण्णाणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?**

[उ.] **गोयमा ! तिविहे पण्णत्ते, तं जहा—मइअन्नाणे, सुयअन्नाणे, विभंगनाणे।**

२१. [प्र.] भगवन् ! अज्ञान कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! अज्ञान तीन प्रकार का कहा गया है। वह इस प्रकार है-(१) मति-अज्ञान, (२) श्रुत-अज्ञान, और (३) विभंगज्ञान।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

21. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *ajnana* (absence of right knowledge, which means ignorance or wrong knowledge)?

[Ans.] Gautam ! *ajnana* (ignorance or wrong knowledge) is of three kinds—(1) *Mati-ajnana* (wrong sensory knowledge), (2) *Shrut-ajnana* (absence of scriptural knowledge or wrong scriptural knowledge) and (3) *Vibhang-jnana* (pervert knowledge).

२२. [प्र.] से किं तं मइअण्णाणे ?

[उ.] **मइअण्णाणे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–उग्गहो जाव धारणा।**

२२. [प्र.] भगवन् ! मति-अज्ञान कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! मति-अज्ञान चार प्रकार का है। यथा-(१) अवग्रह, (२) ईहा, (३) अवाय, और (४) धारणा।

22. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *Mati-ajnana* (wrong sensory knowledge)?

[Ans.] Gautam ! *Mati-ajnana* (wrong sensory knowledge) is of four kinds—(1) *avagraha* (to acquire cursory knowledge), *iha* (to study), *avaya* (to conclude), and *dhaarana* (to absorb) (here it relates to wrong knowledge).

२३. [प्र.] से किं तं उग्गहे ?

[उ.] **उग्गहे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–अत्थोग्गहे य वंजणोग्गहे य। एवं जहेव आभिणिबोहियनाणं तहेव, नवरं एगट्ठियवज्जं जाव नोइंदियधारणा, से त्तं धारणा। से त्तं मतिअण्णाणे।**

२३. [प्र.] भगवन् ! वह अवग्रह कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! अवग्रह दो प्रकार का है। यथा-(१) अर्थावग्रह, और (२) व्यञ्जनावग्रह। जिस प्रकार (नन्दीसूत्र सूत्र ५४-५७ में) आभिनिबोधिकज्ञान के विषय में कहा है, उसी प्रकार यहाँ भी जान लेना चाहिए। विशेष इतना ही है कि वहाँ आभिनिबोधिकज्ञान के प्रकरण में अवग्रह आदि के एकार्थिक (समानार्थक) शब्द कहे हैं, उन्हें छोड़कर यावत्-'नोइन्द्रिय-धारणा है', यह हुआ धारणा का स्वरूप यहाँ तक कहना चाहिए। यह मति-अज्ञान का स्वरूप है।

23. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *avagraha* (to acquire cursory knowledge)?

[Ans.] Gautam ! *Avagraha* (to acquire cursory knowledge) is of two types—(1) *Arthavagraha* (acquisition of meaning) and (2) *Vyanjanavagraha* (acquisition of attributes). Details should be quoted from *Nandi Sutra*, mentioned in connection with *Abhinibodhik jnana*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The difference is that only one meaning (positive) has been given there, instead of that the opposite (negative or wrong) should be taken... and so on up to... *no-indriya dhaarana* (non-sensual absorption) and that is *dhaarana*. This is all about Mati-ajnana (wrong sensory knowledge).

२४. [प्र.] से किं तं सुयअण्णाणे ?

[उ.] सुयअण्णाणे जं इमं अण्णाणिएहिं मिच्छद्दिट्ठिएहिं जहा नंदीए जाव चत्तारि वेदा संगोवंगा। से त्तं सुयअन्नाणे।

२४. [प्र.] भगवन् ! श्रुत-अज्ञान किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार नन्दीसूत्र (पृष्ठ ३५३) में कहा है-'जो अज्ञानी मिथ्यादृष्टियों द्वारा प्ररूपित है'; इत्यादि यावत्-सांगोपांग चार वेद तक श्रुत-अज्ञान है। यह श्रुत-अज्ञान का वर्णन है।

24. [Q.] *Bhante* ! What is this *Shrut-ajnana* (absence of scriptural knowledge or wrong scriptural knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! It is as mentioned in *Nandi Sutra* (p. 353). From 'that which has been propagated by ignorant heretics'... and so on up to... four *Vedas* is wrong scriptural knowledge. This is all about *Shrut-ajnana* (absence of scriptural knowledge or wrong scriptural knowledge).

२५. [प्र.] से किं तं विभंगनाणे ?

[उ.] विभंगनाणे अणेगविहे पण्णत्ते, तं जहा-गामसंठिए, नगरसंठिए जाव संन्निवेससंठिए, दीवसंठिए, समुद्दसंठिए, वाससंठिए, वासहरसंठिए, पव्वयसंठिए, रुक्खसंठिए, थूभसंठिए, हयसंठिए, गयसंठिए, नरसंठिए, किन्नरसंठिए, किंपुरिससंठिए, महोरगसंठिए, गंधव्वसंठिए, उसभसंठिए, पसु-पसय-विहग-वानरणाणासंठाणसंठिते पण्णत्ते।

२५. [प्र.] भगवन् ! वह विभंगज्ञान कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! विभंगज्ञान अनेक प्रकार का है। यथा-ग्रामसंस्थित (ग्राम आदि का अवलम्बन होने से ग्राम के आकार का हो जाता है), नगरसंस्थित (नगराकार) यावत् सन्निवेशसंस्थित, द्वीपसंस्थित, समुद्रसंस्थित, वर्षसंस्थित (भरतादि क्षेत्र के आकार), वर्षधरसंस्थित (क्षेत्र की सीमा करने वाले पर्वतों के आकार का), सामान्य पर्वतसंस्थित, वृक्षसंस्थित, स्तूपसंस्थित, हयसंस्थित (अश्वाकार), गजसंस्थित, नरसंस्थित, किन्नरसंस्थित, किम्पुरुषसंस्थित, महोरगसंस्थित, गन्धर्वसंस्थित, वृषभसंस्थित (बैल के आकार का), पशु, पशय (अर्थात् दो खुर वाले जंगली चौपाये जानवर), विहग (पक्षी), और वानर के आकार वाला है। इस प्रकार विभंगज्ञान नाना संस्थानसंस्थित (आकारों से युक्त) कहा गया है। *(पाँच ज्ञान, तीन अज्ञान का विस्तृत वर्णन सचित्र नन्दीसूत्र, पृष्ठ ७९ पर देखें।)*

25. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *Vibhang-jnana* (pervert knowledge) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! *Vibhang-jnana* (pervert knowledge) is of many types—based on village (when acquired in relation to a village it takes that form), based on city... and so on up to... based on inhabited areas, based on island (or continent), based on sea, based on areas (like Bharat area), based on *Varshadhar* (like a mountain marking the border of an area), based on mountain, based on tree, based on mound, based on horse, based on elephant, based on human, based on Kinnar, based on Kimpurush, based on Mahorag, based on Gandharva, based on bull, based on animal, based on hoofed animal, based on bird, and based on monkey. Thus *Vibhang-jnana* (pervert knowledge) is said to be based on numerous forms. *(For detailed information about five jnanas and three ajnanas refer to Illustrated Nandi Sutra, p. 79)*

जीवों में ज्ञान-अज्ञान **KNOWLEDGE IN LIVING BEINGS**

२६. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं नाणी, अन्नाणी ?

[उ.] गोयमा ! जीवा नाणी वि, अन्नाणी वि। जे नाणी ते अत्थेगइया दुन्नाणी, अत्थेगइया तिन्नाणी, अत्थेगइया चउनाणी, अत्थेगइया एगनाणी।

जे दुन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी य सुयनाणी य। जे तिन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी, ओहिनाणी, अहवा आभिणिबोहियणाणी, सुयणाणी, मणपज्जवनाणी। जे चउणाणी ते आभिणि-बोहियणाणी, सुयणाणी, ओहिणाणी, मणपज्जवणाणी।

जे एगनाणी ते नियमा केवलनाणी।

जे अण्णाणी ते अत्थेगइया दुअण्णाणी, अत्थेगइया तिअण्णाणी। जे दुअण्णाणी ते मइअण्णाणी य सुयअण्णाणी य। जे तिअण्णाणी ते मइअण्णाणी, सुयअण्णाणी, विभंगनाणी।

२६. [प्र.] भगवन् ! जीव ज्ञानी है या अज्ञानी है ?

[उ.] गौतम ! जीव ज्ञानी भी है और अज्ञानी भी है। जो जीव ज्ञानी हैं, उनमें से कुछ जीव दो ज्ञान वाले हैं, कुछ जीव तीन ज्ञान वाले हैं, कुछ जीव चार ज्ञान वाले हैं और कुछ जीव एक ज्ञान वाले हैं।

जो दो ज्ञान वाले हैं, वे मतिज्ञानी और श्रुतज्ञानी होते हैं। जो तीन ज्ञान वाले हैं, वे आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी हैं, अथवा आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और मनःपर्यवज्ञानी होते हैं। जो चार ज्ञान वाले हैं, वे आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी और मनःपर्यवज्ञानी हैं।

जो एक ज्ञान वाले हैं, वे नियमतः केवलज्ञानी हैं।

जो जीव अज्ञानी हैं, उनमें से कुछ जीव दो अज्ञान वाले हैं, कुछ तीन अज्ञान वाले होते हैं। जो जीव दो अज्ञान वाले हैं, वे मति-अज्ञानी और श्रुत-अज्ञानी हैं; जो जीव तीन अज्ञान वाले हैं, वे मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी और विभंगज्ञानी हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मतिज्ञान श्रुतज्ञान

उपयोग से सामान्य रूप से सर्व-द्रव्य, सर्व-क्षेत्र,सर्व-काल, सर्व-भाव जानता देखता है।

अवधि ज्ञान

संपूर्ण लोक और अलोक में लोक जितने असंख्य खण्ड अवधि ज्ञानी देख सकता है।

मनः पर्यव ज्ञान

अढ़ाई द्वीप के अन्दर के संज्ञी जीवों के मनोगत भाव

केवल ज्ञान

लोकालोक के सर्व द्रव्य पर्यायों को विशिष्ट रूप से जानते देखते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 3

Illustration No. 3

पाँच ज्ञान का उत्कृष्ट विषय

ज्ञान जीव का स्वाभाविक गुण है। ज्ञान के पाँच भेद बताये गये हैं–

1. मति ज्ञान, 2. श्रुत ज्ञान, 3. अवधि ज्ञान, 4. मन:पर्यव ज्ञान, 5. केवल ज्ञान।

बुद्धि द्वारा ग्राह्य ज्ञान को **मतिज्ञान** कहते हैं। ये पाँच इंद्रियों और मन से होता है। सुनने, बोलने या व्यक्त करने योग्य ज्ञान को **श्रुतज्ञान** कहते हैं। मर्यादित क्षेत्र के रूपी पदार्थों को जानने वाले ज्ञान को **अवधिज्ञान** कहते हैं। मनुष्य क्षेत्र के संज्ञी जीवों के मनोगत भावों को जानने वाले ज्ञान को **मन:पर्यव ज्ञान** कहते हैं। सर्व रूपी-अरूपी द्रव्यों की सर्व पर्यायों को जानने वाले ज्ञान को **केवलज्ञान** कहते हैं।

मति-श्रुत ज्ञानी—द्रव्य से सर्व द्रव्य, क्षेत्र से सर्व क्षेत्र, काल से सर्व काल और भाव से सर्व भावों को उपयोग से सामान्य रूप से जानते-देखते हैं अर्थात् सर्व द्रव्य की, सर्वकाल आदि की सभी पर्यायों को नहीं जानते हैं। **अवधिज्ञानी**—सम्पूर्ण लोक के सर्व रूपी द्रव्य को जानते-देखते हैं। अलोक में भी अगर लोक जितने असंख्य खंड हों तो उसको भी देखने की शक्ति रखते हैं (अलोक में रूपी द्रव्य होते ही नहीं, इसलिए देखते नहीं। अगर होते तो देख सकते थे।)। **मन:पर्यव ज्ञानी**—मनुष्य क्षेत्र के अंदर जितने भी संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव हैं उनके मनोगत भावों को जानते हैं। यदि देव यहाँ आते हैं तो उसके भी मनोगत भाव को जान सकते हैं। **केवलज्ञानी** लोक-अलोक के सर्व द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव को, सर्व पर्यायों को जानते-देखते हैं।

—शतक 8, उ. 2, सूत्र 19

MAXIMUM RANGES OF FIVE KINDS OF KNOWLEDGE

Knowledge is the natural attribute of soul. It is of five kinds –

(1) Mati-jnana, (2) Shrut-jnana, (3) Avadhi-jnana, (4) Manah-paryav-jnana and (5) Keval-jnana.

Mati-jnana is sensory knowledge and is acquired by means of five sense organs and the mind. **Shrut-jnana** is scriptural knowledge that is acquired through hearing and conveyed or expressed by speaking. **Avadhi-jnana** is extrasensory perception of limited physical dimension. **Manah-paryav-jnana** is extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of sentient beings living in area of humans. **Keval-jnana** is omniscience or the knowledge of all modes of all things with and without form.

Mati-shrut jnani (endowed with sensual and scriptural knowledge) – Those who know and see all things in all areas, at all times and all angles, but ordinarily. In other words they do not know and see all modes of all things etc. **Avadhi jnani** – Those who know and see all things in physical dimension (having form) in the whole Lok. They have power to see things with form even in Alok (unoccupied space) in case they did exist. **Manah-paryav jnani** – Those having extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of sentient beings living in area of humans. They also are capable of knowing the thoughts of divine beings when they enter the area of humans. **Keval jnani** – They have the knowledge of all modes of all things with and without form.

— Shatak-8, lesson-2, Sutra-19

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

26. [Q.] *Bhante* ! Are living beings *jnani* (endowed with knowledge) or *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! Living beings are *jnani* (endowed with knowledge) as well as *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). Among those who are endowed with knowledge, some are endowed with two kinds of knowledge, some with three kinds, some with four kinds and some with one kind.

Those with two kinds are *mati-jnani* (endowed with sensual knowledge) and *shrut-jnani* (endowed with scriptural knowledge). Those with three kinds are either *mati-jnani* (endowed with sensual knowledge), *shrut-jnani* (endowed with scriptural knowledge) and *avadhi-jnani* (endowed with extrasensory perception of the physical dimension; something akin to clairvoyance), or *mati-jnani* (endowed with sensual knowledge), *shrut-jnani* (endowed with scriptural knowledge) and *manahparyava-jnani* (endowed with extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings, something akin to telepathy). Those with four kinds are *mati-jnani*, *shrut-jnani*, *avadhi-jnani* and *manahparyava-jnani*.

Those with one kind are essentially *Keval-jnani* (omniscient).

Among those who are *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge), some are with two kinds of *ajnana* (ignorance or wrong knowledge) and some with three kinds. Those with two kinds are *mati-ajnani* (with wrong sensual knowledge) and *shrut-ajnani* (with ignorance related to scriptural knowledge or wrong scriptural knowledge). Those with three kinds are *mati-ajnani*, *shrut-ajnani* and *vibhang-jnani* (having pervert knowledge).

२७. [प्र.] नेरइया णं भंते ! किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! नाणी वि अण्णाणी वि। जे नाणी ते नियमा तिन्नाणी, तं जहा–आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी ओहिनाणी।

जे अण्णाणी ते अत्थेगइया दुअण्णाणी, अत्थेगइया तिअण्णाणी। एवं तिण्णि अण्णाणाणि भयणाए।

२७. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव ज्ञानी भी हैं और अज्ञानी भी हैं। उनमें जो ज्ञानी हैं, वे नियमतः तीन ज्ञान वाले हैं; यथा–आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी।

जो अज्ञानी हैं, उनमें से कुछ दो अज्ञान वाले हैं और कुछ तीन अज्ञान वाले हैं। इस प्रकार तीन अज्ञान भजना (विकल्प) से होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

27. [Q.] Bhante ! Are infernal beings *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are *jnani* (endowed with knowledge) as well as *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). Those who are endowed with knowledge are as a rule *mati-jnani* (endowed with sensual knowledge), *shrut-jnani* (endowed with scriptural knowledge) and *avadhi-jnani* (extrasensory perception of the physical dimension; something akin to clairvoyance).

Among those who are *ajnanis* (ignorants or with wrong knowledge) some are with two kinds of *ajnanas* (kinds of wrong knowledge) and some with three. Thus, generally speaking they are with different alternative combinations of three *ajnanas*.

२८. [प्र.] असुरकुमारा णं भंते ! किं नाणी अण्णाणी ?

[उ.] जहेव नेरइया तहेव तिण्णि नाणाणि नियमा, तिण्णि य अण्णाणाणि भयणाए। एवं जाव थणियकुमारा।

२८. [प्र.] भगवन् ! असुरकुमार ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! जैसे नैरयिकों का कथन किया है, उसी प्रकार असुरकुमारों का भी कथन करना चाहिए। अर्थात् जो ज्ञानी हैं, वे नियमतः तीन ज्ञान वाले हैं और जो अज्ञानी हैं, वे भजना (विकल्प) से तीन अज्ञान वाले हैं। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार तक कहना चाहिए।

28. [Q.] *Bhante* ! Are *Asur Kumars* (a kind of divine beings) *jnani* (endowed with right knowledge) or *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! What has been said about infernal beings should be repeated here. Which means, those who are *jnani* (endowed with right knowledge) are as a rule endowed with three kinds of knowledge. And those who are *ajnanis* are, generally speaking, with different alternative combinations of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge). The same should be repeated for divine beings up to *Stanit Kumars*.

२९. [प्र.] पुढविक्काइया णं भंते ! किं नाणी अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! नो नाणी, अण्णाणी–मइअण्णाणी य, सुयअण्णाणी य। एवं जाव वणस्सइकाइया।

२९. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी नहीं हैं, अज्ञानी हैं। वे नियमतः दो अज्ञान वाले हैं; यथा–मति–अज्ञानी और श्रुत–अज्ञानी। इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक पर्यन्त कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

29. [Q.] *Bhante* ! Are earth-bodied beings (*prithvikaayik*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are not *jnani* (endowed with knowledge) but only *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). As a rule they are with two *ajnanas—mati ajnani* (with wrong sensual knowledge) and *shrut ajnani* (with ignorance related to scriptural knowledge or wrong scriptural knowledge). The same should be repeated for living beings up to plant-bodied beings (*vanaspatikaayik*).

३०. [प्र.] बेइंदियाणं पुच्छा।

[उ.] **गोयमा ! णाणी वि, अण्णाणी वि। जे नाणी ते नियमा दुण्णाणी, तं जहा–आभिणिबोहियनाणी य सुयणाणी य। जे अण्णाणी ते नियमा दुअण्णाणी–आभिणिबोहियअण्णाणी य सुयअण्णाणी य। एवं तेइंदिय–चउरिंदिया वि।**

३०. [प्र.] भगवन् ! द्वीन्द्रिय जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! द्वीन्द्रिय जीव ज्ञानी भी हैं और अज्ञानी भी हैं। जो ज्ञानी हैं, वे नियमतः दो ज्ञान वाले हैं; यथा मतिज्ञानी और श्रुतज्ञानी। जो अज्ञानी हैं, वे नियमतः दो अज्ञान वाले हैं; यथा मति-अज्ञानी और श्रुत-अज्ञानी। इसी प्रकार त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों के विषय में भी कहना चाहिए।

30. [Q.] *Bhante* ! Now the same question about two-sensed beings (*dvindriya jiva*) ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with knowledge) as well as *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). Those who are *jnani* are as a rule with two *jnanas* (kinds of right knowledge)—*mati jnani* (with sensual knowledge) and shrut jnani (with scriptural knowledge). Those who are *ajnani* are as a rule with two *ajnanas* (kinds of wrong knowledge)—*mati ajnani* and *shrut ajnani*. The same should be repeated for three-sensed and four-sensed living beings (*trindriya* and *chaturindriya jivas*).

३१. [प्र.] **पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! नाणी वि अण्णाणी वि। जे नाणी ते अत्थेगइया दुण्णाणी, अत्थेगइया तिन्नाणी। एवं तिण्णि नाणाणि तिण्णि अण्णाणाणि य भयणाए।**

३१. [प्र.] भगवन् ! पंचेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी भी हैं और अज्ञानी भी हैं। जो ज्ञानी हैं, उनमें से कितने ही दो ज्ञान वाले हैं और कई तीन ज्ञान वाले हैं। इस प्रकार (पंचेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक जीवों के) तीन ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

31. [Q.] *Bhante* ! Now the same question about five-sensed animals (*panchendriya tiryanchayonik jivas*) ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) as well as *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). Among those who are *jnani* some are with two *jnanas* and some with three. Thus generally speaking they are with different alternative combinations of three *jnanas* (kinds of right knowledge) and three *ajnanas*.

३२. मणुस्सा जहा जीवा तहेव पंच नाणाणि तिण्णि अण्णाणाणि य भयणाए।

३२. जिस प्रकार औधिक जीवों के विषय में कहा है, उसी प्रकार मनुष्यों में पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

32. Like the general statement for living beings, human beings have different alternative combinations of five *jnanas* and three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

३३. वाणमंतरा जहा नेरइया।

३३. वाणव्यन्तर देवों का कथन नैरयिकों के समान जानना चाहिए।

33. *Vanavyantar devs* (interstitial gods) follow the pattern of infernal beings.

३४. जोतिसिय-वेमाणियाणं तिण्णि नाणा तिण्णि अन्नाणा नियमा।

३४. ज्योतिष्क और वैमानिक देवों में तीन ज्ञान अथवा तीन अज्ञान नियमतः होते हैं।

34. *Jyotishk devs* (Stellar gods) and Vaimanik Devs (Celestial-vehicular gods) have either three *jnanas* (kinds of right knowledge) or three *ajnanas* as a rule.

३५. [प्र.] सिद्धा णं भंते ! पुच्छा।

[उ.] **गोयमा ! णाणी, नो अण्णाणी। नियमा एगनाणी-केवलनाणी।**

३५. [प्र.] भगवन् ! सिद्ध भगवान ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! सिद्ध भगवान ज्ञानी हैं, अज्ञानी नहीं हैं। वे नियमतः एक-केवलज्ञान वाले हैं।

35. [Q.] *Bhante* ! Now the same question about *Siddhas* (liberated souls) ?

[Ans.] Gautam ! *Siddhas* are only *jnanis* and never *ajnanis*. As a rule they have only one *jnana—Keval-jnana*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : नैरयिकों में तीन ज्ञान, तीन अज्ञान–सम्यग्दृष्टि नैरयिकों में भवप्रत्यय अवधिज्ञान होता है, इसलिए वे नियमतः तीन ज्ञान वाले होते हैं। किन्तु जो अज्ञानी होते हैं, उनमें कितने ही दो अज्ञान वाले होते हैं और कितने ही तीन अज्ञान वाले। जब कोई असंज्ञी पंचेन्द्रियतिर्यञ्च नरक में उत्पन्न होता है, तब उसके अपर्याप्त अवस्था में विभंगज्ञान नहीं होता, इस अपेक्षा से नारकों में दो अज्ञान कहे गये हैं। जो मिथ्यादृष्टि संज्ञी पंचेन्द्रिय नरक में उत्पन्न होता है तो उसको अपर्याप्त अवस्था में भी विभंगज्ञान होता है। अतः इस अपेक्षा से नारकों में तीन अज्ञान कहे हैं। देव और नरक गति में जाने वाले संज्ञी जीव जब एक गति से दूसरी गति में जाते हैं तो पहले ही समय में उन्हें तीसरा ज्ञान-अज्ञान (अवधि-विभंग) हो जाता है। मगर यह असंज्ञी जीव को नहीं होता। वह वहाँ जाकर पहले पर्याप्त अवस्था को प्राप्त करते हैं। तब उन्हें तीसरा ज्ञान–अज्ञान होता है।

तीन विकलेन्द्रिय जीवों में दो ज्ञान–द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों में जिस औपशमिक सम्यग्दृष्टि मनुष्य ने या तिर्यञ्च ने पहले आयुष्य बाँध लिया है, वह उपशम-सम्यक्त्व का वमन करता हुआ उनमें (द्वी–त्रि–चतुरिन्द्रिय विकलेन्द्रिय जीवों में) उत्पन्न होता है। उस जीव को अपर्याप्त दशा में सास्वादन सम्यग्दर्शन रहता है, जो जघन्य एक समय और उत्कृष्ट छह आवलिका तक रहता है; तब तक सम्यग्दर्शन होने के कारण वह ज्ञानी रहता है, उस अपेक्षा से विकलेन्द्रियों में दो ज्ञान बतलाएँ हैं। इसके पश्चात् तो वह मिथ्यात्व को प्राप्त हो जाने से अज्ञानी हो जाता है। *(वृत्ति, पत्रांक ३४५)*

Elaboration—*Three jnanas and three ajnanas of infernal beings*—The infernal beings with right perception or faith (*samyagdrishti*) are endowed with *bhavapratyayik avadhi-jnana* (innate extrasensory perception). That is why as a rule they are with three *jnanas* (kinds of right knowledge). However, among those who are *ajnani* many are with two kinds of *ajnana* (ignorance or wrong knowledge) and many with three. When a non-sentient five-sensed animal (*asanjni panchendriya tiryanch*) is born in hell then he does not have *vibhang-jnana* (pervert knowledge) in its underdeveloped state. The statement that infernal beings are with two kinds of *ajnana* is in this context only. But when a sentient five-sensed being with false perception/faith (*mithyadrishti sanjni panchendriya jiva*) is born in hell then he has *vibhang-jnana* (pervert knowledge) even in its underdeveloped state. In this context the infernal beings are said to have three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

Two jnanas in two to four sensed beings—Suppose a human being or an animal with right perception/faith acquired due to pacification of karmas has already acquired *ayushya karma* (life-span determining karma) but takes rebirth as two to four sensed being as a result of abandoning that right perception; in that case he has traces of that right perception in its underdeveloped state. It remains with him for a minimum of one Samaya (the ultimate fractional unit of time) and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

maximum of six *Avalikas* (a micro-unit of time). During that period he is a *jnani* (endowed with right knowledge) due to presence of that right perception. The statement about two to four sensed beings having two *jnanas* (kinds of right knowledge) is in this context only. After this the right perception turns into false and he becomes *ajnani*. *(Vritti, leaf 345)*

गति आदि आठ द्वारों की अपेक्षा ज्ञानी–अज्ञानी JNANI-AJNANI IN CONTEXT OF EIGHT STATES

प्रथम, गतिद्वार FIRST STATE : GATI

३६. [प्र.] निरयगतिया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! नाणी वि, अण्णाणी वि। तिण्णि नाणाइं नियमा, तिण्णि अन्नाणाइं भयणाए।

३६. [प्र.] भगवन् ! नरकगति में जाते हुए जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी भी हैं और अज्ञानी भी हैं। जो ज्ञानी हैं, वे नियमतः तीन ज्ञान वाले हैं और जो अज्ञानी हैं, वे भजना से तीन अज्ञान वाले हैं।

36. [Q.] *Bhante* ! Are *jivas* (souls) on way to infernal genuses (*narak gati*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) as well as *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). Those who are *jnani* are as a rule with three *jnanas* and those who are *ajnani* have different alternative combinations of three *ajnanas*.

३७. [प्र.] तिरियगतिया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! दो नाणा, दो अन्नाणा नियमा।

३७. [प्र.] भगवन् ! तिर्यञ्चगति में जाते हुए जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! उनमें नियमतः दो ज्ञान या दो अज्ञान होते हैं।

37. [Q.] *Bhante* ! Are jivas (souls) on way to animal genuses (*tiryanch gati*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have two *jnanas* (kinds of right knowledge) and two *ajnanas* as a rule.

३८. [प्र.] मणुस्सगतिया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अन्नाणी ?

[उ.] गोयमा ! तिण्णि नाणाइं भयणाए, दो अण्णाणाइं नियमा।

३८. [प्र.] भगवन् ! मनुष्यगति में जाते हुए जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! उनके भजना (विकल्प) से तीन ज्ञान होते हैं और नियमतः दो अज्ञान होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

38. [Q.] *Bhante* ! Are *jivas* (souls) on way to human genus (*manushya gati*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have different alternative combinations of three *jnanas* and, as a rule, two *ajnanas*.

३९. देवगतिया जहा निरयगतिया।

३९. देवगतिक जीवों में ज्ञान और अज्ञान का कथन निरयगतिक जीवों के समान समझना चाहिए।

39. The divine genuses (**dev gati**) follows the pattern of infernal genuses.

४०. [प्र.] सिद्धगतिया णं भंते ! ०।

[उ.] जहा सिद्धा।

४०. [प्र.] भगवन् ! सिद्धगतिक जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! उनका कथन सिद्धों की तरह करना चाहिए। अर्थात् वे नियमतः एक केवलज्ञान वाले होते हैं।

40. [Q.] *Bhante* ! What about *Siddha* state (*Siddha gati*) ?

[Ans.] They are like *Siddhas*. In other words they have only one *Jnana*, *Keval-jnana* (omniscience), as a rule.

द्वितीय, इन्द्रियद्वार SECOND STATE : INDRIYA

४१. [प्र.] सइंदिया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! चत्तारि नाणाइं, तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।

४१. [प्र.] भगवन् ! सेन्द्रिय (इन्द्रिय वाले) जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! उनके चार ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

41. *Bhante* ! Are *jivas* (living beings) with sense organs (*seindriya*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have different alternative combinations of four *jnanas* (kinds of right knowledge) as well as those of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

४२. [प्र.] एगिंदिया णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?

[उ.] जहा पुढविक्काइया।

४२. [प्र.] भगवन् ! एक इन्द्रिय वाले जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! इनके विषय में पृथ्वीकायिक जीवों की तरह कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

42. [Q.] *Bhante* ! Are *jivas* (living beings) with one sense organ (*ekendriya*) *jnani* or *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! They follow the pattern of earth-bodied beings (*prithvikaayik*).

४३. बेइंदिय-तेइंदिय-चतुरिंदियाणं दो नाणा, दो अण्णाणा नियमा। पंचिंदिया जहा सइंदिया।

४३. दो इन्द्रियों, तीन इन्द्रियों और चार इन्द्रियों वाले जीवों में दो ज्ञान या दो अज्ञान नियमतः होते हैं। पाँच इन्द्रियों वाले जीवों का कथन सेन्द्रिय जीवों की तरह करना चाहिए।

43. Two, three and four sensed beings have, as a rule, two *jnanas* or two *ajnanas*. Five-sensed beings follow the pattern of *jivas* with sense organs (*sendriya*).

४४. [प्र.] अणिंदिया णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?

[उ.] जहा सिद्धा।

४४. [प्र.] भगवन् ! अनीन्द्रिय (इन्द्रियरहित) जीव ज्ञानी हैं अथवा अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! उनके विषय में सिद्धों की तरह जानना चाहिए। (अर्थात् वे नियमतः एक केवल - ज्ञान वाले होते हैं।)

44. [Q.] *Bhante* ! Are *jivas* (souls) without sense organs (*anindriya*) *jnani* (endowed with right knowledge) or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are like *Siddhas*.

तृतीय, कायद्वार THIRD STATE : KAAYA

४५. [प्र.] सकाइया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?

[उ.] गोयमा ! पंच नाणाणि तिण्णि अन्नाणाइं भयणाए।

४५. [प्र.] भगवन् ! सकायिक (कायासहित) जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! सकायिक जीवों के पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

45. [Q.] *Bhante* ! Are *sakaayik jivas* (living beings with body or embodied beings) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have different alternative combinations of five *jnanas* (kinds of right knowledge) as well as those of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

४६. पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया नो नाणी, अण्णाणी। नियमा दुअण्णाणी; तं जहा- मइअण्णाणी य सुयअण्णाणी य। तसकाइया जहा सकाइया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६. पृथ्वीकायिक से यावत् वनस्पतिकायिक जीव तक ज्ञानी नहीं, अज्ञानी होते हैं। वे नियमतः दो अज्ञान मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञान वाले होते हैं। त्रसकायिक जीवों का कथन सकायिक जीवों के समान समझना चाहिए।

46. Earth-bodied (*prithvikaaya*)... and so on up to... plant-bodied (*vanaspatikaaya*) beings are not *jnani* (with knowledge) but only *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). They have as a rule two *ajnanas* (*mati-ajnana* and *shrut-ajnana*). Mobile-bodied beings (*traskaayik jivas*) follow the pattern of embodied beings (*sakaayik*).

४७. [प्र.] अकाइया णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?

[उ.] जहा सिद्धा।

४७. [प्र.] भगवन् ! अकायिक (कायारहित) जीव ज्ञानी हैं अथवा अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! इनके विषय में सिद्धों की तरह जानना चाहिए।

47. [Q.] *Bhante* ! Are *jivas* (souls) without body (*akaayik*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are like *Siddhas*.

चतुर्थ, सूक्ष्म-बादरद्वार **FOURTH STATE : SUKSHMA-BAADAR**

४८. [प्र.] सुहुमा णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?

[उ.] जहा पुढविकाइया।

४८. [प्र.] भगवन् ! सूक्ष्म जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! इनके विषय में पृथ्वीकायिक जीवों के समान कथन करना चाहिए।

48. [Q.] *Bhante* ! Are *sukshma jivas* (minute living beings) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They follow the pattern of earth-bodied beings.

४९. [प्र.] बादरा णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?

[उ.] जहा सकाइया।

४९. [प्र.] भगवन् ! बादर जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! इनके विषय में सकायिक जीवों के समान कहना चाहिए।

49. [Q.] *Bhante* ! Are *baadar jivas* (gross living beings) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They follow the pattern of embodied beings (*sakaayik*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५०. [प्र.] नोसुहुमानोबादरा णं भंते ! जीवा० ?

[उ.] जहा सिद्धा।

५०. [प्र.] भगवन् ! नो-सूक्ष्म-नो-बादर जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! इनका कथन सिद्धों की तरह समझना चाहिए।

50. [Q.] *Bhante* ! Are *jivas* (living beings) that are neither minute nor gross (*nosukshma nobaadar*) *jnani or ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are like *Siddhas*.

पंचम, पर्याप्त-अपर्याप्तद्वार FIFTH STATE : PRARYAPT-APARYAPT

५१. [प्र.] पज्जत्ता णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?

[उ.] जहा सकाइया।

५१. [प्र.] भगवन् ! पर्याप्तक जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! इनका कथन सकायिक जीवों के समान जानना चाहिए।

51. [Q.] *Bhante* ! Are *paryaptak jivas* (fully developed beings) *jnani* (endowed with right knowledge) or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They follow the pattern of embodied beings (*sakaayik*).

५२. [प्र.] पज्जत्ता णं भंते ! नेरइया किं नाणी० ?

[उ.] तिण्णि नाणा, तिण्णि अण्णाणा नियमा।

५२. [प्र.] भगवन् ! पर्याप्तक नैरयिक जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! इनमें नियमतः तीन ज्ञान या तीन अज्ञान होते हैं।

52. [Q.] *Bhante* ! Are *paryaptak nairayik jivas* (fully developed infernal beings) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have three *jnanas* or three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge) as a rule.

५३. जहा नेरइया एवं जाव थणियकुमारा। पुढविकाइया जहा एगिंदिया। एवं जाव चतुरिंदिया।

५३. पर्याप्त नैरयिक जीवों की तरह यावत् पर्याप्त स्तनितकुमार तक में ज्ञान और अज्ञान का कथन करना चाहिए। (पर्याप्त) पृथ्वीकायिक जीवों का कथन एकेन्द्रिय जीवों की तरह करना चाहिए। इसी प्रकार यावत् (पर्याप्त) चतुरिन्द्रिय (अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायकि, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय) तक समझना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

53. Like fully developed infernal beings this statement should be repeated for all beings up to fully developed (*paryaptak*) *Stanit Kumar* divine beings. Earth-bodied beings (*paryaptak*) follow the pattern of one-sensed beings. The same holds good for all beings up to (*paryaptak*) four-sensed beings (i. e. water-bodied, fire-bodied, air-bodied, plant-bodied, two-sensed, three-sensed and four sensed beings).

५४. [प्र.] पज्जत्ता णं भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणिया किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] तिण्णि नाणा, तिण्णि अण्णाणा भयणाए। मणुस्सा जहा सकाइया। वाणमंतर–जोइसिय–वेमाणिया जहा नेरइया।

५४. [प्र.] भगवन् ! पर्याप्त पंचेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! उनमें तीन ज्ञान और तीन अज्ञान भजना (विकल्प) से होते हैं। पर्याप्त मनुष्यों के सम्बन्ध में कथन सकायिक जीवों की तरह करना चाहिए। पर्याप्त वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकों का कथन नैरयिक जीवों की तरह समझना चाहिए।

54. [Q.] *Bhante* ! Are *paryaptak panchendriya tiryanchayonik jivas* (fully developed five-sensed animals) *jnani* or *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! They have different alternative combinations of three *jnanas* as well as those of three *ajnanas*. Fully developed humans (*paryapt manushya*) follow the pattern of embodied beings (*sakaayik jivas*). Fully developed interstitial, stellar and celestial vehicular divine beings (*paryaptak Vanavyantar, Jyotishk and Vaimanik devs*) follow the pattern of infernal beings.

५५. [प्र.] अपज्जत्ता णं भंते ! जीवा किं नाणी २ ?

[उ.] तिण्णि नाणा, तिण्णि अण्णाणा भयणाए।

५५. [प्र.] भगवन् ! अपर्याप्तक जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! उनमें तीन ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

55. [Q.] *Bhante* ! Are *aparyaptak jivas* (underdeveloped beings) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have different alternative combinations of three *jnanas* (kinds of right knowledge) as well as those of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५६. [प्र.] अपज्जत्ता णं भंते ! नेरइया किं नाणी, अन्नाणी ?

[उ.] तिण्णि नाणा नियमा, तिण्णि अण्णाणा भयणाए। एवं जाव थणियकुमारा।

५६. [प्र.] भगवन् ! अपर्याप्त नैरयिक जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! उनमें तीन ज्ञान नियमतः होते हैं अथवा तीन अज्ञान भजना से होते हैं। नैरयिक जीवों की तरह यावत् अपर्याप्त स्तनितकुमार देवों तक इसी प्रकार कथन करना चाहिए।

56. [Q.] *Bhante* ! Are *aparyaptak nairayik jivas* (underdeveloped infernal beings) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have three *jnanas* as a rule or different alternative combinations of three *ajnanas*. The same follows up to under developed (*aparyaptak*) *Stanit Kumar* divine beings.

५७. पुढविक्काइया जाव वणस्सइकाइया जहा एगिंदिया।

५७. (अपर्याप्त) पृथ्वीकायिक से लेकर वनस्पतिकायिक जीवों तक का कथन एकेन्द्रिय जीवों की तरह करना चाहिए।

57. Earth-bodied beings (*aparyaptak*) to plant bodied beings (*aparyaptak*) follow the pattern of one-sensed beings.

५८. [प्र.] बेइंदिया णं पुच्छा।

[उ.] दो नाणा, दो अण्णाणा णियमा। एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं।

५८. [प्र.] भगवन् ! अपर्याप्त द्वीन्द्रिय ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! इनमें दो ज्ञान अथवा दो अज्ञान नियमतः होते हैं। इसी प्रकार यावत् (अपर्याप्त) पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनिक तक जानना चाहिए।

58. [Q.] *Bhante* ! Are *aparyaptak dvindriya jivas* (underdeveloped two-sensed beings) *jnani* (endowed with right knowledge) or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have two *jnanas* or two *ajnanas* (kinds of wrong knowledge) as a rule. The same is true for all beings up to *aparyaptak panchendriya tiryanchayonik jivas* (underdeveloped five-sensed animals).

५९. [प्र.] अपज्जत्तगा णं भंते ! मणुस्सा किं नाणी, अन्नाणी ?

[उ.] तिण्णि नाणाइं भयणाए, दो अण्णाणाइं नियमा। वाणमंतरा जहा नेरइया।

५९. [प्र.] भगवन् ! अपर्याप्तक मनुष्य ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! उनमें तीन ज्ञान भजना से होते हैं और दो अज्ञान नियमतः होते हैं। अपर्याप्त वाणव्यन्तर जीवों का कथन नैरयिक जीवों की तरह समझें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

59. [Q.] *Bhante* ! Are *aparyaptak manushya* (underdeveloped human beings) *jnani* or *ajnani* (with wrong knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! They have different alternative combinations of three *jnanas* (kinds of right knowledge) and two *ajnanas* as a rule. Underdeveloped interstitial divine beings (*aparyaptak vanavyantar devs*) follow the pattern of infernal beings.

६०. [प्र.] अपज्जत्तगा जोतिसिय-वेमाणिया णं पुच्छा ?

[उ.] तिण्णि नाणा, तिन्नि अण्णाणा नियमा।

६०. [प्र.] भगवन् ! अपर्याप्त ज्योतिष्क और वैमानिक ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! उनमें तीन ज्ञान या तीन अज्ञान नियमतः होते हैं।

60. [Q.] *Bhante* ! Are *aparyaptak* stellar and celestial vehicular divine beings (*aparyaptak jyotishk and vaimanik devs*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have three *jnanas* or three *ajnanas* as a rule.

६१. [प्र.] नोपज्जत्तगा नोअपज्जत्तगा णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?

[उ.] जहा सिद्धा।

६१. [प्र.] भगवन् ! नो-पर्याप्त-नो-अपर्याप्त जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! इनका कथन सिद्ध जीवों के समान जानें।

61. [Q.] *Bhante* ! Are *jivas* (living beings) that are neither fully developed nor underdeveloped (*noparyaptak-noaparyaptak*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are like *Siddhas*.

छठा, भवस्थद्वार SIXTH STATE : BHAVASTH

६२. [प्र.] निरयभवत्था णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] जहा निरयगइया।

६२. [प्र.] भगवन् ! निरय-भवस्थ (नरकगति में रहे हुए) जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! इनके विषय में निरयगतिक जीवों के समान समझें।

62. [Q.] *Bhante* ! Are *niraya-bhavasth jivas* (existing infernal beings) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They follow the pattern of souls on way to infernal genuses. (aphorism 36)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६३. [प्र.] तिरियभवत्था णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] तिण्णि नाणा, तिण्णि अण्णाणा भयणाए।

६३. [प्र.] भगवन् ! तिर्यञ्चभवस्थ जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] उनमें तीन ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

63. [Q.] *Bhante* ! Are *tiryanch-bhavasth jivas* (existing animals) *jnani* or *ajnani* (with wrong knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! They have different alternative combinations of three jnanas and those of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

६४. [प्र.] मणुस्सभवत्था णं० ?

[उ.] जहा सकाइया।

६४. [प्र.] भगवन् ! मनुष्यभवस्थ जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! इनका कथन सकायिक जीवों की तरह समझें।

64. [Q.] *Bhante* ! Are *manushya-bhavasth jivas* (existing human beings) *jnani* (endowed with right knowledge) or ajnani ?

[Ans.] They follow the pattern of embodied beings (*sakaayik jivas*).

६५. [प्र.] देवभवत्था णं भंते ! ० ?

[उ.] जहा निरयभवत्था।

६५. [प्र.] भगवन् ! देवभवस्थ जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! इनके विषय में निरयभवस्थ जीवों के समान समझें।

65. [Q.] *Bhante* ! Are *dev-bhavasth jivas* (existing divine beings) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] They follow the pattern of existing infernal beings (*niraya-bhavasth jivas*).

६६. अभवत्था जहा सिद्धा।

६६. अभवस्थ जीवों के विषय में सिद्धों की तरह जानना चाहिए।

66. *Abhavasth jivas* (nonexistent beings or souls that are not born in any genus) are like *Siddhas*.

सप्तम, भवसिद्धिकद्वार SEVENTH STATE : BHAVASIDDHIK

६७. [प्र.] भवसिद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?

[उ.] जहा सकाइया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६७. [प्र.] भगवन् ! भवसिद्धिक (भव्य) जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! इनका कथन सकायिक जीवों के समान जानें।

67. [Q.] *Bhante* ! Are *bhavasiddhik jivas* (beings worthy of being liberated in future) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] They follow the pattern of embodied beings (*sakaayik jivas*).

६८. [प्र.] **अभवसिद्धिया णं पुच्छा ?**

[उ.] **गोयमा ! नो नाणी; अण्णाणी, तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।**

६८. [प्र.] भगवन् ! अभवसिद्धिक (अभव्य) जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! ये ज्ञानी नहीं, किन्तु अज्ञानी हैं। इनमें तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

68. [Q.] *Bhante* ! Are *abhavasiddhik jivas* (beings unworthy of being liberated in future) *jnani* or *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge) ?

[Ans.] They are not *jnani* but *ajnani* only. They follow the pattern of embodied beings (*sakaayik jivas*). They have different alternative combinations of three *ajnanas*.

६९. [प्र.] **नोभवसिद्धिया नोअभवसिद्धिया णं भंते ! जीवा० ?**

[उ.] **जहा सिद्धा।**

६९. [प्र.] भगवन् ! नो-भवसिद्धिक-नो-अभवसिद्धिक जीव ज्ञानी हैं अथवा अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! इनके सम्बन्ध में सिद्ध जीवों के समान समझें।

69. [Q.] Bhante ! Are *no-bhavasiddhik-no-abhavasiddhik jivas* (beings neither worthy not unworthy of being liberated in future) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] They are like *Siddhas*.

आठवाँ, संज्ञीद्वार EIGHTH STATE : SANJNI

७०. [प्र.] **सण्णी णं पुच्छा।**

[उ.] **जहा सइंदिया। असण्णी जहा बेइंदिया। नोसण्णी-नोअसण्णी जहा सिद्धा।**

७०. [प्र.] भगवन् ! संज्ञीजीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! सेन्द्रिय जीवों के कथन के समान इनके विषय में समझें। असंज्ञी जीवों के विषय में द्वीन्द्रिय जीवों के समान समझें। नो-संज्ञी-नो-असंज्ञी जीवों का कथन सिद्ध जीवों की तरह जानना चाहिए।

70. [Q.] *Bhante* ! Are *sanjni jivas* (sentient beings) *jnani* or *ajnani* ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! They follow the pattern of living beings with sense organs (*seindriya*). *Asanjni jivas* (non-sentient beings) follow the pattern of two-sensed beings (*dvindriya*). *No-sanjni-no-asanjni jivas* (neither sentient nor non-sentient beings) are like *Siddhas*.

विवेचन : उक्त सूत्रों में गति आदि आठ द्वारों की अपेक्षा ज्ञानी-अज्ञानी की प्ररूपणा-(१) गतिद्वार-गति की अपेक्षा पाँच प्रकार के जीव हैं-नरकगतिक, तिर्यंचगतिक, मनुष्यगतिक, देवगतिक और सिद्धगतिक।

१. **निरयगतिक** जीव वे हैं, जो यहाँ से मरकर नरक में जाने के लिए विग्रहगति (अन्तरालगति) में चल रहे हैं। पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्य, जो नरक में जाने वाले हैं, वे यदि सम्यग्दृष्टि हों तो ज्ञानी होते हैं, क्योंकि उन्हें अवधिज्ञान भवप्रत्यय होने के कारण विग्रहगति में भी होता है और नरक में नियमतः उन्हें तीन ज्ञान होते हैं। यदि वे मिथ्यादृष्टि हों तो वे अज्ञानी होते हैं, उनमें से नरकगामी यदि असंज्ञी पंचेन्द्रियतिर्यंच हो तो विग्रहगति में अपर्याप्त अवस्था तक उसे विभंगज्ञान नहीं होता, उस समय तक उसे दो अज्ञान ही होते हैं, किन्तु मिथ्यादृष्टि संज्ञी पंचेन्द्रिय नरकगामी को विग्रहगति में भी भवप्रत्ययिक विभंगज्ञान होता है। इसलिए निरयगतिक में तीन अज्ञान भजना से कहे गये हैं।

२. **तिर्यंचगतिक** जीव वे हैं जो यहाँ से मरकर तिर्यंचगति में जाने के लिए विग्रहगति में चल रहे हैं। उनमें नियम से दो ज्ञान या दो अज्ञान इसलिए बताए हैं कि सम्यग्दृष्टि जीव अवधिज्ञान से च्युत होने के बाद मति-श्रुतज्ञानसहित **तिर्यंचगति** में जाता है। इसलिए उसमें नियमतः दो ज्ञान होते हैं तथा मिथ्यादृष्टि जीव विभंगज्ञान से गिरने के बाद मति-अज्ञान, श्रुत-अज्ञान सहित तिर्यंचगति में जाता है इसलिए नियमतः उसमें दो अज्ञान होते हैं।

३. **मनुष्यगति** में जाने के लिए जो विग्रहगति में चल रहे हैं, वे **मनुष्यगतिक** कहलाते हैं। मनुष्यगतिक में जाते हुए जो जीव ज्ञानी होते हैं, उनमें से कई तीर्थंकर की तरह अवधिज्ञान सहित मनुष्यगति में जाते हैं, उनमें तीन ज्ञान होते हैं, जबकि अवधिज्ञानरहित मनुष्यगति में जाने वालों में दो ज्ञान होते हैं। इसीलिए यहाँ तीन ज्ञान भजना से कहे हैं। जो मिथ्यादृष्टि हैं, वे विभंगज्ञानरहित ही मनुष्यगति में उत्पन्न होते हैं। इसलिए उनमें दो अज्ञान नियम से कहे गये हैं।

४. **देवगति** में जाते हुए विग्रहगति में चल रहे जीवों का कथन नैरयिकों की तरह (नियमतः तीन ज्ञान अथवा भजना से तीन अज्ञान वाले) समझना चाहिए।

५. **सिद्धगतिक** जीवों में तो केवल एक ही ज्ञान-केवलज्ञान होता है।

(२) **इन्द्रियद्वार**-सेन्द्रिय का अर्थ है-इन्द्रिय वाले जीव। सेन्द्रिय ज्ञानी जीवों को २, ३ या ४ ज्ञान होते हैं; यह बात लब्धि की अपेक्षा से समझना चाहिए, क्योंकि उपयोग की अपेक्षा तो सभी जीवों को एक समय में एक ही ज्ञान होता है। केवलज्ञान अतीन्द्रिय ज्ञान है, वह सेन्द्रिय नहीं है। अज्ञानी सेन्द्रिय जीवों को तीन अज्ञान भजना से होते हैं, किन्हीं को दो और किन्हीं को तीन अज्ञान होते हैं। एकेन्द्रिय जीव मिथ्यादृष्टि होने से अज्ञानी ही होते हैं, उनमें नियमतः दो अज्ञान होते हैं। तीन विकलेन्द्रियों में दो अज्ञान तो नियमतः होते हैं, किन्तु सास्वादन गुणस्थान होने की अवस्था में दो ज्ञान भी होने सम्भव हैं। अनीन्द्रिय (इन्द्रियों के उपयोग से रहित) जीव तो केवलज्ञानी ही होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) **कायद्वार**–औदारिक आदि शरीरयुक्त जीव को अथवा पृथ्वीकायिक आदि ६ काय सहित जीव को सकायिक कहते हैं। वे केवली भी होते हैं। अतः सकायिक सम्यग्दृष्टि में पाँच ज्ञान भजना से होते हैं। जो मिथ्यादृष्टि सकायिक हैं, उनमें तीन अज्ञान भजना से होते हैं। जो षट्कायों में से किसी भी काय में नहीं हैं, या जो औदारिक आदि कायों से रहित हैं, ऐसे अकायिक जीव सिद्ध होते हैं, उनमें सिर्फ केवलज्ञान ही होता है।

(४) **सूक्ष्म–बादरद्वार**–सूक्ष्म जीव पृथ्वीकायिकवत् मिथ्यादृष्टि होने से उनमें दो अज्ञान होते हैं। बादर जीवों में केवलज्ञानी भी होते हैं, अतः सकायिक की तरह उनमें पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

(५) **पर्याप्तद्वार**–पर्याप्त जीवों में केवलज्ञानी भी होते हैं, अतः उनमें सकायिक जीवों के समान भजना से ५ ज्ञान और ३ अज्ञान पाये जाते हैं। **पर्याप्त नारकों** में तीन ज्ञान और तीन अज्ञान नियमतः होते हैं, क्योंकि असंज्ञी जीवों में से आये हुए अपर्याप्त नारकों में ही विभंगज्ञान नहीं होता, मिथ्यात्वी पर्याप्तकों में तो होता ही है। इसी प्रकार **भवनपति एवं वाणव्यन्तर** देवों में समझना चाहिए। **पर्याप्त विकलेन्द्रियों** में नियम से दो अज्ञान होते हैं। पर्याप्त पंचेन्द्रियतिर्यंचों में ३ ज्ञान और ३ अज्ञान भजना से होते हैं, उसका कारण है, कितने ही जीवों को अवधिज्ञान या विभंगज्ञान होता है, कितनों को नहीं होता। **अपर्याप्तक नैरयिकों** में तीन ज्ञान नियम से और तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। **अपर्याप्तक द्वीन्द्रिय** आदि जीवों में सास्वादन सम्यग्दर्शन सम्भव होने से उनमें दो ज्ञान और शेष में दो अज्ञान पाये जाते हैं। **अपर्याप्त सम्यग्दृष्टि मनुष्यों** में तीर्थंकर प्रकृति को बाँधे हुए जीव भी होते हैं, उनमें अवधिज्ञान होना सम्भव है, अतः उनमें तीन ज्ञान भजना से पाये जाते हैं। **मिथ्यादृष्टि मनुष्यों** को अपर्याप्त अवस्था में विभंगज्ञान नहीं होता, इसलिए उनमें नियमतः दो अज्ञान होते हैं। **अपर्याप्त वाणव्यन्तर** देवों में जो असंज्ञी जीवों में से आकर उत्पन्न होता है, उसमें अपर्याप्त अवस्था में विभंगज्ञान का अभाव होता है, शेष में अवधिज्ञान या विभंगज्ञान नियम से होता है। अतः उनमें नैरयिकों के समान तीन ज्ञान वाले या दो अथवा तीन अज्ञान वाले होते हैं। **ज्योतिष्क और वैमानिक** देवों में संज्ञी जीवों में से ही आकर उत्पन्न होते हैं, इसलिए उनमें अपर्याप्त अवस्था में भी भवप्रत्ययिक अवधिज्ञान या विभंगज्ञान अवश्य होता है। अतः उनमें नियमतः तीन ज्ञान या तीन अज्ञान होते हैं। नो–पर्याप्त–नो–अपर्याप्त जीव सिद्ध होते हैं, वे पर्याप्त–अपर्याप्त नामकर्म से रहित होते हैं। अतः उनमें एक मात्र केवलज्ञान ही होता है।

(६) **भवस्थद्वार**–निरयभवस्थ का अर्थ है–नरकगति में उत्पत्ति–स्थान को प्राप्त। इसी प्रकार तिर्यंचभवस्थ आदि पदों का अर्थ समझ लेना चाहिए। निरयभवस्थ का कथन निरयगतिकवत् समझ लेना चाहिए। यावत् मनुष्य–देव का कथन समझ लेना चाहिए।

(७) **भवसिद्धिकद्वार**–भवसिद्धिक यानी भव्य जीव जो सम्यग्दृष्टि हैं, उनमें सकायिक की तरह ५ ज्ञान भजना से होते हैं, जबकि मिथ्यादृष्टि में तीन अज्ञान भजना से होते हैं। अभवसिद्धिक (अभव्य) जीव सदैव मिथ्यादृष्टि ही रहते हैं, अतः उनमें तीन अज्ञान की भजना है। ज्ञान उनमें होता ही नहीं। सिद्ध होने के बाद जीव भव्यत्व का त्याग करके नो भविक नो अभविक बन जाते हैं।

(८) **संज्ञीद्वार**–संज्ञी जीवों का कथन सेन्द्रिय जीवों की तरह है, अर्थात् उनमें चार ज्ञान अथवा तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। 13वें गुणस्थान में केवली होने के बाद नोसंज्ञी नोअसंज्ञी कहलाते हैं। उनमें सिर्फ केवल ज्ञान होता है। असंज्ञी जीवों का कथन द्वीन्द्रिय जीवों के समान है, अर्थात् अपर्याप्त अवस्था में उनमें सास्वादन सम्यग्दर्शन की सम्भावना होने से दो ज्ञान भी पाये जाते हैं। पर्याप्त अवस्था में तो उनमें नियमतः दो अज्ञान होते ही हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration—Knowledge and non-knowledge in eight states of **existence**—(1) **Gati-dvar** (state of genuses)—In terms of genuses there are five classes of living beings—*narak-gati* or genus of infernal beings, *tiryanch-gati* or genus of animals, *manushya-gati* or genus of human beings, *dev-gati* or genus of divine beings, and *Siddha-gati* or genus of liberated beings.

(i) Niraya-gatik jivas—These are *jivas* (souls) who have died and are in the state of movement (*vigraha gati*) on way to the infernal world. If the five sensed animals and human beings on way to hell are originally righteous (*samyakdrishti*); they are endowed with right knowledge (*jnani*). This is because their *avadhi-jnana* being bhavapratyayik (innate or birth related) exists during this intervening movement and as such they have, as a rule, three *jnanas* when born in hell. If they are unrighteous (*mithyadrishti*) they are *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). In case of non-sentient five sensed animal there is absence of pervert knowledge (*vibhang-jnana*) in the state of movement and as long as it is in underdeveloped state. During this period it has only two *ajnanas*. However, in case of unrighteous sentient five sensed animal on way to hell innate pervert knowledge (*bhavapratyayik vibhang-jnana*) exists even in the state of movement. That is why it is said that souls on way to infernal genus have different alternative combinations of three *ajnanas*.

(ii) Tiryanch-gatik jivas—These are *jivas* (souls) who have died and are in the state of movement on way to the animal genuses. They are said to have two *jnanas* (kinds of right knowledge) or two *ajnanas* (kinds of wrong knowledge) as a rule. This is because when a righteous being (*samyakdrishti jiva*) falls from *avadhi-jnana* he goes to the animal genus with *mati* and *shrut-jnana*; that is why he has two *jnanas* as a rule. Also when an unrighteous being (*mithyadrishti jiva*) falls from *vibhang-jnana* he goes to the animal genus with *mati* and *shrut-ajnana*; that is why he has two *ajnanas* as a rule.

(iii) Manushya-gati or genus of human beings—These are *jivas* (souls) who have died and are in the state of movement on way to the human genus. Some of those who are endowed with right knowledge (*jnani*) go to human genus with *avadhi-jnana*, just as a Tirthankar does. Thus they have three *jnanas*. However, those who go to human genus without *avadhi-jnana* have only two *jnanas*. Therefore it is said here

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

that they have different alternative combinations of three *jnanas* (kinds of right knowledge). Those who are unrighteous go to the human genus without *vibhang-jnana*, therefore they are said to have two *ajnanas* as a rule.

(iv) Dev-gati or genus of divine beings—These are *jivas* (souls) who have died and are in the state of movement on way to the divine genus. They follow the pattern of infernal beings (three *jnanas* as a rule or different alternative combinations of three *ajnanas*).

(v) Siddha-gati or genus of liberated beings—These are *jivas* (souls) who have died and are in the state of movement on way to liberation. They have only one *jnana*, i. e. *Keval-jnana*.

(2) Indriya-dvar (state of sense organs)—*Se-indriya* means with sense organs. Living beings with sense organs have 2, 3 or four *jnanas*, this statement is in context with the capability because as far as application is concerned, at a particular moment, every being has only one knowledge. *Keval-jnana* is extrasensory knowledge, it is not related to sense organs. *Ajnani* beings with sense organs have different alternative combinations of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge), some have three and some two. Being unrighteous (*mithyadirshti*), one-sensed beings are *ajnani* and they have two *ajnanas* as a rule. Two to four sensed beings have two *ajnanas* as a rule but there is a possibility of them having two *jnanas* in the event they happened to be in the state of *Sasvadan Gunasthaan* (the level where there is a fleeting taste of righteousness). Those without sense organs (having made all the sense organs inactive) are omniscients (*Keval jnani*).

(3) Kaaya-dvar (state of body)—Living beings with gross physical (*audarik*) or other types of body or those with six different kinds of body including earth-body are called *sakaayik* (with body or embodied). *Kevalis* (omniscient) are also among these. Therefore righteous (*samyagdrishti*) embodied beings have different alternative combinations of five *jnanas* (kinds of right knowledge). The unrighteous (*Mithyadrishti*) embodied beings have different alternative combinations of three *ajnanas*. Those having none of these six kinds of bodies or who are devoid of gross physical or other types of body are *akaayik jivas*. Such beings are *Siddhas* only and they have only *Keval-jnana*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(4) Sukshma-dvar (state of minuteness)—Minute beings are like one sensed beings including earth-bodied ones and thus they have two *ajnanas* (kinds of wrong knowledge). There are omniscients among gross beings and thus they follow the pattern of embodied beings. In other words they have different alternative combinations of five *jnanas* and three *ajnanas*.

(5) Paryapt-dvar (state of full development)—There are omniscients among fully developed beings (*paryapt jivas*) and thus they have different alternative combinations of five *jnanas* and three *ajnanas*. Fully developed infernal beings have three *jnanas* and three *ajnanas* as a rule. This is because only those infernal beings who have come from non-sentient beings are devoid of *vibhang-jnana* (pervert knowledge), the unrighteous fully developed beings necessarily have that. The same is true for abode-dwelling and interstitial gods. Fully developed two to four sensed beings (*vikalendriya jivas*) have two *ajnanas* (kinds of wrong knowledge) as a rule. Fully developed five sensed animals have different alternative combinations of three *jnanas* (kinds of right knowledge) and three *ajnanas*. That is because some beings have *avadhi-jnana* or *vibhang-jnana* and some do not. Underdeveloped infernal beings have three *jnanas* as a rule and different alternative combinations of three *ajnanas*. Underdeveloped two to four sensed beings with a scope of fleeting righteousness have two *jnanas* and others have two *ajnanas*. Underdeveloped righteous humans have individuals destined to be *Tirthankars* among them and they are endowed with *avadhi-jnana*; thus they have different alternative combinations of three *jnanas*. Underdeveloped unrighteous humans are devoid of *vibhang-jnana* (pervert knowledge), therefore they have two *ajnanas* as a rule. Underdeveloped interstitial gods who have come from the genus of non-sentient beings are devoid of *vibhang-jnana*, others have *avadhi-jnana* or *vibhang-jnana* (pervert knowledge) as a rule. Therefore, like infernal beings, they have three *jnanas* (kinds of right knowledge) or two or three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge). As stellar and celestial-vehicular gods only come from the genus of sentient beings, they necessarily have *avadhi-jnana* or *vibhang-jnana* by birth. Therefore they have three *jnanas* or three *ajnanas* as a rule. Beings (souls) that are neither fully developed nor underdeveloped are *Siddhas*. They are devoid of *paryapt-aparyapt naam-karma* (karma determining the states of full or partial development). They have *Keval-jnana* (omniscience) alone.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(6) **Bhavasth-dvar (state of existence in a genus)**—*Niraya-bhavasth* means already born as infernal being or existing as infernal being. Other terms like *tiryanch-bhavasth* have similar meaning. They follow the pattern of respective migratory states including that on way to infernal world.

(7) **Bhavasiddhik-dvar (state of righteousness leading to liberation)**—*Bhavasiddhik* means the living being who is finally destined to be liberated. The righteous among them have different alternative combinations of five *jnanas*, just like embodied beings. But the unrighteous have different alternative combinations of three *ajnanas*. *Abhavasiddhik* or those never to be liberated always remain unrighteous and therefore they have only different alternative combinations of three *ajnanas*. They are ever devoid of *jnana*.

(8) **Sanjni-dvar (state of sentience)**—Sentient beings follow the pattern of *sendriya jivas* (living beings with sense organs). That means they have different alternative combinations of either four *jnanas* or three *ajnanas*. Non-sentient beings follow the pattern of two-sensed beings, which means they have two *jnanas* (kinds of right knowledge) in underdeveloped state due to the possibility of fleeting righteousness. In fully developed state they have two *ajnanas* (kinds of wrong knowledge) as a rule.

नौवां, लब्धिद्वार NINTH STATE : LABDHI

७१. [प्र.] कइविहा णं भंते ! लद्धी पण्णत्ता ?

[उ.] **गोयमा ! दसविहा लद्धी पण्णत्ता, तं जहा—नाणलद्धी १, दंसणलद्धि २, चरित्तलद्धी ३, चरित्ताचरित्तलद्धी ४, दाणलद्धी ५, लाभलद्धी ६, भोगलद्धी ७, उवभोगलद्धी ८, वीरियलद्धी ९, इंदियलद्धी १०।**

७१. [प्र.] भगवन् ! लब्धि (आत्मा में ज्ञानादि गुणों का प्रकट होना) कितने प्रकार की कही हैं ?

[उ.] गौतम ! लब्धि दस प्रकार की कही हैं। वह इस प्रकार हैं-(१) ज्ञानलब्धि, (२) दर्शनलब्धि, (३) चारित्रलब्धि, (४) चारित्राचारित्रलब्धि, (५) दानलब्धि, (६) लाभलब्धि, (७) भोगलब्धि, (८) उपभोगलब्धि, (९) वीर्यलब्धि, और (१०) इन्द्रियलब्धि।

71. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *labdhi* (attainment of ability) ?

[Ans.] Gautam ! *Labdhi* (attainment of ability) is said to be of ten kinds—(1) *Jnana-labdhi* (ability of knowledge), (2) *Darshan-labdhi* (ability of perception/faith), (3) *Chaaritra-labdhi* (ability of conduct), (4) *Chaaritraachaaritra-labdhi* (ability of partial renunciation), (5) *Daan-*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

labdhi (ability of charity), (6) *Laabh-labdhi* (ability of gain), (7) *Bhoga-labdhi* (ability of enjoyment), (8) *Upabhoga-labdhi* (ability of extended enjoyment), (9) *Virya-labdhi* (ability of potency), and (10) *Indriya-labdhi* (ability of sense organs).

७२. [प्र.] णाणलद्धी णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा—आभिणिबोहियणाणलद्धी जाव केवलणाणलद्धी।

७३. [प्र.] अण्णाणलद्धी णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तं जहा—मइअण्णाणलद्धी, सुयअण्णाणलद्धी, विभंगनाणलद्धी।

७२. [प्र.] भगवन् ! ज्ञानलब्धि कितने प्रकार की है ?

[उ.] गौतम ! वह पाँच प्रकार की है। यथा—आभिनिबोधिकज्ञानलब्धि यावत् केवलज्ञानलब्धि।

७३. [प्र.] भगवन् ! अज्ञानलब्धि कितने प्रकार की कही है ?

[उ.] गौतम ! अज्ञानलब्धि तीन प्रकार की कही है। यथा—मति—अज्ञानलब्धि, श्रुत—अज्ञानलब्धि और विभंगज्ञानलब्धि।

72. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *jnana-labdhi* (attainment of ability of right knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! It is of five kinds—*abhinibodhik-jnana-labdhi* (attainment of ability of sensual knowledge)... and so on up to... *Keval-jnana-labdhi* (attainment of ability of omniscience or ultimate knowledge).

73. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *ajnana-labdhi* (attainment of ability of non-knowledge or wrong knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! It is of three kinds—*Mati-ajnana-labdhi* (attainment of ability of wrong sensory knowledge), *Shrut-ajnana-labdhi* (attainment of ability of wrong scriptural knowledge) and *Vibhang-jnana-labdhi* (attainment of ability of pervert knowledge).

७४. [प्र.] दंसणलद्धी णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तं जहा—सम्मदंसणलद्धी, मिच्छादंसणलद्धी, सम्मामिच्छादंसणलद्धी।

७४. [प्र.] भगवन् ! दर्शनलब्धि कितने प्रकार की कही है ?

[उ.] गौतम ! वह तीन प्रकार की कही है। वह इस प्रकार है—सम्यग्दर्शनलब्धि, मिथ्यादर्शनलब्धि और सम्यग्मिथ्यादर्शनलब्धि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

74. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *darshan-labdhi* (attainment of ability of perception/faith)?

[Ans.] Gautam ! It is of three kinds—*Samyagdarshan-labdhi* (attainment of ability of right perception/faith), *Mithyadarshan-labdhi* (attainment of ability of false perception/faith) and *Samyagmithyadarshan-labdhi* (attainment of ability of right-false or mixed perception/faith).

७५. [प्र.] चरित्तलद्धी णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा—सामाइयचरित्तलद्धी, छेदोवट्ठावणियलद्धी, परिहारविसुद्धलद्धी, सुहुमसंपरायलद्धी, अहक्खायचरित्तलद्धी।

७५. [प्र.] भगवन् ! चारित्रलब्धि कितने प्रकार की है ?

[उ.] गौतम ! चारित्रलब्धि पाँच प्रकार की है। वह इस प्रकार–सामायिकचारित्रलब्धि, छेदोपस्थापनिकलब्धि, परिहारविशुद्धलब्धि, सूक्ष्मसम्परायलब्धि और यथाख्यातचारित्रलब्धि।

75. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *chaaritra-labdhi* (attainment of ability of conduct)?

[Ans.] Gautam ! It is of five kinds—*Saamaayik-chaaritra-labdhi* (attainment of ability of abstaining from all kinds of sinful acts and consequent equanimity), *Chhedopasthaanik-labdhi* (attainment of ability of re-accepting five great vows one by one), *Pariharavishuddhik-labdhi* (attainment of ability to observe special austerities according to the prescribed procedure aimed at enhanced purification), *Sukshmasamparaya-labdhi* (attainment of ability of the discipline prescribed for tenth *Gunasthaan* aimed at removing traces of attachment) and *Yathakhyata-chaaritra-labdhi* (attainment of ability of the ultimate discipline of detachment related to beings at eleventh and higher *Gunasthaans*).

७६. [प्र.] चरित्ताचरित्तलद्धी णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! एगागारा पण्णत्ता। एवं जाव उवभोगलद्धी एगागारा पण्णत्ता।

७६. [प्र.] भगवन् ! चारित्राचारित्रलब्धि कितने प्रकार की है ?

[उ.] गौतम ! वह एकाकार (एक प्रकार की) है। इसी प्रकार दानलब्धि, लाभलब्धि, भोगलब्धि, उपभोगलब्धि; ये सब एक-एक प्रकार की हैं।

76. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *Chaaritraachaaritra-labdhi* (ability of partial renunciation)?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! It is of just one kind. In the same way *Daan-labdhi* (ability of charity), *Laabh-labdhi* (ability of gain), *Bhoga-labdhi* (ability of enjoyment) and *Upabhoga-labdhi* (ability of extended enjoyment) all are of one kind each.

७७. [प्र.] वीरियलद्धी णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तं जहा—बालवीरियलद्धी, पंडियवीरियलद्धी, बालपंडियवीरियलद्धी।

७७. [प्र.] भगवन् ! वीर्यलब्धि कितने प्रकार की कही है ?

[उ.] गौतम ! वीर्यलब्धि तीन प्रकार की कही है। वह इस प्रकार है- बालवीर्यलब्धि, पण्डितवीर्यलब्धि, और बाल-पण्डितवीर्यलब्धि।

77. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *Virya-labdhi* (ability of potency) ?

[**Ans.**] Gautam ! It is of three kinds—*Baal-virya-labdhi* (attainment of ability of potency of an indisciplined), *Pandit-virya-labdhi* (attainment of ability of potency of a disciplined), and *Baal-pandit-virya-labdhi* (attainment of ability of potency of an indisciplined and disciplined both).

७८. [प्र.] इंदियलद्धी णं भंते ! कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा—सोइंदियलद्धी जाव फासिंदियलद्धी।

७८. [प्र.] भगवन् ! इन्द्रियलब्धि कितने प्रकार की कही है ?

[उ.] गौतम ! वह पाँच प्रकार की कही है। यथा- श्रोत्रेन्द्रियलब्धि यावत् स्पर्शनेन्द्रियलब्धि।

78. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *Indriya-labdhi* (ability of sense organs) ?

[**Ans.**] Gautam ! It is of five kinds—*Shrotrendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of hearing)... and so on up to... *Sparshanendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of touch).

७९. [प्र. १] नाणलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! नाणी, नो अण्णाणी; अत्थेगइया दुनाणी। एवं पंच नाणाइं भयणाए।

[प्र. २] तस्स अलद्धीया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! नो नाणी, अण्णाणी; अत्थेगइया दुअण्णाणी, तिण्णि अण्णाणाणि भयणाए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७९. [प्र. १] भगवन् ! ज्ञानलब्धि वाले जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी हैं, अज्ञानी नहीं। उनमें से कितने ही दो ज्ञान वाले होते हैं। इस प्रकार उनमें पाँच ज्ञान भजना (विकल्प) से पाये जाते हैं।

[प्र. २] भगवन् ! ज्ञानलब्धिरहित (अज्ञानलब्धि वाले) जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी नहीं, अज्ञानी हैं। उनमें से कितने ही जीव दो अज्ञान वाले (और कितने ही तीन अज्ञान वाले) होते हैं। इस प्रकार उनमें तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

79. [Q. 1] *Bhante* ! Are *jnana-labdhi jivas* (living beings having attained the ability of knowledge) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) not *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). Many of them are with two *jnanas* (or more). Thus they have different alternative combinations of five *jnanas*.

[Q. 2] *Bhante* ! Are *jivas* without *jnana-labdhi* (living beings not having attained the ability of knowledge) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are not *jnani* but *ajnani*. Many of them are with two *ajnanas* (or more). Thus they have different alternative combinations of three *ajnanas*.

८०. [प्र. १] आभिणिबोहियणाणलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! नाणी, नो अण्णाणी; अत्थेगइया दुणाणी, चत्तारि नाणाइं भयणाए।

[प्र. २] तस्स अलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! नाणी वि, अण्णाणी वि। जे नाणी ते नियमा एगनाणी–केवलनाणी। जे अण्णाणी ते अत्थेगइया दुअन्नाणी, तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।

८०. [प्र. १] भगवन् ! आभिनिबोधिकज्ञानलब्धि वाले जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी हैं, अज्ञानी नहीं। उनमें से कितने ही जीव दो ज्ञान वाले, कितने ही तीन ज्ञान वाले और कितने ही चार ज्ञान वाले होते हैं। इस तरह उनमें चार ज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

[प्र. २] भगवन् ! आभिनिबोधिकज्ञानलब्धिरहित जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी भी हैं और अज्ञानी भी। जो ज्ञानी हैं, वे नियमतः एक मात्र केवलज्ञान वाले हैं और जो अज्ञानी हैं, वे कितने ही दो अज्ञान वाले एवं कितने ही तीन अज्ञान वाले हैं। अर्थात् उनमें तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

80. [Q. 1] *Bhante* ! Are *abhinibodhik jnana-labdhi jivas* (living beings having attained the ability of sensual knowledge) *jnani* or *ajnani* ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) not *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). Many of them are with two *jnanas* (kinds of right knowledge), many with three *jnanas* and many with four *jnanas*. Thus they have different alternative combinations of four *jnanas*.

[Q. 2] *Bhante* ! Are *jivas* without *abhinibodhik jnana-labdhi* (living beings not having attained the ability of sensual knowledge) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* as well as *ajnani*. Those having ability of knowledge have only one *jnana*, that is *Keval-jnana*. Among those with *ajnana* (ignorance or wrong knowledge) many are with two *ajnanas* and many with three *ajnanas*. Thus they have different alternative combinations of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

८१. एवं सुयनाणलद्धीया वि। तस्स अलद्धीया वि जहा आभिणिबोहियनाणस्स अलद्धीया।

८१. श्रुतज्ञानलब्धि वाले जीवों का कथन आभिनिबोधिक ज्ञानलब्धि वाले जीवों के समान करना चाहिए। एवं श्रुतज्ञानलब्धिरहित जीवों का कथन आभिनिबोधिक ज्ञानलब्धिरहित जीवों की तरह जानना चाहिए।

81. *Jivas* with *Shrut-jnana-labdhi* (living beings having attained the ability of scriptural knowledge) follow the pattern of living beings having attained the ability of sensual knowledge. And those without *Shrut-jnana-labdhi* (living beings not having attained the ability of scriptural knowledge) follow the pattern of living beings not having attained the ability of sensual knowledge.

८२. [प्र. १] ओहिनाणलद्धीया णं पुच्छा ?

[उ] गोयमा ! नाणी, नो अण्णाणी, अत्थेगइया तिणाणी, अत्थेगइया चउनाणी। जे तिणाणी ते आभिणिबोहियनाणी, सुयनाणी, ओहिनाणी। जे चउनाणी, ते आभिणिबोहियनाणी, सुयणाणी, ओहिणाणी, मणपज्जवनाणी।

८२. [प्र. १] भगवन् ! अवधिज्ञानलब्धियुक्त जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! अवधिज्ञानलब्धियुक्त जीव ज्ञानी हैं, अज्ञानी नहीं। उनमें से कतिपय तीन ज्ञान वाले हैं और कई चार ज्ञान वाले हैं। जो तीन ज्ञान वाले हैं, वे आभिनिबोधिक ज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान वाले हैं और जो चार ज्ञान से युक्त हैं, वे आभिनिबोधिक ज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्यवज्ञान वाले हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

82. [Q. 1] *Bhante* ! Are *avadhi-jnana-labdhi jivas* (living beings having attained the ability of extrasensory knowledge) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) and not *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). Many of them are with three *jnanas* (kinds of right knowledge) and many with four *jnanas*. Those having three *jnanas* are with *abhinibodhik jnana, shrut-jnana* and *avadhi-jnana*. Those having four *jnanas* are with *abhinibodhik jnana, shrut-jnana, avadhi-jnana* and *manah-paryav jnana*.

[प्र. २] तस्स अलद्धीया णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?

[उ.] गोयमा ! नाणी वि, अण्णाणी वि। एवं ओहिनाणवज्जाइं चत्तारि नाणाइं, तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।

[प्र. २] भगवन् ! अवधिज्ञानलब्धि से रहित जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी भी हैं और अज्ञानी भी हैं। इस तरह उनमें अवधिज्ञान के सिवाय चार ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! Are *jivas* without *avadhi-jnana-labdhi* (living beings not having attained the ability of extrasensory knowledge) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* as well as *ajnani*. And they have different alternative combinations of four *jnanas*, besides *avadhi-jnana*, and three *ajnanas*.

८३. [प्र. १] मणपज्जवनाणलद्धिया णं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! णाणी, णो अण्णाणी। अत्थेगइया तिणाणि, अत्थेगइया चउनाणी। जे तिणाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयणाणी मणपज्जवणाणी। जे चउनाणी, ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी ओहिनाणी मणपज्जवनाणी।

८३. [प्र. १] भगवन् ! मनःपर्यवज्ञानलब्धि वाले जीव ज्ञानी हैं अथवा अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी हैं, अज्ञानी नहीं। उनमें से कितने ही तीन ज्ञान वाले हैं और कितने ही चार ज्ञान वाले हैं। जो तीन ज्ञान वाले हैं, वे आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और मनःपर्यायज्ञान वाले हैं और जो चार ज्ञान वाले हैं, वे आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्यायज्ञान वाले हैं।

83. [Q. 1] *Bhante* ! Are *manahparyava jnana-labdhi jivas* (living beings having attained the ability of clairvoyant knowledge) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) not *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). Many of them are with three

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

jnanas (kinds of right knowledge) and many with four *jnanas*. Those having three *jnanas* are with *abhinibodhik jnana*, *shrut-jnana* and *manahparyava jnana*. Those having four *jnanas* are with *abhinibodhik jnana*, *shrut-jnana*, *avadhi-jnana* and *manahparyava jnana*.

[प्र. २] **तस्स अलद्धीया णं पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! णाणी वि, अण्णाणी वि, मणपज्जवणाणवज्जाइं चत्तारि णाणाइं, तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।**

[प्र. २] भगवन् ! मनःपर्यवज्ञानलब्धि से रहित जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी भी हैं और अज्ञानी भी हैं। उनमें मनःपर्यवज्ञान के सिवाय चार ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! Are *jivas* without *manahparyava jnana-labdhi* (living beings not having attained the ability of clairvoyant knowledge) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* as well as *ajnani*. And they have different alternative combinations of four *jnanas*, besides *manahparyava-jnana*, and three *ajnanas*.

८४. [प्र. १] **केवलनाणलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अन्नाणी ?**

[उ.] **गोयमा ! नाणी, नो अण्णाणी। नियमा एगणाणी—केवलनाणी।**

८४. [प्र. १] भगवन् ! केवलज्ञानलब्धि वाले जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी हैं, अज्ञानी नहीं। वे नियमतः एक मात्र केवलज्ञान वाले हैं।

84. [Q. 1] *Bhante* ! Are *Keval-jnana-labdhi jivas* (living beings having attained the ability of ultimate knowledge or omniscience) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) not *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). As a rule they have only *Keval-jnana*.

[प्र. २] **तस्स अलद्धिया णं पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! नाणी वि, अण्णाणि वि। केवलनाणवज्जाइं चत्तारि णाणाइं, तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।**

[प्र. २] भगवन् ! केवलज्ञानलब्धिरहित जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी भी हैं और अज्ञानी भी हैं। उनमें केवलज्ञान को छोड़कर शेष चार ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

84. [Q. 2] *Bhante* ! Are *jivas* without *Keval-jnana-labdhi* (living beings not having attained the ability of omniscience) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* as well as *ajnani*. And they have different alternative combinations of four *jnanas* (kinds of right knowledge), other than *Keval-jnana* (omniscience), and three *ajnanas*.

८५. [प्र. १] **अण्णाणलद्धिया णं पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! नो नाणी, अण्णाणी; तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।**

८५. [प्र. १] भगवन् ! अज्ञानलब्धि वाले जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी नहीं, अज्ञानी हैं। उनमें तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

85. [Q. 1] *Bhante* ! Are *ajnana-labdhi jivas* (living beings having attained the ability of wrong knowledge) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are not *jnani* (endowed with right knowledge) but *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). They have different alternative combinations of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

[प्र. २] **तस्स अलद्धिया णं पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! नाणी, नो अण्णाणी। पंच नाणाइं भयणाए।**

[प्र. २] भगवन् ! अज्ञानलब्धि से रहित जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी हैं, अज्ञानी नहीं। उनमें भजना से पाँच ज्ञान पाये जाते हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! Are *jivas* without *ajnana-labdhi* (living beings not having attained the ability of wrong knowledge) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* not *ajnani*. They have different alternative combinations of five *jnanas*.

८६. **जहा अण्णाणस्स लद्धिया अलद्धिया य भणिया एवं मइअण्णाणस्स, सुयअण्णाणस्स य लद्धिया अलद्धिया य भाणियव्वा।**

८६. जिस प्रकार अज्ञानलब्धि और अज्ञानलब्धि से रहित जीवों का कथन किया है, उसी प्रकार मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञानलब्धि वाले तथा इन लब्धियों से रहित जीवों का कथन करना चाहिए।

86. As has been stated about living beings with and without *ajnana-labdhi* so should be stated for beings with and without *mati-ajnana* and *shrut-ajnana labdhis*.

८७. **विभंगनाणलद्धियाणं तिण्णि अण्णाणाइं नियमा। तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं भयणाए। दो अण्णाणाइं नियमा।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८७. विभंगज्ञान-लब्धि से युक्त जीवों में नियमतः तीन अज्ञान होते हैं और विभंगज्ञान-लब्धिरहित जीवों में पाँच ज्ञान भजना से और दो अज्ञान नियमतः होते हैं।

87. Living beings with *vibhang-jnana labdhi* have three *ajnanas* as a rule. Those without *vibhang-jnana labdhi* have different alternative combinations of five *jnanas* and two *ajnanas* as a rule.

८८. [प्र. १] दंसणलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! नाणी वि, अण्णाणी वि। पंच नाणाइं, तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।

[प्र. २] तस्स अलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?

[उ.] गोयमा ! तस्स अलद्धिया नत्थि।

८८. [प्र. १] भगवन् ! दर्शनलब्धि वाले जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी भी होते हैं, अज्ञानी भी। उनमें पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

[प्र. २] भगवन् ! दर्शनलब्धिरहित जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! दर्शनलब्धिरहित जीव कोई भी नहीं होता।

88. [Q. 1] Bhante ! Are *darshan-labdhi jivas* (living beings having attained the ability of perception/faith) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) as well as *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). They have different alternative combinations of five *jnanas* and three *ajnanas*.

[Q. 2] *Bhante* ! Are jivas without *darshan-labdhi* (living beings not having attained the ability of perception/faith) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! There is no living being without the ability of perception/faith.

८९. [१] सम्मद्दंसणलद्धियाणं पंच नाणाइं भयणाए।

[२] तस्स अलद्धियाणं तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।

८९. [१] सम्यग्दर्शनलब्धि प्राप्त जीवों में पाँच ज्ञान भजना से होते हैं।

[२] सम्यग्दर्शनलब्धिरहित जीवों में तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

89. [1] Living beings with *samyagdarshan-labdhi* (having attained the ability of right perception/faith) have different alternative combinations of five *jnanas*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[2] Living beings without *samyagdarshan-labdhi* (not having attained the ability of right perception/faith) have different alternative combinations of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

९०. [प्र. १] मिच्छादंसणलद्धिया णं भंते ! पुच्छा ?

[उ.] तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।

[२] तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं, तिण्णि य अण्णाणाइं भयणाए।

९०. [प्र. १] भगवन् ! मिथ्यादर्शनलब्धि वाले जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! उनमें तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

[२] मिथ्यादर्शनलब्धिरहित जीवों में पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

90. [Q. 1] *Bhante* ! Are *mithyadarshan-labdhi jivas* (living beings having attained the ability of false perception/faith) *jnani or ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have different alternative combinations of three *ajnanas*.

[2] Living beings without *mithyadarshan-labdhi* (not having attained the ability of false perception/faith) have different alternative combinations of five *jnanas* (kinds of right knowledge) and three *ajnanas*.

९१. सम्मामिच्छादंसणलद्धिया अलद्धिया य जहा मिच्छादंसणलद्धी अलद्धी तहेव भाणियव्वं।

९१. सम्यग्मिथ्यादर्शन (मिश्रदर्शन) लब्धिप्राप्त जीवों का कथन मिथ्यादर्शनलब्धियुक्त जीवों के समान और सम्यग्मिथ्यादर्शनलब्धिरहित जीवों का कथन मिथ्यादर्शनलब्धिरहित जीवों के समान समझें।

91. Living beings with *samyagmithyadarshan-labdhi* (having attained the ability of mixed perception/faith) follow the pattern of beings with *mithyadarshan-labdhi* and those without *samyagmithyadarshan-labdhi* follow the pattern of beings without *mithyadarshan-labdhi*.

९२. [प्र. १] चरित्तलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! पंच नाणाइं भयणाए।

[२] तस्स अलद्धियाणं मणपज्जवनाणवज्जाइं चत्तारि नाणाइं, तिन्नि य अन्नाणाइं भयणाए।

९२. [प्र. १] भगवन् ! चारित्रलब्धियुक्त जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! उनमें पाँच ज्ञान भजना से होते हैं।

[२] चारित्रलब्धिरहित जीवों में मनःपर्यवज्ञान को छोड़कर चार ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

92. [Q. 1] *Bhante* ! Are *chaaritra-labdhi jivas* (living beings having attained the ability of conduct) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have different alternative combinations of five *jnanas*.

[2] Living beings without *chaaritra-labdhi* (not having attained the ability of conduct) have different alternative combinations of four *jnanas*, other than *manahparyava jnana*, and three *ajnanas*.

९३. [प्र. १] सामाइयचरित्तलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अन्नाणी ?

[उ.] गोयमा ! नाणी, केवलवज्जाइं चत्तारि नाणाइं भयणाए।

[२] तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं तिण्णि य अण्णाणाइं भयणाए।

९३. [प्र. १] भगवन् ! सामायिकचारित्रलब्धिमान् जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी होते हैं। उनमें केवलज्ञान के सिवाय चार ज्ञान भजना से होते हैं।

[२] सामायिकचारित्रलब्धिरहित जीवों में पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

93. [Q. 1] *Bhante* ! Are *samayik chaaritra-labdhi jivas* (living beings having attained the ability of equanimous conduct) *jnani* (endowed with right knowledge) or *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani*. They have different alternative combinations of four *jnanas* other than Keval-jnana.

[2] Living beings without *samayik chaaritra-labdhi* (not having attained the ability of equanimous conduct) have different alternative combinations of five *jnanas* and three *ajnanas*.

९४. एवं जहा सामाइयचरित्तलद्धिया अलद्धिया य भणिया एवं जाव अहक्खायचरित्तलद्धिया अलद्धिया य भाणियव्वा, नवरं अहक्खायचरित्तलद्धियाणं पंच नाणाइं भयणाए।

९४. इसी प्रकार यावत् यथाख्यातचारित्रलब्धि वाले जीवों तक का कथन सामायिकचारित्रलब्धियुक्त जीवों के समान करना चाहिए। इतना विशेष है कि यथाख्यातचारित्रलब्धिमान् जीवों में पाँच ज्ञान भजना से पाये जाते हैं। इसी तरह यावत् यथाख्यातचारित्रलब्धिरहित जीवों तक का कथन सामायिकचारित्रलब्धिरहित जीवों के समान करना चाहिए।

94. In the same way what has been stated about *samayik chaaritra-labdhi jivas* (living beings having attained the ability of equanimous conduct) should be extended up to *yathakhyat-chaaritra-labdhi jivas* (living beings having attained ability of the ultimate discipline of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

detachment related to beings at eleventh and higher *Gunasthaans*). The only difference is that *yathakhyat-chaaritra-labdhi jivas* have different alternative combinations of five *jnanas* (kinds of right knowledge). In the same way what has been stated about beings without *samayik chaaritra-labdhi* (not having attained the ability of equanimous conduct) should be extended up to beings without *yathakhyat-chaaritra labdhi.*

९५. [प्र. १] चरित्ताचरित्तलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! नाणी, नो अण्णाणी। अत्थेगइया दुण्णाणी, अत्थेगइया तिण्णाणी। जे दुन्नाणी ते आभिणिबोहियनाणी य, सुयनाणी य। जे तिन्नाणी ते आभि० सुयनाणी ओहिनाणी य।

[२] तस्स अलद्धीयाण पंच नाणाइं, तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।

९५. [प्र. १] भगवन् ! चारित्राचारित्र (देशचारित्र) लब्धि वाले जीव ज्ञानी हैं अथवा अज्ञानी हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी होते हैं, अज्ञानी नहीं। उनमें से कई दो ज्ञान वाले, कई तीन ज्ञान वाले होते हैं। जो दो ज्ञान वाले होते हैं, वे आभिनिबोधिकज्ञानी और श्रुतज्ञानी होते हैं, जो तीन ज्ञान वाले होते हैं, वे आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी होते हैं।

[२] चारित्राचारित्रलब्धिरहित जीवों में पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

95. [Q. 1] *Bhante* ! Are *chaaritraachaaritra-labdhi jivas* (living beings having attained the ability of partial renunciation) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* not *ajnani*. Some of these have two *jnanas* and some have three. Those having two *jnanas* have *Abhinibodhik jnana* and *Shrut-jnana* and those having three have *Abhinibodhik jnana*, *Shrut-jnana* and *Avadhi-jnana*.

[2] Jivas without *chaaritraachaaritra-labdhi* (living beings without having attained the ability of partial renunciation) have different alternative combinations of five *jnanas* and three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

९६. [१] दाणलद्धियाणं पंच नाणाइं, तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।

[प्र. २] तस्स अलद्धीया णं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! नाणी, नो अण्णाणी। नियमा एगनाणी—केवलनाणी।

९६. [१] दानलब्धिमान् जीवों में पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

[प्र. २] भगवन् ! दानलब्धिरहित जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी होते हैं, अज्ञानी नहीं। उनमें नियम से एक मात्र केवलज्ञान होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

96. [1] *Daan-labdhi jivas* (beings having attained the ability of charity) have different alternative combinations of five *jnanas* and three *ajnanas*.

[Q. 2] *Bhante* ! Are jivas without *Daan-labdhi* (beings devoid of the ability of charity) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) not *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). They only have *Keval-jnana* as a rule.

९७. एवं जाव वीरियस्स लद्धी अलद्धी य भाणियव्वा।

९७. इसी प्रकार यावत् वीर्यलब्धियुक्त और वीर्यलब्धिरहित जीवों के विषय में समझें।

97. The same pattern follows up to living beings with and without *Virya-labdhi* (ability of potency).

९८. [१] बालवीरियलद्धियाणं तिण्णि नाणाइं तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।

[२] तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं भयणाए।

९८. [१] बालवीर्यलब्धियुक्त जीवों में तीन ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

[२] बालवीर्यलब्धिरहित जीवों में पाँच ज्ञान भजना से होते हैं।

98. [1] Living beings with *Baal-virya-labdhi* (attainment of ability of potency of an indisciplined) have different alternative combinations of three *jnanas* (kinds of right knowledge) and three *ajnanas*.

98. [2] Living beings without *Baal-virya-labdhi* (devoid of potency of an indisciplined) have different alternative combinations of five *jnanas*.

९९. [१] पंडियवीरियलद्धियाणं पंच नाणाइं भयणाए।

[२] तस्स अलद्धियाणं मणपज्जवनाणवज्जाइं णाणाइं, अण्णाणाणि तिण्णि य भयणाए।

९९. [१] पण्डितवीर्यलब्धिमान् जीवों में पाँच ज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

[२] पण्डितवीर्यलब्धिरहित जीवों में मनःपर्यवज्ञान के सिवाय चार ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

99. [1] Living beings with *Pandit-virya-labdhi* (attainment of ability of potency of a disciplined) have different alternative combinations of five *jnanas*.

[2] Living beings without *Pandit-virya-labdhi* (attainment of ability of potency of a disciplined) have different alternative combinations of four *jnanas*, other than *manahparyava jnana* and three *ajnanas*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१००. [प्र. १] बालपंडियवीरियलद्धिया णं ?

[उ.] तिण्णि नाणाइं भयणाए।

[२] तस्स अलद्धियाणं पंच नाणाइं, तिण्णि य अण्णाणाइं भयणाए।

१००. [प्र. १] भगवन् ! बालपण्डितवीर्यलब्धि वाले जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! उनमें तीन ज्ञान भजना से होते हैं।

[२] बालपण्डितवीर्यलब्धिरहित जीवों में पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

100. [Q. 1] *Bhante* ! Are *jivas* with *Baal-pandit-virya-labdhi* (attainment of ability of potency of an indisciplined and disciplined both) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have different alternative combinations of three *jnanas*.

[2] Living beings without *Baal-pandit-virya-labdhi* (devoid of potency of an indisciplined and disciplined both) have different alternative combinations of three *jnanas* (kinds of right knowledge) and three *ajnanas*.

१०१. [प्र. १] इंदियलद्धिया णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] गोयमा ! चत्तारि णाणाइं, तिण्णि य अन्नाणाइं भयणाए।

१०१. [प्र. १] भगवन् ! इन्द्रियलब्धिमान् जीव ज्ञानी होते हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! उनमें चार ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

101. [Q 1.] *Bhante* ! Are *jivas* with *Indriya-labdhi* (ability of sense organs) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They have different alternative combinations of four *jnanas* and three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

[प्र. २] तस्स अलद्धिया णं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! नाणी, नो अण्णाणी। नियमा एगनाणी—केवलनाणी।

[प्र. २] भगवन् ! इन्द्रियलब्धिरहित जीव ज्ञानी होते हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी होते हैं, अज्ञानी नहीं। वे नियमतः एक मात्र केवलज्ञानी होते हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! Are *jivas* without *Indriya-labdhi* (ability of sense organs) *jnani* or *ajnani* ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) not *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). They only have *Keval-jnana* as a rule.

१०२. [१] सोइंदियलद्धियाणं जहा इंदियलद्धिया।

[प्र. २] तस्स अलद्धिया णं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! नाणी वि अण्णाणी वि। जे नाणी ते अत्थेगइया दुनाणी, अत्थेगइया एगनाणी। जे दुनाणी ते आभिणिबोहियनाणी सुयनाणी। जे एगनाणी ते केवलनाणी। जे अण्णाणी ते नियमा दुअन्नाणी, तं जहा—मइअण्णाणी य सुयअण्णाणी य।

१०२. [१] श्रोत्रेन्द्रियलब्धियुक्त जीवों का कथन इन्द्रियलब्धि वाले जीवों की तरह समझें।

[प्र. २] भगवन् ! श्रोत्रेन्द्रियलब्धिरहित जीव ज्ञानी होते हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी भी होते हैं और अज्ञानी भी। जो ज्ञानी होते हैं, उनमें से कई दो ज्ञान वाले होते हैं और कई एक ज्ञान वाले होते हैं। जो दो ज्ञान वाले होते हैं, वे आभिनिबोधिकज्ञानी और श्रुतज्ञानी होते हैं। जो एक ज्ञान वाले होते हैं, वे केवलज्ञानी होते हैं। जो अज्ञानी होते हैं, वे नियमतः दो अज्ञान वाले होते हैं। यथा—मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञान।

102. [1] Living beings with *Shrotrendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of hearing) follow the pattern of living beings with *Indriya-labdhi* (ability of sense organs).

[**Q. 2**] *Bhante* ! Are *jivas* without *Shrotrendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of hearing) *jnani* or *ajnani* ?

[**Ans.**] Gautam ! They are *jnani* as well as *ajnani*. Of those who are *jnani* many are with two *jnanas* and many with one *jnana*. Those with two *jnanas* have *Abhinibodhik jnana* and *Shrut-jnana*. Those with one *jnana* have *Keval-jnana*. Those who are *ajnani* have two *ajnanas* as a rule—*Mati-ajnana* and *Shrut-ajnana*.

१०३. चक्खिंदिय-घाणिंदियाणं लद्धियाणं अलद्धियाण य जहेव सोइंदियस्स।

१०३. चक्षुरिन्द्रिय और घ्राणेन्द्रियलब्धि वाले जीवों का कथन श्रोत्रेन्द्रियलब्धिमान् जीवों के समान कहना चाहिए।

103. Living beings with *Chakshurindriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of seeing) and *Ghranendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of hearing) follow the pattern of *Shrotrendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of hearing).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०४. [१] जिब्भिंदियलद्धियाणं चत्तारि णाणाइं, तिण्णि य अण्णाणाणि भयणाए।

१०४. [१] जिह्वेन्द्रियलब्धि वाले जीवों में चार ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

104. [1] Living beings with *Jihvendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of taste) have different alternative combinations of four *jnanas* and three *ajnanas*.

[प्र. २] तस्स अलद्धिया णं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! नाणी वि, अण्णाणी वि। जे नाणी ते नियमा एगनाणी–केवलनाणी। जे अण्णाणी ते नियमा दुअन्नाणी, तं जहा–मइअण्णाणी य, सुयअन्नाणी य।

[प्र. २] भगवन् ! जिह्वेन्द्रियलब्धिरहित जीव ज्ञानी होते हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी भी होते हैं, अज्ञानी भी होते हैं। जो ज्ञानी होते हैं, वे नियमतः एक मात्र केवलज्ञान वाले होते हैं और जो अज्ञानी होते हैं, वे नियमतः दो अज्ञान वाले होते हैं। यथा–मति–अज्ञानी और श्रुत–अज्ञानी।

[Q. 2] *Bhante* ! Are *jivas* without *Jihvendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of taste) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) as well as *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). Those who are *jnani* are with only one *jnana*, *Keval-jnana* (omniscience), as a rule. Those who are *ajnani* have two *ajnanas* as a rule—*Mati-ajnana* and *Shrut-ajnana*.

१०५. फासिंदियलद्धियाणं अलद्धियाणं जहा इंदियलद्धिया य अलद्धिया य।

१०५. स्पर्शेन्द्रियलब्धियुक्त जीवों का कथन इन्द्रियलब्धि वाले जीवों के समान करना चाहिए। (अर्थात् उनमें चार ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।)

105. Living beings with *Sparshanendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of touch) follow the pattern of living beings with *Indriya-labdhi* (ability of sense organs). Which means they have different alternative combinations of four *jnanas* (kinds of right knowledge) and three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

विवेचन : (१) **लब्धि द्वार–लब्धि की परिभाषा**–ज्ञानादि गुणों के प्रतिरोधक उन ज्ञानावरणीय आदि कर्मों के क्षय या क्षयोपशम से आत्मा में ज्ञानादि गुणों की उपलब्धि (लाभ या प्रकट) होना लब्धि है।

लब्धि के मुख्य दस भेद हैं–(१) **ज्ञानलब्धि**–ज्ञानावरणीय कर्म के क्षय या क्षयोपशम से आत्मा में मतिज्ञानादि गुणों का लाभ होना। (२) **दर्शनलब्धि**–सम्यक्, मिथ्या या मिश्र–श्रद्धानरूप आत्मा का परिणाम प्राप्त होना। (३) **चारित्रलब्धि**–चारित्रमोहनीय कर्म के क्षयोपशम या क्षयादि से होने वाला विरतिरूप आत्म–परिणाम। (४) **चारित्राचारित्रलब्धि**–अप्रत्याख्यानी चारित्रमोहनीय कर्म के क्षयोपशम से होने वाला आत्मा का देशविरतिरूप–परिणाम चारित्राचारित्रलब्धि है। (५) **दानलब्धि**–दानान्तराय के क्षय या क्षयोपशम से होने वाली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लब्धि। (६) लाभलब्धि—लाभान्तराय कर्म के क्षय अथवा क्षयोपशम से होने वाली लब्धि। (७) भोगलब्धि—भोगान्तराय के क्षय या क्षयोपशम से होने वाली लब्धि। (८) उपभोगलब्धि—उपभोगान्तराय के क्षय या क्षयोपशम से होने वाली लब्धि। (९) वीर्यलब्धि—वीर्यान्तराय कर्म के क्षय या क्षयोपशम से होने वाली लब्धि। (१०) इन्द्रियलब्धि—मतिज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से तथा जातिनामकर्म एवं पर्याप्तनामकर्म के उदय से होने वाली लब्धि। लद्धिया का अर्थ है लब्धि वाले जीव में और अलद्धिया का अर्थ है लब्धि रहित जीव में।

(१) ज्ञानलब्धि—ज्ञानलब्धि के पाँच और इसके विपरीत अज्ञानलब्धि के तीन भेद बताये गये हैं।

(१. क) **ज्ञानलब्धिमान** जीव सदा ज्ञानी और अज्ञानलब्धि वाले (ज्ञानलब्धिरहित) जीव सदा अज्ञानी होते हैं।

आभिनिबोधिकज्ञानलब्धि वाले जीवों में चार ज्ञान भजना से पाए जाते हैं, इसका कारण यह है कि केवली को आभिनिबोधिक ज्ञान नहीं होता। मतिज्ञान की अलब्धि वाले जो ज्ञानी हैं, वे एक मात्र केवलज्ञान वाले हैं और जो अज्ञानी हैं, वे दो अज्ञान वाले या तीन अज्ञानयुक्त होते हैं। इसी प्रकार श्रुतज्ञान की लब्धि और अलब्धि वाले जीवों के विषय में समझना चाहिए।

अवधिज्ञान वालों में तीन ज्ञान (मति, श्रुत और अवधि) अथवा चार ज्ञान (केवलज्ञान को छोड़कर) होते हैं। अवधिज्ञान की अलब्धि वाले जो ज्ञानी होते हैं, उनमें दो ज्ञान (मति और श्रुत) होते हैं, या तीन ज्ञान (मति, श्रुत और मनःपर्यवज्ञान होते हैं या फिर एक ज्ञान (केवलज्ञान) होता है। जो अज्ञानी हैं, उनमें दो अज्ञान (मति-अज्ञान, श्रुत-अज्ञान) या तीनों अज्ञान होते हैं।

मनःपर्यायज्ञानलब्धि वाले जीवों में या तो तीन ज्ञान (मति, श्रुत और मनःपर्यायज्ञान) या फिर चार ज्ञान (केवलज्ञान को छोड़कर) होते हैं। मनःपर्यायज्ञान की अलब्धि वाले जीवों में जो ज्ञानी हैं, उनमें दो ज्ञान (मति और श्रुत) वाले या तीन ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि) वाले हैं, या फिर एक ज्ञान (केवलज्ञान) वाले हैं। इनमें जो अज्ञानी हैं, वे दो या तीन अज्ञान वाले हैं।

केवलज्ञानलब्धि वाले जीवों में एक मात्र केवलज्ञान ही होता है, केवलज्ञान की अलब्धि वाले जीवों में जो ज्ञानी हैं उनमें प्रथम के दो ज्ञान, या प्रथम के तीन ज्ञान अथवा मति, श्रुत और मनःपर्यवज्ञान, या प्रथम के चार ज्ञान होते हैं; जो अज्ञानी हैं, उनमें दो या तीन अज्ञान होते हैं।

(ख) **अज्ञानलब्धिमान्** जीवों में भजना से तीन अज्ञान होते हैं। अज्ञानलब्धिरहित जीवों में भजना से पाँच ज्ञान पाये जाते हैं। मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञान की लब्धि वाले जीवों में पूर्ववत् तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं तथा मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञान की अलब्धि वाले जीवों में पूर्ववत् पाँच ज्ञान भजना से पाये जाते हैं। विभंगज्ञान की लब्धि वाले अज्ञानी जीवों में नियमतः तीन अज्ञान होते हैं। विभंगज्ञान की अलब्धि वाले ज्ञानी जीवों में पाँच ज्ञान भजना से और अज्ञानी जीवों में नियमतः प्रथम के दो अज्ञान पाये जाते हैं।

(२) दर्शनलब्धि के तीन भेद हैं—(१) **सम्यग्दर्शनलब्धि**—मिथ्यात्वमोहनीय कर्म के क्षय, क्षयोपशम या उपशम से आत्मा में होने वाला परिणाम। (२) **मिथ्यादर्शनलब्धि**—अदेव में देव बुद्धि आदि आत्मा के विपरीत श्रद्धान—मिथ्यात्व के अशुद्ध पुद्गलों के वेदन से उत्पन्न विपर्यासरूप जीव-परिणाम। (३) **सम्यग्मिथ्या (मिश्र) दर्शनलब्धि**—मिथ्यात्व के अर्ध-विशुद्ध पुद्गल के वेदन से एवं मिश्रमोहनीय कर्म के उदय से उत्पन्न मिश्ररुचि-मिश्ररूप (किञ्चित् अयथार्थ तत्त्व श्रद्धानरूप) जीव के परिणाम।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) कोई भी जीव दर्शनलब्धि के रहित नहीं होता। दर्शन के तीन प्रकारों (सम्यक्, मिथ्या और मिश्र) में से कोई-न-कोई एक दर्शन जीव में होता ही है। सम्यग्दर्शनलब्धि वाले जीवों में पाँच ज्ञान तथा सम्यग्दर्शनलब्धिरहित (मिथ्यादृष्टि या मिश्रदृष्टि) जीवों में तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। मिथ्यादर्शनलब्धि वाले जीव अज्ञानी ही होते हैं। मिथ्यादर्शनलब्धिरहित जीव या तो सम्यग्दृष्टि होंगे या मिश्रदृष्टि होंगे। यदि वे सम्यग्दृष्टि होंगे तो उनमें पाँच ज्ञान और मिश्रदृष्टि होंगे तो उनमें तीन अज्ञान भजना से होंगे। सम्यग्मिथ्यादर्शनलब्धि और अलब्धि वाले जीवों में ज्ञान और अज्ञान की प्ररूपणा मिथ्यादर्शनलब्धि और अलब्धि वाले जावों की तरह समझनी चाहिए।

(३) **चारित्रलब्धि** के पाँच भेद हैं-(१) **सामायिकचारित्रलब्धि**-सर्वसावद्यव्यापार के त्याग एवं निरवद्यव्यापारसेवनरूप राग-द्वेषरहित आत्मा के क्रियानुष्ठान के लाभ, सामायिकचारित्रलब्धि हैं। सामायिक के दो भेद हैं इत्वरकालिक और यावत्कथिक। इन दोनों के कारण सामायिकचारित्रलब्धि के भी दो भेद हो जाते हैं। (२) **छेदोपस्थापनीयचारित्रलब्धि**-जिस चारित्र में पूर्वपर्याय का छेद करके महाव्रतों का उपस्थापन-आरोपण होता है, तद्रूप अनुष्ठान। यह भी दो प्रकार का है-निरतिचार और सातिचार। (३) **परिहारविशुद्धचारित्रलब्धि**-जिस चारित्र में परिहार (तपश्चर्या-विशेष) से आत्म-शुद्धि होती है, अथवा अनेषणीय आहारादि के परित्याग से विशेषतः आत्म-शुद्धि होती है। इस चारित्र में तपस्या का कल्प अठारह मास में परिपूर्ण होता है। इसकी लम्बी प्रक्रिया है। निर्विश्यमानक और निर्विष्टकायिक के भेद से परिहारविशुद्धिचारित्र दो प्रकार का है। (४) **सूक्ष्मसम्परायचारित्रलब्धि**-जिस चारित्र में सूक्ष्म सम्पराय अर्थात् सूक्ष्म (संज्वलन) लोभकषाय शेष रहता है। इस चारित्र के विशुद्ध्यमान और संक्लिश्यमान ये दो भेद हैं। (५) **यथाख्यातचारित्रलब्धि**-कषाय का उदय न होने से, अकषायी साधु का प्रसिद्ध चारित्र **'यथाख्यातचारित्र'** है। इसके स्वामियों के छद्मस्थ और केवली ऐसे दो भेद हैं। चारित्र का विस्तार से कथन शतक २५ उद्देशक ६-७ में किया जायेगा।

(३) **चारित्रलब्धि** वाले जीव ज्ञानी ही होते हैं। अतः उनमें पाँच ज्ञान भजना से पाये जाते हैं, क्योंकि केवली भगवान भी चारित्री होते हैं। चारित्र अलब्धि वाले जीव ज्ञानी और अज्ञानी दोनों तरह के होते हैं। जो ज्ञानी हैं, उनमें भजना से चार ज्ञान (मनःपर्यायज्ञान को छोड़कर) होते हैं, क्योंकि असंयती सम्यग्दृष्टि जीवों में पहले के दो या तीन ज्ञान होते हैं और सिद्ध भगवान में केवलज्ञान होता है। सिद्धों में चारित्रलब्धि या अलब्धि नहीं है, वे नो-चारित्री-नो-अचारित्री नो-चारित्राचारित्री कहे जाते हैं। चारित्रलब्धिरहित, जो अज्ञानी हैं, उनमें तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। सामायिक आदि चार प्रकार के चारित्रलब्धियुक्त जीव ज्ञानी और छद्मस्थ ही होते हैं, इसलिए उनमें चार ज्ञान (केवलज्ञान को छोड़कर) भजना से पाये जाते हैं। यथाख्यातिचारित्र ग्यारहवें से चौदहवें गुणस्थान तक के जीवों में होता है। इनमें से ग्यारहवें और बारहवें गुणस्थानवर्ती जीव छद्मस्थ होने से उनमें आदि के चार ज्ञान और तेरहवें तथा चौदहवें गुणस्थानवर्ती जीव केवली होते हैं, अतः उनमें केवल पाँचवाँ ज्ञान (केवलज्ञान) होता है। इसलिए कहा गया है कि यथाख्यातचारित्रलब्धियुक्त जीवों में पाँच ज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

(४) **चारित्राचारित्रलब्धि** का अर्थ है-देशविरतिलब्धि। यह लब्धि एक ही प्रकार की है।

(४) **चारित्राचारित्रलब्धि** वाले जीव सम्यग्दृष्टि ज्ञानी होते हैं, इसलिए उनमें तीन ज्ञान भजना से पाये जाते हैं, चारित्राचारित्रलब्धिरहित जीव, जो असंयत सम्यग्दृष्टि व ज्ञानी हैं, उनमें सम्यग्ज्ञान होने से पाँच ज्ञान भजना से पाये जाते हैं, इनमें जो अज्ञानी हैं, उनमें तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(५) **दानादिलब्धियाँ**—दानलब्धि, (६) लाभलब्धि, (७) भोगलब्धि तथा (८) उपभोगलब्धि के भी भेदों की विवक्षा न करने से ये लब्धियाँ भी एक-एक प्रकार की हैं।

(५-८) **दानलब्धि** से युक्त जो ज्ञानी जीव (सम्यग्दृष्टि, देशव्रती, महाव्रती एवं केवली) हैं, उनमें पाँच ज्ञान भजना से पाये जाते हैं। दानलब्धि वाले जो अज्ञानी जीव हैं, उनमें तीन अज्ञान पाये जाते हैं। दान आदि लब्धिरहित जीव सिद्ध होते हैं, यद्यपि उनके दानान्तराय आदि पाँचों अन्तराय कर्मों का क्षय हो चुका होता है, तथापि वहाँ दातव्य आदि पदार्थ का अभाव होने से तथा दान ग्रहणकर्त्ता जीवों के न होने से और कृतकृत्य हो जाने के कारण किसी प्रकार का प्रयोजन न होने से उनमें दान आदि की लब्धि नहीं मानी गई है। उनमें नियम से एक मात्र केवलज्ञान होता है। दानलब्धि और अलब्धि वाले जीवों की तरह **लाभलब्धि, भोगलब्धि, उपभोगलब्धि** और **वीर्यलब्धि** तथा इनकी अलब्धि वाले जीवों को समझना चाहिए।

(९) **वीर्यलब्धि**—उसके तीन प्रकार हैं-(१) **बालवीर्यलब्धि**—जिससे बाल अर्थात् संयमरहित जीव की असंयमरूप प्रवृत्ति होती है। (२) **पण्डितवीर्यलब्धि**—जिससे संयम के विषय में प्रवृत्ति होती हो। (३) **बाल-पण्डितवीर्यलब्धि**—जिससे देशविरति में प्रवृत्ति होती हो।

(९) **वीर्यलब्धि** वाले जीवों में बालवीर्यलब्धि वाले जीव असंयत अविरत होते हैं। उनमें से जो सम्यग्दृष्टि ज्ञानी जीव हैं, उनमें तीन ज्ञान भजना से और जो मिथ्यादृष्टि अज्ञानी जीव हैं, उनमें तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। बालवीर्यलब्धिरहित जीव सर्वविरत, देशविरत और सिद्ध होते हैं, अतः उनमें पाँच ज्ञान भजना से पाये जाते हैं। पण्डितवीर्यलब्धि-सम्पन्न जीव ज्ञानी ही होते हैं, उनमें पाँच ज्ञान भजना से पाये जाते हैं। मनःपर्यवज्ञान पण्डितवीर्यलब्धि वाले जीवों में ही होता है। पण्डितवीर्यलब्धिरहित जीव असंयत, देशसंयत और सिद्ध होते हैं। इनमें से असंयत जीवों में पहले के तीन ज्ञान या तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं, देशसंयत में प्रथम के तीन ज्ञान भजना से पाये जाते हैं और सिद्ध जीवों में एक मात्र केवलज्ञान ही होता है। सिद्ध जीवों में पण्डितवीर्यलब्धि नहीं होती, क्योंकि धर्मकार्यों में सर्वथा प्रवृत्ति करना पण्डितवीर्य कहलाता है और ऐसी प्रवृत्ति सिद्धों में नहीं होती। बाल-पण्डितवीर्यलब्धि वाले देशसंयत जीव होते हैं, उनमें प्रथम के तीन ज्ञान भजना से पाये जाते हैं। बाल-पण्डितवीर्यलब्धिरहित जीव असंयत, सर्वविरत और सिद्ध होते हैं, इनमें पाँच ज्ञान अथवा तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

(१०) **इन्द्रियलब्धि** वाले ज्ञानी जीवों में प्रथम के चार ज्ञान भजना से होते हैं, इनमें केवलज्ञान नहीं होता, क्योंकि केवलज्ञानी इन्द्रियों का उपयोग नहीं करते। इन्द्रियलब्धियुक्त अज्ञानी जीवों में तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। इन्द्रियलब्धिरहित जीव एक मात्र केवलज्ञानी होते हैं, उनमें सिर्फ एक केवलज्ञान पाया जाता है।

श्रोत्रेन्द्रियलब्धि, चक्षुरिन्द्रियलब्धि और घ्राणेन्द्रियलब्धि वाले और अलब्धि वाले जीवों का कथन इन्द्रियलब्धि और अलब्धि वाले जीवों के समान करना चाहिए। अर्थात् श्रोत्रेन्द्रिय आदि लब्धिरहित जो ज्ञानी जीव हैं, उनमें दो या एक ज्ञान होता है। जो ज्ञानी हैं, उनमें सास्वादनसम्यग्दृष्टि अपर्याप्त अवस्था में दो ज्ञान पाये जाते हैं, जो एक ज्ञान वाले हैं, उनमें सिर्फ केवलज्ञान होता है, क्योंकि श्रोत्रादि इन्द्रियोपयोगरहित होने से श्रोत्रादि इन्द्रियलब्धिरहित हैं। श्रोत्रेन्द्रियलब्धिरहित अज्ञानी जीवों में प्रथम के दो अज्ञान पाये जाते हैं।

चक्षुरिन्द्रिय और घ्राणेन्द्रिय लब्धिमान् जो पंचेन्द्रिय जीव हैं, उनमें चार ज्ञान (केवलज्ञान के अतिरिक्त) और तीन अज्ञान भजना से होते हैं। विकलेन्द्रियों में श्रोत्रेन्द्रियलब्धिवत् दो ज्ञान व दो अज्ञान पाये जाते हैं। चक्षुरिन्द्रियलब्धिरहित जीव एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय तथा केवली होते हैं एवं घ्राणेन्द्रियलब्धिरहित जीव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय और केवली होते हैं, उनमें से द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय जीवों में सास्वादनसम्यग्दर्शन के सद्भाव में पूर्व के दो ज्ञान और उसके अभाव में प्रथम के दो अज्ञान पाये जाते हैं। केवलियों में सिर्फ एक केवलज्ञान होता है।

जिह्वेन्द्रियलब्धि वाले जीवों में चार ज्ञान या तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। जिह्वेन्द्रियलब्धिरहित जीव ज्ञानी भी होते हैं, अज्ञानी भी। जो ज्ञानी हैं, उनमें एक मात्र केवलज्ञान और जो अज्ञानी हैं, वे एकेन्द्रिय हैं, उनमें (विभंगज्ञान के सिवाय) दो अज्ञान नियमतः होते हैं। एकेन्द्रिय जीवों में सास्वादनसम्यग्दर्शन का अभाव होने से उनमें ज्ञान नहीं होता।

स्पर्शेन्द्रियलब्धि और अलब्धि वाले जीवों का कथन, इन्द्रियलब्धि और अलब्धि वाले जीवों की तरह करना चाहिए। अर्थात् लब्धिमान् जीवों में चार ज्ञान (केवलज्ञान के सिवाय) और तीन अज्ञान भजना से होते हैं और अलब्धिमान् जीव केवली होते हैं, उनमें एक मात्र केवलज्ञान होता है। *(वृत्ति, पत्रांक ३५०-३५४)*

Elaboration—(9) Labdhi-dvar—Definition of *labdhi*—*Labdhi* is the appearance of attributes like knowledge in soul due to destruction or destruction-cum-pacification of *Jnanavaraniya* and other *karmas* that obstruct these attributes of soul.

There are ten main classes of *labdhi*—(1) *Jnana-labdhi* (ability of knowledge)—appearance of attributes like knowledge (*jnana*), including *Mati-jnana*, in soul due to destruction or destruction-cum-pacification of *Jnanavaraniya karma*. (2) *Darshan-labdhi* (ability of perception/faith)—to attain the state of soul where right, false or mixed perception/faith appears. (3) *Chaaritra-labdhi* (ability of conduct)—to attain the state of soul where feeling of renunciation appears due to destruction of *Charitra-mohaniya karma* (conduct deluding *karma*). (4) *Chaaritraachaaritra-labdhi* (ability of partial renunciation)—to attain the state of soul where feeling of partial renunciation appears due to destruction-cum-pacification of *Charitra-mohaniya karma* (conduct deluding *karma*). (5) *Daan-labdhi* (ability of charity)—to attain the state of soul where feeling of charity appears due to destruction or destruction-cum-pacification of *Daanaantaraya karma* (charity hindering karma). (6) *Laabh-labdhi* (ability of gain)—to attain the state of soul where conditions of gain appear due to destruction or destruction-cum-pacification of *Laabhaantaraya karma* (gain hindering karma). (7) *Bhoga-labdhi* (ability of enjoyment)—to attain the state of soul where capacity of enjoyment appears due to destruction or destruction-cum-pacification of *Bhogaantaraya karma* (enjoyment hindering *karma*). (8) *Upabhoga-labdhi* (ability of extended enjoyment)—to attain the state of soul where capacity of extended enjoyment appears due to destruction or destruction-cum-pacification of *Upabhogaantaraya karma* (extended

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

enjoyment hindering *karma*). (9) *Virya-labdhi* (ability of potency)—to attain the state of soul where potency appears due to destruction or destruction-cum-pacification of *Viryaantaraya karma* (potency hindering *karma*). (10) *Indriya-labdhi* (ability of sense organs)—to attain the state of soul where abilities of sense organs appear due to destruction-cum-pacification of *Mati-jnanavaraniya karma* (sensual knowledge obscuring *karma*) and fruition of *Jaati-naam karma* (genus determining *karma*) and *Paryapt-naam karma* (full development ensuring *karma*).

(1) Jnana-labdhi (ability of knowledge)—This is of five kinds and its opposite, *Ajnana-labdhi*, is of three kinds.

Living beings with *Jnana-labdhi*, are ever endowed with knowledge and those with *Ajnana-labdhi* are with ignorance or wrong knowledge.

(a) Jnana-labdhi—Living beings with *Abhinibodhik jnana-labdhi* (having attained the ability of sensual knowledge) have different alternative combinations of four *jnanas*. The reason for this is that an omniscient does not have sensual knowledge. Those endowed with knowledge but devoid of sensual knowledge have only one *jnana*, *Keval-jnana*. Those endowed with *ajnana* (wrong knowledge) have two *ajnanas* or three *ajnanas*. The same is true for those endowed with or devoid of *Shrut-jnana*.

Those with *Avadhi-jnana* have either three *jnanas* (*Mati*, *Shrut* and *Avadhi*) or four *jnanas* (other than *Keval-jnana*). Among those devoid of *Avadhi-jnana*, those having *jnana* have either two *jnanas* (*Mati* and *Shrut*), or three *jnanas* (*Mati*, *Shrut* and *Manahparyava*) or just one (*Keval-jnana*). Those with ajnana (wrong knowledge) are either with two *ajnanas* (Mati-ajnana and Shrut-ajnana) or all the three *ajnanas*.

Those with *Manahparyava-jnana* have either three *jnanas* (*Mati*, *Shrut* and *Manahparyava*) or four jnanas (other than *Keval-jnana*). Among those devoid of *Manahparyava-jnana*, those having *jnana* have either two *jnanas* (*Mati* and *Shrut*), or three jnanas (*Mati*, *Shrut* and *Avadhi*) or just one (*Keval-jnana*). Those with *ajnana* (wrong knowledge) are either with two *ajnanas* (*Mati-ajnana* and *Shrut-ajnana*) or all the three *ajnanas*.

Those endowed with *Keval-jnana* (omniscience) have just one *jnana*. Among those devoid of *Keval-jnana*, those having *jnana* have either first two *jnanas* (*Mati* and *Shrut*), or first three *jnanas* (*Mati*, *Shrut* and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Avadhi), or first two and fourth (*Mati*, *Shrut* and *Manahparyava*), or first four. Those with *ajnana* (wrong knowledge) are either with two *ajnanas* (*Mati-ajnana* and *Shrut-ajnana*) or all the three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

Ajnana-labdhi—Those with *Ajnana-labdhi* have different alternative combinations of three *ajnanas*. Those without *Ajnana-labdhi* have different alternative combinations of five jnanas (kinds of right knowledge). Those with *Mati-ajnana* and *Shrut-ajnana-labdhi* have different alternative combinations of three ajnanas as aforesaid. Those without *Mati-ajnana* and *Shrut-ajnana-labdhi* have different alternative combinations of five *jnanas* as aforesaid. Those with *Vibhang-jnana labdhi* have three *ajnanas* as a rule. Among those without *Vibhang-jnana labdhi*, those having *jnana* have different alternative combinations of five *jnanas* and those having *ajnana* have first two *ajnanas* (kinds of wrong knowledge) as a rule.

(2) Darshan-labdhi (ability of perception/faith)—This is of three kinds—(a) *Samyagdarshan-labdhi* (attainment of ability of right perception/faith)—this state of soul is caused by destruction, destruction-cum-pacification or pacification of *Mithyatva mohaniya karma* (deluding karma that causes unrighteousness or false perception/faith). (b) *Mithyadarshan-labdhi* (attainment of ability of false perception/faith)—the impure state of soul caused by fruition of *karmic* particles contaminated with unrighteousness or false perception/faith and evident in acceptance of fallacies including divinity in non-divine.

(c) *Samyagmithyadarshan-labdhi* (ability of right-false or mixed perception/faith)—This mixed state of soul is caused by fruition of *karmic* particles partially contaminated with unrighteousness or false perception/faith as well as fruition of *Mishra mohaniya karma* (deluding *karma* that causes partial unrighteousness or neither liking nor dislike for right perception/faith).

No living being is completely devoid of *Darshan Labdhi* (ability of perception/faith). Every being necessarily has any one of the three types of perception/faith—right, false or mixed. Beings with *Samyagdarshan-labdhi* have different alternative combinations of five *jnanas* and those without have different alternative combinations of three *ajnanas*. Beings with *Mithyadarshan-labdhi* are *ajnani* as a rule. Those devoid of *Mithyadarshan-labdhi* can either be with right perception/faith or mixed

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

perception/faith. Beings with right perception/faith have different alternative combinations of five *jnanas* (kinds of right knowledge) and those with mixed perception/faith have different alternative combinations of three *ajnanas*. Beings with and without *Samyagmithyadarshan-labdhi* follow the pattern of those with and without *Mithyadarshan-labdhi*.

(3) Chaaritra-labdhi (ability of conduct)—this is of five kinds—(a) *Saamaayik-chaaritra-labdhi* (ability of equanimous conduct)—the equanimous state of soul where it is free of attachment and aversion and gains ability to embrace sin-free conduct abstaining from all kinds of sinful activity. *Samayik* conduct is of two kinds—*Itvar-kaalik* (temporary or for a limited period) and *Yavatkathit* (lifelong). (b) *Chhedopasthaanik-labdhi* (attainment of ability of re-accepting five great vows one by one)—the conduct where earlier set of resolves and vows are abandoned (*chhed*) and new resolve of great vows is formally taken and followed. This is also of two types—*niratichaar* (without relaxation) and *saatichaar* (with relaxation). (c) *Pariharavishuddhik-labdhi* (attainment of ability of to observe special austerities according to the prescribed procedure aimed at enhanced purification)—the conduct where purity of soul is sought through special austerities (*parihaar*) like total abstainment from accepting food not prescribed for ascetics and other such practices. The prescribed procedure for austerities under this conduct concludes in eighteen months. It is a long and complicated process. This is also of two kinds—*nirvishyamanak* (in process of purification) and *nirvishtakaayik* (at conclusion of the process of purification). (d) *Sukshmasamparaya-labdhi* (attainment of ability of the discipline prescribed for tenth *Gunasthaan* aimed at removing traces of attachment)—the conduct where only minute traces of greed remains. It also has two types—*vishudhyamaan* (in state of ascent) and *sanklishyamaan* (in state of descent). (e) *Yathakhyata-chaaritra-labdhi* (attainment of ability of the ultimate discipline of detachment related to beings at eleventh and higher *Gunasthaans*)—the level of conduct where there is complete absence of passions. This is the renowned (*yathakhyat*) level of passion-free ascetic. This too has two types—*chhadmasth* (of a person short of omniscience) and *Kevali* (of an omniscient).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Living beings endowed with *Chaaritra-labdhi* are *jnani* only. That is the reason that they have different alternative combinations of five *jnanas*, because even a *Kevali* follows the right conduct. Those without *Chaaritra-labdhi* are both *jnani* and *ajnani*. Those who are *jnani* have different alternative combinations of four *jnanas* (other than *manah-paryav-jnana*); this is because the indisciplined righteous beings (*asamyat samyagdrishti*) have the first two or three *jnanas* and the *Siddha* has only one. *Siddhas* (liberated beings) are neither with nor without *Chaaritra-labdhi* and they are called *no-chaaritri-no-achaaritri*. Those who are *ajnanis* (ignorants or with wrong knowledge) have different alternative combinations of three *ajnanas*. Beings with four kinds of *Chaaritra-labdhi* including *Samayik* are *jnani* (endowed with right knowledge) as well as *chhadmasth* (short of omniscience), that is why they have different alternative combinations of four *jnanas* (other than *Keval-jnana*). Beings from eleventh to fourteenth *Gunasthaan* follow the *Yathakhyat chaaritra*. Those at eleventh and twelfth *Gunasthaan*, being *chhadmasth*, have the first four *jnanas* (kinds of right knowledge). Those at thirteenth and fourteenth *Gunasthaan* (levels of spiritual ascendance) being *Kevali* have only the fifth jnana, *Keval-jnana*. That is the reason it is said that beings with *Yathakhyat chaaritra* have different alternative combinations of five *jnanas*.

(4) Chaaritraachaaritra-labdhi (ability of partial renunciation)—this is partial renunciation and is of only one kind.

Living beings with *Chaaritraachaaritra-labdhi* are righteous *jnanis* and therefore they have different alternative combinations of three *jnanas*. This is because noble beings including those who are to become *Tirthankar* are endowed with *mati*, *shrut* and *avadhi-jnana* since birth and up to initiation. Among those without *Chaaritraachaaritra-labdhi* the indisciplined righteous as well as *jnani* have different alternative combinations of five *jnanas* by virtue of being endowed with right knowledge. Those who are *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge) have different alternative combinations of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

(5) ***Daan-labdhi (ability of charity)***—has only one type.

(6) ***Laabh-labdhi (ability of gain)***—has only one type.

(7) ***Bhoga-labdhi (ability of enjoyment)***—has only one type.

(8) ***Upabhoga-labdhi (ability of extended enjoyment)***—has only one type.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Among the living beings with *Daan-labdhi* those who are *jnani* (righteous, observing partial vows, observing great vows and omniscients) have different alternative combinations of five *jnanas* (kinds of right knowledge). Those who are *ajnani* have different alternative combinations of three *ajnanas*. Those without *Daan-labdhi* (and other three aforesaid *labdhis*) are *Siddhas* (liberated souls). Although they have destroyed all the five hindering *karmas* they are free of these *labdhis* due to absence of things to be given in charity and seekers as well. Also as they have accomplished all there is to accomplish, there is an absence of purpose. As a rule the only attribute they have is *Keval-jnana*. Those with the following three *labdhis* (*Laabh-labdhi*, *Bhoga-labdhi* and *Upabhoga-labdhi*) follow the same pattern.

(9) Virya-labdhi (ability of potency)—this is of three kinds—(a) *Baal-virya-labdhi*—that which helps indulgence in indiscipline. (b) *Pandit-virya-labdhi*—that which helps indulgence in discipline or restraint. (c) *Baal-pandit-virya-labdhi*—that which helps indulgence in partial discipline or partial renunciation.

Among the living beings with *Virya-labdhi* those who have *Baal-virya-labdhi* are indisciplined and non-renouncers. Of these, those who are righteous and *jnani* have different alternative combinations of three *jnanas*. Those who are unrighteous and *ajnani* have different alternative combinations of three *ajnanas*. Those who are without *Baal-virya-labdhi* are complete renouncers, partial renouncers or *Siddhas*, therefore they have different alternative combinations of five *jnanas*. Living beings with *Pandit-virya-labdhi* are essentially *jnanis* therefore they have different alternative combinations of five *jnanas*. Beings with *Pandit-virya-labdhi* are the only ones endowed with *manah-paryav-jnana*. Those without *Pandit-virya-labdhi* are indisciplined, partially indisciplined or *Siddhas*. Of these the indisciplined have different alternative combinations of first three *jnanas* or three *ajnanas*. The partially indisciplined have different alternative combinations of first three *jnanas* (kinds of right knowledge). *Siddhas* have *Keval-jnana* (omniscience) alone. *Siddhas* are devoid of *Pandit-virya-labdhi* because it entails exclusive indulgence in noble deeds and *Siddhas* are free of any indulgence. Living beings with *Baal-pandit-virya-labdhi* are partially disciplined and thus they have different alternative combinations of first three *jnanas*. Those without *Baal-pandit-virya-*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

labdhi are indisciplined, complete renouncers or *Siddhas*, thus they have different alternative combinations of five *jnanas* or three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

(10) Indriya-labdhi (ability of sense organs)—Living beings with *Indriya-labdhi* and *jnana* have different alternative combinations of first four *jnanas*. They do not have *Keval-jnana* because an omniscient cannot indulge in any activity of sense organs. Those with *Indriya-labdhi* and *ajnana* (ignorance or wrong knowledge) have different alternative combinations of three *ajnanas*. Those without *Indriya-labdhi* are only omniscients and they have only *Keval-jnana*.

Living beings with and without *Shrotrendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of hearing), *Chakshurindriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of seeing), and *Ghranendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of smell) follow the pattern of beings with and without *Indriya-labdhi*. Which means that among the beings without the said *labdhis* those who are *jnanis* have either two or one *jnana*. Those who are in underdeveloped state of fleeting righteousness (*saasvadan samyagdrishti*) have two *jnanas*. Those with one *jnana* have only *Keval-jnana*; this is because in absence of tendency to use sense organs they are devoid of these other attainments (*labdhis*). The *ajnanis* without the said *labdhis* have the first two *ajnanas*.

Five-sensed living beings having *Chakshurindriya-labdhi*, and *Ghranendriya-labdhi* have different alternative combinations of four *jnanas* (other than *Keval-jnana*) and three *ajnanas*. *Vikalendriyas* (beings with two to four sense organs) have two *jnanas* (kinds of right knowledge) and two *ajnanas* like those with *Shrotrendriya-labdhi*. Among the living beings without *Chakshurindriya-labdhi* are one, two and three sensed as well as omniscients. Among those without *Ghranendriya-labdhi* are one and two sensed as well as omniscients. Of these, the two and three sensed beings with fleeting righteousness have the first two *jnanas* and those without that have two *ajnanas* (kinds of wrong knowledge). *Kevalis* have only *Keval-jnana*.

Living beings with *Shrotrendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of hearing) have different alternative combinations of four *jnanas* and three *ajnanas*. Beings without *Shrotrendriya-labdhi* are *jnani* (endowed with right knowledge) as well as *ajnani*. Those with

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

jnana have only *Keval-jnana* (omniscience). Those with *ajnana* (ignorance or wrong knowledge) are one-sensed beings and they have two *ajnanas* (besides *vibhang-jnana*) as a rule. One sensed beings are devoid of *jnana* because of the absence of fleeting righteousness.

Living beings with and without *Sparshanendriya-labdhi* (attainment of ability of the sense organ of touch) follow the pattern of those with and without *indriya-labdhi*. Which means those with it have different alternative combinations of four *jnanas* (other than *Keval-jnana*) and three *ajnanas*. Those without it are omniscients and they have only *Keval-jnana*. *(Vritti, leaf 350-354)*

योग–उपयोग आदि में ज्ञान–अज्ञान KNOWLEDGE AND ITS ABSENCE IN ACTIVITY ETC..

दशम, उपयोगद्वार TENTH STATE : UPAYOGA

१०६. [प्र.] सागारोवउत्ता णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] पंच नाणाइं, तिण्णि अण्णाणाइं च भयणाए।

१०६. [प्र.] भगवन् ! साकारोपयोगयुक्त (ज्ञानोपयोग) जीव ज्ञानी होते हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी भी होते हैं, अज्ञानी भी होते हैं। जो ज्ञानी होते हैं, उनमें पाँच ज्ञान और जो अज्ञानी होते हैं, उनमें तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

106. [Q.] *Bhante* ! Are *jivas* with *saakaar upayoga* (*jnanopayoga* or cognitive involvement) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) as well as *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). Those with *jnana* have different alternative combinations of five *jnanas* and those with *ajnana* (ignorance or wrong knowledge) different alternative combinations of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

१०७. [प्र.] आभिणिबोहियनाणसागारोवउत्ता णं भंते ! ० ?

[उ.] चत्तारि णाणाइं भयणाए। एवं सुयनाणसागारोवउत्ता वि।

१०७. [प्र.] भगवन् ! आभिनिबोधिक–ज्ञानसाकारोपयोगयुक्त जीव ज्ञानी होते हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! उनमें चार ज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

श्रुतज्ञान–साकारोपयोगयुक्त जीवों का कथन भी इसी प्रकार समझें।

107. [Q.] *Bhante* ! Are *jivas* with *Abhinibodhik-jnana saakaar upayoga* (cognitive involvement related to sensual knowledge) *jnani* or *ajnani* ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! They have different alternative combinations of four *jnanas* (kinds of right knowledge). Living beings with *Shrut-jnana saakaar upayoga* (cognitive involvement related to scriptural knowledge) follow the same pattern.

१०८. ओहिनाणसागारोवउत्ता जहा ओहिनाणलद्धिया।

१०९. मणपज्जवनाणसागारोवउत्ता जहा मणपज्जवनाणलद्धिया।

११०. केवलनाणसागारोवउत्ता जहा केवलनाणलद्धिया।

१०८. अवधिज्ञान-साकारोपयोगयुक्त जीवों का कथन अवधिज्ञानलब्धिमान् जीवों के समान समझें।

१०९. मनःपर्यवज्ञान-साकारोपयोगयुक्त जीवों का कथन मनःपर्यवज्ञानलब्धिमान् जीवों के समान समझें।

११०. केवलज्ञान-साकारोपयोगयुक्त जीवों का कथन केवलज्ञानलब्धिमान् जीवों के समान समझें।

108. Living beings with Avadhi-jnana saakaar upayoga (cognitive involvement related to Avadhi-jnana) follow the pattern of beings with Avadhi-jnana labdhi.

109. Living beings with *Manah-paryav-jnana saakaar upayoga* (cognitive involvement related to *Manah-paryav-jnana*) follow the pattern of beings with *Manah-paryav-jnana labdhi.*

110. Living beings with *Keval-jnana saakaar upayoga* (cognitive involvement related to *Keval-jnana*) follow the pattern of beings with *Keval-jnana labdhi.*

१११. मइअण्णाणसागारोवउत्ताणं तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए। एवं सुयअण्णाणसागारोवउत्ता वि। विभंगनाणसागारोवउत्ताणं तिण्णि अण्णाणाइं नियमा।

१११. मति-अज्ञान-साकारोपयोगयुक्त जीवों में तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। इसी प्रकार श्रुत-अज्ञान-साकारोपयोगयुक्त जीवों का कथन समझें। विभंगज्ञान-साकारोपयोगयुक्त जीवों में नियमतः तीन अज्ञान पाये जाते हैं।

111. Living beings with *mati-ajnana saakaar upayoga* (cognitive involvement related to *mati-ajnana*) have different alternative combinations of three *ajnanas*. Same is true for those with *shrut-ajnana saakaar upayoga* (cognitive involvement related to *shrut-ajnana*). Those with *vibhang-jnana saakaar upayoga* (cognitive involvement related to *vibhang-jnana*) have three *ajnanas* as a rule.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११२. [प्र.] अणागारोवउत्ता णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] पंच नाणाइं, तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।

११३. एवं चक्खुदंसण–अचक्खुदंसणअणागारोवउत्ता वि, नवरं चत्तारि णाणाइं, तिण्णि अण्णाणाइं भयणाए।

११२. [प्र.] भगवन् ! अनाकारोपयोग (दर्शनोपयोग) वाले जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! अनाकारोपयोगयुक्त जीव ज्ञानी भी हैं और अज्ञानी भी हैं। उनमें पाँच ज्ञान अथवा तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

११३. इसी प्रकार चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन–अनाकारोपयोगयुक्त जीवों के विषय में समझ लेना चाहिए; किन्तु इतना विशेष है कि चार ज्ञान अथवा तीन अज्ञान भजना से होते हैं।

112. [Q.] *Bhante* ! Are *jivas* with *anaakaar upayoga* (*darshanopayoga* or perceptive involvement) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* as well as *ajnani*. Those with *jnana* have different alternative combinations of five *jnanas* or three *ajnanas*.

113. The same is true for those with *chakshu-darshan anaakaar upayoga* (*darshanopayoga* or perceptive involvement related to visual perception) and *achakshu-darshan anaakaar upayoga* (*darshanopayoga* or perceptive involvement related to non-visual perception). The difference being that they have different alternative combinations of four *jnanas* or three *ajnanas*.

११४. [प्र.] ओहिदंसणअणागारोवउत्ता णं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! नाणी वि अण्णाणी वि। जे नाणी ते अत्थेगइया तिन्नाणी, अत्थेगइया चउनाणी। जे तिन्नाणी ते आभिणिबोहियणाणी, सुयनाणी, ओहिनाणी। जे चउणाणी ते आभिणिबोहियनाणी जाव मणपज्जवनाणी। जे अन्नाणी ते नियमा तिअण्णाणी, तं जहा–मइअण्णाणी, सुयअण्णाणी, विभंगनाणी।

११४. [प्र.] भगवन् ! अवधिदर्शन–अनाकारोपयोगयुक्त जीव ज्ञानी होते हैं अथवा अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी भी होते हैं और अज्ञानी भी। जो ज्ञानी होते हैं, उनमें कई तीन ज्ञान वाले और कई चार ज्ञान वाले होते हैं। जो तीन ज्ञान वाले होते हैं, वे आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी होते हैं और जो चार ज्ञान वाले होते हैं, वे आभिनिबोधिकज्ञान से लेकर यावत् मनःपर्यवज्ञान वाले होते हैं। जो अज्ञानी होते हैं, उनमें नियमतः मति–अज्ञान, श्रुत–अज्ञान और विभंगज्ञान; तीन अज्ञान पाये जाते हैं।

114. [Q.] *Bhante* ! Now the same question about *Avadhi-darshan anaakaar upayoga* (*darshanopayoga* or perceptive involvement related to extrasensory perception of the physical dimension) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* as well as *ajnani*. Among those with *jnana* some have three *jnanas* and some have four. Those with three *jnanas* have *Abhinibodhik*, *Shrut* and *Avadhi jnanas* (kinds of right knowledge). Those with four have *Abhinibodhik*... and so on up to... *manah-paryav-jnanas*. Those who are *ajnanis* (ignorants or with wrong knowledge) have three *ajnanas* (*Mati-ajnana*, *Shrut-ajnana* and *Vibhang-jnana*).

११५. केवलदंसणअणागारोवउत्ता जहा केवलनाणलद्धिया।

११५. केवलदर्शन–अनाकारोपयोगयुक्त जीवों का कथन केवलज्ञानलब्धियुक्त जीवों के समान समझना चाहिए।

115. Living beings with *Keval-jnana saakaar upayoga* (cognitive involvement related to ultimate knowledge) follow the pattern of beings with *Keval-jnana labdhi*.

ग्यारहवाँ, योगद्वार ELEVENTH STATE : YOGA

११६. [प्र.] सजोगी णं भंते ! जीवा किं नाणी० ?

[उ.] जहा सकाइया (सु. ४५ वत)। एवं मणजोगी, वइजोगी, कायजोगी वि।

११६. [प्र.] भगवन् ! सयोगी जीव ज्ञानी होते हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! सयोगी जीवों का कथन सकायिक जीवों के समान समझें। इसी प्रकार मनोयोगी, वचनयोगी और काययोगी जीवों का कथन भी समझें।

116. [Q.] *Bhante* ! Are *sayogi jivas* (living beings with association/action) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! Living beings with association/action (*sayogi jivas*) follow the pattern of embodied beings (*sakaayik jivas*). The same is true for *manoyogi* (having mental association), *vachan-yogi* (having vocal association) and *kaayayogi* (having physical association) *jivas* (beings).

११७. अजोगी जहा सिद्धा (सु. ३५)।

११७. अयोगी (योगरहित) जीवों का कथन सिद्धों के समान समझें।

117. *Ayogi jivas* (living beings without association/action) follow the pattern of *Siddhas*.

बारहवाँ, लेश्याद्वार TWELFTH STATE : LESHYA

११८. [प्र.] सलेस्सा णं भंते ! ० ?

[उ.] जहा सकाइया (सु. ४९)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११८. [प्र.] भगवन् ! सलेश्य (लेश्या वाले) जीव ज्ञानी होते हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! सलेश्य जीवों का कथन सकायिक जीवों के समान जानना चाहिए।

118. [Q.] *Bhante* ! Are *saleshya jivas* (living beings with soul complexion) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! Living beings with soul complexion (*saleshya jivas*) follow the pattern of embodied beings (*sakaayik jivas*).

११९. [प्र.] कण्हलेस्सा णं भंते ! ० ?

[उ.] जहा सइंदिया (सु. ४१)। एवं जाव पम्हलेसा।

११९. [प्र.] भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! कृष्णलेश्या वाले जीवों का कथन सेन्द्रिय जीवों के समान (सू. ४४ के अनुसार) जानना चाहिए। इसी प्रकार नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या और पद्मलेश्या वाले जीवों का कथन करना चाहिए।

119. [Q.] *Bhante* ! Are living beings with black soul complexion (*krishna leshya*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! Living beings with black soul complexion (*krishna leshya*) follow the pattern of beings with sense organs (*sendriya jivas*; aphorism 44). The same is true for beings with *neel leshya* (blue complexion of soul), *kapot leshya* (pigeon complexion of soul), *tejoleshya* (fiery complexion of soul), and *padma leshya* (yellow complexion of soul).

१२०. सुक्कलेस्सा जहा सलेस्सा (सु. ११८)।

१२०. शुक्ललेश्या वाले जीवों का कथन सलेश्य जीवों के समान समझें।

120. Living beings with white soul complexion (*shukla leshya*) follow the pattern of beings with soul complexion (*saleshya jivas*).

१२१. अलेस्सा जहा सिद्धा (सु. ३५)।

१२१. अलेश्य (लेश्यारहित) जीवों का कथन सिद्धों के समान जानना चाहिए।

121. Living beings without soul complexion (*aleshya jivas*) follow the pattern of *Siddhas*.

तेरहवाँ, कषायद्वार THIRTEENTH STATE : PASSIONS

१२२. [प्र.] सकसाई णं भंते ! ० ?

[उ.] जहा सइंदिया (सु. ४१)। एवं जाव लोहकसाई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२२. [प्र.] भगवन् ! सकषायी जीव ज्ञानी हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! सकषायी जीवों का कथन सेन्द्रिय जीवों के समान समझें। इसी प्रकार क्रोधकषायी, मानकषायी, मायाकषायी और लोभकषायी जीवों के विषय में भी समझें।

122. [Q.] *Bhante* ! Are living beings with passions (*sakashaayi*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! Living beings with passions (*sakashaayi*) follow the pattern of beings with sense organs (*sendriya jivas*; aphorism 44). The same is true for beings with specific passions including anger (*krodh*), conceit (*maan*), deceit (*maaya*) and greed (*lobh*).

१२३. [प्र.] अकसाई णं भंते ! किं णाणी० ?

[उ.] पंच नाणाइं भयणाए।

१२३. [प्र.] भगवन् !अकषायी (कषायमुक्त) जीव ज्ञानी होते हैं अथवा अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी होते हैं, अज्ञानी नहीं। उनमें पाँच ज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

123. [Q.] *Bhante* ! Are living beings without passions (*akashaayi*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) and never *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). They have different alternative combinations of five *jnanas*.

चौदहवाँ, वेदद्वार **FOURTEENTH STATE : GENDER**

१२४. [प्र.] सवेयगा णं भंते ! ० ?

[उ.] जहा सइंदिया। एवं इत्थिवेयगा वि। एवं पुरिसवेयगा। एवं नपुंसगवेयगा वि।

१२४. [प्र.] भगवन् ! सवेदक (वेदसहित) जीव ज्ञानी होते हैं अथवा अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! सवेदक जीवों का कथन सेन्द्रिय जीवों के समान जानना चाहिए। इसी तरह स्त्रीवेदक, पुरुषवेदक और नपुंसकवेदक जीवों के सम्बन्ध में भी कहना चाहिए।

124. [Q.] *Bhante* ! Are living beings with gender (*savedak*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! Living beings with gender (*savedak*) follow the pattern of beings with sense organs (*sendriya jivas*; aphorism 44). The same is true for beings with specific gender including feminine gender (*stree vedak*), masculine gender (*purush vedak*) and neuter gender (*napumsak vedak*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२५. अवेयगा जहा अकसाई। (सूत्र १२३)

१२५. अवेदक (वेदरहित) जीवों का कथन अकषायी जीवों के समान जानना चाहिए।

125. Living beings without gender (*avedak jivas*) follow the pattern of living beings without passions (*akashaayi jivas*).

पन्द्रहवाँ, आहारकद्वार FIFTEENTH STATE : AAHAARAK

१२६. [प्र.] आहारगा णं भंते ! जीवा० ?

[उ.] जहा सकसाई, नवरं केवलनाणं पि।

१२६. [प्र.] भगवन् ! आहारक जीव ज्ञानी होते हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! आहारक जीवों का कथन सकषायी (सूत्र १२२) जीवों के समान जानना चाहिए, किन्तु इतना विशेष है कि उनमें केवलज्ञान भी पाया जाता है।

126. [Q.] *Bhante* ! Are living beings with food intake (*aahaarak*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! Living beings with food intake (*aahaarak*) follow the pattern of beings with passions (*sakashaaya jivas*). The only difference is that they are with *Keval-jnana* also.

१२७. [प्र.] अणाहारगा णं भंते ! जीवा किं नाणी, अण्णाणी ?

[उ.] मणपज्जवनाणवज्जाइं नाणाइं, अन्नाणाणि य तिण्णि भयणाए।

१२७. [प्र.] भगवन् ! अनाहारक जीव ज्ञानी होते हैं या अज्ञानी ?

[उ.] गौतम ! वे ज्ञानी भी होते हैं और अज्ञानी भी। जो ज्ञानी है उनमें मनःपर्यवज्ञान को छोड़कर शेष चार ज्ञान और जो अज्ञानी हैं उनमें तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं।

127. [Q.] *Bhante* ! Are living beings without food intake (*anaahaarak*) *jnani* or *ajnani* ?

[Ans.] Gautam ! They are *jnani* (endowed with right knowledge) as well as *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge). The *jnanis* have different alternative combinations of four *jnanas* (other than *manah-paryav*) and the *ajnanis* have different alternative combinations of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge).

विवेचन : १०. **उपयोगद्वार**–उपयोग एक तरह से ज्ञान ही है। ज्ञान-दर्शन आदि शक्ति का प्रयोग करना उपयोग है। इसके दो प्रकार हैं–साकार-उपयोग और अनाकार अथवा निराकार-उपयोग। साकार का अर्थ है–विशेषता सहित बोध। यह ज्ञानोपयोग कहलाता है। साकारोपयोगयुक्त जीव ज्ञानी और अज्ञानी दोनों प्रकार के होते हैं। ज्ञानी जीवों में से कुछ जीवों में दो, कुछ जीवों में तीन, कुछ जीवों में चार और कुछ जीवों में एक मात्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवलज्ञान होता है; इस तरह ऐसे जीवों में पाँच ज्ञान भजना से होते हैं। इनका कथन यहाँ ज्ञानलब्धि की अपेक्षा से समझना चाहिए, उपयोग की अपेक्षा से तो एक समय में एक ही ज्ञान अथवा एक ही अज्ञान होता है। इनमें जो जीव अज्ञानी हैं, उनमें तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। आभिनिबोधिक (मति) ज्ञान आदि साकारोपयोग के भेद हैं। आभिनिबोधिक आदि से युक्त साकारोपयोग वाले जीवों में ज्ञान-अज्ञान का कथन उपर्युक्त वर्णनानुसार उस-उस ज्ञान या अज्ञान की लब्धि वाले जीवों के समान जानना चाहिए।

अनाकारोपयोग-जिस ज्ञान में आकार अर्थात् जाति, गुण, क्रिया आदि स्वरूपविशेष का प्रतिभास (बोध) न हो, केवल सामान्य बोध हो, उसे अनाकारोपयोग (दर्शनोपयोग) कहते हैं। अनाकारोपयोगयुक्त जीव ज्ञानी और अज्ञानी दोनों तरह के होते हैं। ज्ञानी जीवों में लब्धि की अपेक्षा पाँच ज्ञान भजना से और अज्ञानी जीवों में लब्धि की अपेक्षा तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन वाले जीव केवली नहीं होते, इसलिए चक्षुदर्शन-अचक्षुदर्शन-अनाकारोपयोग जीवों चार ज्ञान अथवा तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। अवधिदर्शन-अनाकारोपयोगयुक्त जीव ज्ञानी और अज्ञानी दो तरह के होते हैं; क्योंकि दर्शन का विषय सामान्य है। सामान्य अभिन्न रूप होने से दर्शन में ज्ञानी और अज्ञानी भेद नहीं होता। अतः इसमें कई तीन या चार ज्ञान वाले होते हैं अथवा नियमतः तीन अज्ञान वाले होते हैं। साकारोपयोग एवं अनाकारोपयोग को हम इस प्रकार भी समझ सकते हैं जैसे - ज्ञान से हम जानते हैं कि मेरू पर्वत इतना लंबा चौड़ा ऊँचा है उसके बाद हम उसके आकार का चिंतन कर सकते हैं इसलिए ज्ञान साकारोपयोग है। दर्शन में हम स्वयं देखते हैं इसलिए उसके आकार का चिंतन नहीं करते इसलिए दर्शन को अनाकार उपयोग कहते हैं।

११. **योगद्वार**-सयोगी जीव अथवा मनोयोगी, वचनयोगी और काययोगी जीवों का कथन सकायिक जीवों के समान है। चूँकि केवली भगवान में भी मनोयोगादि होते हैं, इसलिए इनमें (सम्यग्दृष्टि आदि में) पाँच ज्ञान भजना से होते हैं तथा मिथ्यादृष्टि सयोगी या पृथक्-पृथक् योग वाले जीवों में तीन अज्ञान भजना से होते हैं। अयोगी (सिद्ध भगवान और चतुर्दशगुण-स्थानवर्ती केवली) जीवों में एक मात्र केवलज्ञान होता है।

१२. **लेश्याद्वार**-लेश्यायुक्त (सलेश्य) जीवों में ज्ञान-अज्ञान की प्ररूपणा सकषायी जीवों के समान है। उनमें पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से समझने चाहिए। चूँकि केवली भगवान में भी शुक्ललेश्या होने से सलेश्य होते हैं, इसलिए उनमें पंचम-केवलज्ञान होता है। अलेश्य जीव सिद्ध होते हैं, उनमें एक मात्र केवलज्ञान ही होता है।

१३. **कषायद्वार**-सकषायी या क्रोधकषायी, मानकषायी, मायाकषायी और लोभकषायी जीवों में ज्ञान-अज्ञान प्ररूपणा सेन्द्रिय (सूत्र ४१ के अनुसार) के सदृश हैं।

१४. **वेदद्वार**-सवेदक आठवें गुणस्थान तक और नौवें के कुछ भाग तक के जीव होते हैं। उनका कथन सेन्द्रिय के समान है अर्थात् उनमें केवलज्ञान को छोड़कर शेष चार ज्ञान अथवा तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। अवेदक (वेदरहित) जीवों में ज्ञान ही होता है, अज्ञान नहीं। नौवें अनिवृत्तिबादर नामक गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक के जीव अवेदक होते हैं। उनमें से बारहवें गुणस्थान तक के जीव छद्मस्थ होते हैं, अतः उनमें चार ज्ञान (केवलज्ञान के सिवाय) भजना से पाये जाते हैं तथा तेरहवें-चौदहवें गुणस्थानवर्ती जीव केवली होते हैं, इसलिए उनके सिर्फ एक पंचम ज्ञान-केवलज्ञान होता है, इसी दृष्टि से कहा गया है कि 'अवेदक' में पाँच ज्ञान पाये जाते हैं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. आहारकद्वार-यद्यपि आहारक जीव में ज्ञान-अज्ञान का कथन कषायी जीवों के समान (चार ज्ञान एवं तीन अज्ञान भजना से) बताया गया है, तथापि केवलज्ञानी भी आहारक होते हैं, इसलिए आहारक जीवों में भजना से पाँच ज्ञान अथवा तीन अज्ञान कहने चाहिए। मनःपर्यवज्ञान आहारक जीवों को ही होता है; इसलिए अनाहारक जीवों में मनःपर्यवज्ञान के सिवाय चार ज्ञान और तीन अज्ञान भजना से पाये जाते हैं। विग्रहगति, केवली-समुद्घात और अयोगी दशा में जीव अनाहारक होते हैं। शेष अवस्था में जीव आहारक होते हैं। अनाहारक जीवों को प्रथम के तीन ज्ञान अथवा तीन अज्ञान विग्रहगति में होते हैं। अनाहारक केवली को केवलीसमुद्घात दशा में या अयोगी दशा में एक मात्र केवलज्ञान ही होता है। इसी दृष्टि से अनाहारक जीवों में चार ज्ञान (मनःपर्यवज्ञान को छोड़कर) और तीन अज्ञान भजना से कहे गये हैं। *(वृत्ति, पत्रांक ३५५-३५६)*

Elaboration—(10) *Upayoga-dvar*—In a sense *upayoga* is equivalent to *jnana* (knowledge). Application of the power of knowledge, perception etc. is *upayoga* or involvement. This is of two types—*saakaar upayoga* and *anaakaar* or *niraakaar upayoga* (darshanopayoga or perceptive involvement). Saakaar means special or vivid understanding and thus it is also called *jnanopayoga* (cognitive involvement). Living beings with *saakaar upayoga* can be both *jnani* (with right knowledge) or *ajnani* (with absence of right knowledge, which may mean ignorance as well as wrong knowledge). Among *jnani* beings some have two *jnanas*, some have three, some have four and some have only one *jnana* (*Keval-jnana*). Thus such beings have different alternative combinations of five *jnanas* (kinds of right knowledge). This statement is, in fact, in context of *jnana-labdhi* because in context of involvement (*upayoga*) there can only be one *jnana* or *ajnana* (ignorance or wrong knowledge). In *ajnani* beings there are different alternative combinations of three *ajnanas*. *Abhinibodhik* (*mati*) and other *jnanas* are types of cognitive involvement. The statement about *jnana* and *ajnana* in relation to the aforesaid types of *jnanas* should be like the statements about respective *labdhi* (attainment of the ability) of the particular *jnana* or *ajnana*.

Anaakaar or niraakaar upayoga—The *jnana* that provides simple understanding and not special or detailed understanding incorporating form (*aakaar*) including class, attributes, action etc. Thus it is also called *darshanopayoga* or perceptive involvement. Living beings with *anaakaar upayoga* are both *jnani* as well as *ajnani*. In context of *labdhi*, *jnani* beings have different alternative combinations of five *jnanas* and *ajnani* beings have different alternative combinations of three *ajnanas*. Beings with and without visual perception alone are not omniscients. Therefore these beings with perceptive involvement follow the pattern of general

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

statement about beings with perceptive involvement. In other words they have different alternative combinations of four *jnanas* or three *ajnanas*. Beings with *avadhi-darshan* perceptive involvement can be both *jnani* and *ajnani* (ignorant or with wrong knowledge) because perception is a general ability without any distinction of right or wrong. Therefore among these are included those with three or four *jnanas* (kinds of right knowledge) or those with three *ajnanas* as a rule.

(11) Yoga-dvar—*Sayogi* (with association/action) beings or those with mental, vocal or physical association follow the pattern of embodied beings. As even an omniscient has these associations, so these beings (righteous etc.) have different alternative combinations of five *jnanas*. The unrighteous (*mithyadrishti*) with any or all of these associations have different alternative combinations of three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge). Those without association (*Siddha* and omniscients at fourteenth *Gunasthaan*) have only *Keval-jnana* (omniscience).

(12) Leshya-dvar—Living beings with soul complexion (*leshya*) follow the pattern of those with passions. They have different alternative combinations of five *jnanas* and three *ajnanas*. As an omniscient has white soul complexion, he is also with soul complexion and he has *Keval-jnana*. Those without soul complexion are *Siddhas* and they have only *Keval-jnana*.

(13) Kashaaya-dvar—Living beings with passions, all the four or any one, follow the pattern of beings with sensual organs (aphorism 41).

(14) Veda-dvar—Living beings up to the eighth *Gunasthaan* (levels of spiritual ascendance) are genderic. They follow the pattern of beings with sense organs, which means that they have different alternative combinations of four *jnanas* (other than *Keval-jnana*) or three *ajnanas*. Non-genderic beings (*avedak*) have *jnana* only and never *ajnana* (ignorance or wrong knowledge). Beings from the ninth *Gunasthaan*, called *Anivritti-baadar*, to the fourteenth one are non-genderic. Of these the beings up to the twelfth *Gunasthaan* (levels of spiritual ascendance) are *chhadmasth* (short of omniscience) therefore they have different alternative combinations of four *jnanas* (other than *Keval-jnana*). Beings at the thirteenth and fourteenth *Gunasthaan* are omniscients and they have only one *jnana*, *Keval-jnana*. That is why it is said that non-genderic beings have five *jnanas* (kinds of right knowledge).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(15) Aahaarak-dvar—Although beings with intake follow the pattern of those with passions in context of *jnana* and *ajnana* (different alternative combinations of four *jnanas* and three *ajnanas*), as omniscients too are with intake, they are said to have different alternative combinations of five *jnanas* or three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge). Only *aahaarak jivas* (beings with intake) have *Manah-paryav-jnana*, therefore *anaahaarak jivas* (beings without intake) have different alternative combinations of four *jnanas* (other than *Manah-paryav-jnana*) and three *ajnanas*. In the states of pre-birth movement (*vigraha gati*), *Kevali Samudghaat*, and non-association, living beings are without intake. In all the other states they are with intake. In the state of pre-birth movement *anaahaarak* beings have three *jnanas* or three *ajnanas*. A *Kevali* without intake has only *Keval-jnana* in states of *Kevali Samudghaat* and non-association. With this view it is said that beings without intake have different alternative combinations of four *jnanas* (other than *Manah-paryav-jnana*) and three *ajnanas*. *(Vritti, leaf 355-356)*

सोलहवाँ, विषयद्वार ज्ञान की व्यापकता **SIXTEENTH STATE : SCOPE**

१२८. [प्र.] आभिणिबोहियनाणस्स णं भंते ! केवइए विसए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ। दव्वओ णं आभिणिबोहियनाणी आएसेणं सव्वदव्वाइं जाणइ पासइ। खेत्तओ आभिणिबोहियणाणी आदेसेणं सव्वं खेत्तं जाणइ पासइ। एवं कालओ वि। एवं भावओ वि।

१२८. [प्र.] भगवन् ! आभिनिबोधिकज्ञान का विषय कितना व्यापक है ?

[उ.] गौतम ! आभिनिबोधिक ज्ञान का विषय संक्षेप में चार प्रकार का है। यथा–द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से। द्रव्य से आभिनिबोधिकज्ञानी आदेश (सामान्य रूप में) से सर्वद्रव्यों को जानता और देखता है, क्षेत्र से आभिनिबोधिकज्ञानी सामान्य-(रूप) से सभी क्षेत्र को जानता और देखता है, इसी प्रकार काल से भी और भाव से भी जानता है।

128. [Q.] *Bhante* ! How wide is the scope (*vishaya*) of *Abhinibodhik jnana* (sensory knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! In brief the scope (*vishaya*) of *Abhinibodhik jnana* (sensory knowledge) has four domains—those related to substance or matter (*dravya*), area or space (*kshetra*), time (*kaal*) and state or mode (*bhaava*). As to substance, a living being with sensory knowledge knows and sees all substances rudimentarily or superficially. As to area, a

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

living being with sensory knowledge knows and sees rudimentarily or superficially all areas. In the same way he also knows and sees all time and all states superficially.

विवेचन : ऊपर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा आभिनिबोधिक ज्ञान का विषय बताया गया है। द्रव्य का अर्थ है–धर्मास्तिकाय आदि द्रव्य। क्षेत्र का अर्थ है–द्रव्यों का आधारभूत आकाश। काल का अर्थ है–द्रव्यों के पर्यायों की स्थिति। और भाव का अर्थ है–औदयिक आदि भाव अथवा द्रव्य के पर्याय। द्रव्य की अपेक्षा आभिनिबोधिक ज्ञानी धर्मास्तिकाय आदि सर्व द्रव्यों को आदेश से–ओघरूप (सामान्य रूप) से जानता है, उसमें रही हुई सभी विशेषताओं से (विशेष रूप से) नहीं जानता। अथवा आदेश का अर्थ है–श्रुतज्ञानजनित संस्कार। इनके द्वारा अवाय और धारणा की अपेक्षा जानता है, क्योंकि ये दोनों ज्ञानरूप हैं तथा अवग्रह और ईहा दर्शन रूप हैं। इसलिए अवग्रह और ईहा से देखता है। श्रुतज्ञानजन्य संस्कार से लोकालोकरूप सर्वक्षेत्र को देखता है। काल से सर्वकाल को और भाव से औदयिक आदि पाँच भावों को जानता है।

Elaboration—The scope of sensory knowledge covers four fields. Substance (*dravya*) includes everything like *Dharmastikaaya* (entity of motion). Area (*kshetra*) means space, on which everything rests. Time (*kaal*) defines modes and activities of things. State (*bhaava*) means mode or state of existence of things, such as *audayik* or state of fruition. An individual endowed with *abhinibodhik jnana* (sensory knowledge) knows all about substances rudimentarily, he does not know all attributes in their every detail. Here the term *aadesh* means instinctive or inherited traits as mentioned in scriptures or recorded information. The process of seeing involves acquiring cursory knowledge through sense organs (*avagraha*) and match it with the recorded information (*iha*). The process of knowing involves—to validate and conclusively classify (*avaya*), and finally acquire or absorb into memory (*dhaarana*). With the same process he knows and sees all space, all time, and all states rudimentarily.

१२९. [प्र.] सुयनाणस्स णं भंते ! केवइए विसए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ। दव्वओ णं सुयनाणी उवयुत्ते सव्वदव्वाइं जाणइ–पासइ। एवं खेत्तओ वि, कालओ वि। भावओ णं सुयनाणी उवजुत्ते सव्वभावे जाणइ पासइ।

१२९. [प्र.] भगवन् ! श्रुतज्ञान का विषय कितना है ?

[उ.] गौतम ! श्रुतज्ञान का विषय संक्षेप में चार प्रकार का है। यथा–द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से। द्रव्य से, उपयोगयुक्त (उपयुक्त) श्रुतज्ञानी सर्वद्रव्यों को जानता और देखता है। क्षेत्र से,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रुतज्ञानी उपयोग सहित सर्वक्षेत्र को जानता-देखता है। इसी प्रकार काल से, भाव से उपयुक्त (उपयोगयुक्त) श्रुतज्ञानी सर्वभावों को जानता और देखता है।

129. [Q.] *Bhante* ! How wide is the scope (*vishaya*) of *Shrut-jnana* (scriptural knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! In brief the scope (vishaya) of *Shrut-jnana* (scriptural knowledge) has four domains—those related to substance or matter (*dravya*), area or space (*kshetra*), time (*kaal*) and state or mode (*bhaava*). As to substance, a living being with involvement (*upayoga*) in scriptural knowledge knows and sees in detail all substances. As to area, a living being with involvement (*upayoga*) in scriptural knowledge knows and sees in detail all areas. In the same way he also knows and sees all time and all states in detail.

विवेचन : श्रुतज्ञान का विषय-श्रुतज्ञानी (सम्पूर्ण दस पूर्वधर आदि श्रुतकेवली) उपयोगयुक्त होकर धर्मास्तिकाय आदि सभी द्रव्यों को विशेष रूप से जानता है तथा श्रुतानुसारी अचक्षु (मानस) दर्शन द्वारा सभी अभिलाप्य द्रव्यों को देखता है। इसी प्रकार क्षेत्रादि के विषय में भी जानना चाहिए। भाव से उपयोगयुक्त श्रुतज्ञानी औदयिक आदि समस्त भावों को अथवा अभिलाप्य (वक्तव्य) भावों को जानता है। यद्यपि श्रुत द्वारा अभिलाप्य भावों का अनन्तवाँ भाग ही प्रतिपादित है, तथापि प्रसंगानुप्रसंग से अभिलाप्य भाव श्रुतज्ञान के विषय हैं। इसलिए उनकी अपेक्षा 'श्रुतज्ञानी सर्वभावों को (सामान्यतया) जानता है' ऐसा कहा गया है।

Elaboration—Scope of scriptural knowledge—A *shrut-jnani* (*Shrut-kevalis* including the scholars of ten *Purvas*) with his intent and involvement exhaustively knows all substances including *Dharmastikaaya*. He sees all desired substances through scripture based mental perception. The same also holds good for space and time. An involved *Shrut-jnani* knows all or desired states including *audayik* (state of fruition). Although only an infinitesimal part of all states finds mention in scriptures, as the scope of scriptural knowledge is limited to desired specific states, it is stated here the he knows all states.

१३०. [प्र.] ओहिनाणस्स णं भंते ! केवइए विसए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ। दव्वओ णं ओहिनाणी रूविदव्वाइं जाणइ पासइ जहा नंदीए जाव भावओ।

१३०. [प्र.] भगवन् ! अवधिज्ञान का विषय कितना है ?

[उ.] गौतम ! अवधिज्ञान का विषय संक्षेप में चार प्रकार का है। यथा-द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से। द्रव्य से अवधिज्ञानी रूपीद्रव्यों को जानता और देखता है। (तत्पश्चात् क्षेत्र से, काल से और भाव से) इत्यादि वर्णन जिस प्रकार नन्दीसूत्र में किया है, उसी प्रकार यावत् 'भाव' पर्यन्त वर्णन करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

130. [Q.] *Bhante* ! How wide is the scope (*vishaya*) of *Avadhi-jnana* (extrasensory perception of the physical dimension; something akin to clairvoyance) ?

[Ans.] Gautam ! In brief the scope (*vishaya*) of *Avadhi-jnana* (extrasensory perception of the physical dimension; something akin to clairvoyance) has four domains—those related to substance or matter (*dravya*), area or space (*kshetra*), time (*kaal*) and state or mode (*bhaava*). As to substance a living being with Avadhi-jnana knows and sees all substances with form. After this follow details in context of space, time and state as mentioned in *Nandi Sutra* up to *bhaava*.

विवेचन : अवधिज्ञान का विषय–द्रव्य से–अवधिज्ञानी जघन्यतः तैजस् और भाषा द्रव्यों के अन्तरालवर्ती सूक्ष्म अनन्त पुद्गल द्रव्यों को जानता है, उत्कृष्टतः बादर और सूक्ष्म सभी पुद्गल द्रव्यों को जानता है। **क्षेत्र से**–अवधिज्ञानी जघन्यतः अंगुल के असंख्यातवें भाग को तथा उत्कृष्टतः समग्र लोक और लोक-सदृश असंख्येय खण्ड अलोक में हों तो उन्हें भी जान-देख सकता है। **काल से**–अवधिज्ञानी जघन्यतः आवलिका के असंख्यातवें भाग को तथा उत्कृष्टतः असंख्यात उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी, अतीत, अनागत काल को जानता और देखता है। यहाँ क्षेत्र और काल को जानने का तात्पर्य यह है कि इतने क्षेत्र और काल में रहे हुए रूपी द्रव्यों को जानता और देखता है। **भाव से**–अवधिज्ञानी जघन्यतः आधारद्रव्य अनन्त होने से अनन्त भावों को जानता-देखता है, किन्तु प्रत्येक द्रव्य के अनन्त भावों (पर्यायों) को नहीं जानता-देखता। उत्कृष्टतः भी वह अनन्त भावों को जानता-देखता है। वे भाव भी समस्त पर्यायों के अनन्तवें भाग-रूप जानने चाहिए।

Elaboration—Scope of Avadhi-jnana (a person endowed with *Avadhi-jnana* knows and sees)—In context of substance—minimum : infinite matter particles existing in the intervening space within matter aggregates of fire and sound class; maximum : all matter particles minute as well as gross. In context of space—minimum : innumerable fraction of an Angul (a linear unit equivalent to width of a finger); maximum : complete *Lok* (occupied space) and innumerable *Lok*-like areas in *Alok* (unoccupied space) if any. In context of time—minimum : innumerable fraction of one Avalika (a micro-unit of time); maximum : innumerable *Utsarpinis* and *Avasarpinis* in the past and future. Here space and time convey substances with form existing in specific time and space. In context of state—minimum : infinite basic states (basic state of every substance, the number of substances beings infinite); maximum : the same. Infinite modes of each substance are beyond the scope of this knowledge. In other words the scope of this knowledge is confined to infinite fraction of the total member of all modes of all substances.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३१. [प्र.] मणपज्जवनाणस्स णं भंते ! केवइए विसए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ। दव्वओ णं उज्जुमती अणंते अणंतपदेसिए जहा नंदीए जाव भावओ।

१३१. [प्र.] भगवन् ! मनःपर्यवज्ञान का विषय कितना है ?

[उ.] गौतम ! मनःपर्यवज्ञान–विषय संक्षेप में चार प्रकार का है। यथा–द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से। द्रव्य से, ऋजुमति–मनःपर्यवज्ञानी (मनरूप में परिणत) अनन्त प्रादेशिक अनन्त (स्कन्धों) को जानता–देखता है। इत्यादि नन्दीसूत्र में कहे अनुसार यहाँ भी यावत् 'भाव' तक कहना चाहिए।

131. [Q.] *Bhante* ! How wide is the scope (*vishaya*) of *manah-paryav-jnana* (extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings, something akin to telepathy) ?

[Ans.] Gautam ! In brief the scope (*vishaya*) of *Manah-paryav-jnana* (extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings, something akin to telepathy) has four domains—those related to substance or matter (*dravya*), area or space (*kshetra*), time (*kaal*) and state or mode (*bhaava*). As to substance, a living being with limited (*rijumati*) *Manah-paryav-jnana* knows and sees infinite aggregates of infinite space-points (transformed as thoughts). After this follow details in context of space, time and state as mentioned in *Nandi Sutra* up to *bhaava*.

विवेचन : मनःपर्यवज्ञान का विषय–मनःपर्यवज्ञान के दो प्रकार हैं–(१) ऋजुमति, और (२) विपुलमति। सामान्यग्राही मनन–मति या संवेदन को **ऋजुमति मनःपर्यायज्ञान** कहते हैं। जैसे–'इसने घड़े का चिन्तन किया है', इस प्रकार के अध्यवसाय का कारणभूत (सामान्य कतिपय पर्याय विशिष्ट) मनोद्रव्य का ज्ञान या ऋजु–सरलमति वाला ज्ञान। **द्रव्य से**–ऋजुमतिमनःपर्यायज्ञानी ढाई द्वीप–समुद्रान्तर्वर्त्ती संज्ञीपंचेन्द्रियपर्याप्तक जीवों द्वारा मनोरूप से परिणमित मनोवर्गणा के अनन्त परमाण्वात्मक (विशिष्ट एक परिणामपरिणत) स्कन्धों को मनःपर्यायज्ञानावरण की क्षयोपशमपटुता के कारण साक्षात् जानता–देखता है। परन्तु जीवों द्वारा चिन्तित घटादिरूप पदार्थों को मनःपर्यायज्ञानी प्रत्यक्षतः नहीं जानता, किन्तु उसके मनोद्रव्य के परिणामों की **अन्यथानुपपत्ति से** (इस प्रकार के आकार वाला मनोद्रव्य का परिणाम, इस प्रकार के चिन्तन बिना घटित नहीं हो सकता, इस तरह के अन्यथानुपपत्तिरूप अनुमान से) जानता है। इसीलिए यहाँ **'जाणइ'** के बदले **'पासइ'** (देखता है) कहा गया है।

अनेक विशेषताओं से युक्त मनोद्रव्य के ज्ञान को **'विपुलमतिमनःपर्यायज्ञान'** कहते हैं। जैसे–इसने घट का चिन्तन किया है, वह घट **द्रव्य से**–सोने का बना हुआ है, **क्षेत्र से**–पाटलिपुत्र का है, **काल से**–नया है या वसन्त ऋतु का है और **भाव से**–बड़ा है अथवा पीले रंग का है। इस प्रकार की विशेषताओं से युक्त मनोद्रव्यों को विपुलमति जानता है। अर्थात् ऋजुमति द्वारा देखे हुए स्कन्धों की अपेक्षा विपुलमति अधिकतर, वर्णादि से सुस्पष्ट, उज्ज्वलतर और विशुद्धतर रूप से जानता–देखता है। **क्षेत्र से**– ऋजुमति जघन्यतः अंगुल के असंख्यातवें भाग तथा उत्कृष्टतः मनुष्यलोक में रहे हुए संज्ञीपंचेन्द्रिय पर्याप्तक जीवों के मनोगत भावों को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जानता-देखता है; जबकि विपुलमति उससे ढाई अंगुल अधिक क्षेत्र में रहे हुए जीवों के मनोगत भावों को विशेष प्रकार से विशुद्धतर रूप से-स्पष्ट रूप से जानता-देखता है। तात्पर्य यह है कि ऋजुमतिमनःपर्यायज्ञानी क्षेत्र से उत्कृष्टतः अधोदिशा में-रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपरी तल के नीचे के क्षुल्लक प्रतरों, ऊर्ध्वदिशा में-ज्योतिषी देवलोक के ऊपरी तल को तथा तिर्यग्दिशा में मनुष्यक्षेत्र में जो ढाई द्वीप-समुद्रक्षेत्र हैं, १५ कर्मभूमियाँ हैं तथा छप्पन अन्तर्द्वीप हैं, उनमें रहे हुए संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक जीवों के मनोगत भावों को जानता-देखता है। विपुलमति इससे अढाई अंगुल अधिक क्षेत्र को विशुद्ध रूप में जानता-देखता है। **काल से**-ऋजुमति जघन्यतः पल्योपम के असंख्यातवें भाग जितने अतीत-अनागत काल को जानता-देखता है, जबकि विपुलमति इसी को स्पष्टतर रूप से निर्मलतर जानता-देखता है। **भाव से**-ऋजुमति समस्त भावों के अनन्तवें भाग को जानता-देखता है, जबकि विपुलमति इन्हें ही विशुद्धतर-स्पष्टतररूप से जानता-देखता है।

Elaboration—Scope of *Manah-paryav-jnana*—This *jnana* is of two kinds—(1) *Rijumati* (limited) and (2) *Vipul-mati* (elaborate). Simply perceivable mental images are the subjects of *Rijumati Manah-paryav-jnana*. For example knowing of simple thought forms (with limited modes) manifested by thought-particles (*manodravya*; may be neuronic activity), such as "he has thought of pitcher". A person endowed with *Manah-paryav-jnana* directly knows and sees—In context of substance—infinite aggregates of infinite space-points transformed as thoughts in the minds of sentient fully developed five sensed living beings (*sanjni-panchendriya-paryaptak jivas*) of Adhai Dveep (two and a half continents) up to the surrounding sea. This happens on attaining destruction-cum-pacification of *Manah-paryav jnanavaraniya karmas* (*Manah-paryav jnana* hindering *karmas*). In context of *Manah-paryav-jnana* the term originally used is not *jaanai* (knows) but only *paasai* (sees). This is because he does not, in fact, directly know the thoughts but only the transformed thought-particles into the imagined form (*anyathanupapatti* or causitive inference). The reason being that the form of thought-particles perceived by a living being cannot manifest in absence of that specific thought.

Vipul-mati (elaborate) *Manah-paryav-jnana* is wider or elaborate knowledge of numerous attributes of thought forms. For example—He thinks of a pitcher. As to matter it is made of gold. As to area it is from Pataliputra. As to time it is new or made during spring season. As to state it is large or yellow. One endowed with *vipul-mati* knows such attributes of thought forms. This means that a *vipul-mati* sees things with more details and clarity as compared with a *rijumati*. In context of area—Rijumati—minimum : innumerable fraction of an Angul; maximum : the thoughts of the sentient fully developed five sensed

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

living beings (*sanjni-panchendriya-paryaptak jivas*) in the world of humans (*manushya lok*). Vipul-mati sees an area of two and a half Angul more than that and with greater clarity and detail. In other words a *rijumati* sees and knows the thought forms of the fully developed sentient five-sensed beings living in an area equivalent to a maximum of up to the lowest subtle level of Ratnaprabha hell towards nadir, the highest level of the Jyotish chakra, and all human inhabited areas in other spatial directions including fifteen *karmabhumis*, thirty *akarmabhumis*, and fifty six intermediate islands existing in Adhai-dveep-samudra (two and a half continents and oceans). A *vipul mati* sees these thoughts and feelings in slightly greater detail, with slightly better clarity and a little more certainty covering two and a half Angul more area. In context of time—a *rijumati* sees into and knows about the past and the future up to an equivalent of a minimum as well as maximum span of inexpressible fraction of a Palyopam (a vast conceptual unit of time) ; a *vipul mati* sees and knows the same in slightly greater detail, with slightly better clarity and a little more certainty. In context of state or mode—a *rijumati* sees and knows infinite modes but only an infinitesimal fraction of each such mode; a *vipul mati* sees and knows the same in slightly greater detail, with slightly better clarity and a little more certainty.

१३२. [प्र.] केवलनाणस्स णं भंते ! केवइए विसए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ। दव्वओ णं केवलनाणी सव्वदव्वाइं जाणइ पासइ। एवं जाव भावओ।

१३२. [प्र.] भगवन् ! केवलज्ञान का विषय कितना है ?

[उ.] गौतम ! केवलज्ञान का विषय संक्षेप में चार प्रकार का है। यथा–द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से। द्रव्य से केवलज्ञानी सर्वद्रव्यों को जानता और देखता है। इस प्रकार यावत् भाव से केवलज्ञानी सर्वभावों को जानता और देखता है।

132. [Q.] *Bhante* ! How wide is the scope (*vishaya*) of *Keval-jnana* (omniscience) ?

[Ans.] Gautam ! In brief the scope (*vishaya*) of *Keval-jnana* (omniscience) has four domains—those related to substance or matter (*dravya*), area or space (*kshetra*), time (*kaal*) and state or mode (bhaava). As to substance a living being with Keval-jnana (omniscience) knows and sees all substances. The same is true for area... and so on up to... state.

१३३. [प्र.] मइअन्नाणस्स णं भंते ! केवइए विसए पन्नत्ते ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] **गोयमा ! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ। दव्वओ णं मइअन्नाणी मइअन्नाणपरिगताइं दव्वाइं जाणइ पासइ। एवं जाव भावओ णं मइअन्नाणी मइअन्नाणपरिगए भावे जाणइ पासइ।**

१३३. [प्र.] भगवन् ! मति-अज्ञान का विषय कितना है ?

[उ.] गौतम ! मति-अज्ञान का विषय संक्षेप में चार प्रकार का है। यथा-द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से। द्रव्य से, मति-अज्ञानी, मति-अज्ञान-परिगत (मति-अज्ञान के विषयभूत) द्रव्यों को जानता और देखता है। इसी प्रकार यावत् भाव से मति-अज्ञानी मति-अज्ञान के विषयभूत भावों को जानता और देखता है।

133. [Q.] *Bhante* ! How wide is the scope (*vishaya*) of *mati-ajnana* (wrong sensual knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! In brief the scope (*vishaya*) of Mati-ajnana (wrong sensual knowledge) has four domains—those related to substance or matter (*dravya*), area or space (*kshetra*), time (*kaal*) and state or mode (*bhaava*). As to substance, a living being with *Mati-ajnana* knows and sees substances within its scope. The same is true for other domains up to as to state, a living being with *Mati-ajnana* knows and sees states within its scope.

१३४. [प्र.] **सुयअन्नाणस्स णं भंते ! केवइए विसए पण्णत्ते ?**

[उ.] **गोयमा ! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ। दव्वओ णं सुयअन्नाणी सुयअन्नाणपरिगयाइं दव्वाइं आघवेइ पण्णवेइ परूवेइ। एवं खेत्तओ कालओ। भावओ णं सुयअन्नाणी सुयअन्नाणपरिगए भावे आघवेइ तं चेव।**

१३४. [प्र.] भगवन् ! श्रुत-अज्ञान का विषय कितना है ?

[उ.] गौतम ! श्रुत-अज्ञान का विषय संक्षेप में चार प्रकार का है। यथा-द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से। द्रव्य से, श्रुत-अज्ञानी श्रुत-अज्ञान के विषयभूत द्रव्यों का कथन करता है, उन द्रव्यों को बतलाता है, उनकी प्ररूपणा करता है। इसी प्रकार क्षेत्र से और काल से भी जान लेना चाहिए। भाव की अपेक्षा श्रुत-अज्ञानी श्रुत-अज्ञान के विषयभूत भावों को कहता है, बतलाता है, प्ररूपित करता है।

134. [Q.] *Bhante* ! How wide is the scope (*vishaya*) of *Shrut-ajnana* (wrong scriptural knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! In brief the scope (*vishaya*) of *Shrut-ajnana* (wrong scriptural knowledge) has four domains—those related to substance or matter (*dravya*), area or space (*kshetra*), time (*kaal*) and state or mode (*bhaava*). As to substance a living being with *Shrut-ajnana* says, elaborates and propagates substances within its scope. The same is true for domains of space and time. As to state a living being with *Shrut-ajnana* says, elaborates and propagates states within its scope.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३५. [प्र.] विभंगणाणस्स णं भंते ! केवइए विसए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! से समासओ चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ। दव्वओ णं विभंगनाणी विभंगणाणपरिगयाइं दव्वाइं जाणइ पासइ। एवं जाव भावओ णं विभंगनाणी विभंगनाणपरिगए भावे जाणइ पासइ।

१३५. [प्र.] भगवन् ! विभंगज्ञान का विषय कितना है ?

[उ.] गौतम ! विभंगज्ञान विषय संक्षेप में चार प्रकार का है। यथा–द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से। द्रव्य की अपेक्षा विभंगज्ञानी विभंगज्ञान के विषयगत द्रव्यों को जानता और देखता है। इसी प्रकार यावत् भाव की अपेक्षा विभंगज्ञानी विभंगज्ञान के विषयगत भावों को जानता और देखता है।

135. [Q.] *Bhante* ! How wide is the scope (*vishaya*) of *vibhang-jnana* (pervert knowledge) ?

[Ans.] Gautam ! In brief the scope (*vishaya*) of *Vibhang-jnana* (pervert knowledge) has four domains—those related to substance or matter (*dravya*), area or space (*kshetra*), time (*kaal*) and state or mode (*bhaava*). As to substance a living being with *Vibhang-jnana* knows and sees substances within its scope. The same is true for other domains up to a living being with *Vibhang-jnana* knows and sees states within its scope.

विवेचन : तीन अज्ञानों का विषय : मति–अज्ञानी मिथ्यादर्शनयुक्त अवग्रह आदि रूप तथा औत्पातिकी आदि बुद्धिरूप मति-अज्ञान के द्वारा गृहीत द्रव्यों को द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से जानता-देखता है। **श्रुत–अज्ञानी** श्रुत–अज्ञान (मिथ्यादृष्टि–परिगृहीत लौकिक श्रुत या कुप्रावचनिकश्रुत) से गृहीत (विषयीकृत) द्रव्यों को कहता है, बतलाता है, प्ररूपणा करता है। **विभंगज्ञानी** विभंगज्ञान द्वारा गृहीत द्रव्यों को द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से जानता है और अवधिदर्शन से देखता है। *(वृत्ति, पत्रांक ३५७-३६०)*

Elaboration—Scope of three *ajnanas* : *Mati-ajnani*—knows and sees things in context of substance, space, time and state observed through processes including unrighteous *avagraha* (to acquire cursory knowledge) and unrighteous faculties including *autpattiki buddhi* (spontaneous wisdom) being functions of *Mati-ajnana* (wrong knowledge). *Shrut-ajnani*—says, elaborates and propagates information about substances acquired through *Shrut-ajnana* or the unrighteous heretic knowledge. *Vibhang-jnani*—knows things in context of substance, space, time and state through pervert knowledge (*Vibhang-jnana*) and sees the same through *Avadhi-jnana*. *(Vritti, leaf 357-360)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३६. [प्र.] णाणी णं भंते ! 'णाणि' त्ति कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! नाणी दुविहे पण्णत्ते, तं जहा—साइए वा अपज्जवसिए, साइए वा सपज्जवसिए। तत्थ णं जे से साइए सपज्जवसिए से जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं छावट्ठि सागरोवमाइं सातिरेगाइं।

१३६. [प्र.] भगवन् ! ज्ञानी 'ज्ञानी' रूप में कितने काल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञानी दो प्रकार के होते हैं—(१) सादि-अपर्यवसित, और (२) सादि-सपर्यवसित। इनमें से जो सादि-सपर्यवसित (सान्त) ज्ञानी हैं, वे जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त तक, और उत्कृष्टतः कुछ अधिक छियासठ सागरोपम तक ज्ञानीरूप में रहते हैं।

136. [Q.] *Bhante* ! How long does the knowledge of one endowed with knowledge (*jnana*) last ?

[Ans.] Gautam ! *Jnanis* (those endowed with knowledge) are of two kinds—(1) *saadi-aparyavasit* (with a beginning and without an end) and (2) *saadi-saparyavasit* (with a beginning and with an end). Of these, those who are endowed with knowledge having a beginning and an end (*saadi-saparyavasit*) remain *jnani* (endowed with right knowledge) for a minimum period of one Antarmuhurt (less than 48 minutes) and a maximum period of slightly more than sixty six Sagaropam.

१३७. [प्र.] आभिणिबोहियणाणी णं भंते ! आभिणिबोहियणाणी ति कालओ केवच्चिरं होई?

[उ.] आभिणियबोहिनाणी एवं नाणी, आभिणिबोहियनाणी जाव केवलनाणी, अन्नाणी, मइअन्नाणी, सुयअन्नाणी, विभंगनाणी; एएसिं दसण्ह वि संचिट्ठणा जहा कायठिइए।

१३७. [प्र.] भगवन् ! आभिनिबोधिक ज्ञानी आभिनिबोधिक-ज्ञानी के रूप में कितने काल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञानी, आभिनिबोधिकज्ञानी यावत् केवलज्ञानी, अज्ञानी, मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी और विभंगज्ञानी, इन दस का अवस्थितकाल (प्रज्ञापनासूत्र के अठारहवें) कायस्थितिपद में कहे अनुसार जानना चाहिए। (कालद्वार)

137. [Q.] *Bhante* ! How long does the knowledge of one endowed with sensual knowledge (*abhinibodhik jnana*) last ?

[Ans.] Gautam ! The period of sustenance of knowledge of *Jnani*, *Abhinibodhik jnani*... and so on up to... *Keval jnani*, *ajnani*, Mati-ajnani, *Shrut-ajnani* and *Vibhang jnani*, these ten, should be excerpted from *Kaayasthitipad*, the eighteenth chapter of *Prajnapana Sutra*. (*Kaal-dvar*)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतरद्वार INTERVENING PERIOD

१३८. अंतरं सव्वं जहा जीवाभिगमे।

१३८. इन सब (दसों) का अन्तर जीवाभिगम सूत्र के अनुसार जानना चाहिए। (अन्तरद्वार)

138. The intervening period (*antar kaal*) related to these ten should be excerpted from *Jivabhigam Sutra*. (*Antar-dvar*)

ज्ञानी और अज्ञानी जीवों का अल्पबहुत्व COMPARATIVE NUMBERS JNANI AND AJNANI BEINGS

१३९. अप्पाबहुगाणि तिण्णि जहा बहुवत्तव्वताए।

१३९. इन सबका अल्पबहुत्व (प्रज्ञापनासूत्र के तृतीय-) बहुवक्तव्यता पद के अनुसार जानना चाहिए। (अल्पबहुत्वद्वार)

139. The comparative numbers (*alpabahutva*) of these ten should be excerpted from *Bahuvaktavyatapad*, the third chapter of *Prajnapana Sutra*. (*Alpabahutva-dvar*)

विवेचन : ज्ञानी का ज्ञानी के रूप में अवस्थितिकाल–ज्ञानी के दो प्रकार हैं -(१) सादि-अपर्यवसित, और (२) सादि-सपर्यवसित। प्रथम ज्ञानी ऐसे हैं, जिनके ज्ञान की आदि तो है, पर अन्त नहीं। ऐसे ज्ञानी केवलज्ञानी होते हैं अथवा 2, 3, 4 ज्ञान पाकर उनका अन्त नहीं होता है। आगे वे केवलज्ञान को प्राप्त करते हैं। **केवलज्ञान का** काल सादि-अनन्त है, अर्थात् केवलज्ञान उत्पन्न होकर फिर कभी नष्ट नहीं होता। **द्वितीय ज्ञानी** ऐसा है, जिसकी आदि भी है, अन्त भी है। ऐसा ज्ञानी मति आदि चार ज्ञान वाला होता है। मति आदि चार ज्ञानों का काल सादि-सपर्यवसित है। इनमें से मति और श्रुतज्ञान का जघन्य स्थितिकाल एक अन्तर्मुहूर्त्त है। अवधि और मनःपर्यवज्ञान का जघन्य स्थितिकाल एक समय है। आदि के तीनों ज्ञानों का उत्कृष्ट स्थितिकाल कुछ अधिक ६६ सागरोपम है। मनःपर्यवज्ञान का उत्कृष्ट स्थितिकाल देशोन करोड़ पूर्व का है। **अवधिज्ञान** का जघन्य स्थितिकाल एक समय का इसलिए बताया है कि जब किसी विभंगज्ञानी को सम्यग्दर्शन प्राप्त होता है तब सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के प्रथम समय में ही विभंगज्ञान अवधिज्ञान के रूप में परिणत हो जाता है। इसके पश्चात् शीघ्र ही दूसरे समय में यदि वह अवधिज्ञान से गिर जाता है तब अवधिज्ञान केवल एक समय ही रहता है। **मनःपर्यायज्ञानी** का भी अवस्थितिकाल जघन्य एक समय इसलिए बताया है कि अप्रमत्तगुणस्थान में स्थित किसी संयत (मुनि) को मनःपर्यायज्ञान उत्पन्न होता है और तुरन्त ही दूसरे समय में नष्ट हो जाता है। मनःपर्यायज्ञानी का उत्कृष्ट अवस्थितिकाल देशोन पूर्वकोटि वर्ष का इसलिए बताया है कि किसी पूर्वकोटि वर्ष की आयु वाले मनुष्य ने चारित्र अंगीकार किया। चारित्र अंगीकार करते ही उसे मनःपर्यायज्ञान उत्पन्न हो जाए और यावज्जीवन रहे तो उसका उत्कृष्ट स्थितिकाल किञ्चित् न्यून पूर्व कोटिवर्ष घटित हो जाता है।

त्रिविध अज्ञानियों का तद्रूप अज्ञानी के रूप में अवस्थितिकाल–अज्ञानी, मति-अज्ञानी और श्रुत-अज्ञानी ये तीनों स्थितिकाल की दृष्टि से तीन प्रकार के हैं–(१) अनादि-अपर्यवसित (अनन्त), अभव्यों का होता है। (२) अनादि-सपर्यवसित (सान्त), जो भव्य जीवों का होता है। और (३) सादि-सपर्यवसित (सान्त), जो सम्यग्दर्शन से पतित जीवों का होता है। इनमें से जो सादि-सान्त हैं, उनका जघन्य अवस्थितिकाल अन्तर्मुहूर्त्त का है; क्योंकि कोई जीव सम्यग्दर्शन से पतित होकर अन्तर्मुहूर्त्त के पश्चात् ही पुनः सम्यग्दर्शन प्राप्त कर लेता है। इसका उत्कृष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थितिकाल अनन्तकाल है (अर्ध पुद्गल परावर्त काल), क्योंकि कोई जीव सम्यग्दर्शन से पतित होकर अनन्त उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल व्यतीत कर अथवा वनस्पति आदि में अनन्त उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी व्यतीत करके अनन्तकाल के पश्चात् पुनः सम्यग्दर्शन को प्राप्त करता है। विभंगज्ञान का अवस्थितिकाल जघन्य एक समय है; क्योंकि उत्पन्न होने के पश्चात् उसका दूसरे समय में विनष्ट होना सम्भव है। इसका उत्कृष्ट स्थितिकाल किञ्चित् न्यून पूर्वकोटि अधिक तेतीस सागरोपम का है, क्योंकि कोई मनुष्य कुछ कम पूर्वकोटि वर्ष तक विभंगज्ञानी बना रहकर सातवें नरक में उत्पन्न हो जाता है, उसकी अपेक्षा से यह कथन है। *(वृत्ति, पत्रांक ३६१, हिन्दी विवेचन, भाग ३, पृ. १३६३)*

पाँच ज्ञानों और तीन अज्ञानों का परस्पर अन्तरकाल—एक बार ज्ञान अथवा अज्ञान उत्पन्न होकर नष्ट हो जाए और फिर दूसरी बार उत्पन्न हो तो दोनों के बीच का काल अन्तरकाल कहलाता है। यहाँ पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान के अन्तर के लिए जीवाभिगमसूत्र का अतिदेश (सन्दर्भ) किया गया है। वहाँ इस प्रकार से अन्तर बताया गया है--आभिनिबोधिक ज्ञान का काल से पारस्परिक अन्तर जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्टतः अनन्तकाल तक का या कुछ कम अपार्द्ध-पुद्गल परिवर्तन काल का है। इसी प्रकार श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्यायज्ञान के विषय में समझ लेना चाहिए। केवलज्ञान का अन्तर नहीं होता। मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञान का अन्तरकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट कुछ अधिक ६६ सागरोपम का है। विभगंज्ञान का अन्तर जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट अनन्तकाल है। *(वृत्ति, पत्रांक ३६१, जीवाभिगमसूत्र (अन्तरदर्शक पाठ), सू. २६३)*

पाँच ज्ञानी और तीन अज्ञानी जीवों का अल्पबहुत्व—पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान से युक्त जीवों का अल्पबहुत्व प्रज्ञापनासूत्र के तृतीय पद में बताया गया है। वह संक्षेप में इस प्रकार है--सबसे अल्प मनःपर्यायज्ञानी हैं। क्योंकि मनःपर्यायज्ञान केवल ऋद्धि प्राप्त संयतों को ही होता है। उनसे असंख्यातगुणे अवधिज्ञानी हैं; क्योंकि अवधिज्ञानी जीव चारों गतियों में पाए जाते हैं। उनसे आभिनिबोधिकज्ञानी और श्रुतज्ञानी दोनों तुल्य और विशेषाधिक हैं। इसका कारण यह है कि अवधि आदि ज्ञान से रहित होने पर भी कई पंचेन्द्रिय और कितने ही विकलेन्द्रिय जीव (जिन्हें सास्वादन सम्यग्दर्शन हो) आभिनिबोधिकज्ञानी और श्रुतज्ञानी होते हैं। आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान का परस्पर साहचर्य होने से दोनों ज्ञानी तुल्य हैं। इन सभी से सिद्ध अनन्तगुणे होने से केवलज्ञानी जीव अनन्तगुणे हैं। तीन अज्ञानयुक्त जीवों में सबसे थोड़े विभंगज्ञानी हैं, क्योंकि विभंगज्ञान पंचेन्द्रिय जीवों को ही होता है। उनसे मति-अज्ञानी और श्रुत-अज्ञानी दोनों अनन्तगुणे हैं, क्योंकि एकेन्द्रिय जीव भी मति-अज्ञानी और श्रुत-अज्ञानी होते हैं और वे अनन्त हैं, परस्पर तुल्य भी हैं, क्योंकि इन दोनों का परस्पर साहचर्य है। *(वृत्ति, पत्रांक ३६२)*

Elaboration—Period of sustenance of knowledge—Those endowed with knowledge (*jnanis*) are of two kinds—(1) *saadi-aparyavasit* (with a beginning and without an end) and (2) *saadi-saparyavasit* (with a beginning and with an end). First kind are those whose knowledge has a beginning but no end. Such individuals are omniscients. The period of sustenance of *Keval-jnana* is with a beginning but without an end. In other words, once acquired, *Keval jnana* is never lost. Second kind are those whose knowledge has a beginning as well as an end. Such an individual has four *jnanas* (kinds of right knowledge) including *Mati-*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

jnana (sensual knowledge). The period for which these four types of knowledge lasts is with a beginning as well as an end. Of these the minimum sustenance period of sensual and scriptural knowledge is one Antarmuhurt. That of *Avadhi* and *Manah-paryav-jnana* is one Samaya. The maximum sustenance period of the first three *jnanas* is slightly more than 66 Sagaropam (a metaphoric unit of time); and that of *Manah-paryav-jnana* is Deshonakoti-purva (less then ten million *Purva*; a metaphoric unit of time). The minimum sustenance period of *Avadhi-jnana* is said to be one Samaya because when someone with *Vibhang-jnana* (pervert knowledge) acquires right perception/faith, at the first moment of that acquisition the Vibhang-jnana turns into Avadhi-jnana; and in case he looses that right perception immediately after or in the second Samaya he also looses *Avadhi-jnana*; thus this *Avadhi-jnana* lasts just for one Samaya. Similar reason applies to *Manah-paryav-jnana*. When a restrained ascetic at *Apramatta Gunasthaan* acquires *Manah-paryav-jnana* he looses it just after one Samaya. The maximum sustenance period for *Manah-paryav jnana* is said to be slightly less than *Deshonakoti-purva* because if a person with a life-span of *Deshonakoti-purva* gets initiated and acquires *Manah-paryav-jnana* immediately after that lasting all his life; in such case the maximum period becomes slightly less than *Deshonakoti-purva*.

Period of sustenance of wrong knowledge—In context of sustenance period ajnani, *Mati-ajnani* and *Shrut-ajnani* all three are of three kinds—(1) *anaadi-aparyavasit* (without a beginning and without an end), which applies to *abhavya* (not destined to be liberated), (2) *anaadi-saparyavasit* (without a beginning and with an end), which applies to *bhavya* (destined to be liberated) and (3) *saadi-saparyavasit* (with a beginning and with an end), which applies to those who loose righteousness. Of these the minimum sustenance period of those who are in the *saadi-saparyavasit* category is one Antarmuhurt because some individuals loosing right perception/faith regain it just after one Antarmuhurt. The maximum sustenance period of these is infinity because individuals loosing right perception/faith generally regain it after infinite progressive and regressive cycles of rebirth or after spending infinite time as one sensed beings including plant bodied beings. The minimum sustenance period of *Vibhang-jnana* (pervert knowledge) is one Samaya because there is a chance of getting rid of it

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

just one Samaya after acquiring it. Its maximum sustenance period is slightly less than 33 Koti-purva less than 33 Sagaropam. This is because some individual is reborn in seventh hell after remaining *Vibhang jnani* for slightly less than 33 Koti-purva. *(Vritti, leaf 361; Hindi Commentary, part-3, p. 1363)*

Intervening period—The period between once loosing a particular *jnana* (after gaining it) and then regaining it is called *antar-kaal* (intervening period). Here it is advised to refer to *Jivabhigam Sutra* for knowing this intervening period related to five *jnanas* and three *ajnanas* (kinds of wrong knowledge). That information in brief is as follows—The intervening period related to *Abhinibodhik jnana* is minimum Antarmuhurt and maximum infinity or slightly less than Apardh-pudgal Paravartan kaal (the time taken by a soul to touch each and every matter particle in the whole universe is called Pudgalaparavartan kaal; it is equivalent to innumerable *avasarpini-utsarpinis*). The same is true for *Shrut-jnana*, *Avadhi-jnana* and *Manah-paryav-jnana*. In *Keval-jnana* there is no intervening period. The minimum sustenance period of *Mati-ajnana* and *Shrut-ajnana* is one Antarmuhurt and maximum is slightly more than 66 Sagaropam. The minimum sustenance period of *Vibhang-jnana* is one Antarmuhurt and maximum is infinity. *(Vritti, leaf 361; Jivabhigam Sutra aphorism 263)*

Comparative numbers of jnani and ajnani beings—The comparative numbers of living beings with five *jnanas* and three *ajnanas* has been mentioned in the third chapter of *Prajnapana Sutra*. In brief it is as follows—Minimum number is of *Manah-paryav jnanis*. This is because only the accomplished and restrained sages are endowed with *Manah-paryav-jnana*. Innumerable times more than these are *Avadhi jnanis*, this is because *Avadhi jnani* beings are found in all the four genuses. Much more than these are *abhinibodhik-jnanis* and *shrut jnanis*, the two being mutually equivalent. This is because even when devoid of these types of knowledge many two to five sensed beings (those having fleeting taste of righteousness or *sasvadan samyagdrishti*) are still endowed with *Abhinibodhik-jnana* and Shrut-jnana. Infinite times more than these are *Keval jnanis* because they include *Siddhas* who are infinite times more. Among living beings with three *ajnanas* minimum are *Vibhang jnanis* because only five sensed beings have this *jnana*. Infinite times more than these are *Mati-ajnanis* and *Shrut ajnanis*; this is because even one

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

sensed beings are *Mati-ajnanis* and *Shrut ajnanis* and they are infinite in number. They coexist and thus they are mutually equivalent. *(Vritti, leaf 362)*

बीसवाँ, पर्यायद्वार TWENTIETH STATE : MODE

१४०. [प्र.] **केवइया णं भंते ! आभिणिबोहियणाणपज्जवा पण्णत्ता ?**

[उ.] **गोयमा ! अणंता आभिणिबोहियणाणपज्जवा पण्णत्ता।**

१४०. [प्र.] भगवन् ! आभिनिबोधिकज्ञान के पर्याय कितने कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! आभिनिबोधिकज्ञान के अनन्त पर्याय कहे हैं।

140. **[Q.]** *Bhante* ! How many are the *paryayas* (modes or sub-categories) of *Abhinibodhik-jnana* ?

[Ans.] Gautam ! They are said to be infinite.

१४१. [प्र.] **केवइया णं भंते ! सुयनाणपज्जवा पण्णत्ता ?**

[उ.] **एवं चेव। एवं जाव केवलनाणस्स।**

१४१. [प्र.] भगवन् ! श्रुतज्ञान के पर्याय कितने कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! श्रुतज्ञान के भी अनन्त पर्याय कहे हैं। इसी प्रकार अवधिज्ञान, मनःपर्यायज्ञान और केवलज्ञान के भी अनन्त पर्याय कहे गये हैं।

141. **[Q.]** *Bhante* ! How many are the *paryayas* (modes or sub-categories) of *Shrut-jnana* ?

[Ans.] Gautam ! They are also said to be infinite. In the same way there are infinite sub-categories each of *Avadhi-jnana*, *Manah-Paryav-Jnana* and *Keval-jnana* (omniscience) also.

१४२. **एवं मइअन्नाणस्स सुयअन्नाणस्स।**

१४२. इसी प्रकार मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञान के भी अनन्त पर्याय कहे हैं।

142. In the same way there are infinite sub-categories each of *Mati-ajnana* and *Shrut-ajnana* also.

१४३. [प्र.] **केवइया णं भंते ! विभंगनाणपज्जवा पण्णत्ता ?**

[उ.] **गोयमा ! अणंता विभंगनाणपज्जवा पण्णत्ता।**

१४३. [प्र.] भगवन् ! विभंगज्ञान के कितने पर्याय कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! विभंगज्ञान के अनन्त पर्याय कहे हैं। (पर्यायद्वार)

143. **[Q.]** *Bhante* ! How many are the *paryayas* (modes or sub-categories) of Vibhang-jnana ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! They are also said to be infinite.

ज्ञान और अज्ञान के पर्यायों का अल्पबहुत्व COMPARATIVE NUMBERS OF PARYAYAS

१४४. [प्र.] एएसि णं भंते ! आभिणिबोहियनाणपज्जवाणं सुयनाणपज्जवाणं ओहिनाणपज्जवाणं मणपज्जवनाणपज्जवाणं केवलनाणपज्जवाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा मणपज्जवनाणपज्जवा, ओहिनाणपज्जवा अणंतगुणा, सुयनाणपज्जवा अणंतगुणा, आभिणिबोहियनाणपज्जवा अणंतगुणा, केवलनाणपज्जवा अणंतगुणा।

१४४. [प्र.] भगवन् ! इन (पूर्वोक्त) आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यायज्ञान और केवलज्ञान के पर्यायों में किनके पर्याय, किनके पर्यायों से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! मनःपर्यायज्ञान के पर्याय सबसे थोड़े हैं। उनसे अवधिज्ञान के पर्याय अनन्तगुणे हैं। उनसे श्रुतज्ञान के पर्याय अनन्तगुणे हैं। उनसे आभिनिबोधिकज्ञान के पर्याय अनन्तगुणे हैं और उनसे केवलज्ञान के पर्याय अनन्तगुणे हैं।

144. [Q.] *Bhante* ! Of the sub-categories (*paryayas*) of aforesaid *Abhinibodhik-jnana*, *Shrut-jnana*, *Avadhi-jnana*, *Manah-paryav-jnana* and *Keval-jnana*, which are comparative. less, more, equal and much more ?

[Ans.] Gautam ! The *paryayas* of *Manah-paryav-jnana* are minimum. Infinite times more than these are *paryayas* of *Avadhi-jnana*. Infinite times more than these are *paryayas* of *Shrut-jnana*. Infinite times more than these are *paryayas* of *Abhinibodhik-jnana* and infinite times more these are *paryayas* of *Keval-jnana*.

१४५. [प्र.] एएसि णं भंते ! मइअन्नाणपज्जवाणं सुयअन्नाणपज्जवाणं विभंगनाणपज्जवाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा विभंगनाणपज्जवा, सुयअन्नाणपज्जवा अणंतगुणा, मइअन्नाणपज्जवा अणंतगुणा।

१४५. [प्र.] भगवन् ! इन (पूर्वोक्त) मति-अज्ञान, श्रुत-अज्ञान और विभंगज्ञान के पर्यायों में, किनके पर्याय, किनके पर्यायों से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! सबसे थोड़े विभंगज्ञान के पर्याय हैं, उनसे श्रुत-अज्ञान के पर्याय अनन्तगुणे हैं और उनसे मति-अज्ञान के पर्याय अनन्तगुणे हैं।

145. [Q.] *Bhante* ! Of the sub-categories (*paryayas*) of aforesaid *Mati-ajnana*, *Shrut-ajnana* and *Vibhang-jnana* (pervert knowledge), which are comparative. less, more, equal and much more ?

[Ans.] Gautam ! The paryayas of Vibhang-jnana are minimum.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Infinite times more than these are *paryayas* of *Shrut-ajnana*. Infinite times more than these are *paryayas* of *Mati-ajnana*.

१४६. [प्र.] एएसि णं भंते ! आभिणिबोहियणाणपज्जवाणं जाव केवलनाणपज्जवाणं, मइअन्नाणपज्जवाणं, सुयअन्नाणपज्जवाणं, विभंगनाणपज्जवाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा मणपज्जवनाणपज्जवा, विभंगनाणपज्जवा अणंतगुणा, ओहिणाणपज्जवा अणंतगुणा, सुयअन्नाणपज्जवा अणंतगुणा, सुयनाणपज्जवा विसेसाहिया, मइअन्नाणपज्जवा अणंतगुणा, आभिणिबोहियनाणपज्जवा विसेसाहिया, केवलनाणपज्जवा अणंतगुणा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ अट्ठम सए : बितिओ उद्देसओ समत्तो ॥

१४६. [प्र.] भगवन् ! इन (पूर्वोक्त) आभिनिबोधिकज्ञान-पर्याय यावत् केवलज्ञान पर्यायों तक में तथा मति-अज्ञान, श्रुत-अज्ञान और विभंगज्ञान के पर्यायों में किसके पर्याय, किसके पर्यायों से अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! सबसे थोड़े मनःपर्यायज्ञान के पर्याय हैं। उनसे विभंगज्ञान के पर्याय अनन्तगुणे हैं। उनसे अवधिज्ञान के पर्याय अनन्तगुणे हैं। उनसे श्रुत-अज्ञान के पर्याय अनन्तगुणे हैं। उनसे श्रुतज्ञान के पर्याय विशेषाधिक हैं। उनसे मति-अज्ञान के पर्याय अनन्तगुणे हैं। उनसे मतिज्ञान के पर्याय विशेषाधिक हैं और केवलज्ञान के पर्याय उनसे अनन्तगुणे हैं।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करने लगे।

146. [Q.] Bhante ! Of the sub-categories (*paryayas*) of aforesaid *abhinibodhik-jnana*... and so on up to... *Keval-jnana*, and of aforesaid *mati-ajnana, shrut-ajnana* and *vibhang-jnana* which are comparatively less, more, equal and much more ?

[Ans.] Gautam ! The *paryayas* of *Manah-paryav-jnana* are minimum. Infinite times more than these are *paryayas* of *Vibhang-jnana* (pervert knowledge). Infinite times more than these are *paryayas* of *Avadhi-jnana*. Infinite times more than these are *paryayas* of *Shrut-ajnana*. Much more than these are *paryayas* of *Shrut-jnana*. Infinite times more than these are *paryayas* of *Mati-ajnana*. Much more than these are paryayas of *Abhinibodhik-jnana* and infinite times more these are *paryayas* of *Keval-jnana*.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : प्रस्तुत ७ सूत्रों में पर्यायद्वार के माध्यम से ज्ञान और अज्ञान की पर्यायों तथा उनके अल्पबहुत्व का निरूपण किया गया है।

पर्याय : भिन्न-भिन्न अवस्थाओं के विशेष भेदों को 'पर्याय' कहते हैं। पर्याय के दो भेद हैं--(१) स्वपर्याय, और (२) परपर्याय। क्षयोपशम की विचित्रता से मतिज्ञान के अवग्रह आदि अनन्त भेद होते हैं, जो स्वपर्याय कहलाते हैं। अथवा मतिज्ञान के विषयभूत ज्ञेयपदार्थ अनन्त होने से उन ज्ञेयों के भेद से ज्ञान के भी अनन्त भेद हो जाते हैं। इस अपेक्षा से भी मतिज्ञान के अनन्त पर्याय हैं। अथवा केवलज्ञान द्वारा मतिज्ञान के अंश (टुकड़े) किये जायें तो भी अनन्त अंश होते हैं। मतिज्ञान के सिवाय दूसरे पदार्थों के पर्याय 'परपर्याय' कहलाते हैं। मतिज्ञान के स्वपर्यायों का बोध कराने में तथा परपर्यायों से उन्हें भिन्न बतलाने में प्रतियोगी रूप से उनका उपयोग है। इसलिए वे मतिज्ञान के परपर्याय कहलाते हैं। श्रुतज्ञान के भी स्वपर्याय और परपर्याय अनन्त हैं। उनमें से श्रुतज्ञान के अक्षरश्रुत-अनक्षरश्रुत आदि भेद स्वपर्याय कहलाते हैं, जो अनन्त हैं। क्योंकि श्रुतज्ञान के क्षयोपशम की विचित्रता के कारण तथा श्रुतज्ञान के विषयभूत ज्ञेय पदार्थ अनन्त होने से श्रुतज्ञान के (श्रुतानुसारी बोध के) भेद भी अनन्त हो जाते हैं। अथवा केवलज्ञान द्वारा श्रुतज्ञान के अनन्त अंश होते हैं, वे भी उसके स्वपर्याय ही हैं। श्रुत--ज्ञान से भिन्न पदार्थों के विशेष धर्म, श्रुतज्ञान के परपर्याय कहलाते हैं।

अवधिज्ञान के स्वपर्याय भी अनन्त हैं, क्योंकि उसके भवप्रत्यय और गुणप्रत्यय (क्षायोपशमिक), इन दो भेदों के कारण, उनके स्वामी देव और नारक तथा मनुष्य और तिर्यञ्च के, असंख्येय क्षेत्र और काल के भेद से, अनन्त द्रव्य-पर्याय के भेद से एवं केवलज्ञान द्वारा उसके अनन्त अंश होने से अवधिज्ञान के अनन्त भेद होते हैं।

इसी प्रकार इन्हीं कारणों से अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान व केवलज्ञान के भी अनन्त स्वपर्याय एवं पर-पर्याय होते हैं।

॥ अष्टम शतक : द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—In these seven aphorisms the sub-categories (*paryaya*) of knowledge (*jnana*) and there comparative details have been discussed.

Paryaya (sub-categories)—Qualitative categorization of different states or modes is called *paryaya*. This is of two types—(1) *Sva-paryaya* (own modes) and (2) *Par-paryaya* (relative modes). Due to unpredictable influence of destruction-cum-pacification (*kshayopasham*) of *karmas* there are infinite sub-categories of *Mati-jnana* including *avagraha* (acquisition of cursory knowledge). These are called *Sva-paryaya* (own modes). As the number of knowable things is infinite there are infinite modes with respect to these things. Also if *Mati-jnana* is divided and sub-divided with the help of *Keval-jnana* (omniscience) the number would be infinite. There are infinite modes of things or states other than *Mati-jnana*. These are useful in a comparative study of *Mati-jnana* to know all there is to know about *Mati-jnana*. From this angle they are called *par-paryaya* (relative modes) of *Mati-jnana*. *Shrut-jnana* also has

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

infinite *sva-paryayas* and *par-paryayas*. Due to unpredictable influence of destruction-cum-pacification (*kshayopasham*) of *karmas* there are infinite sub-categories of Shrut-jnana including *Akshar-shrut* (literal or vocal knowledge) and *anakshar* (non-vocal or non-literal knowledge). These are *sva-paryayas* of *Shrut-jnana* and are infinite. As the number of knowable things is infinite there are infinite modes of *Shrut-jnana* with respect to these things. Also if *Shrut-jnana* is divided and sub-divided with the help of *Keval-jnana* the number would be infinite. There are infinite modes of things or states other than *Shrut-jnana*; they are called *par-paryaya* (relative modes) of *Shrut-jnana*.

In the same way there are infinite *sva-paryayas* and *par-paryaya* of *avadhi-jnana*, *manah-paryav-jnana*, *Keval-jnana* also.

● END OF THE SECOND LESSON OF THE EIGHTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तइओ उद्देसओ : 'रुक्खा'

अष्टम शतक : तृतीय उद्देशक : वृक्ष

EIGHTH SHATAK (Chapter Eight) : THIRD LESSON : VRIKSHA (TREE)

विविध जाति के वृक्षों का निरूपण TREES OF VARIOUS SPECIES

१. [प्र.] कइविहा णं भंते ! रुक्खा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तिविहा रुक्खा पण्णत्ता, तं जहा–संखेज्जजीविया, असंखेज्जजीविया, अणंतजीविया।

१. [प्र.] भगवन् ! वृक्ष कितने प्रकार के कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! वृक्ष तीन प्रकार के कहे हैं–(१) संख्यात जीव वाले, (२) असंख्यात जीव वाले और (३) अनन्त जीव वाले।

1. [Q.] *Bhante* ! How many types of trees are there ?

[Ans.] Gautam ! Trees are said to be of three types—(1) having a countable number of *jivas* (souls), (2) having an uncountable number of *jivas* (souls), and (3) having infinite number of *jivas* (souls).

२. [प्र.] से किं तं संखेज्जजीविया ?

[उ.] संखेज्जजीविया अणेगविहा पण्णत्ता, तं जहा–ताले, तमाले, तक्कलि, तेतलि, जहा पण्णवणाए जाव नालिएरी जे यावन्ने तहप्पगारा। से त्तं संखेज्जजीविया।

२. [प्र.] भगवन् ! संख्यात जीव वाले वृक्ष कौन-से हैं ?

[उ.] गौतम ! संख्यात जीव वाले वृक्ष अनेकविध हैं। जैसे–ताड़, तमाल, तक्कलि, तेतलि इत्यादि, प्रज्ञापना सूत्र (पहले पद) में कहे अनुसार यावत् नारिकेल (नारियल) पर्यन्त जानना चाहिए। ये और इनके अतिरिक्त इस प्रकार के जितने भी वृक्ष विशेष हैं, वे सब संख्यात जीव वाले हैं।

2. [Q.] *Bhante* ! Which are the trees having a countable number of *jivas* (souls) ?

[Ans.] Gautam ! Trees having a countable number of *jivas* (souls) are of many types. For example—*Taad* (palm tree), *Tamaal* (an evergreen tree; *Crateva nurvala Buch*), *Takkali* (*Premna Interfolia*), *Tetali* (*Titali; Euphorbia Dracunculoides*)... and so on up to ... *Naarikel* (coconut) as mentioned in the first chapter of *Prajnapana Sutra*. These and all other trees of this type are with countable number of souls.

३. [प्र.] से किं तं असंखेज्जजीविया ?

[उ.] असंखेज्जजीविया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–एगट्ठिया य बहुबीयगा य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. [प्र.] भगवन् ! असंख्यात जीव वाले वृक्ष कौन-से हैं ?

[उ.] गौतम ! असंख्यात जीव वाले वृक्ष दो प्रकार के हैं। यथा-एकास्थिक (एक गुठलीवाले) और बहुबीजक (बहुत बीजों वाले।)

3. [Q.] *Bhante* ! Which are the trees having uncountable number of *jiva*s (souls) ?

[Ans.] Gautam ! Trees having an uncountable number of *jiva*s (souls) are of two types—those with single seed and those with multiple seeds.

४. [प्र.] से किं तं एगट्ठिया ?

[उ.] एगट्ठिया अणेगविहा पण्णत्ता, तं जहा-निंबंबजंबु एवं जहा पण्णवणापए जाव फला बहुबीयगा। से त्तं बहुबीयगा। से त्तं असंखेज्जजीविया।

४. [प्र.] भगवन् एकास्थिक वृक्ष कौन-से हैं ?

[उ.] गौतम ! एकास्थिक (एक गुठली या बीज वाले) वृक्ष अनेक प्रकार के हैं। जैसे कि-नीम, आम, जामुन आदि। इस प्रकार प्रज्ञापनासूत्र (प्रथम पद) में कहे अनुसार यावत् बहुबीज वाले फलों तक कहना चाहिए। इस प्रकार यह बहुबीजकों का वर्णन हुआ। यह असंख्यात जीव वाले वृक्षों का वर्णन हुआ।

4. [Q.] *Bhante* ! Which are the trees having single seed ?

[Ans.] Gautam ! Trees having single seed are of many types—*Neem* (Margosa; *Melia azadirachta*), *Aam* (mango), *Jamun* (rose-apple; *Eugenia Jambolana*) etc. ... and so on up to ... trees with multiple seeds, as mentioned in the first chapter of *Prajnapana Sutra*. This concludes description of trees with multiple seeds. This concludes description of trees with uncountable souls.

५. [प्र.] से किं तं अणंतजीविया ?

[उ.] अणंतजीविया अणेगविहा पण्णत्ता, तं जहा-आलुए, मूलए, सिंगबेरे एवं जहा सत्तमसए जाव सीउंढी, मुसुंढी, जे यावन्ने तहप्पगारा। से त्तं अणंतजीविया।

५. [प्र.] भगवन् ! अनन्त जीव वाले वृक्ष कौन-से हैं ?

[उ.] गौतम ! अनन्त जीव वाले वृक्ष अनेक प्रकार के हैं। जैसे-आलू, मूला, शृंगबेर (अदरख) आदि। इस प्रकार भगवतीसूत्र के सप्तम शतक के तृतीय उद्देशक में कहे अनुसार, यावत् 'सिउंढी (सोंठ) मुसुंढी तक जानना चाहिए। ये और इनके अतिरिक्त जितने भी इस प्रकार के अन्य वृक्ष है, उन्हें भी (अनन्त जीव वाले) जान लेना चाहिए। यह अनन्त जीव वाले वृक्षों का कथन हुआ।

5. [Q.] *Bhante* ! Which are the trees having infinite number of *jiva*s (souls) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! Trees having infinite number of *jivas* (souls) are of many types—potato, radish, *Shringaber* (ginger) etc. ... and so on up to ... *Simundi* (ginger) as mentioned in the third lesson of the seventh chapter of *Bhagavati Sutra*. These and all other trees of this type are trees having infinite number of *jivas* (souls). This concludes description of trees with infinite number of souls.

विवेचन : **संख्यातजीविक**, जिनमें संख्यात जीव हों। जैसे-ताड़, तमाल, **तेतलि**, तक्कर्ल (अरणी) साल, सारकल्याण, सरल, जाई, (चमेली) केतकी, कदली (केला) तथा चर्मवृक्ष, भूतवृक्ष, हिंगुवृक्ष और लवंगवृक्ष, पूगफली (पूगीफल-सुपारी), खजूर, और नारियल आदि वृक्ष।

असंख्यात जीव वाले मुख्यता दो प्रकार के हैं-**एकास्थिक** और **बहुबीजक**। जिन फलों में एक ही बीज (या गुठली) हो वे एकास्थिक और जिन फलों में बहुत-से बीज हों, वे बहुबीजक-अनेकास्थिक कहलाते हैं। जैसे-**नीम**, आम, जामुन, कोशाम्ब, साल, अंकोल्ल, पीलू, सल्लकी, मालुक, बकुल, पलाश और करंज इत्यादि फल एकास्थिक (एक गुठली) वाले है।

तिन्दुक, कविट्ठ, (कैथ) आम्रातक, (जंगली आम) मातुलुंग (बिजौरा), बेल, आँवला, फणस (कटहल), दाड़िम, अश्वत्थ, उदुम्बर (गूलर) और वट आदि ये बहुबीजक फल हैं।

अनेकजीविक फलदार वृक्षों के भी प्रज्ञापना में कुछ नाम इस प्रकार गिनाए हैं-

एएसिं मूला वि असंखेज्जजीविया, कंदावि, खंधावि, तयावि, सालावि पवालावि, पत्ता पत्तेयजीविया पुप्फा अणेगजीविया फला बहुबीयगा।'' इन (पूर्वोक्त) वृक्षों के मूल भी असंख्यातजीविक हैं। कन्द, स्कन्ध, त्वचा (छाल), शाखा, प्रवाल (नये कोमल पत्ते)। प्रत्येकजीवी हैं, फूल अनेकजीविक हैं, फल बहुबीज वाले हैं। *(वृत्ति पत्रांक ३६४-संलग्न चित्र देखें।)*

Elaboration—Trees with countable souls are—*Taad* (palm tree), *Tamaal* (an evergreen tree; *Crateva nurvala Buch*), *Takkali* (*Premna Interfolia*), *Tetali* (*Titali; Euphorbia Dracunculoides*), *Saal* (*Shorea robusta*), *Saarkalyan* (black catechu; *Acacia Catachu*), *Saral* (*Cheed*; Long leafed Pine); Chir Pine), *Jaai* (Jasmine), *Ketaki* (*Kevada*; Screw Pine), *Kadali* (banana), *Charmavriksha* (*Bhojapatra* tree; Himalayan Silver Birch), *Bhoot-vriksha* (Walnut tree), *Hinguvriksha* (Asafoetida tree), *Lavangvriksha* (clove tree), *Poogaphali* (betel-nut palm), *Khajoor* (date), *Naarikel* (coconut) and others.

Trees with uncountable souls are mainly of two types—*Ekasthik* or having one bone, which means having single carnal or seed, and having multiple seeds. Examples of trees with single seed fruits—*Neem*, mango, rose-apple, *Kosamb* (Ceylo Oak; *Schleichera trijuga*), *Saal* (*Shorea robusta*), *Ankolla* (*Dhela; Alangium Lamarckii thwaites*), *Pilu* (*Salvadora Persica*), *Mochaki* (*Semal*; Silk Cotton tree; *Bombax*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात जीव वाले

ताड़, ताल
The Palmyra Palm

तमाल, वरुन, बरना
(Latin) Crataeva Nurvala Buch

अरणि, तर्कारि, गनियल
(Latin) Premna Interfolia.
Clerodendron Phlomoides

असंख्यात जीव वाले

एकास्थिक

कोशम्ब, कोसम, जंगली आम
Ceylo Oak

बहुबीजक

अम्रातक, अंबाडग
Hogplum, Wild Mango

उम्बर, गुलर, गुल्लर
(Latin) Ficus glomerata,
Fam. Moraceae

माउलिंग,
बिजोरानींबु, तुरंज
Citron

अंकोल, ढेरा, टेरा, ढेला
(Latin) Alangium
Lamarckiithwaites

अनन्त जीव वाले

सिउंढि, सेहुण्ड, थूहर, थोर
Common Milk Hedge

मुसंढी, स्याहमूसली, कालीमूशली
(Latin) Curculigo Orchioides Gaertn

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

malabaricum), *Sallaki* (*Boswellia serrata*), *Maluk* (*Krishna Tulsi; Ocimum Sanctum*), *Bakul* (*Maulashri; Mimusops elengi*), *Palash* (Forest Flame; *Burea frondosakoen*), *Karanj* (Indian Beech; *Pongamia Glabra Vent*) and others.

Examples of trees with multiple seed fruits—*Tinduk* (*Tendu*; *Gaub Persimon; Diospyrosembryopteris*), *Kavittha* (*Kaith*; Wood apple or Elephant apple; *Feronia elephantum*), *Amratak*, *Matulung* (*Bijora*; Citron; *Citrus medica*), *Bel* (*Bilva*; Bengal Quince; *Aegle marmelos corr*), *Anvala* (hog-plum; *Emblica officinalis*), *Phanas* (*Katahal*; Jack fruit; *Artocarpus integrifolia*), *Dadim* (*Anaar*; Pomegranate), *Ashvattha* (*Pipal*; *Ficus religiosa*), *Udumbar* (*Gular*; *Ficus glomerata*), *Vat* (Banyan tree; *Ficus bengalensis*) and others. The roots of the aforesaid trees are also with uncountable souls; the trunks (*kand*), thick branches (*skandh*), barks (*chhaal*), branches (*shakha*), and sprouts (*praval*) are with infinite souls; the flowers (*pushp*) are with numerous souls and fruits (*phal*) are with multiple seeds (*beej*). *(Vritti, leaf 364; see illustration next page)*

जीव प्रदेशों पर शस्त्रादि का स्पर्श TOUCH OF WEAPON ON SOUL-SPACEPOINTS

६. [प्र. १] अह भंते ! कुम्मे कुम्मावलिया, गोहे गोहावलिया, गोणे गोणावलिया, मणुस्से मण्णुस्सावलिया, महिसे महिसावलिया, एएसि णं दुहा वा तिहा वा संखेज्जहा वा छिन्नाणं जे अंतरा ते वि णं तेहिं जीवपदेसेहिं फुडा ?

[उ.] हंता, फुडा।

६. [प्र. १] भगवन् ! कछुआ, कछुओं की श्रेणी (कूर्मावली), गोधा (गोह), गोधा की पंक्ति (गोधावलिका), गाय, गायों की पंक्ति, मनुष्य, मनुष्यों की पंक्ति, भैंसा, भैंसों की पंक्ति, इन सबके दो या तीन अथवा संख्यात खण्ड (टुकड़े) किये जायें तो उनके बीच का भाग क्या जीवप्रदेशों से स्पृष्ट (व्याप्त) होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह (बीच का भाग जीवप्रदेशों से) स्पृष्ट होता है।

6. [1] [Q.] *Bhante* ! A tortoise, a row of tortoises (or other beings of the same species), a lizard, a row of lizards, a cow, a row of cows, a human, a row of humans, a buffalo, a row of buffaloes, if they are cut into two, three or countable pieces then is the intervening space touched by soul-space-points ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It (the intervening space) is touched.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. २] पुरिसे णं भंते ! ते अंतरे हत्थेण वा पादेण वा अंगुलियाए वा, सलागाए वा कट्टेण वा किलिंचेण वा आमुसमाणे वा सम्मुसमाणे वा आलिहमाणे वा विलिहमाणे वा अन्नयरेण वा तिक्खेणं सत्थजाएणं आच्छिंदेमाणे वा विच्छिंदेमाणे वा, अगणिकाएणं वा समोडहमाणे तेसिं जीवपदेसाणं किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पायइ, छविच्छेदं वा करेइ ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं संकमति।

[प्र. २] भगवन् ! कोई पुरुष उन कछुए आदि के खण्डों के बीच के भाग को हाथ से, पैर से, अंगुलि से, शलाका (सलाई) से, काष्ठ से या लकड़ी के छोटे-से टुकड़े से थोड़ा स्पर्श करे, विशेष स्पर्श करे, थोड़ा-सा खींचे या विशेष खींचे या किसी तीक्ष्ण शस्त्रजात (शस्त्रसमूह) से थोड़ा छेदे अथवा विशेष छेदे अथवा अग्निकाय से उसे जलाए तो क्या उन जीवप्रदेशों को थोड़ी या अधिक बाधा (पीड़ा) उत्पन्न कर पाता है अथवा उसके किसी भी अवयव का छेद कर पाता है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है, क्योंकि उन जीवप्रदेशों पर शस्त्र (आदि) का प्रभाव नहीं होता।

6. [2] [Q.] *Bhante* ! Suppose a person touches this intervening space between pieces of tortoise etc., lightly or forcefully, with his hand, foot, finger, needle, wood or a sliver of wood; pulls it lightly or forcefully or pierces it lightly or forcefully with a sharp instrument or burns it with fire; then is he able to cause a little or more pain or pierce any part of it ?

[Ans.] No, Gautam ! That is not correct because weapons (etc.) have no effect on those soul-space-points.

विवेचन : (१) किसी भी जीव के शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर देने पर भी उसके बीच के भाग कुछ काल तक जीवप्रदेशों से स्पृष्ट रहते हैं, तथा (२) कोई भी व्यक्ति जीवप्रदेशों को हाथ आदि से छुए, खींचे या शस्त्रादि से काटे तो उन पर उसका कोई प्रभाव नहीं होता। इससे स्पष्ट है कि मूर्त का अमूर्त जीवप्रदेशों पर बिल्कुल भी प्रभाव नहीं पड़ता है जैसे कि हम देखते हैं कि छिपकली की पूँछ कट जाने पर भी काफी देर तक कटी हुई पूँछ छटपटाती रहती है। उस पूँछ और शरीर के बीच में आत्म प्रदेश होते हैं वहाँ बीच में कैंची चलाने पर भी उन आत्म प्रदेशों पर कोई अन्तर नहीं पड़ता।

Elaboration—(1) Even when the body of a living being is cut to pieces soul-space-points pervade the intervening area for some time. (2) There is no effect of any touch, pull or weapon on soul-space-points.

आठ पृथ्वियों का कथन **EIGHT WORLDS**

७. [प्र.] कइ णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठ पुढवीओ पन्नत्ताओ, तं जहा-रयणप्पभा जाव अहेसत्तमा पुढवी, ईसिपब्भारा।

७. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वियाँ कितनी कही हैं ?

[उ.] गौतम ! पृथ्वियाँ आठ कही हैं। वे इस प्रकार हैं-रत्नप्रभापृथ्वी यावत् अधःसप्तमा (तमस्तमा) पृथ्वी और ईषत्प्राग्भारा (सिद्धशिला)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

7. [Q.] *Bhante* ! How many worlds (*prithvis*) are there ?

[Ans.] Gautam ! There are said to be eight worlds. They are—Ratnaprabha *prithvi* ... and so on up to ... Adhah-saptama (Tamastama) *prithvi* and Ishatpragbhara *prithvi* (Siddhashila).

८. [प्र.] इमा णं भंते ! रयणप्पभापुढवी किं चरिमा, अचरिमा ? चरिमपदं निरवसेसं भाणियव्वं जाव वेमाणिया णं भंते ! फासचरिमेणं किं चरिमा अचरिमा ?

[उ.] गोयमा ! चरिमा वि अचरिमा वि।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति।

॥ अट्ठमसए : तइओ उद्देसओ समत्तो ॥

८. [प्र.] भगवन् ! क्या यह रत्नप्रभापृथ्वी चरम (प्रान्तवर्ती–अन्तिम) है अथवा अचरम (मध्यवर्ती) है ?

[उ.] (गौतम !) यहाँ प्रज्ञापनासूत्र का समग्र चरमपद (१०वाँ) कहना चाहिए; यावत्- (प्र.) भगवन् ! वैमानिक स्पर्शचरम से क्या चरम हैं, अथवा अचरम हैं ?

(उ.) गौतम ! वे चरम भी हैं और अचरम भी हैं। (यहाँ तक कहना चाहिए।)

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; (यों कहकर भगवान गौतम यावत् विचरण करते हैं।)

8. [Q.] *Bhante* ! Is this Ratnaprabha *prithvi* the extreme (last) one or is it non-extreme (middle) one ?

[Ans.] Gautam ! It is last as well as middle. (As in *Prajnapana Sutra*)

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : चरम का अर्थ यहाँ प्रान्त या पर्यन्तवर्ती (अन्तिम सिरे पर रहा हुआ) है। यह अन्तवर्तित्व अन्य द्रव्य की अपेक्षा से समझना चाहिए। जैसे–पूर्वशरीर की अपेक्षा से चरमशरीर कहा जाता है। अचरम का अर्थ है–अप्रान्त यानी मध्यवर्ती। यह भी आपेक्षिक है। जैसे कि कहा जाता है–अन्यद्रव्य की अपेक्षा यह अचरम द्रव्य है अथवा अन्तिम शरीर की अपेक्षा यह मध्य शरीर है। *(विस्तृत वर्णन प्रज्ञापना पद १० से जानें)*

॥ अष्टम शतक : तृतीय उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Here the term *charam* does not mean absolutely extreme or the last one, it is used in relative context or relative to something. In the same way *acharam* does not mean absolutely non-extreme. It is also relative to something. Relative to hells it is the extreme but relative to a larger group of other areas in space it is non-extreme. *(For detailed description refer to Chapter 10 of Prajnapana Sutra)*

● END OF THE THIRD LESSON OF THE EIGHTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चउत्थो उद्देसओ : 'किरिया'
अष्टम शतक : चतुर्थ उद्देशक : क्रिया
EIGHTH SHATAK (Chapter Eight) : FOURTH LESSON : KRIYA (ACTIVITY)

पाँच क्रियाएँ FIVE ACTIVITIES (KRIYAS)

१. [प्र.] रायगिहे जाव एवं वयासी–कति णं भंते ! किरियाओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! पंच किरियाओ पण्णत्ताओ, तं जहा–काइया, अहिगरणिया, एवं किरियापदं निरवसेसं भाणियव्वं जाव मायावत्तियाओ किरियाओ विसेसाहियाओ।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति।

॥ अट्ठमसए : चउत्थो उद्देसओ समत्तो ॥

१. [प्र.] राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा–हे भगवन् ! क्रियाएँ कितनी कही हैं ?

[उ.] गौतम ! क्रियाएँ पाँच कही हैं। वे इस प्रकार हैं–

(१) कायिकी, (२) आधिकरणिकी, (३) प्राद्वेषिकी, (४) पारितापनिकी, और (५) प्राणातिपातिकी।

यहाँ प्रज्ञापनासूत्र का (बाईसवाँ) समग्र क्रियापद कहना चाहिए; यावत् 'मायाप्रत्ययिकी क्रियाएँ विशेषाधिक हैं;'–यहाँ तक कहना चाहिए।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरण करने लगे।

1. [Q.] *Bhante* ! How many kinds of activities (*kriyas*) are there ?

[Ans.] Gautam ! Activities are said to be of five kinds. They are as follows—

(1) *Kayiki*, (2) *Aadhikaraniki*, (3) *Pradveshiki*, (4) *Paritapaniki* and (5) *Pranatipatiki*.

Here the whole twenty-second chapter of *Prajnapana Sutra* should be quoted up to "*Mayapratyayiki kriyas* are much more."

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : कर्मबन्ध की कारणभूत चेष्टा–अथवा प्रवृत्ति को क्रिया कहा गया है।

क्रियाओं का स्वरूप और प्रकार–कायिकी क्रिया के दो प्रकार हैं–१. अनुपरतकायिकी– (हिंसादि सावद्ययोग से देशतः या सर्वतः अनिवृत्त–अविरत जीवों को लगने वाली), और २. **दुष्प्रयुक्तकायिकी–** (कायादि के दुष्प्रयोग से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 6

Illustration No. 6

पाँच क्रियाएँ

कर्मबन्ध की कारणभूत चेष्टा को अथवा दुष्ट व्यापार विशेष को '**क्रिया**' कहते हैं। यहाँ पाँच प्रकार की क्रियाओं का वर्णन किया गया है—

1. **कायिकी क्रिया**—काया संबधी क्रिया कायिकी क्रिया कहलाती है। जैसे किसी के साथ टकराकर उसे गिराना इत्यादि।

2. **आधिकरणिकी क्रिया**—जिसके द्वारा आत्मा नरक आदि दुर्गति का अधिकारी होता है। उस पाप के साधनों—खड्ग, चाकू, बंदूक इत्यादि का अनुष्ठान-विशेष अधिकरण कहलाता है। आधिकरणिकी क्रिया दो प्रकार की होती है—**संयोजनाधिकरणिकी**—पहले से बने हुए अस्त्र-शस्त्र आदि हिंसा के साधनों को एकत्रित कर तैयार रखना। **निर्वर्त्तनाधिकरणिकी**—नवीन अस्त्र शस्त्रादि बनवाना।

3. **प्राद्वेषिकी क्रिया**—यह क्रिया क्रोध के आवेश में होती है। यह दो प्रकार की है—

   1. **जीव प्राद्वेषिकी**—जीव पर क्रोध करने से होने वाली क्रिया। जैसे बच्चे पर क्रोध करती स्त्री।

   2. **अजीव प्राद्वेषिकी**—अजीव सम्बन्धी क्रोध से होने वाली क्रिया। जैसे पत्थर से ठोकर खाकर उस पर क्रोध करता व्यक्ति।

4. **पारितापनिकी क्रिया**—'**स्व**' को, '**पर**' को अथवा '**उभय**' को परिताप उपजाना, दुःख देना।

5. **प्राणातिपातिकी क्रिया**—अपने आपको, दूसरों को अथवा स्वयं और पर दोनों को प्राणों से रहित करना।

—शतक 8, उ. 4, सूत्र 1

FIVE ACTIVITIES

The word *kriya* or activity has been used specifically for sinful activity leading to *karmic* bondage. Here five kinds of activity are described –

1. Kayiki kriya (bodily or physical activity) – An and all activities of the body is called *Kayiki kriya.* For example to collide with someone and topple him.

2. Aadhikaraniki kriya (activity involving tools or weapons) - Adhikaran means the tools or instruments the use of which leads to miserable consequences like a rebirth in hell, such as sword, knife, gun etc. This activity is of two types — ***Samyojan-aadhikaranik-kriya*** – act of assembling weapon with already made components, and 2. ***Nirvartan-aadhikaranik-kriya*** – act of making weapons from scratch.

3. Pradveshiki kriya — hostile action, towards self and others.

4. Paritapaniki — punitive action of inflicting punishment and pain on self and others.

5. Pranatipatiki — act of harming or destroying life of self and others.

— Shatak-8, lesson-4, Sutra-1

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रमत्तसंयत को लगने वाली क्रिया)। आधिकरणिकी के दो भेद-१. संयोजनाधिकरणिकी-(पहले से बने हुए अस्त्र-शस्त्रादि हिंसा के साधनों को एकत्रित कर तैयार रखना), तथा २. निर्वर्तनाधिकरणिकी-(नये अस्त्र-शस्त्रादि बनाना)। ३. प्राद्वेषिकी-(स्वयं का, दूसरों का, उभय का अशुभ-द्वेषयुक्त चिन्तन करना), ४. पारितापनिकी-(स्व, पर और उभय को परिताप उत्पन्न करना) और ५. प्राणातिपातिकी-(अपने आपके, दूसरों के या उभय के प्राणों का नाश करना)। *(क्रिया का स्वरूप समझने के लिए चित्र देखें।)*

॥ अष्टम शतक : चतुर्थ उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Here the word *kriya* has been used specifically for inclination or activity leading to *karmic* bondage.

Brief description of some *kriyas*—*Kayiki kriya* (bodily or physical activity) is of two types—1. *Anuparat-kaaya-kriya* (physical activity of a person who has not resolved to abstain from sinful activities) and 2. *Dushprayukata-kaaya-kriya* (physical activity of a pervert ascetic with sensual and mental cravings). *Aadhikaraniki kriya* (activity involving tools or weapons) is of two types—1. *Samyojan-aadhikaranik-kriya* (the act of assembling weapon with already made components) and 2. *Nirvartan-aadhikaranik-kriya* (act of making weapons from scratch). *Pradveshiki*—hostile action, towards self and others, inspired by feelings of anger, aversion and malice. *Paritapaniki*—punitive action of inflicting punishment and pain on self and others. *Pranatipatiki*—act of harming or destroying life of self and others. *(Refer to the illustration)*

● END OF THE FOURTH LESSON OF THE EIGHTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचमो उद्देसओ : 'आजीव'

अष्टम शतक : पंचम उद्देशक : आजीव

EIGHTH SHATAK (Chapter Eight) : FIFTH LESSON : AAJIVA (AJIVAKS)

श्रावक के भाण्ड विषयक जिज्ञासा INQUIRY ABOUT BELONGINGS OF A SHRAVAK

१. रायगिहे जाव एवं वयासी–(प्र.) आजीवया णं भंते ! थेरे भगवंते एवं वयासी–समणोवासगस्स णं भंते ! सामाइयकडस्स समणोवस्सए अच्छमाणस्स केइ भंडं अवहरेज्जा, से णं भंते ! तं भंडं अणुगवेसमाणे किं सभंडं अणुगवेसइ ? परायगं भंडं अणुगवेसइ ?

[उ.] **गोयमा ! सभंडं अणुगवेसइ नो परायगं भंडं अणुगवेसइ।**

१. [प्र.] राजगृह नगर के यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार कहा– भगवन् ! आजीविकों (गोशालक के शिष्यों) ने स्थविर भगवन्तों से इस प्रकार पूछा कि कोई श्रावक (श्रमणोपासक) सामायिक करके उपाश्रय में बैठा है। उस श्रावक के भाण्ड–वस्त्र आदि सामान को कोई चुराकर ले जाये, (और सामायिक पूर्ण होने पर उसे पार कर) वह उस भाण्ड–वस्त्रादि सामान का अन्वेषण करे तो क्या वह (श्रावक) अपने सामान का अन्वेषण करता है या पराये (दूसरों के) सामान का अन्वेषण करता है ?

[उ.] गौतम ! वह (श्रावक) अपने ही सामान (भाण्ड) का अन्वेषण करता है, पराये सामान का अन्वेषण नहीं करता।

1. [Q.] In Rajagriha and so on up to... (Gautam Swami) submitted as follows—*Bhante* ! The Ajivaks (followers of Goshalak) inquired from the senior ascetics (*sthavirs*) that suppose a *shravak* (a lay follower) is sitting in an ascetic-lodge (*upashraya*) performing *Samayik* (Jain system of periodic meditation performed in slots of 45 minutes). At that time his belongings including bowls and dress are stolen by someone. If (after concluding his *Samayik*) he searches his stolen belongings then does he search for his own belongings or those belonging to others ?

[Ans.] Gautam ! He searches his own belongings and not those belonging to others.

२. [प्र. १] तस्स णं भंते ! तेहिं सीलव्वय–गुण–वेरमण–पच्चक्खाण–पोसहोववासेहिं से भंडे अभंडे भवति ?

[उ.] **हंता, भवति।**

२. [प्र. १] भगवन् ! उन शीलव्रत, गुणव्रत, विरमणव्रत, प्रत्याख्यान और पौषधोपवास को स्वीकार किये हुए श्रावक का वह चुराया हुआ सामान (भाण्ड) क्या उसके लिए अभाण्ड हो जाता है ? (अर्थात् सामायिक आदि की अवस्था में क्या वह सामान उसका अपना रह जाता है या नहीं ?)

[उ.] हाँ, गौतम, वह भाण्ड उसके लिए अभाण्ड हो जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

2. [Q. 1] *Bhante* ! Do the belongings so stolen become non-belongings for that *shravak* who has accepted *Sheel-vrats* (instructive or complimentary vows of spiritual discipline), *Gunavrats* (restraints that reinforce the practice of *anuvrats*), *Viraman-vrats* (five minor vows), *Pratyakhyan* (codes of renouncing) and *Paushadhopavas* (partial ascetic vow and fasting). (In other words while performing *Samayik* do his belongings still remain his ?)

[Ans.] Yes, Gautam ! Those belongings become non-belongings for him.

२. [प्र. २] से केणं खाइ णं अट्ठेणं भंते ! एवं बुच्चइ 'सभंडं अणुगवेसइ नो परायगं भंडं अणुगवेसइ' ?

[उ.] गोयमा ! तस्स णं एवं भवति–णो मे हिरण्णे, नो मे सुवण्णे, नो मे कंसे, नो मे दूसे, नो मे विउलधण–कणग–रयण–मणि–मोत्तिय–संख–सिल–प्पवाल–रत्तरयणमाइए संतसारसावएज्जे, ममत्तभावे पुण से अपरिण्णाए भवति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं बुच्चइ–'सभंडं अणुगवेसइ नो परायगं भंडं अणुगवेसइ।

२. [प्र. २] भगवन् ! (जब वह भाण्ड उसके लिए अभाण्ड हो जाता है,) तब आप ऐसा क्यों कहते हैं कि वह श्रावक अपने भाण्ड का अन्वेषण करता है, दूसरे के भाण्ड का अन्वेषण नहीं करता ?

[उ.] गौतम ! सामायिक आदि करने वाले उस श्रावक के मन में ऐसे परिणाम होते हैं, कि हिरण्य (चाँदी) मेरा नहीं है, सुवर्ण मेरा नहीं है, कांस्य (कांसी के बर्तन आदि सामान) मेरा नहीं है, वस्त्र मेरे नहीं हैं तथा विपुल धन, कनक, रत्न, मणि, मोती, शंख, शिला, प्रवाल (मूँगा) एवं रक्तरत्न (पद्मरागादि मणि) इत्यादि विद्यमान सारभूत द्रव्य मेरा नहीं है। किन्तु उसने ममत्वभाव का प्रत्याख्यान नहीं किया है। इसी कारण से, हे गौतम ! मैं ऐसा कहता हूँ कि वह श्रावक अपने भाण्ड का अन्वेषण करता है, दूसरों के भाण्ड (सामान) का अन्वेषण नहीं करता।

2. [Q. 2] *Bhante* ! (When those belongings become non-belongings for him), then why do you say that he searches his own belongings and not those belonging to others ?

[Ans.] Gautam ! That *shravak* performing *Samayik* and other such activities thinks that silver (or things made of it) is not mine, gold is not mine, bronze is not mine, clothes are not mine, and great wealth including gold, gems, beads, pearls, conch-shells, stones, coral as well as precious stones like ruby and other available valuable things are not mine. However he has not renounced the intrinsic fondness (for belonginsgs). That is why, Gautam ! I say that he searches his own belongings and not those belonging to others.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. [प्र.] समणोवासगस्स णं भंते ! सामाइयकडस्स समणोवस्सए अच्छमाणस्स केइ जायं चरेज्जा, से णं भंते ! किं जायं चरइ, अजायं चरइ ?

[उ.] गोयमा ! जायं चरइ, नो अजायं चरइ।

३. [प्र.] भगवन् ! सामायिक करके उपाश्रय में बैठे हुए श्रावक की पत्नी (जाया) के साथ कोई लम्पट पुरुष व्यभिचार करता है, तो क्या वह (व्यभिचारी) जाया (श्रावक की पत्नी) को भोगता है, या अजाया (दूसरे की स्त्री) को भोगता है ?

[उ.] गौतम ! वह (व्यभिचारी पुरुष) उस श्रावक की जाया को भोगता है, अजाया (दूसरे की स्त्री को) नहीं भोगता।

3. [Q.] *Bhante* ! Suppose a *shravak* (a lay follower) is sitting in an ascetic-lodge (*upashraya*) performing *Samayik*. At that time if a rogue violates his wife's modesty then does that rogue enjoy the *shravak*'s wife (*jaaya*) or a woman who is not that *shravak*'s wife (*ajaaya*) ?

[Ans.] Gautam ! He (the rogue) enjoys the *shravak*'s wife (*jaaya*) and not a woman who is not that *shravak*'s wife (*ajaaya*).

४. [प्र. १] तस्स णं भंते ! तेहिं सीलव्वय–गुण–वेरमण–पच्चक्खाण–पोसहोववासेहिं सा जाया अजाया भवइ ?

[उ.] हंता, भवइ।

४. [प्र. १] भगवन् ! शीलव्रत, गुणव्रत, विरमण, प्रत्याख्यान और पौषधोपवास कर लेने से क्या उस श्रावक की वह जाया 'अजाया' हो जाती है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (साधनाकाल में) श्रावक की जाया, अजाया हो जाती है।

4. [Q. 1] *Bhante* ! Does his wife (*jaaya*) become non-wife (*ajaaya*) for a *shravak* who has accepted *sheel-vrats* (instructive or complimentary vows of spiritual discipline), *Gunavrats* (restraints that reinforce the practice of *anuvrats*), *Viraman-vrats* (five minor vows), *Pratyakhyan* (codes of renouncing) and *Paushadhopavas* (partial ascetic vow and fasting). (In other words while performing *Samayik* does his wife still remain his ?)

[Ans.] Yes, Gautam ! His wife becomes non-wife for him.

४. [प्र. २.] से केणं खाइ णं अट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'जायं चरइ, नो अजायं चरइ' ?

[उ.] गोयमा ! तस्स णं एवं भवइ–णो मे माता, णो मे पिता, णो मे भाया, णो मे भगिणी, णो मे भज्जा, णो मे पुत्ता, णो मे धूता, नो मे सुण्हा, पेज्जबंधणे पुण से अव्वोच्छिन्ने भवइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव नो अजायं चरइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. [प्र. २] भगवन् ! (जब शीलव्रतादि-साधनाकाल में श्रावक की जाया 'अजाया' हो जाती है), तब आप ऐसा क्यों कहते हैं कि वह व्यभिचारी पुरुष उसकी जाया को भोगता है, अजाया को नहीं भोगता।

[उ.] गौतम ! शीलव्रतादि को अंगीकार करने वाले उस श्रावक के मन में ऐसे परिणाम होते हैं कि 'माता मेरी नहीं है, पिता मेरे नहीं हैं, भाई मेरा नहीं है, बहन मेरी नहीं है, भार्या मेरी नहीं है, पुत्र मेरा नहीं है, पुत्री मेरी नहीं है, पुत्रवधू (स्नुषा) मेरी नहीं है; किन्तु इन सबके प्रति उसका प्रेम बन्धन टूटा नहीं है। इस कारण, हे गौतम ! मैं कहता हूँ कि वह पुरुष उस श्रावक की जाया को भोगता है, अजाया को नहीं भोगता।

4. [Q. 2] *Bhante* ! (When his wife become non-wife for him,) then why do you say that the rogue enjoys the *shravak*'s wife (*jaaya*) and not a woman who is not that *shravak*'s wife (*ajaaya*) ?

[Ans.] Gautam ! That *shravak* performing *Samayik* and other such activities has ideas that the mother is not mine, the father is not mine, the brother is not mine, the sister is not mine, the wife is not mine, the son is not mine, the daughter is not mine, and the daughter-in-law (*snusha*) is not mine. However the bond of love between him and these relatives has not been broken. That is why, Gautam ! I say that the rogue enjoys the *shravak*'s wife (*jaaya*) and not a woman who is not that *shravak*'s wife (*ajaaya*).

विवेचन : सामायिक, पौषधोपवास आदि अंगीकार किये हुए श्रावक ने यद्यपि वस्त्रादि सामान का त्याग कर दिया है, यहाँ तक कि सोना, चाँदी, धन, घर, दुकान, माता, पिता, स्त्री, पुत्र आदि पदार्थों के प्रति भी उसके मन में यही परिणाम होता है कि ये मेरे नहीं हैं, तथापि उनके प्रति उसके ममत्व का त्याग नहीं हुआ है, उनके प्रति प्रेमबन्धन रहा हुआ है, इसलिए वे वस्त्रादि तथा स्त्री आदि उसके कहलाते हैं। *(वृत्ति, पत्रांक ३६८)*

Elaboration—A *shravak* accepts the *Samayik*, *Paushadhopavas* and other vows and abandons clothes and other belongings to the extent that even for things like gold silver, wealth, house, shop, parents and relatives he thinks that they do not belong to him. However, as he has not yet been able to renounce his fondness and love for them, these things are considered to be belonging to him. *(Vritti, leaf 368)*

श्रावक व्रतों के उनचास भांगे FORTY NINE SUB-DIVISIONS OF HOUSEHOLDER'S VOWS

५. [प्र. १] समणोवासगस्स णं भंते ! पुव्वामेव थूलए पाणाइवाए अपच्चक्खाए भवइ, से णं भंते ! पच्छा पच्चाइक्खमाणे किं करेइ ?

[उ.] गोयमा ! तीयं पडिक्कमइ, पडुप्पन्नं संवरेइ, अणागयं पच्चक्खाइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. [प्र. १] भगवन् ! जिस श्रमणोपासक ने (पहले) स्थूल प्राणातिपात का प्रत्याख्यान नहीं किया, वह पीछे उसका प्रत्याख्यान करता हुआ क्या करता है ?

[उ.] गौतम ! अतीतकाल में किये हुए प्राणातिपात का प्रतिक्रमण करता है (उक्त पाप की निन्दा, गर्हा, आलोचनादि करके उससे निवृत्त होता है) तथा वर्तमानकालीन प्राणातिपात का संवर (निरोध) करता है, एवं अनागत (भविष्यत्कालीन) प्राणातिपात का प्रत्याख्यान करता (उसे न करने की प्रतिज्ञा लेता) है।

5. [Q. 1] *Bhante* ! If a *shravak* has not initially renounced killing of gross living beings what does he do when he renounces the same later ?

[Ans.] Gautam ! He atones for any killing he did in the past (he gets rid of the sin by condemning, censuring, and criticizing it), refrains from killing in the present and renounces killing (takes a vow not to kill) in the future.

५. [प्र. २] **तीयं पडिक्कममाणे किं तिविहं तिविहेणं पडिक्कमति १, तिविहं दुविहेणं पडिक्कमति २, तिविहं एगविहेणं पडिक्कमति ३, दुविहं तिविहेणं पडिक्कमति ४, दुविहं दुविहेणं पडिक्कमति ५, दुविहं एगविहेणं पडिक्कमति ६, एगविहं तिविहेणं पडिक्कमति ७, एगविहं दुविहेणं पडिक्कमति ८, एगविहं एगविहेणं पडिक्कमति ९ ?**

[उ.] **गोयमा ! तिविहं वा तिविहेणं पडिक्कमति, तिविहं वा दुविहेणं पडिक्कमति तं चेव जाव एगविहं वा एगविहेणं पडिक्कमति।**

तिविहं वा तिविहेणं पडिक्कममाणे न करेति, न कारवेति, करेंतं णाणुजाणति, मणसा वयसा कायसा १;

तिविहं दुविहेणं पडिक्कममाणे न करेति, न कारवेति, करेंतं णाणुजाणति, मणसा वयसा २; अहवा न करेति, न कारवेति, करेंतं णाणुजाणति, मणसा कायसा ३; अहवा न करेइ, न कारवेति, करेंतं णाणुजाणति, वयसा कायसा ४।

तिविहं एगविहेणं पडिक्कममाणे न करेति, न कारवेति, करेंतं णाणुजाणति, मणसा ५; अहवा न करेइ, न कारवेति, करेंतं णाणुजाणति, वयसा ६; अहवा न करेति, न कारवेति, करेंतं णाणुजाणति, कायसा ७।

दुविहं तिविहेणं पडिक्कममाणे न करेइ, न कारवेति, मणसा वयसा कायसा ८; अहवा न करेति, करेंतं णाणुजाणइ, मणसा वयसा कायसा ९; अहवा न कारवेइ, करेंतं णाणुजाणइ; मणसा वयसा कायसा १०।

दुविहं दुविहेणं पडिक्कममाणे न करेति न कारवेति, मणसा वयसा ११; अहवा न करेति, न कारवेति, मणसा कायसा १२; अहवा न करेति, न कारवेति, वयसा कायसा १३; अहवा न करेति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

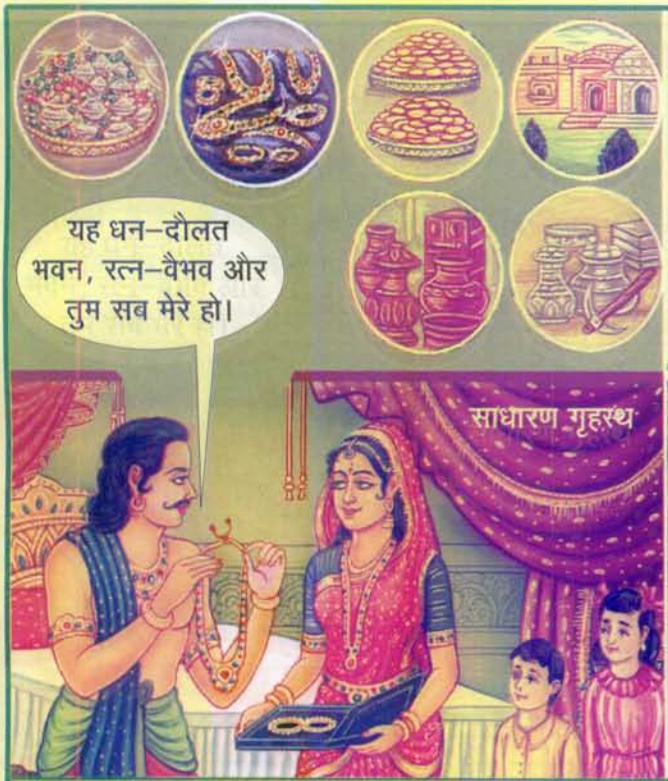

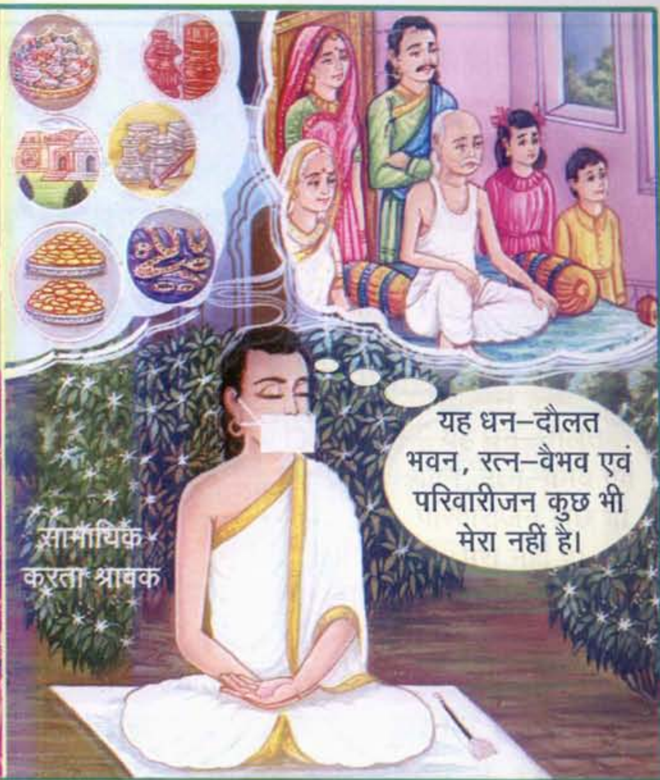

श्रावक के 49 भंग

एक करण एक योग से प्रत्याख्यान करना

करूँ नहीं	करूँ नहीं	करूँ नहीं	कराऊँ नहीं	कराऊँ नहीं	कराऊँ नहीं	अनुमोदूँ नहीं	अनुमोदूँ नहीं	अनुमोदूँ नहीं
मन से	वचन से	काया से	मन से	वचन से	काया से	मन से	वचन से	काया से

एक करण दो योग से प्रत्याख्यान करना

करूँ नहीं	करूँ नहीं	करूँ नहीं	कराऊँ नहीं	कराऊँ नहीं	कराऊँ नहीं	अनुमोदूँ नहीं	अनुमोदूँ नहीं	अनुमोदूँ नहीं
मन, वचन	मन, काया	वचन, काया	मन, वचन	मन, काया	वचन, काया	मन, वचन	मन, काया	वचन, काया

एक करण तीन योग से प्रत्याख्यान करना

करूँ नहीं	कराऊँ नहीं	अनुमोदूँ नहीं
मन, वचन, काया	मन, वचन, काया	मन, वचन, काया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 4

Illustration No. 4

1. श्रावक व्रत के 49 विकल्प (भंग)

श्रावक जो परिग्रह रखता है—धन, सम्पदा, रत्न, वैभव, हिरण्य, सुवर्ण, रुपया, पैसा, स्त्री, पुत्र, पशु इत्यादि, वे सब उसके अपने स्वामित्व में होने के कारण उसके परिग्रह कहलाते हैं। परन्तु जब वह सामायिक ग्रहण करता है, उस अवस्था में वे सब परिग्रह उसके नहीं कहलाते हैं। यहाँ तक कि **"जाया अजाया भवई!"** पत्नी भी अपत्नी बन जाती है क्योंकि वह सामायिक अवस्था में ६ कोटि से प्रत्याख्यान करता है। सामायिक पूर्ण होने के पश्चात् वही सब परिग्रह उसके कहलाते हैं।

श्रावक व्रत के 49 विकल्प (भंग) कहे गये हैं, अर्थात् वह 49 में से किसी भी एक विकल्प से वह व्रतों का पालन कर सकता है। यह विकल्प करण और योगों के अलग-अलग संयोगों से बनते हैं। **करण** अर्थात् **करना, कराना** तथा **अनुमोदन** करना। **योग** अर्थात् **मन, वचन** और **काया**।

एक करण और एक योग से प्रत्याख्यान करने के 9 विकल्प (भंग) होते हैं।

एक करण और दो योग से प्रत्याख्यान करने के भी 9 विकल्प (भंग) होते हैं।

एक करण और तीन योग से प्रत्याख्यान करने के 3 विकल्प (भंग) होते हैं।

—शतक 8, उ. 4, सूत्र 4-5

1. FORTY-NINE OPTIONS OF SHRAVAK-VOWS

As a shravak (householder) owns things like money, wealth, gems, opulence, silver, gold, wife, son, cattle etc. they are called his possessions. But when he proceeds to do Samayik all those things are not called his possessions for that period. So much so that even his wife does not remain his wife. This is because in the state of Samayik he renounces six ways. At the conclusion of Samayik he regains those possessions.

There are said to be 49 options of Shravak vows. This means he can choose any of the 49 options while observing the vows. These options are defined by the combination of *karan*s or methods and *yoga*s or means. Karan includes doing, getting done, and approving the action. Yoga includes through mind, speech and body.

There are 9 options of renouncing by one karan and one yoga.

There are 9 options of renouncing by one karan and two yogas.

There are 3 options of renouncing by one karan and three yogas.

Shatak-8, lesson-4, Sutra-4-5

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करेंतं णाणुजाणइ, मणसा वयसा १४; अहवा न करेति, करेंतं णाणुजाणइ, मणसा कायसा १५; अहवा न करेति, करेंतं णाणुजाणति, वयसा कायसा १६; अहवा न कारवेति, करेंतं णाणुजाणति, मणसा वयसा १७; अहवा न कारवेइ, करेंतं णाणुजाणइ, मणसा कायसा १८; अहवा न कारवेति, करेंतं नाणुजाणइ वयसा कायसा १९।

दुविहं एगविहेणं पडिक्कममाणे न करेति, न कारवेति, मणसा २०; अहवा न करेति, न कारवेति, वयसा २१; अहवा न करेति, न कारवेति, कायसा २२; अहवा न करेति, करेंतं णाणुजाणइ, मणसा २३; अहवा न करेइ, करेंतं णाणुजाणति, वयसा २४; अहवा न करेइ, करेंतं णाणुजाणइ, कायसा २५; अहवा न कारवेइ, करेंतं णाणुजाणइ, मणसा २६; अहवा न कारवेइ, करेंतं णाणुजाणइ, वयसा २७; अहवा न कारवेइ, करेंतं णाणुजाणइ, कायसा २८।

एगविहं तिविहेणं पडिक्कममाणे न करेति, मणसा वयसा कायसा २९; अहवा न कारवेइ मणसा वयसा कायसा ३०; अहवा करेंतं णाणुजाणति, मणसा वयसा कायसा ३१।

एगविहं दुविहेणं पडिक्कममाणे न करेति मणसा वयसा ३२; अहवा न करेति मणसा कायसा ३३; अहवा न करेइ वयसा कायसा ३४; अहवा न कारवेति मणसा वयसा ३५; अहवा न कारवेति मणसा कायसा ३६; अहवा न कारवेइ वयसा कायसा ३७; अहवा करेंतं णाणुजाणति मणसा वयसा ३८; अहवा करेंतं णाणुजाणति मणसा, कायसा ३९; अहवा करेंतं णाणुजाणइ वयसा कायसा ४०।

एगविहं एगविहेणं पडिक्कममाणे न करेति मणसा ४१; अहवा न करेति वयसा ४२; अहवा न करेति कायसा ४३; अहवा न कारवेति मणसा ४४; अहवा न कारवेति वयसा ४५; अहवा न कारवेइ कायसा ४६; अहवा करेंतं णाणुजाणइ मणसा ४७; अहवा करेंतं णाणुजाणति वयसा ४८; अहवा करेंतं णाणुजाणइ कायसा ४९।

५. [प्र. २] भगवन् ! अतीतकाल में किये हुए प्राणातिपात आदि का प्रतिक्रमण करता हुआ श्रमणोपासक, क्या १. त्रिविध-त्रिविध (तीन करण, तीन योग से), २. त्रिविध–द्विविध (तीन करण, दो योग से), ३. त्रिविध–एकविध (तीन करण, एक योग से), ४. द्विविध--त्रिविध (दो करण, तीन योग से), ५. द्विविध-द्विविध (दो करण, दो योग से), (६) द्विविध--एकविध (दो करण, एक योग से), ७. एकविध- त्रिविध (एक करण, तीन योग से), ८. एकविध–द्विविध (एक करण, दो योग से), अथवा ९. एकविध–एकविध (एक करण, एक योग से) प्रतिक्रमण करता है ?

[उ.] गौतम ! वह त्रिविध–त्रिविध प्रतिक्रमण करता है, अथवा त्रिविध–द्विविध प्रतिक्रमण करता है, अथवा यावत् एकविध- एकविध प्रतिक्रमण करता है।

१. जब वह त्रिविध–त्रिविध प्रतिक्रमण करता है, तब स्वयं करता नहीं, दूसरे से करवाता नहीं और करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन से, वचन से और काया से।

२. जब त्रिविध–द्विविध प्रतिक्रमण करता है, तब स्वयं करता नहीं, दूसरे से करवाता नहीं और करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन से और वचन से; ३. अथवा वह स्वयं करता नहीं, कराता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं और अनुमोदन करता नहीं, मन से और काया से; ४. या वह स्वयं करता नहीं, दूसरे से करवाता नहीं और अनुमोदन करता नहीं, वचन से और काया से।

५. जब **त्रिविध-एकविध** प्रतिक्रमण करता है, तब स्वयं नहीं करता, न दूसरे से करवाता है और न करते हुए का अनुमोदन करता है, मन से; अथवा ६. स्वयं नहीं करता, दूसरे से नहीं करवाता और करते हुए का अनुमोदन नहीं करता, वचन से; अथवा ७. स्वयं नहीं करता, दूसरे से नहीं खाता और करते हुए का अनुमोदन नहीं करता है, काया से।

८. जब **द्विविध-त्रिविध** प्रतिक्रमण करता है, तब स्वयं करता नहीं, दूसरों से करवाता नहीं, मन, वचन और काया से; अथवा ९. स्वयं करता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन, वचन और काया से; अथवा १०. दूसरों से करवाता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन, वचन और काया से।

११. जब **द्विविध-द्विविध** प्रतिक्रमण करता है, तब स्वयं नहीं करता, दूसरों से करवाता नहीं, मन और वचन से; अथवा १२. स्वयं करता नहीं, दूसरों से करवाता नहीं, मन और काया से; अथवा १३. स्वयं करता नहीं, दूसरों से करवाता नहीं, वचन और काया से; अथवा १४. स्वयं करता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन और वचन से; अथवा १५. स्वयं करता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन और काया से; अथवा १६. स्वयं करता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, वचन और काया से; अथवा १७. दूसरों से करवाता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन और वचन से, अथवा १८. दूसरों से करवाता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन और काया से; अथवा १९. दूसरों से करवाता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, वचन और काया से।

२०. जब **द्विविध-एकविध** प्रतिक्रमण करता है, तब स्वयं करता नहीं, दूसरों से करवाता नहीं, मन से; अथवा २१. स्वयं करता नहीं, दूसरों से करवाता नहीं, वचन से; अथवा २२. स्वयं करता नहीं, दूसरों से करवाता नहीं, काया से; अथवा २३. स्वयं करता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन से; अथवा २४. स्वयं करता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, वचन से; अथवा २५. स्वयं करता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, काया से; अथवा २६. दूसरों से करवाता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन से; अथवा २७. दूसरों से करवाता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, वचन से; अथवा २८. दूसरों से करवाता नहीं, करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, काया से।

२९. जब **एकविध-त्रिविध** प्रतिक्रमण करता है, तब स्वयं करता नहीं, मन, वचन और काया से; अथवा ३०. दूसरों से करवाता नहीं, मन, वचन और काया से; अथवा ३१. करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन, वचन और काया से।

३२. जब **एकविध-द्विविध** प्रतिक्रमण करता है, तब स्वयं करता नहीं, मन और वचन से; अथवा ३३. स्वयं करता नहीं, मन और काया से; अथवा ३४. स्वयं करता नहीं, वचन और काया से; अथवा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो करण एक योग से प्रत्याख्यान करना

दो करण दो योग से प्रत्याख्यान करना

दो करण तीन योग से प्रत्याख्यान करना

तीन करण एक योग से प्रत्याख्यान करना

तीन करण दो योग से प्रत्याख्यान करना

तीन करण तीन योग से प्रत्याख्यान करना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 5

Illustration No. 5

2. श्रावक व्रत के 49 विकल्प (भंग)

दो करण और एक योग से प्रत्याख्यान करने के 9 विकल्प (भंग) होते हैं।

दो करण और दो योग से प्रत्याख्यान करने के 9 विकल्प (भंग) होते हैं।

दो करण और तीन योग से प्रत्याख्यान करने के 3 विकल्प (भंग) होते हैं।

तीन करण और एक योग से प्रत्याख्यान करने के 3 विकल्प (भंग) होते हैं।

तीन करण और दो योग से प्रत्याख्यान करने के 3 विकल्प (भंग) होते हैं।

तीन करण और तीन योग से प्रत्याख्यान करने का 1 विकल्प (भंग) होता है।

तीन करण और तीन योग से नव कोटि का प्रत्याख्यान किया जाता है। संथारा करते समय अथवा ग्यारहवीं प्रतिमा अंगीकार करते समय श्रावक इस भंग से प्रत्याख्यान करता है।

—शतक 8, उ. 4, सूत्र 4-5

2. FORTY-NINE OPTIONS OF SHRAVAK-VOWS

There are 9 options of renouncing by two karans and one yoga.

There are 9 options of renouncing by two karans and two yogas.

There are 3 options of renouncing by two karans and three yogas.

There are 3 options of renouncing by three karans and one yoga.

There are 3 options of renouncing by three karans and two yogas.

There is 1 option of renouncing by three karans and three yogas.

Renouncing by three karans and three yogas includes all the nines ways of renouncing. A shravak uses this option either at the time of taking the ultimate vow (Santhara) or when he accepts the eleventh Pratima (special austerity).

— Shatak-8, lesson-4, Sutra-4-5

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५. दूसरों से करवाता नहीं, मन और वचन से, अथवा ३६. दूसरों से करवाता नहीं, मन और काया से; अथवा ३७. दूसरों से करवाता नहीं, वचन और काया से; अथवा ३८. करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन और वचन से; अथवा ३९. करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, मन और काया से; अथवा ४०. करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, वचन और काया से।

४१. जब एकविध-एकविध प्रतिक्रमण करता है, तब स्वयं करता नहीं, मन से; अथवा ४२. स्वयं करता नहीं, वचन से; अथवा ४३. स्वयं करता नहीं, काया से; अथवा ४४. दूसरों से करवाता नहीं, मन से; अथवा ४५. दूसरों से करवाता नहीं, वचन से; अथवा ४६. दूसरों से करवाता नहीं, काया से; अथवा ४७. करते हुए का अनुमोदन करता नहीं मन से; अथवा ४८. करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, वचन से; अथवा ४९. करते हुए का अनुमोदन करता नहीं, काया से।

5. [Q. 2] *Bhante* ! While doing critical review and atonement (*pratikraman*) for sinful activities, including killing, committed in the past, does a *shravak* do so – (1) three ways (by *karans* or methods) and three ways (by *yogas* or means), (2) three ways and two ways (by three *karans* or methods and two *yogas* or means), (3) three ways and one way (by three methods and one means), (4) two ways and three ways (by two methods and three means), (5) two ways and two ways (by two methods and two means), (6) two ways and one way (by two methods and one means), (7) one way and three ways (by one method and three means), (8) one way and two ways (by one method and two means), or (9) one way and one way (by one method and one means) ?

[Ans.] Gautam ! He may do *pratikraman* three ways (by three methods) and three ways (by three means), or by three methods and two means ... and so on up to ... or by one method and one means.

1. When he does *pratikraman* three ways (by three methods) and three ways (by three means) he does not do, induce others to do and attest others doing (the act of killing) by mind, speech and body.

2. When he does *pratikraman* three ways (by three methods) and two ways (by two means) he does not do, induce others to do and attest others doing (the act of killing) by mind and speech. 3. Or he does not do, induce others to do and attest others doing (the act of killing) by mind and body. 4. Or he does not do, induce others to do and attest others doing (the act of killing) by speech and body.

5. When he does *pratikraman* three ways (by three methods) and one way (by one means) he does not do, induce others to do and attest others doing (the act of killing) by mind. 6. Or he does not do, induce others to

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

do and attest others doing (the act of killing) by speech. 7. Or he does not do, induce others to do and attest others doing (the *act of killing) by body.*

8. When he does *pratikraman* two ways (by two methods) and three ways (by three means) he does not do and induce others to do (the act of killing) by mind, speech and body. 9. Or he does not do and attest others doing (the act of killing) by mind, speech and body. 10. Or he does not induce others to do and attest others doing (the act of killing) by mind, speech and body.

11. When he does *pratikraman* two ways (by two methods) and two ways (by two means) he does not do and induce others to do (the act of killing) by mind and speech. 12. Or he does not do and induce others to do (the act of killing) by mind and body. 13. Or he does not do and induce others to do (the act of killing) by speech and body. 14. Or he does not do and attest others doing (the act of killing) by mind and speech. 15. Or he does not do and attest others doing (the act of killing) by mind and body. 16. Or he does not do and attest others doing (the act of killing) by speech and body. 17. Or he does not induce others to do and attest others doing (the act of killing) by mind and speech. 15. Or he does not induce others to do an d attest others doing (the act of killing) by mind and body. 16. Or he does not induce others to do and attest others doing (the act of killing) by speech and body.

20. When he does *pratikraman* two ways (by two methods) and one way (by one means) he does not do and induce others to do (the act of killing) by mind. 21. Or he does not do and induce others to do (the act of killing) by speech. 22. Or he does not do and induce others to do (the act of killing) by body. 23. Or he does not do and attest others doing (the act of killing) by mind. 24. Or he does not do and attest others doing (the act of killing) by speech. 25. Or he does not do and attest others doing (the act of killing) by body. 26. Or he does not induce others to do and attest others doing (the act of killing) by mind. 27. Or he does not induce others to do and attest others doing (the act of killing) by speech. 28. Or he does not induce others to do and attest others doing (the act of killing) by body.

29. When he does *pratikraman* one way (by one method) and three ways (by three means) he does not do (the act of killing) by mind, speech and body. 30. Or he does not induce others to do (the act of killing) by mind, speech and body. 31. Or he does not attest others doing (the act of killing) by mind, speech and body.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

32. When he does *pratikraman* one way (by one method) and two ways (by two means) he does not do (the act of killing) by mind and speech. 33. Or he does not do (the act of killing) by mind and body. 34. Or he does not do (the act of killing) by speech and body. 35. Or he does not induce others to do (the act of killing) by mind and speech. 36. Or he does not induce others to do (the act of killing) by mind and body. 37. Or he does not induce others to do (the act of killing) by speech and body. 38. Or he does not attest others doing (the act of killing) by mind and speech. 39. Or he does not attest others doing (the act of killing) by mind and body. 40. Or he does not attest others doing (the act of killing) by speech and body.

41. When he does *pratikraman* one way (by one method) and one way (by one means) he does not do (the act of killing) by mind. 42. Or he does not do (the act of killing) by speech. 43. Or he does not do (the act of killing) by body. 44. Or he does not induce others to do (the act of killing) by mind. 45. Or he does not induce others to do (the act of killing) by speech. 46. Or he does not induce others to do (the act of killing) by body. 47. Or he does not attest others doing (the act of killing) by mind. 48. Or he does not attest others doing (the act of killing) by speech. 49. Or he does not attest others doing (the act of killing) by body.

५. [प्र. ३] पडुप्पन्नं संवरमाणे किं तिविहं तिविहेणं संवरेइ ?

[उ.] एवं जहा पडिक्कममाणेणं एगूणपण्णं भंगा भणिया एवं संवरमाणेण वि एगूणपण्णं भंगा भाणियव्वा।

५. [प्र. ३] (भगवन् !) प्रत्युत्पन्न (वर्तमानकाल का) संवर करता हुआ श्रावक क्या त्रिविध-त्रिविध संवर करता है ? इत्यादि समग्र प्रश्न।

[उ.] गौतम ! (प्रत्युत्पन्न का संवर करते हुए श्रावक के) पहले कहे अनुसार (त्रिविध-त्रिविध से लेकर एकविध-एकविध तक) उनचास (४९) भंग (जो प्रतिक्रमण के विषय में कहे गये हैं, वे ही) संवर के विषय में कहने चाहिए।

5. [Q. 3] *Bhante* ! While refraining from killing in the present (*samvar*), does a *shravak* do so three ways (by *karans* or methods) and three ways (by *yogas* or means) ? And all aforesaid questions.

[Ans.] Gautam ! (For a *shravak* refraining from killing in the present) All the aforesaid (in relation to *pratikraman*) 49 alternative combinations (three methods and three means to one method and one means) should be stated here (in relation to *samvar*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. [प्र. ४] अणागतं पच्चक्खमाणे किं तिविहं तिविहेणं पच्चक्खाइ ?

[उ.] एवं ते चेव भंगा एगूणपण्णं भाणियव्वा जाव अहवा करेंतं णाणुजाणइ कायसा।

५. [प्र. ४] भगवन् ! अनागत (भविष्यत्) काल का प्रत्याख्यान करता हुआ श्रावक क्या त्रिविध-त्रिविध प्रत्याख्यान करता है ? (इत्यादि पूर्ववत्। समग्र प्रश्न समझें)।

[उ.] गौतम ! पहले (प्रतिक्रमण के विषय में) कहे अनुसार यहाँ भी उनचास (४९) भंग कहने चाहिए; यावत् 'अथवा करते हुए का अनुमोदन नहीं करता, काया से;'-यहाँ तक कहना चाहिए।

5. [Q. 4] *Bhante* ! While renouncing killing (taking a vow not to kill) in the future does a *shravak* do so three ways (by *karans* or methods) and three ways (by *yogas* or means) ? And all aforesaid questions.

[Ans.] Gautam ! (For a *shravak* renouncing from killing in the future) All the aforesaid (in relation to *pratikraman*) 49 alternative combinations (three methods and three means to one method and one means) ... and so on up to ... 'does not attest others doing (the act of killing) by body.' should be stated here.

६. [प्र.] समणोवासगस्स णं भंते ! पुव्वामेव थूलए मुसावाए अपच्चक्खाए भवइ, से णं भंते ! पच्छा पच्चाइक्खमाणे ?

[उ.] एवं जहा पाणाइवायस्स सीयालं (१४७) भंगसतं भणियं तहा मुसावायस्स वि भाणियव्वं। एवं अदिण्णादाणस्स वि। एवं थूलगस्स मेहुणस्स वि। थूलगस्स परिग्गहस्स वि जाव अहवा करेंतं णाणुजाणइ कायसा।

६. [प्र.] भगवन् ! जिस श्रमणोपासक ने पहले स्थूल मृषावाद का प्रत्याख्यान नहीं किया, किन्तु पीछे वह स्थूल मृषावाद (असत्य) का प्रत्याख्यान करता हुआ क्या करता है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार प्राणातिपात (अतीत के प्रतिक्रमण, वर्तमान के संवर और भविष्य के प्रत्याख्यान; यों त्रिकाल) के विषय में कुल ४९ × ३ = १४७ (एक सौ सैंतालीस) भंग कहे हैं, उसी प्रकार मृषावाद के सम्बन्ध में भी एक सौ सैंतालीस भंग कहने चाहिए। इसी प्रकार स्थूल अदत्तादान के विषय में, स्थूल मैथुन के विषय में एवं स्थूल परिग्रह के विषय में भी पूर्ववत् प्रत्येक के एक सौ सैंतालीस-एक सौ सैंतालीस त्रैकालिक भंग जानना चाहिए; यावत्-'अथवा पाप करते हुए का अनुमोदन नहीं करता, काया से; यहाँ तक कहना चाहिए।

6. [Q.] *Bhante* ! If a *shravak* has not initially renounced gross falsehood (*mrishavaad*) what does he do when he renounces the same later ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Like the 147 alternative combinations (49 of censuring, 49 of refraining and 49 of renouncing) mentioned in context of killing, 147 alternatives should also be stated in context of falsehood (*mrishavaad*). In the same way 147 alternative combinations each should also be mentioned in context of gross stealing (*adattadaan*), gross libido (*maithun*) and gross possession (*parigraha*) up to 'does not attest others doing (the act of killing) by body.'

विवेचन : तीन करण हैं–करना, कराना और अनुमोदन करना, तथा **तीन योग हैं**–मन, वचन और काया। इनके संयोग से विकल्प नौ और भंग उनचास होते हैं। उनका वर्णन किया जा चुका है।

भूतकाल के प्रतिक्रमण, वर्तमानकाल के संवर और भविष्य के लिए प्रत्याख्यान की प्रतिज्ञा, इस प्रकार तीनों काल की अपेक्षा ४९ भंगों को ३ से गुणा करने पर १४७ भंग होते हैं। ये स्थूलप्राणातिपात विषयक हुए। इसी प्रकार स्थूल मृषावाद, स्थूल अदत्तादान, स्थूल मैथुन और स्थूल परिग्रह, इन प्रत्येक के १४७ भंग होते हैं। यों पाँचों अणुव्रतों के कुल भंग १४७ × ५ = ७३५ होते हैं। श्रावक इन ४९ भंगों में से किसी भंग से यथाशक्ति प्रतिक्रमण, संवर या प्रत्याख्यान कर सकता है। तीन करण तीन योग से संवर या प्रत्याख्यानादि श्रावक प्रतिमा स्वीकार किया हुआ श्रावक कर सकता है अथवा संथारा किया हुआ श्रावक तीन करण तीन योग (९ कोटि) भंग का आराधक है। *(वृत्ति, पत्रांक ३७०-३७१)*

Elaboration—Three *karans* (methods) are—to do, to induce others to do, and to attest others doing. Three *yogas* (means) are—mind, speech, and body. There are nine primary and forty-nine secondary alternative combinations of these detailed as aforesaid.

When applied to censure (*pratikraman*), refraining (*samvar*) and renouncing (*pratyakhyan*) of acts of gross killing in three sections of time (past, present and future) the total number of alternative combinations becomes (3x49) 147. In the same way there are 147 alternative combinations each for gross falsehood (*mrishavaad*), gross stealing (*adattadaan*), gross libido (*maithun*) and gross possession (*parigraha*). Thus there are 147 x 5 = 735 alternative combinations for the five minor vows meant for *shravak* (Jain laity). A *shravak* can choose any of the 49 combinations depending on his capacity. Only a *shravak* who is capable of accepting *shravak pratima* (special resolves meant for a lay follower) can stick to the ideal combinations of all three methods by all three means. *(Vritti, leaf 370-371)*

आजीविकोपासक और श्रमणोपासकों का आचार भेद

COMPARATIVE CONDUCT OF FOLLOWERS OF AJIVAK AND SHRAMAN

७. एए खलु एरिसगा समणोवासगा भवंति, नो खलु एरिसगा आजीवियोवासगा भवंति।

७. (उक्त स्वरूप वाले) श्रमणोपासक ऐसे होते हैं, किन्तु आजीविकोपासक ऐसे नहीं होते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

7. The followers of *Shramans* are like aforesaid but those of Ajivaks are not like that.

८. आजीवियसमयस्स णं अयमट्ठे पण्णत्ते–अक्खीणपडिभोइणो सव्वे सत्ता, से हंता, छेत्ता, भेत्ता, लुंपित्ता, विलुंपित्ता, उद्दवइत्ता, आहारमाहारेंति।

८. आजीविक (गोशालक) के सिद्धान्त का यह अर्थ (सार) है कि समस्त जीव अक्षीणपरिभोजी (सचित्ताहारी) होते हैं। इसलिए वे (लकड़ी आदि से) पीटकर, (तलवार आदि से) काटकर, (शूल आदि से) भेदन करके, (पंख आदि को) कतर (लुप्त) कर, (चमड़ी आदि को) उतारकर (विलुप्त करके) और विनष्ट करके खाते हैं।

8. The Ajivak doctrine says that all beings subsist on living organism (of some kind). That is why they beat, cut, pierce, shear, peel and even kill to acquire their food.

९. तत्थ खलु इमे दुवालस आजीवियोवासगा भवंति, तं जहा–ताले १ तालपलंबे २ उव्विहे ३ संविहे ४ अवविहे ५ उदए ६ नामुदए ७ णम्मुदए ८ अणुवालए ९ संखवालए १० अयंबुले ११ कायरए १२।

९. ऐसी स्थिति (संसार के समस्त जीव असंयत और हिंसादिदोषपरायण हैं, ऐसी परिस्थिति) में आजीवक मत में ये बारह आजीविकोपासक हैं–(१) ताल, (२) तालप्रलम्ब, (३) उद्विध, (४) संविध, (५) अवविध (६) उदय, (७) नामोदय, (८) नर्मोदय, (९) अनुपालक, (१०) शंखपालक, (११) अयम्बुल, और (१२) कातरक।

9. Under these conditions (that all beings in this world are unrestrained and indulge in the sin of violence) there are twelve sects of followers of the Ajivak doctrine—(1) Taal, (2) Taal-pralamb, (3) Udvidh, (4) Samvidh, (5) Avavidh, (6) Udaya, (7) Naamodaya, (8) Narmodaya, (9) Anupaalak, (10) Shankhapaalak, (11) Ayambul, and (12) Kaatarak.

१०. इच्चेते दुवालस आजीवियोवासगा अरहंतदेवतागा अम्मा–पिउसुस्सूसगा; पंचफलपडिक्कंता, तं जहा–उंबरेहिं, वडेहिं, बोरेहिं, सतरेहिं, पिलक्खूहिं; पलंडु–ल्हसण–कंद–मूलविवज्जगा; अणिल्लंछिएहिं अणक्कभिन्नेहिं गोणेहिं तसपाणविवज्जिएहिं चित्तेहिं वित्तिं कप्पेमाणे विहरंति।

१०. इस प्रकार ये बारह आजीविकोपासक हैं। इनका देव अरहंत (स्वमत–कल्पना से गोशालक अर्हत्) है। वे माता–पिता की सेवा–शुश्रूषा करते हैं। वे पाँच प्रकार के फल नहीं खाते । वे इस प्रकार–उदुम्बर (गुल्लर) के फल, वड़ के फल, बोर, सयरी (शतापरी) के फल, पीपल फल तथा प्याज (पलाण्डु), लहसुन, कन्दमूल के त्यागी होते हैं तथा अनिर्लांछित (वधिया न किये हुए), और नाक नहीं नाथे हुए बैलों से, त्रस प्राणी की हिंसा से रहित व्यापार द्वारा आजीविका करते हैं।

10. Thus there are twelve aforesaid sects of followers of the Ajivak doctrine (*Ajivakopasak*). Their deity is an *Arhant* (a self-proclaimed

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

omniscient named Goshalak). They serve their parents. They do not eat five types of fruits—*Udumbar* fruit (*Gular*; *Ficus glomerata*), Banyan fruit, berries, *Satari* fruit (*Shatavari*; wild asparagus), and *Pipal* fruit (long pepper). They also do not eat onion, garlic and other roots. They earn their livelihood with the help of bulls that have neither been castrated nor had their nose pierced and through trades involving no harm to mobile beings.

११. 'एए वि ताव एवं इच्छंति, किमंग पुण जे इमे समणोवासगा भवंति ?' जेसिं नो कप्पंति इमाइं पण्णरस कम्मादाणाइं सयं करेत्तए वा, कारवेत्तए वा, करेंतं वा अन्नं न समणुजाणेत्तए, तं जहा–इंगालकम्मे, वणकम्मे, साडीकम्मे, भाडीकम्मे, फोडीकम्मे, दंतवाणिज्जे, लक्खवाणिज्जे, केसवाणिज्जे, रसवाणिजे, विसवाणिजे जंतपीलणकम्मे, निल्लंछणकम्मे, दवग्गिदावणया सर–दह–तलागपरिसोसणया असइपोसणया।

इच्चेते समणोवासगा सुक्का सुक्काभिजातीया भवित्ता कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति।

११. जब इन आजीविकोपासकों को यह अभीष्ट है, तो फिर जो श्रमणोपासक हैं, उनका तो कहना ही क्या? (क्योंकि उन्होंने तो विशिष्टतर देव, गुरु और धर्म का आश्रय लिया है!) जो श्रमणोपासक होते हैं, उनके लिए ये पन्द्रह कर्मादान स्वयं करना, दूसरों से कराना, और करते हुए का अनुमोदन करना कल्पनीय (उचित) नहीं है। वे कर्मादान इस प्रकार हैं-(१) अंगारकर्म, (२) वनकर्म, (३) शाकटिककर्म, (४) भाटीकर्म, (५) स्फोटककर्म, (६) दन्तवाणिज्य, (७) लाक्षावाणिज्य, (८) केश वाणिज्य, (९) रसवाणिज्य, (१०) विषवाणिज्य, (११) यंत्रपीडनकर्म, (१२) निर्लांछनकर्म, (१३) दावाग्निदापनता, (१४) सरो-ह्रद-तडागशोषणता, (१५) असतीपोषणता।

ये श्रमणोपासक शुक्ल (पवित्र), शुक्लाभिजात (पवित्र कुलोत्पन्न) होकर काल (मरण) के समय मृत्यु प्राप्त करके किन्हीं देवलोकों में देवरूप से उत्पन्न होते हैं।

11. When even these followers of Ajivak doctrine stick to this (non-injury to mobile beings), what to say of the followers of *Shramans* (because they follow loftier deity, guru and religion). For the *Shramanopasaks* it is prohibited to do, to induce others to do and attest others doing the following fifteen trades or professions—(1) *Angaar* karma (trade using fire), (2) *Vana* karma (trade connected with forest), (3) *Shakati* karma (trade related to vehicles), (4) *Bhaati* karma (transport trade), (5) *Sfota* karma (digging work), (6) *Danta vanijya* (trading in teeth, bone and skin), (7) *Laksha vanijya* (Shelac trade), (8) *Kesh vanijya* (trading in hair including wool), (9) *Rasa vanijya* (trading of drinks and beverages), (10) *Vish vanijya* (trading of drugs and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

toxins), (11) *Yantrapidan* karma (mechanical crushing industry including oil press), (12) *Nirlanchhan* karma (castration activity), (13) *Davagnidapanata* (causing forest fire), (14) *Saro-hrid-tadaag shoshanata* (removing water from water bodies including lakes, ponds, and pools), and (15) *Asatiposhanata* (immoral traffic of women).

These *Shramanopasaks* become pure and join a pious family (embrace asceticism). At the end of their life-span they die and reincarnate as divine beings in some divine realm.

विवेचन–आजीविकों का आचार–गोशालक मंखलीपुत्र के शिष्य श्रावक आजीविकोपासक कहलाते हैं। गोशालक के समय में उसके ताल, तालप्रलम्ब आदि बारह विशिष्ट उपासक थे। वे उदुम्बर आदि कुछ फल नहीं खाते थे। जिन बैलों को बधिया नहीं किया गया है, और नाक नाथा नहीं गया है, उनसे अहिंसक ढंग से व्यापार करके वे जीविका चलाते थे।

श्रमणोपासकों की विशेषता–पूर्वोक्त ४९ भंगों में से यथेच्छ भंगों द्वारा श्रमणोपासक अपने व्रत, नियम, संवर, त्याग, प्रत्याख्यान आदि ग्रहण करते हैं, जबकि आजीविकोपासक इस प्रकार से हिंसा आदि का त्याग नहीं करते, न ही वे कर्मादान रूप पापजनक व्यवसायों का त्याग करते हैं; श्रमणोपासक तो इन १५ कर्मादानों का सर्वथा त्याग करता है, वह इन हिंसादिमूलक व्यवसायों को अपना ही नहीं सकता। यही कारण है कि ऐसा श्रमणोपासक चार प्रकार के देवलोकों में से किसी एक देवलोक में उत्पन्न होता है; क्योंकि वह जीवन और जीविका दोनों से पवित्र, शुद्ध और निष्पाप होता है, और उसे विशिष्ट देव, गुरु, धर्म की प्राप्ति होती है। *(वृत्ति, पत्रांक ३७१-३७२)*

पन्द्रह कर्मादान के सम्बन्ध में विस्तृत वर्णन एवं चित्र उपासक दशा, अध्ययन १ पृष्ठ ४२-४५ तक देखें।

Elaboration—The lay disciples of Mankhaliputra Goshalak are called *Ajivikopasak*. Including Taal and Taal Pralamb there were twelve important contemporary disciples of Goshalak. They avoided eating some fruits including *Udumbar*. They earned their living by non-violent professions and employed only those bulls (or animals) that were not castrated or fixed with halter-pins.

Qualities of *Shramanopasaks*–The *Shramanopasaks* accept vows, codes, restraints, renouncement and other resolves employing chosen alternative combinations from the aforesaid 49 methods and means. But the *Ajivikopasaks* neither abandon violence so comprehensively nor do they abandon sinful trades and professions that entail bondage of *karmas*. *Shramanopasaks* have to renounce the aforesaid 15 bondage inviting trades completely; they cannot indulge in any of these trades. That is the reason that such a *Shramanopasak* reincarnates in any one of the four classes of divine realms. This is because he is pious, pure and sinless in context of both—way of life and means of subsistence; also he qualifies to avail a lofty Lord, guru and religion. *(Vritti, leaf 371-72)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

For detailed description and illustrations about fifteen sources of *karmic* bondage see *Illustrated Upaasak Dashanga Sutra*, Chapter 1, pp.42-45.

देवलोकों के चार प्रकार FOUR KINDS OF DIVINE REALMS

१२. [प्र.] कइविहा णं भंते ! देवलोगा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! चउव्विहा देवलोगा पण्णत्ता, तं जहा– भवणवासि–वाणमंतर–जोइस–वेमाणिया।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ अट्ठमसए : पंचमो उद्देसओ समत्तो ॥

१२. [प्र.] भगवन् ! देवलोक कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! देवलोक चार प्रकार के हैं। यथा–भवनवासी, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है; यों कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

॥ अष्टम शतक : पंचम उद्देशक समाप्त ॥

12. [Q.] *Bhante* ! How many types of divine realms are there ?

[Ans.] Gautam ! There are four types of divine realms–*Bhavan-vaasi* (abode dwelling), *Vanavyantar* (interstitial), *Jyotishk* (stellar) and *Vaimanik* (celestial-vehicular).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE FIFTH LESSON OF THE EIGHTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छट्ठो उद्देसओ : 'फासुगं'
अष्टम शतक : छठा उद्देशक : प्रासुक
EIGHTH SHATAK (Chapter Eight) : SIXTH LESSON : PRASUK (FAULT-FREE)

आहार–दान का फल BENEFITS OF FOOD DONATION

१. [प्र.] समणोवासगस्स णं भंते ! तहारूवं समणं वा माहणं वा फासुएसणिज्जेणं असण–पाण–खाइम–साइमेणं पडिलाभेमाणस्स किं कज्जति ?

[उ.] गोयमा ! एगंतसो से निज्जरा कज्जइ, नत्थि य से पावे कम्मे कज्जति।

१. [प्र.] भगवन् ! तथारूप (श्रमण के वेश तथा तदनुकूल गुणों से सम्पन्न) श्रमण अथवा माहन (अहिंसाव्रती) को प्रासुक एवं एषणीय अशन, पान, खादिम और स्वादिम आहार द्वारा प्रतिलाभित करने वाले श्रमणोपासक को किस फल की प्राप्ति होती है ?

[उ.] गौतम ! वह (ऐसा करके) एकान्त रूप से निर्जरा करता है; उसके पापकर्म नहीं होता।

1. [Q.] What benefit does a *Shramanopasak* derive by offering fault-free and acceptable *ashan, paan, khadya, svadya ahaar* (staple food, liquids, general food, and savoury food) to an ascetic conforming to the description in *Agams* (*tatharupa Shraman*) or one who has taken the vow of non-violence (*Mahan*)?

[Ans.] Gautam ! By doing so he exclusively sheds *karmas*; he does not acquire demeritorious *karmas* (*paap karma*).

२. [प्र.] समणोवासगस्स णं भंते ! तहारूवं समणं वा माहणं वा अफासुएणं अणेसणिज्जेणं असण–पाण जाव पडिलाभेमाणस्स किं कज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! बहुतरिया से निज्जरा कज्जइ, अप्पतराए से पावे कम्मे कज्जइ।

२. [प्र.] भगवन् ! तथारूप श्रमण या माहन को अप्रासुक एवं अनेषणीय आहार द्वारा प्रतिलाभित करते हुए श्रमणोपासक को किस फल की प्राप्ति होती है ?

[उ.] गौतम ! उसके बहुत निर्जरा होती है, और अल्पतर पापकर्म होता है।

2. [Q.] What benefit does a *Shramanopasak* derive by offering faulty and unacceptable staple food, liquids ... and so on up to ... savoury food to an ascetic conforming to the description in *Agams* (*tatharupa Shraman*) or one who has taken the vow of non-violence (*Mahan*)?

[Ans.] Gautam ! By doing so he sheds much *karmas* and acquires very little demeritorious *karmas* (*paap karma*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 7

Illustration No. 7

आहार दान का फल

तथारूप श्रमण—जो बाह्य और आभ्यन्तर रूप से साधु है, साधु के योग्य वस्त्र-पात्र आदि धारण किये हुये है और चारित्रादि गुण युक्त है, ऐसे श्रमण को श्रावक निर्दोष आहारादि का दान देता है तो एकान्त निर्जरा करता है। श्रमण आचारवंत है पर आहारादि में कोई दोष है, ऐसे दान देने वाले श्रावक को निर्जरा तो होती है, मगर थोड़ा पाप का बंध भी होता है और असंयत, अविरत-तथारूप—अर्थात् अन्यतीर्थिक जो पाप कर्मों के निरोध और प्रत्याख्यान से रहित हैं उन्हें कोई भी वस्तु का दान देने वाले श्रावक को एकांत पाप का बंध होता है, ऐसा भगवान फरमाते हैं।

निर्ग्रन्थ की आराधकता

किसी साधक से अगर कोई पाप-दोष हो गया हो और वह उसका प्रायश्चित्त लेने की भावना से अपने गुरु के पास जाने के लिये अग्रसर होता है। किसी कारणवश रास्ते में उसकी मृत्यु हो जाती है तो भी वह आराधक कहलाता है। उसने प्रायश्चित्त लिया नहीं परन्तु उसकी भावना प्रायश्चित्त लेने की थी, इसलिए वह विराधक नहीं आराधक होता है।

—शतक 8, उ. 6, सूत्र 1-7

FRUITS OF FOOD DONATION

Tatharupa Shraman — By offering fault-free and acceptable food to an ascetic in prescribed garb and endowed with spirituality and other attributes like right conduct the donor exclusively sheds *karmas*. If the ascetic follows right conduct but the food is faulty then the donor does shed karmas but he also acquires some demerit-*karmas*. However, if donor gives to an indisciplined monk including a heretic in some other garb, he exclusively acquires demerit-karmas. This is what the Lord says.

STEADFASTNESS OF ASCETICS

When an ascetic after appraisal of his fault proceeds to his guru to perform atonement but before he reaches his destination he dies on the way he is still called steadfast. Although he has not performed atonement he had the intention to do so, therefore he is called steadfast and not faltering in conduct.

— Shatak-8, lesson-6, Sutra-1-7

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. [प्र.] समणोवासगस्स णं भंते ! तहारूवं अस्संजयअविरयपडिहयपच्चक्खायपावकम्मं फासुएण वा अफासुएण वा एसणिज्जेण वा अणेसणिज्जेण वा असण–पाण जाव किं कज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! एगंतसो से पावे कम्मे कज्जइ, नत्थि से काई निज्जरा कज्जइ।

३. [प्र.] भगवन् ! तथारूप असंयत, अविरत, पापकर्मों का जिसने निरोध और प्रत्याख्यान नहीं किया; उसे प्रासुक या अप्रासुक, एषणीय या अनेषणीय अशन–पानादि द्वारा प्रतिलाभित करते हुए श्रमणोपासक को क्या फल प्राप्त होता है ?

[उ.] गौतम ! उसे एकान्त पापकर्म होता है, किसी प्रकार की निर्जरा नहीं होती।

3. [Q.] What benefit does a *Shramanopasak* derive by offering fault-free or faulty and acceptable or unacceptable staple food, liquids ... and so on up to ... savoury food to one who is undisciplined and unrestrained and who has neither abandoned nor renounced sinful activity (as described in *Agams*)?

[Ans.] Gautam ! By doing so he exclusively acquires demeritorious *karmas* (*paap karma*) and sheds no *karmas* at all.

विवेचन : **'तथारूप' का आशय**–पहले और दूसरे सूत्र में 'तथारूप' का आशय है जैनागमों में वर्णित श्रमण के वेश और चारित्रादि श्रमणगुणों से युक्त। तथा तीसरे सूत्र में असंयत, अविरत आदि विशेषणों से युक्त 'तथारूप' शब्द का आशय यह है कि उस उस अन्यतीर्थिक वेष से युक्त योगी, संन्यासी, बाबा आदि, जो पापकर्मों के निरोध और प्रत्याख्यान से रहित है।

'पडिलाभेमाणस्स' शब्द गुरुबुद्धि से मोक्षलाभ की दृष्टि से दान देने के फल का सूचक है। अभावग्रस्त, पीड़ित, दुःखित, रोगग्रस्त या अनुकम्पनीय (दयनीय) व्यक्ति या अपने पारिवारिक, सामाजिक जनों को औचित्यादि रूप में देने में **'पडिलाभे'** शब्द नहीं आता, अपितु वहाँ 'दलयइ' या **'दलेज्जा'** शब्द आता है। तात्पर्य यह है कि अनुकम्पापात्र को दान देने या औचित्यदान आदि के सम्बन्ध में निर्जरा की अपेक्षा यहाँ चिन्तन नहीं किया जाता, अपितु पुण्यलाभ का विशेष रूप से विचार किया जाता है।

प्रासुक और **अप्रासुक** का अर्थ सामान्यतया निर्जीव (अचित्त) और सजीव (सचित्त)। **एषणीय** का अर्थ है–आहार सम्बन्धी उद्गमादि दोषों से रहित निर्दोष और अनेषणीय–दोषयुक्त–सदोष।

'बहुत निर्जरा, अल्पतर पाप' का आशय–अनेषणीय आहार देने में बहुत निर्जरा–अल्पतर पाप का यहाँ आशय है किसी विशेष विषम परिस्थिति में श्रमण को अनेषणीय आहार लेना पड़े और श्रमणोपासक को भी उनकी जीवनरक्षा हेतु देना पड़े (इस दोष–सेवन का प्रायश्चित्त लेने की भावना रखते हुए) तो उस परिस्थिति में विवेकी श्रावक का 'बहुत निर्जरा और अल्प पाप' होता है। *(अभयदेववृत्ति, पत्रांक ३७३)*

Elaboration—*Tatharupa*–In the first two aphorisms this means conforming to the description of code of conduct and dress as described in Jain *Agams*. In the third one due to the additional adjectives undisciplined and unrestrained it means members of various heretic sects who do not renounce, such as *yogi, sanyasi, baba,* etc.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'*Padilaabhemanassa*' means the fruits or benefits gained through charity based on the teachers advise or that given with the intent of gaining liberation. It is not traditionally used for the acts of charity to the destitute, tormented, miserable, ailing and pitiable or to relatives and any other social charity. For such acts the term in use is '*dalayai*' or '*dalejja*'. This indicates that here the discussion is not about the charity out of compassion or to the deserving, but specifically about the charity pointedly given to gain meritorious *karmas*.

Prasuk means non-living or not infested with living organism and *aprasuk* means living or infested with living organism. *Eshaniya* means free of various prescribed faults related to alms-collection by an ascetic and *aneshaniya* means with those faults.

Much shedding and little acquisition by giving faulty food here describes some emergency when an ascetic is forced to accept such faulty food and the donor too has to give in order to save his life. And he gives it with the feeling of atonement for the act. Then in such situation he sheds much *karmas* and acquires little. *(Vritti, leaf 373)*

पिण्ड–पात्र आदि की उपभोग–मर्यादा LIMITATIONS OF USE

४. [१] निग्गंथं च णं गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुप्पविट्ठं केइ दोहिं पिंडेहिं उवनिमंतेज्जा–एगं आउसो ! अप्पणा भुंजाहि, एगं थेराणं दलयाहि, से य तं पिंडं पडिग्गाहेज्जा, थेरा य से अणुगवेसियव्वा सिया, जत्थेव अणुगवेसमाणे थेरे पासिज्जा तत्थेवाऽणुप्पदायव्वे सिया, नो चेव णं अणुगवेसमाणे थेरे पासिज्जा तं नो अप्पणा भुंजेज्जा, नो अन्नेसिं दावए, एगंते अणावाए अचित्ते बहुफासुए थंडिले पडिलेहेत्ता, पमज्जित्ता परिट्ठावेतव्वे सिया।

४. [१] गृहस्थ के घर में आहार ग्रहण करने की बुद्धि से प्रविष्ट निर्ग्रन्थ को कोई गृहस्थ दो पिण्ड (खाद्य पदार्थ) ग्रहण करने के लिए उपनिमंत्रण करे–'आयुष्मन् श्रमण ! इन दो पिण्डों (दो लड्डू, दो रोटी या दो अन्य खाद्य पदार्थों) में से एक पिण्ड आप स्वयं खाना और दूसरा पिण्ड स्थविर मुनियों को देना।' (इस पर) वह निर्ग्रन्थ श्रमण उन दोनों पिण्डों को ग्रहण कर ले और (स्थान पर आकर) स्थविरों की गवेषणा करे। गवेषणा करने पर उन स्थविर मुनियों को जहाँ देखे, वहीं वह पिण्ड उन्हें दे दे। यदि गवेषणा करने पर भी स्थविर मुनि कहीं न दिखाई दें (मिलें) तो वह पिण्ड स्वयं न खाए और न ही दूसरे किसी श्रमण को दे, किन्तु एकान्त, अनापात (जहाँ आवागमन न हो), अचित्त या बहुप्रासुक स्थण्डिल भूमि का प्रतिलेखन एवं प्रमार्जन करके वहाँ उस पिण्ड को परठ दे। (परिष्ठापन विधि के सम्बन्ध में उत्तराध्ययनसूत्र, अ. २४, गा. १ से ३ तक में विस्तारपूर्ण कथन है।)

4. [1] Suppose an ascetic comes to a householder to seek alms and the householder offers him two units of some food (two loaves of bread, two

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

pieces of sweet, etc.) with a request–"O long-lived *Shraman* ! Out of these two units please consume one yourself and give the other to some senior ascetic (*sthavir*)." The ascetic should accept the units and (on returning to his place of stay) look for some senior ascetic. If he finds one he should at once give one unit to him. However, if he does not find a senior ascetic he should neither consume that extra unit himself nor give it to any other ascetic. Instead he should find some secluded, safe, germ-free and appropriate spot; clean and wipe the spot, and dump that unit of food there. (Regarding the procedure of dumping refer to *Uttaradhyayan Sutra*, Chapter 24, verses 1-3)

४. [२] निग्गंथं च णं गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुप्पविट्ठं केति तिहिं पिंडेहिं उवनिमंतेज्जा– एगं आउसो ! अप्पणा भुंजाहि, दो थेराणं दलयाहि, से य ते पडिग्गाहेज्जा, थेरा य से अणुगवेसेयव्वा, सेसं तं चेव जाव परिट्ठावेयव्वे सिया।

४. [२] गृहस्थ के घर में आहार ग्रहण करने के विचार से प्रविष्ट निर्ग्रन्थ को कोई गृहस्थ तीन पिण्ड ग्रहण करने के लिए उपनिमंत्रण करे–'आयुष्मन् श्रमण ! (इन तीनों में से) एक पिण्ड आप स्वयं खाना और (शेष) दो पिण्ड स्थविर श्रमणों को देना।' (इस पर) वह निर्ग्रन्थ उन तीनों पिण्डों को ग्रहण कर ले। तत्पश्चात् वह स्थविरों की गवेषणा करे। गवेषणा करने पर जहाँ उन स्थविरों को देखे, वहीं उन्हें वे दोनों पिण्ड दे दे। गवेषणा करने पर भी वे कहीं दिखाई न दें तो शेष वर्णन पूर्ववत् कहना चाहिए, यावत् स्वयं न खाए, परिष्ठापन करे।

4. [2] Suppose an ascetic comes to a householder to seek alms and the householder offers him three units of some food with a request–"O long-lived *Shraman* ! Out of these three units please consume one yourself and give the other two to some senior ascetic (*sthavir*)." The ascetic should accept the three units and (on returning to his place of stay) look for some senior ascetic. If he finds one he should at once give two units to him. However, if he does not find a senior ascetic ... and so on up to ... and dump that unit of food there.

४. [३] एवं जाव दसहिं पिंडेहिं उवनिमंतेज्जा, नवरं एगं आउसो ! अप्पणा भुंजाहि, नव थेराणं दलयाहि, सेसं तं चेव जाव परिट्ठावेतव्वे सिया।

४. [३] इसी प्रकार गृहस्थ के घर में प्रविष्ट निर्ग्रन्थ को यावत् दस पिण्डों को ग्रहण करने के लिए कोई गृहस्थ उपनिमंत्रण दे–'आयुष्मन् श्रमण ! इनमें से एक पिण्ड आप स्वयं खाना और शेष नौ पिण्ड स्थविरों को देना;' इत्यादि सब वर्णन पूर्ववत् जानना; यावत् परिष्ठापन करे (परठ दे)।

4. [3] Also, suppose an ascetic comes to a householder ... and so on up to ... ten units of some food with a request–"O long-lived *Shraman* ! Out

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of these ten units please consume one yourself and give the other nine to some senior ascetic (*sthavir*)." ... and so on up to ... and dump that unit of food there.

५. निग्गंथं च णं गाहावइ जाव केइ दोहिं पडिग्गहेहिं उवनिमंतेज्जा–एगं आउसो ! अप्पणा परिभुंजाहि, एगं थेराणं दलयाहि, से य तं पडिग्गाहेज्जा, तहेव जाव तं नो अप्पणा परिभुंजेज्जा, नो अन्नेसिं दावए। सेसं तं चेव जाव परिट्ठावेयव्वे सिया। एवं जाव दसहिं पडिग्गहेहिं।

५. निर्ग्रन्थ यावत् गृहपति-कुल में प्रवेश करे और कोई गृहस्थ उसे दो पात्र ग्रहण करने के लिए उपनिमंत्रण करे–'आयुष्मन् श्रमण ! (इन दोनों में से) एक पात्र का आप स्वयं उपयोग करना और दूसरा पात्र स्थविरों को दे देना।' इस पर वह निर्ग्रन्थ उन दोनों पात्रों को ग्रहण कर ले। शेष सारा वर्णन पूर्ववत् कहना चाहिए, यावत् उस पात्र का न तो स्वयं उपयोग करे और न दूसरे साधुओं को दे; यावत् उसे परठ दे। इसी प्रकार तीन, चार यावत् दस पात्र तक का कथन पूर्वोक्त पिण्ड के समान कहना चाहिए।

5. Suppose an ascetic comes to a householder to seek alms and the householder offers him two bowls with a request–"O long-lived *Shraman* ! Out of these two bowls please use one yourself and give the other one to some senior ascetic (*sthavir*)." The ascetic should accept the three units ... and so on up to ... he should neither use that extra unit himself nor give it to any other ascetic. ... and so on up to ... and dump that bowl there. In the same way aforesaid statements about units of food should be repeated for three, four ... and so on up to ... ten bowls.

६. एवं जहा पडिग्गहवत्तव्वया भणिया एवं गोच्छग–रयहरण–चोलपट्टग–कंवल–लट्ठी–संथारग–वत्तव्वया य भाणियव्वा जाव दसहिं संथारएहिं उवनिमंतेज्जा जाव परिट्ठावेयव्वे सिया।

६. जिस प्रकार पात्र के सम्बन्ध में वक्तव्यता कही, उसी प्रकार गुच्छक (पूंजनी), रजोहरण, चोलपट्टक, कम्बल, लाठी (दण्ड) और संस्तारक (बिछौना या बिछाने का लम्बा आसन- संथारिया) की वक्तव्यता कहनी चाहिए, यावत् दस संस्तारक ग्रहण करने के लिए उपनिमंत्रण करे, यावत् परठ दे (यहाँ तक सारा पाठ कहना चाहिए)।

6. The aforesaid statement about bowl should be repeated for *Guchchhak* (a piece of cloth meant for wiping pots), *Rajoharan* (ascetic-broom), *Cholapattak* (a piece of cloth), blanket, staff, and bed or bed sheet ... and so on up to ... offers him ten beds ... and so on up to ... dump there.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. [प्र. १] निग्गंथेण य गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए पविट्ठेणं अन्नयरे अकिच्चट्ठाणे पडिसेविए, तस्स णं एवं भवति-इहेव ताव अहं एयस्स ठाणस्स आलोएमि पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि विउट्टामि विसोहेमि अकरणयाए अब्भुट्ठेमि, अहारिहं पायच्छित्तं तवोकम्मं पडिवज्जामि, तओ पच्छा थेराणं अंतियं आलोएस्सामि जाव तवोकम्मं पडिवज्जिस्सामि। से य संपट्ठिए, असंपत्ते, थेरा य पुव्वामेव अमुहा सिया, से णं भंते ! किं आराहए विराहए ?

[उ.] गोयमा ! आराहए, नो विराहए।

७. [प्र. १] गृहस्थ के घर आहार ग्रहण करने की बुद्धि से प्रविष्ट निर्ग्रन्थ द्वारा किसी अकृत्य (मूलगुण में दोषरूप किसी अकार्य) स्थान का प्रतिसेवन (दोष-सेवन) हो गया हो और तत्क्षण उसके मन में ऐसा विचार हो कि प्रथम मैं यहीं इस अकृत्य स्थान की आलोचना, प्रतिक्रमण, आत्म-निन्दा (पश्चात्ताप) और गर्हा करूँ; उसके अनुबन्ध का छेदन करूँ, इस (पाप-दोष से) विशुद्ध बनूँ, पुनः ऐसा अकृत्य न करने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध होऊँ; और यथोचित प्रायश्चित्तरूप तपःकर्म स्वीकार कर लूँ। तत्पश्चात् स्थविरों के पास जाकर आलोचना करूँगा, यावत् प्रायश्चित्तरूप तपःकर्म स्वीकार कर लूँगा। (ऐसा विचार कर) वह निर्ग्रन्थ, स्थविर मुनियों के पास जाने के लिए रवाना हुआ; किन्तु स्थविर मुनियों के पास पहुँचने से पहले ही वे स्थविर (वातादि दोष के प्रकोप से) मूक हो जाएँ (बोल न सकें अर्थात् प्रायश्चित्त न दे सकें) तो हे भगवन् ! वह निर्ग्रन्थ आराधक है या विराधक है ?

[उ.] गौतम ! वह (निर्ग्रन्थ) आराधक है, विराधक नहीं।

7. [Q. 1] *Bhante* ! Suppose a *nirgranth* (a male ascetic) goes to a householder to beg alms and falls victim to a lapse (transgression of basic code of conduct). He at once becomes aware of his fault and thinks – 'First of all, right at this spot, I should appraise my action (*alochana*), critically review it (*pratikraman*), self-censure (*atma-ninda*) and condemn (*garha*) it; shear the acquired bondage, free myself of the fault, take a vow not to repeat such fault in future, and court suitable penance for atonement. Then I should proceed to senior ascetics, appraise my action (*alochana*) ... and so on up to ...and court suitable penance for atonement.' Having thought like this he sets out to meet senior ascetics but before he reaches his destination those senior ascetics become mute (due to some ailment and are unable to prescribe suitable atonement). *Bhante* ! Is such a *nirgranth* (a male ascetic) steadfast (*araadhak*) or faltering in conduct (*viraadhak*) ?

[Ans.] Gautam ! He (that ascetic) is steadfast and not faltering in conduct.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. [प्र. २] से य संपट्ठिए असंपत्ते अप्पणा य पुव्वामेव अमुहे सिया, से णं भंते ! किं आराहए, विराहए ?

[उ.] गोयमा ! आराहए, नो विराहए।

७. [प्र. २] (उपर्युक्त अकृत्यसेवी निर्ग्रन्थ ने तत्काल स्वयं आलोचनादि कर लिया, यावत् यथायोग्य प्रायश्चित्तरूप तपकर्म भी स्वीकार कर लिया), तत्पश्चात् स्थविर मुनियों के पास (आलोचनादि करके यावत् तपःकर्म स्वीकार करने हेतु) निकला, किन्तु उनके पास पहुँचने से पूर्व ही वह निर्ग्रन्थ स्वयं (वातादि दोषवश) मूक हो जाए, तो हे भगवन् ! वह निर्ग्रन्थ आराधक है या विराधक ?

[उ.] गौतम ! वह (निर्ग्रन्थ) आराधक है, विराधक नहीं।

7. [Q.] [2] Suppose the aforesaid ascetic after appraisal (etc.) of his fault proceeds to senior ascetics but before he reaches his destination he himself becomes mute (due to some ailment and is unable to narrate). *Bhante* ! Is such a *nirgranth* (a male ascetic) steadfast or faltering in conduct ?

[Ans.] Gautam ! He (that ascetic) is steadfast and not faltering in conduct.

७. [प्र. ३] से य संपट्ठिए, असंपत्ते थेरा य कालं करेज्जा, से णं भंते ! किं आराहए विराहए ?

[उ.] गोयमा ! आराहए, नो विराहए।

७. [प्र. ३] (उपर्युक्त अकृत्यसेवी निर्ग्रन्थ स्वयं आलोचनादि करके) स्थविर मुनिवरों के पास आलोचनादि के लिए रवाना हुआ, किन्तु उसके पहुँचने से पूर्व ही वे स्थविर मुनि काल कर (दिवंगत हो) जाए, तो हे भगवन् ! वह निर्ग्रन्थ आराधक है या विराधक ?

[उ.] गौतम ! वह (निर्ग्रन्थ) आराधक है, विराधक नहीं।

7. [Q.] [3] Suppose the aforesaid ascetic after appraisal (etc.) of his fault proceeds to senior ascetics but before he reaches his destination the senior ascetics die. *Bhante* ! Is such a *nirgranth* (a male ascetic) steadfast or faltering in conduct ?

[Ans.] Gautam ! He (that ascetic) is steadfast and not faltering in conduct.

७. [प्र. ४] से य संपट्ठिए असंपत्ते अप्पणा य पुव्वामेव कालं करेज्जा, से णं भंते ! किं आराहए विराहए ?

[उ.] गोयमा ! आराहए, नो विराहए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. [प्र. ४] भगवन् ! वह निर्ग्रन्थ स्थविरों के पास आलोचनादि करने के लिए निकला, किन्तु वहाँ पहुँचा नहीं, उससे पूर्व ही स्वयं काल कर जाए, तो हे भगवन् ! वह निर्ग्रन्थ आराधक है या विराधक ?

[उ.] गौतम ! वह (निर्ग्रन्थ) आराधक है, विराधक नहीं।

7. [Q.] [4] Suppose the aforesaid ascetic after appraisal (etc.) of his fault proceeds to senior ascetics but before he reaches his destination he himself dies. *Bhante* ! Is such a *nirgranth* (a male ascetic) steadfast or faltering in conduct ?

[Ans.] Gautam ! He (that ascetic) is steadfast and not faltering in conduct.

७. [प्र. ५] से य संपट्ठिए संपत्ते, थेरा य अमुहा सिया, से णं भंते ! किं आराहए विराहए ?

[उ.] गोयमा ! आराहए, नो विराहए।

७. [प्र. ५] उपर्युक्त अकृत्यसेवी निर्ग्रन्थ ने तत्क्षण आलोचनादि करके स्थविर मुनिवरों के पास आलोचनादि करने हेतु प्रस्थान किया, वह स्थविरों के पास पहुँच गया, तत्पश्चात् वे स्थविर मुनि (वातादि दोषवश) मूक हो जाए, तो हे भगवन् ! वह निर्ग्रन्थ आराधक है या विराधक ?

[उ.] गौतम ! वह (निर्ग्रन्थ) आराधक है, विराधक नहीं।

7. [Q. 5] Suppose the aforesaid ascetic after appraisal (etc.) of his fault proceeds to senior ascetics and he reaches his destination but after that the senior ascetics become mute (due to some ailment). *Bhante* ! Is such a *nirgranth* (a male ascetic) steadfast or faltering in conduct ?

[Ans.] Gautam ! He (that ascetic) is steadfast and not faltering in conduct.

७. [६-८] से य संपट्ठिए संपत्ते अप्पणा य०।

एवं संपत्तेण वि चत्तारि आलावगा भाणियव्वा जहेव असंपत्तेणं।

७. [६-८] उपर्युक्त अकृत्यसेवी मुनि स्वयं आलोचनादि करके स्थविरों की सेवा में पहुँचते ही स्वयं मूक हो जाए, (इसी तरह शेष दो विकल्प हैं-स्थविरों के पास पहुँचते ही वे स्थविर काल कर जाएँ, या स्थविरों के पास पहुँचते ही स्वयं निर्ग्रन्थ काल कर जाए); जिस प्रकार असम्प्राप्त (स्थविरों के पास न पहुँचे हुए) निर्ग्रन्थ के चार आलापक कहे गये हैं, उसी प्रकार सम्प्राप्त निर्ग्रन्थ के भी चार आलापक कहने चाहिए। यावत् (चारों आलापकों में) वह निर्ग्रन्थ आराधक है, विराधक नहीं।

7. [Q.] [6-8] Suppose the aforesaid ascetic after appraisal (etc.) of his fault proceeds to senior ascetics and he reaches his destination but after that he himself becomes mute (due to some ailment). In the same way the four alternatives (including on reaching there the senior ascetics die

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

and on reaching there he himself dies) as mentioned about ascetic not reaching the senior ascetics should be repeated for the ascetic reaching the senior ascetics ... and so on up to ... that ascetic (in all four alternative conditions) is steadfast and not faltering in conduct.

८. निग्गंथेण य बहिया वियारभूमिं वा विहारभूमिं वा निक्खंतेणं अन्नयरे अकिच्चट्ठाणे पडिसेविए, तस्स णं एवं भवति–इहेव ताव अहं०। एवं एत्थ वि, ते चेव अट्ठ आलावगा भाणियव्वा जाव नो विराहए।

८. (उपाश्रय से) बाहर विचार भूमि (नीहारार्थ स्थण्डिल भूमि) अथवा विहार भूमि (स्वाध्याय भूमि) की ओर निकले हुए निर्ग्रन्थ द्वारा किसी अकृत्य स्थान का प्रतिसेवन हो गया हो, तत्क्षण उसके मन में ऐसा विचार हो कि 'पहले मैं स्वयं यहीं इस अकृत्य की आलोचनादि करूँ,' इत्यादि पूर्ववत् सारा वर्णन यहाँ कहना चाहिए। यहाँ भी पूर्वोक्त प्रकार से असम्प्राप्त और सम्प्राप्त दोनों के (प्रत्येक के स्थविरमूकत्व, स्वमूकत्व, स्थविरकालप्राप्ति और स्वकालप्राप्ति, यों चार-चार आलापक होने से) आठ आलापक कहने चाहिए। यावत् वह निर्ग्रन्थ आराधक है, विराधक नहीं; यहाँ तक सारा पाठ कहना चाहिए।

8. Suppose a *nirgranth* (a male ascetic) (leaving his place of stay) goes to the place of excretion (*Vichaar bhumi*) or the place of study (*Vihaar bhumi*) and falls victim to a lapse (transgression of basic code of conduct). He at once becomes aware of his fault and thinks – 'First of all right at this spot, I should appraise my action (*alochana*) ... and so on up to ... and court suitable penance for atonement.' Here eight alternatives (four alternatives related to the silence of self, silence of seniors, death of self and death of seniors in context of not reaching the destination and four in context of reaching) as aforesaid should be repeated for each. These alternatives should be repeated verbatim up to–'such a *nirgranth* (a male ascetic) is steadfast (*araadhak*) and not faltering in conduct (*viraadhak*)'.

९. निग्गंथेण य गामाणुगामं दूइज्जमाणेणं अन्नयरे अकिच्चट्ठाणे पडिसेविए, तस्स णं एवं भवति– इहेव ताव अहं०। एत्थ वि ते चेव अट्ठ आलावगा भाणियव्वा जाव नो विराहए।

९. ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए किसी निर्ग्रन्थ द्वारा किसी अकृत्य स्थान का प्रतिसेवन हो गया हो और तत्काल उसके मन में यह विचार स्फुरित हो कि 'पहले मैं यहीं इस अकृत्य की आलोचनादि करूँ, इत्यादि सारा वर्णन पूर्ववत् समझना चाहिए। यहाँ भी पूर्ववत् आठ आलापक कहने चाहिए। यावत् वह निर्ग्रन्थ आराधक है, विराधक नहीं; यहाँ तक समग्र पाठ कहना चाहिए।

9. Suppose a *nirgranth* (a male ascetic) (leaving his place of stay) moves about from one village to another and falls victim to a lapse (transgression of basic code of conduct). He at once becomes aware of his

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

fault and thinks – 'First of all right at this spot, I should appraise my action (*alochana*) etc. Here also aforesaid eight alternatives should be repeated. These alternatives should be repeated verbatim up to–'such a *nirgranth* (a male ascetic) is steadfast (*araadhak*) and not faltering in conduct (*viraadhak*)'.

१०. [प्र. १] **निग्गंथीए य गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठाए अन्नयरे अकिच्चट्ठाणे पडिसेविए, तीसे णं एवं भवइ–इहेव ताव अहं एयस्स ठाणस्स आलोएमि जाव तवोकम्मं पडिवज्जामि तओ पच्छा पवत्तिणीए अंतियं आलोएस्सामि जाव पडिवज्जिस्सामि, सा य संपट्ठिया असंपत्ता, पवत्तिणी य अमुहा सिया, सा णं भंते ! किं आराहिया, विराहिया ?**

[उ.] **गोयमा ! आराहिया, नो विराहिया।**

१०. [प्र. १] गृहस्थ के घर में आहार ग्रहण करने (पिण्डपात) की बुद्धि से प्रविष्ट किसी निर्ग्रन्थी (साध्वी) ने किसी अकृत्य स्थान का प्रतिसेवन कर लिया, किन्तु तत्काल उसको ऐसा विचार स्फुरित हुआ कि मैं स्वयमेव पहले यहीं इस अकृत्य स्थान की आलोचना कर लूँ, यावत् प्रायश्चित्तरूप तपःकर्म स्वीकार कर लूँ। तत्पश्चात् प्रवर्तिनी के पास आलोचना कर लूँगी, यावत् तपःकर्म स्वीकार कर लूँगी। ऐसा विचार कर उस साध्वी ने प्रवर्तिनी के पास जाने के लिए प्रस्थान किया, प्रवर्तिनी के पास पहुँचने से पूर्व ही वह प्रवर्तिनी (वातादि दोष के कारण) मूक हो गई (उसकी जिह्वा बंद हो गई–बोल न सकी), तो हे भगवन् ! वह साध्वी आराधका है या विराधका ?

[उ.] गौतम ! वह साध्वी आराधिका है, विराधिका नहीं।

10. [Q. 1] *Bhante* ! Suppose a *nirgranthi* (a female ascetic) goes to a householder to beg alms and falls victim to a lapse (transgression of basic code of conduct). She at once becomes aware of her fault and thinks–'First of all, right at this spot, I should appraise my action (*alochana*), critically review it (*pratikraman*), censure (*atma-ninda*) and condemn (*garha*) it; shear the acquired bondage, free myself of the fault, take a vow not to repeat such fault in future, and court suitable penance for atonement. Then I should proceed to *Pravartini* (head of female ascetics), appraise my action (*alochana*) ... and so on up to ...and court suitable penance for atonement.' Having thought like this she sets out to meet the *Pravartini* but before she reaches her destination the *Pravartini* become mute (due to some ailment and is unable to prescribe suitable atonement). *Bhante* ! Is such a *nirgranthi* (a female ascetic) steadfast (*araadhak*) or faltering in conduct (*viraadhak*) ?

[Ans.] Gautam ! She (that female ascetic) is steadfast and not faltering in conduct.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. [२] सा य संपट्ठिया जहा निग्गंथस्स तिण्णि गमा भणिया एवं निग्गंथीए वि तिण्णि आलावगा भाणियव्वा जाव आराहिया, नो विराहिया।

१०. [२] जिस प्रकार सम्प्रस्थित (आलोचनादि के हेतु स्थविरों के पास जाने के लिए रवाना हुए) निर्ग्रन्थ के तीन गम-(पाठ) उसी प्रकार सम्प्रस्थित (प्रवर्तिनी के पास आलोचनादि हेतु रवाना हुई) साध्वी के भी तीन गम-(पाठ) कहने चाहिए, यावत् वह साध्वी आराधिका है, विराधिका नहीं; यहाँ तक सारा पाठ कहना चाहिए।

10. [2] Like the three sets of statements about male ascetics on the way and having reached their destination, three sets of statements should be repeated for female ascetics. These alternatives should be repeated verbatim up to – 'such a *nirgranthi* (a female ascetic) is steadfast (*araadhak*) and not faltering in conduct (*viraadhak*)'.

११. [प्र. १] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–आराहए, नो विराहए ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए केइ पुरिसे एगं महं उण्णालोमं वा गयलोमं वा सणलोमं वा कप्पासलोमं वा तणसूयं वा दुहा वा तिहा वा संखेज्जहा वा छिंदित्ता अगणिकायंसि पक्खिवेज्जा, से नूणं गोयमा ! छिज्जमाणे छिन्ने, पक्खिप्पमाणे पक्खित्ते, डज्झमाणे दड्ढे त्ति वत्तव्वं सिया ?

हंता भगवं ! छिज्जमाणे छिन्ने जाव दड्ढे त्ति वत्तव्वं सिया।

११. [प्र. १] भगवन् ! किस कारण से आप कहते हैं कि वे (पूर्वोक्त प्रकार के साधु और साध्वी) आराधक हैं, विराधक नहीं ?

[उ.] गौतम ! जैसे कोई पुरुष एक बड़े ऊन (भेड़) के बाल के या हाथी के रोम के अथवा सण के रेशे के या कपास के रेशे के अथवा तृण (घास) के अग्र भाग के दो, तीन या संख्यात टुकड़े करके अग्निकाय (आग) में डाले, तो हे गौतम ! काटे जाते हुए वे (टुकड़े) काटे गए, अग्नि में ले जाते हुए को डाले गए, या जलते हुए को जल गए, क्या इस प्रकार कहा जा सकता है ?

(गौतम स्वामी–) हाँ, भगवन् ! काटते हुए काटे गए, अग्नि में डालते हुए डाले गए और जलते हुए जल गए; यों कहा जा सकता है।

11. [Q. 1] *Bhante* ! Why do you say that they (such male and female ascetic) are steadfast (*araadhak*) and not faltering in conduct (*viraadhak*) ?

[Ans.] Gautam ! Suppose a man takes some wool from a lamb, or hair from an elephant, or some fibers of hemp or cotton, or simply a few sticks of hay, cuts them into two, three or a countable number of pieces, and hurls them into a fire; then can you say that these (pieces) have been cut while they were being cut, hurled while being thrown and burnt while being burnt in fire ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(Gautam Swami—) Yes, *Bhante* ! It can be said that these (pieces) have been cut while they were being cut, hurled while being thrown and burnt while being burnt in fire.

११. [२] से जहा वा केइ पुरिसे वत्थं अहतं वा धोतं वा तंतुग्गयं वा मंजिट्ठादोणीए पक्खिवेज्जा, ने नूणं गोयमा ! उक्खिप्पमाणे उक्खित्ते, पक्खिप्पमाणे पक्खित्ते, रज्जमाणे रत्ते त्ति वत्तव्वं सिया ?

हंता, भगवं ! उक्खिप्पमाणे उक्खित्ते जाव रत्ते त्ति वत्तव्वं सिया।

से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–आराहए, नो विराहए।

११. [२] भगवान का कथन–अथवा जैसे कोई पुरुष बिलकुल नये (नहीं पहने हुए), या धोये हुए, अथवा तंत्र (करघे) से तुरन्त उतरे हुए वस्त्र को मजीठ के द्रोण (पात्र) में डाले तो हे गौतम ! उठाते हुए वह वस्त्र उठाया गया, डालते हुए डाला गया, अथवा रँगते हुए रँगा गया, क्या यों कहा जा सकता है ?

(गौतम स्वामी) हाँ, भगवन् ! उठाते हुए वह वस्त्र उठाया गया, यावत् रँगते हुए रँगा गया, इस प्रकार कहा जा सकता है।

(भगवान) इसी कारण से हे गौतम ! यों कहा जाता है (आराधना के लिए उद्यत हुए साधु या साध्वी) आराधक हैं, विराधक नहीं।

11. [2] (*Bhagavan* —) Also, suppose a man takes a piece of cloth, new or washed or just taken from a loom, and puts it into dying-pan filled with dye; then, Gautam ! Can you say that the piece of cloth has been picked up while it is being taken, put into the pan while still being put, or dyed while still being dyed ?

(Gautam Swami—) Yes, *Bhante* ! It can be said that this piece has been picked up while it is still being taken, put into the pan while still being put, or dyed while still being dyed.

(*Bhagavan*—) That is why, Gautam ! It is said that they (male and female ascetic who are prepared to follow the prescribed code) are steadfast (*araadhak*) and not faltering in conduct (*viraadhak*).

विवेचन : आराधक–विराधक की व्याख्या–आराधक का अर्थ यहाँ मोक्षमार्ग का आराधक तथा भाव शुद्ध होने से शुद्ध है। जैसे कि मृत्यु को लेकर कहा गया है–आलोचना के सम्यक् परिणाम सहित कोई साधु गुरु के पास आलोचनादि करने के लिए चल दिया है, किन्तु यदि बीच में ही वह साधु (आलोचना करने से पूर्व ही) रास्ते में काल कर गया, तो भी वह भाव से शुद्ध है। स्वयं आलोचनादि करने वाला वह साधु गीतार्थ होना सम्भव है। *(वृत्ति, पत्रांक ३७६)*

Elaboration—Definition of *araadhak* and *viraadhak* –*Araadhak* here means steadfast aspirant on the path off liberation. Due to purity of his

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

feelings he is considered spiritually pure. That is why it is said that when he proceeds to the Guru with sincere intent of atonement but has met his death on the way, even before doing atonement, he is spiritually pure. He is considered steadfast in conduct simply when he has done atonement on his own. *(Vritti, leaf 376)*

जलते हुए दीपक आदि में क्या जलता है ? WHAT BURNS IN A LAMP

१२. [प्र.] पईवस्स णं भंते ! झियायमाणस्स किं पईवे झियाइ, लट्ठी झियाइ, वत्ती झियाइ, तेल्ले झियाइ, दीवचंपए झियाइ, जोती झियाइ ?

[उ.] गोयमा ! नो पईवे झियाइ, जाव नो दीवचंपए झियाइ, जोई झियाइ।

१२. [**प्र.**] भगवन् ! जलते हुए दीपक में क्या जलता है ? क्या दीपक जलता है ? दीपयष्टि (दीवट) जलती है ? बत्ती जलती है ? तेल जलता है ? दीपचम्पक (दीपक का ढक्कन) जलता है, या ज्योति (दीपशिखा) जलती है ?

[उ.] गौतम ! दीपक नहीं जलता, यावत् दीपक का ढक्कन भी नहीं जलता, किन्तु ज्योति (दीपशिखा) जलती है।

12. [Q.] *Bhante* ! What is it that burns in a lighted lamp ? Does the lamp burn ? Does the pot of the lamp (*deep-yashti*) burn ? Does the wick burn ? Does the oil burn ? Does the cover burn ? Or does the flame burn ?

[Ans.] Gautam ! The lamp does not burn ... and so on up to ... the cover does not burn; but only the flame burns.

१३. [प्र.] अगारस्स णं भंते ! झियायमाणस्स किं अगारे झियाइ, कुड्डा झियाइ, कडणा झियाइ, धारणा झियाइ, बलहरणे झियाइ, वंसा झियाइ, मल्ला झियाइ, वग्गा झियाइ, छित्तरा झियाइ, छाणे झियाइ, जोती झियाइ ?

[उ.] गोयमा ! नो अगारे झियाइ, नो कुड्डा झियाइ, जाव नो छाणे झियाइ, जोती झियाइ।

१३. [प्र.] भगवन् ! जलते हुए घर में क्या जलता है ? क्या घर जलता है ? भींतें जलती हैं ? टाटी (खसखस आदि की टाटी या पतली दीवार) जलती हैं ? धारण (नीचे के मुख्य स्तम्भ) जलते हैं ? **बलहरण** (मुख्य स्तम्भ-धारण पर रहने वाली आड़ी लम्बी लकड़ी-बल्ली) जलता है ? बाँस जलते हैं ? **मल्ल** (भींतों के आधारभूत स्तम्भ) जलते हैं ? **वर्ग** (बाँस आदि को बाँधने वाली छाल) जलते हैं ? **छित्वर** (बाँस आदि को ढकने के लिए डाली हुई चटाई या छप्पर) जलते हैं ? **छादन** (छाण-दर्भादियुक्त पटल) जलता है अथवा ज्योति (अग्नि) जलती है ?

[उ.] गौतम ! घर नहीं जलता, भींतें नहीं जलतीं, यावत् छादन नहीं जलता, किन्तु ज्योति (अग्नि) जलती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

13. [Q.] *Bhante* ! What is it that burns in a house aflame ? Does the house burn ? Do the walls burn ? Do the partitions (*taati*) burn ? Do the load-bearing pillars (*dhaaran*) burn ? Do the beams (*balaharan*) burn ? Does the bamboo burn ? Do the pillars (*malla*) burn ? Do the tie-ropes (*varga*) burn ? Does the covering mat (*chhilvar*) burn ? Does the thatch (*chhaadan*) burn ? Or does the flame burn ?

[Ans.] Gautam ! The house does not burn. The walls do not burn ... and so on up to ... the thatch (*chhaadan*) does not burn. But only the flame burns.

क्रियाओं का निरूपण DESCRIPTION OF ACTIVITIES

१४. [प्र.] **जीवे णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिए ?**

[उ.] **गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिए पंचकिरिए, सिय अकिरिए।**

१४. [प्र.] भगवन् ! एक जीव (अपने औदारिक शरीर से, परकीय) एक औदारिक शरीर की अपेक्षा कितनी क्रिया वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! वह कदाचित् तीन क्रिया वाला, कदाचित् चार क्रिया वाला, कदाचित् पाँच क्रिया वाला होता है और कदाचित् अक्रिय भी होता है।

14. [Q.] Relative to the gross physical body (*audarik sharira*) of another being, how many activities a living being is capable of getting involved in ?

[Ans.] Gautam ! He is capable of getting involved sometimes in three activities, sometimes in four, sometimes in five and sometimes in no activity at all.

१५. [प्र.] **नेरइए णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिए ?**

[उ.] **गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए सिए पंचकिरिए।**

१५. [प्र.] भगवन् ! एक नैरयिक जीव, दूसरे के एक औदारिक शरीर की अपेक्षा कितनी क्रिया वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! वह कदाचित् तीन क्रिया वाला, कदाचित् चार क्रिया वाला और कदाचित् पाँच क्रिया वाला होता है।

15. [Q.] Relative to the gross physical body (*audarik sharira*) of another being, how many activities an infernal being is capable of getting involved in ?

[Ans.] Gautam ! He is capable of getting involved sometimes in three activities, sometimes in four, and sometimes in five activities.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६. [प्र.] असुरकुमारे णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिए ?

[उ.] एवं चेव।

१६. [प्र.] भगवन् ! एक असुरकुमार, (दूसरे के) एक औदारिक शरीर की अपेक्षा कितनी क्रिया वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! पहले कहे अनुसार (कदाचित् तीन, कदाचित् चार और कदाचित् पाँच क्रियाओं वाला) होता है।

16. [Q.] Relative to the gross physical body (*audarik sharira*) of another being, how many activities an *Asur Kumar* divine being is capable of getting involved in ?

[Ans.] Gautam ! As aforesaid (in three, four, or five activities).

१७. एवं जाव वेमाणिय, नवरं मणुस्से जहा जीवे (सु. १४)।

१७. इसी प्रकार यावत् वैमानिक देवों तक कहना चाहिए। परन्तु मनुष्य का कथन औधिक जीव की तरह (सूत्र १४ अनुसार) जानना चाहिए।

17. In the same way the aforesaid statements should be repeated up to *Vaimanik* divine beings. However, the statement for human beings should follow the pattern of the general statement (*aughik*) about living beings (aphorism 14).

१८. [प्र.] जीवे णं भंते ! ओरालियसरीरेहिंतो कतिकिरिए ?

[उ.] गोयमा ! सिय तिकिरिए जाव सिय अकिरिए।

१८. [प्र.] भगवन् ! एक जीव (दूसरे जीवों के) औदारिक शरीरों की अपेक्षा कितनी क्रिया वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! वह कदाचित् तीन क्रिया वाला, कदाचित् चार क्रिया वाला और कदाचित् पाँच क्रिया वाला, तथा कदाचित् अक्रिय (क्रियारहित) भी होता है।

18. [Q.] Relative to the gross physical bodies (*audarik sharira*) of other beings, how many activities a living being is capable of getting involved in ?

[Ans.] Gautam ! He is capable of getting involved sometimes in three activities, sometimes in four, sometimes in five and sometimes in no activity at all.

१९. [प्र.] नेरइए णं भंते ! ओरालियसरीरेहिंतो कतिकिरिए ?

[उ.] एवं एसो जहा पढमो दंडओ (सु. १५-१७) तहा इमो वि अपरिसेसो भाणियव्वो जाव वेमाणिए, नवरं मणुस्से जहा जीवे (सु. १८)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९. [प्र.] भगवन् ! एक नैरयिक जीव, (दूसरे जीवों के) औदारिक शरीरों की अपेक्षा कितनी क्रिया वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार प्रथम दण्डक (सू. १५ से १७) में कहा गया है, उसी प्रकार यह दण्डक भी सारा का सारा यावत् वैमानिक पर्यन्त कहना चाहिए; परन्तु मनुष्य का कथन सामान्य (औधिक) जीवों की तरह (सू. १८ में कहे अनुसार) जानना चाहिए।

19. [Q.] Relative to the gross physical bodies (*audarik sharira*) of other beings, how many activities an infernal being is capable of getting involved in ?

[Ans.] What has been stated with regard to the first group (aphorisms 15-17) should also be repeated for this group up to *Vaimanik* divine beings. However, the statement for human beings should follow the pattern of the general statement (*aughik*) about living beings (aphorism 18).

२०. [प्र.] जीवा णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिया ?

[उ.] गोयमा ! सिय तिकिरिया जाव सिय अकिरिया।

२०. [प्र.] भगवन् ! बहुत-से जीव, दूसरे के एक औदारिक शरीर की अपेक्षा कितनी क्रिया वाले होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे कदाचित् तीन क्रिया वाले, कदाचित् चार क्रिया वाले और कदाचित् पाँच क्रिया वाले होते हैं, तथा कदाचित् अक्रिय भी होते हैं।

20. [Q.] Relative to the gross physical body (*audarik sharira*) of another being, how many activities many living beings are capable of getting involved in ?

[Ans.] Gautam ! They are capable of getting involved sometimes in three activities, sometimes in four, sometimes in five and sometimes in no activity at all.

२१. [प्र.] नेरइया णं भंते ! ओरालियसरीराओ कतिकिरिया ?

[उ.] एवं एसो वि जहा पढमो दंडओ (सु. १५-१७) तहा भाणियव्वो जाव वेमाणिया, नवरं मणुस्सा जहा जीवा (सु. २०)।

२१. [प्र.] भगवन् ! बहुत-से नैरयकि जीव, दूसरे के एक औदारिक शरीर की अपेक्षा कितनी क्रिया वाले होते हैं ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार प्रथम दण्डक (सू. १५ से १७ तक) में कहा गया है, उसी प्रकार यह (दण्डक) भी यावत् वैमानिक-पर्यन्त कहना चाहिए। विशेष यह है कि मनुष्यों का कथन औधिक जीवों की तरह (सू. १८ के अनुसार) जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

21. [Q.] Relative to the gross physical body (*audarik sharira*) of another being, how many activities many infernal beings are capable of getting involved in ?

[Ans.] What has been stated with regard to the first group (aphorisms 15-17) should also be repeated for this group up to *Vaimanik* divine beings. However, the statement for human beings should follow the pattern of the general statement (*aughik*) about living beings (aphorism 18).

२२. [प्र.] जीवा णं भंते ! ओरालियसरीरेहिंतो कतिकिरिया ?

[उ.] गोयमा ! तिकिरिया वि, चउकिरिया वि, पंचकिरिया वि, अकिरिया वि।

२२. [प्र.] भगवन् ! बहुत-से जीव, दूसरे जीवों के औदारिक शरीरों की अपेक्षा कितनी क्रिया वाले होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे कदाचित् तीन क्रिया वाले, कदाचित् चार क्रिया वाले और कदाचित् पाँच क्रिया वाले और कदाचित् अक्रिय भी होते हैं।

22. [Q.] Relative to the gross physical bodies (*audarik sharira*) of other beings, how many activities many living beings are capable of getting involved in ?

[Ans.] Gautam ! They are capable of getting involved sometimes in three activities, sometimes in four, sometimes in five and sometimes in no activity at all.

२३. [प्र.] नेरइया णं भंते ! ओरालियसरीरेहिंतो कतिकिरिया ?

[उ.] गोयमा ! तिकिरिया वि, चउकिरिया वि, पंचकिरिया वि।

२३. [प्र.] भगवन् ! बहुत-से नैरयिक जीव, दूसरे जीवों के औदारिक शरीरों की अपेक्षा कितनी क्रिया वाले होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे तीन क्रिया वाले भी, चार क्रिया वाले भी और पाँच क्रिया वाले भी होते हैं।

23. [Q.] Relative to the gross physical bodies (*audarik sharira*) of other beings, how many activities many infernal beings are capable of getting involved in ?

[Ans.] Gautam ! They are capable of getting involved sometimes in three activities, sometimes in four, and sometimes in five activities.

२४. एवं जाव वेमाणिया, नवरं मणुस्सा जहा जीवा (सु. २२)।

२४. इसी तरह यावत् वैमानिक-पर्यन्त समझना चाहिए। विशेष इतना ही है कि मनुष्यों का कथन औधिक जीवों की तरह (सू. २२ में कहे अनुसार) जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

24. In the same way the aforesaid statements should be repeated up to *Vaimanik* divine beings. However, the statement for human beings should follow the pattern of the general statement (*aughik*) about living beings (aphorism 22).

२५. [प्र.] **जीवे णं भंते ! वेउव्वियसरीराओ कतिकिरिए ?**

[उ.] **गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय अकिरिए।**

२५. [प्र.] भगवन् ! एक जीव, (दूसरे एक जीव के) वैक्रियशरीर की अपेक्षा कितनी क्रिया वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! वह कदाचित् तीन क्रिया वाला, कदाचित् चार क्रिया वाला और कदाचित् क्रियारहित होता है।

25. [Q.] Relative to the transmuted body (*vaikriya sharira*) of another being, how many activities a living being is capable of getting involved in ?

[Ans.] Gautam ! He is capable of getting involved sometimes in three activities, sometimes in four, and sometimes in no activity at all.

२६. [प्र.] **नेरइए णं भंते ! वेउव्वियसरीराओ कतिकिरिए ?**

[उ.] **गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए।**

२६. [प्र.] 'भगवन् ! एक नैरयिक जीव, (दूसरे एक जीव के) वैक्रियशरीर की अपेक्षा कितनी क्रिया वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! वह कदाचित् तीन क्रिया वाला और कदाचित् चार क्रिया वाला होता है।

26. [Q.] Relative to the transmuted body (*vaikriya sharira*) of another being, how many activities an infernal being is capable of getting involved in ?

[Ans.] Gautam ! He is capable of getting involved sometimes in three activities, and sometimes in four activities.

२७. **एवं जाव वेमाणिए, नवरं मणुस्से जहा जीव (सु. २५)।**

२७. इस प्रकार यावत् वैमानिक-पर्यन्त कहना चाहिए। किन्तु मनुष्य का कथन औधिक जीव की तरह (सू. २५) कहना चाहिए।

27. In the same way the aforesaid statements should be repeated up to *Vaimanik* divine beings. However, the statement for human beings should follow the pattern of the general statement (*aughik*) about living beings (aphorism 25).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८. एवं जहा ओरालियसरीरेणं चत्तारि दंडगा भणिया तहा वेउव्वियसरीरेण वि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा, नवरं पंचमकिरिया न भण्णइ, सेसं तं चेव।

२८. जिस प्रकार औदारिकशरीर की अपेक्षा चार दण्डक कहे गये, उसी प्रकार वैक्रियशरीर की अपेक्षा भी चार दण्डक कहने चाहिए। विशेषता इतनी है कि इसमें पंचम क्रिया का कथन नहीं करना चाहिए। शेष सभी कथन पूर्ववत् समझना चाहिए।

28. Like four statements mentioned with regard to gross physical body, four statements should be repeated with regard to the transmutable body. The only difference being that here the fifth activity should not be included, rest of the statement remaining the same.

२९. [प्र.] एवं जहा वेउव्वियं तहा आहारगं पि, तेयगं पि, कम्मगं पि भाणियव्वं। एक्केक्के चत्तारि दंडगा भाणियव्वा जाव वेमाणिया णं भंते ! कम्मगसरीरेहिंतो कइकिरिया ?

[उ.] गोयमा ! तिकिरिया वि, चउकिरिया वि।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति.।

॥ अट्ठमसए : छट्ठो उद्देसओ समत्तो ॥

२९. [प्र.] जिस प्रकार वैक्रियशरीर का कथन किया गया है, उसी प्रकार आहारक, तैजस् और कार्मणशरीर का भी कथन करना चाहिए। इन तीनों के प्रत्येक के चार-चार दण्डक कहने चाहिए, यावत्-(प्रश्न-) 'भगवन् ! बहुत-से वैमानिक देव (परकीय) कार्मणशरीरों की अपेक्षा कितनी क्रिया वाले होते हैं ?'

'[उ.] 'गौतम ! तीन क्रिया वाले भी और चार क्रिया वाले भी होते हैं'; यहाँ तक कहना चाहिए।

हे भगवान् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है; (यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करते हैं।)

29. **[Q.]** The pattern of statements mentioned about transmutable body should also be followed for teleportable (*aahaarak*), fiery (*taijas*) and *karmic* (*karman*) bodies. Aforesaid four statements should be stated for each of these up to—[Q.] *Bhante* ! Relative to many *karmic* bodies (*karman sharira*) of other beings, how many activities many *Vaimanik* divine beings are capable of getting involved in ?

[Ans.] Gautam ! They are capable of getting involved sometimes in three activities, and sometimes in four activities.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : अन्य जीव के औदारिकादि शरीर की अपेक्षा होने वाली क्रिया का आशय–कायिकी आदि पाँच क्रियाएँ हैं, जिनका स्वरूप पहले बताया जा चुका है। जब एक जीव, दूसरे पृथ्वीकायादि, जीव के शरीर की अपेक्षा काया का व्यापार करता है, तब उसे तीन क्रियाएँ होती हैं-कायिकी, आधिकारणिकी और प्राद्वेषिकी। क्योंकि सराग जीव को कायिक क्रिया के सद्भाव में आधिकरणिकी तथा प्राद्वेषिकी क्रिया अवश्य होती है, क्योंकि सराग जीव की काया अधिकरण रूप और प्रद्वेषयुक्त होती है। आधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी और कायिकी, इन तीनों क्रियाओं का अविनाभाव (परस्पर गहरा) सम्बन्ध है। पारितापनिकी और प्राणातिपातिकी क्रिया में भजना (विकल्प) है; जब जीव, दूसरे जीव को परिताप पहुँचाता है अथवा दूसरे के प्राणों का घात करता है, तभी क्रमशः पारितापनिकी अथवा प्राणातिपातिकी क्रिया होती है। अतः जब जीव, दूसरे जीव को परिताप उत्पन्न करता है, तब जीव को चार क्रियाएँ होती हैं। जब जीव, दूसरे जीव के प्राणों का घात करता है, तब उसे पाँच क्रियाएँ होती हैं। क्योंकि इन दोनों क्रियाओं में पूर्व की तीन क्रियाओं का सद्भाव अवश्य होता है। इसीलिए मूल पाठ में जीव को कदाचित् तीन, कदाचित् चार और कदाचित् पाँच क्रिया वाला कहा गया है। जीव कदाचित् अक्रिय भी होता है, यह बात अयोगी अवस्था की अपेक्षा से कही गई है। (मनुष्य के सिवाय शेष २३ दण्डकों के जीव अक्रिय नहीं होते।)

नरकस्थित नैरयिक जीव को मनुष्यलोकस्थित आहारकशरीर की अपेक्षा तीन या चार क्रिया वाला बताया गया है, उसका रहस्य यह है कि नैरयिक जीव ने अपने पूर्वभव के शरीर का विवेक (विरति) के अभाव में व्युत्सृजन नहीं किया (त्याग नहीं किया), इसलिए उस जीव द्वारा बनाया हुआ वह (भूतपूर्व) शरीर जब तक शरीर परिणाम का सर्वथा त्याग नहीं कर देता, तब तक अंशरूप में भी शरीर परिणाम को प्राप्त वह शरीर, पूर्वभाव-प्रज्ञापना की अपेक्षा 'घृतघट' न्याय से (घी निकालने पर भी उसे भूतपूर्व घट की अपेक्षा 'घी का घड़ा' कहा जाता है, तद्वत्) घी का घड़ा कहलाता है। अतः उस मनुष्यलोकवर्ती (भूतपूर्व) शरीर के अंशरूप अस्थि (हड्डी) आदि से आहारकशरीर का स्पर्श होता है, अथवा उसे परिताप उत्पन्न होता है, इस अपेक्षा से नैरियक जीव आहारकशरीर की अपेक्षा तीन या चार क्रिया वाला होता है। इसी प्रकार देव आदि तथा द्वीन्द्रिय आदि जीवों के विषय में भी जान लेना चाहिए। *(वृत्ति पत्रांक ३७७, प्रज्ञापना क्रियापद)*

॥ अष्टम शतक : छठा उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Meaning of activities related to body of another being—There are five types of activities (*kriya*) including physical (*kaayiki*) as already detailed earlier. When a living being indulges in physical activity in relation to the body of other living being including earth-bodied beings, then it gets involved in three activities–*kaayiki kriya* (physical activity), *aadhikaraniki kriya* (activity of collecting instruments of violence) and *praadveshiki kriya* (activity of harbouring aversion). This is because when a living being having attachment indulges in physical activity he is necessarily involved in *aadhikaraniki kriya* (activity of collecting instruments of violence) and *praadveshiki kriya* (activity of harbouring aversion). The reason for this is that the body of a living being with attachment acts as an instrument and it has

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the feeling of aversion. The three said activities—*kaayiki kriya* (physical activity), *aadhikaraniki kriya* (activity of collecting instruments of violence) and *praadveshiki kriya* (activity of harbouring aversion)—are closely connected. In *paaritapaniki kriya* (activity of inflicting pain), *pranatipatiki* (activity of killing) there is a scope of alternatives. Involvement in these two activities, *paaritapaniki kriya* (activity of inflicting pain), *pranatipatiki* (activity of killing), takes place one after the other only when a being causes pain to or kills another being. Thus when a living being causes pain to another living being it gets involved in four activities and when he kills another being he gets involved in five activities. This is because the last two activities necessarily have involvement of first three activities. That is why in the original text it is mentioned that a being gets involved sometimes in three, sometimes in four or sometimes in five activities. A living being is sometimes non-active also; this is with regard to the absolutely detached state. (Other than human beings, living beings of twenty-three *dandaks* or places of suffering are never non-active.)

An infernal being in hell is said to be involved in three or four activities in relation to the body with intake (*aahaarak sharira*) existing in the land of humans. The reason for this is that in absence of renunciation, infernal beings do not completely abandon the bodies of preceding birth. Therefore as long as that body does not disintegrate completely, and even a fraction of the original body exists, it is recognized as the body of that being in context of preceding birth. It is like a pot filled with butter is called pot of butter even after it is emptied. Thus the infernal being touches the part of that *aahaarak sharira* of past birth and suffers pain. It is in this context that an infernal being in hell is said to be involved in three or four activities in relation to the body with intake (*aahaarak sharira*). The same is true for divine and other beings including two-sensed beings. *(Vritti, leaf 377; Kriyapad of Prajnapana Sutra)*.

● END OF THE SIXTH LESSON OF THE EIGHTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्तमो उद्देसओ : 'अदत्ते'

अष्टम शतक : सप्तम उद्देशक : अदत्त

EIGHTH SHATAK (Chapter Eight) : SEVENTH LESSON : ADATT (NOT GIVEN)

अन्यतीर्थिकों के साथ स्थविरों का वाद HERETICS DISCUSS WITH STHAVIRS

१. तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नयरे। वण्णओ। गुणसिलए चेइए। वण्णओ, जाव पुढविसिलावट्टओ। तस्स णं गुणसिलस्स चेइयस्स अदूरसामंते बहवे अन्नउत्थिया परिवसंति।

१. उस काल और उस समय में राजगृह नामक नगर था। वहाँ गुणशीलक नामक चैत्य था। (उसका वर्णन औपपातिक सूत्र के समान जान लेना चाहिए) यावत् पृथ्वी शिलापट्टक था। उस गुणशीलक चैत्य के आस-पास बहुत-से अन्यतीर्थिक रहते थे।

1. During that period of time there was a city called Rajagriha. Description (as before). There was a *Chaitya* called Gunasheelak... and so on up to... There was a slab of stone. A little distance away from that Gunasheelak Chaitya lived many heretics (*anyatirthik*).

२. तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे आदिगरे जाव समोसढे जाव परिसा पडिगया।

२. उस काल और उस समय में धर्मतीर्थ की आदि (स्थापना) करने वाले श्रमण भगवान् महावीर समवसृत हुए (पधारे) यावत् धर्मोपदेश सुनकर परिषद् वापिस चली गई।

2. During that period of time Bhagavan Mahavir, the founder of religious order ... and so on up to ... arrived ... and so on up to ... *Bhagavan* gave his sermon. People dispersed.

३. तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे अंतेवासी थेरा भगवंतो जातिसंपन्ना कुलसंपन्ना जहा बितियसए (स. २, उ. ५, सु. १२) जाव जीवियासामरणभयविप्पमुक्का समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते उड्ढंजाणू अहोसिरा झाणकोट्ठोवगया संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा जाव विहरंति।

३. उस काल और उस समय में श्रमण भगवान महावीर स्वामी के बहुत-से शिष्य स्थविर भगवन्त जातिसम्पन्न, कुलसम्पन्न इत्यादि दूसरे शतक में वर्णित गुणों से युक्त यावत् जीवन की आशा और मरण के भय से विमुक्त थे। वे श्रमण भगवान महावीर स्वामी के न अतिदूर, न अतिनिकट ऊर्ध्व जानु (घुटने खड़े रखकर), अधोशिरस्क (नीचे मस्तक नमा कर) ध्यानरूप कोष्ठ को प्राप्त होकर संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण करते थे।

3. During that period of time many of Shraman Bhagavan Mahavir's senior ascetic disciples (*Sthavir Bhagavant*), endowed with virtues like *jatisampanna* (belonged to high castes), *kulasampanna* (came from noble

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

families) (etc. as mentioned in Chapter 2) ... and so on up to ... were free of the desire for life and fear of death. With their knees up and heads bent low, they sat immersed in meditation, enkindling (*bhaavit*) their souls with ascetic-discipline and austerities in proximity of Shraman Bhagavan Mahavir.

४. तए णं ते अन्नउत्थिया जेणेव थेरा भगवंतो तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता ते थेरे भगवंते एवं वयासी–तुब्भे णं अज्जो ! तिविहं तिविहेणं अस्संजयअविरयअप्पडिहय जहा सत्तमसए बितिए उद्देसए (स. ७, उ. २, सु. १ [२]) जाव एगंतबाला यावि भवह।

४. एक बार वे अन्यतीर्थिक, जहाँ स्थविर भगवन्त थे, वहाँ आये। उनके निकट आकर वे स्थविर भगवन्तों से यों कहने लगे–'हे आर्यो ! तुम त्रिविध–त्रिविध (तीन करण, तीन योग से) असंयत, अविरत, अप्रतिहतपापकर्म (पापकर्म का निरोध नहीं किये) तथा पापकर्म का प्रत्याख्यान नहीं किये हुए हो'; इत्यादि जैसे सातवें शतक के द्वितीय उद्देशक (सू. १/२) में कहा गया है, तदनुसार कहा; यावत् तुम एकान्त बाल (अज्ञानी) भी हो।

4. Once those heretics came where the senior ascetics (*sthavirs*) lived. Approaching the senior ascetics they said–O noble ones ! You are devoid of restraint (*asamyat*), detachment (*avirat*), control on and renunciation of sinful indulgence (*apratihat* and *apratyakhyan*) towards all *praan* (two to four sensed beings; beings)... and so on up to... all *sattva* (immobile beings; entities) through three means (*karan*) and three methods (*yoga*). [As mentioned in seventh chapter, second lesson, aphorism 1/2 up to 'you are also complete ignorant (*ekaant baal*)'].

५. [प्र.] तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–केणं कारणेणं अज्जो ! अम्हे तिविहं तिविहेणं अस्संजय–अविरय जाव एगंतबाला यावि भवामो ?

५. [प्र.] इस पर उन स्थविर भगवन्तों ने उन अन्यतीर्थिकों से इस प्रकार पूछा–'आर्यो ! किस कारण से हम त्रिविध–त्रिविध असंयत, अविरत, यावत् एकान्तबाल हैं ?

5. [Q.] The senior ascetics responded by asking the heretics–Noble ones ! Why do you say that we are devoid of restraint (*asamyat*), detachment (*avirat*), control on and renunciation of sinful indulgence (*apratihat* and *apratyakhyan*) through three means (*karan*) and three methods ... and so on up to ... are complete ignorant (*ekaant baal*) ?

६. [उ.] तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–तुब्भे णं अज्जो ! अदिन्नं गेण्हह, अदिन्नं भुंजह, अदिन्नं सातिज्जह। तए णं तुब्भे अदिन्नं गेण्हमाणा, अदिन्नं भुंजमाणा, अदिन्नं सातिज्जमाणा तिविहं तिविहेणं अस्संजय अविरय जाव एगंतबाला यावि भवह।

६. [उ.] तदनन्तर उन अन्यतीर्थिकों ने स्थविर भगवन्तों से इस प्रकार कहा–हे आर्यो ! तुम अदत्त (किसी के द्वारा नहीं दिया हुआ) पदार्थ ग्रहण करते हो, अदत्त का भोजन करते हो और अदत्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

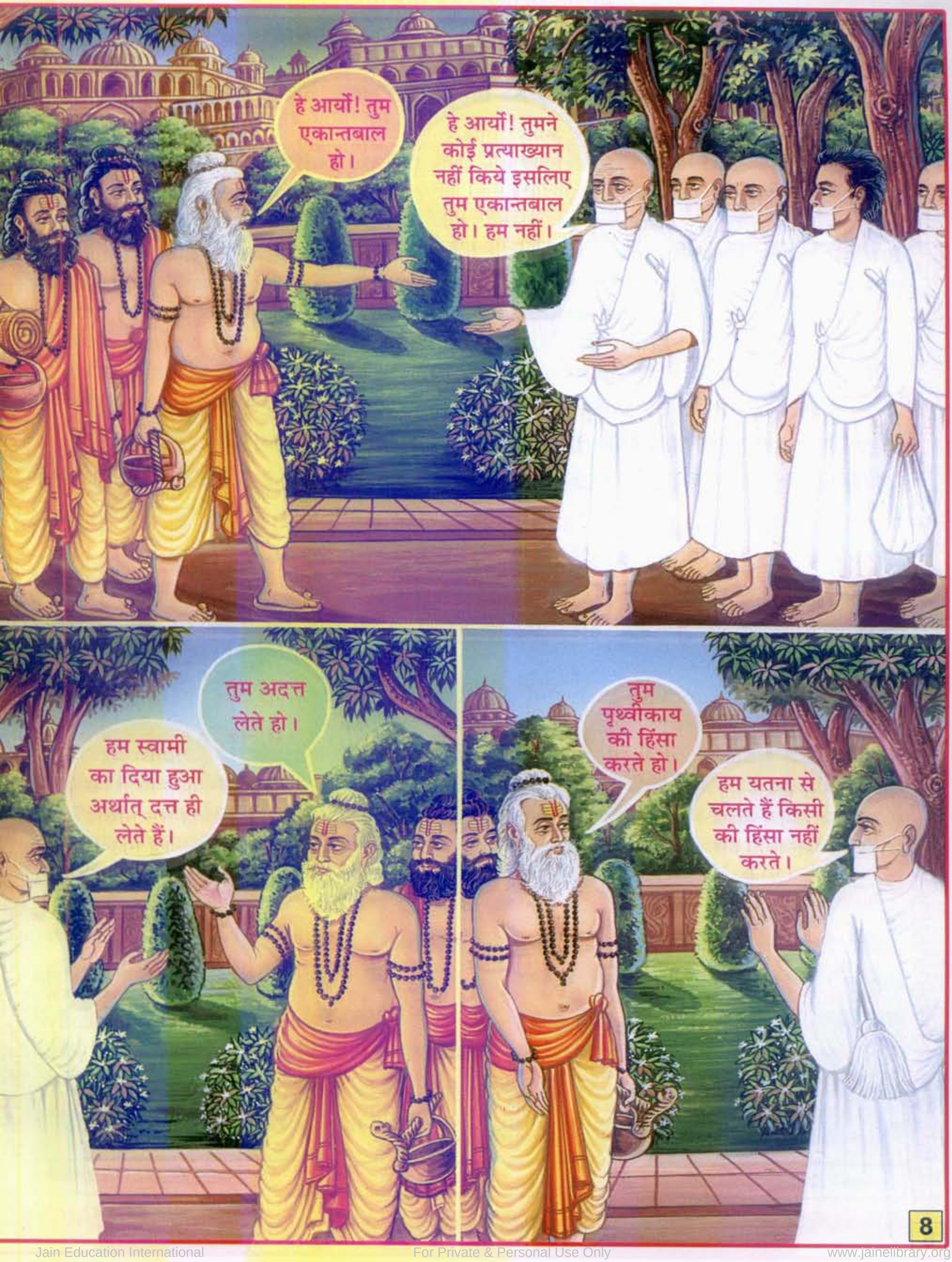

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 8

Illustration No. 8

अन्यतीर्थिक और स्थविर संवाद

भगवान महावीर राजगृह नगर के गुणशीलक चैत्य में विराजमान थे। वहाँ भगवान के बहुत-से स्थविर शिष्य थे। जाति सम्पन्न आदि गुणों से युक्त थे। राजगृह के गुणशीलक चैत्य के आसपास बहुत से अन्यतीर्थिक साधु भी रहते थे। वे भगवान के साधुओं के सम्पर्क में आते रहते थे। उनमें आपस में वाद-प्रतिवाद भी होता रहता था। ऐसे ही एक प्रसंग का यहाँ वर्णन किया गया है।

एक बार अन्यदर्शनी साधुओं ने स्थविर श्रमणों से चर्चा की और स्थविर श्रमणों ने अपने ज्ञान से उन्हें निरुत्तर कर दिया। भगवान के श्रमण अपने धर्म की श्रेष्ठता सिद्ध कर उन्हें निरुत्तर कर देते थे। "तुम अदत्त लेते हो" या "तुम बाल हो" आदि कथनों का यथोचित उत्तर देकर स्थविर बताते हैं कि हम किसी का दिया लेते हैं अर्थात् 'दत्त' ही लेते हैं। तुम अदत्त लेते हो। यावत् "तुम एकांत बाल हो, हम नहीं!" इस प्रकार भगवान के श्रमण इतने ज्ञान सम्पन्न, श्रद्धा सम्पन्न थे कि अपने धर्म की श्रेष्ठता सिद्ध करते हुए अन्य धर्मावलम्बी को निरुत्तर कर देते थे।

—शतक 8, उ. 7, सूत्र 1-24

DISCUSSION BETWEEN HERETICS AND SENIOR ASCETICS

Bhagavan Mahavir was staying in Gunasheelak Chaitya in Rajagriha. Also with him were many senior ascetic disciples belonging to high castes and having many qualities. A little distance away from that lived many heretics (*anyatirthik*). They came in contact with Bhagavan's disciples and had discussions with them. One such incident is narrated here.

Once the heretics debated with the senior ascetics and were silenced by their profound knowledge. Often the ascetic disciples of Bhagavan silenced the heretics by proving that the Shraman religion was better. They gave convincing reply to accusations by heretics, such as 'You take what is not given.' Or 'You are ignorant.' They logically refuted and proved that it was not them but the heretics who took what is not given. Thus it was the heretics that were ignorant and not they. Thus Bhagavan's disciples had so profound knowledge and faith that establishing the excellence of their own religion they silenced the followers of other religions.

— Shatak-8, lesson-7, Sutra-1-24

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का स्वाद लेते हो, अर्थात्-अदत्त (ग्रहणादि) की अनुमति देते हो। इस प्रकार अदत्त का ग्रहण करते हुए, अदत्त का भोजन करते हुए, और अदत्त की अनुमति देते हुए तुम त्रिविध-त्रिविध असंयत, अविरत यावत् एकान्तबाल हो।

6. [Ans.] In reply the heretics said to the senior ascetics–Noble ones ! You accept things not given to you (*adatt*), you eat things not given to you and taste things not given to you. In other words you allow accepting (etc.) of things not given to you. This way, as you accept what is not given, eat what is not given and allow to take what is not given, you are devoid of restraint (*asamyat*), devoid of detachment (*avirat*), and devoid of control on as well as renunciation of sinful indulgence (*apratihat* and *apratyakhyan*) through three means (*karan*) and three methods ... and so on up to ... are complete ignorant (*ekaant baal*).

७. [प्र.] तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–केणं कारणेणं अज्जो ! अम्हे अदिन्नं गेण्हामो, अदिन्नं भुंजामो, अदिन्नं सातिज्जामो, जए णं अम्हे अदिन्नं गेण्हमाणा, जाव अदिन्नं सातिज्जमाणा तिविहं तिविहेणं अस्संजय जाव एगंतबाला यावि भवामो ?

७. [प्र.] तदनन्तर उन स्थविर भगवन्तों ने उन अन्यतीर्थिकों से इस प्रकार पूछा-'आर्यो ! हम किस-किस प्रकार से अदत्त का ग्रहण करते हैं, अदत्त का भोजन करते हैं और अदत्त की अनुमति देते हैं, जिससे कि हम अदत्त का ग्रहण करते हुए यावत् अदत्त की अनुमति देते हुए त्रिविध-त्रिविध असंयत, अविरत यावत् एकान्तबाल हैं ?

7. [Q.] The senior ascetics asked the heretics—Noble ones ! How do you think we accept things not given to us (*adatt*), we eat things not given to us, taste things not given to us, and allow accepting things not given to us ? Thereby due to accepting what is not given ... and so on up to ... we are devoid of restraint (*asamyat*), detachment (*avirat*), control on and renunciation of sinful indulgence (*apratihat* and *apratyakhyan*) through three means (*karan*) and three methods ... and so on up to ... are complete ignorant (*ekaant baal*).

८. [उ.] तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–तुम्हाणं अज्जो ! दिज्जमाणे अदिन्ने, पडिगहेज्जमाणे अपडिग्गहिए, निसिरिज्जमाणे अणिसट्ठे, तुब्भे णं अज्जो ! दिज्जमाणं पडिग्गहगं असंपत्तं एत्थ णं अंतरा केइ अवहरिज्जा, गाहावइस्स णं तं, नो खलु तं तुब्भं, तए णं तुब्भे अदिन्नं गेण्हह जाव अदिन्नं सातिज्जह, तए णं तुब्भे अदिन्नं गेण्हमाणा जाव एगंतबाला यावि भवह।

८. [उ.] इस पर उन अन्यतीर्थिकों ने स्थविर भगवन्तों से इस प्रकार कहा-हे आर्यो ! तुम्हारे मत में दिया जाता हुआ पदार्थ, 'नहीं दिया गया', ग्रहण किया जाता हुआ, 'ग्रहण नहीं किया गया', तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(पात्र में) डाला जाता हुआ पदार्थ, 'नहीं डाला गया'; ऐसा कथन है; इसलिए हे आर्यो ! तुमको दिया जाता हुआ पदार्थ, जब तक पात्र में नहीं पड़ा, तब तक बीच में से ही कोई उसका अपहरण कर ले तो तुम कहते हो–'वह उस गृहपति के पदार्थ का अपहरण हुआ'; 'तुम्हारे पदार्थ का अपहरण हुआ', ऐसा तुम नहीं कहते। इस कारण से तुम अदत्त का ग्रहण करते हो, यावत् अदत्त की अनुमति देते हो; अतः तुम अदत्त का ग्रहण करते हुए यावत् एकान्तबाल हो।

8. [Ans.] The heretics replied to the senior ascetics–Noble ones ! According to you, things in process of being given are said to be 'not given', things in process of being accepted are said to be 'not accepted', and things being poured in a bowl are said to be 'not poured'. As such while being poured if a thing is snatched away by someone, you say – "The thing belonging to the householder has been snatched away." You do not say–"My thing has been snatched away." That is the reason we say that you accept things not given to you (*adatt*) ... and so on up to ... you allow accepting things not given to you. This way as you accept what is not given ... and so on up to ... are complete ignorant (*ekaant baal*).

९. तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–नो खलु अज्जो ! अम्हे अदिन्नं गिण्हामो, अदिन्नं भुंजामो, अदिन्नं सातिज्जामो, अम्हे णं अज्जो ! दिन्नं गेण्हामो, दिन्नं भुंजामो, दिन्नं सातिज्जामो, तए णं अम्हे दिन्नं गेण्हमाणा दिन्नं भुंजमाणा दिन्नं सातिज्जमाणा तिविहं तिविहेणं संजय–विरय–पडिहय जहा सत्तमसए (स. ७, उ. २, सु. १ [२]) जाव एगंतपंडिया यावि भवामो।

९. [**प्रतिवाद**] यह सुनकर उन स्थविर भगवन्तों ने उन अन्यतीर्थिकों से इस प्रकार कहा–'आर्यो ! हम अदत्त का ग्रहण नहीं करते, न अदत्त को खाते हैं और न ही अदत्त की अनुमति देते हैं। हे आर्यो ! हम तो दत्त (स्वामी द्वारा दिये गये) पदार्थ को ग्रहण करते हैं, दत्त भोजन को खाते हैं और दत्त की अनुमति देते हैं। इसलिए हम दत्त का ग्रहण करते हुए, दत्त का भोजन करते हुए और दत्त की अनुमति देते हुए त्रिविध-त्रिविध संयत, विरत, पापकर्म के प्रतिनिरोधक, पापकर्म का प्रत्याख्यान किये हुए हैं। जिस प्रकार सप्तमशतक (द्वितीय उद्देशक, सू. १) में कहा है, तदनुसार हम यावत् एकान्तपण्डित हैं।'

9. The senior ascetics then explained those heretics–Noble ones ! We do not accept things not given to us (*adatt*), we do not eat things not given to us and we do not allow accepting (etc.) of things not given to us. Noble ones ! In fact, we accept things given to us (*datt*), we eat things given to us and we allow accepting (etc.) of things given to us. Thus as we accept what is given, eat what is given and allow to take what is given, we observe restraint (*samyat*), observe detachment (*virat*), and observe control on as well as renunciation of sinful indulgence (*pratihat* and *pratyakhyan*) through three means (*karan*) and three methods (as

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

mentioned in seventh chapter, second lesson, aphorism 1)... and so on up to ... thus we are perfectly prudent (*ekaant pundit*).

१०. तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–केण कारणेणं अज्जो ! तुम्हे दिन्नं गेण्हह जाव दिन्नं सातिज्जह, तए णं तुब्भे दिन्नं गेण्हमाणा जाव एगंतपंडिया यावि भवह ?

१०. [वाद] तब उन अन्यतीर्थिकों ने उन स्थविर भगवन्तों से इस प्रकार कहा–'तुम किस कारण (किस प्रकार) दत्त का ग्रहण करते हो, यावत् दत्त की अनुमति देते हो, जिससे दत्त का ग्रहण करते हुए यावत् तुम एकान्तपण्डित हो ?'

10. [Q.] The heretics further asked the senior ascetics–Why do you say, Noble ones ! You accept things given to you (*datt*), you eat things given to you and you allow accepting (etc.) of things given to you. This way as you accept what is given ... and so on up to ... you are perfectly prudent (*ekaant pundit*) ?

११. तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–अम्हे णं अज्जो ! दिज्जमाणे दिन्ने, पडिगहेज्जमाणे पडिग्गहिए, निसिरिज्जमाणे निसट्ठे। अम्हं णं अज्जो ! दिज्जमाणं पडिग्गहगं असंपत्तं एत्थ णं अंतरा केइ अवहरेज्जा, अम्हं णं तं, णो खलु तं गाहावइस्स, तए णं अम्हे दिन्नं गेण्हामो, दिन्नं भुंजामो, दिन्नं सातिज्जामो, तए णं अम्हे दिन्नं गेण्हमाणा जाव दिन्नं सातिज्जमाणा तिविहं तिविहेणं संजय जाव एगंतपंडिया यावि भवामो। तुब्भे णं अज्जो ! अप्पणा चेव तिविहं तिविहेणं अस्संजय जाव एगंतबाला यावि भवह।

११. [प्रतिवाद] इस पर स्थविर भगवन्तों ने उन अन्यतीर्थिकों से इस प्रकार कहा–'हे आर्यो ! हमारे सिद्धान्तानुसार–दिया जाता हुआ पदार्थ 'दिया गया'; ग्रहण किया जाता हुआ पदार्थ 'ग्रहण किया' और पात्र में डाला जाता हुआ पदार्थ 'डाला गया' कहलाता है। इसीलिए हे आर्यो ! हमें दिया जाता हुआ पदार्थ हमारे पात्र में नहीं पहुँचा (पड़ा) है, इसी बीच में कोई व्यक्ति उसका अपहरण कर ले तो 'वह पदार्थ हमारा अपहृत हुआ' कहलाता है, किन्तु 'वह पदार्थ गृहस्थ का अपहृत हुआ', ऐसा नहीं कहलाता। इस कारण से हम दत्त को ग्रहण करते हैं, दत्त आहार करते हैं और दत्त की ही अनुमति देते हैं। इस प्रकार हम दत्त को ग्रहण करते हुए यावत् दत्त की अनुमति देते हुए हम त्रिविध–त्रिविध संयत, विरत यावत् एकान्तपण्डित हैं, प्रत्युत, हे आर्यो ! तुम स्वयं त्रिविध–त्रिविध असंयत, अविरत, यावत् एकान्तबाल हो।

11. [Ans.] The senior ascetics explained to the heretics–Noble ones ! According to us things in process of being given are said to be 'given', things in process of being accepted are said to be 'accepted', and things being poured in a bowl are said to be 'poured'. As such, while being poured if a thing is snatched away by someone, we say – "Our thing has been snatched away." We do not say–"The thing belonging to the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

householder has been snatched away." That is the reason we say that we accept things given to us (*datt*), we eat things given to us and we allow accepting things given to us. This way as we accept what is given ... and so on up to ... we observe restraint (*samyat*)... and so on up to ... through three means (*karan*) and three methods ... and so on up to ... thus we are perfectly prudent (*ekaant pundit*). On the other hand, noble ones ! It is you who are devoid of restraint (*asamyat*) ... and so on up to ... through three means (*karan*) and three methods (*yoga*) ... and so on up to ... complete ignorant (*ekaant baal*).

१२. [प्र.] तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–केण कारणेणं अज्जो ! अम्हे तिविहं जाव एगंतबाला यावि भवामो ?

१२. [प्र.] तत्पश्चात् उन अन्यतीर्थिकों ने स्थविर भगवन्तों से इस प्रकार पूछा–आर्यो ! हम किस कारण से (कैसे) त्रिविध–त्रिविध... यावत् एकान्तबाल हैं ?

12. [Q.] At this the heretics inquired from the senior ascetics—Noble ones ! Why do you say that we are devoid of restraint (*asamyat*) ... and so on up to ...through three means (*karan*) and three methods ... and so on up to ... are complete ignorant (*ekaant baal*) ?

१३. [उ.] तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–तुब्भे णं अज्जो ! अदिन्नं गेण्हह, अदिन्नं भुंजह, अदिन्नं साइज्जह, तए णं अज्जो ! तुब्भे अदिन्नं गे. जाव एगंतबाला यावि भवह।

१३. [उ.] इस पर उन स्थविर भगवन्तों ने उन अन्यतीर्थिकों से यों कहा–आर्यो ! तुम लोग अदत्त का ग्रहण करते हो, अदत्त भोजन करते हो और अदत्त की अनुमति देते हो; इसलिए हे आर्यो ! तुम अदत्त का ग्रहण करते हुए यावत् एकान्तबाल हो।

13. [Ans.] The senior ascetics said to the heretics—Noble ones ! You accept things not given to you (*adatt*), you eat things not given to you and taste things not given to you. In other words you allow accepting (etc.) of things not given to you. This way as you accept what is not given ... and so on up to ... are complete ignorant (*ekaant baal*).

१४. तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–केण कारणेणं अज्जो ! अम्हे अदिन्नं गेण्हामो जाव एगंतबाला यावि भवामो ?

१४. [प्रतिवाद] तब उन अन्यतीर्थिकों ने उन स्थविर भगवन्तों से इस प्रकार पूछा–आर्यो ! हम किस कारण से अदत्त का ग्रहण करते हैं यावत् जिससे कि हम एकान्तबाल हैं ?

14. [Q.] The heretics then asked the senior ascetics—Noble ones ! How do you think we accept things not given to us (*adatt*) ... and so on up to ... are complete ignorant (*ekaant baal*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–तुब्भे णं अज्जो ! दिज्जमाणे अदिन्ने तं चेव जाव गाहावइस्स णं तं, णो खलु तं तुब्भं, तए णं तुब्भे अदिन्नं गेण्हह, तं चेव जाव एगंतबाला यावि भवह।

१५. [प्रत्युत्तर] यह सुनकर उन स्थविर भगवन्तों ने उन अन्यतीर्थिकों से इस प्रकार कहा-आर्यो ! तुम्हारे मत में दिया जाता हुआ पदार्थ 'नहीं दिया गया' इत्यादि कहलाता है, यह सारा वर्णन पहले कहे अनुसार यहाँ करना चाहिए; यावत् वह पदार्थ गृहस्थ का है, तुम्हारा नहीं; इसलिए तुम अदत्त का ग्रहण करते हो, यावत् पूर्वोक्त प्रकार से तुम एकान्तबाल हो।

15. [Ans.] The senior ascetics replied to the heretics–Noble ones ! According to you, things in process of being given are said to be 'not given', (repeat as aforesaid aphorism 8) ... and so on up to ... "The thing belonging to the householder and not me has been snatched away." That is the reason we say that you accept things not given to you (*adatt*) ... and so on up to ... you are complete ignorant (*ekaant baal*).

विवेचन : अन्यतीर्थिकों की भ्रान्ति–अन्यतीर्थिकों ने इस भ्रान्तिवश स्थविर मुनियों पर आक्षेप किया था कि श्रमणों का ऐसा मत है कि दिया जाता हुआ पदार्थ नहीं दिया गया, ग्रहण किया जाता हुआ पदार्थ नहीं ग्रहण किया गया और पात्र में डाला जाता हुआ पदार्थ नहीं डाला गया; माना गया है। किन्तु जब स्थविरों ने इसका प्रतिवाद किया और उनकी इस भ्रान्ति का निराकरण **'चलमाणे चलिए'** के सिद्धान्तानुसार किया, तब वे अन्यतीर्थिक निरुत्तर हो गये, उल्टे उनके द्वारा किया गया आक्षेप उन्हीं पर आरोपित हो गया।

'दिया जाता हुआ' वर्तमानकालिक व्यापार है, और 'दत्त' भूतकालिक है, अतः वर्तमान और भूत दोनों अत्यन्त भिन्न होने से दीयमान (दिया जाता हुआ) दत्त नहीं हो सकता, दत्त ही 'दत्त' कहा जा सकता है, यह अन्यतीर्थिकों की भ्रान्ति थी। इसी का निराकरण करते हुए स्थविरों ने कहा-'हमारे मत से क्रियाकाल और निष्ठाकाल, इन दोनों में भिन्नता नहीं है। जो 'दिया जा रहा है', वह 'दिया ही गया' समझना चाहिए। *(वृत्ति, पत्रांक ३८१)*

Elaboration—Misunderstanding of heretics—The heretics blamed the senior ascetics of misconduct because they believed that according to the senior ascetics things in process of being given are said to be 'not given', things in process of being accepted are said to be 'not accepted', and things being poured in a bowl are said to be 'not poured'. But when the senior ascetics refuted it on the basis of the principle of '*chalamane chaliye*' or 'a thing moving is said to have moved', the heretics were silenced. In fact their blame rebounded on them.

The heretics were confused because they believed that 'being given' describes an act of the present time whereas 'has been given' describes an act of the past. Present and past are far apart because only what has

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

been given can be called as given and not what is being given. In order to remove this confusion the senior ascetics explained that in their view there is hardly any difference in the time of action and that of conclusion. That which is being given should be taken as given (because it has already been assigned to be given). *(Vritti, leaf 381)*

१६. तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी—तुब्भे णं अज्जो ! तिविहं तिविहेणं अस्संजय जाव एगंतबाला यावि भवह।

१६. [**अन्य आक्षेप**] तत्पश्चात् उन अन्यतीर्थिकों ने उन स्थविर भगवन्तों से कहा—आर्यो ! (हम कहते हैं कि) तुम ही त्रिविध-त्रिविध असंयत, अविरत यावत् एकान्तबाल हो !

16. [Another blame] Then the heretics said to those senior ascetics–Noble ones ! (We say that) It is you who are devoid of restraint (*asamyat*) ... and so on up to ... through three means (*karan*) and three methods (*yoga*) ... and so on up to ... complete ignorant (*ekaant baal*).

१७. तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी—केण कारणेणं अम्हे तिविहं तिविहेणं जाव एगंतबाला यावि भवामो ?

१७. [**प्रतिप्रश्न**] इस पर उन स्थविर भगवन्तों ने उन अन्यतीर्थिकों से (पुनः) पूछा—आर्यो ! किस कारण से हम त्रिविध-त्रिविध यावत् एकान्तबाल हैं ?

17. The senior ascetics asked those heretics–Noble ones ! Why do you say that we are devoid of restraint (*asamyat*) ... and so on up to ... through three means (*karan*) and three methods (*yoga*) ... and so on up to ... complete ignorant (*ekaant baal*) ?

१८. तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी—तुब्भे णं अज्जो ! रीयं रीयमाणा पुढविं पेच्चहे अभिहणह वत्तेह लेसेह संघाएह संघट्टेह परितावेह किलामेह उवद्दवेह, तए णं तुब्भे पुढविं पेच्चेमाणा जाव उवद्दवेमाणा तिविहं तिविहेणं असंजयअविरय जाव एगंतबाला यावि भवह।

१८. [**आक्षेप**] तब उन अन्यतीर्थिकों ने स्थविर भगवन्तों से यों कहा—"आर्यो ! तुम गमन करते हुए पृथ्वीकायिक जीवों को दबाते (आक्रान्त करते) हो, हनन करते हो, पादाभिघात करते हो, उन्हें भूमि के साथ श्लिष्ट (संघर्षित) करते (टकराते) हो; उन्हें एक-दूसरे के ऊपर इकट्ठे करते हो, जोर से स्पर्श करते हो, उन्हें परितापित करते हो, उन्हें मारणान्तिक कष्ट देते हो और उपद्रवित करते-मारते हो। इस प्रकार पृथ्वीकायिक जीवों को दबाते हुए यावत् मारते हुए तुम त्रिविध-त्रिविध असंयत, अविरत यावत् एकान्तबाल हो।"

18. Then the heretics said to those senior ascetics–Noble ones ! While walking you bear down on earth-bodied beings (*prithvikaaya jivas*), trample them, kick them, rub them on the ground, pile them, crush

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

them, torment them, cause them extreme agony and even kill them. This way bearing down on earth-bodied beings (*prithvikaaya jivas*) ... and so on up to ... killing them, you are devoid of restraint (*asamyat*) ... and so on up to ... through three means (*karan*) and three methods (*yoga*) ... and so on up to ... complete ignorant (*ekaant baal*).

१९. तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–नो खलु अज्जो ! अम्हे रीयं रीयमाणा पुढविं पेच्चेमो अभिहणामो जाव उवद्दवेमो, अम्हे णं अज्जो ! रीयं रीयमाणा कायं वा जोगं वा रियं वा पडुच्च देसं देसेणं वयामो, पएसं पएसेणं वयामो, तेणं अम्हे देसं देसेणं वयमाणा पएसं पएसेणं वयमाणा नो पुढविं पेच्चेमो अभिहणामो जाव उवद्दवेमो, तए णं अम्हे पुढविं अपेच्चेमाणा अणभिहणेमाणा जाव अणुवद्दवेमाणा तिविहं तिविहेणं संजय जाव एगंतपंडिया यावि भवामो, तुब्भे णं अज्जो ! अप्पणा चेव तिविहं तिविहेणं अस्संजय जाव बाला यावि भवह।

१९. [**प्रतिवाद**] तब उन स्थविरों ने उन अन्यतीर्थिकों से कहा–"आर्यो ! हम गमन करते हुए पृथ्वीकायिक जीवों को दबाते (कुचलते) नहीं, हनते नहीं, यावत् मारते नहीं। हे आर्यो ! हम गमन करते हुए काय (अर्थात् शरीर के लघुनीति-बड़ीनीति आदि कार्य) के लिए, योग (अर्थात् ग्लान आदि की सेवा) के लिए, ऋतु (अर्थात् अप्कायादि–जीवसंरक्षणरूप संयम) के लिए एक देश (स्थल) से दूसरे देश (स्थल) में और एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में जाते हैं। इस प्रकार एक स्थल से दूसरे स्थल में और एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में जाते हुए हम पृथ्वीकायिक जीवों को दबाते नहीं, उनका हनन नहीं करते, यावत् उनको मारते नहीं। इसलिए पृथ्वीकायिक जीवों को नहीं दबाते हुए, हनन न करते हुए यावत् नहीं मारते हुए हम त्रिविध-त्रिविध संयत, विरत, यावत् एकान्तपण्डित हैं। किन्तु हे आर्यो ! तुम स्वयं त्रिविध-त्रिविध असंयत, अविरत, यावत् एकान्तबाल हो।"

19. The senior ascetics replied to the heretics—Noble ones ! While walking we do not bear down on earth-bodied beings (*prithvikaaya jivas*), do not trample them ... and so on up to ... and do not kill them. Noble ones ! We move from one area to another and one place to another solely for the purpose of nature's call including disposing (*kaaya*), serving the ailing (*yoga*) and protecting life forms including water-bodied beings (*ritu*). While walking thus, from one area to another and one place to another, we do not bear down on earth-bodied beings (*prithvikaaya jivas*), do not trample them ... and so on up to ... and do not kill them. Therefore, by not bearing down on earth-bodied beings (*prithvikaaya jivas*), not trampling them ... and so on up to ... and not killing them we are observing restraint (*samyat*) ... and so on up to ... through three means (*karan*) and three methods (*yoga*) ... and so on up to ... we are perfectly prudent (*ekaant pundit*). In fact it is you who are devoid of restraint (*asamyat*) ... and so on up to ... through three means

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(*karan*) and three methods (*yoga*) ... and so on up to ... complete ignorant (*ekaant baal*).

२०. तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–केण कारणेणं अज्जो ! अम्हे तिविहं तिविहेणं जाव एगंतबाला यावि भवामो ?

२०. [प्रतिप्रश्न] इस पर उन अन्यतीर्थिकों ने उन स्थविर भगवन्तों से इस प्रकार पूछा–"आर्यो ! हम किस कारण त्रिविध–त्रिविध असंयत, अविरत यावत् एकान्तबाल हैं ?"

20. The heretics asked the senior ascetics—Why do you say that we are devoid of restraint (*asamyat*) ... and so on up to ... through three means (*karan*) and three methods (*yoga*) ... and so on up to ... complete ignorant (*ekaant baal*) ?

२१. तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–तुब्भे णं अज्जो ! रीयं रीयमाणा पुढविं पेच्चेह जाव उवद्दवेह, तए णं तुब्भे पुढविं पेच्चेमाणा जाव उवद्दवेमाणा तिविहं तिविहेणं जाव एगंतबाला यावि भवह।

२१. [प्रत्युत्तर] तब स्थविर भगवन्तों ने उन अन्यतीर्थिकों से यों कहा–"आर्यो ! तुम गमन करते हुए पृथ्वीकायिक जीवों को दबाते हो, यावत् मार देते हो। इसलिए पृथ्वीकायिक जीवों को दबाते हुए, यावत् मारते हुए तुम त्रिविध–त्रिविध असंयत, अविरत यावत् एकान्तबाल हो।"

21. The senior ascetics replied to the heretics—While walking you bear down on earth-bodied beings (*prithvikaaya jivas*) ... and so on up to ... kill them. Therefore bearing down on earth-bodied beings (*prithvikaaya jivas*) ... and so on up to ... killing them, you are devoid of restraint (*asamyat*) ... and so on up to ... through three means (*karan*) and three methods (*yoga*) ... and so on up to ... complete ignorant (*ekaant baal*).

२२. तए णं ते अन्नउत्थिया ते थेरे भगवंते एवं वयासी–तुब्भे णं अज्जो ! गम्ममाणे अगते, वीतिक्कमिज्जमाणे अवीतिक्कंते रायगिहं नगरं संपाविउकामे असंपत्ते ?

२२. [प्रत्याक्षेप] इस पर वे अन्यतीर्थिक उन स्थविर भगवन्तों से यों बोले–हे आर्यो ! तुम्हारे मत में गच्छन् (जाता हुआ), अगत (नहीं गया) कहलाता है; जो लाँघा जा रहा है, वह नहीं लाँघा गया, कहलाता है और राजगृह को प्राप्त करने (पहुँचने) की इच्छा वाला पुरुष असम्प्राप्त (नहीं पहुँचा हुआ) कहलाता है।

22. At last the heretics said to the senior ascetics–Noble ones ! According to you what 'is in the process of going' is termed as 'has not gone', what is 'beings crossed' is termed as 'has not crossed' and 'one who is desirous of reaching Rajagriha' is termed as 'has not reached Rajagriha'.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३. तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–नो खलु अज्जो ! अम्हं गम्ममाणे अगए, वीइक्कमिज्जमाणे अवीतिक्कंते रायगिहं नगरं जाव असंपत्ते, अम्हं णं अज्जो ! गम्ममाणे गए, वीतिक्कमिज्जमाणे वीतिक्कंते रायगिहं नगरं संपाविउकामे संपत्ते, तुब्भं णं अप्पणा चेव गम्ममाणे अगए वीतिक्कमिज्जमाणे अवीतिक्कंते रायगिहं नगरं जाव असंपत्ते।

२३. [प्रतिवाद] तत्पश्चात् उन स्थविर भगवन्तों ने उन अन्यतीर्थिकों से इस प्रकार कहा–आर्यो ! हमारे मत में जाता हुआ (गच्छन्) अगत (नहीं गया) नहीं कहलाता, व्यतिक्रम्यमाण (उल्लंघन किया जाता हुआ) अव्यतिक्रान्त (उल्लंघन नहीं किया) नहीं कहलाता। इसी प्रकार राजगृह नगर को प्राप्त करने की इच्छा वाला व्यक्ति असम्प्राप्त नहीं कहलाता। हमारे मत में तो, आर्यो ! 'गच्छन्' 'गत'; 'व्यतिक्रम्यमाण' 'व्यतिक्रान्त'; और राजगृह नगर को प्राप्त करने की इच्छा वाला व्यक्ति सम्प्राप्त कहलाता है। हे आर्यो ! तुम्हारे ही मत में 'गच्छन्' 'अगत', 'व्यतिक्रम्यमाण' 'अव्यतिक्रान्त' और राजगृह नगर को प्राप्त करने की इच्छा वाला असम्प्राप्त कहलाता है।

23. At this the senior ascetics said to those heretics—According to us what is 'in the process of going' is not termed as 'has not gone', what is 'being crossed' is not termed as 'has not crossed' and 'one who is desirous of reaching Rajagriha' is not termed as 'has not reached Rajagriha'. According to us, Noble ones ! What is in the process of going is termed as 'has gone', what is being crossed is termed as 'has crossed' and one who is desirous of reaching Rajagriha is termed as 'has reached Rajagriha'. Noble ones ! In fact it is according to you that what is in the process of going is termed as 'has not gone', what is beings crossed is termed as 'has not crossed' and one who is desirous of reaching Rajagriha is termed as 'has not reached Rajagriha'.

२४. तए णं ते थेरा भगवंतो ते अन्नउत्थिए एवं पडिहणेंति, पडिहणित्ता गइप्पवायं नाममज्झयणं पन्नवइंसु।

२४. तदनन्तर उन स्थविर भगवन्तों ने उन अन्यतीर्थिकों को प्रतिहत (निरुत्तर) किया और निरुत्तर करके उन्होंने गतिप्रपात नामक अध्ययन प्ररूपित किया।

24. This way those senior ascetics silenced those heretics and gave them a complete discourse on the flow of movement (*Gati Prapaat*).

विवेचन : अन्यतीर्थिकों की भ्रान्ति–पूर्व चर्चा में निरुत्तर अन्यतीर्थिकों ने पुनः भ्रान्तिवश स्थविरों पर आक्षेप किया कि आप लोग ही असंयत यावत् एकान्तबाल हैं, क्योंकि आप गमनागमन करते समय पृथ्वीकायिक जीवों की विविध रूप से हिंसा करते हैं, किन्तु सुलझे हुए विचारों के निर्ग्रन्थ स्थविरों ने धैर्यपूर्वक उनकी इस भ्रान्ति का निराकरण किया कि हम लोग काय, योग और ऋत के लिए बहुत ही यतनापूर्वक गमनागमन करते हैं, किसी भी जीव की किसी भी रूप में हिंसा नहीं करते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस पर पुनः अन्यतीर्थिकों ने आक्षेप किया कि आपके मत से गच्छन्, अगत, व्यतिक्रम्यमाण, अव्यतिक्रान्त और राजगृह को सम्प्राप्त करना चाहने वाला असम्प्राप्त कहलाता है। इसका प्रतिवाद स्थविरों ने किया और आक्षेपक अन्यतीर्थिकों को ही उनकी भ्रान्ति समझाकर निरुत्तर कर दिया। *(वृत्ति, पत्रांक ३८१)*

Elaboration—Silenced once, the heretics out of ignorance, blamed the senior ascetics that they were unrestrained and complete ignorant because they harmed earth-bodied and other beings in various ways. But the wise senior ascetics patiently explained the heretics that they moved from one area to another solely for purpose of nature's call including disposing (*kaaya*), serving the ailing (*yoga*) and protecting life forms including water-bodied beings (*ritu*), and caused no harm to any living being in any way.

After that the heretics further blamed that according to ascetics what is going is termed as 'not gone', what is beings crossed is termed as 'has not crossed' and one who is desirous of reaching Rajagriha is termed as 'has not reached Rajagriha'. The senior ascetics refuted this and silenced the heretics by removing their doubt. *(Vritti, leaf 381)*

गतिप्रवाद और उसके पाँच भेदों का निरूपण FLOW OF MOVEMENT

२५. [प्र.] कइविहे णं भंते ! गइप्पवाए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहे गइप्पवाए पण्णत्ते, तं जहा–पयोगगई ततगई बंधणछेयणगई उववायगई विहायगई। एत्तो आरब्भ पयोगपयं निरवसेसं भाणियव्वं, जाव से त्तं विहायगई।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति.।

॥ अट्ठमसए : सत्तमो उद्देसओ समत्तो ॥

२५. [प्र.] भगवन् ! गतिप्रपात कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! गतिप्रपात पाँच प्रकार का कहा गया है। यथा–प्रयोगगति, ततगति, बन्धन–छेदनगति, उपपातगति और विहायोगति।

यहाँ से प्रारम्भ करके प्रज्ञापनासूत्र का सोलहवाँ समग्र प्रयोगपद कहना चाहिए; यावत् 'यह विहायोगति का वर्णन हुआ'; यहाँ तक कथन करना चाहिए।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है; यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करने लगे।

25. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is flow of movement (*gatiprapaat*) ?

[Ans.] Gautam ! Flow of movement (*gatiprapaat*) is said to be of five kinds–*Prayoga-gati, Tat-gati, Bandhan-chhedan-gati, Upapaat-gati,* and *Vihaayo-gati*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Starting from here *Prayogapad*, the whole sixteenth chapter of *Prajnapana Sutra*, should be quoted here up to 'This concludes the description of *Vihaayo-gati*'.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : गतिप्रपात के पाँच भेदों का स्वरूप—गतिप्रपात या गतिप्रवाद एक अध्ययन है, जिसका प्रज्ञापनासूत्र के सोलहवें प्रयोगपद में विस्तृत वर्णन है। उसके अनुसार संक्षेप में पाँचों गतियों का स्वरूप इस प्रकार है–

(१) **प्रयोगगति**—जीव के व्यापार से अर्थात् १५ प्रकार के योगों से जो गति (गमन क्रिया) होती है, उसे प्रयोगगति कहते हैं।

(२) **ततगति**—विस्तृत गति या विस्तार वाली गति को ततगति कहते हैं। जैसे–कोई व्यक्ति ग्रामान्तर जाने के लिए रवाना हुआ, परन्तु ग्राम बहुत दूर निकला, वह अभी उसमें पहुँचा नहीं; उसकी एक-एक पैर रखते हुए जो क्षेत्रान्तरप्राप्तिरूप गति होती है, वह ततगति कहलाती है। इस गति का विषय विस्तृत होने से इसे 'ततगति' कहा जाता है।

(३) **बन्धन–छेदनगति**—बन्धन के छेदन से होने वाली गति। जैसे–शरीर से मुक्त जीव की गति होती है।

(४) **उपपातगति**—उत्पन्न होने रूप गति को उपपातगति कहते हैं। इसके तीन प्रकार हैं-क्षेत्र-उपपात, भवोपपात और नो-भवोपपात। नारकादि जीव और सिद्ध जीव जहाँ रहते हैं, वह आकाश क्षेत्रोपपात है, कर्मों के वश जीव नारकादि भवों (पर्यायों) में उत्पन्न होते हैं, वह भवोपपात है। कर्मसम्बन्ध से रहित अर्थात् नारकादि-पर्याय से रहित उत्पन्न होने रूप गति को नो-भवोपपात कहते हैं। इस प्रकार की गति सिद्ध जीव और पुद्गलों में पाई जाती है।

(५) **विहायोगति**—आकाश में होने वाली गति को विहायोगति कहते हैं। *(वृत्ति, पत्रांक ३८१ एवं प्रज्ञापनासूत्र, पद १६)*

॥ अष्टम शतक : सप्तम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—*Gatiprapaat* or *Gatipravaad* is the study of flow of movement discussed in detail in the sixteenth chapter, titled *Prayogapad*, of *Prajnapana Sutra*. According to it the brief description of five kinds of movement is as follows–

Prayoga-gati—The intentional movement with 15 types of association (*yoga*).

Tat-gati—Extended or exploratory movement. For example a person starts walking towards a specific village and finds it to be far away. In such situation the step by step movement of shifting from one area to another is called *tat-gati*. As this relates to movement in a large area it is called *tat-gati*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Bandhan-chhedan-gati**—**The movement related to bondage termination. For example the movement of soul when the bondage of body is terminated.

Upapaat-gati**—**The movement involved in rebirth. This is of three types *Kshetra-upapaat*, *Bhava-upapaat*, and *No-bhava-upapaat*. Rebirth in infernal and divine realms as well as the realm of the liberated is *Kshetra-upapaat-gati*. Rebirth in different genus (like from that of human beings to that of infernal beings) due to bondage of *karmas* is *Bhava-upapaat-gati*. Rebirth not related to *karmic* bondage is called *No-bhava-upapaat-gati*. This last movement is found only in *Siddhas* or matter particles.

Vihaayo-gati**—**Aerial movement or movement in space is called *Vihaayo-gati*. *(Vritti, leaf 381; Prajnapana Sutra Ch. 16)*

● END OF THE SEVENTH LESSON OF THE EIGHTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठमो उद्देसओ : 'पडिणीए'
अष्टम शतक : अष्टम उद्देशक : प्रत्यनीक
EIGHTH SHATAK (Chapter Eight) : EIGHTH LESSON : PRATYANEEK (ADVERSARIES)

प्रत्यनीक–भेद–प्ररूपणा **TYPES OF ADVERSARIES**

१. रायगिहे नयरे जाव एवं वयासी–

१. राजगृह नगर में (गौतम स्वामी ने) यावत् (श्रमण भगवान महावीर स्वामी से) इस प्रकार पूछा–

1. In the city of Rajagriha (Gautam Swami) ... and so on up to ... submitted (to Shraman Bhagavan Mahavir) as follows–

२. [प्र.] गुरू णं भंते ! पडुच्च कति पडिणीया पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तं जहा–आयरियपडिणीए उवज्झायपडिणीए थेरपडिणीए।

२. [प्र.] भगवन् ! गुरुदेव की अपेक्षा कितने प्रत्यनीक (द्वेषी या विरोधी) कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! तीन प्रत्यनीक कहे हैं। यथा–(१) आचार्य–प्रत्यनीक, (२) उपाध्याय–प्रत्यनीक, और (३) स्थविर–प्रत्यनीक।

2. [Q.] *Bhante* ! Relative to the spiritual teacher (guru) how many adversaries (*pratyaneek*) are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! There are said to be three adversaries–(1) *Acharya-pratyaneek* (adversary of *acharya*), (2) *Upadhyaya-pratyaneek* (adversary of *upadhyaya*) and (3) *Sthavir-pratyaneek* (adversary of *sthavir*).

३. [प्र.] गइं णं भंते ! पडुच्च कति पडिणीया पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तं जहा–इहलोगपडिणीए परलोगपडिणीए दुहओलोगपडिणीए।

३. [प्र.] भगवन् ! गति की अपेक्षा कितने प्रत्यनीक कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! तीन प्रत्यनीक कहे हैं। यथा–(१) इहलोक–प्रत्यनीक, (२) परलोक–प्रत्यनीक, और (३) उभयलोक–प्रत्यनीक।

3. [Q.] *Bhante* ! Relative to *gati* (transmigration) how many adversaries (here it conveys 'maligner') are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! There are said to be three adversaries–(1) *Ihalok-pratyaneek* (maligner of this life), (2) *Paralok-pratyaneek* (maligner of next life) and (3) *Ubhayalok-pratyaneek* (maligner of both lives).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. [प्र.] समूहं णं भंते ! पडुच्च कति पडिणीया पण्णत्ता ?

[उ.] **गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तं जहा–कुलपडिणीए गणपडिणीए संघपडिणीए।**

४. [प्र.] भगवन् ! समूह (श्रमणसंघ) की अपेक्षा कितने प्रत्यनीक कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! तीन प्रत्यनीक कहे हैं। यथा–(१) कुल–प्रत्यनीक, (२) गण–प्रत्यनीक, और (३) संघ–प्रत्यनीक।

4. [Q.] *Bhante* ! Relative to *samuha* (group or ascetic organization) how many adversaries (*pratyaneek*) are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! There are said to be three adversaries–(1) *Kula-pratyaneek* (adversary to the lineage of a single *acharya*), (2) *Gana-pratyaneek* (adversary to a friendly group of three *kula*s) and (3) *Sangh-pratyaneek* (adversary to the apex body of many *gana*s).

५. [प्र.] **अणुकंपं पडुच्च० पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तं जहा–तवस्सिपडिणीए गिलाणपडिणीए सेहपडिणीए।**

५. [प्र.] भगवन् ! अनुकम्प्य (साधुओं) की अपेक्षा कितने प्रत्यनीक कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! तीन प्रत्यनीक कहे हैं। जैसे–(१) तपस्वी–प्रत्यनीक, (२) ग्लान-प्रत्यनीक, और (३) शैक्ष (नवदीक्षित)–प्रत्यनीक।

5. [Q.] *Bhante* ! Relative to *anukampya* (object of compassion) how many adversaries (*pratyaneek*) are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! There are said to be three adversaries–(1) *Tapasvi-pratyaneek* (adversary to austerity observing ascetic), (2) *Glana-pratyaneek* (adversary to ailing ascetic) and (3) *Shaiksha-pratyaneek* (adversary to newly initiated ascetic).

६. [प्र.] **सुयं णं भंते ! पडुच्च० पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तं जहा–सुत्तपडिणीए, अत्थपडिणीए, तदुभयपडिणीए।**

६. [प्र.] भगवन् ! श्रुत की अपेक्षा कितने प्रत्यनीक कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! तीन प्रत्यनीक कहे हैं। जैसे–(१) सूत्र–प्रत्यनीक, (२) अर्थ–प्रत्यनीक, और (३) तदुभय–प्रत्यनीक।

6. [Q.] *Bhante* ! Relative to *Shrut* (scriptures) how many adversaries (here it conveys 'defiers') are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! There are said to be three adversaries–(1) *Sutra-pratyaneek* (defier of the text), (2) *Arth-pratyaneek* (defier of the meaning) and (3) *Tadubhaya-pratyaneek* (defier of both these).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. [प्र.] भावं णं भंते ! पडुच्च० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! तओ पडिणीया पण्णत्ता, तं जहा—नाणपडिणीए, दंसणपडिणीए, चरित्तपडिणीए।

७. [प्र.] भगवन् ! भाव की अपेक्षा कितने प्रत्यनीक कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! तीन प्रत्यनीक कहे हैं। यथा-(१) ज्ञान-प्रत्यनीक, (२) दर्शन-प्रत्यनीक, और (३) चारित्र-प्रत्यनीक।

7. [Q.] *Bhante* ! Relative to *bhaava* (spiritual state) how many adversaries (here it conveys 'maligners') are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! There are said to be three adversaries–(1) *Jnana-pratyaneek* (maligner of knowledge), (2) *Darshan-pratyaneek* (maligner of perception/faith) and (3) *Chaaritra-pratyaneek* (maligner of spiritual conduct).

विवेचन : प्रत्यनीक—प्रतिकूल आचरण करने वाला विरोधी, या द्वेषी 'प्रत्यनीक' कहलाता है।

गुरु-प्रत्यनीक—आचार्य, उपाध्याय और स्थविर ये तीन गुरु होते हैं। अर्थ के व्याख्याता आचार्य, सूत्र के दाता उपाध्याय तथा वय, श्रुत और दीक्षा-पर्याय की अपेक्षा वृद्ध व गीतार्थ साधु स्थविर कहलाते हैं। ६० वर्ष से अधिक उम्र वाले वय स्थविर, आचारांग निशिध-समवाय आदि अंगों को जानने वाले श्रुत स्थविर और २० वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले पर्याय स्थविर कहलाते हैं। इनके दोष देखना, अहित करना, उनके वचनों का अपमान करना, उनकी वैयावृत्य न करना आदि प्रतिकूल व्यवहार करने वाले इनके 'प्रत्यनीक' कहलाते हैं।

गति-प्रत्यनीक—मनुष्य आदि गति की अपेक्षा प्रतिकूल आचरण करने वाले गति-प्रत्यनीक हैं। **इहलोक**—मनुष्य-पर्याय का प्रत्यनीक, जो अज्ञानतापूर्वक इन्द्रिय-विषयों के प्रतिकूल आचरण करता है। **परलोक**—जन्मान्तर-प्रत्यनीक वह जो परलोक सुधारने के बजाय केवल इन्द्रियविषयासक्त रहता है। **उभयलोक**—जो दोनों लोक सुधारने के बदले कुकर्म करके दोनों लोक बिगाड़ता है।

समूह-प्रत्यनीक—यहाँ साधु-समुदाय की अपेक्षा तीन प्रकार के समूह बताये हैं-**कुल, गण और संघ**। एक आचार्य की सन्तति 'कुल', परस्पर धर्मस्नेह सम्बन्ध रखने वाले तीन कुलों का समूह 'गण' और ज्ञान-दर्शन-चारित्र गुणों से सम्पन्न श्रमणों का समुदाय 'संघ' कहलाता है। इन तीनों के विपरीत आचरण करने वाले क्रमशः कुल-प्रत्यनीक, गण-प्रत्यनीक और संघ-प्रत्यनीक कहलाते हैं।

अनुकम्प्य-प्रत्यनीक—अनुकम्पा करने योग्य-अनुकम्प्य साधु तीन हैं-**तपस्वी, ग्लान (रुग्ण) और शैक्ष**। इन तीनों की आहारादि द्वारा सेवा नहीं करके इनके प्रतिकूल आचरण या व्यवहार करने वाले प्रत्यनीक कहलाते हैं।

श्रुत-प्रत्यनीक—श्रुत (शास्त्र) के विरुद्ध कथन करना, श्रुत का अवर्णवाद बोलना श्रुत-प्रत्यनीक है। श्रुत तीन प्रकार के होने के कारण श्रुत-प्रत्यनीक के भी क्रमशः **सूत्र-प्रत्यनीक अर्थ-प्रत्यनीक** और **तदुभय-प्रत्यनीक**, ये तीन भेद हैं।

भाव-प्रत्यनीक—क्षायिकादि भावों के प्रतिकूल आचरणकर्ता भाव-प्रत्यनीक है। **ज्ञान, दर्शन और चारित्र**, ये तीन भाव हैं। *(वृत्ति, पत्रांक ३८२)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration—*Pratyaneek*—An adversary or maligner or defier or one who goes against the established norms is called *pratyaneek.*

Guru-*pratyaneek*—Generally speaking there are three categories of guru–*Acharya*, *Upadhyaya* and *Sthavir*. The head of the order and teacher of the authentic meaning is *acharya*, teacher of the right text is *upadhyaya* and a senior and accomplished ascetic is *sthavir*. An adversary is one who finds faults with them, causes harm to them, insults them, ignores them and goes against them.

Gati-pratyaneek—Those who behave contradictory to the norms of the genus they are born in, including the human genus, are called *Gati-pratyaneek*. *Ihalok-pratyaneek*–he who indulges in abnormal sensual behaviour out of ignorance during the present human birth. *Paralok-pratyaneek*–he who exclusively indulges in sensual pleasures avoiding any efforts to improve his next birth. *Ubhayalok-pratyaneek*–he who indulges in despicable acts and spoils this and the next life instead of trying to improve both.

Samuha-pratyaneek—In context of the ascetic organization three groups have been mentioned here–*Kula*, *Gana* and *Sangh*. Lineage of a single *acharya* is called *Kula*. A friendly group of three *Kula*s is called *Gana*. An apex body of many *Gana*s having ascetics endowed with virtues of right knowledge-faith-conduct is called *Sangh*. Those who go against these three are called *Kula-pratyaneek*, *Gana-pratyaneek*, and *Sangh-pratyaneek* respectively.

Anukampya-pratyaneek—There are three kinds of ascetics who inspire compassion–*Tapasvi* (austerity observing ascetic), *Glana* (ailing ascetic) and *Shaiksha* (newly initiated ascetic). Those who do not offer them food and other services and misbehave with them are called adversaries to the three.

Shrut-pratyaneek—To defy, refute and slander scriptures is to be *shrut-pratyaneek*. As there are three divisions of scriptures there are three kinds of adversaries—*Sutra-pratyaneek* (defier of the text), *Arth-pratyaneek* (defier of the meaning) and *Tadubhaya-pratyaneek* (defier of both).

Bhaava-pratyaneek—To act against spiritual purification (defined as states of destruction of *karmas*) is to be *Bhaava-pratyaneek*. As it is attained through three means–knowledge, perception/faith and conduct there are three *pratyaneeks*—*Jnana-pratyaneek* (maligner of knowledge),

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Darshan-pratyaneek (maligner of perception/faith) and *Chaaritra-pratyaneek* (maligner of spiritual conduct). *(Vritti, leaf 382)*

निर्ग्रन्थ के लिए आचरणीय पंचविध व्यवहार **FIVE TYPES OF ASCETIC BEHAVIOUR**

८. [प्र.] कइविहे णं भंते ! ववहारे पण्णत्ते ?

[उ.] **गोयमा ! पंचविहे ववहारे पण्णत्ते, तं जहा–आगम–सुत–आणा–धारणा–जीए। जहा से तत्थ आगमे सिया, आगमेणं ववहारं पट्ठवेज्जा। णो य से तत्थ आगमे सिया; जहा से तत्थ सुते सिया, सुएणं ववहारं पट्ठवेज्जा। णो य से तत्थ सुए सिया; जहा से तत्थ आणा सिया, आणाए ववहारं पट्ठवेज्जा। णो य से तत्थ आणा सिया; जहा से तत्थ धारणा सिया, धारणाए ववहारं पट्ठवेज्जा। णो य से तत्थ धारणा सिया; जहा से तत्थ जीए सिया जीएणं ववहारं पट्ठवेज्जा। इच्चेएहिं पंचहिं ववहारं पट्ठवेज्जा, तं जहा--आगमेणं सुएणं आणाए धारणाए जीएणं। जहा जहा से आगमे सुए आणा धारणा जीए तहा तहा ववहारं पट्ठवेज्जा।**

८. [प्र.] भगवन् ! व्यवहार (यथोचित सम्यक् प्रवृत्ति--निवृत्ति) कितने प्रकार का कहा है ?

[उ.] गौतम ! व्यवहार पाँच प्रकार का कहा है। (१) आगम–व्यवहार, (२) श्रुत–व्यवहार, (३) आज्ञा–व्यवहार, (४) धारणा–व्यवहार, और (५) जीत–व्यवहार। इन पाँच प्रकार के व्यवहारों में से जिस साधु के पास आगम (केवलज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, अवधिज्ञान, चौदह पूर्व, दस पूर्व अथवा नौ पूर्व का ज्ञान) हो, उसे उस आगम से व्यवहार (प्रवृत्ति--निवृत्ति) करना चाहिए। जिसके पास आगम न हो, उसे श्रुत से व्यवहार चलाना चाहिए। जहाँ श्रुत न हो वहाँ आज्ञा से, यदि आज्ञा भी न हो तो जिस प्रकार की धारणा हो, उस धारणा से, कदाचित् धारणा भी न हो तो जिस प्रकार का जीत (परम्परा) हो, उस जीत से व्यवहार चलाना चाहिए। इस प्रकार इन पाँचों आगम, श्रुत, आज्ञा, धारणा और जीत से (साधु–साध्वी को) व्यवहार चलाना चाहिए। जिसके पास जिस–जिस प्रकार से आगम, श्रुत, आज्ञा, धारणा और जीत, इन पाँच व्यवहारों में से जो व्यवहार हो, उसे उस–उस प्रकार से व्यवहार चलाना (प्रवृत्ति--निवृत्ति करना) चाहिए।

8. [Q.] *Bhante* ! How many types of ascetic-behaviour (*vyavahaar*) are there ?

[Ans.] Gautam ! Ascetic-behaviour (*vyavahaar*) is said to be of five kinds—(1) *Agam-vyavahaar*, (2) *Shrut-vyavahaar*, (3) *Ajna-vyavahaar*, (4) *Dhaarana-vyavahaar*, and (5) *Jeet-vyavahaar*. Out of these five the ascetic who knows the canon (*Agams* including the fourteen, ten or nine *Purvas*; or who is endowed with *Keval-jnana*, *Manah-paryav-jnana* or *Avadhi-jnana*) should behave according to the canon (*Agam-vyavahaar*). One who does not have the knowledge of the canon should behave according to the scriptures or texts other than the said *Agams* (*Shrut-vyavahaar*). One who does not have the knowledge of scriptures (*Shrut*)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

should behave according to the directive commands of accomplished ascetics (*Ajna-vyavahaar*). In absence of directive commands he should behave according to his own interpretation of directive commands given in the past (*Dhaarana-vyavahaar*). In absence of such guiding precedence he should behave according to the tradition followed by accomplished ascetics (*Jeet-vyavahaar*). This way, depending on one's access to any of these five in the said order of priority, an ascetic (male or female) should follow ascetic-behaviour based on these five—*Agam*, *Shrut*, *Ajna*, *Dhaarana* and *Jeet*.

९. [प्र.] से किमाहु भंते ! आगमबलिया समणा निग्गंथा ?

[उ.] इच्चेयं पंचविहं ववहारं जया जया जहिं जहिं तया तया तहिं तहिं अणिस्सिओवस्सितं सम्मं ववहरमाणे समणे निग्गंथे आणाए आराहए भवइ।

९. [प्र.] भगवन् ! आगमबलिक श्रमण निर्ग्रन्थ (पूर्वोक्त व्यवहार के विषय में) क्या कहते हैं ?

[उ.] (गौतम !) इस प्रकार इन पंचविध व्यवहारों में से जब-जब और जहाँ-जहाँ जो व्यवहार सम्भव हो, तब-तब और वहाँ-वहाँ उससे, **अनिश्रितोपाश्रित** (राग और द्वेष से रहित यश-लिप्सा, पद-लिप्सा, शिष्यों का पक्षपात या बदले की भावना आदि से मुक्त तटस्थ रहकर) होकर सम्यक् प्रकार से व्यवहार करता हुआ श्रमण निर्ग्रन्थ (तीर्थंकरों की) आज्ञा का आराधक होता है।

9. [Q.] *Bhante* ! What the *Shraman Nirgranths* (ascetics) endowed with the knowledge of the canon (*Agam-balik*) say (about this)?

[Ans.] (Gautam !) A *Shraman Nirgranth* (ascetic) who, becoming *anishritopashrit* (free of attachment and aversion, devoid of hankering for fame and status and away from feelings of partiality and revenge), properly employs one or the other of the five aforesaid (code of) ascetic-behaviour, wherever whichever is applicable, is said to be the true follower of the order (of the *Tirthankar*).

विवेचन : निर्ग्रन्थ के लिए आचरणीय पंचविध व्यवहार एवं उनकी मर्यादा-प्रस्तुत दो सूत्रों में साधु-साध्वी के लिए साधु जीवन में उपयोगी पंचविध व्यवहारों तथा उनकी मर्यादा का निरूपण किया गया है।

पंचविध व्यवहार का स्वरूप-(१) आगम-व्यवहार-केवलज्ञान, मनःपर्यायज्ञान, अवधिज्ञान, चौदह पूर्व, दस पूर्व और नौ पूर्व का ज्ञान 'आगम' कहलाता है। (२) **श्रुत-व्यवहार**-शेष आचारप्रकल्प आदि ज्ञान 'श्रुत' कहलाता है। यद्यपि पूर्वों का ज्ञान भी श्रुतरूप है, तथापि अतीन्द्रिय विषयक विशिष्ट ज्ञान का कारण एवं सातिशय होने से उसे 'आगम' की कोटि में रखा गया है। (३) **आज्ञा-व्यवहार**-दो गीतार्थ साधु अलग-अलग दूर देश में विचरते हैं, उनमें से एक का जंघाबल क्षीण हो जाने से विहार करने में असमर्थ हो जाये, वह अपने दूरस्थ गीतार्थ साधु के पास अगीतार्थ साधु के माध्यम से अपने अतिचार या दोष आगम की सांकेतिक गूढ़

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 9

Illustration No. 9

पंचविध व्यवहार

साधु-संतों के परस्पर व्यवहार पाँच प्रकार के होते हैं–

1. **आगम व्यवहार**–केवलज्ञानी, मनःपर्यायज्ञानी, विशिष्ट अवधिज्ञानी और चौदह पूर्व ज्ञानी, दस पूर्व ज्ञानी **आगम विहारी** कहलाते हैं। इनकी आज्ञानुसार चलना **आगम व्यवहार** है।

2. **श्रुत व्यवहार**–10 पूर्व से कम परन्तु आचारकल्प आदि के ज्ञानी श्रुत ज्ञानी कहलाते हैं। ऐसे श्रुत ज्ञानी गुरु की आज्ञा अनुसार चलना **श्रुत व्यवहार** है।

3. **आज्ञा व्यवहार**–दो गीतार्थ साधु एक-दूसरे से दूर देश में विचरते हैं, किसी कारणवश वे आपस में मिलने में असमर्थ हैं तो एक साधु दूसरे साधु को पत्र लिखकर अपने शिष्य के साथ उनके पास भेजे और अपने अतिचार या दोष की आलोचना करे तथा प्रायश्चित्त के सम्बन्ध में परामर्श माँगे तब दूसरे साधु द्वारा उसी शिष्य के साथ उसका उत्तर प्रेषित किया जाए और पहला साधु उसकी आज्ञानुसार चले, यह **आज्ञा व्यवहार** है।

4. **धारणा व्यवहार**–मंद बुद्धि शिष्य द्वारा गीतार्थ गुरु के समक्ष अपने अतिचार या दोष की आलोचना करने पर गीतार्थ साधु द्वारा श्रुत परम्परा से जो प्रायश्चित्त चले आ रहे हैं, वह प्रायश्चित्त देना **धारणा व्यवहार** है।

5. **जीत व्यवहार**–किसी समय किसी अपराध के लिए आचार्यों ने एक प्रकार का प्रायश्चित्त निश्चित किया। दूसरे समय में देश, काल, बल, संहनन आदि देखकर प्रायश्चित्त लेने वाले की क्षमता के अनुसार वैसे ही अपराध के लिए दूसरी प्रकार का प्रायश्चित्त निश्चित करना जीत व्यवहार कहलाता है अथवा किसी आचार्य के गच्छ में आगमों के अतिरिक्त प्रायश्चित्त प्रवर्तित हुआ हो और वह अनेक गीतार्थ साधुओं द्वारा अनुवर्तित हुआ हो, ऐसी प्रायश्चित्त-विधि का व्यवहार जीत व्यवहार कहलाता है।

–शतक 8, उ. 8, सूत्र 8 9

FIVE TYPES OF ASCETIC BEHAVIOUR

Ascetic-behaviour (*vyavahaar*) is of five kinds –

(1) Agam-vyavahaar– Those endowed with *Keval-jnana*, *Manah-paryav-jnana*, higher *Avadhi-jnana*, *or* knowledge fourteen, or ten *Purvas* are called *Agam-vihari*. Behaviour based on their guidance is called *Agam-vyavahaar.*

(2) Shrut-vyavahaar– The knowledge of remaining scriptures including Acharanga are classified as *Shrut*. To follow the order of a guru endowed with this knowledge of Shrut is called *Shrut-vyavahaar.*

(3) Ajna-vyavahaar– Suppose two accomplished ascetics are living far apart in two different states. One of them becomes weak and unable to move around. He commits some transgression and sends his inquiry about procedure of atonement to the other with a junior using code language. The other accomplished ascetic sends back his advice in the same code language. Behaviour based on such directive command is called **Ajna-vyavahaar.**

(4) Dhaarana-vyavahaar– To employ a methodology of atonement based on one's own understanding (*dhaarana*) of the directive commands given by some accomplished ascetic or *acharya* in the past on similar faults. Behaviour based on such interpretation of traditional commands is called *Dhaarana-vyavahaar*.

(5) Jeet-vyavahaar– The atonement prescribed on the basis of prevailing parameters of matter, space, time, state as well as the individual and the decline of physical constitution and capacity is called *Jeet-vyavahaar*. The sin-free code of conduct that does not defy *Agams* and is formulated and followed by many accomplished ascetics is also called *Jeet-vyavahaar.*

- Shatak-8, lesson-8, Sutra-8-9

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाषा में कहकर या लिखकर भेजता है और गूढ़ भाषा में कही हुई या लिखी हुई आलोचना सुन-जानकर वे गीतार्थ-मुनि भी संदेशवाहक मुनि के माध्यम से उक्त अतिचार के प्रायश्चित्त द्वारा की जाने वाली शुद्धि का सन्देश आगम की गूढ़ भाषा में ही कह या लिखकर देते हैं। यह आज्ञा-व्यवहार का स्वरूप है। (४) धारणा-व्यवहार-किसी गीतार्थ मुनि ने या गुरुदेव ने द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा जिस अपराध में जो प्रायश्चित्त दिया है, उसकी धारणा से वैसे अपराध में उसी प्रायश्चित्त का प्रयोग करना धारणा-व्यवहार है। धारणा-व्यवहार प्रायः आचार्य-परम्परागत होता है। (५) **जीत-व्यवहार**-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, पात्र (पुरुष) और प्रतिसेवना का तथा संहनन और धैर्य आदि की हानि का विचार करके जो प्रायश्चित्त दिया जाये वह जीत-व्यवहार है अथवा अनेक गीतार्थ मुनियों द्वारा आचरित, असावद्य, आगम से अबाधित एवं निर्धारित मर्यादा को भी जीत-व्यवहार कहते हैं।

मूल पाठ में स्पष्ट बता दिया है कि ५ व्यवहारों में से व्यवहर्ता मुमुक्षु के पास यदि आगम हो तो उसे आगम से, आगम के अभाव में श्रुत से, श्रुत के अभाव में आज्ञा से, आज्ञा के अभाव में धारणा से और धारणा के अभाव में जीत-व्यवहार से प्रवृत्ति-निवृत्तिरूप व्यवहार करना चाहिए। *(वृत्ति, पत्रांक ३८४)*

Elaboration—Five pronged ascetic conduct and its scope—These two aphorisms define the five-pronged ascetic-behaviour and its scope in the ascetic-life of male and female ascetics.

Five prongs of ascetic-behaviour—(1) ***Agam-vyavahaar***—The spiritual level of *Keval-jnana*, *Manah-paryav-jnana* or *Avadhi-jnana* as well as the knowledge fourteen, ten or nine *Purvas* (the subtle canon) is conveyed by the term *Agam*. Behaviour based on this level of knowledge is called *Agam-vyavahaar*. **(2)** ***Shrut-vyavahaar***—The knowledge of remaining scriptures including Acharanga are classified as *Shrut*. Although the knowledge contained in *Purvas* is also a part of the broader definition of *Shrut-jnana*, as it contains specialized information about the paranormal and the miraculous it is called *Agam* here. Behaviour based on this level of knowledge is called *Shrut-vyavahaar*. **(3)** ***Ajna-vyavahaar***—Suppose two accomplished ascetics are living far apart in two different states. One of them becomes weak and unable to move around. He commits some transgression and sends his inquiry about procedure of atonement to the other with a junior using code language. The other accomplished ascetic sends back his advice in the same code language. Behaviour based on such directive command is called *Ajna-vyavahaar*. **(4)** ***Dhaarana-vyavahaar***—To employ a methodology of atonement based on one's own understanding (*dhaarana*) of the directive commands given by some accomplished ascetic or *acharya* in the past on similar faults depending on the then prevailing parameters of matter, space, time and state. Behaviour based on one's own interpretation of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

directive commands given in the past is called *Dhaarana-vyavahaar*. (5) ***Jeet-vyavahaar***—The atonement prescribed on the basis of prevailing parameters of matter, space, time, state as well as the individual and the decline of physical constitution and capacity is called *Jeet-vyavahaar*. The sin-free code of conduct that does not defy *Agams* and is formulated and followed by many accomplished ascetics is also called *Jeet-vyavahaar*.

The original text has clearly stated the order of priority to be followed by the aspirant. If he knows the canon he should follow the ascetic-behaviour (in terms of indulgence and restraint) act according to that. In absence of that he should act according to the *Shrut*, in absence of *Shrut* he should act according to *Ajna,* in absence of *Ajna* he should act according to *Dhaarana* and, in absence of *Dhaarana* he should act according to *Jeet. (Vritti, leaf 384)*

विविध पहलुओं से ऐर्यापथिक और साम्परायिक कर्मबन्ध से सम्बन्धित प्ररूपणा TYPES OF BONDAGE

१०. [प्र.] कइविहे णं भंते ! बंधे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! दुविहे बंधे पण्णत्ते, तं जहा–इरियावहियाबंधे य संपराइयबंधे य।

१०. [प्र.] भगवन् ! बन्ध कितने प्रकार का कहा है ?

[उ.] गौतम ! बन्ध दो प्रकार का कहा है। वह इस प्रकार–ईर्यापथिकबन्ध और साम्परायिकबन्ध।

10. [Q.] *Bhante* ! How many types of bondage (*bandh*) are there ?

[Ans.] Gautam ! Bondage is of two kinds–*Iryapathik-bandh* (*karmic* bondage due to passion-free activity) and *Samparayik-bandh* (*karmic* bondage due to passion-inspired activity).

११. [प्र.] इरियावहियं णं भंते ! कम्मं किं नेरइओ बंधइ, तिरिक्खजोणिओ बंधइ, तिरिक्खजोणिणी बंधइ, मणुस्सो बंधइ, मणुस्सी बंधइ, देवो बंधइ, देवी बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! नो नेरइओ बंधइ, नो तिरिक्खजोणिओ बंधइ, नो तिरिक्खजोणिणी बंधइ, नो देवो बंधइ, नो देवी बंधइ, पुव्वपडिवन्नए पडुच्च मणुस्सा य, मणुस्सीओ य बंधंति, पडिवज्जमाणए पडुच्च मणुस्सो वा बंधइ १, मणुस्सी वा बंधइ २, मणुस्सा वा बंधंति ३, मणुस्सीओ वा बंधंति ४, अहवा मणुस्सो य मणुस्सी य बंधइ ५, अहवा मणुस्सो य मणुस्सीओ य बंधंति ६, अहवा मणुस्सा य मणुस्सी य बंधंति ७, अहवा मणुस्सा य मणुस्सीओ य बंधंति ८।

११. [प्र.] भगवन् ! ईर्यापथिक कर्म क्या नैरयिक बाँधता है, या तिर्यंचयोनिक बाँधता है, या तिर्यंचयोनिक स्त्री बाँधती है, अथवा मनुष्य बाँधता है, या मनुष्य–स्त्री (नारी) बाँधती है, अथवा देव बाँधता है या देवी बाँधती है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! ईर्यापथिक कर्म न नैरयिक बाँधता है, न तिर्यंचयोनिक बाँधता है, न तिर्यंचयोनिक स्त्री बाँधती है, न देव बाँधता है और न ही देवी बाँधती है, किन्तु पूर्वप्रतिपन्नक की अपेक्षा (जिसने पहले ऐर्यापथिक कर्म का बंध किया हो) इसे मनुष्य-पुरुष और मनुष्य-स्त्रियाँ बाँधती हैं; प्रतिपद्यमान की अपेक्षा मनुष्य-पुरुष बाँधता है अथवा (२) मनुष्य-स्त्री बाँधती है, अथवा (३) बहुत-से मनुष्य-पुरुष बाँधते हैं या (४) बहुत-सी मनुष्य-स्त्रियाँ बाँधती है, अथवा (५) एक मनुष्य-पुरुष और एक मनुष्य-स्त्री बाँधती है, या (६) एक मनुष्य-पुरुष और बहुत-सी मनुष्य-स्त्रियाँ बाँधती हैं, अथवा (७) बहुत-से मनुष्य-पुरुष और एक मनुष्य-स्त्री बाँधती है, अथवा (८) बहुत-से मनुष्य-नर और बहुत-सी मनुष्य-नारियाँ बाँधती हैं।

11. [Q.] *Bhante* ! Is the bondage of *Iryapathik-karma* acquired by an infernal being (*nairayik*), or a male or female animal (*tiryanch-yonik*), or a male or female human being, or a male or female divine being ?

[Ans.] Gautam ! The bondage of *Iryapathik-karma* is acquired neither by an infernal being (*nairayik*), nor by a male or female animal (*tiryanch-yonik*), or by a male or female divine being. Relative to the past, it is acquired by men and women. Relative to the present it is acquired by a man, or a woman, many men, or many women, or one man and one woman, or one man and many women, or many men and one woman, or many men and many women.

१२. [प्र.] तं भंते ! किं इत्थी बंधइ, पुरिसो बंधइ, नपुंसगो बंधति, इत्थीओ बंधंति, पुरिसा बंधंति, नपुंसगा बंधंति ? नोइत्थी-नोपुरिसो-नोनपुंसगो बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! नो इत्थी बंधइ, नो पुरिसो बंधइ जाव नो नपुंसओ बंधइ। पुव्वपडिवन्नए पडुच्च अवगयवेदा वा बंधंति, पडिवज्जमाणए य पडुच्च अवगयवेदो वा बंधंति, अवगयवेदा वा बंधंति।

१२. [प्र.] भगवन् ! ऐर्यापथिक (कर्म) बन्ध क्या स्त्री बाँधती है, पुरुष बाँधता है, नपुंसक बाँधता है, स्त्रियाँ बाँधती हैं, पुरुष बाँधते हैं या नपुंसक बाँधते हैं, अथवा नो-स्त्री, नो-पुरुष, नो-नपुंसक बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! इसे स्त्री नहीं बाँधती, पुरुष नहीं बाँधता, नपुंसक नहीं बाँधता, स्त्रियाँ नहीं बाँधतीं, पुरुष नहीं बाँधते और नपुंसक भी नहीं बाँधते, किन्तु पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षा वेदरहित (बहु) जीव बाँधते हैं, अथवा प्रतिपद्यमान की अपेक्षा वेदरहित (एक) जीव बाँधता है या वेदरहित बहुत से जीव बाँधते हैं।

12. [Q.] *Bhante* ! Is the bondage of *Iryapathik-karma* acquired by a woman, by a man, by a eunuch, by women, by men, or by eunuchs or by non-woman, by non-men or by non-eunuch (non-genderic or gender transcendent) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! It is neither acquired by a woman, nor by a man, or by a eunuch, or by women, or by men, or by eunuchs but relative to the past it is acquired by many non-genderic (*vedarahit*) beings or relative to the present by one non-genderic being or many non-genderic beings.

१३. [प्र.] जइ भंते ! अवगयवेदो वा बंधइ, अवगयवेदा वा बंधंति तं भंते ! किं इत्थीपच्छाकडो बंधइ १, पुरिसपच्छाकडो बंधइ २, नपुंसकपच्छाकडो बंधइ ३, इत्थीपच्छाकडा बंधंति ४, पुरिसपच्छाकडा वि बंधंति ५, नपुंसगपच्छाकडा वि बंधंति ६, उदाहु इत्थिपच्छाकडो य पुरिसपच्छाकडो य बंधति ४, उदाहु इत्थीपच्छाकडो य णपुंसगपच्छाकडो य बंधइ ४, उदाहु पुरिसपच्छाकडो य णपुंसगपच्छाकडो य बंधइ ४, उदाहु इत्थिपच्छाकडो य पुरिसपच्छाकडो य णपुसंगपच्छाकडो य भाणियव्वं ८, एवं एते छब्बीसं भंगा जाव उदाहु इत्थीपच्छाकडा य पुरिसपच्छाकडा य नपुंसकपच्छाकडा य बंधंति ?

[उ.] गोयमा ! इत्थिपच्छाकडो वि बंधइ १, पुरिसपच्छाकडो वि बंधइ २, नपुंसगपच्छाकडो वि बंधइ ३, इत्थीपच्छाकडा वि बंधंति ४, पुरिसपच्छकडा वि बंधंति ५, नपुंसकपच्छाकडा वि बंधंति ६, अहवा इत्थीपच्छाकडो य पुरिसपच्छाकडो य बंधइ ७, एवं एए चेव छब्बीसं भंगा भाणियव्वा जाव अहवा इत्थिपच्छाकडा य पुरिसपच्छाकडा य नपुंसगपच्छाकडा य बंधंति।

१३. [प्र.] भगवन् ! यदि वेदरहित एक जीव अथवा वेदरहित बहुत जीव ऐर्यापथिक (कर्म) बन्ध बाँधते हैं तो क्या १. स्त्री-पश्चात्कृत जीव (जो जीव भूतकाल में सवेदी था, किन्तु वर्तमान में अवेदी है, वह पश्चात्कृत कहा जाता है) बाँधता है, अथवा २. पुरुष-पश्चात्कृत जीव बाँधता है; या ३. नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधता है? अथवा ४. स्त्री-पश्चात्कृत जीव बाँधते हैं, या ५. पुरुष-पश्चात्कृतजीव बाँधते हैं, या ६. नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधते हैं? अथवा ७. एक स्त्री-पश्चात्कृत जीव और एक पुरुष-पश्चात्कृत जीव बाँधता है, या ८. एक स्त्री-पश्चात्कृत जीव बहुत पुरुष-पश्चात्कृत जीव बाँधते हैं, या ९. बहुत स्त्री-पश्चात्कृत जीव और एक पुरुष-पश्चात्कृत जीव बाँधता है, अथवा १०. बहुत स्त्री-पश्चात्कृत जीव और बहुत पुरुष-पश्चात्कृत जीव बाँधते है, या ११. एक स्त्री-पश्चात्कृत जीव और एक नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधता है, या १२. एक स्त्री-पश्चात्कृत जीव और बहुत नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधते हैं, अथवा १३. बहुत स्त्री-पश्चात्कृत जीव और एक नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधता है, या १४. बहुत स्त्री-पश्चात्कृत जीव और बहुत नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधते हैं, अथवा १५. एक पुरुष-पश्चात्कृत जीव और एक नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधता है, या १६. एक पुरुष-पश्चात्कृत जीव और बहुत नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधते हैं, अथवा १७. बहुत पुरुष-पश्चात्कृत जीव और एक नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधता है, अथवा १८. बहुत पुरुष-पश्चात्कृत जीव और बहुत नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधते हैं? या फिर १९. एक स्त्री-पश्चात्कृत जीव, एक पुरुष-पश्चात्कृत जीव और एक नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधता है, अथवा २०. एक स्त्री-पश्चात्कृत जीव, एक पुरुष-पश्चात्कृत जीव और बहुत नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधते हैं, या २१. एक स्त्री-पश्चात्कृत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीव, बहुत पुरुष-पश्चात्कृत जीव और एक नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधता है? अथवा २२. एक स्त्री-पश्चात्कृत जीव, बहुत पुरुष-पश्चात्कृत जीव और बहुत नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधते हैं, या २३. बहुत स्त्री-पश्चात्कृत जीव, एक पुरुष-पश्चात्कृत जीव और एक नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधता है, अथवा २४. बहुत स्त्री-पश्चात्कृत जीव, एक पुरुष-पश्चात्कृत जीव और बहुत नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधते हैं, या २५. बहुत स्त्री-पश्चात्कृत जीव, बहुत पुरुष-पश्चात्कृत जीव और एक नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधता है, अथवा २६. बहुत स्त्री-पश्चात्कृत जीव, बहुत पुरुष-पश्चात्कृत जीव और बहुत नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधते हैं?

[उ.] गौतम ! ऐर्यापथिक कर्म (१) स्त्री-पश्चात्कृत जीव भी बाँधता है, (२) पुरुष-पश्चात्कृत जीव भी बाँधता है, (३) नपुंसक-पश्चात्कृत जीव भी बाँधता है, (४) स्त्री-पश्चात्कृत जीव भी बाँधते हैं, (५) पुरुष-पश्चात्कृत जीव भी बाँधते हैं, (६) नपुंसक-पश्चात्कृत जीव भी बाँधते हैं, अथवा (७) एक स्त्री-पश्चात्कृत जीव और एक पुरुष-पश्चात्कृत जीव भी बाँधता है अथवा यावत् (२६) बहुत स्त्री-पश्चात्कृत जीव, बहुत पुरुष-पश्चात्कृत जीव और बहुत नपुंसक-पश्चात्कृत जीव भी बाँधते हैं। इस प्रकार (प्रश्न में कथित) छब्बीस भंग यहाँ (उत्तर में ज्यों के त्यों) कहने चाहिए।

13. [Q.] *Bhante* ! If one non-genderic being or many non-genderic beings acquire the bondage of *Iryapathik-karma* then is that bondage acquired by (1) one *stree-pashchaatkrit jiva* (a being who was woman in the past but non-genderic now), (2) one *purush-pashchaatkrit jiva* (a being who was man in the past but non-genderic now), (3) one *napumsak-pashchaatkrit jiva* (a being who was eunuch in the past but non-genderic now) ? Or (4) many *stree-pashchaatkrit jiva*s, (5) many *purush-pashchaatkrit jiva*s, (6) many *napumsak-pashchaatkrit jiva*s ? Or (7) one *stree-pashchaatkrit jiva* and one *purush-pashchaatkrit jiva*, (8) one *stree-pashchaatkrit jiva* and many *purush-pashchaatkrit jiva*s, (9) many *stree-pashchaatkrit jiva*s and one *purush-pashchaatkrit jiva*, (10) many *stree-pashchaatkrit jiva*s and many *purush-pashchaatkrit jivas*, (11) one *stree-pashchaatkrit jiva* and one *napumsak-pashchaatkrit jiva*, (12) one *stree-pashchaatkrit jiva* and many *napumsak-pashchaatkrit jivas*, (13) many *stree-pashchaatkrit jiva*s and one *napumsak-pashchaatkrit jiva*, (14) many *stree-pashchaatkrit jiva*s and many *napumsak-pashchaatkrit jiva*s, (15) one *purush-pashchaatkrit jiva* and one *napumsak-pashchaatkrit jiva*, (16) one *purush-pashchaatkrit jiva* and many *napumsak-pashchaatkrit jiva*s, (17) many *purush-pashchaatkrit jiva*s and one *napumsak-pashchaatkrit jiva*, (18) many *purush-pashchaatkrit jiva*s and many *napumsak-pashchaatkrit jiva*s ? Or (19) one *stree-pashchaatkrit jiva*, one *purush-pashchaatkrit jiva*, and one *napumsak-pashchaatkrit jiva*; (20) one *stree-pashchaatkrit jiva*, one

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

purush-pashchaatkrit jiva, and many *napumsak-pashchaatkrit jiva;* (21) one *stree-pashchaatkrit jiva*, many *purush-pashchaatkrit jiva,* and one *napumsak-pashchaatkrit jiva;* (22) one *stree-pashchaatkrit jiva*, many *purush-pashchaatkrit jiva,* and many *napumsak-pashchaatkrit jiva;* (23) many *stree-pashchaatkrit jiva*, one *purush-pashchaatkrit jiva,* and one *napumsak-pashchaatkrit jiva;* (24) many *stree-pashchaatkrit jiva*, one *purush-pashchaatkrit jiva,* and many *napumsak-pashchaatkrit jiva;* (25) many *stree-pashchaatkrit jiva*, many *purush-pashchaatkrit jiva,* and one *napumsak-pashchaatkrit jiva;* (26) many *stree-pashchaatkrit jiva*, many *purush-pashchaatkrit jiva,* and many *napumsak-pashchaatkrit jiva ?*

[Ans.] Gautam ! The bondage of *Iryapathik-karma* is acquired by (1) one *stree-pashchaatkrit jiva* (a being who was woman in the past but non-genderic now), (2) one *purush-pashchaatkrit jiva* (a being who was man in the past but non-genderic now), (3) one *napumsak-pashchaatkrit jiva* (a being who was eunuch in the past but non-genderic now); or (4) many *stree-pashchaatkrit jiva*s, (5) many *purush-pashchaatkrit jiva*s, (6) many *napumsak-pashchaatkrit jiva*s; or (7) one *stree-pashchaatkrit jiva* and one *purush-pashchaatkrit jiva ... and so on up to ...* (26) many *stree-pashchaatkrit jiva*, many *purush-pashchaatkrit jiva,* and many *napumsak-pashchaatkrit jiva.* This way all the twenty-six alternatives mentioned in the question should be repeated verbatim.

१४. [प्र.] तं भंते ! किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ १, बंधी बंधइ न बंधिस्सइ २, बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ३, बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ४, न बंधी बंधइ बंधिस्सइ ५, न बंधी बंधइ न बंधिस्सइ ६, न बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ७, न बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ८?

[उ.] गोयमा ! भवागरिसं पडुच्च अत्थेगइए बंधी बंधइ बंधिस्सइ। अत्थेगइए बंधी बंधइ, न बंधिस्सइ। एवं तं चेव सव्वं जाव अत्थेगइए न बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ। गहणागरिसं पडुच्च अत्थेगइए बंधी, बंधइ, बंधिस्सइ; एवं जाव अत्थेगइए न बंधी, बंधइ, बंधिस्सइ। णो चेव णं न बंधी, बंधइ, न बंधिस्सइ। अत्थेगइए न बंधी, न बंधइ, बंधिस्सइ। अत्थेगइए न बंधी, न बंधइ, न बंधिस्सइ।

१४. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव ने (ऐर्यापथिक कर्म) १. बाँधा है, बाँधता है और बाँधेगा, अथवा २. बाँधा है, बाँधता है, नहीं बाँधेगा, या ३. बाँधा है, नहीं बाँधता है, बाँधेगा, अथवा ४. बाँधा है, नहीं बाँधता है, नहीं बाँधेगा, या ५. नहीं बाँधा, बाँधता है, बाँधेगा, अथवा ६. नहीं बाँधा, बाँधता है, नहीं बाँधेगा, या ७. नहीं बाँधा, नहीं बाँधता, बाँधेगा, ८. न बाँधा, न बाँधता है, न बाँधेगा ?

[उ.] गौतम ! भवाकर्ष की अपेक्षा किसी एक जीव ने बाँधा है, बाँधता है और बाँधेगा; किसी एक जीव ने बाँधा है, बाँधता है और नहीं बाँधेगा; यावत् किसी एक जीव ने नहीं बाँधा, नहीं बाँधता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं बाँधेगा। इस प्रकार (प्रश्न में कथित) सभी (आठों) भंग यहाँ कहने चाहिए। ग्रहणाकर्ष की अपेक्षा (१) किसी एक जीव ने बाँधा, बाँधता है, बाँधेगा; (२) किसी एक जीव ने बाँधा, बाँधता है, नहीं बाँधेगा; (३) बाँधा, नहीं बाँधता है, बाँधेगा; (४) बाँधा, नहीं बाँधता, नहीं बाँधेगा; (५) किसी एक जीव ने नहीं बाँधा, बाँधता है, यहाँ तक (यावत्) कहना चाहिए। इसके पश्चात् छठा भंग-नहीं बाँधा, बाँधता नहीं है, बाँधेगा; नहीं कहना चाहिए। (तदनन्तर सातवाँ भंग-किसी एक जीव ने नहीं बाँधा, नहीं बाँधता है, बाँधेगा और आठवा भंग एक जीव ने नहीं बाँधा, नहीं बाँधता, नहीं बाँधेगा, (कहना चाहिए।)

14. [Q.] *Bhante* ! Is this bondage (of *Iryapathik-karma)* acquired by a living being–(1) in the past, in the present and in the future; or (2) in the past, in the present, but not in the future; or (3) in the past, and in the future, but not in the present; or (4) in the past, but not in the present, and also not in the future; or (5) not in the past, but in the present, and in the future; or (6) not in the past, but in the present, and not in the future; or (7) not in the past, not in the present, but in the future; or (8) not in the past, not in the present, and not in the future ?

[Ans.] Gautam ! In context of acquisition of this bondage (of *Iryapathik-karma*) during past several births (*bhavakarsh*), this bondage is acquired by some living being in the past, in the present and in the future; by some being in the past, in the present, but not in the future ... and so on up to ... by some living being not in the past, not in the present, and not in the future. This way all eight alternatives given in the question should be repeated. In context of acquisition of this bondage (of *Iryapathik-karma*) during a specific birth (*grahanakarsh*), this bondage is acquired by some living being (1) in the past, in the present and in the future; or (2) in the past, in the present, but not in the future; or (3) in the past, and in the future, but not in the present; or (4) in the past, but not in the present, and also not in the future; or (5) not in the past, but in the present, and in the future; these five alternatives hold good but the sixth alternative (not in the past, but in the present, and not in the future) does not hold good. [After that the seventh and eighth alternatives (not in the past, not in the present, but in the future; not in the past, not in the present, and not in the future) hold good.]

१५. [प्र.] तं भंते ! किं साईयं सपज्जवसियं बंधइ, साईयं अपज्जवसियं बंधइ, अणाईयं सपज्जवसियं बंधइ, अणाईयं अपज्जवसियं बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! साईयं सपज्जवसियं बंधइ, नो साईयं अपज्जवसियं बंधइ, नो अणाईयं सपज्जवसियं बंधइ, नो अणाईयं अपज्जवसियं बंधइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. [प्र.] भगवन् ! जीव ऐर्यापथिक कर्म क्या सादि–सपर्यवसित बाँधता है या सादि–अपर्यवसित बाँधता है, अथवा अनादि–सपर्यवसित बाँधता है या अनादि–अपर्यवसित बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! जीव ऐर्यापथिक कर्म सादि–सपर्यवसित बाँधता है, किन्तु सादि–अपर्यवसित नहीं बाँधता, अनादि–सपर्यवसित नहीं बाँधता और न अनादि–अपर्यवसित बाँधता है।

15. [Q.] *Bhante* ! Is this bondage (of *Iryapathik-karma*) with a beginning and with an end (*saadi-saparyavasit*); or with a beginning but without an end (*saadi-aparyavasit*); or without a beginning but with an end (*anaadi-saparyavasit*); or without a beginning and without an end (*anaadi-aparyavasit*) ?

[Ans.] Gautam ! This bondage (of *Iryapathik-karma*) is with a beginning and with an end (*saadi-saparyavasit*); but neither with a beginning but without an end (*saadi-aparyavasit*); nor without a beginning but with an end (*anaadi-saparyavasit*); or without a beginning and without an end (*anaadi-aparyavasit*).

१६. [प्र.] तं भंते ! किं देसेणं देसं बंधइ, देसेणं सव्वं बंधइ, सव्वेणं देसं बंधइ, सव्वेणं सव्वं बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! नो देसेणं देसं बंधइ, णो देसेणं सव्वं बंधइ, नो सव्वेणं देसं बंधइ, सव्वेणं सव्वं बंधइ।

१६. [प्र.] भगवन् ! जीव ऐर्यापथिक कर्म देश से आत्मा के देश को बाँधता है, देश से सर्व को बाँधता है, सर्व से देश को बाँधता है या सर्व से सर्व को बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! वह ऐर्यापथिक कर्म देश से देश को नहीं बाँधता, देश से सर्व को नहीं बाँधता, सर्व से देश को नहीं बाँधता, किन्तु सर्व से सर्व को बाँधता है।

16. [Q.] *Bhante* ! Does this bondage (of *Iryapathik-karma*) manifest as a part covering a part of the soul, or as a part covering the whole of the soul, or as a whole covering a part of the soul, or as a whole covering the whole of the soul ?

[Ans.] Gautam ! This bondage (of *Iryapathik-karma*) does not manifest as a part covering a part of the soul, not as a part covering the whole of the soul, and not as a whole covering a part of the soul, but only as a whole covering the whole of the soul.

१७. [प्र.] संपराइयं णं भंते ! कम्मं किं नेरइयो बंधइ, तिरिक्खजोणीओ बंधइ, जाव देवी बंधइ ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! नेरइओ वि बंधइ, तिरिक्खजोणीओ वि बंधइ, तिरिक्खजोणिणी वि बंधइ, मणुस्सो वि बंधइ, मणुस्सी वि बंधइ, देवो वि बंधइ, देवी वि बंधइ।

१७. [प्र.] भगवन् ! साम्परायिक कर्म नैरयिक बाँधता है, तिर्यंच बाँधता है, तिर्यंच-स्त्री (मादा) बाँधती है, मनुष्य बाँधता है, मनुष्य-स्त्री बाँधती है, देव बाँधता है या देवी बाँधती है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक भी बाँधता है, तिर्यंच भी बाँधता है, तिर्यंच-स्त्री (मादा) भी बाँधती है, मनुष्य भी बाँधता है, मानुषी भी बाँधती है, देव भी बाँधता है और देवी भी बाँधती है।

17. [Q.] *Bhante* ! Is the bondage of *Samparayik-karma* acquired by an infernal being (*nairayik*), or a male or female animal (*tiryanch-yonik*), or a male or female human being, or a male or female divine being ?

[Ans.] Gautam ! The bondage of *Samparayik-karma* is acquired by an infernal being (*nairayik*), by a male or female animal (*tiryanch-yonik*), by a male or female human being, as well as by a male or female divine being.

१८. [प्र.] तं भंते ! किं इत्थी बंधइ, पुरिसो बंधइ, तहेव जाव नोइत्थी नोपुरिसो नोनपुंसओ बंधइ?

[उ.] गोयमा ! इत्थी वि बंधइ, पुरिसो वि बंधइ, जाव नपुंसगो वि बंधइ। अहवेए य अवगयवेदो य बंधइ, अहवेए य अवगयवेया य बंधंति।

१८. [प्र.] भगवन् ! साम्परायिक कर्म क्या स्त्री बाँधती है, पुरुष बाँधता है, यावत् नोस्त्री-नोपुरुष-नोनपुंसक बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! स्त्री भी बाँधती है, पुरुष भी बाँधता है, नपुंसक भी बाँधता है, अथवा बहुत स्त्रियाँ भी बाँधती हैं, बहुत पुरुष भी बाँधते हैं और बहुत नपुंसक भी बाँधते हैं, अथवा ये सब और अवेदी एक जीव भी बाँधता है, अथवा ये सब और बहुत अवेदी जीव भी बाँधते हैं।

18. [Q.] *Bhante* ! Is the bondage of *Samparayik-karma* acquired by a woman, by a man ... and so on up to ... or by non-woman, by non-men or by non-eunuch (non-genderic or gender transcendent) ?

[Ans.] Gautam ! It is acquired by a woman, by a man, by a eunuch, by women, by men, as well as by eunuchs and also all these and one non-genderic (*vedarahit*) beings as well as all these and many non-genderic beings.

१९. [प्र.] जइ भंते ! अवगयवेदो य बंधइ अवगयवेदा य बंधंति तं भंते ! किं इत्थीपच्छाकडो बंधइ, पुरिसपच्छाकडो बंधइ ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] एवं जहेव इरियावहियाबंधगस्स तहेव निरवसेसं जाव अहवा इत्थीपच्छाकडा य, पुरिसपच्छाकडा य, नपुंसगपच्छाकडा य बंधंति।

१९. [प्र.] भगवन् ! यदि वेदरहित एक जीव और वेदरहित बहुत जीव साम्परायिक कर्म बाँधते हैं तो क्या स्त्री-पश्चात्कृत जीव बाँधता है या पुरुष-पश्चात्कृत जीव बाँधता है ? इत्यादि प्रश्न (सूत्र १३ के अनुसार) पूर्ववत् कहना चाहिए।

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार ऐर्यापथिक कर्मबन्ध के सम्बन्ध में छब्बीस भंग कहे हैं, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए; यावत् (२६) बहुत स्त्री-पश्चात्कृत जीव, बहुत पुरुष-पश्चात्कृत जीव और बहुत नपुंसक-पश्चात्कृत जीव बाँधते हैं-यहाँ तक कहना चाहिए।

19. *Bhante* ! If it is acquired by one non-genderic (*vedarahit*) being as well as all these and many non-genderic beings then is it acquired by one *stree-pashchaatkrit jiva* (a being who was woman in the past but non-genderic now), or one *purush-pashchaatkrit jiva* (a being who was man in the past but non-genderic now)? Include here all the aforesaid questions (from aphorism 13).

[Ans.] Gautam ! As aforesaid, all the twenty-six alternatives about *Iryapathik-karma should be repeated* here up to (26) many *stree-pashchaatkrit jiva*, many *purush-pashchaatkrit jiva*, and many *napumsak-pashchaatkrit jiva*.

२०. [प्र.] तं भंते ! किं बंधी बंधइ बंधिस्सइ १; बंधी बंधइ न बंधिस्सइ २; बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ३; बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ४ ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए बंधो बंधइ बंधिस्सइ १; अत्थेगइए बंधी बंधइ न बंधिस्सइ २; अत्थेगइए बंधी न बंधइ बंधिस्सइ ३; अत्थेगइए बंधी न बंधइ न बंधिस्सइ ४।

२०. [प्र.] भगवन् ! साम्परायिक कर्म (१) किसी जीव ने बाँधा, बाँधता है और बाँधेगा ? (२) बाँधा, बाँधता है और नहीं बाँधेगा ? (३) बाँधा, नहीं बाँधता है और बाँधेगा ? तथा (४) बाँधा, नहीं बाँधता है और नहीं बाँधेगा ?

[उ.] गौतम ! (१) कई जीवों ने बाँधा, बाँधते हैं और बाँधेंगे; (२) कितने ही जीवों ने बाँधा, बाँधते हैं और नहीं बाँधेंगे; (३) कितने ही जीवों ने बाँधा है, नहीं बाँधते हैं और बाँधेंगे, (४) कितने ही जीवों ने बाँधा है, नहीं बाँधते हैं और नहीं बाँधेंगे।

20. [Q.] *Bhante* ! Is this bondage (of *Samparayik-karma)* acquired by a living being – (1) in the past, in the present and in the future; or (2) in the past, in the present, but not in the future; or (3) in the past, and in the future, but not in the present; or (4) in the past, but not in the present, and also not in the future ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! This bondage (of *Samparayik-karma)* is acquired by–(1) many living beings in the past, in the present and in the future; (2) by many beings in the past, in the present, but not in the future; (3) by many beings in the past, and in the future, but not in the present; or (4) by many beings in the past, but not in the present, and also not in the future.

२१. [प्र.] तं भंते ! किं साईयं सपज्जवसियं बंधइ ? पुच्छा तहेव।

[उ.] **गोयमा ! साईयं वा सपज्जवसियं बंधइ, अणाईयं वा सपज्जवसियं बंधइ, अणाईयं वा अपज्जवसियं बंधइ; णो चेव णं साईयं अपज्जवसियं बंधइ।**

२१. [प्र.] भगवन् ! साम्परायिक कर्म सादि–सपर्यवसित बाँधते हैं ? इत्यादि (सूत्र १५ के अनुसार) प्रश्न पूर्ववत् करना चाहिए।

[उ.] गौतम ! साम्परायिक कर्म सादि–सपर्यवसित बाँधते हैं, अनादि–सपर्यवसित बाँधते हैं, अनादि–अपर्यवसित बाँधते हैं; किन्तु सादि–अपर्यवसित नहीं बाँधते।

21. [Q.] *Bhante* ! Is this bondage (of *Samparayik-karma*) with a beginning and with an end (*saadi-saparyavasit*)? Include here all the aforesaid questions (from aphorism 15).

[Ans.] Gautam ! This bondage (of *Samparayik-karma*) is with a beginning and with an end (*saadi-saparyavasit*); without a beginning but with an end (*anaadi-saparyavasit*); without a beginning and without an end (*anaadi-aparyavasit*); but not with a beginning but without an end (*saadi-aparyavasit*);

२२. [प्र.] तं भंते ! किं देसेणं देसं बंधइ ?

[उ.] **एवं जहेव इरियावहियाबंधगस्स जाव सव्वेणं सव्वं बंधइ।**

२२. [प्र.] भगवन् ! साम्परायिक कर्म देश से आत्म–देश को बाँधते हैं ? इत्यादि प्रश्न, (सूत्र १६ के अनुसार) पूर्ववत् करना चाहिए।

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार ऐर्यापथिक कर्मबन्ध के सम्बन्ध में कहा गया है, उसी प्रकार साम्परायिक कर्मबन्ध के सम्बन्ध में भी जान लेना चाहिए, यावत् सर्व से सर्व को बाँधते हैं।

22. [Q.] *Bhante* ! Does this bondage (of *Samparayik-karma*) manifest as a part covering a part of the soul ? Include here all the aforesaid questions (from aphorism 16).

[Ans.] Gautam ! What has been said about *Iryapathik-karma* also holds good for *Samparayik-karma* up to as a whole covering the whole of the soul.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : प्रस्तुत तेरह सूत्रों (सूत्र १० से २२ तक) में ऐर्यापथिक और साम्परायिक कर्मबन्ध के सम्बन्ध में निम्नोक्त छह पहलुओं से विचारणा की गई है–

१. ऐर्यापथिक या साम्परायिक कर्म चार गतियों में से किस गति का प्राणी, बाँधता है ?

२. स्त्री, पुरुष, नपुंसक आदि में से कौन बाँधता है ?

३. स्त्री–पश्चात्कृत, पुरुष–पश्चात्कृत, नपुंसक–पश्चात्कृत एक या अनेक अवेदी में से कौन अवेदी बाँधता है ?

४. दोनों कर्मों के बाँधने की त्रिकाल सम्बन्धी चर्चा।

५. सादिसपर्यवसित आदि चार विकल्पों में से कैसे इन्हें बाँधता है ?

६. ये कर्म देश से आत्म–देश को बाँधते हैं ? इत्यादि प्रश्नोत्तर।

बन्ध : स्वरूप एवं विवक्षित दो प्रकार–जैसे शरीर में तेल आदि लगाकर धूल में लोटने पर उस व्यक्ति के शरीर पर धूल चिपक जाती है, वैसे ही मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग से जीव के प्रदेशों में जब हलचल होती है, तब जिस आकाश में आत्म–प्रदेश होते हैं, वहीं के अनन्त–अनन्त तद्–तद् योग्य कर्मपुद्गल जीव के प्रत्येक प्रदेश के साथ बद्ध हो जाते हैं। दूध–पानी की तरह कर्म और आत्म–प्रदेशों का एकमेक होकर मिल जाना **बन्ध** है। विवक्षाविशेष से यहाँ कर्मबन्ध के दो प्रकार कहे गये हैं–१. ऐर्यापथिक, और २. साम्परायिक। केवल योगों के निमित्त से होने वाले सातावेदनीयरूप बन्ध को **ऐर्यापथिककर्मबन्ध** कहते हैं। यह वीतरागी जीवों को होता है, जिनसे चतुर्गतिकसंसार में परिभ्रमण हो, उन्हें सम्पराय–कषाय कहते हैं, सम्परायों (कषायों) के निमित्त से होने वाले कर्मबन्ध को **साम्परायिक कर्मबन्ध** कहते हैं। यह प्रथम से दशम गुणस्थान तक होता है।

ऐर्यापथिक कर्मबन्ध : स्वामी, कर्ता, बन्धकाल, बन्धविकल्प तथा बन्धांश–(१) **बंध का स्वामी**–ऐर्यापथिक कर्म का बन्ध चार गति में केवल मनुष्यों को ही होता है। मनुष्यों में भी ग्यारहवें (उपशान्तमोह), बारहवें (क्षीणमोह) और तेरहवें (सयोगीकेवली) गुणस्थानवर्ती मनुष्यों को ही होता है। ऐसे मनुष्य पुरुष और स्त्री दोनों ही होते हैं। जिसने पहले ऐर्यापथिक कर्म का बंध किया हो, अर्थात्–जो ऐर्यापथिक कर्मबन्ध के द्वितीय–तृतीय आदि समयवर्ती हो, उसे **पूर्वप्रतिपन्न** कहते हैं। **पूर्वप्रतिपन्न** की अपेक्षा इसे बहुत–से मनुष्य नर और बहुत–सी मनुष्य नारियाँ बाँधती हैं; क्योंकि ऐसे पूर्वप्रतिपन्न स्त्री और पुरुष बहुत होते हैं और दोनों प्रकार के केवली (स्त्रीकेवली और पुरुषकेवली) सदा पाए जाते हैं, इसलिए इसका भंग नहीं होता। जो जीव ऐर्यापथिक कर्मबन्ध के प्रथम समयवर्ती होते हैं, वे **'प्रतिपद्यमान'** कहलाते हैं। इनका विरह सम्भव है। इसलिए एकत्व और बहुत्व को लेकर इनके (स्त्री और पुरुष के) असंयोगी ४ भंग और द्विकसंयोगी ४ भंग, यों कुल ८ भंग बनते हैं।

(२) ऐर्यापथिक कर्मबन्ध के सम्बन्ध में जो स्त्री, पुरुष, नपुंसक आदि को लेकर प्रश्न किया गया है, वह लिंग की अपेक्षा समझना चाहिए, वेद की अपेक्षा नहीं, क्योंकि ऐर्यापथिक कर्मबन्धकर्ता जीव उपशान्तवेदी या क्षीणवेदी ही होते हैं। इसीलिए इस प्रश्न के उत्तर में कहा गया है–**अपगतवेद**–वेद के उदय से रहित जीव ही इसे बाँधते हैं।

(३) जो जीव गतकाल में स्त्री था, किन्तु अब वर्तमानकाल में अवेदी हो गया है, उसे **स्त्री–पश्चात्कृत** कहते हैं, इसी तरह **'पुरुष–पश्चात्कृत'** और **'नपुंसक–पश्चात्कृत'** का अर्थ भी समझ लेना चाहिए। इन तीनों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की अपेक्षा से यहाँ वेदरहित एक जीव या अनेक जीवों के द्वारा ऐर्यापथिक कर्मबन्ध सम्बन्धी २६ भंगों को प्रस्तुत करके प्रश्न किया है। इनमें असंयोगी ६ भंग, द्विकसंयोगी १२ भंग और त्रिकसंयोगी ८ भंग हैं। इस प्रश्न का उत्तर भी २६ भंगों द्वारा दिया गया है।

(४) इसके पश्चात् ऐर्यापथिक कर्मबन्ध के सम्बन्ध में भूत, वर्तमान और भविष्यकाल-सम्बन्धी आठ भंगों द्वारा प्रश्न किया गया है, जिसका उत्तर **'भवाकर्ष'** और **'ग्रहणाकर्ष'** की अपेक्षा दिया गया है। अनेक पूर्वभवों में उपशमश्रेणी की प्राप्ति द्वारा ऐर्यापथिक कर्मपुद्गलों का आकर्ष-ग्रहण करना **'भवाकर्ष'** है और एक भव में ऐर्यापथिक कर्मपुद्गलों का ग्रहण करना, **'ग्रहणाकर्ष'** है। भवाकर्ष की अपेक्षा यहाँ ८ भंग उत्पन्न होते हैं-उनका आशय क्रमशः इस प्रकार है-**१. प्रथम भंग-'बाँधा था, बाँधता है, बाँधेगा'** यह भवाकर्षापेक्षया उस जीव में पाया जाता है, जिसने गतकाल (किसी पूर्वभव) में उपशमश्रेणी की थी, उस समय ऐर्यापथिक कर्म बाँधा था; वर्तमान में उपशम श्रेणी करता है, उस समय इसे बाँधता है और आगामी भव में उपशमश्रेणी करेगा, उस समय इसे बाँधेगा। २. **द्वितीय भंग-'बाँधा था, बाँधता है, नहीं बाँधेगा'**-यह उस जीव में पाया जाता है, जिसने पूर्वभव में उपशमश्रेणी की थी और ऐर्यापथिक कर्म बाँधा था, वर्तमान में क्षपकश्रेणी में इसे बाँधता है और फिर इसी भव में मोक्ष चला जायेगा, इसलिए आगामी काल में नहीं बाँधेगा। ३. **तृतीय भंग-'बाँधा था, नहीं बाँधता है, बाँधेगा'**-यह भंग उस जीव में पाया जाता है, जिसने पूर्वभव में उपशमश्रेणी की थी, उसमें बाँधा था, वर्तमान भव में श्रेणी नहीं करता, अतः यह कर्म नहीं बाँधता और भविष्य में उपशमश्रेणी या क्षपकश्रेणी करेगा, तब बाँधेगा। ४. **चौथा भंग-'बाँधा था, नहीं बाँधता है, नहीं बाँधेगा'**-यह उस जीव में पाया जाता है, जो वर्तमान में चौदहवें गुणस्थान में विद्यमान है। उसने गतकाल (पूर्वकाल) में बाँधा था, वर्तमान में नहीं बाँधता और भविष्यकाल में भी नहीं बाँधेगा। ५. **पंचम भंग-'नहीं बाँधा, बाँधता है, बाँधेगा'**-यह उस जीव में पाया जाता है, जिसने पूर्वभव में उपशमश्रेणी नहीं की थी, अतः ऐर्यापथिक कर्म नहीं बाँधा था, वर्तमान भव में उपशमश्रेणी में बाँधता है, आगामी भव में उपशमश्रेणी या क्षपकश्रेणी में बाँधेगा। ६. **छठा भंग-'नहीं बाँधा था, बाँधता है, नहीं बाँधेगा'**-यह भंग उस जीव में पाया जाता है, जिसने पूर्वभव में उपशमश्रेणी नहीं की थी, अतः नहीं बाँधा था, वर्तमान भव में क्षपकश्रेणी में बाँधता है, इसी भव में मोक्ष चला जायेगा, इसलिए आगामी काल (भव) में नहीं बाँधेगा। ७. **सप्तम भंग-'नहीं बाँधा था, नहीं बाँधता है, बाँधेगा'**-यह भंग उस जीव में पाया जाता है, जो जीव भव्य है, किन्तु भूतकाल में उपशमश्रेणी नहीं की, इसलिए नहीं बाँधा था, वर्तमानकाल में भी उपशमश्रेणी नहीं करता, इसलिए नहीं बाँधता, किन्तु आगामीकाल में उपशमश्रेणी या क्षपकश्रेणी करेगा, तब बाँधेगा। ८. **अष्टमभंग-'नहीं बाँधा था, नहीं बाँधता, नहीं बाँधेगा'**-यह भंग अभव्य जीव में पाया जाता है, जिसने पूर्वभव में ऐर्यापथिक कर्म नहीं बाँधा था, वर्तमान में नहीं बाँधता और भविष्य में भी नहीं बाँधेगा, क्योंकि अभव्य जीव ने उपशमश्रेणी या क्षपकश्रेणी नहीं की, न करता है; और न ही करेगा।

एक ही भव में ऐर्यापथिक कर्मपुद्गलों के ग्रहणरूप 'ग्रहणाकर्ष' की दृष्टि से-१. **प्रथम भंग**-उस जीव में पाया जाता है, जिसने इसी भव में भूतकाल में उपशमश्रेणी या क्षपकश्रेणी के समय ऐर्यापथिक कर्म बाँधा था, वर्तमान में बाँधता है, भविष्य में बाँधेगा। २. **द्वितीय भंग**-तेरहवें गुणस्थान में एक समय शेष रहता है, उस समय पाया जाता है, क्योंकि उसने भूतकाल में बाँधा था, वर्तमानकाल में बाँधता है, और आगामीकाल में शैलेशी अवस्था में नहीं बाँधेगा। ३. **तृतीय भंग**-इसका स्वामी वह जीव है, जो उपशमश्रेणी करके उससे गिर गया है। उसने उपशमश्रेणी के समय ऐर्यापथिक कर्म बाँधा था, अब वर्तमान में नहीं बाँधता और उसी भव में फिर उपशमश्रेणी करने पर बाँधेगा; क्योंकि एक भव में एक जीव दो बार उपशमश्रेणी कर सकता है। ४. चौथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंग–चौदहवें गुणस्थान के प्रथम समय में पाया जाता है। सयोगी अवस्था में उसने ऐर्यापथिक कर्म बाँधा था; किन्तु एक समय पश्चात् ही चौदहवें गुणस्थान की प्राप्ति हो जाने पर शैलेशी अवस्था में नहीं बाँधता, तथा आगामीकाल में नहीं बाँधेगा। ५. **पाँचवाँ भंग**–यह उस जीव में पाया जाता है, जिसने आयुष्य के पूर्वभाग में उपशमश्रेणी आदि नहीं की, इसलिए नहीं बाँधा, वर्तमान में श्रेणी प्राप्त की है, इसलिए बाँधता है और भविष्य में भी बाँधेगा। ६. **छठा भंग**–शून्य है। यह किसी भी जीव में नहीं पाया जाता, क्योंकि छठा भंग है–नहीं बाँधा, बाँधता है, नहीं बाँधेगा। प्रथम की दो बातें तो किसी जीव में सम्भव हैं, लेकिन 'नहीं बाँधेगा' यह बात एक ही भव में नहीं पाई जा सकती। ७. **सप्तम भंग**–भव्यविशेष की अपेक्षा से है। ८. **अष्टम भंग**–अभव्य की अपेक्षा से है।

१. सादि–सान्त, २. सादि–अनन्त, ३. अनादि–सान्त, और ४. अनादि–अनन्त, इन चार विकल्पों में से केवल प्रथम विकल्प–सादि–सान्त में ही ऐर्यापथिक कर्मबन्ध होता है, शेष तीन विकल्पों में नहीं।

जीव के साथ ऐर्यापथिक कर्मबन्धांश सम्बन्धी चार विकल्प–इसके पश्चात् चार–विकल्पों द्वारा ऐर्यापथिक कर्मबन्धांश सम्बन्धी प्रश्न उठाया गया है। उसका आशय यह है–(१) **देश से देशबन्ध**–जीव–आत्मा के एक देश से, कर्म के एक देश का बन्ध, (२) **देश से सर्वबन्ध**–जीव के एक देश से सम्पूर्ण कर्म का बन्ध, (३) **सर्व से देशबन्ध**–सम्पूर्ण जीव प्रदेशों से कर्म के एक देश का बन्ध, और (४) **सर्व से सर्वबन्ध**–सम्पूर्ण–जीव प्रदेशों से सम्पूर्ण कर्म का बन्ध–इनमें से चौथे विकल्प से ऐर्यापथिक कर्म का बन्ध होता है, क्योंकि सर्व आत्म प्रदेशों पर एक समान कर्म बन्ध ही होता है, जीव का ऐसा ही स्वभाव है, शेष तीन विकल्पों से जीव के साथ कर्म का बन्ध नहीं होता।

साम्परायिक कर्मबन्ध–कषाय निमित्तक कर्मबन्धरूप साम्परायिक कर्मबन्ध के स्वामी के विषय में प्रथम प्रश्न में सात विकल्प उठाये गये हैं, उनमें से (१) नैरयिक, (२) तिर्यंच, (३) तिर्यंची, (४) देव, और (५) देवी, ये पाँच तो सकषायी होने से सदा साम्परायिक बन्धक होते हैं, (६) मनुष्य–नर, और (७) मनुष्य–नारी ये दो सकषायी अवस्था में साम्परायिक कर्मबन्धक होते हैं, अकषायी हो जाने पर साम्परायिक बन्धक नहीं होते।

बन्धकर्ता–द्वितीय प्रश्न में साम्परायिक कर्मबन्धकर्ता के विषय में एकत्वविवक्षित और बहुत्वविवक्षित स्त्री, पुरुष, नपुंसक आदि को लेकर सात विकल्प उठाए गये हैं, जिसके उत्तर में कहा गया है–एकत्वविवक्षित और बहुत्वविवक्षित स्त्री, पुरुष और नपुंसक, ये ६ सदैव साम्परायिक कर्मबन्धकर्ता होते हैं, क्योंकि ये सब सवेदी हैं। अवेदी कदाचित् (कभी–कभी) पाया जाता है, इसलिए वह कदाचित् साम्परायिक कर्म बाँधता है। तात्पर्य यह है–स्त्री आदि पूर्वोक्त छह साम्परायिक कर्म बाँधते हैं, अथवा स्त्री आदि ६ और वेदरहित एक जीव (क्योंकि वेदरहित एक जीव भी पाया जाता है, इसलिए) साम्परायिक कर्म बाँधते हैं, अथवा पूर्वोक्त स्त्री आदि छह और वेदरहित बहुत जीव (क्योंकि वेदरहित जीव बहुत भी पाये जा सकते हैं, इसलिए) साम्परायिक कर्म बाँधते हैं। तीनों वेदों का उपशम या क्षय हो जाने पर भी जीव जब तक यथाख्यातचारित्र को प्राप्त नहीं करता, तब तक वह वेदरहित जीव साम्परायिकबन्धक होता है। यह स्थिति ९वें गुण स्थान के अंत में और १०वें गुण स्थान में होती है। यहाँ पूर्वप्रतिपन्न और प्रतिपद्यमान की विवक्षा इसलिए नहीं की गई है कि दोनों में एकत्व और बहुत्व पाया जाता है, तथा वेदरहित हो जाने पर साम्परायिक बन्ध भी अल्पकालिक हो जाता है। साम्परायिक कर्मबन्धक के भी ऐर्यापथिक कर्मबन्धक की तरह २६ भंग होते हैं। वे पूर्ववत् समझ लेने चाहिए।

साम्परायिक कर्मबन्ध–सम्बन्धी त्रैकालिक विचार–काल की अपेक्षा ऐर्यापथिक कर्मबन्ध सम्बन्धी ८ भंग प्रस्तुत किये गये थे, लेकिन साम्परायिक कर्मबन्ध अनादिकाल से है। इसलिए भूतकाल सम्बन्धी जो '**ण बन्धी**–नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बाँधा' इस प्रकार के ४ भंग हैं, वे इसमें नहीं बन सकते। जो ४ भंग बन सकते हैं, उनका आशय इस प्रकार है-१. **'प्रथम भंग–बाँधा था, बाँधता है, बाँधेगा'**–यह भंग यथाख्यातचारित्र–प्राप्ति से दो समय पहले तक सर्वसंसारी जीवों में पाया जाता है। क्योंकि भूतकाल में उन्होंने साम्परायिक कर्म बाँधा था, वर्तमान में बाँधते हैं और भविष्य में भी यथाख्यातचारित्र–प्राप्ति के पहले तक बाँधेंगे। यह प्रथम भंग अभव्य जीव की अपेक्षा भी घटित हो सकता है। २. **द्वितीय भंग–बाँधा था, बाँधता है, नहीं बाँधेगा**–यह भंग भव्य जीव की अपेक्षा से है। मोहनीय कर्म के क्षय से पहले उसने साम्परायिक कर्म बाँधा था, वर्तमान में बाँधता है, और आगामीकाल में मोहक्षय की अपेक्षा नहीं बाँधेगा। ३. **तृतीय भंग–बाँधा था, नहीं बाँधता, बाँधेगा**–यह भंग उपशमश्रेणी प्राप्त जीव की अपेक्षा है। उपशमश्रेणी करने के पूर्व उसने साम्परायिक कर्म बाँधा था, वर्तमान में उपशान्तमोह होने से नहीं बाँधता और उपशम श्रेणी से गिर जाने पर आगामीकाल में पुनः बाँधेगा। ४. **चतुर्थ भंग–'बाँधा था, नहीं बाँधता, नहीं बाँधेगा'**–यह भंग क्षपकश्रेणी–प्राप्त क्षीण–मोह जीव की अपेक्षा से है। मोहनीय कर्मक्षय के पूर्व उसने साम्परायिक कर्म बाँधा था, वर्तमान में मोहनीय कर्म का क्षय हो जाने से नहीं बाँधता और तत्पश्चात् मोक्ष प्राप्त हो जाने से आगामीकाल में नहीं बाँधेगा।

साम्परायिक कर्मबन्धक के विषय में सादि–सान्त आदि ४ विकल्प–पूर्ववत् सादि–सपर्यवसित (सान्त) आदि ४ विकल्पों को लेकर साम्परायिक कर्मबन्ध के विषय में प्रश्न उठाया गया है। इन चार भंगों में से सादि–अपर्यवसित–(अनन्त) को छोड़कर शेष प्रथम, तृतीय और चतुर्थ भंगों से जीव साम्परायिक कर्म बाँधता है। जो जीव उपशम श्रेणी से गिर गया है और आगामीकाल में पुनः उपशमश्रेणी या क्षपकश्रेणी को अंगीकार करेगा, उसकी अपेक्षा प्रथम भंग घटित होता है। जो जीव प्रारम्भ में ही क्षपकश्रेणी करने वाला है, उसकी अपेक्षा अनादि–सपर्यवसित नामक तृतीय भंग घटित होता है, तथा अभव्य जीव की अपेक्षा अनादि–अपर्यवसित नामक चतुर्थ भंग घटित होता है। सादि–अपर्यवसित नामक दूसरा भंग किसी भी जीव में घटित नहीं होता। यद्यपि उपशमश्रेणी से भ्रष्ट जीव सादि साम्परायिक बन्धक होता है, किन्तु वह कालान्तर में अवश्य मोक्षगामी होता है, उस समय उसमें साम्परायिक कर्म का व्यवच्छेद हो जाता है, इसलिए अन्त रहितता उसमें घटित नहीं होती। *(वृत्ति, पत्रांक ३८८)*

Elaboration—In the aforesaid thirteen aphorisms (10-22) bondage of *Iryapathik-karma* and *Samparayik-karma* has been discussed from six angles–

1. Which living being belonging to which one of the four genuses acquires bondage of *Iryapathik-karma* and *Samparayik-karma* ?

2. Which of the genders, including male, female and eunuch acquires the bondage ?

3. Which of the non-genderic being or beings including *stree-pashchaatkrit jiva*, and *napumsak-pashchaatkrit jiva* acquires bondage ?

4. Bondage of the two *karmas* during three periods (past, present and future).

5. Bondage related to the four alternatives of end and beginning.

6. Bondage relative to part and whole.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Bondage and its two types under reference—When a man applies oil to his body and rolls in sand, dust particles stick to his body. In the same way when soul-space-points (*jiva pradesh*) get agitated due to unrighteousness (*mithyatva*), absence of restraint (*avirati*), stupor (*pramaad*), passions (*kashaaya*) and association (*yoga*) then infinite related *karma*-particles present in the surrounding space get fused with every soul-space-point of that soul. Fusion of *karmas* with soul-space-points, like mixing of water with milk, is called *karmic* bondage (*bandh*). The two types of bondage under reference here are–(1) *Iryapathik-karma* and (2) *Samparayik-karma*. The bondage of *sata-vedaniya karma* (the *karma* that causes feelings of pleasure) caused by association alone is called *Iryapathik-karma bandh*. What is responsible for cycles of rebirth in four genuses is called *samparaaya or kashaaya* (passion). The *karmic* bondage caused by these passions (*samparaayas*) is called *Samparayik-karma bandh*. This occurs from first to the tenth *Gunasthaan* (fourteen levels of purity of soul).

Iryapathik-karma bandh: genus, subject, period, alternatives, and range—(1) Genus *(swami)*–Out of the four genuses only human beings acquire the bondage of *Iryapathik-karma*. Even among human beings only those at eleventh (*Upashaant Moha*), twelfth (*Ksheen Moha*), and thirteenth (*Sayogi Kevali*) *Gunasthaan* acquire this bondage. These human beings can be either, male or female. One who has already acquired *Iryapathik-karma*, that is who has passed the first Samaya of acquisition, is called *purva pratipanna*. Relative to this state that has already passed, this *karma* is acquired by many men and many women; this is because there is a large number of such men and women having already acquired this *karma*. Also, omniscient men and women always exist, therefore there is an absence of alternatives about this state. Relative to the present, or the first Samaya of acquisition (*pratipadyamaan* or in process of acquiring) there is always a chance of a gap. Therefore for this state there are eight alternatives based on different combinations of singularity and plurality of man and woman.

(2) The question about male, female and eunuch is in context of physical manifestation of gender (*ling*) and not gender-*karma* (*veda*). This is because the living being acquiring *Iryapathik-karma* are exclusively those who have either pacified or destroyed gender-*karma* (*upashantavedi or ksheen-vedi*). That is why the answer says that it is acquired by non-genderic beings (*apagat-veda or veda rahit*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(3) A being that was woman in the past but non-genderic now is called *stree-pashchaatkrit jiva*. The same is true for the terms *purush-pashchaatkrit jiva* and *napumsak-pashchaatkrit jiva*. Here the question includes 26 alternative combinations of singularity and plurality of these three classes of beings. There are six alternatives without combination, twelve alternatives with combinations of two and eight alternatives with combinations of three.

(4) After that the question with eight alternative combinations related to past, present and future periods of acquisition of *Iryapathik-karma* has been asked. The answer to this has been given in context of *bhavakarsh* and *grahanakarsh*. The acquisition of this bondage (of *Iryapathik-karma*) during past several births by gaining the path of progressive pacification of *karmas* (*Upasham Shreni*) is called *bhavakarsh*, and doing that during a specific birth is called *grahanakarsh*. In context of *bhavakarsh* there are eight alternative combinations—(1) First alternative–acquired in the past, in the present and in the future. This is about a being who had gained the path of progressive pacification of *karmas* (*Upasham Shreni*) during some past birth to acquire these *karmas*, he does the same during the present birth and will do the same again during the next birth. (2) Second alternative–acquired in the past, in the present, but not in the future. This is about a being who had gained the path of progressive pacification of *karmas* (*Upasham Shreni*) during some past birth to acquire these *karmas*, he does the same during the present birth through destruction of *karmas* and attains liberation; therefore, he will not acquire any *karma* during the next birth. (3) Third alternative–in the past, and in the future, but not in the present. This is about a being who had gained the path of progressive pacification of *karmas* (*Upasham Shreni*) during some past birth to acquire these *karmas*, he does not do the same during the present birth but will do the same again during the next birth through pacification or destruction of *karmas*. (4) Fourth alternative–in the past, but not in the present, and also not in the future. This is about a being who had gained the path of progressive destruction of *karmas* (*Kshapak Shreni*) in the past to acquire these *karmas* and is at the fourteenth *Gunasthaan* at present, he does not need to do the same any more now or in future as he is destined to be liberated during this birth. (5) Fifth alternative–not in the past, but in the present, and in the future. This is about a being who did not gain the path of progressive

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

pacification of *karmas* (*Upasham Shreni*) during some past birth to acquire these *karmas*, he does the same during the present birth and will do the same again during the next birth through pacification or destruction of *karmas*. (6) Sixth alternative–not in the past, but in the present, and not in the future. This is about a being who did not gain the path of progressive pacification of *karmas* (*Upasham Shreni*) during some past birth to acquire these *karmas*, he does the same during the present birth through destruction of *karmas* and will get liberated, thus eliminating the need to do the same again during the next birth. (7) Seventh alternative–not in the past, not in the present, but in the future. This is about a being who did not gain the path of progressive pacification of *karmas* (*Upasham Shreni*) during some past birth to acquire these *karmas*, he does not do the same during the present birth, but as he is destined to get liberated (*bhavya*) he will do the same during the next birth through pacification or destruction of *karmas*. (8) Eighth alternative–not in the past, not in the present, and not in the future. This is about a being who is not at all destined to get liberated (*abhavya*) and thus did not gain the path of progressive pacification of *karmas* (*Upasham Shreni*) during some past birth to acquire these *karmas*, he does not do the same during the present birth and will not do the same during the future births. This is because an *abhavya jiva* never gains the path of progressive pacification of *karmas* (*Upasham Shreni*), or the path of progressive destruction of *karmas* (*Kshapak Shreni*).

In context of doing the same during a specific birth (*grahanakarsh*) the aforesaid alternatives are explained as follows–(1) First alternative—This is about a being who had gained the path of progressive pacification or destruction of *karmas* (*Upasham Shreni and Kshapak Shreni*) during this birth in the past to acquire these *karmas*, he does the same at present and will 1do the same in future. (2) Second alternative–This is about a being that is just one Samaya short of crossing the thirteenth *Gunasthaan* because he had acquired these *karmas* in the past, he does the same at present and attains the rock-like state; and thereby stops acquiring any *karma*. (3) Third alternative–This applies to the person who once gains the path of progressive pacification of *karmas* (*Upasham Shreni*) then falls from that level. He had acquired these *karmas* in the past, does not acquire at present but will do so in future when he again gains *Upasham Shreni*. This is because a being can gain *Upasham Shreni* twice during one birth. (4) Fourth

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

alternative–This applies to the first Samaya of entering the fourteenth *Gunasthaan*. He had acquired *Iryapathik-karma* in the *Sayogi* (having association) state but immediately after that he attained the fourteenth *Gunasthaan* and rock-like steady (*Shaileshi*) state where there is no bondage at present as well as in the future because he is destined to be liberated. (5) Fifth alternative–This is about a being that did not gain the path of progressive pacification of *karmas* (*Upasham Shreni*) during the past to acquire these *karmas*. However, he does that at present and will do the same in the future as well. (6) Sixth alternative–This is non-existent because although the first two conditions (not in the past, but in the present) are possible, the third condition (not in the future) is impossible in context of a single birth. (7) Seventh alternative–This is about a being that is destined to get liberated (*bhavya*). (8) Eighth alternative –This is about a being that is not at all destined to get liberated (*abhavya*).

As regards the four alternatives—(1) with a beginning and with an end (*saadi-saparyavasit*), (2) with a beginning but without an end (*saadi-aparyavasit*), (3) without a beginning but with an end (*anaadi-saparyavasit*), (4) without a beginning and without an end (*anaadi-aparyavasit*), this bondage of *Iryapathik-karma* is possible only in the first alternative and not in the other three.

Range of bondage—In the end the question about range of bondage of *Iryapathik-karma* has been raised. It has four alternatives—(1) bondage of a part with a part or fusion of a part of soul with a part of *karma*, (2) fusion of a part of soul with the whole of *karma*, (3) fusion of the whole of soul with a part of *karma*, and (4) fusion of the whole of soul with the whole of *karma*. Here only the fourth alternative is applicable because the nature of the soul is such that the other three alternatives are not possible.

Samparayik-karma bandh—Seven alternatives related to the genus have been proposed in the question about the bondage of *Samparayik-karma* that is caused by passions. Of these (1) infernal beings, (2) male animals, (3) female animals, (4) male divine beings and (5) female divine beings, these five always acquire the bondage of *Samparayik-karma* because they are always with passions. (6) Men and (7) women, these two acquire the bondage of *Samparayik-karma* when they are under the influence of passions and do not do so when they are not.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Subject—In the second question about the subject who acquires the bondage of *Samparayik-karma*, seven alternatives in context of singularity and plurality of male, female, eunuch etc. have been proposed. The answer conveys that the six alternatives related to singularity and plurality of man, woman and eunuch always acquire bondage of *Samparayik-karma* because they all are genderic beings. A non-genderic being seldom exists; therefore there is only a possibility of its acquiring this bondage. In other words the aforesaid six categories of beings including woman acquire bondage of *Samparayik-karma*, or these six and one non-genderic being (because one such being can also exist) acquire this bondage, or these six and many non-genderic beings (because many such beings also exist) acquire this bondage. Even when there is pacification (*upasham*) or destruction (*kshaya*) of gender (*veda*) the resultant non-genderic being acquires bondage of *Samparayik-karma* as long as it does not attain the level of *Yathakhyat Chaaritra* (the ultimate discipline of detachment related to beings at eleventh and higher *Gunasthaan*s). Here the alternatives related to past and present have not been considered because in both cases singularity and plurality exists. Moreover, on becoming non-genderic the bondage of *Samparayik-karma* is also short-lived. Like the subject of bondage of *Iryapathik-karma*, that of bondage of *Samparayik-karma* also has 26 six alternatives as aforesaid.

Bondage of *Samparayik-karma* in context of three periods—In context of period, 8 alternatives have been mentioned about bondage of *Iryapathik-karma*. But as the bondage of *Samparayik-karma* is timeless, the four alternatives related to 'did not acquire' (*na bandhi*) become redundant. The four possible alternatives are– (1) First alternative–acquired in the past, in the present and in the future. This is applicable to all worldly beings up to two Samayas (the ultimate fractional unit of time) before attaining *Yathakhyat Chaaritra*. This is because they acquired the bondage of *Samparayik-karma* during the past, are acquiring the same at present and will acquire in the future before attaining *yathakhyat chaaritra*. This first alternative is also applicable to beings not destined to liberation (*abhavya*). (2) Second alternative–acquired in the past, in the present, but not in the future. This is about a being that is destined to be liberated (*bhavya*). Prior to destroying *Mohaniya karma* (deluding *karma*) he had acquired the bondage of *Samparayik-karma*, he does the same at present but will not

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

do that in future because of destruction of deluding *karma*. (3) Third alternative– in the past, and in the future, but not in the present. This is about a being that has gained the path of progressive pacification of *karmas* (*Upasham Shreni*). He had acquired the bondage of *Samparayik-karma* prior to gaining *Upasham Shreni*; he does not do the same at present due to pacified delusion, but will do the same again in the future when he falls from *Upasham Shreni*. (4) Fourth alternative–in the past, but not in the present, and also not in the future. This is about a being that has gained the path of progressive destruction of *karmas* (*Kshapak Shreni*) and has destroyed delusion. He had acquired these *karmas* prior to destruction of *Mohaniya karmas*, he also does not acquire the same at present for the same reason and he does not need to do the same any more in future as he gets liberated.

As regards the four alternatives including 'with a beginning and with an end' (*saadi-saparyavasit*), a living being acquires bondage of *Samparayik-karma* with three alternatives other than the second one of 'with a beginning but without an end' (*saadi-aparyavasit*). The first alternative, with a beginning and with an end (*saadi-saparyavasit*), is applicable to the being that has fallen from *Upasham Shreni* and will regain the same or *Kshapak Shreni* in the future. The third alternative, without a beginning but with an end (*anaadi-saparyavasit*), is applicable to the being that attains *Kshapak Shreni* to begin with. The fourth alternative, without a beginning and without an end (*anaadi-aparyavasit*), is applicable to the beings that are not destined to be liberated (*abhavya*). The second alternative does not apply to any being. Although a being fallen from *Upasham Shreni* acquires bondage of *Samparayik-karma* in the category of 'with a beginning' but, as he is destined to attain liberation in future, he destroys this *karma*. Therefore the alternative of 'without an end' does not apply in this case. *(Vritti, leaf 388)*

बावीस परीषहों का अष्टविध कर्मों में समावेश

INCLUSION OF TWENTY TWO AFFLICTIONS IN EIGHT KARMA SPECIES

२३. [प्र.] कइ णं भंते ! कम्मपयडीओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठ कम्मपयडीओ पण्णत्ताओ, तं जहा—णाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं।

२३. [प्र.] भगवन् ! कर्मप्रकृतियाँ कितनी कही गई हैं ?

[उ.] गौतम ! कर्मप्रकृतियाँ आठ कही गई हैं। यथा—ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

23. [Q.] *Bhante* ! How many species of *karma* (*karmaprakriti*) are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! There are said to be eight species of *karma* (*karmaprakriti*)– *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) ... and so on up to ... *Antaraya* (power hindering).

२४. [प्र.] कइ णं भंते ? परीसहा पण्णत्ता ?

[उ.] **गोयमा ! बावीसं परीसहा पण्णत्ता, तं जहा–दिगिंछापरीसहे १, पिवासापरीसहे २, जाव दंसणपरीसहे २२।**

२४. [प्र.] भगवन् ! परीषह कितने कहे गये हैं ?

[उ.] गौतम ! परीषह बावीस कहे गये हैं। वे इस प्रकार–१. क्षुधा–परीषह, २. पिपासा–परीषह यावत् २२–दर्शन–परीषह।

24. [Q.] *Bhante* ! How many types of afflictions (*parishaha*) are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! There are said to be twenty-two afflictions (*parishaha*)–(1) *Kshudha-parishaha* (affliction of hunger), (2) *Pipaasa-parishaha* (affliction of thirst) ... and so on up to ... (22) *Darshan parishaha* (conduct related affliction).

२५. [प्र.] एए णं भंते ! बावीसं परीसहा कतिसु कम्मपगडीसु समोयरंति ?

[उ.] **गोयमा ! चउसु कम्मपयडीसु समोयरंति, तं जहा–नाणावरणिज्जे, वेयणिज्जे, मोहणिज्जे, अंतराइए।**

[प्र.] भगवन् ! इन बावीस परीषहों का किन कर्मप्रकृतियों में समवतार (समावेश) हो जाता है ?

२५. [उ.] गौतम ! चार कर्मप्रकृतियों में इन २२ परीषहों का समवतार होता है। वे इस प्रकार हैं–१. ज्ञानावरणीय, २. वेदनीय, ३. मोहनीय और ४. अन्तराय।

25. [Q.] *Bhante* ! With which *karma* species are these twenty-two afflictions associated (*samavatar*) ?

[Ans.] Gautam ! These twenty-two afflictions are associated with four *karma* species–(1) *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring), (2) *Vedaniya* (pain and pleasure causing), (3) *Mohaniya* (deluding) and *Antaraya* (power hindering).

२६. नाणावरणिज्जे णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?

[उ.] **गोयमा ! दो परीसहा समोयरंति, तं जहा–पण्णापरीसहे नाणपरीसहे (अन्नाण परीसहे) य।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 10

Illustration No. 10

22 परिषहों का अष्टविध कर्म में समावेश—1

कर्मों के उदय से साधु जीवन में आने वाले कष्टों को **परिषह** कहते हैं। इन परिषहों को समभाव पूर्वक सहना चाहिए। ये परिषह 22 प्रकार के होते हैं। 22 परिषहों में कौन से परिषह किस कर्म के उदय से होते हैं, उनका वर्णन यहाँ किया गया है—

(1) **ज्ञानावरणीय कर्म** के उदय से— **1. प्रज्ञा परिषह**— विशिष्ट बुद्धि को प्रज्ञा कहते हैं। प्रज्ञा का उत्कर्ष होने पर गर्व करना, अपने से प्रज्ञावानों की प्रज्ञा देखकर मन में विषाद करना। यह प्रज्ञा परिषह है। **2. अज्ञान परिषह**— अज्ञान का अर्थ है अल्प ज्ञान या मिथ्या ज्ञान। यह परिषह अज्ञान के सद्भाव और अभाव, दोनों प्रकार से होता है। "मुझे कुछ नहीं आता। मैं अल्प ज्ञानी हूँ।" मन में ऐसा विषाद लाना अज्ञान परिषह है।

(2) **अंतराय कर्म** के उदय से— **अलाभ परिषह**— विभिन्न स्थानों पर गवेषणा करने पर भी भिक्षु को भिक्षा का न मिलना अलाभ परिषह है।

(3) **दर्शनमोहनीय कर्म** के उदय से— **दंसण परिषह (श्रद्धा सम्बन्धी)** — तीर्थंकर भगवान में और तीर्थंकर भाषित सूक्ष्म तत्त्वों में शंका होना दर्शन परिषह है।

(4) **चारित्रमोहनीय कर्म** के उदय से सात परिषह आते हैं— **1. अरति परिषह**— संयम मार्ग पर कठिनाईयाँ आने पर उसमें मन न लगे, उसके प्रति अरुचि उत्पन्न हो वो अरति परिषह होता है। **2. स्त्री परिषह**— स्त्री को देखकर मन चंचल होना स्त्री परिषह है। (यह अनुकूल परिषह है)। **3. अचेल परिषह (नग्नता का परिषह)** — जीर्ण, अपूर्ण और मलीन आदि वस्त्रों का सद्भाव या अभाव होना अचेल परिषह है। **4. निषद्या परिषह**— अपरिचित उद्यान, श्मशान, सूना घर, टूट-फूटा घर, खण्डहर आदि में बैठना निषद्या परिषह है। *(क्रमशः)*

—शतक 8, उ. 8, सूत्र 23-28

INCLUSION OF 22 AFFLICTIONS IN EIGHT KARMA SPECIES – 1

The hardship caused by fruition of karmas during ascetic life is called affliction. These afflictions should be endured with equanimity. Which of the 22 afflictions is caused by fruition of which karma is described here —

1. With fruition of *Jnanavaraniya karma* — (1) Prajna-parishaha – Special intellect is called *prajna* and with its development comes pride. To be disappointed when facing someone more intelligent is a type of *Prajna-parishaha.* **(2) Ajnana-parishaha** – Little or false knowledge is *ajnana* or ignorance. Both cause this affliction. To think that I know nothing or very little, and be disappointed is *Ajnana-parishaha.*

2. With fruition of *Antaraya karma* – *Alaabh-parishaha* (affliction of non-attainment) When an ascetic does not get alms even after seeking at many places it is an example of *Alaabh-parishaha.*

3. With fruition of *Darshan-mohaniya karma* – *Darshan-parishaha* (perception/faith related affliction) – To have doubt in Tirthankar and his sermon is an example of *Darshan-parishaha.*

4. With fruition of *Chaaritra-mohaniya* (conduct deluding) – (1) Arati-parishaha – Affliction related to disturbance in ascetic-discipline in face of hurdles. **(2) Stree-parishaha** – Affliction related to attraction for opposite sex. **(3) Achela-parishaha** – Garb related affliction including shabby dress or absence of the same. **(4) Nishadya-parishaha** – Accommodation related affliction including staying in unsuitable areas like garden, cremation ground, forlorn house, ruins etc. is called *Nishadya-parishaha.* (continued...)

— Shatak-8, lesson-8, Sutra-23-28

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६. [प्र.] भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म में कितने परीषहों का समवतार होता है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञानावरणीय कर्म में दो परीषहों का समवतार होता है। यथा–प्रज्ञा–परीषह और ज्ञान–परीषह (अज्ञान–परीषह)।

26. [Q.] *Bhante* ! How many afflictions are associated with *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) ?

[Ans.] Gautam ! Two afflictions are associated with *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) – *Prajna-parishaha* (enlightenment related affliction) and *Jnana-parishaha* (knowledge related affliction or ignorance).

२७. [प्र.] वेयणिज्जे णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?

[उ.] गोयमा ! एक्कारस परीसहा समोयरंति, तं जहा–

पंचेव आणुपुव्वी, चरिया, सेज्जा, वहे य रोगे य।
तणफास जल्लमेव य एक्कारस वेयणिज्जम्मि॥ १॥

२७. [प्र.] भगवन् ! वेदनीय कर्म में कितने परीषहों का समवतार होता है ?

[उ.] गौतम ! वेदनीय कर्म में ग्यारह परीषहों का समवतार होता है। वे इस प्रकार हैं–अनुक्रम से पहले के पाँच परीषह [१. क्षुधा–परीषह, २. पिपासा–परीषह, ३. शीत–परीषह, ४. उष्ण–परीषह, और ५. दंशमशक–परीषह], ६. चर्या–परीषह, ७. शय्या–परीषह, ८. वध–परीषह, ९. रोग–परीषह, १०. तृणस्पर्श–परीषह, और ११. जल्ल (मल) परीषह। इन ग्यारह परीषहों का समवतार वेदनीय कर्म में होता है।

27. [Q.] *Bhante* ! How many afflictions are associated with *Vedaniya karma* (pain and pleasure causing *karma*) ?

[Ans.] Gautam ! Eleven afflictions are associated with *Vedaniya karma* (pain and pleasure causing *karma*)–[first five affliction in their normal order—(1) *Kshudha-parishaha* (affliction of hunger), (2) *Pipasa-parishaha* (affliction of thirst), (3) *Sheet-parishaha* (affliction of cold), (4) *Ushna-parishaha* (affliction of heat), (5) *Damsh-mashak-parishaha* (affliction of sting)], (6) *Charya-parishaha* (movement or wandering related affliction), (7) *Shayya-parishaha* (place of stay or accommodation related affliction), (8) *Vadh-parishaha* (punishment related affliction), (9) *Roag-parishaha* (ailment related affliction), (10) *Trinasparsh-parishaha* (hay or straw related affliction), and (11) *Jalla-parishaha* (dirt or slime related affliction). These eleven afflictions are included in *Vedaniya karma*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८. [प्र. १] दंसणमोहणिज्जे णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?

[उ.] गोयमा ! एगे दंसणपरीसहे समोयरइ।

[प्र. २] चरित्तमोहणिज्जे णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?

[उ.] गोयमा ! सत्त परीसहा समोयरंति, तं जहा–

अरती अचेल इत्थी निसीहिया जायणा य अक्कोसे।
सक्कारपुरक्कारे चरित्तमोहम्मि सत्तेते॥२॥

२८. [प्र. १] भगवन् ! दर्शनमोहनीय कर्म में कितने परीषहों का समवतार होता है ?

[उ.] गौतम ! दर्शनमोहनीय कर्म में एक दर्शन-परीषह का समवतार होता है।

[प्र. २] भगवन् ! चारित्रमोहनीय कर्म में कितने परीषहों का समवतार होता है ?

[उ.] गौतम ! चारित्रमोहनीय कर्म में सात परीषहों का समवतार होता है। वह इस प्रकार- १. अरति-परीषह, २. अचेल-परीषह, ३. स्त्री-परीषह, ४. निषद्या-परीषह, ५. याचना-परीषह, ६. आक्रोश-परीषह, और ७. सत्कार-पुरस्कार-परीषह। इन सात परीषहों का समवतार चारित्रमोहनीय कर्म में होता है।

28. [Q. 1] *Bhante* ! How many afflictions are associated with *Darshan-mohaniya karma* (perception/faith deluding *karma*) ?

[Ans.] Gautam ! One affliction is associated with *Darshan-mohaniya karma* (perception/faith deluding *karma*)– *Darshan-parishaha* (perception/faith related affliction).

[Q. 2] *Bhante* ! How many afflictions are associated with *Chaaritra-mohaniya karma* (conduct deluding *karma*) ?

[Ans.] Gautam ! Seven affliction are associated with *Chaaritra-mohaniya* (conduct deluding)–(1) *Arati-parishaha* (affliction related to disturbance in ascetic-discipline), (2) *Achela-parishaha* (garb related affliction), (3) *Stree-parishaha* (affliction related to opposite sex), (4) *Nishadya-parishaha* (accommodation related affliction), (5) *Yaachana-parishaha* (affliction related to alms seeking), (6) *Aakrosh-parishaha* (insult related affliction), and (7) *Satkaar-puraskaar-parishaha* (affliction related to honour and prize).

२९. [प्र.] अंतराइए णं भंते ! कम्मे कति परीसहा समोयरंति ?

[उ.] गोयमा ! एगे अलाभपरीसहे समोयरइ।

२९. [प्र.] भगवन् ! अन्तराय कर्म में कितने परीषहों का समवतार होता है ?

[उ.] गौतम ! अन्तराय कर्म में एक अलाभ-परीषह का समवतार होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

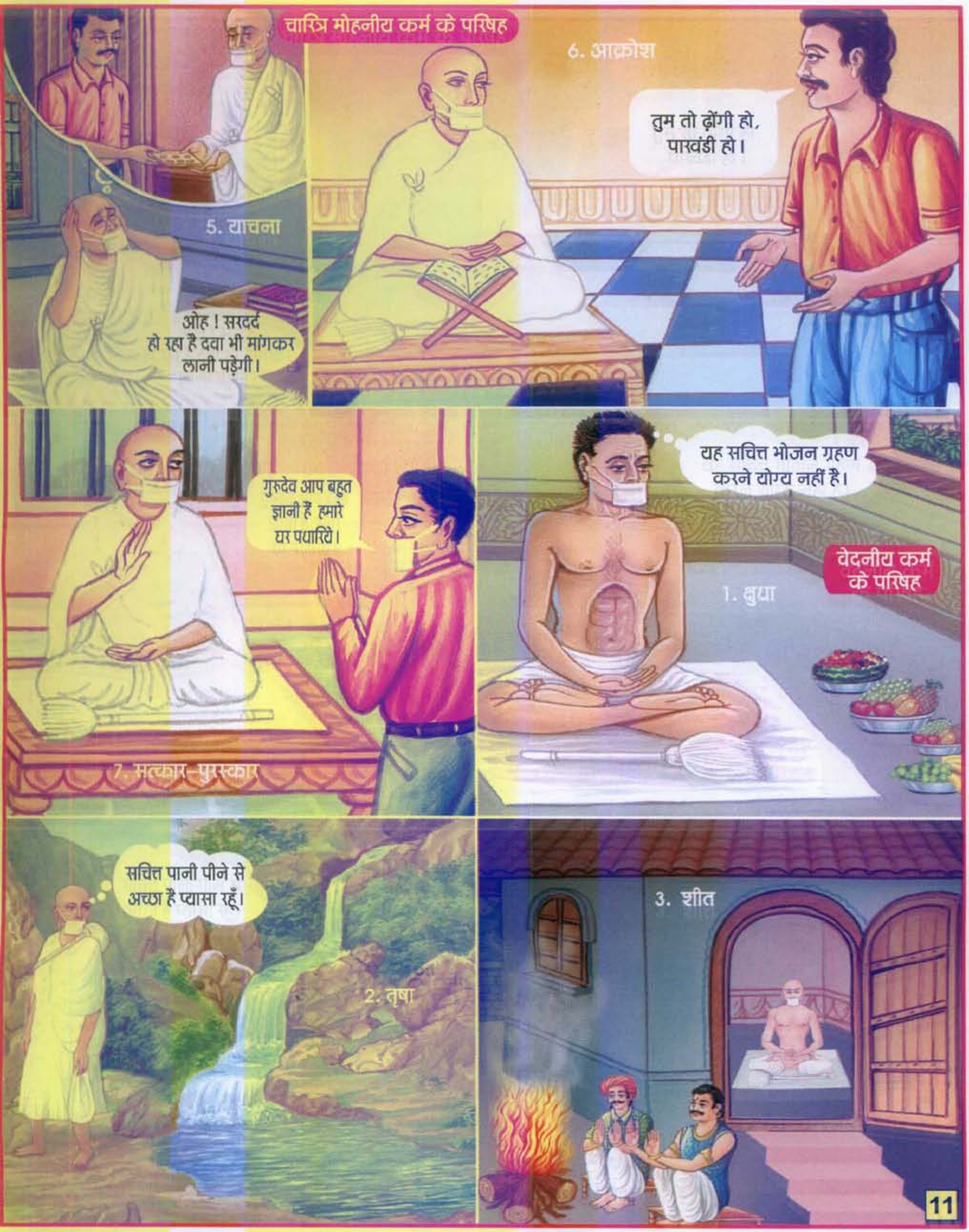

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 11

Illustration No. 11

22 परिषहों का अष्टविध कर्म में समावेश—2

5. याचना परिषह—भिक्षा माँगने में होने वाला कष्ट। साधु को दूसरों (गृहस्थ) के सामने वस्त्र, पात्र, आहार-पानी, दवाई आदि की याचना करनी पड़ती है, उससे मन में किसी प्रकार ग्लानि या दु:ख उत्पन्न होना याचना परिषह है। **6. आक्रोश परिषह**—कठोर, कर्कश वचनों से होने वाला परिषह। **7. सत्कार-पुरस्कार परिषह**—जनता द्वारा मान-पूजा-सत्कार-प्रतिष्ठा, प्रसिद्धि पाने पर हर्षित होना और इसके न मिलने पर दु:खी होना।

वेदनीय कर्म के उदय से ग्यारह परिषह होते हैं—

1. क्षुधा परिषह—क्षुधा की चाहे जैसी वेदना उठने पर पाप-भीरू साधु के द्वारा आहार पकाने-पकवाने, फलादि का छेदन करने-कराने, खरीदने-खरीदवाने की वांछा से निवृत्त होकर अथवा अपनी स्वीकृत मर्यादा के विपरीत अनेषणीय-अकल्पनीय आहार न लेकर क्षुधा को समभावपूर्वक सहना क्षुधा परिषह है। **2. पिपासा परिषह**—प्यास की चाहे जितनी और चाहे जहाँ (बस्ती में या अटवी में) वेदना होने पर भी तत्त्वज्ञ साधु द्वारा अंगीकृत मर्यादा के विरुद्ध सचित्त जल न लेकर समभावपूर्वक उक्त वेदना को सहना पिपासा-परिषह है। **3. शीत परिषह**—शीत से अत्यंत पीड़ित होने पर भी साधु द्वारा मर्यादा-उपरान्त वस्त्र न लेकर तथा अग्नि आदि न जलाकर, न जलवा कर तथा अन्य लोगों द्वारा प्रज्वलित अग्नि का सेवन न करके शीत के कष्ट को समभावपूर्वक सहना शीत परिषह है। *(क्रमशः)*

—शतक 8, उ. 8, सूत्र 27

INCLUSION OF 22 AFFLICTIONS IN EIGHT KARMA SPECIES – 2

(5) Yaachana-parishaha – Affliction related to alms seeking. An ascetic has to seek dress, pots, food, water, medicine etc. from householders. Rise of a feeling of sorrow or self-reproach is *Yaachana-parishaha.*

(6) Aakrosh-parishaha – Insult related affliction caused by harsh and hurtful words.

(7) Satkaar-puraskaar-parishaha – Affliction related to honour and prize. This includes joy when getting honour, worship, respect fame etc. and sorrow when not.

— Shatak-8, lesson-8, Sutra-23-28

With fruition of *Vedaniya karma* are associated eleven afflictions --

(1) Kshudha-parishaha – Affliction of hunger when one, having no desire of getting food cooked or prepared or bought, does not get acceptable prescribed pure food; or in order to follow the resolves he has taken regarding food and endures the discomfort with equanimity. **(2) Pipasa-parishaha** – Affliction of thirst when one, in spite of being thirsty does not take unsuitable and non-prescribed water following the ascetic code regarding water and endures the discomfort with equanimity. **(3) Sheet-parishaha** - Affliction of cold. Even when there is extreme cold an ascetic does not take additional clothing or arrange for fire himself or through others. He endures this cold with equanimity.

(continued....)

-- Shatak-8, lesson-8, Sutra-27

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

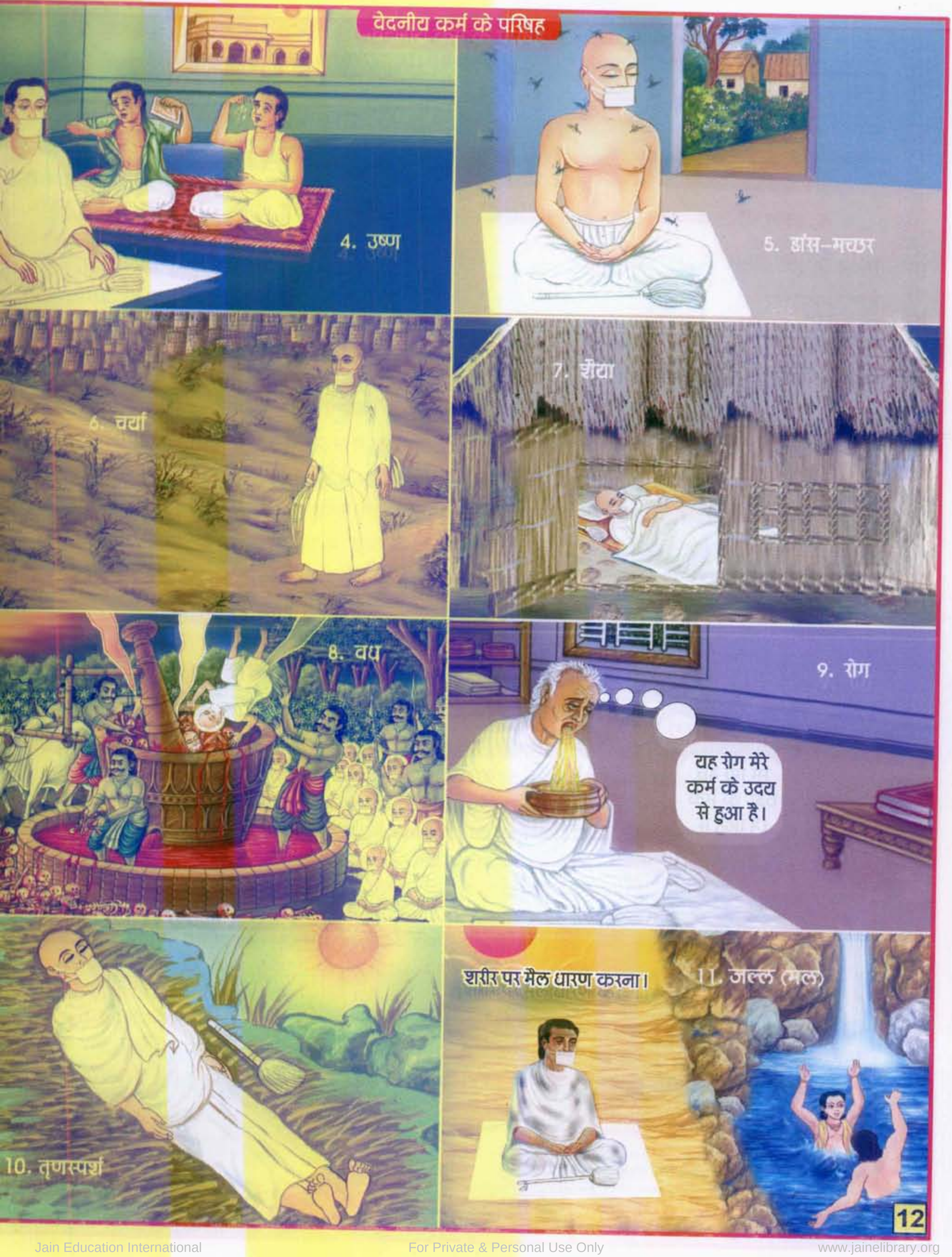

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 12

Illustration No. 12

22 परिषहों का अष्टविध कर्म में समावेश—3

4. **उष्ण परिषह**—दाह, ग्रीष्मकालीन सूर्य किरणों का प्रखर ताप, लू आदि की उष्णता से तप्त मुनि द्वारा ठंडक की इच्छा न करना, पंखे आदि से हवा न करना इत्यादि प्रकार से उष्णता की वेदना को समभाव से सहन करना उष्ण परिषह है। 5. **दंशमशक परिषह**—डाँस, मच्छर, खटमल, जूँ, चींटी आदि के काटने का परिषह। 6. **चर्या परिषह**—ग्राम, नगर आदि के विहार में एवं चलने-फिरने में कंकर, पत्थर काँटे आदि से होने वाला कष्ट। 7. **शैया परिषह**—रहने के स्थान की प्रतिकूलता से होने वाला कष्ट। 8. **वध परिषह**—तीक्ष्ण, तलवार, मूसल, मुद्गर, चाबुक, डंडा आदि अस्त्रों द्वारा जिस साधक का शरीर तोड़ा-मरोड़ा जा रहा है, उसे मार दिया जाता है, फिर भी मारने वालों पर लेशमात्र भी क्रोध न करना वध परिषह है। जैसे खंधक मुनि के 500 शिष्यों को घाणी में पीला गया परन्तु सभी ने समभाव पूर्वक परिषह सहन किया और मोक्ष में गये। 9. **रोग परिषह**—शरीर में रोग आदि उत्पन्न होने पर उद्विग्न न होना रोग परिषह है। 10. **तृणस्पर्श परिषह**—घास के बिछौने पर सोते समय शरीर में चुभने से या मार्ग में चलते समय तृणादि पैर में चुभने से होने वाला कष्ट। 11. **जल्ल परिषह**—शरीर और वस्त्र आदि में चाहे जितना मैल लगे, किन्तु उद्वेग को प्राप्त नहीं होना तथा स्नान की इच्छा नहीं करना।

—शतक 8, उ. 8, सूत्र 27

INCLUSION OF 22 AFFLICTIONS IN EIGHT KARMA SPECIES – 3

(4) Ushna-parishaha – Affliction of heat. Even when there is extreme heat an ascetic does not seek means of combating the heat through fan, air conditioning etc. He endures this cold with equanimity. **(5) Damsh-mashak-parishaha** – Affliction of sting caused by insects like mosquitos, bed bugs, lice etc. **(6) Charya-parishaha** Movement or wandering related affliction, such as pain caused by thorns, pebbles, etc. while walking. **(7) Shayya-parishaha** – Affliction related to place of stay or accommodation. **(8) Vadh-parishaha** – Punishment related affliction. Even when an ascetic is tortured or killed with weapons like sword, mace, whip, stick etc. he avoids even slightest anger towards the tormentor. For example, Khandhak ascetic crushed in an oil extractor along with his 500 disciples but he endured all pain with equanimity and attained liberation. **(9) Roag-parishaha** – Ailment related affliction. An ascetic remains calm and tolerant when he suffers an ailment. **(10) Trinasparsh-parishaha** – Hay or straw related affliction. This is caused by straw or thorns hurting in a bed while sleeping or on the path while walking. **(11) Jalla-parishaha** – Dirt or slime related affliction. Not to get disturbed and think of bathing or washing no matter how dirty the body or dress is.

— Shatak-8, lesson-8, Sutra-27

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

29. [Q.] *Bhante* ! How many afflictions are associated with *Antaraya karma* (power hindering *karma*) ?

[Ans.] Gautam ! One affliction is associated with *Antaraya karma* (power hindering *karma*) – *Alaabh-parishaha* (affliction of non-attainment).

३०. [प्र.] सत्तविहबंधगस्स णं भंते ! कति परीसहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! बावीसं परीसहा पण्णत्ता, वीसं पुण वेदेइ–जं समयं सीयपरीसहं वेदेति णो तं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ, जं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ णो तं समयं सीयपरीसहं वेदेइ। जं समयं चरियापरीसहं वेदेति णो तं समयं निसीहियापरीसहं वेदेति, जं समयं निसीहियापरीसहं वेदेइ णो तं समयं चरियापरीसहं वेदेइ।

३०. [प्र.] भगवन् ! सप्तविधबन्धक (सात प्रकार के कर्मों को बाँधने वाले) जीव के कितने परीषह बताये गये हैं ?

[उ.] गौतम ! उसके बावीस परीषह कहे गये हैं। परन्तु वह जीव एक साथ बीस परीषहों का वेदन करता है; क्योंकि जिस समय वह शीत–परीषह वेदता है, उस समय उष्ण–परीषह का वेदन नहीं करता; और जिस समय उष्ण–परीषह का वेदन करता है, उस समय शीत–परीषह का वेदन नहीं करता। तथा जिस समय चर्या–परीषह का वेदन करता है, उस समय निषद्या–परीषह का वेदन नहीं करता और जिस समय निषद्या–परीषह का वेदन करता है, उस समय चर्या–परीषह का वेदन नहीं करता।

30. [Q.] *Bhante* ! How many afflictions a living being that has acquired bondage of seven species of *karma*s suffers ?

[Ans.] Gautam ! He is said to suffer twenty-two afflictions. However, at a time he suffers only twenty afflictions. This is because when a being suffers affliction of cold he does not suffer that of heat and vice versa; also when he suffers the movement related affliction he does not suffer accommodation related affliction and vice versa.

३१. [प्र.] अट्ठविहबंधगस्स णं भंते ! कति परीसहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! बावीसं परीसहा पण्णत्ता. एवं (सु. ३०) अट्ठविहबंधगस्स।

३१. [प्र.] भगवन् ! आठ प्रकार कर्म बाँधने वाले जीव के कितने परीषह कहे गये हैं ?

[उ.] गौतम ! उसके बावीस परीषह कहे गये हैं। यथा–क्षुधा–परीषह, पिपासा–परीषह, शीत–परीषह, दंशमशक–परीषह यावत् दंसण–परीषह। किन्तु वह एक साथ बीस परीषहों को वेदता है। जिस प्रकार सप्तविधबन्धक के विषय में कहा गया है, उसी प्रकार (सूत्र ३० के अनुसार) अष्टविधबन्धक के विषय में भी कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

31. [Q.] *Bhante* ! How many afflictions a living being that has acquired bondage of eight species of *karmas* suffers ?

[Ans.] Gautam ! He is said to suffer twenty-two afflictions—*Kshudha-parishaha* (affliction of hunger), (2) *Pipasa-parishaha* (affliction of thirst), (3) *Sheet-parishaha* (affliction of cold), (4) *Ushna-parishaha* (affliction of heat), (5) *Damsh-mashak-parishaha* (affliction of sting) ... and so on up to ... *Alaabh-parishaha* (affliction of non-attainment). However, at a time he suffers only twenty afflictions. Repeat what has been stated with regard to seven species of *karmas* (aphorism 30).

३२. [प्र.] छव्विहबंधगस्स णं भंते ! सरागछउमत्थस्स कति परीसहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! चोद्दस परीसहा पण्णत्ता, बारस पुण वेदेइ–जं समयं सीयपरीसहं वेदेइ णो तं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ, जं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ नो तं समयं सीयपरीसहं वेदेइ। जं समयं चरियापरीसहं वेदेति णो तं समयं सेज्जापरीसहं वेदेइ, जं समयं सेज्जापरीसहं वेदेति णो तं समयं चरियापरीसहं वेदेइ।

३२. [प्र.] भगवन् ! छह प्रकार के कर्म बाँधने वाले सराग छद्मस्थ जीव के कितने परीषह कहे गये हैं ?

[उ.] गौतम ! उसके चौदह परीषह कहे गये हैं; किन्तु वह एक साथ बारह परीषह वेदता है। जिस समय शीत-परीषह वेदता है, उस समय उष्ण-परीषह का वेदन नहीं करता; और जिस समय उष्ण-परीषह का वेदन करता है, उस समय शीत-परीषह का वेदन नहीं करता। जिस समय चर्या-परीषह का वेदन करता है, उस समय शय्या-परीषह का वेदन नहीं करता; और जिस समय शय्या-परीषह का वेदन करता है, उस समय चर्या-परीषह का वेदन नहीं करता।

32. [Q.] *Bhante* ! How many afflictions a *chhadmasth* (one who is short of omniscience due to residual *karmic* bondage) being with attachment (*saraag*) who has acquired bondage of six species of *karmas* suffers ?

[Ans.] Gautam ! He is said to suffer fourteen afflictions. However, at a time he suffers only twelve afflictions. This is because when a being suffers affliction of cold he does not suffer that of heat and vice versa; also when he suffers the movement related affliction he does not suffer accommodation related affliction and vice versa.

३३. [प्र. १] एक्कविहबंधगस्स णं भंते ! वीयरागछउमत्थस्स कति परीसहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! एवं चेव जहेव छव्विहबंधगस्स।

[प्र. २] एगविहबंधगस्स णं भंते ! सजोगिभवत्थकेवलिस्स कति परीसहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! एक्कारस परीसहा पण्णत्ता, नव पुण वेदेइ। सेसं जहा छव्विहबंधगस्स।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३. [प्र. १] भगवन् ! एकविधबन्धक वीतराग–छद्मस्थ जीव के कितने परीषह कहे गये हैं ?

[उ.] गौतम ! षड्विधबन्धक के समान इसके भी चौदह परीषह कहे गये हैं, किन्तु वह एक साथ बारह परीषहों का वेदन करता है। जिस प्रकार षड्विधबन्धक के विषय में कहा है, उसी प्रकार एकविधबन्धक के विषय में समझना चाहिए।

[प्र. २] भगवन् ! एकविधबन्धक सयोगी–भवस्थ केवली के कितने परीषह कहे गये हैं ?

[उ.] गौतम ! इसके ग्यारह परीषह कहे गये हैं, किन्तु वह एक साथ नौ परीषहों का वेदन करता है। शेष समग्र कथन षड्विधबन्धक के समान समझ लेना चाहिए।

33. [Q. 1] *Bhante* ! How many afflictions a *chhadmasth* (one who is short of omniscience due to residual *karmic* bondage) being without attachment (*vitaraag*) who has acquired bondage of one species of *karmas* suffers ?

[Ans.] Gautam ! Like the one with bondage of six species of *karma* (as aforesaid), he is said to suffer fourteen afflictions. However, at a time he suffers only twelve afflictions. As has been stated about a being that has acquired bondage of six species of *karmas*, so should be repeated for one who has acquired bondage of one species of *karmas*.

३४. [प्र.] अबंधगस्स णं भंते ! अजोगिभवत्थकेवलिस्स कति परीसहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! एक्कारस परीसहा पण्णत्ता, नव पुण वेदेइ, जं समयं सीयपरीसहं वेदेति नो तं समयं उसिणपरीसहं वेदेइ, जं समयं उसिणपरीसहं वेदेति नो तं समयं सीयपरीसहं वेदेइ। जं समयं चरियापरीसहं वेदेइ नो तं समयं सेज्जापरीसहं वेदेति, जं समयं सेज्जापरीसहं वेदेइ नो तं समयं चरियापरीसहं वेदेइ।

३४. [प्र.] भगवन् ! अबन्धक अयोगी–भवस्थ–केवली के कितने परीषह कहे गये हैं ?

[उ.] गौतम ! उसके ग्यारह परीषह कहे गये हैं। किन्तु वह एक साथ नौ परीषहों का वेदन करता है। क्योंकि जिस समय शीत–परीषह का वेदन करता है, उस समय उष्ण–परीषह का वेदन नहीं करता; और जिस समय उष्ण–परीषह का वेदन करता है, उस समय शीत–परीषह का वेदन नहीं करता। जिस समय चर्या–परीषह का वेदन करता है, उस समय शय्या–परीषह का वेदन नहीं करता और जिस समय शय्या–परीषह का वेदन करता है, उस समय चर्या–परीषह का वेदन नहीं करता।

33. [Q. 2] *Bhante* ! How many afflictions a *Sayogi Bhavasth Kevali* (living omniscient with association) who has acquired bondage of one species of *karmas* suffers ?

[Ans.] Gautam ! He is said to suffer eleven afflictions. However, at a time he suffers only nine afflictions. Remaining part of this statement is

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

same as has been stated about a being that has acquired bondage of six species of *karmas*.

विवेचन : परीषह : स्वरूप और प्रकार—आपत्ति आने पर भी संयममार्ग से भ्रष्ट न होने, तथा उसमें स्थिर रहने के लिए एवं कर्मों की निर्जरा के लिए जो शारीरिक, मानसिक कष्ट साधु, साध्वियों को सहन करने चाहिए, वे 'परीषह' कहलाते हैं। ऐसे परीषह २२ हैं। यथा-(१) **क्षुधा-परीषह**-संयममर्यादानुसार एषणीय, कल्पनीय निर्दोष आहार न मिलने पर क्षुधा का कष्ट सहना। (२) **पिपासा-परीषह**-प्यास का परीषह, (३) **शीत-परीषह**-ठण्ड का परीषह, (४) **उष्ण-परीषह**-गर्मी का परीषह, (५) **दंश-मशक-परीषह**-डांस, मच्छर, खटमल, जूं, चींटी आदि का परीषह, (६) **अचेल-परीषह**-वस्त्राभाव, वस्त्र की अल्पता या जीर्णशीर्ण, मलिन आदि अपर्याप्त वस्त्रों के कारण होने वाला परीषह, (७) **अरति-परीषह**-संयममार्ग में कठिनाइयाँ, असुविधाएँ एवं कष्ट आने पर अरति-अरुचि या उदासी या उद्विग्नता से होने वाला कष्ट, (८) **स्त्री-परीषह**-स्त्रियों से होने वाला कष्ट, साध्वियों के लिए पुरुषों से होने वाला कष्ट, (यह अनुकूल परीषह है।) (९) **चर्या-परीषह**-ग्राम, नगर आदि के विहार से या पैदल चलने से होने वाला कष्ट, (१०) **निषद्या या निशीथिका-परीषह**-स्वाध्याय आदि करने की भूमि में तथा सूने घर आदि में ठहरने से होने वाले उपद्रव का कष्ट, (११) **शय्या-परीषह**-रहने के (आवास-) स्थान की प्रतिकूलता से होने वाला कष्ट, (१२) **आक्रोश-परीषह**-कठोर, कर्कश वचनों से होने वाला, (१३) **वध-परीषह**-मारने-पीटने आदि से होने वाला कष्ट, (१४) **याचना-परीषह**-भिक्षा माँगकर लाने में होने वाला मानसिक कष्ट, (१५) **अलाभपरीषह**-भिक्षा आदि न मिलने पर होने वाला कष्ट, (१६) **रोग-परीषह**-रोग के कारण होने वाला कष्ट, (१७) **तृणस्पर्श-परीषह**-घास के बिछौने पर सोने से शरीर में चुभने से या मार्ग में चलते समय तृणादि पैर में चुभने से होने वाला कष्ट, (१८) **जल्ल-परीषह**-कपड़ों या तन पर मैल, पसीना आदि जम जाने से होने वाली ग्लानि, (१९) **सत्कार-पुरस्कार-परीषह**-जनता द्वारा सम्मान-सत्कार, प्रतिष्ठा, यश, प्रसिद्धि आदि न मिलने से होने वाला मानसिक खेद अथवा सत्कार-सम्मान मिलने पर गर्व अनुभव करना, (२०) **प्रज्ञा-परीषह**-प्रखर अथवा विशिष्ट बुद्धि का गर्व करना, (२१) **ज्ञान या अज्ञान-परीषह**-विशिष्ट ज्ञान होने पर उसका अहंकार करना, ज्ञान (बुद्धि) की मन्दता होने से मन में दैन्यभाव आना, और (२२) **अदर्शन या दर्शन-परीषह**-दूसरे मत वालों की ऋद्धि-वृद्धि एवं चमत्कार-आडम्बर आदि देखकर सर्वज्ञोक्त सिद्धान्त से विचलित होना या सर्वज्ञोक्त तत्त्वों के प्रति शंकाग्रस्त होना।

34. [Q.] *Bhante* ! How many afflictions an *Ayogi Bhavasth Kevali* (living omniscient without association) who does not acquire bondage of *karmas* (*abandhak*) suffers ?

[Ans.] Gautam ! He is said to suffer eleven afflictions. However, at a time he suffers only nine afflictions. This is because when a being suffers affliction of cold he does not suffer that of heat and vice versa; also when he suffers the movement related affliction he does not suffer accommodation related affliction and vice versa.

Elaboration—Afflictions : definition and types—The physical and mental torments ascetics should endure in order to remain unwavering and steadfast in observation of ascetic discipline as well as to achieve

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

shedding of *karmas* are called *parishaha* (afflictions). There are twenty-two such afflictions—(1) *Kshudha-parishaha*—affliction of hunger when one does not get acceptable prescribed pure food. (2) *Pipaasa-parishaha*—affliction of thirst. (3) *Sheet-parishaha*—affliction of cold. (4) *Ushna-parishaha*—affliction of heat. (5) *Damsh-mashak-parishaha*—affliction of sting of insects like mosquito, bed-bug, lice, ant etc. (6) *Achela-parishaha*—garb related affliction caused by total absence or shortage of clothes as well as due to tattered or dirty clothes. (7) *Arati-parishaha*—affliction related to disturbance, disinterest or apathy in observing ascetic-discipline caused by the innate hardship and discomfort. (8) *Stree-parishaha*—affliction related to opposite sex (this is a likeable affliction). (9) *Charya-parishaha*—movement or wandering (from one place to another or one village to another) related affliction). (10) *Nishadya-parishaha*—accommodation related affliction associated generally with lonely place of stay or study. (11) *Shayya-parishaha*–affliction related to unsuitable place of stay or accommodation. (12) *Aakrosh-parishaha*—insult related affliction caused by harsh and biting words. (13) *Vadh-parishaha*—punishment related affliction. (14) *Yaachana-parishaha*–mental affliction related to alms seeking. (15) *Alaabh-parishaha*—affliction of non-attainment, including failure in getting alms. (16) *Roag-parishaha*—ailment related affliction. (17) *Trinasparsh-parishaha* (hay or straw related affliction caused by walking bare feet or sleeping on a straw mattress. (18) *Jalla-parishaha*—dirt or slime related affliction including shame and discomfort due to dirty body and clothes. (19) *Satkaar-puraskaar-parishaha*—affliction related to fame, honour and prize; the gloom of not getting the same and conceit of getting the same. (20) *Prajna parishaha*–affliction in the form of conceit of one's sharp intellect or extraordinary wisdom. (21) *Jnana* or *ajnana parishaha*–affliction related to knowledge and ignorance; conceit of knowledge and humility due to ignorance. (22) *Darshan or adarshan parishaha*—conduct related affliction in the form of disbelief in and transgression of codes given by the omniscient caused by display of miracles and opulence displayed by heretics.

सूर्यों की दूरी और निकटता की प्ररूपणा DISTANCE OF THE SUNS

३५. [प्र.] जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति, मज्झंतिय–मुहुत्तंसि मूले य दूरे य दीसंति, अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] **हंता, गोयमा ! जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य तं चेव जाव अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति।**

३५. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप में क्या दो सूर्य, उदय के मुहूर्त्त (समय) में दूर होते हुए भी निकट (मूल में) दिखाई देते हैं, मध्याह्न के मुहूर्त्त (समय) में निकट (मूल) में होते हुए दूर दिखाई देते हैं और अस्त होने के मुहूर्त्त (समय) में दूर होते हुए भी निकट (मूल में) दिखाई भी देते हैं?

[उ.] हाँ, गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप में दो सूर्य, उदय के समय दूर होते हुए भी निकट दिखाई देते हैं, इत्यादि यावत् अस्त होने के समय में दूर होते हुए भी निकट दिखाई देते हैं।

35. [Q.] *Bhante* ! Is it true that in the continent called Jambudveep at the time of sunrise the two suns appear to be near though they are actually afar; at midday they appear to be afar though near; and at sunset they again appear to be near though they are actually afar ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is true that in the continent called Jambudveep at the time of sunrise the two suns appear to be near though they are actually afar ... and so on up to ... at sunset they again appear to be near though they are actually afar.

३६. [प्र.] **जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि य मज्झंतियमुहुत्तंसि य, अत्थमणमुहुत्तंसि य सव्वत्थ समा उच्चत्तेणं ?**

[उ.] **हंता, गोयमा ! जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उग्गमण जाव उच्चत्तेणं।**

३६. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीप में दो सूर्य, उदय के समय में, मध्याह्न के समय में और अस्त होने के समय में क्या सभी स्थानों पर (सर्वत्र) ऊँचाई में सम हैं?

[उ.] हाँ, गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप में रहे हुए दो सूर्य .... यावत् सर्वत्र ऊँचाई में सम हैं।

36. [Q.] *Bhante* ! Is it true that in the continent called Jambudveep at the time of sunrise, midday and sunset, the two suns are at the same altitude from all conceivable points ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is true that in the continent called Jambudveep ... and so on up to ... the two suns are at the same altitude from all conceivable points.

३७. [प्र.] **जइ णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि य मज्झंतियमुहुत्तंसि य अत्थमणमुहुत्तंसि जाव उच्चत्तेणं से केणं खाइ अट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति जाव अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति ?**

[उ.] **गोयमा ! लेसापडिघाएणं उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति, लेसाभितावेणं मज्झंतिय मुहुत्तंसि मूले य दूरे य दीसंति, लेस्सापडिघाएणं अत्थमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति, से तेणट्ठेणं**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा ! एवं वुच्चइ–जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उग्गमणमुहुत्तंसि दूरे य मूले य दीसंति जाव अत्थमण जाव दीसंति।

३७. [प्र.] भगवन् ! यदि जम्बूद्वीप में दो सूर्य, उदय के समय, मध्याह्न के समय और अस्त के समय सभी स्थानों पर (सर्वत्र) ऊँचाई में समान हैं तो ऐसा क्यों कहते हैं, कि जम्बूद्वीप में दो सूर्य उदय के समय दूर होते हुए भी निकट दिखाई देते हैं, यावत् अस्त के समय में दूर होते हुए भी निकट दिखाई देते हैं ?

[उ.] गौतम ! लेश्या (तेज) के प्रतिघात से सूर्य उदय के समय दूर होते हुए भी निकट दिखाई देते हैं। मध्याह्न में लेश्या (तेज) के अभिताप से पास होते हुए भी दूर दिखाई देते हैं और अस्त के समय तेज के प्रतिघात से दूर होते हुए भी निकट दिखाई देते हैं। इस कारण से, हे गौतम ! मैं कहता हूँ कि जम्बूद्वीप में दो सूर्य, उदय के समय दूर होते हुए भी पास में दिखाई देते हैं, यावत् अस्त के समय दूर होते हुए भी निकट दिखाई देते हैं।

37. [Q.] *Bhante* ! In the continent called Jambudveep if the two suns are at the same altitude from all conceivable points, then why is it said that in Jambudveep at the time of sunrise the two suns appear to be near though they are actually afar ... and so on up to ... at sunset they again appear to be near though they are actually afar ?

[Ans.] Gautam ! At the time of sunrise the two suns appear to be near though they are actually afar because of the fall (*pratighaat*) in the intensity of their radiation (*leshya*). At midday they appear to be near though they are actually afar because of the rise (*abhitaap*) in the intensity of their radiation. And again At the time of sunset they appear to be near though they are actually afar because of the fall (*pratighaat*) in the intensity of their radiation (*leshya*). That is why, Gautam ! I say that in Jambudveep at the time of sunrise the two suns appear to be near though they are actually afar ... and so on up to ... at sunset they again appear to be near though they are actually afar.

३८. [प्र.] जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया किं तीयं खेत्तं गच्छंति, पडुप्पन्नं खेत्तं गच्छंति, अणागयं खेत्तं गच्छंति ?

[उ.] गोयमा ! णो तीयं खेत्तं गच्छंति, पडुप्पन्नं खेत्तं गच्छंति, णो अणागयं खेत्तं गच्छंति।

३८. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीप में दो सूर्य, क्या अतीत क्षेत्र की ओर जाते हैं, वर्तमान क्षेत्र की ओर जाते हैं, अथवा अनागत क्षेत्र की ओर जाते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे अतीत क्षेत्र की ओर नहीं जाते, अनागत क्षेत्र की ओर भी नहीं जाते, वर्तमान क्षेत्र की ओर जाते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

38. [Q.] *Bhante* ! Do the two suns in Jambudveep tend to move towards the region that existed in the past, or the region that exists at present, or the region that will exist in the future ?

[Ans.] Gautam ! They tend to move neither towards the region that existed in the past, nor towards the region that will exist in the future but only towards the region that exists at present.

३९. [प्र.] जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया किं तीयं खेत्तं ओभासंति, पडुप्पन्नं खेत्तं ओभासंति, अणागयं खेत्तं ओभासंति ?

[उ.] गोयमा ! नो तीयं खेत्तं ओभासंति, पडुप्पन्नं खेत्तं ओभासंति, नो अणागयं खेत्तं ओभासंति।

३९. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीप में दो सूर्य, क्या अतीत क्षेत्र को प्रकाशित करते हैं, वर्तमान क्षेत्र को प्रकाशित करते हैं या अनागत क्षेत्र को प्रकाशित करते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे अतीत क्षेत्र को प्रकाशित नहीं करते, और न अनागत क्षेत्र को ही प्रकाशित करते हैं, किन्तु वर्तमान क्षेत्र को प्रकाशित करते हैं।

39. [Q.] *Bhante* ! Do the two suns in Jambudveep tend to enlighten (*obhaasanti or udbhasit*) the region that existed in the past or the region that exists at present, or the region that will exist in the future ?

[Ans.] Gautam ! They neither tend to enlighten the region that existed in the past, nor the region that will exist in the future but only the region that exists at present.

४०. [प्र.] तं भंते ! किं पुट्ठं ओभासंति, अपुट्ठं ओभासंति ?

[उ.] गोयमा ! पुट्ठं ओभासंति, नो अपुट्ठं ओभासंति जाव नियमा छद्दिसिं।

४०. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीप में दो सूर्य, स्पृष्ट क्षेत्र को प्रकाशित करते हैं, अथवा अस्पृष्ट क्षेत्र को प्रकाशित करते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे स्पृष्ट क्षेत्र को प्रकाशित करते हैं, अस्पृष्ट क्षेत्र को प्रकाशित नहीं करते; यावत् नियमतः छहों दिशाओं को प्रकाशित करते हैं।

40. [Q.] *Bhante* ! Do the two suns in Jambudveep tend to enlighten the area in contact or the area not in contact ?

[Ans.] Gautam ! They tend to enlighten the area in contact and not the area not in contact ... and so on up to ... as a rule they enlighten all the six directions.

४१. [प्र.] जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया किं तीयं खेत्तं उज्जोवेंति ?

[उ.] एवं चेव जाव नियमा छद्दिसिं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीप में दो सूर्य, क्या अतीत क्षेत्र को उद्योतित करते हैं ? इत्यादि प्रश्न पूर्ववत् करना चाहिए।

[उ.] गौतम ! इस विषय में पूर्वोक्त प्रकार से जानना चाहिए; यावत् नियमतः छह दिशाओं को उद्योतित करते हैं।

41. [Q.] *Bhante* ! Do the two suns in Jambudveep tend to brighten (*ujjoventi or udyotit*) the region that existed in the past ? (And other aforesaid questions.)

[Ans.] Gautam ! The answers are same as aforesaid ... and so on up to ... as a rule they enlighten all the six directions.

४२. एवं तवेंति, एवं भासंति जाव नियमा छद्दिसिं।

४२. इसी प्रकार तपाते हैं; यावत् छह दिशा को नियमतः प्रकाशित करते हैं।

42. In the same way they tend to warm ... and so on up to ... as a rule they enlighten all the six directions.

४३. [प्र.] जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरियाणं किं तीए खेत्ते किरिया कज्जइ, पडुप्पन्ने खित्ते किरिया कज्जइ, अणागए खेत्ते किरिया कज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! नो तीए खेत्ते किरिया कज्जइ, पडुप्पन्ने खेत्ते किरिया कज्जइ, णो अणागए खेत्ते किरिया कज्जइ।

४३. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीप में सूर्यों की क्रिया क्या अतीत क्षेत्र में की जाती है ? वर्तमान क्षेत्र में की जाती है अथवा अनागत क्षेत्र में की जाती है ?

[उ.] गौतम ! अतीत क्षेत्र में क्रिया नहीं की जाती, और न अनागत क्षेत्र में क्रिया की जाती है, किन्तु वर्तमान क्षेत्र में क्रिया की जाती है।

43. [Q.] *Bhante* ! Are the (aforesaid) activities of the suns in Jambudveep performed in the region that existed in the past, or in the region that exists at present, or in the region that will exist in the future ?

[Ans.] Gautam ! They are neither performed in the region that existed in the past, nor in the region that will exist in the future but only in the region that exists at present.

४४. [प्र.] सा भंते ! किं पुट्ठा कज्जति, अपुट्ठा कज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! पुट्ठा कज्जइ, नो अपुट्ठा कज्जति जाव नियमा छद्दिसिं।

४४. [प्र.] भगवन् ! वे सूर्य स्पृष्ट क्रिया करते हैं या अस्पृष्ट ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! वे स्पृष्ट क्रिया करते हैं, अस्पृष्ट क्रिया नहीं करते; यावत् नियमतः छहों दिशाओं में स्पृष्ट क्रिया करते हैं।

44. [Q.] *Bhante* ! Are these activities of the suns effective when in contact or when not in contact ?

[Ans.] Gautam ! These activities are effective when in contact and not when not in contact. ... and so on up to ... the same is true for all the six directions.

४५. [प्र.] **जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया केवतियं खेत्तं उड्ढं तवंति, केवतियं खेत्तं अहे तवंति, केवतियं खेत्तं तिरियं तवंति ?**

[उ.] **गोयमा ! एगं जोयणसयं उड्ढं तवंति, अट्ठारस जोयणसयाइं अहे तवंति, सीयालीसं जोयणसहस्साइं दोण्णि तेवट्ठे जोयणसए एक्कवीसं च सट्ठिभाए जोयणस्स तिरियं तवंति।**

४५. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीपे में सूर्य कितने ऊँचे क्षेत्र को तपाते हैं, कितने नीचे क्षेत्र को तपाते हैं, और कितने तिरछे क्षेत्र को तपाते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे सौ योजन ऊँचे क्षेत्र को तप्त करते हैं, अठारह सौ योजन नीचे के क्षेत्र को तप्त करते हैं, और सैंतालीस हजार दो सौ तिरेसठ योजन तथा एक योजन के साठिया इक्कीस भाग (४७,२६३ $\frac{२१}{६०}$) तिरछे क्षेत्र को तप्त करते हैं।

45. [Q.] *Bhante* ! In Jambudveep how much higher area, lower area and transverse (middle) area do these suns warm ?

[Ans.] Gautam ! They warm hundred Yojan higher area, eighteen hundred Yojan lower area and forty-seven thousand two hundred sixty three and twenty-one upon sixty Yojan transverse area (47,263- 21/60).

विवेचन : पूर्व सूत्रों में बताया जा चुका है, जम्बूद्वीप में दो सूर्य (दो चन्द्र) निरन्तर गतिशील रहते हैं। उनके उदय–अस्त का व्यवहार सिर्फ हमारी क्षेत्रीय दृष्टि से होता है। जब सूर्य निषध पर्वत के ईशानकोण में आता है तब दक्षिण भरत में सूर्योदय तथा पूरे अर्ध–जम्बूद्वीप का वलयाकार भ्रमण करता हुआ निषध पर्वत के आग्नेयकोण में पहुँचता है, तब हमारे क्षेत्र की अपेक्षा 'सूर्यास्त' माना जाता है। सूर्य विमान के चार क्षेत्र वलयाकार हैं, परन्तु उसका प्रकाश क्षेत्र तिरछा होता है। जब सर्वाभ्यन्तर मण्डल में सूर्य होता है, तब पूर्व–पश्चिम में उसका किरण विस्तार (आतप क्षेत्र ४७,२६३ $\frac{२१}{६०}$ योजन) होता है। उत्तर–दक्षिण में मेरु की तरफ ४४,८२० योजन, समुद्र की तरफ ३३,३३३ $\frac{१}{३}$ योजन होता है। सूर्य का ऊर्ध्व किरण विस्तार १०० योजन, नीचे १,८०० योजन (८०० योजन समभूतल) और समभूतल से १ हजार योजन नीचे तक का क्षेत्र प्रकाशित होता है।

उदय के समय तिरछा होने से सूर्य का तेज मंद होता है, अतः वह निकट दृष्टिगोचर होता है, मध्यान्ह के समय सीधे होने से, अपने तेज से पूर्णरूप में तपने लगता है अर्थात् तीव्र होने से दूर मालूम होता है। वास्तव में उदय, अस्त और मध्यान्ह के समय सूर्य समभूतल भूमि से ८०० योजन ही दूर होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस क्षेत्र में सूर्य गति कर रहा है, वह वर्तमान क्षेत्र कहा जाता है, जिस क्षेत्र को पार कर चुका है, वह अतीत क्षेत्र तथा जिस क्षेत्र में गमन करेगा वह अनागत क्षेत्र कहा जाता है। –*(वृत्ति पत्रांक ३९३)*

Elaboration—It has already been stated that in the Jambudveep continent two suns (and two moons) are always moving in orbit. Their rise and set is only in context of the area we live in. When the sun comes in the northeast direction (Ishaan Kone) of the Nishadh Mountain there is sunrise in the southern Bharat area (where we live). When it crosses half of the Jambudveep in its elliptical orbit and comes in the southeast direction (Agneya Kone) the sun sets in that area. The orbit of the sun is elliptical but the spread of its light is diagonal. When it is in the outermost orbit, the reach of its rays (or the area it warms) in east-west direction is 47,263–21/60 Yojans. In north-south direction it is 44,820 Yojans towards Meru Mountain and 33,333–1/3 Yojans towards the ocean. Its reach is 100 Yojans in the upper direction, 1800 Yojans in the lower direction (800 Yojans up to the ground level and 1000 Yojans below that).

At the time of sunrise its rays fall diagonally and with low intensity, therefore it appears to be nearer. At midday its rays fall straight and with high intensity, therefore it appears to be afar. In fact it is only 800 Yojans away from the earth at all times, sunrise or sunset and midday.

The area being traversed by the sun is called present time. The area it has crossed is called the past and the area it will traverse is called future. *(Vritti, leaf 393; Brihatsangrahani, p. 252)*

ज्योतिष्क देवों और इन्द्रों का उपपात–विरहकाल **PERIOD OF BIRTH OF STELLAR GODS**

४६. [प्र.] अंतो णं भंते ! माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स जे चंदिम–सूरिय–गहगण–णक्खत्त–तारारूवा ते णं भंते ! देवा किं उड्ढोववन्नगा ?

[उ.] जहा जीवाभिगमे तहेव निरवसेसं जाव उक्कोसेणं छम्मासा।

४६. [प्र.] भगवन् ! मानुषोत्तर पर्वत के अन्दर जो चन्द्र, सूर्य, ग्रहगण, नक्षत्र और तारारूप देव हैं, वे क्या ऊर्ध्वलोक में उत्पन्न हुए हैं ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार जीवाभिगमसूत्र (प्रतिपत्ति ३) में कहा गया है, उसी प्रकार यावत्–'उनका उपपात–विरहकाल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट छह मास है'; यहाँ तक कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

46. **[Q.]** *Bhante* ! Did the moons, suns, planets, constellations, stars and other Stellar gods (*Jyotishk Devs*) that are within the range of Manushottar mountain have their genesis in the upper world (*Urdhva Lok*)?

[Ans.] Gautam ! What is stated in *Jivabhigam Sutra* (*Pratipatti 3*) should be excerpted here up to 'the intervening period between two births for these gods is a minimum of one Samaya and a maximum of six months'.

४७. [प्र.] बहिया णं भंते ! माणुसुत्तरस्स. जहा–जीवाभिगमे जाव इंदट्ठाणे णं भंते ! केवतियं कालं उववाएणं विरहिए पन्नत्ते ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं छम्मासा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति.।

॥ अट्ठमसए : अट्ठमो उद्देसो समत्तो॥

४७. [प्र.] भगवन् ! मानुषोत्तर पर्वत के बाहर जो चन्द्रादि देव हैं, वे ऊर्ध्वलोक में उत्पन्न हुए हैं ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार जीवाभिगमसूत्र में कहा गया है, उसी प्रकार यहाँ भी यावत्–

[प्र.] भगवन् ! इन्द्रस्थान कितने काल तक उपपात–विरहित कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः छह मास बाद दूसरा इन्द्र उस स्थान पर उत्पन्न होता है। इतने काल तक इन्द्रस्थान उपपात–विरहित होता है–यहाँ तक कहना चाहिए।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरण करते हैं।

॥ अष्टम शतक : अष्टम उद्देशक समाप्त ॥

47. **[Q.]** *Bhante* ! What about those beyond the Manushottar mountain?

[Ans.] What is stated in *Jivabhigam Sutra* (*Pratipatti 3*) should be excerpted here. ... and so on up to ... '[Q.] *Bhante* ! What is the intervening period between two births in the seat of king of gods (*Indra Sthaan*)? [A.] Gautam ! It is a minimum of one Samaya and a maximum of six months'.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE EIGHTH LESSON OF THE EIGHTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नवमो उद्देसओ : 'बंध'
अष्टम शतक : नवम उद्देशक : 'बंध'
EIGHTH SHATAK (Chapter Eight) : NINTH LESSON : BANDH (BONDAGE)

बन्ध के दो प्रकार : प्रयोगबन्ध और विस्रसाबन्ध TWO TYPES OF BONDAGE

१. [प्र.] कइविहे णं भंते ! बंधे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! दुविहे बंधे पण्णत्ते, तं जहा—पयोगबंधे य, वीससाबंधे य।

१. [प्र.] भगवन् ! बन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! बन्ध दो प्रकार का कहा गया है—(१) प्रयोगबन्ध, और (२) विस्रसाबन्ध।

1. [Q.] *Bhante* ! How many types of bondage (*bandh*) are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! Bondage is said to be of two types—(1) *Prayoga bandh* (bondage acquired by action) and (2) *Visrasa bandh* (bondage acquired naturally or spontaneously).

विवेचन : प्रयोगबन्ध—जो जीव के प्रयोग से अर्थात् मन, वचन और कायारूप योगों की प्रवृत्ति से बन्धता है। विस्रसाबन्ध—जो स्वाभाविक रूप से बन्धता है।

Elaboration—(1) *Prayoga bandh*—bondage acquired by a living being through action; in other words bondage acquired through mental, vocal and physical activity. **(2) *Visrasa bandh*—**bondage acquired naturally; this includes natural bonds.

विस्रसाबन्ध के भेद-प्रभेद और स्वरूप TYPES OF NATURAL BONDAGE

२. [प्र.] वीससाबंधे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा—साईयवीससाबंधे य अणाईयवीससाबंधे य।

२. [प्र.] भगवन् ! विस्रसाबन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! वह दो प्रकार का कहा गया है। यथा—(१) सादिक विस्रसाबन्ध, और (२) अनादिक विस्रसाबन्ध।

2. [Q.] *Bhante* ! How many types of natural bondage (*visrasa bandh*) are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! That is said to be of two types—(1) *Saadik visrasa bandh* (natural bondage with a beginning) and (2) *Anaadik visrasa bandh* (natural bondage without a beginning).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. [प्र.] अणाईयवीससाबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! तिविहे पण्णत्ते, तं जहा–धम्मत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे, अधम्मत्थिकायअन्नमन्नअणादीय–वीससाबंधे, आगासत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे।

३. [प्र.] भगवन् ! अनादिक विस्रसाबन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! वह तीन प्रकार का कहा गया है–(१) धर्मास्तिकाय का अन्योन्य–अनादिक–विस्रसाबन्ध, (२) अधर्मास्तिकाय का अन्योन्य–अनादि–विस्रसाबन्ध, और (३) आकाशास्तिकाय का अन्योन्य–अनादिक–विस्रसाबन्ध।

3. [Q.] *Bhante !* How many types of *Anaadik visrasa bandh* (natural bondage without a beginning) are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! That is said to be of three types—(1) *Dharmastikaaya anyonya-anaadik visrasa bandh* (motion entity related mutually interdependent natural bondage without a beginning), (2) *Adharmastikaaya anyonya-anaadik visrasa bandh* (rest entity related mutually interdependent natural bondage without a beginning), and (3) *Akaashastikaaya anyonya-anaadik visrasa bandh* (space entity related mutually interdependent natural bondage without a beginning).

४. [प्र.] धम्मत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे णं भंते ! किं देसबंधे सव्वबंधे ?

[उ.] गोयमा ! देसबंधे, नो सव्वबंधे।

४. [प्र.] भगवन् ! धर्मास्तिकाय का अन्योन्य–अनादि–विस्रसाबन्ध क्या देशबन्ध है या सर्वबन्ध है ?

[उ.] गौतम ! यह देशबन्ध है, सर्वबन्ध नहीं।

4. [Q.] *Bhante !* Is this *Dharmastikaaya anyonya-anaadik visrasa bandh* (motion entity related mutually interdependent natural bondage without a beginning) a bondage in part (*desh bandh*) or whole (*sarva bandh*)?

[Ans.] Gautam ! It is bondage in part (*desh bandh*) and not whole (*sarva bandh*).

५. एवं अधम्मत्थिकायअन्नमन्नअणादीयवीससाबंधे वि, एवं आगासत्थिकाय–अन्नमन्नअणादीयवी–ससाबंधे वि।

५. इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के अन्योन्य–अनादि–विस्रसाबन्ध एवं आकाशास्तिकाय के अन्योन्य–अनादि–विस्रसाबन्ध के विषय में भी समझ लेना चाहिए। (अर्थात्–ये भी देशबन्ध हैं, सर्वबन्ध नहीं।)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विस्रसाबन्ध

1– सादि सान्त बन्ध

) बन्धन प्रत्ययिक

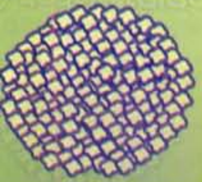

परमाणु का बन्ध

(ब) भाजन प्रत्ययिक

गुड और पुरानी शराब

(स) परिणाम प्रत्ययिक

2– अनादि अनंत बन्ध

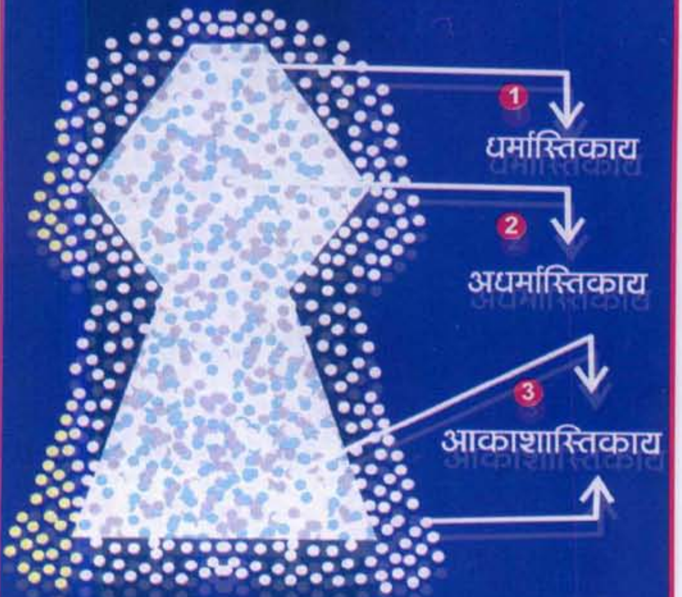

प्रयोगबन्ध

1– अनादि अनन्त बन्ध

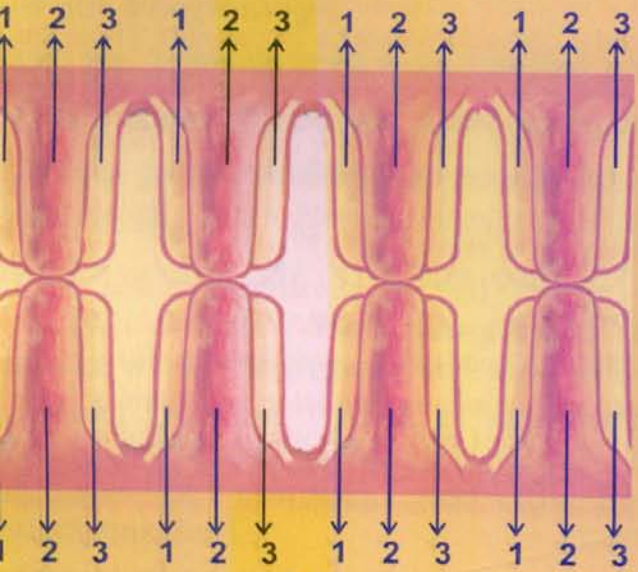

24 रूचकवर प्रदेश का बन्ध

2– सादि अनंत बन्ध

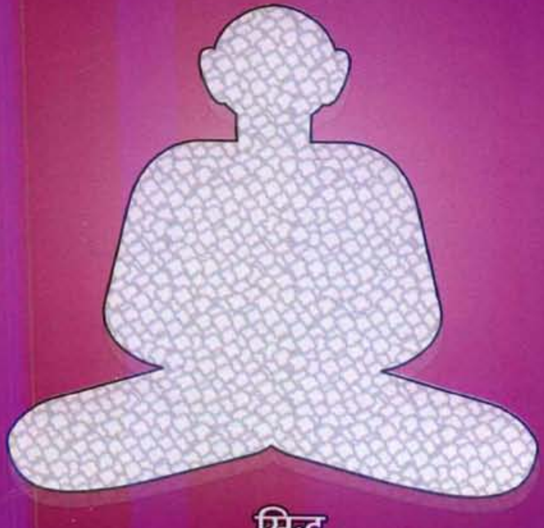

सिद्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 13

Illustration No. 13

बन्ध—1

पिछले पृष्ठ पर दिये गये चित्र में दो प्रकार के बन्धों को दिखाया गया है—

(1) विस्रसाबन्ध—जो स्वभाविक रूप से बनता है, उसे विस्रसाबन्ध कहते हैं। इसके दो भेद कहे हैं—1. सादि और 2. अनादि। **सादि सान्त बन्ध** के तीन भेद हैं—1. **बंधन प्रत्ययिक**—जैसे स्निग्धता आदि के गुणों से जो परमाणुओं का बन्ध होता है, उसे बंधन प्रत्ययिक बन्ध कहते हैं। **2. भाजन प्रत्ययिक**—भाजन अर्थात् आधार। उसके निमित्त से जो बन्ध होता है उसे भाजन प्रत्ययिक बन्ध कहते हैं। जैसे घड़े में रखी हुई पुरानी मदिरा गाढी हो जाती है, पुराने गुड़ और पुराने चावलों का पिण्ड बन जाता है। **3. परिणाम प्रत्ययिक**—परिणाम अर्थात् रूपान्तर (हो जाने) के निमित्त से जो बन्ध होता है, उसे परिणाम-प्रत्ययिक बन्ध कहते हैं। जैसे वर्षा के बादलों का बन्ध। **अनादि अनन्त बन्ध** के भी तीन भेद हैं—1. धर्मास्तिकाय, 2. अधर्मास्तिकाय, 3. आकाशास्तिकाय के प्रदेशों का बन्ध। यह बन्ध देशबन्ध होता है।

(2) प्रयोग बन्ध—जो मन, वचन और काया रूप योगों की प्रवृत्ति से बनता है उसे प्रयोग बन्ध कहते हैं। इसके तीन भेद हैं—**1. अनादि अनंत बन्ध**—जीव के असंख्यात प्रदेशों में से मध्य के चौबीस (रुचक) प्रदेशों का बन्ध अनादि-अपर्यवसित है। **2. सादि अनंत बन्ध**—सिद्ध जीवों के प्रदेशों का बन्ध सादि अपर्यवसित बन्ध है। ***(क्रमशः)***

—शतक 8, उ. 9, सूत्र 1-12

BONDAGE — 1

In the illustration at the back are shown two kinds of bondage

(1) Visrasa bandh – Bondage acquired naturally or spontaneously. It is said to be of two types – 1. *Saadi* (with a beginning) and 2. *Anaadi* (without a beginning). There are three types of *Saadi-saant bandh*– (i) *Bandhan pratyayik* (related to binding force) – bondage due to properties of smoothness and roughness in *paramanus*. (ii) *Bhaajan pratyayik* (related to container or storage) –bondage due to place of storage (*Bhaajan*). For example wine stored in a pitcher turns thick; jaggery and rice stored for long turn into lumps. (iii) *Parinaam pratyayik* (related to transformation) – bondage due to transformation in basic structure. For example the formation of rain clouds.

Anaadi-anant bandh is also of three types – (i) *Dharmastikaaya* (motion entity related), (ii) *Adharmastikaaya* (rest entity related), and (iii) *Akaashastikaaya* (space entity related) bondage of their sections. This is a bondage in part (*desh bandh*).

(2) Prayoga bandh – Bondage acquired by action in association with mind, speech and body. It is said of three types – **1. anaadi-anant bandh** - without a beginning and without an end; this takes place in the twenty-four central space-points (*ruchak pradesh*) of a (soul). **(2) saadi-anant** – with a beginning and without an end; this is applicable to *Siddha*s. (continued...)

— Shatak-8, lesson-9, Sutra-1-12

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

5. The same is true for *Adharmastikaaya anyonya-anaadik visrasa bandh* (rest entity related mutually interdependent natural bondage without a beginning), and *Akaashastikaaya anyonya-anaadik visrasa bandh* (space entity related mutually interdependent natural bondage without a beginning). (That means these too are bondage in part and not whole.)

६. [प्र.] धम्मत्थिकायअन्नमन्नअणाईयवीससाबंधे णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] **गोयमा ! सव्वद्धं।**

७. एवं अधम्मत्थिकाए, एवं आगासत्थिकाये।

६. [प्र.] भगवन् ! धर्मास्तिकाय का अन्योन्य–अनादि–विस्रसाबन्ध कितने काल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! सर्वाद्धा (सर्वकाल = सर्वदा) रहता है।

७. इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय का अन्योन्य–अनादि–विस्रसाबन्ध एवं आकाशास्तिकाय का अन्योन्य–अनादि विस्रसाबन्ध भी सर्वकाल रहता है।

6. [Q.] *Bhante !* How long does this *Dharmastikaaya anyonya-anaadik visrasa bandh* (motion entity related mutually interdependent natural bondage without a beginning) last ?

[Ans.] Gautam ! It lasts forever (*Sarvaddha*).

7. The same is true for *Adharmastikaaya anyonya-anaadik visrasa bandh* (rest entity related mutually interdependent natural bondage without a beginning), and *Akaashastikaaya anyonya-anaadik visrasa bandh* (space entity related mutually interdependent natural bondage without a beginning).

८. [प्र.] सादीयवीससाबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

[उ.] **गोयमा ! तिविहे पण्णत्ते, तं जहा–बंधणपच्चइए भायणपच्चइए परिणामपच्चइए।**

८. [प्र.] भगवन् ! सादिक–विस्रसाबन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! वह तीन प्रकार का कहा गया है। जैसे–(१) बन्धन–प्रत्ययिक, (२) भाजन–प्रत्ययिक, और (३) परिणाम–प्रत्ययिक।

8. [Q.] *Bhante !* How many types of *Saadik visrasa bandh* (natural bondage with a beginning) are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! That is said to be of three types—(1) *Bandhan pratyayik* (related to binding force), (2) *Bhaajan pratyayik* (related to container or storage), and (3) *Parinaam pratyayik* (related to transformation).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९. [प्र.] से किं तं बंधणपच्चइए ?

[उ.] बंधणपच्चइए, जं णं परमाणुपुग्गला दुपएसिय–तिपएसिय–जाव–दसपएसिय–संखेज्जपएसिय–असंखेज्जपएसिय–अणंतपएसियाणं खंधाणं वेमायनिद्धयाए वेमायलुक्खयाए वेमायनिद्ध–लुक्खयाए बंधणपच्चइएणं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं। से तं बंधणपच्चइए।

९. [प्र.] भगवन् ! बन्धन–प्रत्ययिक–सादि–विस्रसाबन्ध किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! परमाणु, द्विप्रदेशिक, त्रिप्रदेशिक, यावत् दशप्रदेशिक, संख्यातप्रदेशिक, असंख्यातप्रदेशिक और अनन्तप्रदेशिक पुद्गल–स्कन्धों का विमात्रा (विषममात्रा) में स्निग्धता से, विमात्रा में रूक्षता से तथा विमात्रा में स्निग्धता–रूक्षता से बन्धन–प्रत्ययिक बन्ध समुत्पन्न होता है। वह जघन्यतः एक समय तक और उत्कृष्टतः असंख्येय काल तक रहता है। यह हुआ बन्धन–प्रत्ययिक सादि–विस्रसाबन्ध का स्वरूप।

9. [Q.] *Bhante !* What is this *Bandhan pratyayik saadik visrasa bandh* (binding force related natural bondage) ?

[Ans.] Gautam ! A bonding occurs between one ultimate particle of matter (*paramanu*), aggregates of two, three ... and so on up to ... ten, countable, innumerable and infinite *paramanus* due to unequal intensity (*vimatra*) of smoothness, unequal intensity of roughness, and unequal intensity of smoothness-roughness. This lasts for a minimum period of one Samaya and maximum of immeasurable time. This is *Bandhan pratyayik saadik visrasa bandh* (binding force related natural bondage).

१०. [प्र.] से किं तं भायणपच्चइए ?

[उ.] भायणपच्चइए, जं णं जुण्णसुरा–जुण्णगुल–जुण्णतंदुलाणं भायणपच्चइएणं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं संखेज्जं कालं। से त्तं भायणपच्चइए।

१०. [प्र.] भगवन् ! भाजन–प्रत्ययिक–सादि–विस्रसाबन्ध किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! पुरानी सुरा (मदिरा), पुराने गुड़ और पुराने चावलों का भाजन–प्रत्ययिक–सादि–विस्रसाबन्ध समुत्पन्न होता है। वह जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त तक और उत्कृष्टतः संख्यातकाल तक रहता है। यह है भाजन–प्रत्ययिक–सादि–विस्रसाबन्ध का स्वरूप।

10. [Q.] *Bhante !* What is this *Bhaajan pratyayik saadik visrasa bandh* (storage related natural bondage) ?

[Ans.] Gautam ! This type of bondage occurs in case of old wine, old jaggery and old rice (stored in a pot or other such thing). This lasts for a minimum period of one Antarmuhurt (less than one Muhurt) and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

maximum of measurable time. This is *Bhaajan pratyayik saadik visrasa bandh* (storage related natural bondage).

११. [प्र.] से किं तं परिणामपच्चइए ?

[उ.] **परिणामपच्चइए, जं णं अब्भाणं अब्भरुक्खाणं जहा ततियसए (स. ३, उ. ७, सु. ४ [५] जाव अमोहाणं परिणामपच्चइएणं बंधे समुप्पज्जइ जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं छम्मासा। से त्तं परिणामपच्चइए। से त्तं सादीयवीससाबंधे। से त्तं वीससाबंधे।**

११. [प्र.] भगवन् ! परिणाम-प्रत्ययिक-सादि-विस्रसाबन्ध किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! (इसी सूत्र के तृतीय शतक उद्देशक ७, सूत्र ४-५) में जो बादलों (अभ्रों) का, अभ्र वृक्षों का यावत् अमोघों आदि के नाम कहे गये हैं, उस सबका, परिणाम-प्रत्ययिक (सादि-विस्रसा) बन्ध समुत्पन्न होता है। वह बन्ध जघन्यतः एक समय तक और उत्कृष्टतः छह मास तक रहता है। यह हुआ परिणाम-प्रत्ययिक-सादि-विस्रसाबन्ध का स्वरूप। और यह हुआ विस्रसाबन्ध का कथन।

11. [Q.] *Bhante !* What is this *Parinaam pratyayik saadik visrasa bandh* (transformation related natural bondage) ?

[Ans.] Gautam ! This type of bondage occurs in case of *abhra* (cloud formations), *abhra-vriksha* (clouds in shape of a tree)... and so on up to ... *amogh* (black and red lines appearing in the sky at dawn and sunset) (as mentioned in aphorism 4-5 of lesson 7 in the third Chapter of this book). This lasts for a minimum period of one Samaya and maximum of six months. This is *Parinaam pratyayik saadik visrasa bandh* (transformation related natural bondage). This concludes *visrasa bandh* (natural bondage).

विवेचन : त्रिविध अनादि विस्रसाबन्ध का स्वरूप-धर्मास्तिकाय के प्रदेशों का उसी के दूसरे प्रदेशों के साथ साँकल और कड़ी की तरह जो परस्पर एक देश से सम्बन्ध होता है, वह धर्मास्तिकाय-अन्योन्य-अनादिविस्रसाबन्ध कहलाता है। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय के विस्रसाबन्ध के विषय में समझना चाहिए। धर्मास्तिकाय के प्रदेशों का परस्पर जो सम्बन्ध होता है, वह देशबन्ध होता है, नीरक्षीरवत् सर्वबन्ध नहीं, क्योंकि यदि सर्वबन्ध माना जायेगा तो एक प्रदेश में दूसरे समस्त प्रदेशों का समावेश हो जाने से धर्मास्तिकाय एक प्रदेशरूप ही रह जायेगा, असंख्यप्रदेशरूप नहीं रहेगा; जोकि सिद्धान्त से असंगत है। अतः धर्मास्तिकाय आदि तीनों का परस्पर देशबन्ध ही होता है, सर्वबन्ध नहीं।

त्रिविध-सादिविस्रसाबन्ध का स्वरूप-बन्धन अर्थात् विवक्षित स्निग्धता आदि गुणों के निमित्त से परमाणुओं का जो बन्ध सम्पन्न होता है, उसे **बन्धन-प्रत्ययिक बन्ध** कहते हैं। भाजन का अर्थ है-आधार। उसके निमित्त से जो बन्ध सम्पन्न होता है, वह **भाजन-प्रत्ययिक** है। जैसे-घड़े में रखी हुई पुरानी मदिरा गाढ़ी हो जाती है, पुराने गुड़ और पुराने चावलों का पिण्ड बंध जाता है, वह **भाजन-प्रत्ययिक बन्ध** कहलाता है। परिणाम अर्थात् रूपान्तर (हो जाने) के निमित्त से जो बन्ध होता है, उसे **परिणाम-प्रत्ययिक बन्ध** कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बन्धन-प्रत्ययिक बन्ध का नियम-सामान्यतया स्निग्धता और रूक्षता से परमाणुओं का बन्ध होता है। किस प्रकार होता है? इसका नियम क्या है? यह समझ लेना आवश्यक है। एक आचार्य ने इस विषय में नियम बतलाते हुए कहा है-विषम स्निग्धता या विषम रूक्षता में बन्धन होता है। स्निग्ध का द्विगुणादि अधिक स्निग्ध के साथ तथा रूक्ष का द्विगुणादि अधिक रूक्ष के साथ बन्ध होता है। स्निग्ध का रूक्ष के साथ जघन्य गुण को छोड़कर सम या विषम बन्ध होता है। अर्थात् एकगुण स्निग्ध या एकगुण रूक्षरूप जघन्य गुण को छोड़कर शेष सम या विषम गुण वाले स्निग्ध या रूक्ष का परस्पर बन्ध होता है। सम स्निग्ध का सम स्निग्ध के साथ तथा सम रूक्ष का सम रूक्ष के साथ बन्ध नहीं होता। -(वृत्ति, पत्रांक ३९५, तत्त्वार्थसूत्र, अ. ५ सूत्र)

Elaboration—Three types of *Anaadik visrasa bandh* (natural bondage without a beginning)—

The chain-like partial bondage of different space-points of the motion entity (*Dharmastikaaya*) is called *anyonya-anaadik visrasa bandh* (mutually interdependent natural bondage without a beginning). The same is true for *Adharmastikaaya* (rest entity) and *Akaashastikaaya* (space entity). The mutual bondage between different space-points of the motion entity is partial. It is not whole or complete like mixing of milk and water. If it was a complete bondage (whole with whole) all space-points would collapse into one space-point and the motion entity would be reduced to one space-point from its multi-space-point state. This goes against natural laws and therefore, is unacceptable. Thus the fabric of motion entity and other two aforesaid entities conforms to the process of partial bondage and not to that of whole.

Three *Saadik visrasa bandh*—The bondage taking effect due to the intrinsic properties of smoothness and roughness in ultimate particles of matter (*paramanus*) is called *Bandhan pratyayik* (related to binding force). *Bhaajan* means place of storage; the bondage taking effect due to storage is called *Bhaajan pratyayik* (related to container or storage). For example wine stored in a pitcher becomes thick, jaggery and rice stored for long turn into lumps. The bondage taking effect due to transformation in basic structure is called *Parinaam pratyayik* (related to transformation).

Rule of *Bandhan pratyayik* bondage—Generally speaking the bondage of ultimate particles of matter is due to the attributes of smoothness and roughness. However, it is necessary to understand the process and its rules. Explaining the related rule an *acharya* has stated—aggregates of equal smoothness or roughness cannot be bonded; bondage is only due to unequal smoothness or roughness. A smooth

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

aggregate enters into bondage with another having two times or more smoothness and a rough aggregate enters into bondage with another having two times or more roughness. A smooth aggregate enters into bondage with another having roughness of equal or unequal intensity except for those with minimum intensity of both. In other words aggregates with one unit of smoothness or roughness cannot have mutual bondage. However, they can enter bondage with other aggregates with equal and unequal smoothness or roughness but of greater intensity. Aggregates with equal smoothness do not bond together and the same is true for roughness of equal intensity. *(Vritti, leaf 395; Tattvarth Sutra, Ch. 5)*

प्रयोगबन्ध : प्रकार, भेद–प्रभेद तथा उनका स्वरूप PRAYOGA BANDH : TYPES AND DESCRIPTION

१२. [प्र.] से किं तं पयोगबंधे ?

[उ.] पयोगबंधे तिविहे पण्णत्ते, तं जहा–अणाईए वा अपज्जवसिए १, सादीए वा अपज्जवसिए २, सादीए वा सपज्जवसिए ३। तत्थ णं जे से अणाईए अपज्जवसिए से णं अट्ठण्हं जीवमज्झपएसाणं। तत्थ वि णं तिण्हं तिण्हं अणाईए अपज्जवसिए, सेसाणं साईए। तत्थ णं जे से सादीए अपज्जवसिए से णं सिद्धाणं। तत्थ णं जे से साईए सपज्जवसिए से णं चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा–आलावणबंधे अल्लियावणबंधे सरीरबंधे सरीरप्पयोगबंधे।

१२. [प्र.] भगवन् ! प्रयोगबन्ध किस प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! प्रयोगबन्ध तीन प्रकार का है। वह इस प्रकार–(१) अनादि–अपर्यवसित, (२) सादि–अपर्यवसित, (३) सादि–सपर्यवसित। इनमें से जो अनादि–अपर्यवसित है, वह जीव के आठ मध्य प्रदेशों का होता है। उन आठ प्रदेशों में भी तीन–तीन प्रदेशों का जो बन्ध होता है, वह अनादि–अपर्यवसित बन्ध है। शेष सभी प्रदेशों का सादि (–अपर्यवसित) बन्ध है। इनमें जो सादि–अपर्यवसित बन्ध है, वह सिद्धों में होता है, तथा इनमें से जो सादि–सपर्यवसित बन्ध है, वह चार प्रकार का कहा गया है। यथा–(१) आलापन–बन्ध, (२) अल्लिकापन–(आलीन) बन्ध, (३) शरीर–बन्ध, और (४) शरीर–प्रयोग–बन्ध।

12. [Q.] *Bhante !* How many types of 'bondage acquired by action' (*prayoga bandh*) are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! Bondage acquired by action (*prayoga bandh*) is said to be of three types—(1) *anaadi-aparyavasit* (without a beginning and without an end), (2) *saadi-aparyavasit* (with a beginning and without an end), and (3) *saadi-saparyavasit* (with a beginning and with an end). Of these the first, *anaadi-aparyavasit bandh* (bondage without a beginning

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

and without an end), takes place in the eight central space-points (*pradesh*) of a living being (soul). Of these eight space-points the bondage between groups of three is *anaadi-aparyavasit*. The bondage of all remaining space-points is *saadi-saparyavasit*. Of these the *saadi-aparyavasit bandh* (bondage with a beginning and without an end) is applicable to *Siddhas*. Of these the *saadi-saparyavasit bandh* (bondage with a beginning and with an end) is said to be of four types—(1) *Aalaapan-bandh* (colligative bondage), (2) *Allikaapan-bandh* (seamless bondage), (3) *Sharira-bandh* (bondage related to body), and (4) *Sharira-prayoga-bandh* (bondage related to body formation).

१३. [प्र.] से किं तं आलावणबंधे ?

[उ.] आलावणबंधे, जं णं तणभाराण वा कट्ठभाराण वा पत्तभाराण वा पलालभाराण वा वेल्लभाराण वा वेत्तलया-वाग-वरत्त-रज्जु-वल्लि-कुस-दब्भमादिएहिं आलावणबंधे समुप्पज्जइ; जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं संखेज्जं कालं। से त्तं आलावणबंधे।

१३. [प्र.] भगवन् ! आलापनबन्ध किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! तृण (घास) के भार, काष्ठ के भार, पत्तों के भार, पलाल के भार और बेल के भार, इन भारों को बेंत की लता, छाल, वरत्रा (चमड़े की बनी मोटी रस्सी = बरत), रज्जु (रस्सी) बेल, कुश और डाभ (नारियल की जटा) आदि से बाँधने से आलापनबन्ध समुत्पन्न होता है। यह बन्ध जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त तक और उत्कृष्टतः संख्येय काल तक रहता है। यह आलापनबन्ध का स्वरूप है।

13. [Q.] *Bhante !* What is this *Aalaapan-bandh* (colligative bondage) ?

[Ans.] Gautam ! *Aalaapan-bandh* (colligative bondage) takes place when a bundle of grass, logs of wood, leaves, hay or creepers are tied or strapped with the help of cane, bark-strip, leather (*varatra*), rope, creeper, grass-rope, coir-rope etc. This bondage lasts for a minimum of Antarmuhurt (less than 48 minutes) and a maximum of countable period of time. This concludes the description of *Aalaapan-bandh* (colligative bondage).

१४. [प्र.] से किं तं अल्लियावणबंधे ?

[उ.] अल्लियावणबंधे चउव्विहे पन्नत्ते, तं जहा-लेसणाबंधे उच्चयबंधे समुच्चयबंधे साहणणाबंधे।

१४. [प्र.] भगवन् ! अल्लिकापन (आलीन) बन्ध किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! आलीनबन्ध चार प्रकार का कहा गया है। वह इस प्रकार-१. श्लेषणाबन्ध, २. उच्चयबन्ध, ३. समुच्चयबन्ध और ४. संहननबन्ध।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 14

प्रस्तुत चित्र में सादि सान्त बन्ध के ही चित्र दिये गये हैं। विस्रसाबन्ध का चित्रांकन चित्र नं. 13 में किया गया है। यहाँ तालिका द्वारा इसे दर्शाया गया है।

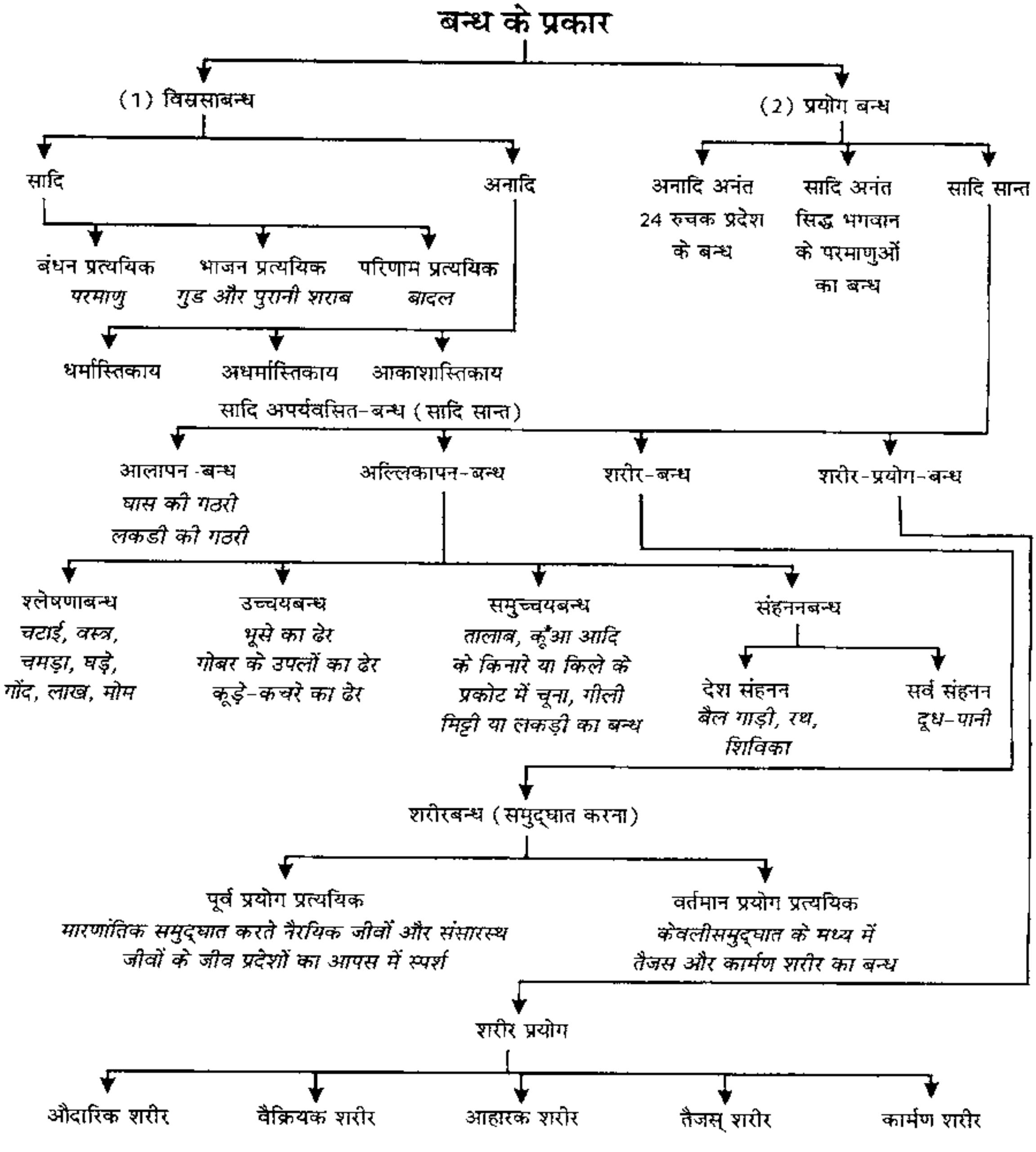

—शतक 8, उ. 9, सूत्र 1-24

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Illustration No. 14

This illustration includes only the bondage with an end. Visrasa-bandh has been explained in illustration –13. All this is summed up in the following chart –

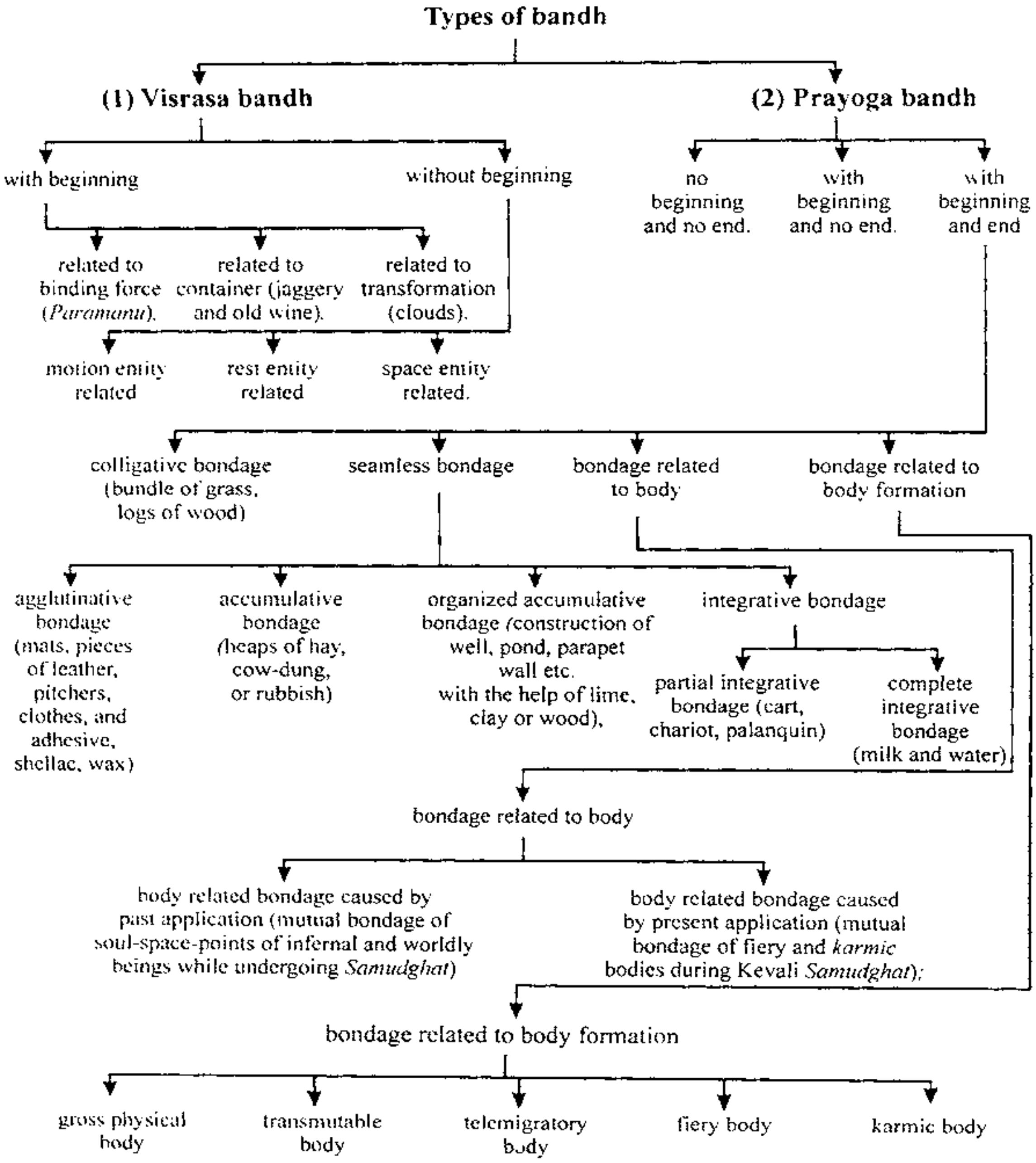

— *Shatak-8, lesson-9, Sutra-1-24*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

14. [Q.] *Bhante* ! What is this *Allikaapan-bandh* (seamless bondage) ?

[Ans.] Gautam ! *Allikaapan-bandh* (seamless bondage) is said to be of four types—(1) *Shleshana-bandh* (agglutinative bondage), (2) *Uchchaya-bandh* (accumulative bondage), (3) *Samuchchaya-bandh* (organized accumulative bondage), and (4) *Samhanan-bandh* (integrative bondage).

१५. [प्र.] से किं तं लेसणाबंधे ?

[उ.] लेसणाबंधे, जं णं कुड्डाणं कुट्टिमाणं खंभाणं पासायाणं कट्ठाणं चम्माणं घडाणं पडाणं कडाणं छुहा-चिक्खल्ल-सिलेस-लक्ख-महुसित्थमाइएहिं लेसणएहिं बंधे समुप्पज्जइ, जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, से त्तं लेसणाबंधे।

१५. [प्र.] भगवन् ! श्लेषणाबन्ध किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! श्लेषणाबन्ध इस प्रकार का है-जो कुड्यों (भित्तियों) का, कुट्टिमों (आँगन के फर्श) का, स्तम्भों का, प्रासादों का, काष्ठों का, चर्मों (चमड़ों) का, घड़ों का, वस्त्रों का और चटाइयों (कटों) का; चूना, कीचड़, श्लेष (गोंद आदि चिपकाने वाले द्रव्य, अथवा वज्रलेप), लाख, मोम आदि श्लेषण द्रव्यों से बन्ध सम्पन्न होता है, वह श्लेषणाबन्ध कहलाता है। यह बन्ध जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त तक और उत्कृष्ट संख्यातकाल तक रहता है। यह श्लेषणाबन्ध का कथन हुआ।

15. [Q.] *Bhante* ! What is this *Shleshana-bandh* (agglutinative bondage)?

[Ans.] Gautam ! *Shleshana-bandh* (agglutinative bondage) takes place when walls (*kudya*), floors (*kuttim*), pillars, pieces of wood, pieces of leather, pitchers, clothes, and mats (*kut*) are joined (plastered, adhered or pasted) with the help of lime, soil, adhesive, shellac, wax or any other adhesive. This bondage lasts for a minimum of Antarmuhurt (less than 48 minutes) and a maximum of countable period of time. This concludes the description of *Shleshana-bandh* (agglutinative bondage).

१६. [प्र.] से किं तं उच्चयबंधे ?

[उ.] उच्चयबंधे, जं णं तणरासीण वा कट्ठरासीण वा पत्तरासीण वा तुसरासीण वा भुसरासीण वा गोमयरासीण वा अवगररासीण वा उच्चएणं बंधे समुप्पज्जइ, जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं संखेज्जं कालं। से त्तं उच्चयबंधे।

१६. [प्र.] भगवन् ! उच्चयबन्ध किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! तृणराशि, काष्ठराशि, पत्रराशि, तुषराशि, भूसे का ढेर, गोबर (या उपलों) का ढेर अथवा कूड़े-कचरे का ढेर, इनका ऊँचे ढेर (पुंज = संचय) रूप से जो बन्ध सम्पन्न होता है, उसे 'उच्चयबन्ध' कहते हैं। यह बन्ध जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त तक और उत्कृष्टतः संख्यातकाल तक रहता है। इस प्रकार उच्चयबन्ध का कथन किया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

16. [Q.] *Bhante !* What is this *Uchchaya-bandh* (accumulative bondage)?

[Ans.] Gautam ! *Uchchaya-bandh* (accumulative bondage) takes place when large quantities of hay, pieces of wood, leaves, bran, husk, cow-dung, or rubbish are piled into heaps. This bondage lasts for a minimum of Antarmuhurt (less than 38 minutes) and a maximum of countable period of time. This concludes the description of *Uchchaya-bandh* (accumulative bondage).

१७. [प्र.] से किं तं समुच्चयबंधे ?

[उ.] समुच्चयबंधे, जं णं अगड–तडाग–नदी–दह–वावी–पुक्खरणी–दीहियाणं गुंजालियाणं सराणं सरपंतिआणं सरसरपंतियाणं बिलपंतियाणं देवकुल–सभा–पवा–थूभ–खाइयाणं फरिहाणं पागार–ऽट्टालगचरिय–दार–गोपुर–तोरणाणं पासाय–घर–सरण–लेण–आवणाणं सिंघाडग–तिय–चउक्क–चच्चर–चउम्मुह–महापहमादीणं छुहा–चिक्खल्ल–सिलेससमुच्चएणं बंधे समुप्पज्जइ, जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं संखेज्जं कालं। से त्तं समुच्चयबंधे।

१७. [प्र.] भगवन् ! समुच्चयबन्ध किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! कुँआ, तालाब, नदी, द्रह, वापी (बावड़ी), पुष्करिणी (कमलों से युक्त वापी), दीर्घिका, गुंजालिका, सरोवर, सरोवरों की पंक्ति, बड़े सरोवरों की पंक्ति, बिलों की पंक्ति, देवकुल (मन्दिर), सभा, प्रपा (प्याऊ), स्तूप, खाई, परिखा (परिघा), प्राकार (किला या कोट), अट्टालक (अटारी, किले पर का कमरा या गढ़), चरक (गढ़ और नगर के मध्य का मार्ग), द्वार, गोपुर, तोरण, प्रासाद, घर, शरणस्थान, लयन (गृहविशेष), आपण, शृंगाटक, त्रिक (तिराहा), चतुष्क (चौराहा), चत्वरमार्ग, (चौपड़–बाजार का मार्ग), चतुर्मुख मार्ग और राजमार्ग आदि का चूना, (गीली) मिट्टी, कीचड़ एवं श्लेष (वज्रलेप आदि) के द्वारा समुच्यरूप से जो बन्ध समुत्पन्न होता है, उसे 'समुच्चयबन्ध' कहते हैं। उसकी स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट संख्येयकाल की है। इस प्रकार समुच्चयबन्ध का कथन पूर्ण हुआ।

17. [Q.] *Bhante !* What is this *Samuchchaya-bandh* (organized accumulative bondage)?

[Ans.] Gautam ! *Samuchchaya-bandh* (organized accumulative bondage or structural bondage) takes place when structures like well (*agad*), pond (*tadag*), river (*nadi*), lake (*draha*), rectangular reservoir (*vapi or bavadi*), lake or pond with lotuses (*pushkarini*), large lake (*dirghika*), canal (*gunjalika*), natural lake (*sarovar*), row of lakes (*sar-pankti*), row of lakes connected with canals (*sar-sar-pankti*), row of narrow wells or water-pits (*bil-pankti*), temples (*devakul*), assembly hall (*sabha*), water-hut (*prapa*), a memorial pillar or mound (*stupa*), trench or gully (*khai*), a moat or trench with narrow bottom and wide top

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(*parikha*), parapet wall (*prakar*), bastion on a rampart (*attalak*), *charika* (an eight cubit wide pathway between moat and rampart), door (*dvar*), *gopur* (main gate of entrance into a town), *torana* (ornamental entrance), palace (*prasad*), house (*ghar*), *saran* (thatched hut), *layan* (a dugout or cave on a hill), *apan* (shop or marketplace), *shringatak* (a triangular marketplace), *trik* (meeting point of three roads), *chatushk* (meeting point of four roads), *chatvar* (a square, court, circus, or plaza), *chaturmukh* (a temple with gates on all four sides), and highway (*mahapath*) are constructed with the help of lime, mortar, clay or plaster. This bondage lasts for a minimum of Antarmuhurt (less than 48 minutes) and a maximum of countable period of time. This concludes the description of *Samuchchaya-bandh* (organized accumulative bondage).

१८. [प्र.] से किं तं साहणणाबंधे ?

[उ.] साहणणाबंधे दुविहे पन्नत्ते, तं जहा–देससाहणणाबंधे य सव्वसाहणणाबंधे य।

१८. [प्र.] भगवन् ! संहननबन्ध किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! संहननबन्ध (विभिन्न पदार्थों के मिलने से एक आकार का पदार्थ बन जाना) दो प्रकार का कहा गया है–(१) देश-संहननबन्ध, और (२) सर्व-संहननबन्ध।

18. [Q.] *Bhante !* What is this *Samhanan-bandh* (integrative bondage)?

[Ans.] Gautam ! *Samhanan-bandh* (integrative bondage) is of two types—(1) *Desh samhanan-bandh* (partial integrative bondage) and (2) *Sarva samhanan-bandh* (complete integrative bondage).

१९. [प्र.] से किं तं देससाहणणाबंधे ?

[उ.] देससाहणणाबंधे, जं णं सगड–रह–जाण–जुग्ग–गिल्लि–थिल्लि–सीय–संदमाणिया–लोही-लोहक-डाह-कडच्छुअ-आसण-सयण-खंभ-भंड-मत्त–उवगरणमाईणं देससाहणणाबंधे समुप्पज्जइ, जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं संखेज्जं कालं। से त्तं देससाहणणाबंधे।

१९. [प्र.] भगवन् ! देश-संहननबन्ध (किसी वस्तु के एक अंश के साथ किसी अन्य वस्तु के अंश रूप से सम्बन्ध होने पर जुड़ जाना) किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! शकट (गाड़ी), रथ, यान (छोटी गाड़ी), युग्यवाहन (दो हाथ प्रमाण वेदिका से उपशोभित जम्पान = पालखी), गिल्लि (हाथी की अम्बाड़ी), थिल्लि (पलाण), शिविका (पालखी), स्यन्दमानी (पुरुष प्रमाण वाहन विशेष म्याना), लोढ़ी, लोहे की कड़ाही, कुड़छी (चमचा बड़ा या छोटा), आसन, शयन, स्तम्भ, भाण्ड (मिट्टी के बर्तन), पात्र, नाना उपकरण आदि पदार्थों के साथ जो सम्बन्ध सम्पन्न होता है, वह देश-संहननबन्ध है। वह जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त तक और उत्कृष्टतः संख्येय काल तक रहता है। यह है देश-संहननबन्ध का स्वरूप।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

19. [Q.] *Bhante !* What is this *Desh samhanan-bandh* (partial integrative bondage)?

[Ans.] Gautam ! Bonds associated with cart (*shakat*), chariot (*rath*), vehicle (*yaan*), *yugyavahan* (a palanquin with two cubit long seat), *gilli* (howda or a seat on elephant's back), *thilli* (a coach driven by two horses), *shivika* (covered palanquin), *syandamanika* (a palanquin as long as a man), *lodhi* (small grinding stone), *lohakatah* (steel cauldron), *kadachi* (serving spoons), *asan* (seat), *shayan* (bed), *khambh* (pillar), *bhand* (earthen pots), utensils and other such equipment are called *Desh samhanan-bandh* (partial integrative bondage). This bondage lasts for a minimum of Antarmuhurt (less than 48 minutes) and a maximum of countable period of time. This concludes the description of *Desh samhanan-bandh* (partial integrative bondage).

२०. [प्र.] से किं तं सव्वसाहणणाबंधे ?

[उ.] **सव्वसाहणणाबंधे, से णं खीरोदगमाईणं। से त्तं सव्वसाहणणाबंधे। से त्तं साहणणाबंधे। से त्तं अल्लियावणबंधे।**

२०. [प्र.] भगवन् ! सर्व-संहननबन्ध किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! दूध और पानी आदि की तरह एकमेक हो जाना सर्व-संहननबन्ध कहलाता है। इस प्रकार सर्व-संहननबन्ध का स्वरूप है। यह आलीनबन्ध (अल्लिकापन बन्ध) का कथन हुआ।

20. [Q.] *Bhante !* What is this *Sarva samhanan-bandh* (complete integrative bondage)?

[Ans.] Gautam ! *Sarva samhanan-bandh* (complete integrative bondage) takes place when milk and water are mixed together. This concludes the description of *Sarva samhanan-bandh* (complete integrative bondage). This concludes the description of *Allikaapan-bandh* (seamless bondage)

२१. [प्र.] से किं तं सरीरबंधे ?

[उ.] **सरीरबंधे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा—पुव्वप्पओगपच्चइए य पडुप्पन्नप्पओगपच्चइए य।**

२१. [प्र.] भगवन् ! शरीरबन्ध किस प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! शरीरबन्ध दो प्रकार का कहा गया है-(१) पूर्व-प्रयोग-प्रत्ययिक, और (२) प्रत्युत्पन्न-प्रयोग-प्रत्ययिक।

21. [Q.] *Bhante !* What is this *Sharira-bandh* (bondage related to body)?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! *Sharira-bandh* (bondage related to body) is of two types—(1) *Purva-prayoga-pratyayik* (related to past application) and (2) *Pratyutpanna-prayoga-pratyayik* (related to present application).

२२. [प्र.] से किं तं पुव्वप्पओगपच्चइए ?

[उ.] **पुव्वप्पओगपच्चइए, जं णं नेरइयाणं संसारत्थाणं सव्वजीवाणं तत्थ तत्थ तेसु तेसु कारणेसु समोहन्नमाणाणं जीवप्पदेसाणं बंधे समुप्पज्जइ। से त्तं पुव्वप्पयोगपच्चइए।**

२२. [प्र.] भगवन् ! पूर्व-प्रयोग-प्रत्ययिक-शरीरबन्ध किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! जहाँ-जहाँ जिन-जिन कारणों से समुद्घात करते हुए नैरयिक जीवों और संसारस्थ सर्वजीवों के जीवप्रदेशों का जो बन्ध सम्पन्न होता है, वह पूर्व-प्रयोगबन्ध कहलाता है। यह है पूर्व-प्रयोग-प्रत्ययिकबन्ध।

22. [Q.] *Bhante !* What is this *Purva-prayoga-pratyayik* (related to past application) ?

[Ans.] Gautam ! The mutual bondage of soul-space-points (*jivapradesh*) of the infernal and all worldly beings that takes place while undergoing *Samudghat* wherever and for whatever reason is called *Purva-prayoga-pratyayik Sharira-bandh* (body related bondage caused by past application).

२३. [प्र.] से किं तं पडुप्पन्नप्पयोगपच्चइए ?

[उ.] **पडुप्पन्नप्पयोगपच्चइए, जं णं केवलनाणिस्स अणगारस्स केवलिसमुग्घाएणं समोहयस्स, ताओ समुग्घायाओ पडिनियत्तमाणस्स, अंतरा मंथे वट्टमाणस्स तेया-कम्माणं बंधे समुप्पज्जइ। किं कारणं ?**

ताहे से पएसा एगत्तीगया भवंति त्ति। से त्तं पडुप्पन्नप्पयोगपच्चइए। से त्तं सरीरबंधे।

२३. [प्र.] भगवन् ! प्रत्युत्पन्न-प्रयोग-प्रत्ययिक किसे कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! केवलीसमुद्घात द्वारा समुद्घात करते हुए और उस समुद्घात से प्रति-निवृत्त होते (वापस लौटते) हुए बीच के मार्ग (मन्थानावस्था) में रहे हुए केवलज्ञानी अनगार के तैजस् और कार्मणशरीर का वर्तमानकाल में जो बन्ध सम्पन्न होता है, उसे प्रत्युत्पन्न-प्रयोग-प्रत्ययिक-बन्ध कहते हैं। [प्र.] (तैजस् और कार्मणशरीर के बन्ध का) क्या कारण है ? [उ.] उस समय (आत्म) प्रदेश एकत्रीकृत (संघात रूप) होते हैं, जिससे (तैजस्-कार्मण-शरीर का) बन्ध होता है। यह हुआ, उस प्रत्युत्पन्न-प्रयोग-प्रत्ययिकबन्ध का स्वरूप। यह शरीरबन्ध का कथन हुआ।

23. [Q.] *Bhante !* What is this *Pratyutpanna-prayoga-pratyayik* (related to present application) ?

[Ans.] Gautam ! The mutual bondage of fiery (*taijas*) and *karmic* (*karman*) bodies of an omniscient ascetic (*Keval jnani anagar*) that

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

currently takes place during the churning process (*manthan*) occurring between the triggering of *Kevali Samudghat* and its conclusion is called *Pratyutpanna-prayoga-pratyayik Sharira-bandh* (body related bondage caused by present application). [Q.] What is the cause for this ? [A.] At that time the soul space-points are in coalesced state and that causes this bondage. This concludes the description of *Pratyutpanna-prayoga-pratyayik* (related to present application). This concludes the description of *Sharira-bandh* (bondage related to body).

विवेचन : प्रयोगबन्ध : प्रकार और भेद-प्रभेद तथा उनका स्वरूप-प्रस्तुत १२ सूत्रों (सूत्र १२ से २३ तक) में प्रयोगबन्ध के तीन भंग तथा सादि-सपर्यवसित बन्ध के चार भेद एवं उनके प्रभेद और स्वरूप का वर्णन किया गया है।

प्रयोगबन्ध : जीव के व्यापार (प्रवृत्ति) से जो बन्ध होता है, वह प्रयोगबन्ध कहलाता है। प्रयोगबन्ध के तीन विकल्प हैं-(१) **अनादि-अपर्यवसित**-जीव के असंख्यात प्रदेशों में से मध्य के आठ (रुचक) प्रदेशों का बन्ध अनादि-अपर्यवसित है। जब केवली समुद्घात करते हैं, तब उनके प्रदेश समग्रलोकव्यापी हो जाते हैं, उस समय भी वे आठ प्रदेश तो अपनी स्थिति में ही रहते हैं। उनमें किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता। उनकी स्थापना इस प्रकार है-नीचे चार प्रदेश हैं, और इनके ऊपर चार प्रदेश हैं। इस प्रकार समुदायरूप से ८ प्रदेशों का बन्ध है। पूर्वोक्त ८ प्रदेशों में भी प्रत्येक प्रदेश का अपने पास रहे हुए दो प्रदेशों के साथ तथा ऊपर या नीचे रहे हुए एक प्रदेश के साथ इस प्रकार तीन-तीन प्रदेशों के साथ भी अनादि-अपर्यवसित बन्ध है। शेष सभी प्रदेशों का सयोगी अवस्था तक सादि-सपर्यवसित नामक तीसरा विकल्प है, तथा सिद्ध जीवों के प्रदेशों का सादि-अपर्यवसित बन्ध है। अनादि-सपर्यवसित विकल्प में बन्ध नहीं होता।

Elaboration—*Prayoga bandh : Types and description*—In the preceding 12 aphorisms (12-23) three types of *Prayoga bandh* (bondage acquired by action) and four types of *saadi-saparyavasit bandh* (bondage with a beginning and with an end) and their sub-categories have been discussed.

Prayoga bandh—Bondage acquired by a soul through indulgence in action is called *Prayoga bandh*. There are three alternatives of this bondage—The first is *anaadi-aparyavasit* (without a beginning and without an end). This bondage takes place in the eight central space-points (*pradesh*) of a living being (soul). When an omniscient triggers *Samudghat* the space-points of his soul spread all throughout the occupied space (*Lok*); even at that moment these eight central space-points maintain their bonded position without any change whatsoever. Their configuration is four in a row and four in another row below the first. This way, the group of eight space-points is joined together. Each of these space-points is linked with two adjacent space-points. This bondage

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of groups of three is also *anaadi-aparyavasit*. The bondage of all remaining space-points is *saadi-saparyavasit* (the third alternative) up to the *sayogi* (with association) state after that when *Siddha* state is attained the bondage becomes *saadi-aparyavasit* (with a beginning and without an end). There is no bondage conforming to the alternative *anaadi-saparyavasit* (without a beginning and with an end).

शरीरप्रयोगबन्ध के प्रकार TYPES OF *SHARIRA-PRAYOGA-BANDH*

२४. [प्र.] से किं तं सरीरप्पयोगबंधे ?

[उ.] **सरीरप्पयोगबंधे पंचविहे पन्नत्ते, तं जहा–ओरालियसरीरप्पओगबंधे वेउव्वियसरीरप्पओगबंधे आहारगसरीरप्पओगबंधे तेयासरीरप्पयोगबंधे कम्मासरीरप्पयोगबंधे।**

२४. [प्र.] भगवन् ! शरीरप्रयोगबन्ध कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! शरीरप्रयोगबन्ध पाँच प्रकार का कहा गया है–(१) औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध, (२) वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध, (३) आहारकशरीर–प्रयोगबन्ध, (४) तैजस शरीर–प्रयोगबन्ध, और (५) कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध।

24. [Q.] *Bhante !* What is this *Sharira-prayoga-bandh* (bondage related to body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Sharira-prayoga-bandh* (bondage related to body formation) is said to be of five types—(1) *Audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation), (2) *Vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation), (3) *Ahaarak-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to telemigratory body formation), (4) *Taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to fiery body formation), and (5) *Karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to *karmic* body formation).

२५. [प्र.] **ओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?**

[उ.] **गोयमा ! पंचविहे पन्नत्ते, तं जहा–एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे बेइंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे जाव पंचिंदियओरालियसरीप्पयोगबंधे।**

२५. [प्र.] भगवन् ! औदारिक शरीर–प्रयोगबन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! वह पाँच प्रकार का कहा गया है–(१) एकेन्द्रिय–औदारिक–शरीर–प्रयोगबन्ध, (२) द्वीन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध, (३) त्रीन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध, (४) चतुरिन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध, और (५) पंचेन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध।

25. [Q.] *Bhante !* Of how many types is this *Audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! It is said to be of five types—(1) *Ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to one-sensed gross physical body formation), (2) *Dvindriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to two-sensed gross physical body formation), (3) *Trindriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to three-sensed gross physical body formation), (4) *Chaturindriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to four-sensed gross physical body formation), and (5) *Panchendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to five-sensed gross physical body formation).

२६. [प्र.] **एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?**

[उ.] **गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–पुढविक्काइयएगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे, एवं एएणं अभिलावेणं भेदा जहा ओगाहणसंठाणे ओरालियसरीरस्स तहा भाणियव्वा जाव पज्जत्त–गब्भवक्कंतियमणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे य अपज्जत्तगब्भवक्कंतियमणूसपंचिंदियओरालिय–सरीरप्पयोगबंधे य।**

२६. [प्र.] भगवन् ! एकेन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! एकेन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध पाँच प्रकार का है। इस प्रकार–पृथ्वीकायिक–एकेन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध इत्यादि। इस प्रकार इस अभिलाप द्वारा जैसे प्रज्ञापनासूत्र के (इक्कीसवें) 'अवगाहना–संस्थान–पद' में औदारिक शरीर के भेद कहे गये हैं, वैसे यहाँ भी यावत्–'पर्याप्त–गर्भज–मनुष्य–पंचेन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध और अपर्याप्त गर्भज-मनुष्य-पंचेन्द्रिय औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध' तक कहना चाहिए।

26. [Q.] *Bhante !* Of how many types is this *Ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to one-sensed gross physical body formation)?

[**Ans.**] Gautam ! It is said to be of five types—*Prithvikaayik-ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to earth-bodied one-sensed gross physical body formation), etc. This statement should be completed by quoting all types of gross physical bodies mentioned in *Avagahana-samsthaan-pad* (21st chapter) of *Prajnapana Sutra,* up to *Paryapt-garbhaj-manushya-panchendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation of fully developed five-sensed human born out of womb).

२७. [प्र.] **ओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?**

[उ.] **गोयमा ! वीरियसजोगसद्दव्वयाए पमादपच्चया कम्मं च जोगं च भवं च आउयं च पडुच्च ओरालियसरीरप्पयोगनामकम्मस्स उदएणं ओरालियसरीरप्पयोगबंधे।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७. [प्र.] भगवन् ! औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! सवीर्यता, सयोगता और सद्द्रव्यता से, प्रमाद के कारण, कर्म, योग, भव और आयुष्य आदि हेतुओं की अपेक्षा से औदारिक शरीर–प्रयोग–नामकर्म के उदय से औदारिक शरीर–प्रयोगबन्ध होता है।

27. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation) ?

[Ans.] Gautam ! Depending upon available potency (*saviryata*), available intent of activity (*sayogata*) and available matter particles (*saddravyata*), and based on causative parameters like *karma*, association (*yoga*), genus (*bhava*), life-span (*ayushya*) etc., the *Audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation) takes place through fruition (*udaya*) of *Audarik-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for gross physical body formation) triggered by stupor (*pramaad*).

२८. [प्र.] **एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?**

[उ.] **एवं चेव।**

२८. [प्र.] भगवन् ! एकेन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! पूर्वोक्त–कथनानुसार यहाँ भी जानना चाहिए।

28. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to one-sensed gross physical body formation) ?

[Ans.] Gautam ! It is the same as aforesaid.

२९. [प्र.] **पुढविक्काइयएगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे एवं चेव।**

३०. एवं जाव वणस्सइकाइया। एवं बेइंदिया। एवं तेइंदिया। एवं चउरिंदिया।

२९. [प्र.] इसी प्रकार पृथ्वीकायिक–एकेन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध के विषय में कहना चाहिए।

३०. इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक–एकेन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध तथा द्वीन्द्रिय–त्रीन्द्रिय–चतुरिन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध तक कहना चाहिए।

29. The same should be repeated for *Prithvikaayik-ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to earth-bodied one-sensed gross physical body formation).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

30. The same should also be repeated up to *Vanaspatikaayik-ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to plant-bodied one-sensed gross physical body formation) as well as for two sensed, three-sensed and four-sensed gross physical body formations.

३१. [प्र.] तिरिक्खजोणियपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?

[उ.] एवं चेव।

३१. [प्र.] भगवन् ! तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! (इस विषय में भी) पूर्वोक्त कथनानुसार जानना चाहिए।

31. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Tiryanch-panchendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation of five-sensed animals) ?

[Ans.] Gautam ! It is the same as aforesaid.

३२. [प्र.] मणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?

[उ.] गोयमा ! वीरियसजोगसद्दव्वयाए पमादपच्चया जाव आउयं च पडुच्च मणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं मणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पओगबंधे।

३२. [प्र.] भगवन् ! मनुष्य-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! सवीर्यता, सयोगता और सद्द्रव्यता से, तथा प्रमाद के कारण यावत् आयुष्य की अपेक्षा से एवं मनुष्य-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-नामकर्म के उदय से 'मनुष्य-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध' होता है।

32. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Manushya-panchendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation of five-sensed human beings) ?

[Ans.] Gautam ! Depending upon available potency (*saviryata*), available intensity of thought (*samyogata*) and available matter particles (*saddravyata*), ... *and so on up to* ... the *Manushya-panchendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation of five-sensed human beings) takes place through fruition (*udaya*) of *Manushya-panchendriya-audarik-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for gross physical body formation of five-sensed human beings) triggered by stupor (*pramaad*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३. [प्र.] ओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देसबंधे, सव्वबंधे ?

[उ.] गोयमा ! देसबंधे वि सव्वबंधे वि।

३३. [प्र.] भगवन् ! औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध क्या देशबन्ध या सर्वबन्ध है ?

[उ.] गौतम ! वह देशबन्ध भी है, और सर्वबन्ध भी है।

33. [Q.] *Bhante !* Is *Audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation) a bondage of a part (*desh-bandh*) or that of the whole (*sarva-bandh*) ?

[Ans.] Gautam ! It is both, bondage of a part (*desh-bandh*) as well as that of the whole (*sarva-bandh*).

३४. [प्र.] एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देसबंधे सव्वबंधे ?

[उ.] एवं चेव।

३५. एवं पुढविकाइया।

३४. [प्र.] भगवन् ! एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध क्या देशबन्ध है या सर्वबन्ध है ?

[उ.] गौतम ! पूर्वोक्त कथनानुसार यहाँ भी जानना चाहिए।

३५. इसी प्रकार पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध के विषय में समझना चाहिए।

34. [Q.] *Bhante !* Is *Ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to one-sensed gross physical body formation) a bondage of a part (*desh-bandh*) or that of the whole (*sarva-bandh*) ?

[Ans.] Gautam ! It is the same as aforesaid.

35. The same is true for *Prithvikaayik-ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to earth-bodied one-sensed gross physical body formation).

३६. [प्र.] एवं जाव मणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देसबंधे, सव्वबंधे ?

[उ.] गोयमा ! देसबंधे वि, सव्वबंधे वि।

३६. [प्र.] इसी प्रकार यावत्-भगवन् ! मनुष्य-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध क्या देशबन्ध है या सर्वबन्ध है ?

[उ.] गौतम ! वह देशबन्ध भी है और सर्वबन्ध भी है-यहाँ तक कहना चाहिए।

36. [Q.] In the same way, *Bhante !* The same question for other living beings up to *Manushya-panchendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(bondage related to gross physical body formation of five-sensed human beings)?

[Ans.] Gautam ! (The answer is same for all) It is both, bondage of a part (*desh-bandh*) as well as that of the whole (*sarva-bandh*).

३७. [प्र.] **ओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?**

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं; देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं समऊणाइं।**

३७. [प्र.] भगवन् ! औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध काल की अपेक्षा, कितने काल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! सर्वबन्ध एक समय तक रहता है और देशबन्ध जघन्यतः एक समय और उत्कृष्टतः एक समय कम तीन पल्योपम तक रहता है।

37. [Q.] *Bhante !* In terms of time, how long does *Audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation) last ?

[Ans.] Gautam ! The bondage of the whole (*sarva-bandh*) lasts for just one Samaya and the bondage of a part (*desh-bandh*) lasts for a minimum of one Samaya and a maximum of one Samaya short of three Palyopam (a metaphoric unit of time).

३८. [प्र.] **एगिंदियओरालियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?**

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं; देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं समऊणाइं।**

३८. [प्र.] भगवन् ! एकेन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध कालतः कितने काल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! सर्वबन्ध एक समय तक रहता है और देशबन्ध जघन्यतः एक समय तक और उत्कृष्टतः एक समय कम २२ हजार वर्ष तक रहता है।

38. [Q.] *Bhante !* In terms of time, how long does *Ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to one-sensed gross physical body formation) last ?

[Ans.] Gautam ! The bondage of the whole (*sarva-bandh*) lasts for just one Samaya and the bondage of a part (*desh-bandh*) lasts for a minimum of one Samaya and a maximum of one Samaya short of 22 thousand years.

३९. [प्र.] **पुढविकाइयएगिंदिय० पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं, देसबंधे जहन्नेणं खुड्डागभवग्गहणं तिसमयूणं, उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं समऊणाइं।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध कालतः कितने काल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! (वह) सर्वबन्ध एक समय तक रहता है और देशबन्ध जघन्यतः तीन समय कम क्षुल्लक भव-ग्रहण पर्यन्त तथा उत्कृष्टतः एक समय कम २२ हजार वर्ष तक रहता है।

39. [Q.] *Bhante !* In terms of time, how long does *Prithvikaayik-ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to earth-bodied one-sensed gross physical body formation) last ?

[Ans.] Gautam ! The bondage of the whole (*sarva-bandh*) lasts for just one Samaya and the bondage of a part (*desh-bandh*) lasts for a minimum of three Samaya short of *Kshullak-bhava-grahan* (time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type) and a maximum of one Samaya short of 22 thousand years.

४०. एवं सव्वेसिं सव्वबंधो एक्कं समयं, देसबंधो जेसिं नत्थि वेउव्वियसरीरं तेसिं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं तिसमयूणं, उक्कोसेणं जा जस्स उक्कोसिया ठिती सा समऊणा कायव्वा। जेसिं पुण अत्थि वेउव्वियसरीरं तेसिं देसबंधो जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं जा जस्स ठिती सा समऊणा कायव्वा जाव मणुस्साणं देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं समयूणाइं।

४०. इस प्रकार सभी जीवों का सर्वबन्ध एक समय तक रहता है। जिनके वैक्रियशरीर नहीं है, उनका देशबन्ध जघन्यतः तीन समय कम क्षुल्लकभव-ग्रहणपर्यन्त और उत्कृष्टतः जिस जीव की जितनी उत्कृष्ट आयुष्य-स्थिति है, उससे एक समय कम तक रहता है। जिनके वैक्रियशरीर है, उनके देशबन्ध जघन्यतः एक समय और उत्कृष्टतः जिसकी जितनी (आयुष्य) स्थिति है, उसमें से एक समय कम तक रहता है। इस प्रकार यावत् मनुष्यों का देशबन्ध जघन्यतः एक समय और उत्कृष्टतः एक समय कम तीन पल्योपम तक जानना चाहिए।

40. Thus the bondage of the whole (*sarva-bandh*) for all living beings lasts for just one Samaya. In case of living beings without transmutable body (*vaikriya sharira*) the bondage of a part (*desh-bandh*) lasts for a minimum of three Samaya short of *Kshullak-bhava-grahan* (time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type) and a maximum of one Samaya short of the maximum life-span specific to the class of the being. In case of living beings with transmutable body (*vaikriya sharira*) the bondage of a part (*desh-bandh*) lasts for a minimum of one Samaya a maximum of one Samaya short of the maximum life-span specific to the being. In the same way it goes on up to 'in case of human beings the bondage of a part (*desh-bandh*) lasts for a minimum of one Samaya a maximum of one Samaya short of three Palyopam.'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१. [प्र.] ओरालियसरीरबंधंतरं णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ।

[उ.] गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं तिसमयूणं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं पुव्वकोडिसमयाहियाइं। देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं तिसमयाहियाइं।

४१. [प्र.] भगवन् ! औदारिक शरीर के बन्ध का अन्तर कितने काल का होता है ?

[उ.] गौतम ! इसके सर्वबन्ध का अन्तर जघन्यतः तीन समय कम क्षुल्लकभव-ग्रहणपर्यन्त है और उत्कृष्टतः समयाधिक पूर्वकोटि तथा तेतीस सागरोपम है। देशबन्ध का अन्तर जघन्यतः एक समय और उत्कृष्टतः तीन समय अधिक तेतीस सागरोपम है।

41. [Q.] *Bhante !* What is the intervening period between one bondage and the next in case of the gross physical body (*audarik sharira*) ?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of three Samaya more than *Kshullak-bhava-grahan* (time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type) and a maximum of one Samaya more than Purvakoti (a unit of time) and thirty three Sagaropam (a metaphoric unit of time). This intervening period for the bondage of a part (*desh-bandh*) is a minimum of one Samaya and a maximum of three Samaya more than thirty-three Sagaropam.

४२. [प्र.] एगिंदियओरालिय० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं तिसमयूणं, उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं समयाहियाइं। देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं।

४२. [प्र.] भगवन् ! एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-बन्ध का अन्तर कितने काल का है ?

[उ.] गौतम ! इसके सर्वबन्ध का अन्तर जघन्यतः तीन समय कम क्षुल्लकभव-ग्रहणपर्यन्त है और उत्कृष्टतः एक समय अधिक बाईस हजार वर्ष है। देशबन्ध का अन्तर जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त का है।

42. [Q.] What is the intervening period between one bondage and the next in case of the *Ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to one-sensed gross physical body formation) ?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of three Samaya less than *Kshullak-bhava-grahan* (time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type) and a maximum of one Samaya more than twenty two thousand years. This intervening period for the bondage of a part (*desh-bandh*) is a minimum of one Samaya and a maximum of one Antarmuhurt (less than 48 minutes).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३. [प्र.] पुढविक्काइयएगिंदिय० पुच्छा।

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहेव एगिंदियस्स तहेव भाणियव्वं; देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं तिण्णि समया।**

४३. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-बन्ध का अन्तर कितने काल का है?

[उ.] गौतम ! इसके सर्वबन्ध का अन्तर जिस प्रकार एकेन्द्रिय का कहा गया है, उसी प्रकार कहना चाहिए। देशबन्ध का अन्तर जघन्यतः एक समय और उत्कृष्टतः तीन समय का है।

43. [Q.] What is the intervening period between one bondage and the next in case of the *Prithvikaayik-ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to earth-bodied one-sensed gross physical body formation)?

[Ans.] Gautam ! Repeat what has been said about one-sensed beings (*ekendriya*) for the bondage of the whole (*sarva-bandh*). This intervening period for the bondage of a part (*desh-bandh*) is a minimum of one Samaya and a maximum of three Samayas.

४४. जहा पुढविक्काइयाणं एवं जाव चउरिंदियाणं वाउक्काइयवज्जाणं, नवरं सव्वबंधंतरं उक्कोसेणं जा जस्स ठिती सा समयाहिया कायव्वा। वाउक्काइयाणं सव्वबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागभवग्गहणं तिसमयूणं, उक्कोसेणं तिण्णि वाससहस्साइं समयाहियाइं। देसबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं।

४४. जिस प्रकार पृथ्वीकायिक जीवों का शरीरबन्धान्तर कहा गया है, उसी प्रकार वायुकायिक जीवों को छोड़कर चतुरिन्द्रिय तक सभी जीवों का शरीरबन्धान्तर कहना चाहिए; किन्तु विशेषतः उत्कृष्ट सर्वबन्धान्तर जिस जीव की जितनी (आयुष्य) स्थिति हो, उससे एक समय अधिक कहना चाहिए। (अर्थात्-सर्वबन्ध का अन्तर समयाधिक आयुष्यस्थिति-प्रमाण जानना चाहिए।) वायुकायिक जीवों के सर्वबन्ध का अन्तर जघन्यतः तीन समय कम क्षुल्लकभव-ग्रहण और उत्कृष्टतः समयाधिक तीन हजार वर्ष का है। इनके देशबन्ध का अन्तर जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त का है।

44. What has been said about the intervening period between one bondage and the next in case of earth-bodied beings should be repeated for all beings up to four-sensed beings leaving aside the air-bodied beings (*vayukaayik jivas*). The only difference is that the maximum intervening period of the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is one Samaya more than the genus specific maximum life-span of these beings. The intervening period between one bondage and the next in case of the *Vayukaayik-ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to earth-bodied one-sensed gross physical body formation) is a minimum

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of three Samaya less than *Kshullak-bhava-grahan* (time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type) and a maximum of one Samaya more than three thousand years. This intervening period for the bondage of a part (*desh-bandh*) is a minimum of one Samaya and a maximum of one Antarmuhurt (less than 48 minutes).

४५. [प्र.] **पंचिंदियतिरिक्खजोणियओरालिय० पुच्छा।**

[उ.] **सव्वबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागभवग्गहणं तिसमयूणं, उक्कोसेणं पुव्वकोडी समयाहिया, देशबंधंतरं जहा एगिंदियाणं तहा पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं।**

४५. [प्र.] भगवन् ! पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक-औदारिकशरीर-बन्ध का अन्तर कितने काल का कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! इनके सर्वबन्ध का अन्तर जघन्यतः तीन समय कम क्षुल्लकभव-ग्रहण है और उत्कृष्टतः समयाधिक पूर्वकोटि का है। देशबन्ध का अन्तर जिस प्रकार एकेन्द्रिय जीवों का कहा गया, उसी प्रकार सभी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों का कहना चाहिए।

45. [Q.] What is the intervening period between one bondage and the next in case of the *Tiryanch-panchendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation of five-sensed animals) ?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of three Samaya more than *Kshullak-bhava-grahan* (time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type) and a maximum of one Samaya more than Purvakoti. This intervening period for the bondage of a part (*desh-bandh*) is same as one-sensed beings for all five sensed animals.

४६. **एवं मणुस्साण वि निरवसेसं भाणियव्वं जाव उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं।**

४६. इसी प्रकार मनुष्यों के शरीरबन्धान्तर के विषय में भी पूर्ववत् यावत्-'उत्कृष्टः अन्तर्मुहूर्त्त का है'-यहाँ तक सारा कथन करना चाहिए।

46. The same is true about this intervening period for human beings ... and so on up to ... 'a maximum of one Antarmuhurt'.

४७. [प्र.] **जीवस्स णं भंते ! एगिंदियत्ते णोएगिंदियत्ते पुणरवि एगिंदियत्ते एगिंदियओरालिय-सरीरप्पओगबंधंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ?**

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं दो खुड्डागभवग्गहणाइं तिसमयूणाइं, उक्कोसेणं दो सागरोवमसहस्साइं संखेज्जवासमब्भहियाइं; देसबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागं भवग्गहणं समयाहियं, उक्कोसेणं दो सागरोवमसहस्साइं संखेज्जवासमब्भहियाइं।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४७. [प्र.] भगवन् ! एकेन्द्रियावस्थागत जीव (एकेन्द्रियत्व को छोड़कर) नो–एकेन्द्रियावस्था (किसी दूसरी जाति) में रहकर पुनः एकेन्द्रियरूप (एकेन्द्रियजाति) में आये तो एकेन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध का अन्तर कितने काल का होता है ?

[उ.] गौतम ! (ऐसे जीव का) सर्वबन्धान्तर जघन्यतः तीन समय कम दो क्षुल्लकभव–ग्रहण काल और उत्कृष्टतः संख्यात वर्ष–अधिक दो हजार सागरोपम का होता है।

47. What is the intervening period between one *Ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to earth-bodied one-sensed gross physical body formation) and the next in case of the one-sensed living being reborn as some other class of living being (*no-ekendriya*) and taking rebirth again as one-sensed being ?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of three Samaya less than *Kshullak-bhava-grahan* (time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type) and a maximum of countable years more than two thousand Sagaropam.

४८. [प्र.] जीवस्स णं भंते ! पुढविकाइयत्ते नोपुढविकाइयत्ते पुणरवि पुढविकाइयत्ते पुढविकाइयएगिंदियओरालिय–सरीरप्पयोगबंधंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं दो खुड्डाइं भवग्गहणाइं तिसमयऊणाइं; उक्कोसेणं अणंतं कालं, अणंता उस्सप्पिणी–ओसप्पिणीओ कालओ, खेत्तओ अणंता लोगा, असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा, ते णं पोग्गलपरियट्टा आवलियाए असंखेज्जइभागो। देसबंधंतरं जहन्नेणं खुड्डागभवग्गहणं समयाहियं, उक्कोसेणं अणंतं कालं जाव आवलियाए असंखेज्जइभागो।

४८. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकायिक–अवस्थागत जीव नो–पृथ्वीकायिक–अवस्था में (पृथ्वीकाय को छोड़कर अन्य किसी काय में) उत्पन्न हो (वहाँ रह) कर, पुनः पृथ्वीकायिकरूप (पृथ्वीकाय) में आये, तो पृथ्वीकायिक–एकेन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध का अन्तर कितने काल का होता है ?

[उ.] गौतम ! (ऐसे जीव का) सर्वबन्धान्तर जघन्यतः तीन समय कम दो क्षुल्लकभव–ग्रहण काल और उत्कृष्टतः अनन्तकाल होता है। कालतः अनन्त उत्सर्पिणी–अवसर्पिणी काल है, क्षेत्रतः अनन्त लोक, असंख्येय पुद्गल परावर्तन हैं। वे पुद्गल–परावर्तन आवलिका के असंख्यातवें भाग–प्रमाण हैं। (अर्थात्–आवलिका के असंख्यातवें भाग में जितने समय हैं, उतने पुद्गल परावर्तन हैं।) देशबन्ध का अन्तर जघन्यतः समयाधिक क्षुल्लकभव–ग्रहण–काल और उत्कृष्टतः अनन्तकाल..... यावत्–'आवलिका के असंख्यातवें भाग–प्रमाण पुद्गल–परावर्तन है'; यहाँ तक जानना चाहिए।

48. What is the intervening period between one *Prithvikaayik-ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to earth-bodied one-sensed gross physical body formation) and the next in case of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the earth-bodied living being reborn as some other class of living being (*no-prithvikaayik*) and taking rebirth again as earth-bodied being ?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of three Samaya less than two *Kshullak-bhava-grahan* (time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type) and a maximum of infinite time. Related to time it is infinite progressive and regressive cycles of time (Avasarpini-utsarpini). It is equivalent to uncountable Pudgal-paravartan (time taken by a soul to touch each and every matter particle in the *Lok*) involving infinite *Lok* (occupied space) in terms of area. These Pudgal-paravartan periods are equivalent to the number of Samayas in uncountable fraction of one Avalika. This intervening period for the bondage of a part (*desh-bandh*) is a minimum of one Samaya more than *Kshullak-bhava-grahan* (time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type) and a maximum of Infinite time. ... and so on up to ... number of Samayas in uncountable fraction of one Avalika.

४९. जहा पुढविक्काइयाणं एवं वणस्सइकाइयवज्जाणं जाव मणुस्साणं। वणस्सइकाइयाणं दोण्णि खुड्डाइं एवं चेव; उक्कोसेणं असंखिज्जं कालं, असंखिज्जाओ उस्सप्पिणि-ओसप्पिणीओ कालओ, खेत्तओ असंखेज्जा लोगा। एवं देसबंधंतरं पि उक्कोसेणं पुढवीकालो।

४९. जिस प्रकार पृथ्वीकायिक जीवों का प्रयोगबन्धान्तर कहा गया है, उसी प्रकार वनस्पतिकायिक जीवों को छोड़कर यावत् मनुष्यों के प्रयोगबन्धान्तर तक (सभी जीवों के विषय में) समझना चाहिए। वनस्पतिकायिक जीवों के सर्वबन्ध का अन्तर जघन्यतः काल की अपेक्षा से तीन समय कम दो क्षुल्लकभव-ग्रहणकाल, और उत्कृष्टतः असंख्येयकाल है, अथवा कालतः असंख्येय उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी है, क्षेत्रतः असंख्येय लोक है। इसी प्रकार देशबन्ध का अन्तर भी जघन्यतः समयाधिक क्षुल्लकभव-ग्रहण तक का है, और उत्कृष्टतः पृथ्वीकायकि स्थितिकाल तक है, (अर्थात्-असंख्येय उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल यावत् असंख्येय लोक है।)

49. What has been said about the intervening period between one *Prithvikaayik-ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to earth-bodied one-sensed gross physical body formation) should be repeated for all beings ... and so on up to ... human beings except plant-bodied beings. In case of plant-bodied beings intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of three Samaya less than two *Kshullak-bhava-grahan* (time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type) and a maximum of uncountable time. Related to time it is uncountable progressive and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

regressive cycles of time. It is equivalent to uncountable Pudgal-paravartan (time taken by a soul to touch each and every matter particle in the *Lok*) involving uncountable *Lok* (occupied space) in terms of area. In the same way this intervening period for the bondage of a part (*desh-bandh*) is a minimum of one Samaya more than *Kshullak-bhava-grahan* (time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type) and a maximum same as mentioned with regard to earth-bodied beings (or infinite time. ... and so on up to ... number of Samayas in uncountable fraction of one Avalika).

५०. [प्र.] **एएसि णं भंते ! जीवाणं ओरालियसरीरस्स देसबंधगाणं सव्वबंधगाणं अबंधगाणं य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?**

[उ.] **गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा ओरालियसरीरस्स सव्वबंधगा, अबंधगा विसेसाहिया, देसबंधगा असंखेज्जगुणा।**

५०. [प्र.] भगवन् ! औदारिकशरीर के इन देशबन्धक, सर्वबन्धक और अबन्धक जीवों में कौन किनसे अल्प, बहुत (अधिक), तुल्य और विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! सबसे थोड़े (अल्प) औदारिकशरीर के सर्वबन्धक जीव हैं (उत्पात के प्रथम समय वाले), उनसे अबन्धक जीव विशेषाधिक हैं (विग्रह गतिक और सिद्ध) और उनसे असंख्यातगुणे देशबन्धक जीव हैं (प्रथम समय के अतिरिक्त सभी)

50. [Q.] *Bhante !* Of these beings with bondage related to gross physical body (*Audarik-sharira-bandh*), which are comparatively less, more, equal and much more—those with bondage of a part (*desh-bandhak*) or those with that of the whole (*sarva-bandhak*) or those with no-bondage (*abandhak*) at all ?

[Ans.] Gautam ! Minimum are those with bondage of the whole (*sarva-bandh*), much more than these are those with bondage of a part (*desh-bandh*) and uncountable times more than these are those with no bondage at all.

विवेचन : प्रस्तुत २७ सूत्रों (सू. २४ से ५० तक) में शरीरप्रयोगबन्ध के विषय में निम्नोक्त तथ्यों का निरूपण किया गया है–

१. औदारिक आदि के भेद से शरीरप्रयोगबन्ध ५ प्रकार का है।

२. एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध पाँच प्रकार का है।

३. एकेन्द्रिय–औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध पृथ्वीकाय से लेकर वनस्पतिकाय तक ५ प्रकार के हैं।

४. द्वीन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय पर्याप्त, अपर्याप्त गर्भज मनुष्य तक औदारिकशरीर–प्रयोगबन्ध समझना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. समस्त जीवों के औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध वीर्य, योग, सद्द्रव्य एवं प्रमाद के कारण कर्म, योग, भव और आयुष्य की अपेक्षा औदारिकशरीरप्रयोग-नामकर्म के उदय से होता है।

६. समस्त जीवों के औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध देशबन्ध भी है, सर्वबन्ध भी।

७. समस्त जीवों के औदारिकशरीर-बन्ध की कालतः स्थिति की सीमा।

८. समस्त जीवों के सर्व-देशबन्ध की अपेक्षा कालतः औदारिकशरीर-बन्ध के अन्तर-काल की सीमा।

९. समस्त जीवों द्वारा अपने एकेन्द्रियादि पूर्वरूप को छोड़कर अन्य रूपों में उत्पन्न हो या रहकर, पुनः उसी अवस्था (रूप) में आने पर औदारिकशरीर- प्रयोगबन्धान्तर-काल की सीमा।

१०. औदारिकशरीर के देशबन्धक, सर्वबन्धक और अबन्धक जीवों का अल्प-बहुत्व।

औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध के आठ कारण-जिस प्रकार प्रासादनिर्माण में द्रव्य, वीर्य, संयोग, योग-(मन-वचन-काया का व्यापार), शुभकर्म (का उदय), आयुष्य, भव (तिर्यंच-मनुष्यभव) और काल (तृतीय चतुर्थ-पंचम आरा) इन कारणों की अपेक्षा होती है, उसी प्रकार औदारिकशरीर-बन्ध में भी निम्नोक्त ८ कारण अपेक्षित हैं-(१) **सवीर्यता**-वीर्यान्तरायकर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न शक्ति, (२) **सयोगता**-योगयुक्तता, (३) **सद्द्रव्यता**-जीव के तथारूप औदारिकशरीर योग्य तथाविध पुद्गलों-(द्रव्यों) की विद्यमानता, (४) **प्रमाद**-शरीरोत्पत्तियोग्य विषय-कषायादि प्रमाद, (५) **कर्म**-तिर्यंच-मनुष्यादि जाति-नामकर्म, (६) **योग**-काययोगादि, (७) **भव**-तिर्यंच एवं मनुष्य का अनुभूयमान भव, और (८) **आयुष्य**-तिर्यंच और मनुष्य का आयुष्य। औदारिकशरीर-प्रयोग-नामकर्म के उदय से होता है; किन्तु मूल पाठ में जो ८ कारण बताये हैं, वे इस मुख्य कारण-नामकर्म के सहकारी कारण हैं, जो औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध में आवश्यक हैं।

औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध के दो रूप : सर्वबन्ध, देशबन्ध-जिस प्रकार घृतादि से भरी हुई एवं अग्नि से तपी हुई कड़ाही में जब मालपूआ डाला जाता है, तो प्रथम समय में वह घृतादि को केवल ग्रहण करता (खींचता) है, तत्पश्चात् शेष समयों में वह घृतादि को ग्रहण भी करता है और छोड़ता भी है; उसी प्रकार यह जीव जब पूर्वशरीर को छोड़कर अन्य शरीर को धारण करता है, तब प्रथम समय में उत्पत्तिस्थान में रहे हुए उस शरीर के योग्य पुद्गलों को केवल ग्रहण करता है। इस प्रकार का यह बन्ध-'सर्वबन्ध' है। तत्पश्चात् द्वितीय आदि समयों में शरीरयोग्य पुद्गलों को ग्रहण भी करता है और छोड़ता भी है; अतः यह बन्ध देशबन्ध है। इसलिए यहाँ कहा गया है कि औदारिकशरीर-प्रयोगबन्ध सर्वबन्ध भी होता है, देशबन्ध भी। जो सर्वबन्ध होता है, वह केवल एक समय का होता है। मालपूए के पूर्वोक्त दृष्टान्तानुसार जब वायुकायिक या मनुष्यादि जीव वैक्रियशरीर करके उसे छोड़ देता है, तब छोड़ने के बाद औदारिकशरीर का एक समय तक सर्वबन्ध करता है, तत्पश्चात् दूसरे समय में वह देशबन्ध करता है। दूसरे समय में यदि उसका मरण हो जाये तो इस अपेक्षा से देशबन्ध जघन्य एक समय का होता है। औदारिकशरीरधारी जीवों की उत्कृष्ट आयुष्यस्थिति तीन पल्योपम की है। उसमें से जीव प्रथम समय में सर्वबन्धक और उसके बाद एक समय कम तीन पल्योपम तक देशबन्धक रहता है। इस दृष्टि से समस्त जीवों की अपनी-अपनी उत्कृष्ट आयुष्यस्थिति के अनुसार एक समय तक वे सर्वबन्धक और फिर देशबन्धक रहते हैं। जैसे-एकेन्द्रिय जीवों की उत्कृष्ट आयुस्थिति २२ हजार वर्ष की है। उसमें से १ समय तक वे सर्वबन्धक और फिर १ समय कम २२ हजार वर्ष तक वे देशबन्धक रहते हैं।

उत्कृष्ट देशबन्ध-जिसकी जितनी उत्कृष्ट आयुष्यस्थिति होती है, उसका देशबन्ध उसमें एक समय कम होता है। जैसे-अप्काय की ७,००० वर्ष, तेजस्काय की ३ अहोरात्र, वनस्पतिकाय की १०,००० वर्ष, द्वीन्द्रिय की १२ वर्ष, त्रीन्द्रिय की ४९ दिन, चतुरिन्द्रिय की ६ मास की उत्कृष्ट आयुस्थिति होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षुल्लक–भवग्रहण का आशय–अपनी-अपनी काय और जाति में जो छोटे–से–छोटा भव हो, उसे क्षुल्लकभव कहते हैं। एक अन्तर्मुहूर्त्त में सूक्ष्मनिगोद के ६५,५३६ क्षुल्लकभव होते हैं, एकश्वासोच्छ्‌वास में १७ से कुछ अधिक क्षुल्लकभव होते हैं। पृथ्वीकाय से लेकर वायुकाय के एक मुहूर्त्त में १२,८२४ क्षुल्लकभव होते हैं। अप्काय से चतुरिन्द्रिय जीवों तक का देशबन्ध जघन्य ३ समय कम क्षुल्लकभव ग्रहण तक है। क्योंकि उनमें भी वैक्रियशरीर नहीं होता। *–(विस्तार के लिए देखें, पदम प्रकाशन द्वारा प्रकाशित सचित्र भगवतीसूत्र, भाग २)*

पुद्‌गल–परावर्तन की व्याख्या–अनन्त अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी का एक पुद्‌गल–परावर्तन होता है। असंख्यात समयों की एक आवलिका होती है। उस आवलिका के असंख्यात समयों का जो असंख्यातवाँ भाग है उसमें जितने समय होते हैं, उतने पुद्‌गल–परावर्तन यहाँ लिए गये हैं। इनकी संख्या भी असंख्यात हो जाती है, क्योंकि असंख्यात के असंख्यात भेद हैं। *(वृत्ति, पत्रांक ४०० से ४०३ तक)*

Elaboration—In the preceding 27 aphorisms (24-50) the following information about *Sharira-prayoga-bandh* (bondage related to body formation) has been stated—

1. *Sharira-prayoga-bandh* (bondage related to body formation) is of five types including that of gross physical body (*audarik sharira*).

2. *Audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation) is of five types related to one-sensed to five-sensed beings.

3. *Ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to one-sensed gross physical body formation) is of five types related to earth-bodied beings to plant-bodied beings.

4. *Audarik-sharira-prayoga-bandh* includes two-sensed beings to five-sensed underdeveloped and fully developed human beings.

5. Depending upon available potency (*saviryata*), available intensity of thought (*sayogata*) and available matter particles (*saddravyata*), and based on causative parameters like *karma*, association (*yoga*), genus (*bhava*), life-span (*ayushya*) etc., the *Audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation) takes place through fruition (*udaya*) of *Audarik-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for gross physical body formation) triggered by stupor (*pramaad*).

6. In all beings *Audarik-sharira-prayoga-bandh* is bondage of the whole as well as that of a part.

7. The time limits till this bondage lasts in all beings.

8. The limits of intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) as well as that of a part (*desh-bandh*) for all beings.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

9. The limits of the intervening period between one *Ekendriya-audarik-sharira-prayoga-bandh* and the next in case of taking rebirth as some other class of living being and taking rebirth again as one-sensed being.

10. The comparative numbers of living beings acquiring bondage of the whole (*sarva-bandh*) as well as that of a part.

Eight reasons for *Audarik-sharira-prayoga-bandh*—When building a mansion favourable causes including matter, energy, coincidence, involvement of mind, speech and body, fruition of noble *karmas*, life-span, genus (as animal or human) and suitable era (the third, fourth or fifth epoch) are necessary. In the same way the following eight favourable causes are necessary for *Audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation)—(1) *Saviryata*—presence of potency or energy produced by pacification-cum-destruction of potency-hindering *karma* (*Viryantaraya karma*). (2) *Sayogata*—Presence of intent to act. (3) *Saddravyata*—availability of matter particles suitable for forming gross physical body. (4) *Pramaad*—stupor-generating passions required for creation of physical body. (5) *Karma*—*karma* responsible for formation of gross physical body of an animal or a human. (6) *Yoga*—mental, vocal and physical association or activity. (7) *Bhava*—animal or human genus. (8) *Ayushya*—life-span as animal or human. Although this bondage occurs due to fruition of *Audarik-sharira-prayoga-naam-karma* (*karma* responsible for gross physical body formation) it is facilitated by the aforesaid eight causes.

Two types of *Audarik-sharira-prayoga-bandh : sarva-bandh and desh-bandh*—When a cookie is put in a pan filled with oil and heated on a stove, at the first moment it only acquires or draws in the oil; at the second and consequent moments it draws in as well as gives away that oil. In the same way when a soul (*jiva*) abandons its existing body and acquires a new body, at the first moment it only acquires matter particles suitable for its new body and available at the place of birth. This way this bondage is the bondage of the whole (*sarva-bandh*). After that at the second and consequent moments it acquires as well as sheds such particles of matter. This way it is bondage of a part (*desh-bandh*). That is why it is stated here that *Audarik-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to gross physical body formation) is both, of the whole as well as of a part. The bondage of the whole is only for one Samaya. Following the aforesaid example of a cookie, suppose an air-bodied,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

human or other type of living being forms a transmutable (*vaikriya*) body and abandons it to form a gross physical body, then it acquires bondage of the whole in the first Samaya and then in the second Samaya it does that of a part. It may die during that second Samaya. In this context the minimum time for which this bondage lasts is said to be one Samaya. The maximum life span of living beings with gross physical body is three Palyopam. During this life-span it is *sarvabandhak* (one that acquires bondage of the whole) in the first Samaya; after that he remains *desh-bandhak* (one that acquires bondage of a part) for one Samaya less in three Palyopam. All living beings follow this pattern and remain *desh-bandhak* according to their respective maximum life-spans. For example the maximum life-span of one-sensed beings is 22 thousand years. Out of this they are *sarvabandhak* (one that acquires bondage of the whole) in the first Samaya and after that they are *desh-bandhak* (one that acquires bondage of a part) for one Samaya less in 22 thousand years.

Maximum *desh-bandh*—A living being (soul) remains *desh-bandhak* (one that acquires bondage of a part) for one Samaya less in the maximum life-span for its genus. The maximum life spans of different genus are : water-bodied beings—7,000 years; fire-bodied beings—3 days and nights (Ahoratra); plant-bodied beings—10,000 years; two-sensed beings—12 years; three-sensed beings—49 days; and four-sensed beings—6 months.

Kshullak-bhava-grahan—*Kshullak-bhava* means rebirth of shortest life-span particular to a genus and a body. For example a minute dormant being (*sukshma nigod*) takes more than 17 rebirths within the time taken to complete one breath (Shvasochchhvas) and 65,536 rebirths in one Antarmuhurt (less than 45 minutes). Earth-bodied beings take 12,824 rebirths in one Antarmuhurt. *Kshullak-bhava-grahan* means time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type. For water-bodied beings to four-sensed beings the bondage of a part (*desh-bandh*) is a minimum of three Samaya less than *Kshullak-bhava-grahan* (time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type). This is because they do not have transmutable body (*vaikriya sharira*). (For more details refer to Illustrated *Bhagavati Sutra*, part-2; published by Padam Prakashan)

Pudgal-paravartan—It is the time taken by a soul to touch each and every matter particle in the *Lok*. It is equivalent to infinite progressive and regressive cycles of time. One Avalika is equal to uncountable

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Samayas. Here the *Pudgal-paravartans* under consideration are equal to the uncountable fraction of these uncountable Samayas of an Avalika. They are also uncountable because there are uncountable types of uncountable numbers. *(Vritti, leaf 400-403)*

वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध के भेद–प्रभेद TYPES OF *VAIKRIYA-SHARIRA-PRAYOGA-BANDH*

५१. [प्र.] वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?

[उ.] गोयमा ! दुविहे पन्नत्ते, तं जहा–एगिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे य, पंचिंदियवेउव्विय–सरीरप्पयोगबंधे य।

५१. [प्र.] भगवन् ! वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! वह दो प्रकार का कहा गया है–(१) एकेन्द्रिय वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध और (२) पंचेन्द्रिय वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध।

51. [Q.] *Bhante !* Of how many types is this *Vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation) ?

[Ans.] Gautam ! It is said to be of two types—(1) *Ekendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to one-sensed transmutable body formation) and (2) *Panchendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to five-sensed transmutable body formation).

५२. [प्र.] जइ एगिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे किं वाउक्काइयएगिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे, अवाउक्काइय–एगिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे ?

[उ.] एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओगाहणसंठाणे वेउव्वियसरीरभेदो तहा भाणियव्वो जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्ध–अणुत्तरोववाइयकप्पातीयवेमाणियदेवपंचिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे य अपज्जत्तसव्व–ट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव पयोगबंधे य।

५२. [प्र.] भगवन् ! यदि एकेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध है, तो क्या वायुकायिक एकेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध है अथवा अवायुकायिक एकेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध है ?

[उ.] गौतम ! इस प्रकार के अभिलाप द्वारा (प्रज्ञापनासूत्र के इक्कीसवें) अवगाहना संस्थानपद में वैक्रियशरीर के जिस प्रकार भेद कहे गये हैं, उसी प्रकार यहाँ भी यावत्–'पर्याप्तसर्वार्थसिद्ध–अनुत्तरौपपातिक–कल्पातीत–वैमानिकदेव–पंचेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध और अपर्याप्त–सर्वार्थसिद्ध–अनुत्तरौपपातिक–कल्पातीत–वैमानिकदेव–पंचेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध' तक कहना चाहिए।

52. *Bhante !* If there is *Ekendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to one-sensed transmutable body formation) then is there *Vayukaayik-ekendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

related to one-sensed air-bodied transmutable body formation) or *Avayukaayik-ekendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to one-sensed non-air-bodied transmutable body formation)?

[Ans.] Gautam ! Quote the types of *Vaikriya sharira* as mentioned in *Avagahana Samsthan Pad* (Twenty first Chapter of *Prajnapana Sutra*) starting with this type of statement (questions and answers) ... and so on up to ... *Paryapt-sarvarthasiddha-anuttaraupapatik-kalpateet-vaimanik-dev-panchendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of fully developed *Sarvarthasiddha-anuttaraupapatik* celestial vehicular gods beyond the *Kalps*) and *Aparyapt-sarvarthasiddha-anuttaraupapatik-kalpateet-vaimanik-dev-panchendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of underdeveloped *Sarvarthasiddha-anuttaraupapatik* celestial vehicular gods beyond the *Kalps*).

किस कर्म के निमित्त CAUSATIVE *KARMA*

५३. [प्र.] वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?

[उ.] **गोयमा ! वीरियसजोगसद्दव्वयाए जाव आउयं वा लद्धिं वा पडुच्च वेउव्वियसरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे।**

५३. [प्र.] भगवन् ! वैक्रियशरीर-प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! सवीर्यता, सयोगता, सद्द्रव्यता, यावत् आयुष्य अथवा लब्धि की अपेक्षा तथा वैक्रियशरीर-प्रयोग-नामकर्म के उदय से वैक्रियशरीर-प्रयोगबन्ध होता है।

53. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation)?

[Ans.] Gautam ! Depending upon available potency (*saviryata*), available intent of activity (*sayogata*) and available matter particles (*saddravyata*), and based on causative parameters like *karma*, ... and so on up to ... life-span (*ayushya*), and also due to attainment of special power (*labdhi*), the *Vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation) takes place through fruition (*udaya*) of *Vaikriya-sharira-prayoga-naam-karma* (*karma* responsible for transmutable body formation).

५४. [प्र.] वाउक्काइयएगिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?

[उ.] गोयमा ! वीरिय-सजोग-सद्दव्वयाए तं चेव जाव लद्धिं वा पडुच्च वाउक्काइयएगिंदियवेउव्विय जाव बंधे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५४. [प्र.] भगवन् ! वायुकायिक–एकेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! सवीर्यता, सयोगता, सद्द्रव्यता यावत्–आयुष्य और लब्धि की अपेक्षा से तथा वायुकायिक–एकेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोग–नामकर्म के उदय से वायुकायिक–एकेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध होता है।

54. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Vayukaayik-ekendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of one-sensed non-air-bodied being) ?

[Ans.] Gautam ! Depending upon available potency (*saviryata*), available intent of activity (*sayogata*) and available matter particles (*saddravyata*), and based on causative parameters like *karma*, ... and so on up to ... life-span (*ayushya*), and also due to attainment of special power (*labdhi*), the *Vayukaayik-Ekendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of one-sensed air-bodied being) takes place through fruition (*udaya*) of *Vayukaayik-ekendriya-vaikriya-sharira-prayoga-naam-karma* (*karma* responsible for transmutable body formation of one-sensed air-bodied being).

५५. [प्र. १] रयणप्पभापुढवि–नेरइय–पंचिंदिय–वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?

[उ.] गोयमा ! वीरियसजोगसद्दव्वयाए जाव आउयं वा पडुच्च रयणप्पभापुढवि० जाव बंधे।

[२] एवं जाव अहेसत्तमाए।

५५. [प्र. १] भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी–नैरयिक–पंचेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! सवीर्यता, सयोगता, सद्द्रव्यता यावत्–आयुष्य की अपेक्षा से तथा रत्नप्रभापृथ्वी–नैरयिक–पंचेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोग–नामकर्म के उदय से रत्नप्रभापृथ्वी–नैरयिक पंचेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध होता है।

[२] इसी प्रकार यावत्–अधःसप्तम नरक–पृथ्वी तक कहना चाहिए।

55. [Q. 1] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Ratnaprabha-prithvi-nairayik-panchendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of five-sensed infernal being of *Ratnaprabha-prithvi*) ?

[Ans.] Gautam ! Depending upon available potency (*saviryata*), available intent of activity (*sayogata*) and available matter particles

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(*saddravyata*), and based on causative parameters like *karma*, ... and so on up to ... life-span (*ayushya*), the *Ratnaprabha-prithvi-nairayik-panchendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of five-sensed infernal being of *Ratnaprabha-prithvi*) takes place through fruition (*udaya*) of *Ratnaprabha-prithvi-nairayik-panchendriya-vaikriya-sharira-prayoga-naam-karma* (*karma* responsible for transmutable body formation of five-sensed infernal being of *Ratnaprabha-prithvi*).

[2] The same should be repeated for all hells up to *Adhah-saptama Prithvi* (the seventh hell).

५६. [प्र.] **तिरिक्खजोणियपंचिंदियवेउव्वियसरीर० पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! वीरिय० जहा वाउक्काइयाणं।**

५६. [प्र.] भगवन् ! तिर्यंचयोनिक–पंचेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! सवीर्यता यावत्–आयुष्य और लब्धि को लेकर तथा तिर्यंचयोनिक–पंचेन्द्रिय–वैक्रिय शरीरप्रयोग नामकर्म के उदय से होता है।

56. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Tiryanch-yonik-panchendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of five-sensed animal) ?

[Ans.] Gautam ! Depending upon available potency (*saviryata*), ... and so on up to ... and based on causative parameters like *karma*, ... and so on up to ... life-span (*ayushya*), and also due to attainment of special power (*labdhi*), it takes place through fruition (*udaya*) of *Tiryanch-yonik-panchendriya-vaikriya-sharira-prayoga-prayoga-naam-karma* (*karma* responsible for transmutable body formation of five-sensed animal).

५७. [प्र.] **मणुस्सपंचिंदियवेउव्विय० ?**

[उ.] **एवं चेव।**

५७. [प्र.] भगवन् ! मनुष्य–पंचेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! मनुष्य–पंचेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध के विषय में भी इसी प्रकार (पूर्ववत्) जान लेना चाहिए।

57. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Manushya-panchendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of five-sensed human being) ?

[Ans.] Gautam ! It is same as aforesaid (aphorism 56).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५८. [प्र. १] असुरकुमारभवणवासिदेवपंचिंदियवेउव्विय० ?

[उ.] जहा रयणप्पभापुढविनेरइया।

[२] एवं जाव थणियकुमारा।

५९. एवं वाणमंतरा।

६०. एवं जोइसिया।

५८. [प्र. १] भगवन् ! असुरकुमार–भवनवासी–देव–पंचेन्द्रिय वैक्रियशरीर प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! इसका कथन भी रत्नप्रभापृथ्वी नैरयिकों की तरह समझना चाहिए।

[२] इसी प्रकार यावत्–स्तनितकुमार–भवनवासी देवों तक कहना चाहिए।

५९. इसी प्रकार वाणव्यन्तर देवों के विषय में भी रत्नप्रभापृथ्वी नैरयिकों के समान जानना चाहिए।

६०. इसी प्रकार ज्योतिष्कदेवों के विषय में जानना चाहिए।

58. [Q. 1] Same question about *Asur Kumar Bhavanavasi dev-panchendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of five-sensed *Asur Kumar* abode dwelling gods)?

[Ans.] Gautam ! They follow the pattern of infernal beings of Ratnaprabha *Prithvi*.

[2] The same is true for divine beings up to *Stanit Kumar* abode dwelling gods.

59. The same is also true for *Vanavyantar* (interstitial) gods.

60. The same is also true for *Jyotishk* (stellar) gods.

६१. [१] एवं सोहम्मकप्पोवगया वेमाणिया। एवं जाव अच्चुय०।

[२] गेवेज्जकप्पातीया वेमाणिया एवं चेव।

[३] अणुत्तरोववाइयकप्पातीया वेमाणिया एवं चेव।

६१. [१] इसी प्रकार (रत्नप्रभापृथ्वी नैरयिकों के समान) सौधर्मकल्पोपपन्नक वैमानिक देवों यावत्–अच्युतकल्पोपपन्नक वैमानिक देवों तक के विषय में जानना चाहिए।

[२] ग्रैवेयक–कल्पातीत वैमानिक देवों के विषय में भी इसी प्रकार जान लेना चाहिए।

[३] अनुत्तरौपपातिक–कल्पातीत–वैमानिक देवों के विषय में भी पूर्ववत् जान लेना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

61. [1] The same (like Ratnaprabha *Prithvi*) is also true for gods of Saudharma Kalp ... and so on up to ... Achyut Kalp *Vaimanik* (celestial vehicular) gods.

[2] The same is also true for Graiveyak *Vaimanik* gods beyond the Kalps.

[3] The same is also true for Anuttaraupapatik *Vaimanik* gods beyond the Kalps.

देश बंध–सर्वबन्ध BONDAGE OF A PART : BONDAGE OF THE WHOLE

६२. [प्र.] वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देशबंधे, सव्वबंधे ?

[उ.] गोयमा ! देसबंधे वि, सव्वबंधे वि।

६२. [प्र.] भगवन् ! वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध क्या देशबन्ध है अथवा सर्वबन्ध है ?

[उ.] गौतम ! वह देशबन्ध भी है, सर्वबन्ध भी है।

62. [Q.] *Bhante !* Is *Vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation) a bondage of a part (*desh-bandh*) or that of the whole (*sarva-bandh*) ?

[Ans.] Gautam ! It is both, bondage of a part (*desh-bandh*) as well as that of the whole (*sarva-bandh*).

६३. [प्र.] वाउक्काइयएगिंदिय ?

[उ.] एवं चेव।

६३. [प्र.] भगवन् ! वायुकायिक–एकेन्द्रिय–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध क्या देशबन्ध है अथवा सर्वबन्ध है ?

[उ.] गौतम ! इसी प्रकार (पूर्ववत्) जानना चाहिए।

63. [Q.] *Bhante !* Is *Vayukaayik-ekendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of one-sensed non-air-bodied being), a bondage of a part (*desh-bandh*) or that of the whole (*sarva-bandh*) ?

[Ans.] Gautam ! It is the same as aforesaid (aphorism 62).

६४. [प्र.] रयणप्पभापुढविनेरइय० ?

[उ.] एवं चेव।

६५. एवं जाव अणुत्तरोववाइया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६४. [प्र.] भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी--नैरयिक–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध देशबन्ध है या सर्वबन्ध ?

[उ.] गौतम ! इसी प्रकार (पूर्ववत्) जानना चाहिए।

६५. इसी प्रकार यावत्–अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत वैमानिक देवों तक समझना चाहिए।

64. [Q.] *Bhante !* Is *Ratnaprabha-prithvi-nairayik-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of infernal beings of the *Ratnaprabha-prithvi*), a bondage of a part (*desh-bandh*) or that of the whole (*sarva-bandh*) ?

[Ans.] Gautam ! It is the same as aforesaid (aphorism 62).

65. The same is true for all beings up to Anuttaraupapatik *Vaimanik* gods beyond the *Kalps*.

काल सीमा TIME LIMIT

६६. [प्र.] **वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?**

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं दो समया। देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं समयूणाइं।**

६६. [प्र.] भगवन् ! वैक्रियशरीर प्रयोगबन्ध, कालतः कितने काल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! इसका सर्वबन्ध जघन्यतः एक समय तक और उत्कृष्टतः दो समय तक रहता है और देशबन्ध जघन्यतः एक समय तक और उत्कृष्टतः एक समय कम तेतीस सागरोपम तक रहता है।

66. [Q.] *Bhante* ! In terms of time, how long does *Vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation) last ?

[Ans.] Gautam ! The bondage of the whole (*sarva-bandh*) lasts for a minimum of one Samaya and a maximum of two Samayas. The bondage of a part (*desh-bandh*) lasts for a minimum of one Samaya and a maximum of one Samaya short of thirty three Sagaropam (a metaphoric unit of time) less one Samaya.

६७. [प्र.] **वाउक्काइयएगिंदियवेउव्विय० पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं; देसबंधे जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अंतोमुहुत्तं।**

६७. [प्र.] भगवन् ! वायुकायिक--एकेन्द्रिय -वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध कितने काल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! इसका सर्वबन्ध जघन्यतः एक समय और उत्कृष्टतः दो समय तक रहता है, तथा देशबन्ध जघन्यतः एक समय और उत्कृष्टतः अन्तर्मुहूर्त्त तक रहता है।

67. [Q.] *Bhante* ! In terms of time, how long does *Vayukaayik-ekendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of one-sensed air-bodied beings) last ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! The bondage of the whole (*sarva-bandh*) lasts for a minimum of one Samaya and a maximum of two Samayas. The bondage of a part (*desh-bandh*) lasts for a minimum of one Samaya and a maximum of one Antarmuhurt.

६८. [प्र. १] रयणप्पभापुढविनेरइय० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं; देसबंधे जहन्नेणं दसवाससहस्साइं तिसमयऊणाइं, उक्कोसेणं सागरोवमं समऊणं।

[२] एवं जाव अहेसत्तमा। नवरं देसबंधे जस्स जा जहन्निया ठिती सा तिसमयूणा कायव्वा, जा च उक्कोसिया सा समयूणा।

६८. [प्र. १] भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी नैरयिक-वैक्रियशरीर-प्रयोगबन्ध कितने काल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! इसका सर्वबन्ध एक समय तक रहता है और देशबन्ध जघन्यतः तीन समय कम दस हजार वर्ष तक तथा उत्कृष्टतः एक समय कम एक सागरोपम तक रहता है।

[२] इसी प्रकार यावत् अधःसप्तम नरकपृथ्वी तक जानना चाहिए, किन्तु इतना विशेष है कि जिसकी जितनी जघन्य (आयु) स्थिति हो, उसमें तीन समय कम जघन्य देशबन्ध तथा जिसकी जितनी उत्कृष्ट (आयु) स्थिति हो, उसमें एक समय कम उत्कृष्ट देशबन्ध जानना चाहिए।

68. [Q. 1] The same question about *Ratnaprabha-prithvi-nairayik-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of infernal beings of the *Ratnaprabha-prithvi*) ?

[Ans.] Gautam ! The bondage of the whole (*sarva-bandh*) lasts just for one Samaya. The bondage of a part (*desh-bandh*) lasts for a minimum of three Samayas short of ten thousand years and a maximum of one Samaya short of one Sagaropam.

[2] The same is true for all infernal beings up to the seventh hell (Adhah-saptama *Prithvi*). The only difference is that the aforesaid minimum and maximum periods are equal to three Samayas short of the genus specific minimum life-span and one Samaya short of genus specific maximum life-span respectively.

६९. पंचिंदियतिरिक्खजोणियाण मणुस्साण य जहा वाउक्काइयाणं।

६९. पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्य का कथन वायुकायिक के समान जानना चाहिए।

69. Five sensed animals and human beings follow the pattern of air-bodied beings (*Vayukaayik jivas*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७०. असुरकुमार–नागकुमार० जाव अणुत्तरोववाइयाणं जहा नेरइयाणं, नवरं जस्स जा ठिई सा भाणियव्वा जाव अणुत्तरोववाइयाणं सव्वबंधे एक्कं समयं; देसबंधे जहन्नेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं तिसमयूणाइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं समयूणाइं।

७०. असुरकुमार, नागकुमार, यावत्–अनुत्तरौपपातिक देवों का कथन नैरयिकों के समान जानना चाहिए। परन्तु इतना विशेष है कि जिसकी जितनी स्थिति हो, उतनी कहनी चाहिए, यावत्–अनुत्तरौपपातिक देवों का सर्वबन्ध एक समय तक रहता है तथा देशबन्ध जघन्य तीन समय कम इकतीस सागरोपम और उत्कृष्ट एक समय कम तेतीस सागरोपम तक का होता है।

70. Divine beings including *Asur Kumar*, *Naag Kumar* ... and so on up to ... Anuttaraupapatik gods follow the pattern of infernal beings. The difference is that time limit corresponds to the genus specific life-spans ... and so on up to ... for Anuttaraupapatik gods the bondage of the whole (*sarva-bandh*) lasts just for one Samaya. The bondage of a part (*desh-bandh*) lasts for a minimum of three Samayas short of thirty one Sagaropam and a maximum of one Samaya short of thirty three Sagaropam.

अन्तर–काल INTERVENING PERIOD

७१. [प्र.] **वेउव्वियसरीरप्पयोगबंधंतरं णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?**

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अणंतं कालं, अणंताओ जाव आवलियाए असंखेज्जइभागो। एवं देसबंधंतरं पि।**

७१. [प्र.] भगवन् ! वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध का अन्तर कालतः कितने काल का होता है ?

[उ.] गौतम ! इसके सर्वबन्ध का अन्तर जघन्यतः एक समय और उत्कृष्टतः अनन्तकाल है–अनन्त उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी यावत्–आवलिका के असंख्यातवें भाग के समयों के बराबर पुद्‌गलपरावर्तन तक रहता है। इसी प्रकार देशबन्ध का अन्तर भी जान लेना चाहिए।

71. [Q.] What is the intervening period between one bondage and the next in case of the transmutable body (*vaikriya sharira*)?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of one Samaya and a maximum of infinite time—infinite progressive and regressive cycles of time ... and so on up to ... *Pudgal-paravartan* periods equivalent to the number of Samayas in uncountable fraction of one Avalika. The same is true for the bondage of a part (*desh-bandh*).

७२. [प्र.] **वाउक्काइयवेउव्वियसरीर० पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं पलिओवमस्स असंखेज्जइभागं। एवं देसबंधंतरं पि।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७२. [प्र.] भगवन् ! वायुकायिक वैक्रियशरीर-प्रयोगबन्ध का अन्तर कितने काल का होता है ?

[उ.] गौतम ! इसके सर्वबन्ध का अन्तर जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग होता है। इसी प्रकार देशबन्ध का अन्तर भी जान लेना चाहिए।

72. [Q.] The same question about *Vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation)?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minim um of one Antarmuhurt and a maximum of uncountable fraction of one Palyopam. The same is true for the bondage of a part (*desh-bandh*).

७३. [प्र.] **तिरिक्खजोणियपंचिंदियवेउव्वियसरीरप्पयोगबंधंतरं पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं पुव्वकोडीपुहत्तं। एवं देसबंधंतरं पि।**

७४. **एवं मणूसस्स वि।**

७३. [प्र.] भगवन् ! तिर्यंचयोनिक पंचेन्द्रिय-वैक्रियशरीर-प्रयोगबन्ध का अन्तर कितने काल का होता है ?

[उ.] गौतम ! इसके सर्वबन्ध का अन्तर जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट पूर्वकोटि-पृथक्त्व का होता है। इसी प्रकार देशबन्ध का अन्तर भी जान लेना चाहिए।

७४. इसी प्रकार मनुष्य के विषय में भी (पूर्ववत्) जान लेना चाहिए।

73. The same question about *Tiryanch-yonik-panchendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of five-sensed animal)?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of one Antarmuhurt and a maximum of Purvakoti-prithakatva (2 to 9 Purvakoti). The same is true for the bondage of a part (*desh-bandh*).

74. The same is also true in case of human beings.

७५. [प्र.] **जीवस्स णं भंते ! वाउकाइयत्ते नोवाउकाइयत्ते पुणरवि वाउकाइयत्ते वाउकाइयएगिंदियवेउव्विय० पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं अणंतं कालं, वणस्सइकालो। एवं देसबंधंतरं पि।**

७५. [प्र.] भगवन् ! वायुकायिक अवस्थागत जीव (वहाँ से मरकर) वायुकायिक के सिवाय अन्य काय में उत्पन्न होकर रहे, और फिर वह वहाँ से मरकर पुनः वायुकायिक जीवों में उत्पन्न हो तो उसके वायुकायिक एकेन्द्रिय वैक्रियशरीर-प्रयोगबन्ध का अन्तर कितने काल का होता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! उसके सर्वबन्ध का अन्तर जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्टतः अनन्तकाल-वनस्पतिकाल तक होता है। इसी प्रकार देशबन्ध का अन्तर भी जान लेना चाहिए।

75. What is the intervening period between one *Vayukaayik-ekendriya-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to air-bodied one-sensed transmutable physical body formation) and the next in case of the air-bodied living being taking rebirth as some other class of living being (*no-vayu-kaayik*) and taking rebirth again as air-bodied living being?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of one Antarmuhurt and a maximum of infinite time or *Vanaspati-kaal* (another term for infinite period because the number of plant-bodied beings is infinite). The same is true for the bondage of a part (*desh-bandh*).

७६. [प्र. १] जीवस्स णं भंते ! **रयणप्पभापुढविनेरइयत्ते णोरयणप्पभापुढवि० पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं, उक्कोसेणं वणस्सइकालो। देसबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं; उक्कोसेणं अणंतं कालं, वणस्सइकालो।**

७६. [प्र. १] भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी नैरयिक रूप में रहा हुआ जीव, (वहाँ से मरकर) रत्नप्रभापृथ्वी के सिवाय अन्य स्थानों में उत्पन्न हो, और (वहाँ से मरकर) पुनः रत्नप्रभापृथ्वी में नैरयिक रूप से उत्पन्न हो तो उस रत्नप्रभानैरयिक-वैक्रियशरीर-प्रयोगबन्ध का अन्तर कितने काल का होता है ?

[उ.] गौतम ! (ऐसे जीव के वैक्रियशरीर-प्रयोगबन्ध के) सर्वबन्ध का अन्तर जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस हजार वर्ष का और उत्कृष्ट अनन्तकाल-वनस्पतिकाल का होता है। देशबन्ध का अन्तर जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्टतः अनन्तकाल-वनस्पतिकाल का होता है।

76. [Q. 1] What is the intervening period between one *Ratnaprabha-prithvi-nairayik-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of infernal beings of the *Ratnaprabha-prithvi*) and the next in case of the infernal being of the *Ratnaprabha-prithvi* taking rebirth as some other class of living being and taking rebirth again as an infernal being of the *Ratnaprabha-prithvi*?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of one Antarmuhurt plus ten thousand years and a maximum of infinite time or *Vanaspati-kaal*. The bondage of a part (*desh-bandh*) is a minimum of one Samaya and a maximum of infinite time or *Vanaspati-kaal*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२] एवं जाव अहेसत्तमाए, नवरं जा जस्स ठिती जहन्निया सा सव्वबंधंतरे जहन्नेणं अंतोमुहुत्तमब्भहिया कायव्वा, सेसं तं चेव।

[२] इसी प्रकार यावत् अधःसप्तम नरकपृथ्वी तक जानना चाहिए। विशेष इतना है कि सर्वबन्ध का जघन्य अन्तर जिस नैरयिक की जितनी जघन्य (आयु) स्थिति हो, उससे अन्तर्मुहूर्त्त अधिक जानना चाहिए। शेष सर्वकथन पूर्ववत् समझ लेना चाहिए।

[2] The same is true for living beings up to Adhah-saptmi *Prithvi*. The difference is that the minimum intervening period related to the bondage of the whole is one Antarmuhurt more than the minimum hell-specific life-span. Rest all is same as aforesaid.

७७. पंचिंदियतिरिक्खजोणिय–मणुस्साण जहा वाउक्काइयाणं।

७७. पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीवों और मनुष्यों के सर्वबन्ध का अन्तर वायुकायिक के समान जानना चाहिए।

77. Five-sensed animals and human beings follow the pattern of air-bodied beings.

७८. असुरकुमार–नागकुमार जाव सहस्सारदेवाणं एएसिं जहा रयणप्पभागाणं, नवरं सव्वबंधंतरे जस्स जा ठिती जहन्निया सा अंतोमुहुत्तमब्भहिया कायव्वा, सेसं तं चेव।

७८. इसी प्रकार असुरकुमार, नागकुमार यावत् सहस्रारदेवों तक के वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध का अन्तर रत्नप्रभापृथ्वी–नैरयिकों के समान जानना चाहिए। विशेष इतना है कि जिसकी जो जघन्य (आयु) स्थिति हो, उसके सर्वबन्ध का अन्तर, उससे अन्तर्मुहूर्त्त अधिक जानना चाहिए। शेष सारा कथन पूर्ववत् समझ लेना चाहिए।

78. Divine beings including *Asur Kumar*, *Naag Kumar* ... and so on up to ... Sahasrar gods follow the pattern of infernal beings of the *Ratnaprabha-prithvi*. The difference is that the minimum intervening period related to the bondage of the whole is one Antarmuhurt more than the minimum heaven-specific life-span. Rest all is same as aforesaid.

७९. [प्र.] जीवस्स णं भंते ! आणयदेवत्ते नोआणय० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अट्ठारससागरोवमाइं वासपुहत्तमब्भहियाइं; उक्कोसेणं अणंतं कालं, वणस्सइकालो। देसबंधंतरं जहन्नेणं वासपुहुत्तं; उक्कोसेणं अणंतं कालं, वणस्सइकालो। एवं जाव अच्चुए; नवरं जस्स जा ठिती सा सव्वबंधंतरे जहन्नेणं वासपुहत्तमब्भहिया कायव्वा, सेसं तं चेव।

७९. [प्र.] भगवन् ! आनत देवलोक में देवरूप से उत्पन्न कोई देव, (वहाँ से च्यवकर) आनत देवलोक के सिवाय दूसरे जीवों में उत्पन्न हो जाये, (फिर वहाँ से मरकर) पुनः आनत देवलोक में देवरूप से उत्पन्न हो, तो इस आनतदेव के वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध का अन्तर कितने काल का होता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! उसके सर्वबन्ध का अन्तर जघन्य वर्ष पृथक्त्व अधिक अठारह सागरोपम का और उत्कृष्ट अनन्तकाल–वनस्पतिकाल का होता है। देशबन्ध के अन्तर का काल जघन्य वर्षपृथक्त्व और उत्कृष्ट अनन्तकाल–वनस्पतिकाल का होता है। इसी प्रकार यावत् अच्युत देवलोक तक के वैक्रियशरीर प्रयोगबन्ध का अन्तर जानना चाहिए। विशेष इतना ही है कि जिसकी जितनी जघन्य (आयु) स्थिति हो, सर्वबंधान्तर में उससे वर्षपृथक्त्व–अधिक समझना चाहिए। शेष सारा कथन पूर्ववत् जान लेना चाहिए।

79. [Q.] What is the intervening period between one *Anat-devlok-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of divine beings of the Anat dimension) and the next in case of the divine being of the Anat *devlok* taking rebirth as some other class of living being and taking rebirth again as a divine being of the Anat *devlok* ?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of Varsh-prithakatva (two to nine years) plus eighteen Sagaropam and a maximum of infinite time or *Vanaspati-kaal*. The bondage of a part (*desh-bandh*) is a minimum of Varsh-prithakatva (two to nine years) and a maximum of infinite time or *Vanaspati-kaal*. The same is true for divine beings up to Achyut *Devlok*. The difference is that the minimum intervening period related to the bondage of the whole is one Varsh-prithakatva more than the minimum heaven-specific life-span. Rest all is same as aforesaid.

८०. [प्र.] गेवेज्जकप्पातीय० पुच्छा।

[उ.] **गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं बावीसं सागरोवमाइं वासपुहत्तमब्भहियाइं; उक्कोसेणं अणंतं कालं, वणस्सइकालो। देसबंधंतरं जहन्नेणं वासपुहत्तं, उक्कोसेणं वणस्सइकालो।**

८०. [प्र.] भगवन् ! ग्रैवेयक कल्पातीत वैक्रियशरीर–प्रयोगबंध का अंतर कितने काल का होता है ?

[उ.] गौतम ! सर्वबंध का अन्तर जघन्यतः वर्षपृथक्त्व–अधिक २२ सागरोपम का है और उत्कृष्टतः अनन्तकाल–वनस्पतिकाल का होता है। देशबन्ध का अन्तर जघन्यतः वर्षपृथक्त्व और उत्कृष्टतः वनस्पतिकाल का होता है।

80. Same question about Graiveyak Kalpateet gods ?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of Varsh-prithakatva (two to nine years) plus twenty-two Sagaropam and a maximum of infinite time or *Vanaspati-kaal*. The bondage of a part (*desh-bandh*) is a minimum of Varsh-prithakatva (two to nine years) and a maximum of infinite time or *Vanaspati-kaal*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८१. [प्र.] जीवस्स णं भंते ! अणुत्तरोववातिय० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! **सव्वबंधंतरं जहन्नेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं वासपुहत्तमब्भहियाइं, उक्कोसेणं संखेज्जाइं सागरोवमाइं। देसबंधंतरं जहन्नेणं वासपुहत्तं, उक्कोसेणं संखेज्जाइं सागरोवमाइं।**

८१. [प्र.] भगवन् ! कोई अनुत्तरौपपातिक देवरूप में रहा हुआ जीव वहाँ से च्यवकर, अनुत्तरौपपातिक देवों के अतिरिक्त किन्हीं अन्य स्थानों में उत्पन्न हो, और वहाँ से मरकर पुनः अनुत्तरौपपातिक देवरूप में उत्पन्न हो, तो उसके वैक्रियशरीर-प्रयोगबंध का अन्तर कितने काल का होता है ?

[उ.] गौतम ! उसके सर्वबन्ध का अन्तर जघन्यतः वर्षपृथक्त्व-अधिक इकतीस सागरोपम का और उत्कृष्टतः संख्यातसागरोपम का होता है। उसके देशबंध का अन्तर जघन्यतः वर्षपृथक्त्व का और उत्कृष्टतः संख्यात सागरोपम का होता है।

81. [Q.] What is the intervening period between one *Anuttaraupapatik-devlok-vaikriya-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to transmutable body formation of divine beings of the Anat dimension) and the next in case of the divine being of the *Anuttaraupapatik-devlok* taking rebirth as some other class of living being and taking rebirth again as a divine being of the *Anuttaraupapatik-devlok* ?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of Varsh-prithakatva (two to nine years) plus thirty one Sagaropam and a maximum of countable Sagaropam. The bondage of a part (*desh-bandh*) is a minimum of Varsh-prithakatva (two to nine years) and a maximum of countable Sagaropam.

अल्प-बहुत्व COMPARATIVE NUMBER

८२. [प्र.] **एएसि णं भंते ! जीवाणं वेउव्वियसरीरस्स देसबंधगाणं, सव्वबंधगाणं, अबंधगाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?**

[उ.] **गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा वेउव्वियसरीरस्स सव्वबंधगा, देसबंधगा असंखेज्जगुणा, अबंधगा अणंतगुणा।**

८२. [प्र.] भगवन् ! वैक्रियशरीर के इन देशबन्धक, सर्वबन्धक और अबन्धक जीवों में, कौन किनसे कम, अधिक, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! इनमें सबसे थोड़े वैक्रियशरीर के सर्वबन्धक जीव हैं; उनसे देशबन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं और उनसे अबन्धक जीव अनन्तगुणे हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

82. [Q.] *Bhante !* Of these beings with bondage related to transmutable body (*Vaikriya-sharira-bandh*) which are comparatively less, more, equal and much more—those with bondage of a part (*desh-bandhak*) or those with that of the whole (*sarva-bandhak*) or those with no-bondage (*abandhak*) at all ?

[Ans.] Gautam ! Minimum are those with bondage of the whole (*sarva-bandh*), much more than these are those with bondage of a part (*desh-bandh*) and uncountable times more than these are those with no bondage at all.

विवेचन : वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध के नौ कारण–औदारिकशरीर–बन्ध के सवीर्यता, सयोगता आदि आठ कारण तो पहले बतला दिये गये हैं, वे ही ८ कारण वैक्रियशरीर–बन्ध के हैं, नौवाँ कारण है–लब्धि। वैक्रियकरणलब्धि वायुकाय, पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्यों की अपेक्षा के कारण बताई गई है। अर्थात्–इन तीनों के वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध नौ कारणों से होता है, जबकि देवों और नारकों के आठ कारणों से ही वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध होता है; क्योंकि उनका वैक्रियशरीर भवप्रत्ययिक होता है।

वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध के रहने की काल–सीमा–वैक्रियशरीर–प्रयोगबन्ध भी दो प्रकार से होता है–देशबन्ध और सर्वबन्ध। वैक्रियशरीरी जीवों में उत्पन्न होता हुआ या लब्धि से वैक्रियशरीर बनाता हुआ कोई जीव प्रथम एक समय तक सर्वबन्धक रहता है। इसलिए **सर्वबन्ध जघन्य एक समय तक** रहता है। किन्तु कोई औदारिकशरीर वाला जीव वैक्रियशरीर धारण करते समय सर्वबन्धक होकर फिर मरकर देव या नारक हो तो प्रथम समय में वह सर्वबन्ध करता है, इस दृष्टि से वैक्रियशरीर के **'सर्वबन्ध' का उत्कृष्ट काल** दो समय का है। औदारिकशरीरी कोई जीव, वैक्रियशरीर करते हुए प्रथम समय में सर्वबन्धक होकर द्वितीय समय में देशबन्धक होता है और तुरन्त ही मरण को प्राप्त हो जाये तो देशबन्ध जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट एक समय कम ३३ सागरोपम का है; क्योंकि देवों और नारकों में उत्कृष्टस्थिति में उत्पद्यमान जीव प्रथम समय में सर्वबन्धक होकर शेष समयों (३३ सागरोपम में एक समय कम तक) में वह देशबन्धक ही रहता है।

वायुकाय, तिर्यंचपंचेन्द्रिय और मनुष्य के वैक्रियशरीरीय देशबन्ध की स्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त की होती है। नैरयिकों और देवों के वैक्रियशरीरीय देशबन्ध की स्थिति जघन्य तीन समय कम १० हजार वर्ष की और उत्कृष्ट एक समय कम तेतीस सागरोपम की होती है। *–(सूत्र ६६-७०, विशेष विवरण के लिए देखें, भगवतीसूत्र भाग–२, पृष्ठ ३८५)*

Elaboration—Nine causes of *Vaikriya-sharira-prayoga-bandh*—Eight causes of *Audarik-sharira-prayoga-bandh* including available potency (*saviryata*) and available intensity of thought (*sayogata*) have already been mentioned. The same causes are also applicable to *Vaikriya-sharira-prayoga-bandh*. There is one more cause in this case and that is *labdhi* or attaining of special power of body transmutation (*Vaikriyakaran labdhi*). Air-bodied beings, five-sensed animals and human beings acquire this. Thus these three acquire *Vaikriya-sharira-*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

prayoga-bandh due to nine reasons. The divine and infernal beings acquire this bondage due to eight causes. This is because in their case this capacity is *bhava-pratyayik* (congenital or acquired naturally by birth).

The lasting period of *Vaikriya-sharira-prayoga-bandh*—This bondage also takes place two ways—bondage of the whole (*sarva-bandh*) and bondage of a part (*desh-bandh*). A living being in the process of being born as a *bhava-pratyayik* (congenital) or undergoing transmutation remains a *sarva-bandhak* (one who acquires bondage of the whole) only at the first Samaya. That is why the minimum lasting period of this bondage is said to be one Samaya. However, when a living being with gross physical body acquires a transmutable body and immediately dies to take birth as a divine or infernal being he again undergoes this bonding of the whole for one Samaya. In this context the maximum lasting period of bondage of the whole (*sarva-bandh*) is said to be two Samaya. When a living being with gross physical body undergoes transmutation acquiring bondage of the whole (*sarva-bandh*) at the first Samaya and bondage of a part (*desh-bandh*) at the second Samaya but dies just after that, then the bondage of a part is for a minimum of one Samaya and maximum of one Samaya short in 33 Sagaropam. This is because divine and infernal beings, after the bondage of the whole at first Samaya, continue to acquire bondage of a part throughout their maximum life-span of 33 Sagaropam.

In air-bodied, five-sensed animals and human beings the bondage of a part for transmuted body is a minimum of one Samaya and maximum of one Antarmuhurt. In infernal and divine beings the bondage of a part lasts for a minimum of three Samaya short in ten thousand years and maximum of one Samaya short in 33 Sagaropam. (Aphorisms 66-70; for more details see *Bhagavati Sutra*, Part-2, p. 385)

आहारकशरीर–प्रयोगबन्ध निरूपण TYPES OF *AHARAK-SHARIRA-PRAYOGA-BANDH*

८३. [प्र.] आहारगसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! एगागारे पण्णत्ते।

८३. [प्र.] भगवन् ! आहारकशरीर–प्रयोगबन्ध कितने प्रकार का कहा है ?

[उ.] गौतम ! आहारकशरीर–प्रयोगबन्ध एक प्रकार का कहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

83. [Q.] *Bhante !* Of how many types is this *Aharak-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to telemigratory body formation) ?

[Ans.] Gautam ! It is only of one type.

८४. [प्र. १] जइ एगागारे पण्णत्ते किं मणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे ? किं अमणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे ?

[उ.] गोयमा ! मणुस्साहारगसरीप्पयोगबंधे, नो अमणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे।

८४. [प्र. १] भगवन् ! आहारकशरीर-प्रयोगबन्ध एक प्रकार का कहा है, तो वह मनुष्यों का होता है अथवा अमनुष्यों (मनुष्यों के सिवाय अन्य जीवों) का होता है ?

[उ.] गौतम ! मनुष्यों का आहारकशरीर-प्रयोगबन्ध होता है, अमनुष्यों का नहीं होता।

84. [Q. 1] If *Aharak-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to telemigratory body formation) is of one type does it occur in human beings or in non-human beings ?

[Ans.] Gautam ! The *Aharak-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to telemigratory body formation) occurs in human beings and not in non-human beings.

[२] एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओगाहणसंठाणे जाव इड्ढिपत्तपमत्तसंजयसम्मदिट्ठिपज्जत्त-संखेज्जवासाउय-कम्मभूमिगगब्भवक्कंतियमणुस्साहारगसरीरप्पयोगबंधे, णो अणिड्ढिपत्तपमत्त जाव आहारगसरीरप्पयोगबंधे।

[२] इस प्रकार इस अभिलाप द्वारा (प्रज्ञापनासूत्र के इक्कीसवें) 'अवगाहना-संस्थान-पद' में कहे अनुसार; यावत्-ऋद्धिप्राप्त-प्रमत्तसंयत-सम्यग्दृष्टि-पर्याप्त-संख्येयवर्षायुष्क-कर्मभूमिज-गर्भज-मनुष्य के आहारकशरीर-प्रयोगबन्ध होता है, परन्तु अनृद्धिप्राप्त (ऋद्धि को अप्राप्त), प्रमत्तसंयत-सम्यग्दृष्टि-पर्याप्त-संख्यातवर्षायुष्क-कर्मभूमिज-गर्भज-मनुष्य के नहीं होता है।

[2] Extend this statement by quoting from *Avagahana-samsthaan-pad* (the twenty first chapter of *Prajnapana Sutra*) ... and so on up to ... *Riddhiprapt-pramattasamyat-samyagdrishti-paryapt-sankhyeyavarh-syushk-karmabhumij-garbhaj-manushya* (righteous and accomplished but negligent fully developed human being, born out of womb, from the land of endeavour, having a life-span of countable years, and endowed with special powers) acquires this *Aharak-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to telemigratory body formation) and not *Anriddhiprapt-pramattasamyat-samyagdrishti-paryapt-sankhyeyavarh-sayushk-karmabhumij-garbhaj-manushya* (righteous and accomplished but negligent fully developed human being, born out of womb, from the land of endeavour, having a life-span of countable years, but without special powers).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८५. [प्र.] आहारगसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?

[उ.] गोयमा ! वीरियसजोगसद्दव्वयाए जाव लद्धिं पडुच्च आहारगसरीरप्पयोगणामाए कम्मस्स उदएणं आहारगसरीरप्पयोगबंधे।

८५. [प्र.] भगवन् ! आहारकशरीर-प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! सवीर्यता, सयोगता और सद्द्रव्यता, यावत् (आहारक) लब्धि के निमित्त से, आहारकशरीर-प्रयोग-नामकर्म के उदय से आहारकशरीर-प्रयोगबन्ध होता है।

85. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Aharak-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to telemigratory body formation)?

[Ans.] Gautam ! Depending upon available potency (*saviryata*), available intent of activity (*sayogata*) and available matter particles (*saddravyata*), and based on causative parameters like *karma*, ... and so on up to ... life-span (*ayushya*), and also due to attainment of special power (of telemigration), the *Aharak-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to telemigratory body formation) takes place through fruition (*udaya*) of *Aharak-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for telemigratory body formation).

८६. [प्र.] आहारगसरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देसबंधे, सव्वबंधे ?

[उ.] गोयमा ! देसबंधे वि, सव्वबंधे वि।

८६. [प्र.] भगवन् ! आहारकशरीर-प्रयोगबन्ध क्या देशबन्ध होता है, अथवा सर्वबन्ध होता है ?

[उ.] गौतम ! वह देशबन्ध भी होता है, सर्वबन्ध भी होता है।

86. [Q.] *Bhante !* Is *Aharak-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to telemigratory body formation) a bondage of a part (*desh-bandh*) or that of the whole (*sarva-bandh*)?

[Ans.] Gautam ! It is both, a bondage of a part (*desh-bandh*) as well as that of the whole (*sarva-bandh*).

८७. [प्र.] आहारगसरीरप्पओगबंधे णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! सव्वबंधे एक्कं समयं, देसबंधे जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेण वि अंतोमुहुत्तं।

८७. [प्र.] भगवन् ! आहारकशरीर-प्रयोगबन्ध, कालतः कितने काल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! आहारकशरीर-प्रयोगबन्ध का सर्वबन्ध एक समय तक रहता है; देशबन्ध जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्टतः भी अन्तर्मुहूर्त्त तक रहता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

87. [Q.] *Bhante !* In terms of time, how long does *Aharak-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to telemigratory body formation) last ?

[Ans.] Gautam ! The bondage of the whole (*sarva-bandh*) lasts for one Samaya only. The bondage of a part (*desh-bandh*) lasts for a minimum as well as a maximum of one Antarmuhurt.

८८. [प्र.] आहारगसरीरप्पयोगबंधंतरं णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! सव्वबंधंतरं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं अणंतं कालं–अणंताओ ओसप्पिणिउस्सप्पिणीओ कालओ, खेत्तओ अणंता लोया; अवड्ढपोग्गलपरियट्टं देसूणं। एवं देसबंधंतरं पि।

८८. [प्र.] भगवन् ! आहारकशरीर–प्रयोगबन्ध का अन्तर कितने काल का होता है ?

[उ.] गौतम ! इसके सर्वबन्ध का अन्तर जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्टतः अनन्तकाल; कालतः अनन्त–उत्सर्पिणी–अवसर्पिणीकाल होता है, क्षेत्रतः अनन्तलोक, देशोन (कुछ कम) अपार्ध (अर्द्ध) पुद्गलपरावर्तन होता है। इसी प्रकार देशबन्ध का अन्तर भी जानना चाहिए।

88. [Q.] What is the intervening period between one bondage and the next in case of the telemigratory body (*aharak sharira*) ?

[Ans.] Gautam ! This intervening period for the bondage of the whole (*sarva-bandh*) is a minimum of one Antarmuhurt and a maximum of infinite time—infinite progressive and regressive cycles of time. It is equivalent to uncountable *Ardha-pudgal-paravartan* (time taken by a soul to touch half of the matter particles in the *Lok*) involving infinite *Lok* (occupied space) in terms of area. The same is true for the bondage of a part (*desh-bandh*).

८९. [प्र.] एएसिं णं भंते ! जीवाणं आहारगसरीरस्स देसबंधगाणं, सव्वबंधगाणं, अबंधगाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा आहारगसरीरस्स सव्वबंधगा, देसबंधगा संखेज्जगुणा, अबंधगा अणंतगुणा।

८९. [प्र.] भगवन् ! आहारकशरीर के इन देशबन्धक, सर्वबन्धक और अबन्धक जीवों में कौन किनसे कम, अधिक, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! सबसे थोड़े आहारकशरीर के सर्वबन्धक जीव हैं, उनसे देशबन्धक संख्यातगुणे हैं और उनसे अबन्धक जीव अनन्तगुणे हैं।

89. [Q.] *Bhante !* Of these beings with bondage related to telemigratory (*Aharak-sharira-bandh*) which are comparatively less,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

more, equal and much more—those with bondage of a part (*desh-bandhak*) or those with that of the whole (*sarva-bandhak*) or those with no-bondage (*abandhak*) at all ?

[Ans.] Gautam ! Minimum are those with bondage of the whole (*sarva-bandh*), much more than these are those with bondage of a part (*desh-bandh*) and uncountable times more than these are those with no bondage at all.

विवेचन : आहारकशरीर–प्रयोगबन्ध के अधिकारी–केवल मनुष्य ही हैं। उनमें भी ऋद्धि (लब्धि) प्राप्त, प्रमत्त–संयत, सम्यग्दृष्टि, पर्याप्त, संख्यातवर्ष की आयु वाले, कर्मभूमि में उत्पन्न, गर्भज मनुष्य ही होते हैं।

आहारकशरीर–प्रयोगबन्ध की कालावधि–इसका सर्वबन्ध एक समय का ही होता है, और देशबन्ध जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त मात्र ही है, क्योंकि इसके पश्चात् आहारकशरीर रहता ही नहीं है।

आहारकशरीर–प्रयोगबन्ध का अन्तर–आहारकशरीर को प्राप्त हुआ जीव, प्रथम समय में सर्वबन्धक होता है, तदनन्तर अन्तर्मुहूर्त्त तक आहारकशरीरी रहकर पुनः अपने मूल औदारिकशरीर को प्राप्त हो जाता है। वहाँ अन्तर्मुहूर्त्त रहने के बाद पुनः संशयादि–निवारण के लिए उसे आहारकशरीर बनाने का कारण उत्पन्न होने पर पुनः आहारकशरीर बनाता है; और उसके प्रथम समय में वह सर्वबन्धक ही होता है। इस प्रकार सर्वबन्ध का अन्तर अन्तर्मुहूर्त्त का होता है। *–(विस्तार के लिए देखें, भगवतीसूत्र, भाग २, पृष्ठ ३८७)*

Elaboration—Only human beings are qualified for *Aharak-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to telemigratory body formation); and that too only the righteous and accomplished but negligent fully developed human being, born out of womb, from the land of endeavour, having a life-span of countable years, and endowed with special powers.

The lasting period of *Aharak-sharira-prayoga-bandh*—It lasts for a minimum as well as a maximum of one Antarmuhurt because after this the telemigratory body ceases to exist.

Intervening period—A living being (soul) creating a telemigratory body acquires bondage of the whole at the first Samaya, after that he possesses that telemigratory body for one Antarmuhurt and then regains his original gross physical body. If, in order to remove his doubts, there is again a need for a telemigratory body he repeats the same process again but every time the telemigratory body lasts only for one Antarmuhurt. (For more details see *Bhagavati Sutra*, Part-2, p. 387)

तैजस् शरीर–प्रयोगबन्ध निरूपण TYPES OF *TAIJAS-SHARIRA-PRAYOGA-BANDH*

९०. [प्र.] तेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–एगिंदियतेयासरीरप्पयोगबंधे, बेइंदिय०, तेइंदिय०, जाव पंचिंदियतेयासरीरप्पयोगबंधे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९०. [प्र.] भगवन् ! तैजस्‌शरीर–प्रयोगबन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! वह पाँच प्रकार का कहा गया है। वह इस प्रकार–एकेन्द्रिय–तैजस्‌शरीर–प्रयोगबन्ध, द्वीन्द्रिय–तैजस्‌शरीर–प्रयोगबन्ध, त्रीन्द्रिय–तैजस्‌शरीर–प्रयोगबन्ध, चतुरिन्द्रिय–तैजस्‌शरीर–प्रयोगबन्ध और पंचेन्द्रिय–तैजस्‌शरीर–प्रयोगबन्ध।

90. [Q.] *Bhante !* Of how many types is this *Taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to fiery body formation) ?

[Ans.] Gautam ! It is only of five types—*Ekendriya-taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to one-sensed fiery body formation), *Dvindriya-taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to two-sensed fiery body formation), *Trindriya-taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to three-sensed fiery body formation), *Chaturindriya-taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to four-sensed fiery body formation), and *Panchendriya-taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to five-sensed fiery body formation).

९१. [प्र.] एगिंदियतेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

[उ.] एवं एएणं अभिलावेणं भेदो जहा ओगाहणसंठाणे जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय–कप्पातीयवेमाणियदेवपंचिंदियतेयासरीरप्पयोगबंधे य अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय० जाव बंधे य।

९१. [प्र.] भगवन् ! एकेन्द्रिय–तैजस्‌शरीर–प्रयोगबन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! इस प्रकार इस अभिलाप द्वारा, जैसे–(प्रज्ञापनासूत्र के इक्कीसवें) अवगाहनासंस्थानपद में भेद कहे हैं, वैसे यहाँ भी यावत्–पर्याप्त–सर्वार्थसिद्ध–अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत–वैमानिकदेव–पंचेन्द्रिय–तैजस्‌शरीर–प्रयोगबन्ध और अपर्याप्त–सर्वार्थसिद्ध–अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत–वैमानिकदेव–पंचेंद्रिय–तैजस्‌शरीर–प्रयोगबन्ध; यहाँ तक कहना चाहिए।

91. [Q.] *Bhante !* Of how many types is this *Ekendriya-taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to one-sensed fiery body formation) ?

[Ans.] Gautam ! In answer quote the types from *Avagahana-samsthaan-pad* (the twenty first chapter of *Prajnapana Sutra*) ... and so on up to ... *Paryapt-sarvarthsiddha-anuttaraupapatik-kalpateet-vaimanik-panchendriya-taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to fiery body formation of fully developed five-sensed divine beings of *Paryapt-sarvarthsiddha-anuttaraupapatik* celestial vehicles beyond the *Kalps*) and *Aparyapt-sarvarthsiddha-anuttaraupapatik-kalpateet-vaimanik-panchendriya-taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to fiery body formation of underdeveloped five-sensed divine beings of *Paryapt-sarvarthsiddha-anuttaraupapatik* celestial vehicles beyond the *Kalps*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९२. [प्र.] तेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! **कस्स कम्मस्स उदएणं ?**

[उ.] गोयमा ! **वीरियसजोगसद्दव्वयाए जाव आउयं वा पडुच्च तेयासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं तेयासरीरप्पयोगबंधे।**

९२. [प्र.] भगवन् ! तैजस्‌शरीर-प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! सवीर्यता, सयोगता और सद्‌द्रव्यता, यावत् आयुष्य के निमित्त से, तथा तैजस्‌शरीर-प्रयोग-नामकर्म के उदय से तैजस्‌शरीर-प्रयोगबन्ध होता है।

92. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to fiery body formation) ?

[Ans.] Gautam ! Depending upon available potency (*saviryata*), available intent of activity (*sayogata*) and available matter particles (*saddravyata*), and based on causative parameters like *karma*, ... and so on up to ... life-span (*ayushya*), the *Taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to fiery body formation) takes place through fruition (*udaya*) of *Taijas-sharira-prayoga-naam-karma* (*karma* responsible for fiery body formation).

९३. [प्र.] तेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देसबंधे सव्वबंधे ?

[उ.] **गोयमा ! देसबंधे, नो सव्वबंधे।**

९३. [प्र.] भगवन् ! तैजस्‌शरीर-प्रयोगबन्ध क्या देशबन्ध होता है, अथवा सर्वबन्ध होता है ?

[उ.] गौतम ! देशबन्ध होता है, सर्वबन्ध नहीं होता।

93. [Q.] *Bhante !* Is *Taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to fiery body formation) a bondage of a part (*desh-bandh*) or that of the whole (*sarva-bandh*) ?

[Ans.] Gautam ! It is only bondage of a part (*desh-bandh*) and not that of the whole (*sarva-bandh*).

९४. [प्र.] तेयासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कालओ केवचिरं होइ ?

[उ.] **गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-अणाईए वा अपज्जवसिए, अणाईए वा सपज्जवसिए।**

९४. [प्र.] भगवन् ! तैजस्‌शरीर-प्रयोगबन्ध कालतः कितने काल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! तैजस्‌शरीर-प्रयोगबन्ध (कालतः) दो प्रकार का कहा गया है। वह इस प्रकार-(१) अनादि-अपर्यवसित, और (२) अनादि-सपर्यवसित।

94. [Q.] *Bhante !* In terms of time, how long does *Taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to fiery body formation) last ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! In terms of time *Taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to fiery body formation) is said to be of two types—(1) *anaadi-aparyavasit* (without a beginning and without an end) and (2) *anaadi-saparyavasit* (without a beginning and with an end).

९५. [प्र.] तेयासरीरप्पयोगबंधंतरं णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! अणाईयस्स अपज्जवसियस्स नत्थि अंतरं, अणाईयस्स सपज्जवसियस्स नत्थि अंतरं।

९५. [प्र.] भगवन् ! तैजसूशरीर-प्रयोगबन्ध का अन्तर, कालतः कितने काल का होता है।

[उ.] गौतम ! (इसके कालतः दो प्रकारों में से) न तो अनादि-अपर्यवसित तैजस्शरीर-प्रयोगबन्ध का अन्तर है और न ही अनादि सपर्यवसित तैजसूशरीर-प्रयोगबन्ध का अन्तर है।

95. [Q.] What is the intervening period between one bondage and the next in case of the fiery body (*taijas* sharira) ?

[Ans.] Gautam ! This intervening period does not exist in *Taijas-sharira-prayoga-bandh,* either of *anaadi-aparyavasit* type or *anaadi-saparyavasit* type.

९६. [प्र.] एएसि णं भंते ! जीवाणं तेयासरीरस्स देसबंधगाणं अबंधगाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा तेयासरीरस्स अबंधगा, देसबंधगा अणंतगुणा।

९६. [प्र.] भगवन् ! तैजस्शरीर के इन देशबन्धक और अबन्धक जीवों में कौन, किससे कम, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! तैजसूशरीर के अबन्धक (सिद्ध) जीव सबसे थोड़े हैं, उनसे देशबन्धक (सर्व संसारी) जीव अनन्तगुणे हैं।

96. [Q.] *Bhante !* Of these beings with bondage related to fiery (*Taijas-sharira-bandh*) which are comparatively less, more, equal and much more—those with bondage of a part (*desh-bandhak*) or those with no-bondage (*abandhak*) at all ?

[Ans.] Gautam ! Minimum are those with no bondage at all and infinite times more than these are those with bondage of a part (*desh-bandh*).

विवेचन : तैजसूशरीर-प्रयोगबन्ध का स्वरूप-तैजसूशरीर अनादि है, इसलिए इसका सर्वबन्ध नहीं होता। तैजसशरीर-प्रयोगबन्ध अभव्य-जीवों के अनादि-अपर्यवसित (अन्तरहित) होता है, जबकि भव्य जीवों के अनादि-सपर्यवसित (सान्त) होता है। तैजसूशरीर सर्व संसारी जीवों को सदैव रहता है, इसलिए तैजसशरीर-प्रयोगबन्ध का अन्तर नहीं होता। तैजसूशरीर के अबन्धक केवल सिद्ध जीव ही होते हैं, शेष सभी संसारी जीव इसके देशबन्धक हैं, इस दृष्टि से सबसे अल्प इसके अबन्धक बतलाए गये हैं, उनसे अनन्तगुणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देशबन्धक इसलिए बताये गये हैं कि शेष समस्त संसारी जीव सिद्ध जीवों से अनन्तगुणे हैं। *-(वृत्ति, पत्रांक ४१०)* तैजस शरीर, प्रयोग बंध, सवीर्यता, सयोगता, सद्रव्यता इनके प्रमादरूप कारण से कर्म, योग, भव और आयु की अपेक्षा और तेजस् शरीर नाम कर्म के उदय से होता है।

Elaboration—*Taijas-sharira-prayoga-bandh*—Existence of fiery body is without a beginning therefore there is no bondage of the whole in its case. *Taijas-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to fiery body formation) is without a beginning and without an end in case of living beings not destined to be liberated (*abhavya*) and without a beginning and with an end in case of living beings destined to be liberated (*bhavya*). As this bondage is ever existent in all worldly beings there is no intervening period with respect to this bondage. Only *Siddhas* are those with no-bondage (*abandhak*) and all the remaining living beings are with bondage of a part (*desh-bandhak*). As the number of living beings is infinite times more than the liberated souls it is said that minimum are those with no bondage at all and infinite times more than these are those with bondage of a part. *(Vritti, leaf 410)*

कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध के भेद–प्रभेद का निरूपण TYPES OF *KARMAN-SHARIRA-PRAYOGA-BANDH*

९७. [प्र.] कम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठविहे पण्णत्ते, तं जहा–नाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे जाव अंतराइयकम्मासरीरप्पयोगबंधे।

९७. [प्र.] भगवन् ! कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गौतम ! वह आठ प्रकार का कहा गया है। वह इस प्रकार है–ज्ञानावरणीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध, यावत्–अन्तराय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध।

97. [Q.] *Bhante !* Of how many types is this *Karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! It is of eight types—*Jnanavaraniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to knowledge obscuring *karmic* body formation) ... and so on up to ... *Antaraya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to power hindering *karmic* body formation).

आठ प्रकार के कर्मबन्ध के कारण CAUSES OF BONDAGE OF EIGHT TYPES OF *KARMAS*

९८. [प्र.] णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?

[उ.] गोयमा ! नाणपडिणीययाए णाणणिण्हवणयाए णाणंतराएणं णाणप्पदोसेणं णाणच्चासादणाए णाणविसंवादणाजोगेणं णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं णाणावरणिज्ज–कम्मासरीरप्पयोगबंधे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९८. [प्र.] भगवन् ! ज्ञानावरणीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! १. ज्ञान की प्रत्यनीकता (विपरीतता या विरोध) करने से, २. ज्ञान का निह्नव (अपलाप) करने से, ३. ज्ञान में अन्तराय देने से, ४. ज्ञान से प्रद्वेष करने (ज्ञान के दोष निकालने) से, ५. ज्ञान की अत्यन्त आशातना करने से, ६. ज्ञान के विसंवादन–योग से, तथा ७. ज्ञानावरणीय-कार्मणशरीर–प्रयोग–नामकर्म के उदय से ज्ञानावरणीय -कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध होता है।

98. [Q.] *Bhante* ! What *karma* is responsible for *Jnanavaraniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to knowledge obscuring *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Jnanavaraniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to knowledge obscuring *karmic* body formation) is acquired through (1) antagonism for knowledge (*jnana*), (2) misuse of knowledge, (3) obstructing knowledge, (4) showing contempt for knowledge, (5) distorting knowledge and (6) imparting wrong knowledge as well as through fruition (*udaya*) of *Jnanavaraniya-karman-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for knowledge obscuring *karmic* body formation).

९९. [प्र.] दरिसणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?

[उ.] गोयमा ! दंसणपडिणीययाए एवं जहा णाणावरणिज्जं, नवरं 'दंसण' नाम घेत्तव्वं जाव दंसणविसंवादणाजोगेणं दरिसणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगनाभाए कम्मस्स उदएणं जाव प्पओगबंधे।

९९. [प्र.] भगवन् ! दर्शनावरणीय-कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! दर्शन की प्रत्यनीकता से, इत्यादि जिस प्रकार ज्ञानावरणीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध के कारण कहे गये हैं, उसी प्रकार दर्शनावरणीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध के भी कारण जानने चाहिए। विशेष अन्तर इतना ही है कि यहाँ ('ज्ञान' के स्थान में) 'दर्शन' शब्द कहना चाहिए; यावत्–'दर्शन–विसंवादन–योग से, तथा दर्शनावरणीय–कार्मणशरीर–प्रयोग–नामकर्म के उदय से दर्शनावरणीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध होता है'; यहाँ तक कहना चाहिए।

99. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Darshanavaraniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to perception/faith obscuring *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Darshanavaraniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to perception/faith obscuring *karmic* body formation) is acquired through (1) antagonism for perception/faith (*darshan*) ... and so on repeating what has been said with regard to knowledge and replacing knowledge with perception/faith up to ... imparting wrong perception/

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

faith as well as through fruition (*udaya*) of *Darshanavaraniya-karman-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for perception/faith obscuring *karmic* body formation).

१००. [प्र.] **सायावेयणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कस्स कम्मस्स उदएणं ?**

[उ.] **गोयमा ! पाणाणुकंपयाए भूयाणुकंपयाए, एवं जहा सत्तमसए दुस्समा–उ (छट्ठ)द्देसए जाव अपरियावणयाए** (स. ७, उ. ६, सु. २४) **सायावेयणिज्जकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं सायावेयणिज्जकम्मा जाव पयोगबंधे।**

१००. [प्र.] भगवन् ! सातावेदनीय–कर्मशरीर -प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! प्राणियों पर अनुकम्पा करने से, भूतों (चार स्थावर जीवों) पर अनुकम्पा करने से इत्यादि, जिस प्रकार (भगवतीसूत्र के) सातवें शतक के दुःषम नामक छठे उद्देशक (सूत्र २४) में कहा है, उसी प्रकार यहाँ भी, यावत्–प्राणों, भूतों, जीवों और सत्त्वों को परिताप उत्पन्न न करने से तथा सातावेदनीय–कर्मशरीर–प्रयोग–नामकर्म के उदय से सातावेदनीय–कर्मशरीर–प्रयोगबन्ध होता है, यहाँ तक कहना चाहिए।

100. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Satavedaniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to pleasure experiencing *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Satavedaniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to pleasure experiencing *karmic* body formation) is acquired through being compassionate to one-sensed beings (*praanis*), being compassionate to four types of immobile beings (*bhoots*), etc. as mentioned in *Duhsham*, the sixth lesson of the seventh *Shatak* (of *Bhagavati Sutra*) up to through not causing torment to *Praan* (two, three, and four sensed beings), *Bhoot* (plant-bodied beings), *Jiva* (five sensed beings or animals, humans, gods and hell beings), and *Sattva* (earth-bodied beings, water-bodied beings, fire-bodied beings, and air-bodied beings), as well as through fruition (*udaya*) of *Satavedaniya-karman-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for pleasure experiencing *karmic* body formation).

१०१. [प्र.] **अस्सायावेयणिज्ज० पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! परदुक्खणयाए परसोयणयाए जहा सत्तमसए दुस्समा–उ (छट्ठ)द्देसए जाव परियावणयाए** (स. ७, उ. ६, सु. २८) **अस्सायावेयणिज्जकम्मा जाव पयोगबंधे।**

१०१. [प्र.] भगवन् ! असातावेदनीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! दूसरे जीवों को दुःख पहुँचाने से, उन्हें शोक उत्पन्न करने से इत्यादि; जिस प्रकार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सातवें शतक के दुःषम नाम के छठे उद्देशक में कहा है, उसी प्रकार यहाँ भी, यावत्–उन्हें परिताप उत्पन्न करने से तथा असातावेदनीय -कर्मशरीर–प्रयोग–नामकर्म के उदय से असातावेदनीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध होता है; यहाँ तक कहना चाहिए।

101. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Asatavedaniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to displeasure experiencing *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Asatavedaniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to displeasure experiencing *karmic* body formation) is acquired through causing pain to other living beings, causing grief to them etc. as mentioned in *Duhsham*, the sixth lesson of the seventh *Shatak* up to causing them torment, as well as through fruition (*udaya*) of *Asatavedaniya-karman-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for displeasure experiencing *karmic* body formation).

१०२. [प्र.] **मोहणिज्जकम्मासरीरप्पयोग० पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! तिव्वकोहयाए तिव्वमाणयाए तिव्वमायाए तिव्वलोभाए तिव्वदंसणमोहणिज्जयाए तिव्वचरित्तमोहणिज्जयाए मोहणिज्जकम्मासरीर० जाव पयोगबंधे।**

१०२. [प्र.] भगवन् ! मोहनीय–कर्मशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! तीव्र क्रोध से, तीव्र मान से, तीव्र माया से, तीव्र लोभ से, तीव्र दर्शनमोहनीय (मिथ्यात्व) से और तीव्र चारित्रमोहनीय (यहाँ नोकषाय चारित्रमोहनीय का ग्रहण अभिप्रेत हैं) से तथा मोहनीय–कार्मणशरीर–प्रयोग–नामकर्म के उदय से, मोहनीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध होता है।

102. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Mohaniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to deluding *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Mohaniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to deluding *karmic* body formation) is acquired through intense anger, intense conceit, intense deceit, intense greed, intense unrighteousness (fruition of perception/faith deluding *karma*), intense misconduct (fruition of conduct deluding *karma* other than the said passions), as well as through fruition (*udaya*) of *Mohaniya-karman-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for deluding *karmic* body formation).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०३. [प्र.] नेरइयाउयकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! पुच्छा०।

[उ.] गोयमा ! महारंभयाए महापरिग्गहयाए पंचिंदियवहेणं कुणिमाहारेणं नेरइयाउयकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं नेरइयाउयकम्मासरीर० जाव पयोगबंधे।

१०३. [प्र.] भगवन् ! नैरयिकायुष्य-कार्मणशरीर-प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! महारम्भ करने से, महापरिग्रह से, पंचेन्द्रिय जीवों का वध करने से और माँसाहार करने से, तथा नैरयिकायुष्य-कार्मणशरीर-प्रयोग-नामकर्म के उदय से, नैरयिकायुष्य-कार्मणशरीर-प्रयोगबन्ध होता है।

103. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Nairayik-ayushya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to infernal life-span determining *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Nairayik-ayushya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to infernal life-span determining *karmic* body formation) is acquired through indulgence in extreme sinful activities, extreme covetousness, killing five sensed living beings and eating meat, as well as through fruition (*udaya*) of *Nairayik-ayushya-karman-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for infernal life-span determining *karmic* body formation).

१०४. [प्र.] तिरिक्खजोणियाउयकम्मासरीरप्पयोग० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! माइल्लयाए नियडिल्लयाए अलियवयणेणं कूडतूल-कूडमाणेणं तिरिक्खजोणियकम्मासरीर जाव पयोगबंधे।

१०४. [प्र.] भगवन् ! तिर्यंचयोनिक-आयुष्य-कार्मणशरीर-प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! माया करने से, कूट माया (माया को छिपाने हेतु दूसरी गूढ़ माया) करने से, मिथ्या बोलने से, खोटा तोल और खोटा माप करने से, तथा तिर्यंचयोनिक-आयुष्य-कार्मणशरीर-प्रयोग-नामकर्म के उदय से तिर्यंचयोनिक-आयुष्य-कार्मणशरीर-प्रयोगबन्ध होता है।

104. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Tiryanch-yonik-ayushya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to animal life-span determining *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Tiryanch-yonik-ayushya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to animal life-span determining *karmic* body formation) is acquired through indulgence in deceit, greater deceit to hide simple deceit, telling lies, employing wrong weights and measures,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

as well as through fruition (*udaya*) of *Tiryanch-yonik-ayushya-karman-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for animal life-span determining *karmic* body formation).

१०५. [प्र.] **मणुस्सआउयकम्मासरीर० पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! पगइभद्दयाए पगइविणीययाए साणुक्कोसयाए अमच्छरियाए मणुस्साउयकम्मा० जाव पयोगबंधे।**

१०५. [प्र.] भगवन् ! मनुष्यायुष्य-कार्मणशरीर-प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! प्रकृति की भद्रता से, प्रकृति की विनीतता (नम्रता) से, दयालुता से, अमत्सरभाव से तथा मनुष्यायुष्य-कार्मणशरीर-प्रयोग-नामकर्म के उदय से, मनुष्यायुष्य-कार्मणशरीर-प्रयोगबन्ध होता है।

105. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Manushya-ayushya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to human life-span determining *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Manushya-ayushya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to human life-span determining *karmic* body formation) is acquired through nobility of nature, humbleness of nature, kindness, absence of jealousy, as well as through fruition (*udaya*) of *Manushya-ayushya-karman-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for human life-span determining *karmic* body formation).

१०६. [प्र.] **देवाउयकम्मासरीर० पुच्छा।**

[उ.] गोयमा ! **सरागसंजमेणं संजमासंजमेणं बालतवोकम्मेणं अकामनिज्जराए देवाउयकम्मासरीर. जाव पयोगबंधे।**

१०६. [प्र.] भगवन् ! देवायुष्य-कार्मणशरीर-प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! सराग-संयम से, संयमासंयम (देशविरति) से, बाल (अज्ञानपूर्वक) तपस्या से तथा अकामनिर्जरा से एवं देवायुष्य-कार्मणशरीर-प्रयोग-नामकर्म के उदय से, देवायुष्य-कार्मणशरीर-प्रयोगबन्ध होता है।

106. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Dev-ayushya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to divine life-span determining *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Dev-ayushya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to divine life-span determining *karmic* body formation) is acquired through restraint with attachment, partial restraint,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

misguided penance, and involuntary shedding of *karmas*, as well as through fruition (*udaya*) of *Dev-ayushya-karman-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for divine life-span determining *karmic* body formation).

१०७. [प्र.] सुभनामकम्मासरीर० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! **कायउज्जुययाए भावुज्जुययाए भासुज्जुययाए अविसंवायणजोगेणं सुभनामकम्मासरीर० जाव पयोगबंधे।**

१०७. [प्र.] भगवन् ! शुभनाम–कार्मणशरीर–प्रयोगबंध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! काया की ऋजुता (सरलता) से, भावों की ऋजुता से, भाषा की ऋजुता (सरलता) से तथा अविसंवादन योग से एवं शुभनाम–कार्मणशरीर–प्रयोग–नामकर्म के उदय से शुभनाम–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध होता है।

107. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Shubh-naam-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to noble destiny and species determining *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Shubh-naam-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to noble destiny and species determining *karmic* body formation) is acquired through simplicity of body (action), simplicity of thought, simplicity of speech (expression) and simplicity of behaviour, as well as through fruition (*udaya*) of *Shubh-naam-karman-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for noble destiny and species determining *karmic* body formation).

१०८. [प्र.] असुभनामकम्मासरीर० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! **कायअणुज्जुययाए भावअणुज्जुययाए भासअणुज्जुययाए विसंवायणाजोगेणं असुभनामकम्मा० जाव पयोगबंधे।**

१०८. [प्र.] भगवन् ! अशुभनाम–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! काया की वक्रता से, भावों की वक्रता से, भाषा की वक्रता (अनृजुता) से तथा विसंवादन–योग से एवं अशुभनाम–कार्मणशरीर–प्रयोग–नामकर्म के उदय से अशुभनाम–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध होता है।

108. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Ashubh-naam-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to ignoble destiny and species determining *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Ashubh-naam-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to ignoble destiny and species determining *karmic* body

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

formation) is acquired through perversity of body (action), perversity of thought, perversity of speech (expression) and perversity of behaviour, as well as through fruition (*udaya*) of *Ashubh-naam-karman-sharira-prayoga-naam-karma* (*karma* responsible for ignoble destiny and species determining *karmic* body formation).

१०९. [प्र.] उच्चागोयकम्मासरीर० पुच्छा।

[उ.] **गोयमा ! जातिअमदेणं कुलअमदेणं बलअमदेणं रूवअमदेणं तवअमदेणं सुयअमदेणं लाभअमदेणं इस्सरियअमदेणं उच्चागोयकम्मासरीर० जाव पयोगबंधे।**

१०९. [प्र.] भगवन् ! उच्च गोत्र–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! जातिमद न करने से, कुलमद न करने से, बलमद न करने से, रूपमद न करने से, तपोमद न करने से, श्रुतमद (ज्ञान का मद) न करने से, लाभमद न करने से और ऐश्वर्यमद न करने से तथा उच्च गोत्र–कार्मणशरीरप्रयोग–नामकर्म के उदय से उच्च गोत्र–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध होता है।

109. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Uchcha-gotra-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to high caste determining *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Uchcha-gotra-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to high caste determining *karmic* body formation) is acquired through absence of pride of caste, pride of family, pride of power, pride of appearance, pride of austerities, pride of knowledge, pride of gains, and pride of affluence, as well as through fruition (*udaya*) of *Uchcha-gotra-karman-sharira-prayoga-naam-karma* (*karma* responsible for high caste determining *karmic* body formation).

११०. [प्र.] नीयागोयकम्मासरीर० पुच्छा।

[उ.] **गोयमा ! जातिमदेणं कुलमदेणं बलमदेणं जाव इस्सरियमदेणं णीयागोयकम्मासरीर० जाव पयोगबंधे।**

११०. [प्र.] भगवन् ! नीच गोत्र कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! जातिमद करने से, कुलमद करने से, बलमद करने से, रूपमद करने से, तपोमद करने से, श्रुतमद करने से, लाभमद करने से और ऐश्वर्यमद करने से तथा नीच गोत्र–कार्मणशरीर–प्रयोग–नामकर्म के उदय से नीच गोत्र–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध होता है।

110. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Neech-gotra-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to low caste determining *karmic* body formation) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! *Neech-gotra-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to low caste determining *karmic* body formation) is acquired due to pride of caste, pride of family, pride of power, pride of appearance, pride of austerities, pride of knowledge, pride of gains, and pride of affluence, as well as through fruition (*udaya*) of *Neech-gotra-karman-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for low caste determining *karmic* body formation).

१११. [प्र.] अंतराइयकम्मासरीर० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दाणंतराएणं लाभंतराएणं भोगंतराएणं उवभोगंतराएणं वीरियंतराएणं अंतराइयकम्मासरीरप्पयोगनामाए कम्मस्स उदएणं अंतराइयकम्मासरीरप्पयोगबंधे।

१११. [प्र.] अन्तराय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध किस कर्म के उदय से होता है ?

[उ.] गौतम ! दानान्तराय से, लाभान्तराय से, भोगान्तराय से, उपभोगान्तराय से और वीर्यान्तराय से, तथा अन्तराय–कार्मणशरीर–प्रयोग–नामकर्म के उदय से अन्तराय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध होता है।

111. [Q.] *Bhante !* What *karma* is responsible for *Antaraya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to power hindering *karmic* body formation) ?

[Ans.] Gautam ! *Antaraya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to power hindering *karmic* body formation) is acquired due to acts of obstructing charity to others, gains of others, enjoyments of others, extended enjoyments of others, and potency of others, as well as through fruition (*udaya*) of *Antaraya-karman-sharira-prayoga-naam-karma (karma* responsible for power hindering *karmic* body formation).

११२. [प्र. १] णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! किं देसबंधे सव्वबंधे ?

[उ.] गोयमा ! देसबंधे, णो सव्वबंधे।

११२. [प्र. १] भगवन् ! ज्ञानावरणीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध क्या देशबन्ध है अथवा सर्वबन्ध है ?

[उ.] गौतम ! वह देशबन्ध है, सर्वबन्ध नहीं है।

112. [Q. 1] *Bhante !* Is *Jnanavaraniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to knowledge obscuring *karmic* body formation) a bondage of a part (*desh-bandh*) or that of the whole (*sarva-bandh*) ?

[Ans.] Gautam ! It is only a bondage of a part (*desh-bandh*) and not that of the whole (*sarva-bandh*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२] एवं जाव अंतराइयकम्मासरीरप्पओगबंधे।

[२] इसी प्रकार यावत् अन्तराय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध तक जानना चाहिए।

[2] The same is true for other aforesaid types of *karmic* bondage up to *Antaraya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to power hindering *karmic* body formation)

११३. [प्र.] णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–अणाईए सपज्जवसिए, अणाईए अपज्जवसिए वा, एवं जहा तेयगसरीरसंचिट्ठणा तहेव।

११३. [प्र.] भगवन् ! ज्ञानावरणीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध कालतः कितने काल तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञानावरणीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध (काल की अपेक्षा से) दो प्रकार का कहा गया है। यथा–अनादि–सपर्यवसित और अनादि–अपर्यवसित। जिस प्रकार तैजस्‌शरीर प्रयोगबन्ध का स्थितिकाल (सूत्र ९४ में) कहा है, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए।

113. [Q.] *Bhante !* In terms of time, how long does *Jnanavaraniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to knowledge obscuring *karmic* body formation) last ?

[Ans.] Gautam ! In terms of time *Jnanavaraniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to knowledge obscuring *karmic* body formation) is said to be of two types—(1) *anaadi-aparyavasit* (without a beginning and without an end) and (2) *anaadi-saparyavasit* (without a beginning and with an end). What has been said about lasting period of *Taijas-sharira-prayoga-bandh* (aphorism 94) should be repeated here.

११४. एवं जाव अंतराइयकम्मस्स।

११४. इसी प्रकार यावत्–अन्तरायकर्म–(कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध के स्थितिकाल) तक कहना चाहिए।

114. The same is true for other aforesaid types of *karmic* bondage up to *Antaraya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to power hindering *karmic* body formation).

११५. [प्र.] णाणावरणिज्जकम्मासरीरप्पयोगबंधंतरं णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा अणाईयस्स० एवं जहा तेयगसरीरस्स अंतरं तहेव।

११६. एवं जाव अंतराइयस्स।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११५. [प्र.] भगवन् ! ज्ञानावरणीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध का अन्तर कितने काल का होता है ?

[उ.] गौतम ! (ज्ञानावरणीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध के कालतः) अनादि–अपर्यवसित और अनादि–सपर्यवसित (इन दोनों रूपों) का अन्तर नहीं होता। जिस प्रकार तैजस्शरीर–प्रयोगबन्ध के अन्तर के विषय में कहा गया था, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए।

११६. इसी प्रकार यावत्–अन्तराय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध के अन्तर तक समझना चाहिए।

115. [Q.] What is the intervening period between one bondage and the next in case of the *Jnanavaraniya-karman-sharira* (knowledge obscuring *karmic* body) ?

[Ans.] Gautam ! This intervening period does not exist in *Jnanavaraniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to knowledge obscuring *karmic* body formation), either of *anaadi-aparyavasit* type or *anaadi-saparyavasit* type. What has been said about intervening period with regard to *Taijas-sharira-prayoga-bandh* (aphorism 94) should be repeated here.

116. The same is true for other aforesaid types of *karmic* bondage up to *Antaraya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to power hindering *karmic* body formation).

११७. [प्र.] **एएसि णं भंते ! जीवाणं नाणावरणिज्जस्स देसबंधगाणं, अबंधगाण य कयरे कयरेहिंतो. ?**

[उ.] **जाव अप्पाबहुगं जहा तेयगस्स।**

११७. [प्र.] भगवन् ! ज्ञानावरणीय–कार्मणशरीर के इन देशबन्धक और अबन्धक जीवों में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार तैजस्शरीर–प्रयोगबंध के देशबन्धकों एवं अबन्धकों के अल्प–बहुत्व के विषय में कहा है, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए।

117. [Q.] *Bhante !* Of these beings with bondage related to knowledge obscuring *karmic* body (*Jnanavaraniya-karman-sharira-bandh*) which are comparatively less, more, equal and much more—those with bondage of a part (*desh-bandhak*) or those with no-bondage (*abandhak*) at all ?

[Ans.] Gautam ! Repeat here what has been stated about comparative numbers of those with bondage of a part (*desh-bandh*) and those with no bondage (*abandhak*) in context of *Taijas-sharira-prayoga-bandh*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११८. एवं आउयवज्जं जाव अंतराइयस्स।

११८. इसी प्रकार आयुष्य को छोड़कर यावत् अन्तराय–कार्मणशरीर–प्रयोगबंध के देशबन्धकों और अबन्धकों के अल्प–बहुत्व के विषय में कहना चाहिए।

118. Except for life-span (*ayushya*), the aforesaid is true for all beings up to those with bondage of a part (*desh-bandh*) and those with no bondage (*abandhak*) in context of *Antaraya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to power hindering *karmic* body formation).

११९. [प्र.] आउयस्स पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा आउयस्स कम्मस्स देसबंधगा, अबंधगा संखेज्जगुणा।

११९. [प्र.] भगवन् ! आयुष्य–कार्मणशरीर–प्रयोगबंध के देशबन्धक और अबन्धक जीवों में कौन किससे कम, अधिक, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! आयुष्यकर्म के देशबन्धक जीव सबसे थोड़े हैं, उनसे अबन्धक जीव संख्यातगुणे हैं।

119. [Q.] *Bhante !* Of these beings with bondage related to life-span determining *karmic* body formation (*Ayushya-karman-sharira-bandh*) which are comparatively less, more, equal and much more—those with bondage of a part (*desh-bandhak*) or those with no-bondage (*abandhak*) at all ?

[Ans.] Gautam ! Of these minimum are those with bondage of a part (*desh-bandhak*) and countable times more than these are those with no-bondage (*abandhak*) at all.

विवेचन : कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध : स्वरूप, भेद एवं कारण–आठ प्रकार के कर्मों के पिण्ड को कार्मणशरीर कहते हैं। ज्ञानावरणीय–कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध आदि आठों के वे ही कारण बताये हैं जो उन–उन कर्मों के कारण हैं। जैसे–ज्ञानावरणीय के ६ कारण हैं, वे ही ज्ञानावरणीय कार्मणशरीर–प्रयोगबन्ध के हैं। इसी प्रकार अन्यत्र भी समझ लेना चाहिए। सभी के कारण मूल सूत्र में बताये जा चुके हैं। *–(विस्तार के लिए देखें भगवतीसूत्र, भाग २, पृष्ठ ३९५)*

Elaboration—*Karman-sharira-prayoga-bandh*—the lump or aggregate of eight types of *karma* particles is called *karman sharira* (*karmic* body). The causes of acquiring the said types of bondage including *Jnanavaraniya-karman-sharira-prayoga-bandh* (bondage related to knowledge obscuring *karmic* body formation) are the same that are the sources of respective *karmas*. For example there are six sources of *Jnanavaraniya-Karma* and the same six are the causes of bondage related to knowledge obscuring *karmic* body formation. The same is true in all other cases. All these have been stated in the original text. *(For more details see Bhagavati Sutra, part-2, p. 395)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२०. [प्र. १] जस्स णं भंते ! ओरालियसरीरस्स सव्वबंधे से णं भंते ! वेउव्वियसरीरस्स किं बंधए, अबंधए ?

[उ.] गोयमा ! नो बंधए, अबंधए।

[प्र. २] आहारगसरीरस्स किं बंधए, अबंधए ?

[उ.] गोयमा ! नो बंधए, अबंधए।

[प्र. ३] तेयासरीरस्स किं बंधए, अबंधए ?

[उ.] गोयमा ! बंधए, नो अबंधए।

[प्र. ४] जइ बंधए किं देसबंधए, सव्वबंधए ?

[उ.] गोयमा ! देसबंधए, नो सव्वबंधए।

[प्र. ५] कम्मासरीरस्स किं बंधए अबंधए ?

[उ.] जहेव तेयगस्स जाव देसबंधए, नो सव्वबंधए।

१२०. [प्र. १] भगवन् ! जिस जीव के औदारिकशरीर का सर्वबन्ध है, क्या वह जीव वैक्रियशरीर का बन्धक है या अबन्धक ?

[उ.] गौतम ! वह बन्धक नहीं, अबन्धक है।

[प्र. २] भगवन् ! (जिस जीव के औदारिकशरीर का सर्वबन्ध है) क्या वह जीव आहारकशरीर का बन्धक है या अबन्धक ?

[उ.] गौतम ! वह बन्धक नहीं, अबन्धक है।

[प्र. ३] भगवन् ! जिस जीव के औदारिक शरीर का सर्वबन्ध है, क्या वह जीव तैजस्शरीर का बन्धक है या अबन्धक ?

[उ.] गौतम ! वह बन्धक है, अबन्धक नहीं।

[प्र. ४] भगवन् ! यदि वह तैजस्शरीर का बन्धक है, तो क्या वह देशबन्धक है या सर्वबन्धक ?

[उ.] गौतम ! वह देशबन्धक है, सर्वबन्धक नहीं।

[प्र. ५] भगवन् ! औदारिकशरीर का सर्वबन्धक जीव कार्मणशरीर का बन्धक है या अबन्धक ?

[उ.] गौतम ! जैसे तैजस्शरीर के विषय में कहा है, वैसे यहाँ भी, यावत् देशबन्धक है, सर्वबन्धक नहीं, यहाँ तक कहना चाहिए।

120. [Q. 1] *Bhante !* A living being (soul) who has acquired bondage of the whole (*sarva-bandh*) of gross physical body (*audarik sharira*); does

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

he or does he not acquire the bondage of transmutable body (*vaikriya sharira*)?

[Ans.] He does not acquire that bondage; he remains free of this bondage.

[Q. 2] *Bhante !* (A soul who has acquired bondage of the whole of gross physical body) Does he or does he not acquire the bondage of telemigratory body (*aharak sharira*)?

[Ans.] He does not acquire that bondage; he remains free of this bondage.

[Q. 3] *Bhante !* (A soul who has acquired bondage of the whole of gross physical body) Does he or does he not acquire the bondage of fiery body (*taijas sharira*)?

[Ans.] He acquires that bondage; he does not remain free of this bondage.

[Q. 4] *Bhante !* If he acquires the bondage of fiery body, does he acquire the bondage of the whole (*sarva-bandh*) or a part (*desh-bandh*)?

[Ans.] He acquires the bondage of a part (*desh-bandh*), and not of the whole (*sarva-bandh*).

[Q. 5] *Bhante !* (A soul who has acquired bondage of the whole of gross physical body) Does he or does he not acquire the bondage of *karmic* body (*karman sharira*)?

[Ans.] What has been said with regard to fiery body should be repeated here ... and so on up to ... He acquires the bondage of a part (*desh-bandh*), and not of the whole (*sarva-bandh*).

१२१. [प्र.] जस्स णं भंते ! ओरालियसरीरस्स देसबंधे से णं भंते ! वेउव्वियसरीरस्स किं बंधए, अबंधए ?

[उ.] गोयमा ! नो बंधए, अबंधए।

१२१. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव के औदारिकशरीर का देशबन्ध है, भगवन् ! क्या वह वैक्रियशरीर का बन्धक है या अबन्धक ?

[उ.] गौतम ! वह बन्धक नहीं, अबन्धक है।

121. [Q.] *Bhante !* A living being (soul) who has acquired bondage of a part (*desh-bandh*) of gross physical body (*audarik sharira*); does he or does he not acquire the bondage of transmutable body (*vaikriya sharira*)?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] He does not acquire that bondage; he remains free of this bondage.

१२२. एवं जहेव सव्वबंधेणं भणियं तहेव देसबंधेण वि भाणियव्वं जाव कम्मगस्स।

१२२. जिस प्रकार सर्वबन्धक के विषय में (उपर्युक्त) कथन किया, उसी प्रकार देशबन्ध के विषय में भी यावत्-कार्मणशरीर तक कहना चाहिए।

122. The aforesaid statements about bondage of the whole should be repeated here for bondage of a part ... and so on up to ... *karmic* body.

१२३. [प्र. १] जस्स णं भंते ! वेउव्वियसरीरस्स सव्वबंधे से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स किं बंधए, अबंधए ?

[उ.] गोयमा ! नो बंधए, अबंधए।

१२३. [प्र. १] भगवन् ! जिस जीव के वैक्रियशरीर का सर्वबन्ध है, क्या वह औदारिकशरीर का बन्धक है या अबन्धक ?

[उ.] गौतम ! वह बन्धक नहीं, अबन्धक है।

123. [Q. 1] *Bhante !* A living being who has acquired bondage of transmutable body (*vaikriya sharira*) of the whole (*sarva-bandh*); does he or does he not acquire the bondage of gross physical body (*audarik sharira*)?

[Ans.] He does not acquire that bondage; he remains free of this bondage.

[२] आहारगसरीरस्स एवं चेव।

[२] इसी प्रकार आहारकशरीर के विषय में कहना चाहिए।

123. [2] The same is true for telemigratory body (*aharak sharira*).

[३] तेयगस्स कम्मगस्स य जहेव ओरालिएणं समं भणियं तहेव भाणियव्वं जाव देसबंधए, नो सव्वबंधए।

[३] तैजस् और कार्मणशरीर के विषय में जैसे औदारिकशरीर के साथ कथन किया है, वैसा ही कहना चाहिए, यावत् -वह देशबन्धक है, सर्वबन्धक नहीं, यहाँ तक कहना चाहिए।

123. [3] Fiery and *karmic* bodies follow the pattern of gross physical body ... and so on up to ... He acquires the bondage of a part (*desh-bandh*), and not of the whole (*sarva-bandh*).

१२४. [प्र. १] जस्स णं भंते ! वेउव्वियसरीरस्स देसबंधे से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स किं बंधए, अबंधए ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! नो बंधए, अबंधए।

१२४. [प्र. १] भगवन् ! जिस जीव के वैक्रियशरीर का देशबन्ध है, क्या वह औदारिकशरीर का बन्धक है, अथवा अबन्धक है ?

[उ.] गौतम ! वह बन्धक नहीं, अबन्धक है।

124. [Q. 1] *Bhante !* A living being (soul) who has acquired bondage of transmutable body (*vaikriya sharira*) of a part (*desh-bandh*); does he or does he not acquire the bondage of gross physical body (*audarik sharira*) ?

[Ans.] He does not acquire that bondage; he remains free of this bondage.

[२] एवं जहेव सव्वबंधेणं भणियं तहेव देसबंधेण वि भाणियव्वं जाव कम्मगस्स।

[२] इसी प्रकार जैसे वैक्रियशरीर के सर्वबन्ध के विषय में कहा गया, वैसे ही यहाँ भी देशबन्ध के विषय में यावत्-कार्मणशरीर तक कहना चाहिए।

[2] The aforesaid statements about bondage of the whole with regard to transmutable body should be repeated here for bondage of a part ... and so on up to ... *karmic* body.

१२५. [प्र. १] जस्स णं भंते ! आहारगसरीरस्स सव्वबंधे से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स किं बंधए, अबंधए ?

[उ.] गोयमा ! नो बंधए, अबंधए।

१२५. [प्र. १] भगवन् ! जिस जीव के आहारकशरीर का सर्वबन्ध है, वह जीव औदारिकशरीर का बन्धक है या अबन्धक ?

[उ.] गौतम ! वह बन्धक नहीं है, अबन्धक है।

125. [Q. 1] *Bhante !* A living being (soul) who has acquired bondage of telemigratory body (*aharak sharira*) of the whole (*sarva-bandh*); does he or does he not acquire the bondage of gross physical body (*audarik sharira*) ?

[Ans.] He does not acquire that bondage; he remain free of this bondage.

[२] एवं वेउव्वियस्स वि।

[२] इसी प्रकार वैक्रियशरीर के विषय में कहना चाहिए।

[2] The same is true for transmutable body (*vaikriya sharira*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[३] तेया–कम्माणं जहेव ओरालिएणं समं भणियं तहेव भाणियव्वं।

[३] तैजस् और कार्मणशरीर के विषय में जैसे औदारिकशरीर के साथ कहा, वैसे यहाँ (आहारकशरीर के साथ) भी कहना चाहिए।

[3] What has been stated about fiery and *karmic* bodies in context of gross physical body should be repeated here (with regard to telemigratory body).

१२६. [प्र.] जस्स णं भंते आहारागसरीरस्स देसबंधे से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स० ?

[उ.] एवं जहा आहारागसरीरस्स सव्वबंधेणं भणियं तहा देसबंधेण वि भाणियव्वं जाव कम्मगस्स।

१२६. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव के आहारकशरीर का देशबन्ध है, वह औदारिकशरीर का बन्धक है या अबन्धक ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार आहारकशरीर के सर्वबन्ध के विषय में कहा, उसी प्रकार उसके देशबन्ध के विषय में भी यावत्–कार्मणशरीर तक कहना चाहिए।

126. [Q.] *Bhante !* A living being (soul) who has acquired bondage of telemigratory body (*aharak sharira*) of a part (*desh-bandh*); does he or does he not acquire the bondage of gross physical body (*audarik sharira*) ?

[Ans.] The aforesaid statements about bondage of the whole with regard to transmutable body should be repeated here for bondage of a part ... and so on up to ... *karmic* body.

१२७. [प्र. १] जस्स णं भंते ! तेयासरीरस्स देसबंधे से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स किं बंधए, अबंधए ?

[उ.] गोयमा ! बंधए वा अबंधए वा।

१२७. [प्र. १] भगवन् ! जिस जीव के तैजस्शरीर का देशबन्ध है, वह औदारिकशरीर का बन्धक है या अबन्धक ?

[उ.] गौतम ! वह बन्धक भी है, अबन्धक भी है।

127. [Q. 1] *Bhante !* A living being (soul) who has acquired bondage of fiery body (*taijas sharira*) of a part (*desh-bandh*); does he or does he not acquire the bondage of gross physical body (*audarik sharira*) ?

[Ans.] He acquires that bondage; he remains free of this bondage as well.

[प्र. २] जइ बंधए किं देसबंधए, सव्वबंधए ?

[उ.] गोयमा ! देसबंधए वा, सव्वबंधए वा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. २] भगवन् ! यदि वह औदारिकशरीर का बन्धक है, तो वह क्या देशबन्धक है अथवा सर्वबन्धक है ?

[उ.] गौतम ! वह देशबन्धक भी है, सर्वबन्धक भी है।

127. [Q. 2] *Bhante !* If he acquires the bondage of gross physical body, does he acquire the bondage of the whole (*sarva-bandh*) or a part (*desh-bandh*) ?

[Ans.] He acquires the bondage of a part (*desh-bandh*), as well as that of the whole (*sarva-bandh*).

[प्र. ३] वेउव्वियसरीरस्स किं बंधए, अबंधए ?

[उ.] एवं चेव।

[प्र. ३] भगवन् ! तैजस्शरीर का बन्धक जीव वैक्रियशरीर का बन्धक है अथवा अबन्धक ?

[उ.] गौतम ! पूर्ववक्तव्यानुसार समझना चाहिए।

127. [Q. 3] *Bhante !* A living being (soul) who has acquired bondage of fiery body (*taijas sharira*); does he or does he not acquire the bondage of transmutable body (*vaikriya sharira*) ?

[Q.] Gautam ! Same as aforesaid.

[४] एवं आहारगसरीरस्स वि।

[४] इसी प्रकार आहारकशरीर के विषय में भी जानना चाहिए।

127. [Q. 4] The same is true for telemigratory body.

[प्र. ५] कम्मगसरीरस्स किं बंधए, अबंधए ?

[उ.] गोयमा ! बंधए, नो अबंधए।

[प्र. ५] भगवन् ! तैजस्शरीर का बन्धक जीव कार्मणशरीर का बन्धक है या अबन्धक ?

[उ.] गौतम ! वह बन्धक है, अबन्धक नहीं।

127. [Q. 5] *Bhante !* A living being (soul) who has acquired bondage of fiery body (*taijas sharira*); does he or does he not acquire the bondage of *karmic* body (*karman sharira*) ?

[Ans.] He acquires that bondage; he does not remain free of this bondage.

[प्र. ६] जइ बंधए किं देसबंधए, सव्वबंधए ?

[उ.] गोयमा ! देसबंधए, नो सव्वबंधए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. ६] भगवन् ! यदि वह कार्मणशरीर का बन्धक है तो देशबन्धक है या सर्वबन्धक ?

[उ.] गौतम ! वह देशबन्धक है, सर्वबन्धक नहीं।

127. [Q. 6] *Bhante !* If he acquires the bondage of *karmic* body (*karman sharira*), does he acquire the bondage of the whole (*sarva-bandh*) or a part (*desh-bandh*) ?

[Ans.] He acquires the bondage of a part (*desh-bandh*), and not that of the whole (*sarva-bandh*).

१२८. [प्र.] **जस्स णं भंते ! कम्मगसरीरस्स देसबंधए से णं भंते ! ओरालियसरीरस्स ?**

[उ.] **जहा तेयगस्स वत्तव्वया भणिया तहा कम्मगस्स वि भाणियव्वा जाव तेयासरीरस्स जाव देसबंधए, नो सव्वबंधए।**

१२८. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव के कार्मणशरीर का देशबन्ध है, वह औदारिकशरीर का बन्धक है या अबन्धक ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार तैजस्‌शरीर की वक्तव्यता कही है, उसी प्रकार कार्मणशरीर की भी, यावत्-'तैजस्‌शरीर' तक यावत्-देशबन्धक है, सर्वबन्धक नहीं, यहाँ तक कहना चाहिए।

128. [Q. 1] *Bhante !* A living being (soul) who has acquired bondage of *karmic* body (*karman sharira*) of a part (*desh-bandh*); does he or does he not acquire the bondage of gross physical body (*audarik sharira*) ?

[Ans.] What has been stated about fiery body should be repeated here with regard to *karmic* body ... and so on up to ... He acquires that bondage, he does not remain free of this bondage.

विवेचन : पाँच शरीरों में परस्पर बन्धक-अबन्धक-औदारिक और वैक्रिय, इन दो शरीरों का परस्पर एक साथ बन्ध नहीं होता, इसी प्रकार औदारिक और आहारकशरीर का भी एक साथ बन्ध नहीं होता। अतएव औदारिकशरीरबन्धक जीव वैक्रिय और आहारक का अबन्धक होता है, किन्तु तैजस् और कार्मणशरीर का औदारिकशरीर के साथ कभी विरह नहीं होता। इसीलिए वह इनका देशबन्धक होता है। इन दोनों शरीरों का सर्वबन्ध तो कभी होता ही नहीं।

तैजस्‌कार्मणशरीर का देशबन्धक औदारिकशरीर का बन्धक और अबन्धक कैसे-तैजस्‌शरीर और कार्मणशरीर का देशबन्धक जीव औदारिकशरीर का बन्धक भी होता है, अबन्धक भी, इसका कारण यह है कि विग्रहगति में वह अबन्धक होता है तथा वैक्रिय में हो या आहारक में, तब भी वह औदारिकशरीर का अबन्धक ही रहता है और शेष समय में बन्धक होता है। उत्पत्ति के प्रथम समय में वह सर्वबन्धक होता है, जबकि द्वितीय आदि समयों में वह देशबन्धक हो जाता है। *-(वृत्ति, पत्रांक ४२३)*

Elaboration—Bondage and non-bondage in five types of bodies—The bondage of gross physical and transmutable bodies can not be acquired at the same time. In the same way that of gross physical and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

telemigratory bodies too cannot be acquired at the same time. Therefore a living being (soul) acquiring the bondage of gross physical body does not acquire bondage of transmutable and telemigratory bodies. On the other hand fiery and *karmic* bodies are never separated from gross physical bodies. Therefore there is bondage of a part of these two types of bodies. The bondage of these two bodies is never that of the whole.

Why a living being acquiring bondage of a part of fiery and *karmic* bodies may and may not acquire bondage of gross physical body ? The explanation for this is that the living being (soul) does not acquire this bondage when he undergoes oblique movement (*vigraha gati*) at the time of rebirth. He also does not acquire bondage of gross physical body while he is in transmutable or telemigratory body. At all other times he acquires bondage. At the first Samaya of birth he acquires bondage of the whole and at the second and following Samayas he acquires bondage of a part.

देश–सर्वबन्धकों एवं अबन्धकों का अल्पबहुत्व COMPARATIVE NUMBERS

१२९. [प्र.] एएसि णं भंते ! जीवाणं ओरालिय–वेउव्विय–आहारग–तेया–कम्मासरीरगाणं देसबंधगाणं सव्वबंधगाणं अबंधगाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा आहारगसरीरस्स सव्वबंधगा १। तस्स चेव देसबंधगा संखेज्जगुणा २। वेउव्वियसरीरस्स सव्वबंधगा असंखेज्जगुणा ३। तस्स चेव देसबंधगा असंखेज्जगुणा ४। तेया–कम्मगाणं दुण्ह वि तुल्ला अबंधगा अणंतगुणा ५। ओरालियसरीरस्स सव्वबंधगा अणंतगुणा ६। तस्स चेव अबंधगा विसेसाहिया ७। तस्स चेव देसबंधगा असंखेज्जगुणा ८। तेया–कम्मगाणं देसबंधगा विसेसाहिया ९। वेउव्वियसरीरस्स अबंधगा विसेसाहिया १०। आहारगसरीरस्स अबंधगा विसेसाहिया ११।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ अट्ठमसए : नवमो उद्देसओ समत्तो॥

१२९. [प्र.] भगवन् ! इन औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस् और कार्मणशरीर के देशबन्धक, सर्वबन्धक और अबन्धक जीवों में कौन किनसे कम, अधिक, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! (१) सबसे थोड़े आहारकशरीर के सर्वबन्धक जीव हैं, (२) उनसे उसी (आहारकशरीर) के देशबन्धक जीव संख्यातगुणे हैं, (३) उनसे वैक्रियशरीर के सर्वबन्धक असंख्यातगुणे हैं, (४) उनसे वैक्रियशरीर के देशबन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं, (५) उनसे तैजस् और कार्मण, इन दोनों शरीरों के अबन्धक जीव अनन्तगुणे हैं, ये दोनों परस्पर तुल्य हैं, (६) उनसे औदारिकशरीर के सर्वबन्धक जीव अनन्तगुणे हैं, (७) उनसे औदारिकशरीर के अबन्धक जीव विशेषाधिक हैं, (८) उनसे उसी (औदारिकशरीर) के देशबन्धक असंख्यातगुणे हैं, (९) उनसे तैजस्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और कार्मणशरीर के देशबन्धक जीव विशेषाधिक हैं, (१०) उनसे वैक्रियशरीर के अबन्धक जीव विशेषाधिक हैं. और (११) उनसे आहारकशरीर के अबन्धक जीव विशेषाधिक हैं।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है. भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरण करते हैं।

129. [Q.] *Bhante !* Of these beings with bondage related to gross physical (*audarik sharira*), transmutable body (*vaikriya sharira*), telemigratory body (*aharak sharira*), fiery body (*taijas sharira*), *karmic* body (*karman sharira*), which are comparatively less, more, equal and much more—those with bondage of a part (*desh-bandhak*), those with bondage of the whole (*sarva-bandh*) and those with no-bondage (*abandhak*) at all ?

[Ans.] Gautam ! (1) Of these, minimum are those with bondage of the whole (*sarva bandhak*) of telemigratory body (*aharak sharira*); (2) countable times more than these are those with bondage of a part (*desh-bandhak*) of the same (telemigratory body); (3) countable times more than these are those with bondage of the whole (*sarva bandhak*) of transmutable body (*vaikriya sharira*); (4) countable times more than these are those with bondage of a part (*desh-bandhak*) of transmutable body (*vaikriya sharira*); (5) infinite times more than these are those without bondage of fiery body (*taijas sharira*) and *karmic* body (*karman sharira*), which are equal to each other; (6) infinite times more than these are those with bondage of the whole (*sarva bandhak*) of gross physical (*audarik sharira*); (7) much more than these are those without bondage of gross physical (*audarik sharira*); (8) innumerable times more than these are those with bondage of a part (*desh-bandhak*) of gross physical (*audarik sharira*); (9) much more than these are those with bondage of a part (*desh-bandhak*) of fiery body (*taijas sharira*) and *karmic* body (*karman sharira*); (10) much more than these are those without bondage of transmutable body (*vaikriya sharira*); and (11) much more than these are those without bondage of telemigratory body (*aharak sharira*).

"*Bhante !* Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : अल्पबहुत्व का कारण–(१) आहारकशरीर चौदहपूर्वधर मुनि विशेष प्रयोजन होने पर ही आहारकशरीर धारण करते हैं। फिर सर्वबन्ध का काल भी सिर्फ एक समय का है, अतएव आहारकशरीर के सर्वबन्धक सबसे अल्प हैं। (२) उनसे आहारकशरीर के देशबन्धक संख्यातगुणे हैं, क्योंकि देशबन्ध का काल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तर्मुहूर्त है। (३) उनसे वैक्रियशरीर के सर्वबन्धक असंख्यातगुणे हैं, क्योंकि आहारकशरीरधारी जीवों से वैक्रियशरीरी असंख्यातगुणे अधिक हैं। (४) उनसे वैक्रियशरीरधारी देशबन्धक जीव असंख्यातगुणे अधिक हैं, क्योंकि सर्वबन्ध से देशबन्ध का काल अंख्यातगुणा है। अथवा प्रतिपद्यमान सर्वबन्धक होते हैं, और पूर्वप्रतिपन्न देशबन्धक; अतः प्रतिपद्यमान की अपेक्षा पूर्वप्रतिपन्न असंख्यातगुणे हैं। (५) उनसे तैजस् और कार्मणशरीर के अबन्धक अनन्तगुणे हैं, क्योंकि इन दोनों शरीरों के अबन्धक सिद्ध भगवान हैं, जो वनस्पतिकायिक जीवों के सिवाय शेष सर्व संसारी जीवों से अनन्तगुणे हैं। (६) उनसे औदारिकशरीर के सर्वबन्धक जीव अनन्तगुणे हैं, क्योंकि वनस्पतिकायिक जीव भी औदारिकशरीरधारियों में हैं। (७) उनसे औदारिकशरीर के अबन्धक जीव इसलिए विशेषाधिक हैं, कि विग्रहगतिसमापपन्नक जीव तथा सिद्ध जीव सर्वबन्धकों से बहुत हैं। (८) उनसे औदारिकशरीर के देशबन्धक असंख्यातगुणे हैं, क्योंकि विग्रहगति के काल की अपेक्षा देशबन्धक का काल असंख्यातगुणा है। (९) उनसे तैजस्–कार्मणशरीर के देशबन्धक विशेषाधिक हैं, क्योंकि सारे संसारी जीव तैजस् और कार्मणशरीर के देशबन्धक होते हैं। इनमें विग्रहगति समापपन्नक, औदारिक सर्वबन्धक और वैक्रियादि–बन्धक जीव भी आ जाते हैं। अतः औदारिक देशबन्धकों से ये विशेषाधिक बताये गये हैं। (१०) उनसे वैक्रियशरीर के अबन्धक जीव विशेषाधिक हैं, क्योंकि वैक्रियशरीर के बन्धक प्रायः देव और नारक हैं। शेष सभी संसारी जीव और सिद्ध भगवान वैक्रिय के अबन्धक ही हैं, इस अपेक्षा से वे तैजसादि देशबन्धकों से विशेषाधिक बताये गये है। (११) उनसे आहारकशरीर के अबन्धक विशेषाधिक हैं, क्योंकि वैक्रिय तो देव–नारकों के भी होता है, किन्तु आहारकशरीर सिर्फ चतुर्दश पूर्वधर मुनियों के होता है। इस अपेक्षा से आहारकशरीर के अबन्धक विशेषाधिक कहे गये हैं। *–(वृत्ति, पत्रांक ४१४)*

॥ अष्टम शतक : नवम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Reasons for comparative numbers—(1) Only accomplished ascetics having knowledge of fourteen *Purvas* (subtle canon) create telemigratory body (*aharak sharira*) and that too for some special purpose. Moreover, this bondage of the whole lasts only for one Samaya. Thus the number of those with bondage of the whole (*sarva bandhak*) of telemigratory body is minimum. (2) Countable times more than these are those with bondage of a part (*desh-bandhak*) of telemigratory body because this bondage lasts for one Antarmuhurt. (3) Countable times more than these are those with bondage of the whole (*sarva bandhak*) of transmutable body (*vaikriya sharira*) because the total number of living beings with transmutable body is countable times more than those with telemigratory body. (4) Innumerable times more than these are those with bondage of a part (*desh-bandhak*) of transmutable body (*vaikriya sharira*) because the bondage of a part lasts for a period innumerable times more than the lasting period of the bondage of the whole; also, bondage of the whole is acquired by those who commence bonding, whereas bondage of a part is acquired by those who have passed the point of this commencement and the number of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

latter is innumerable times more than that of the former. (5) Infinite times more than these are those without bondage of fiery body (*taijas sharira*) and *karmic* body (*karman sharira*), which are equal to each other; this is because only *Siddhas* (liberated souls) are without these two types of bondage and except for plant-bodied beings they are infinite times more than all other worldly beings. (6) Infinite times more than these are those with bondage of the whole (*sarva bandhak*) of gross physical (*audarik sharira*); this is because plant-bodied beings are also among those with gross physical body. (7) Much more than these are those without bondage of gross physical (*audarik sharira*); this is because the number of souls with oblique movement and the liberated ones is much more than those with bondage of the whole. (8) Innumerable times more than these are those with bondage of a part (*desh-bandhak*) of gross physical (*audarik sharira*); this is because the lasting period of bondage of a part is innumerable times more than that of oblique movement. (9) Much more than these are those with bondage of a part (*desh-bandhak*) of fiery body (*taijas sharira*) and karmic body (*karman sharira*); this is because all the worldly beings acquire bondage of a part (*desh-bandhak*) of fiery body (*taijas sharira*) and karmic body. These also include the souls that have undergone oblique movement, those who acquire bondage of the whole of gross physical body, transmutable body etc. (10) Much more than these are those without bondage of transmutable body (*vaikriya sharira*); this is because generally divine and infernal beings acquire this bondage. Almost all the remaining worldly beings, including liberated souls, do not acquire this bondage. (11) Much more than these are those without bondage of telemigratory body (*aharak sharira*); this is because the preceding bondage of transmutable body is acquired by divine and infernal beings also and this bondage is acquired only by ascetics with knowledge of fourteen *Purvas*. *(Vritti, leaf 414)*

● END OF THE NINTH LESSON OF THE EIGHTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दसमो उद्देसओ : 'आराहणा'

अष्टम शतक : दशम उद्देशक : 'आराधना'

EIGHTH SHATAK (Chapter Eight) : TENTH LESSON : ARAADHANA (SPIRITUAL ENDEAVOUR)

श्रुत–शील की आराधना–विराधना SPIRITUAL ENDEAVOUR OF A RIGHTEOUS ASCETIC

१. रायगिहे नगरे जाव एवं वयासी–

१. राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा–

1. In Rajagriha and so on up to... (Gautam Swami) submitted as follows—

२. [प्र.] अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति जाव एवं परूवेंति–एवं खलु सीलं सेयं १, सुयं सेयं २, सुयं सेयं सीलं सेयं ३, से कहमेयं भंते ! एवं ?

[उ.] गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया एवमाइक्खंति जाव जे ते एवमाहंसु मिच्छा ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि–एवं खलु मए चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा–सीलसंपन्ने णामं एगे, णो सुयसंपन्ने १।

सुयसंपन्ने नामं एगे, नो सीलसंपन्ने २।

एगे सीलसंपन्ने वि सुयसंपन्ने वि ३।

एगे णो सीलसंपन्ने नो सुयसंपन्ने ४।

(१) तत्थ णं जे से पढमे पुरिसजाए से णं पुरिसे सीलवं, असुयवं, उवरए, अविण्णायधम्मे, एस णं गोयमा ! मए पुरिसे देसाराहए पण्णत्ते।

(२) तत्थ णं जे से दोच्चे पुरिसजाए से णं पुरिसे असीलवं, सुयवं, अणुवरए, विण्णायधम्मे, एस णं गोयमा ! मए पुरिसे देसविराहए पण्णत्ते।

(३) तत्थ णं जे से तच्चे पुरिसजाए से णं पुरिसे सीलवं, सुयवं, उवरए, विण्णायधम्मे, एस णं गोयमा ! मए पुरिसे सव्वाराहए पण्णत्ते।

(४) तत्थ णं जे से चउत्थे पुरिसजाए से णं पुरिसे असीलवं, असुयवं, अणुवरए, अविण्णायधम्मे एस णं गोयमा ! मए पुरिसे सव्वविराहए पण्णत्ते।

२. [प्र.] भगवन् ! अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं–(१) शील ही श्रेयस्कर है; (२) श्रुत ही श्रेयस्कर है, (३) (शीलनिरपेक्ष ही) श्रुत श्रेयस्कर है, अथवा (श्रुतनिरपेक्ष ही) शील श्रेयस्कर है; अतः हे भगवन् ! यह किस प्रकार सम्भव है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! अन्यतीर्थिक जो इस प्रकार कहते हैं, यावत् उन्होंने जो ऐसा कहा है वह मिथ्या कहा है। गौतम ! मैं इस प्रकार कहता हूँ, यावत् प्ररूपणा करता हूँ। मैंने चार प्रकार के पुरुष कहे हैं। वे इस प्रकार हैं–

(१) एक व्यक्ति शील–सम्पन्न है, किन्तु श्रुत–सम्पन्न नहीं है।

(२) एक व्यक्ति श्रुत–सम्पन्न है, किन्तु शील–सम्पन्न नहीं है।

(३) एक व्यक्ति शील–सम्पन्न भी है और श्रुत–सम्पन्न भी है।

(४) एक व्यक्ति न शील–सम्पन्न है और न श्रुत–सम्पन्न है।

(१) इनमें से जो प्रथम प्रकार का पुरुष है, वह शीलवान् है, परन्तु श्रुतवान् नहीं। वह (पापादि से) उपरत (निवृत्त) है, किन्तु धर्म को विशेष रूप से नहीं जानता। हे गौतम ! इस पुरुष को मैंने देश–आराधक (आंशिक आराधक) कहा है।

(२) इनमें से जो दूसरा पुरुष है, वह पुरुष शीलवान् नहीं, परन्तु श्रुतवान् है। वह पापादि से (अनिवृत्त) है, परन्तु धर्म को विशेष रूप से जानता है। हे गौतम ! इस पुरुष को मैंने **देश–विराधक** (आंशिक विराधक) कहा है।

(३) इनमें से जो तृतीय पुरुष है, वह पुरुष शीलवान् भी है और श्रुतवान् भी है। वह (पापादि से) उपरत है और धर्म का भी विज्ञाता है। हे गौतम ! इस पुरुष को मैंने **सर्व–आराधक** कहा है।

(४) इनमें से जो चौथा पुरुष है, वह न तो शीलवान् है और न श्रुतवान् है। वह (पापादि से) अनुपरत है, धर्म का भी विज्ञाता नहीं है। गौतम ! इस पुरुष को मैंने **सर्व–विराधक** कहा है।

2. [Q.] *Bhante* ! People of other faiths (*anyatirthik*) or heretics say (*akhyanti*) ... and so on up to... propagate (*prarupayanti*) that—(1) Right conduct (*sheel*) alone is beneficial; (2) the canon (*shrut*) alone is beneficial; (3) either the canon (independent of right conduct) is beneficial or right conduct (independent of the canon) is beneficial. *Bhante* ! How far is this correct.

[Ans.] Gautam ! What the heretics say ... and so on up to... propagate is false. Gautam ! What I say ... and so on up to... propagate (in this regard) is that there are four kinds of people as follows—

(1) One is endowed with right conduct (*sheel*) but not with the canon.

(2) One is endowed with the canon but not with right conduct.

(3) One is endowed with right conduct as well as the canon.

(4) One is endowed neither with right conduct nor with the canon.

(1) First of these is endowed with right conduct (*sheel*) but not with the canon. He refrains from indulgence in sinful activities but is not fully

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

conversant with the right code of conduct. Gautam ! I call such person a *desh-araadhak* (partially steadfast spiritual aspirant).

(2) Second of these is not endowed with right conduct but knows the canon. He does not refrain from indulgence in sinful activities but is fully conversant with the right code of conduct. Gautam ! I call such person a *desh-viraadhak* (partially faltering spiritual aspirant).

(3) Third of these is endowed with right conduct as well as the canon. He is free of indulgence in sinful activities and is also fully conversant with the right code of conduct. Gautam ! I call such person a *sarva-araadhak* (fully steadfast spiritual aspirant).

(4) Fourth of these is endowed neither with right conduct nor with the canon. He is neither free of indulgence in sinful activities nor fully conversant with the right code of conduct. Gautam ! I call such person a *sarva-viraadhak* (fully faltering spiritual aspirant).

विवेचन : श्रुत और शील की आराधना एवं विराधना की दृष्टि से भगवान द्वारा अन्यतीर्थिक मत निराकरणपूर्वक स्वसिद्धान्तप्ररूपण–प्रस्तुत द्वितीय सूत्र में अन्यतीर्थिकों की श्रुत–शील सम्बन्धी एकान्त मान्यता का निराकरण करते हुए भगवान द्वारा प्रतिपादित श्रुत–शील की आराधना–विराधना–सम्बन्धी चतुर्भंगी रूप स्वसिद्धान्त प्रस्तुत किया गया है।

अन्यतीर्थिकों की श्रुत–शीलसम्बन्धी मिथ्या मान्यताएँ–(१) कुछ अन्यतीर्थिक यों मानते हैं कि शील अर्थात् क्रिया मात्र ही श्रेयस्कर है, श्रुत अर्थात् ज्ञान से कोई प्रयोजन नहीं। (२) कुछ अन्यतीर्थिकों का कहना है कि ज्ञान (श्रुत) ही श्रेयस्कर है। ज्ञान से ही अभीष्ट अर्थ की सिद्धि होती है, क्रिया से नहीं। ज्ञानरहित क्रियावान् पुरुष को अभीष्ट फलसिद्धि के दर्शन नहीं होते। (३) कितने ही अन्यतीर्थिक परस्पर निरपेक्ष श्रुत और शील को श्रेयस्कर मानते हैं। उनका कहना है कि ज्ञान क्रियारहित भी फलदायक है, क्योंकि क्रिया उसमें गौण रूप से रहती है, अथवा क्रिया ज्ञानरहित हो तो भी फलदायिनी है, क्योंकि उसमें ज्ञान गौण रूप से रहता है। इन दोनों में से कोई भी एक, पुरुष की पवित्रता का कारण है।

प्रथम के दोनों मत एकान्त होने से मिथ्या हैं, क्योंकि श्रुत और शील दोनों पृथक्-पृथक् या गौण-मुख्य न रहकर समुदित रूप में साथ–साथ रहने पर ही मोक्षफलदायक होते हैं। इस सम्बन्ध में वृत्तिकार ने दो दृष्टान्त दिये हैं–(१) जैसे रथ के दोनों पहियों के एक साथ जुड़ने पर ही रथ चलता है, तथा (२) अन्धा और पंगु दोनों मिलकर ही अभीष्ट नगर में प्रविष्ट हो सकते हैं–

संजोगसिद्धीइ फलं वयंति, न हु एगचक्केण रहो पयाइ।
अंधो य पंगू य वणे समिच्चा, ते संपउत्ता नगरं पविट्ठा ॥

अतः श्रुत और शील दोनों के एक साथ समायोग को ही अभीष्ट फलदायक मानते हैं।

श्रुत–शील की चतुर्भंगी का आशय–(१) प्रथम भंग का स्वामी शील–सम्पन्न है, श्रुत-सम्पन्न नहीं, उसका आशय यह है कि स्वबुद्धि से ही पापों से निवृत्त हुआ है। उसने धर्म को विशेष रूप नहीं जाना। इस भंग का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वामी मिथ्यादृष्टि नहीं, किन्तु सम्यग्दृष्टि है। (२) दूसरे भंग का स्वामी शील-सम्पन्न नहीं, किन्तु श्रुत-सम्पन्न है, वह पापादि से अनिवृत्त है, किन्तु धर्म का विशेष ज्ञाता है। इसलिए उसे यहाँ देशविराधक कहा गया है। क्योंकि वह ज्ञान दर्शन चारित्ररूप रत्नत्रय जो मोक्षमार्ग है, उसमें से तृतीय भागरूप चारित्र की आराधना नहीं करता है। इस भंग का स्वामी अविरतिसम्यग्दृष्टि है। (३) तृतीय भंग का स्वामी शील-सम्पन्न भी है और श्रुत-सम्पन्न भी। वह उपरत है तथा धर्म का भी विशिष्ट ज्ञाता है। अतः वह सर्वाराधक है। (४) चतुर्थ भंग का स्वामी शील और श्रुत दोनों से रहित है। वह धर्म का विज्ञाता भी नहीं; और न ही सम्यक्चारित्र की आराधना कर सकता है। इसलिए रत्नत्रय का विराधक होने से वह सर्वविराधक माना गया है। *-(वृत्ति, पत्रांक ४१८)*

Elaboration—Refuting the heretics and establishing the canon and right conduct—Here aphorism-2 presents Bhagavan Mahavir's doctrine of steadfast and faltering practice (*araadhana* and *viraadhana*) of the canon (*shrut*) and right conduct (*sheel*) propagated after refuting the dogmatic belief of heretics regarding the canonical knowledge and conduct.

The wrong belief of heretics—(1) Some heretics believe that action (*sheel* or right conduct) alone is beneficial; there is no importance of knowledge (*shrut* or the canon). (2) Some other heretics say that knowledge (*shrut*) alone is beneficial. It is through knowledge alone, and not action, that desired goal is attained. In absence of knowledge a person does not attain the desired goal through action. (3) Many other heretics believe that mutually independent knowledge and conduct both are beneficial. They say that knowledge without action is also fruitful because inherent to it is a minor part of action. The same is true for action without knowledge because inherent to it is a minor part of knowledge. Any one of these can be the instrument of purity of an individual.

The first two statements are wrong because they are absolutistic. Moreover, knowledge and action separately or in major-minor combinations cannot lead to liberation. They lead to liberation only when they are complete and together. In this context the commentator (author of the *Vritti*) has given two examples—(1) A chariot is capable of movement only when it has two wheels together. (2) When together, a blind person and a lame person can reach their destination. Therefore, it is only the perfect combination of knowledge (*shrut*) and action (*sheel*) that gives the desired results.

The meaning of the four alternative combinations of *shrut* and *sheel*—(1) The first one is endowed with right conduct (*sheel*) but not

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

with the canon. He is free of indulgence in sinful activities of his own accord. He has not fully studied and understood religion or the right code of conduct. He is righteous (*samyagdrishti*) and not unrighteous (*mithyadrishti*). (2) The second one is not endowed with right conduct but knows the canon. He is not free of indulgence in sinful activities but has enough knowledge of the canon. That is why he is called a *desh-viraadhak* (partially faltering spiritual aspirant). This is because out of the three branches of the spiritual path (*jnana-darshan-chaaritra* or knowledge-faith-conduct) he does not follow the third branch. He is righteous but with attachment (*avirat-samyagdrishti*). (3) The third one is endowed with right conduct as well as the canon. He is free of indulgence in sinful activities and is also fully conversant with the right code of conduct. Therefore he is a *sarva-araadhak* (fully steadfast spiritual aspirant). (4) The fourth one is endowed neither with right conduct nor with the canon. He is neither conversant with religion nor capable of following the right code of conduct. He goes against the three-fold path of liberation, and so he is said to be a *sarva-viraadhak* (fully faltering spiritual aspirant). *(Vritti, leaf 418)*

ज्ञान–दर्शन–चारित्र की आराधना का फल **FRUITS OF THE PATH OF JNANA-DARSHN-CHAARITRA**

३. [प्र.] कतिविहा णं भंते ! आराहणा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तिविहा आराहणा पण्णत्ता, तं जहा–नाणाराहणा दंसणाराहणा चरित्ताराहणा।

३. [प्र.] भगवन् ! आराधना कितने प्रकार की कही गई है ?

[उ.] गौतम ! आराधना तीन प्रकार की कही गई है–(१) ज्ञानाराधना, (२) दर्शनाराधना, और (३) चारित्राराधना।

3. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is spiritual endeavour (*araadhana*)?

[Ans.] Gautam ! Spiritual endeavour (*araadhana*) is said to be of three types—(1) *Jnana-araadhana* (practice of right knowledge), (2) *Darshan-araadhana* (practice of right perception/faith), and (3) *Chaaritra-araadhana* (practice of right conduct).

४. [प्र.] णाणाराहणा णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तं जहा–उक्कोसिया, मज्झिमिया, जहन्ना।

४. [प्र.] भगवन् ! ज्ञानाराधना कितने प्रकार की कही गई है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! ज्ञानाराधना तीन प्रकार की कही गई है-(१) उत्कृष्ट, (२) मध्यम, और (३) जघन्य।

4. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *Jnana-araadhana* (practice of right knowledge)?

[Ans.] Gautam ! *Jnana-araadhana* (practice of right knowledge) is said to be of three types—(1) Superlative (*utkrisht*), (2) mediocre (*madhyam*) and (3) lowly (*jaghanya*).

५. दंसणाराहणा णं भंते ! एवं चेव तिविहा वि।

६. एवं चरित्ताराहणा वि।

५. भगवन् ! दर्शनाराधना कितने प्रकार की कही गई है? दर्शनाराधना भी इसी प्रकार तीन प्रकार की कही गई है।

5. *Bhante !* Of how many types is *Darshan-araadhana* (practice of right perception/faith)?

[Ans.] As aforesaid, *Darshan-araadhana* is also of three kinds.

६. इसी प्रकार चारित्राराधना भी तीन प्रकार की कही गई है।

6. The same is also true for *Chaaritra-araadhana* (practice of right conduct).

७. [प्र.] जस्स णं भंते ! उक्कोसिया णाणाराहणा तस्स उक्कोसिया दंसणाराहणा ? जस्स उक्कोसिया दंसणाराहणा तस्स उक्कोसिया णाणाराहणा ?

[उ.] गोयमा ! जस्स उक्कोसिया णाणाराहणा तस्स दंसणाराहणा उक्कोसिया वा अजहन्नउक्कोसिया वा, जस्स पुण उक्कोसिया दंसणाराहणा तस्स नाणाराहणा उक्कोसा वा जहन्ना वा अजहन्नमणुक्कोसा वा।

७. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव की उत्कृष्ट ज्ञानाराधना होती है, क्या उसकी दर्शनाराधना भी उत्कृष्ट होती है? जिस जीव की उत्कृष्ट दर्शनाराधना होती है, क्या उसकी उत्कृष्ट ज्ञानाराधना भी उत्कृष्ट होती है?

[उ.] गौतम ! जिस जीव की उत्कृष्ट ज्ञानाराधना होती है, उसकी दर्शनाराधना उत्कृष्ट या मध्यम होती है। जिस जीव की उत्कृष्ट दर्शनाराधना होती है, उसकी उत्कृष्ट, जघन्य या मध्यम ज्ञानाराधना होती है।

7. [Q.] *Bhante !* Does a living being having superlative practice of right knowledge (*Utkrisht Jnana-araadhana*) also have superlative practice of right perception/faith (*Utkrisht Darshan-araadhana*)? And, does a living being having superlative practice of right perception/faith

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(*Utkrisht Darshan-araadhana*) also have superlative practice of right knowledge (*Utkrisht Jnana-araadhana*) ?

[**Ans.**] Gautam ! A living being having superlative practice of right knowledge (*Utkrisht Jnana-araadhana*) mav have either superlative or mediocre practice of right perception/faith. And, a living being having superlative practice of right perception/faith (*Utkrisht Darshan-araadhana*) may have superlative, lowly or mediocre practice of right knowledge.

८. [प्र.] जस्स णं भंते ! उक्कोसिया णाणाराहणा तस्स उक्कोसिया चरित्ताराहणा ? जस्सुक्कोसिया चरित्ताराहणा तस्सुक्कोसिया णाणाराहणा ?

[उ.] जहा उक्कोसिया णाणाराहणा य दंसणाराहणा य भणिया तहा उक्कोसिया णाणाराहणा य चरित्ताराहणा य भाणियव्वा।

८. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव की उत्कृष्ट ज्ञानाराधना होती है, क्या उसकी उत्कृष्ट चारित्राराधना होती है और जिस जीव की उत्कृष्ट चारित्राराधना होती है, क्या उसकी उत्कृष्ट ज्ञानाराधना होती है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार उत्कृष्ट ज्ञानाराधना और दर्शनाराधना के विषय में कहा, उसी प्रकार उत्कृष्ट ज्ञानाराधना और उत्कृष्ट चारित्राराधना के विषय में भी कहना चाहिए।

8. [Q.] *Bhante !* Does a living being having superlative practice of right knowledge also have superlative practice of right conduct (*Utkrisht Chaaritra-araadhana*) ? And, does a living being having superlative practice of right conduct also have superlative practice of right knowledge ?

[**Ans.**] Gautam ! What has been said about superlative practice of right knowledge and that of right perception/faith should be repeated for superlative practice of right knowledge and that of right conduct.

९. [प्र.] जस्स णं भंते ! उक्कोसिया दंसणाराहणा तस्सुक्कोसिया चरित्ताराहणा ? जस्सुक्कोसिया चरित्ताराहणा तस्सुक्कोसिया दंसणाराहणा ?

[उ.] गोयमा ! जस्स उक्कोसिया दंसणाराहणा तस्स चरित्ताराहणा उक्कोसा वा जहन्ना वा अजहन्नमणुक्कोसा वा, जस्स पुण उक्कोसिया चरित्ताराहणा तस्स दंसणाराहणा नियमा उक्कोसा।

९. [प्र.] भगवन् ! जिसकी उत्कृष्ट दर्शनाराधना होती है, क्या उसकी उत्कृष्ट चारित्राराधना होती है; और जिसकी उत्कृष्ट चारित्राराधना होती है, उसकी उत्कृष्ट ज्ञानाराधना होती है ?

[उ.] गौतम ! जिसकी उत्कृष्ट दर्शनाराधना होती है, उसकी उत्कृष्ट, मध्यम या जघन्य चारित्राराधना होती है और जिसकी उत्कृष्ट चारित्राराधना होती है, उसकी नियमतः (अवश्यमेव) उत्कृष्ट दर्शनाराधना होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

9. [Q.] *Bhante* ! Does a living being having superlative practice of right perception/faith (*Utkrisht Darshan-araadhana*) also have superlative practice of right conduct (*Utkrisht Chaaritra-araadhana*) ? And, does a living being having superlative practice of right conduct also have superlative practice of right perception/faith ?

[Ans.] Gautam ! A living being having superlative practice of right perception/faith (*Darshan-araadhana*) may have superlative (*utkrisht*), lowly (*jaghanya*) or mediocre (*madhyam*) practice of right conduct. And a living being having superlative practice of right conduct has, as a rule, superlative practice of right perception/faith (*Utkrisht Darshan-araadhana*).

१०. [प्र.] उक्कोसियं णं भंते ! णाणाराहणं आराहेत्ता कतिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झति जाव अंतं करेति ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झति जाव अंतं करेइ। अत्थेगइए दोच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झति जाव अंतं करेति। अत्थेगइए कप्पोवएसु वा कप्पातीएसु वा उववज्जइ।

१०. [प्र.] भगवन् ! ज्ञान की उत्कृष्ट आराधना करके जीव कितने भव ग्रहण करके सिद्ध होता है, यावत् सभी दुःखों का अन्त करता है ?

[उ.] गौतम ! कितने ही जीव उसी भव में सिद्ध हो जाते हैं, यावत् सभी दुःखों का अन्त कर देते हैं; कितने ही जीव दो भव (एक देव भव, फिर एक मनुष्य भव) ग्रहण करके सिद्ध होते हैं, यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं; कितने ही जीव कल्पोपपन्न देवलोकों में अथवा कल्पातीत देवलोकों में उत्पन्न होते हैं।

10. [Q.] *Bhante !* After how many rebirths does a *jiva* (living being or soul) performing superlative practice of right knowledge (*Utkrisht Jnana-araadhana*) attain liberation to become *Siddha* ... and so on up to... end all miseries ?

[Ans.] Gautam ! Some living beings attain liberation to become *Siddha* ... and so on up to... end all miseries in that very birth; some attain liberation to become *Siddha* ... and so on up to... end all miseries after two rebirths (one as a divine being and then again as a human being); and many are born as divine beings in *Kalp* divine realms (*Kalpopapanna*) or divine realms beyond the *Kalps* (*Kalpateet*).

११. [प्र.] उक्कोसियं णं भंते ! दंसणाराहणं आराहेत्ता कतिहिं भवग्गहणेहिं० ?

[उ.] एवं चेव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११. [प्र.] भगवन् ! दर्शन की उत्कृष्ट आराधना करके जीव कितने भव ग्रहण करके सिद्ध होता है, यावत् सभी दुःखों का अन्त करता है ?

[उ.] गौतम ! (जिस प्रकार उत्कृष्ट ज्ञानाराधना के फल के विषय में कहा है) उसी प्रकार उत्कृष्ट दर्शनाराधना के (फल के) विषय में समझना चाहिए।

11. [Q.] *Bhante !* After how many rebirths does a living being performing superlative practice of right perception/faith (*Utkrisht Darshan-araadhana*) attain liberation to become *Siddha* ... and so on up to... end all miseries ?

[Ans.] Gautam ! What has been said about (fruits of) superlative practice of right knowledge (*Utkrisht Jnana-araadhana*) is also true for (fruits of) superlative practice of right perception/faith.

१२. [प्र.] उक्कोसियं णं भंते ! चरित्ताराहणं आराहेत्ता० ?

[उ.] एवं चेव। नवरं अत्थेगइए कप्पातीएसु उववज्जति।

१२. [प्र.] भगवन् ! चारित्र की उत्कृष्ट आराधना करके जीव कितने भव ग्रहण करके सिद्ध होता है, यावत् सभी दुःखों का अन्त करता है ?

[उ.] गौतम ! उत्कृष्ट ज्ञानाराधना के (फल के) विषय में जिस प्रकार कहा था उसी प्रकार उत्कृष्ट चारित्राराधना के (फल के) विषय में कहना चाहिए। विशेष यह है कि कितने ही जीव (इसके फलस्वरूप) कल्पातीत देवलोकों में उत्पन्न होते हैं।

12. [Q.] *Bhante !* After how many rebirths does a living being performing superlative practice of right conduct (*Utkrisht Chaaritra-araadhana*) attain liberation to become *Siddha* ... and so on up to... end all miseries ?

[Ans.] Gautam ! What has been said about (fruits of) superlative practice of right knowledge (*Utkrisht Jnana-araadhana*) is also true for (fruits of) superlative practice of right conduct. The only difference is that many are born as divine beings in divine realms beyond the *Kalps* (*Kalpateet*).

१३. [प्र.] मज्झिमियं णं भंते ! णाणाराहणं आराहेत्ता कतिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झति जाव अंतं करेति ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए दोच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झइ जाव अंतं करेति तच्चं पुण भवग्गहणं नाइक्कमइ।

१३. [प्र.] भगवन् ! ज्ञान की मध्यम-आराधना करके जीव कितने भव ग्रहण करके सिद्ध होता है, यावत् सभी दुःखों का अन्त कर देता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! कितने ही जीव दो भव ग्रहण करके सिद्ध होते हैं, यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं; वे तीसरे भव का अतिक्रमण नहीं करते।

13. [Q.] *Bhante* ! After how many rebirths does a living being performing mediocre practice of right knowledge (*Madhyam Jnana-araadhana*) attain liberation to become *Siddha* ... and so on up to... end all miseries ?

[Ans.] Gautam ! Some living beings attain liberation to become *Siddha* ... and so on up to... end all miseries after two rebirths (one as a divine being and then again as a human being); they are never reborn after their third rebirth.

१४. [प्र.] मज्झिमियं णं भंते ! दंसणाराहणं आराहेत्ता० ?

[उ.] एवं चेव।

१४. [प्र.] भगवन् ! दर्शन की मध्यम आराधना करके जीव कितने भव ग्रहण करके सिद्ध होता है, यावत् सब दुःखों का अन्त करता है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार ज्ञान की मध्यम आराधना के (फल के) विषय में कहा, उसी प्रकार दर्शन की मध्यम आराधना के (फल के) विषय में कहना चाहिए।

14. [Q.] *Bhante* ! After how many rebirths does a living being performing mediocre practice of right perception/faith (*Madhyam Darshan-araadhana*) attain liberation to become *Siddha* ... and so on up to... end all miseries ?

[Ans.] Gautam ! What has been said about (fruits of) medium practice of right knowledge (*Madhyam Jnana-araadhana*) is also true for (fruits of) medium practice of right perception/faith (*Madhyam Darshan-araadhana*).

१५. एवं मज्झिमियं चरित्ताराहणं पि।

१५. इसी (पूर्वोक्त) प्रकार से चारित्र की मध्यम आराधना के (फल के) विषय में कहना चाहिए।

15. The same is also true for (fruits of) medium practice of right conduct (*Madhyam Chaaritra-araadhana*).

१६. [प्र.] जहन्नियं णं भंते ! नाणाराहणं आराहेत्ता कतिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झति जाव अंतं करेति ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए तच्चे णं भवग्गहणेणं सिज्झइ जाव अंतं करेइ, सत्त-ऽट्ठभवग्गहणाइं पुण नाइक्कमइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७. एवं दंसणाराहणं पि।

१८. एवं चरित्ताराहणं पि।

१६. [प्र.] भगवन् ! ज्ञान की जघन्य आराधना करके जीव कितने भव ग्रहण करके सिद्ध होता है, यावत् सब दुःखों का अन्त करता है ?

[उ.] गौतम ! कितने ही जीव तीसरा भव ग्रहण करके सिद्ध होते हैं, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं; परन्तु सात-आठ भव का अतिक्रमण नहीं करते।

16. [Q.] *Bhante* ! After how many rebirths does a living being performing lowly practice of right knowledge (*Jaghanya Jnana-araadhana*) attain liberation to become *Siddha* ... and so on up to... end all miseries ?

[Ans.] Gautam ! Some living beings attain liberation to become *Siddha* ... and so on up to... end all miseries after three rebirths (one as a divine being and then again as a human being); however they are never reborn after their seventh or eighth rebirth.

१७. इसी प्रकार जघन्य दर्शनाराधना के (फल के) विषय में समझना चाहिए।

17. The same is true for (fruits of) lowly practice of right perception/faith (*Jaghanya Darshan-araadhana*).

१८. इसी प्रकार जघन्य चारित्राराधना के (फल के) विषय में भी कहना चाहिए।

18. The same is also true for (fruits of) lowly practice of right conduct (*Jaghanya Chaaritra-araadhana*).

विवेचन : आराधना का स्वरूप—पाँच प्रकार के ज्ञान या ज्ञान के आधार श्रुत (शास्त्रादि) की, काल, विनय, बहुमान आदि आठ ज्ञानाचार-सहित निर्दोष रीति से पालना करना **ज्ञानाराधना** है। शंका, कांक्षा आदि अतिचारों को न लगाते हुए, निःशंकित, निष्कांक्षित आदि आठ दर्शनाचारों का शुद्धतापूर्वक पालन करते हुए दर्शन अर्थात् सम्यक्त्व की आराधना करना **दर्शनाराधना** है। सामायिक आदि चारित्रों अथवा समिति-गुप्ति, व्रत-महाव्रतादि रूप चारित्र का निरतिचार विशुद्धपालन करना **चारित्राराधना** है। ज्ञानकृत्य एवं ज्ञानानुष्ठानों में उत्कृष्ट प्रयत्न करना **उत्कृष्ट-ज्ञानाराधना** है। इसमें चौदहपूर्व का ज्ञान आ जाता है। **मध्यम** प्रयत्न करना **मध्यम ज्ञानाराधना** है, इसमें ग्यारह अंगों का ज्ञान आ जाता है और जघन्य (अल्पतम) प्रयत्न करना **जघन्य ज्ञानाराधना** है। इसमें अष्टप्रवचनमाता का ज्ञान आ जाता है। इसी प्रकार **उत्कृष्ट दर्शनाराधना** में क्षायिकसम्यक्त्व, **मध्यम दर्शनाराधना** में उत्कृष्ट क्षायोपशमिक या औपशमिक सम्यक्त्व और **जघन्य दर्शनाराधना** में जघन्य क्षायोपशमिक सम्यक्त्व पाया जाता है। **उत्कृष्ट चारित्राराधना** में यथाख्यातचारित्र, **मध्यम चारित्राराधना** में सूक्ष्मसम्पराय और परिहारविशुद्धिचारित्र तथा **जघन्य चारित्राराधना** में सामायिकचारित्र और छेदोपस्थापनिकचारित्र पाया जाता है।

आराधना के पूर्वोक्त प्रकारों का परस्पर सम्बन्ध—उत्कृष्ट ज्ञानाराधक में उत्कृष्ट और मध्यम दर्शनाराधना होती है, उत्कृष्ट दर्शनाराधक में ज्ञान के प्रति तीनों प्रकार का प्रयत्न सम्भव है। जिसमें उत्कृष्ट ज्ञानाराधना होती है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसमें चारित्राराधना उत्कृष्ट या मध्यम होती है; क्योंकि उत्कृष्ट ज्ञानाराधक में चारित्र के प्रति तीनों प्रकार का प्रयत्न भजना से होता है। जहाँ उत्कृष्ट चारित्राराधना होती है, वहाँ उत्कृष्ट दर्शनाराधना अवश्य होती है, क्योंकि उत्कृष्ट चारित्र उत्कृष्ट दर्शनानुगामी होता है।

Elaboration—Spiritual endeavour (*araadhana*)—Proper practice of five types of knowledge including the scriptures (*shrut*), faultlessly following the prescribed eight limbed code (*jnanaachaar*), is called practice of right knowledge (*Jnana-araadhana*). Proper practice of right perception/faith (*Darshan-araadhana*) or righteousness (*samyaktva*), through correctly following the prescribed code (*darshanaachaar*) and avoiding transgressions including doubt (*shanka*) and desire for other faith (*kanksha*), is called practice of right perception/faith (*Darshan-araadhana*). Faultlessly observing the prescribed codes of conduct, including *Samayik Chaaritra* (equanimous conduct) comprising of *samitis* (self-regulations), *guptis* (self-restraints), minor vows and major vows etc., is called practice of right conduct (*Chaaritra-araadhana*). Intense pursuit of knowledge and indulgence in related rituals is called superlative practice of right knowledge (*Utkrisht Jnana-araadhana*). This includes the knowledge of the fourteen *Purvas* (the subtle canon). Medium effort in that direction is called mediocre practice of right knowledge (*Madhyam Jnana-araadhana*) and it includes the knowledge of eleven *Angas*. Minimum effort in that direction is called lowly practice of right knowledge (*Jaghanya Jnana-araadhana*). This includes the knowledge of eight *Pravachan Matrika* (matrices of doctrine). In the same way superlative practice of right perception/faith (*Utkrisht Darshan-araadhana*) includes righteousness acquired through extinction of *karma* (*kshayik samyaktva*). Medium practice of right perception/faith (*Madhyam Darshan-araadhana*) includes righteousness produced by intense destruction-cum-pacification of *karma* (*kshayopashamik samyaktva*) or intense pacification of *karma* (*opashamik samyaktva*). Lowly practice of right perception/faith (*Jaghanya Darshan-araadhana*) includes righteousness produced by minimum destruction-cum-pacification of *karma*. Superlative practice of right conduct (*Utkrisht Chaaritra-araadhana*) includes practicing the conduct conforming to perfect purity (*Yathakhyat chaaritra*). Medium practice of right conduct (*Madhyam Chaaritra-araadhana*) includes practicing the conduct conforming to the level of residual subtle passions (*Sukshma Samparaya Chaaritra*) and that of destruction of *karma* through special austerities

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(*Parihar-vishuddhi Chaaritra*). Lowly practice of right conduct (*Jaghanya Chaaritra-araadhana*) includes practicing the conduct conforming to the code of equanimous conduct (*Samayik Chaaritra*) and that of re-initiation after rectifying faults (*Chhedopasthapanik Chaaritra*).

Mutual relationship—One who is at the level of superlative practice of right knowledge automatically attains levels of superlative or mediocre practice of right perception/faith. One who is at the level of superlative practice of right perception/faith may attain any of the three aforesaid levels of practice of right knowledge. One who is at the level of superlative practice of right knowledge automatically attains levels of superlative or medium practice of right conduct. This is because at this level all the three levels of right conduct are progressively attained. One who is at the level of superlative practice of right conduct necessarily has superlative practice of right perception/faith because conduct entails perception/faith.

पुद्गल–परिणाम के पाँच भेद FIVE TYPES OF TRANSFORMATION OF MATTER

१९. [प्र.] कतिविहे णं भंते ! पोग्गलपरिणामे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहे पोग्गलपरिणामे पण्णत्ते, तं जहा–वण्णपरिणामे १, गंधपरिणामे २, रसपरिणामे ३, फासपरिणामे ४, संठाणपरिणामे ५।

१९. [प्र.] भगवन् ! पुद्गल–परिणाम कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! पुद्गल–परिणाम पाँच प्रकार का है–(१) वर्ण–परिणाम, (२) गन्ध–परिणाम, (३) रस–परिणाम, (४) स्पर्श–परिणाम, और (५) संस्थान–परिणाम।

19. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is transformation of matter (*pudgal parinaam*) ?

[Ans.] Gautam ! Transformation of matter (*pudgal parinaam*) is of five types—(1) *Varna-parinaam* (transformation as colour), (2) *Gandh-parinaam* (transformation as smell), (3) *Rasa-parinaam* (transformation as taste), (4) *Sparsh-parinaam* (transformation as touch), and (5) *Samsthaan-parinaam* (transformation as structure of shape).

२०. [प्र.] वण्णपरिणामे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–कालवण्णपरिणामे जाव सुक्किल्लवण्णपरिणामे।

२०. [प्र.] भगवन् ! वर्ण–परिणाम कितने प्रकार का है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! वह पाँच प्रकार का है। यथा-१ कृष्ण (काला) वर्ण-परिणाम यावत् ५ शुक्ल (श्वेत) वर्ण परिणाम।

20. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *Varna-parinaam* (transformation as colour)?

[Ans.] Gautam ! It is of five types—(1) Black ... and so on up to... (5) White.

२१. एएणं अभिलावेणं गंधपरिणामे दुविहे, रसपरिणामे पंचविहे, फासपरिणामे अट्ठविहे।

२१. इसी प्रकार के अभिलाप द्वारा गन्ध-परिणाम दो प्रकार का, रस-परिणाम पाँच प्रकार का और स्पर्श-परिणाम आठ प्रकार का जानना चाहिए।

21. With similar statements list two types of *Gandh-parinaam* (transformation as smell), five types of *Rasa-parinaam* (transformation as taste), and eight types of *Sparsh-parinaam* (transformation as touch).

२२. [प्र.] संठाणपरिणामे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा-परिमंडलसंठाणपरिणामे जाव आययसंठाणपरिणामे।

२२. [प्र.] भगवन् ! संस्थान-परिणाम कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! वह पाँच प्रकार का कहा गया है। वह इस प्रकार-परिमण्डलसंस्थान-परिणाम, यावत् आयतसंस्थान-परिणाम।

22. [Q.] *Bhante* ! Of how many types is *Samsthaan-parinaam* (transformation as structure of shape)?

[Ans.] Gautam ! It is of five types—(1) transformation as circular shape (*parimandal samsthaan-parinaam*) ... and so on up to... (5) transformation as rectangular shape (*aayat samsthaan-parinaam*).

विवेचन : पुद्गल-परिणाम की व्याख्या-पुद्गल का एक अवस्था से दूसरी अवस्था में रूपान्तर होना पुद्गल-परिणाम है। इसके मूल भेद पाँच और उत्तरभेद पच्चीस हैं। *-(देखें स्थानांगसूत्र, स्थान ५)*

Elaboration—Definition of *pudgal parinaam*—transformation of matter from one state to another is called *pudgal parinaam*. This is of five primary types and twenty-five secondary types. *(for details refer to Illustrated Sthananga Sutra, Chapter-5)*

पुद्गलास्तिकाय के एकप्रदेश से लेकर अनन्तप्रदेश तक अष्टविकल्पात्मक प्रश्नोत्तर

EIGHT ALTERNATIVES OF SPACE-POINTS OF MATTER

२३. [प्र.] एगे भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसे किं दव्वं १, दव्वदेसे २, दव्वाइं ३, दव्वदेसा ४, उदाहु दव्वं च दव्वदेसे य ५, उदाहु दव्वं च दव्वदेसा य ६, उदाहु दव्वाइं च दव्वदेसे य ७, उदाहु दव्वाइं च दव्वदेसा य ८ ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! सिय दव्वं, सिय दव्वदेसे, नो दव्वाइं, नो दव्वदेसा नो दव्वं च दव्वदेसे य, जाव नो दव्वाइं च दव्वदेसा य।

२३. [प्र.] भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय का एक प्रदेश (१) द्रव्य है, (२) द्रव्य-देश है, (३) बहुत द्रव्य हैं, अथवा (४) बहुत द्रव्य-देश हैं ? अथवा (५) एक द्रव्य और एक द्रव्य-देश है, या (६) एक द्रव्य और बहुत द्रव्य-देश हैं, अथवा (७) बहुत द्रव्य और एक द्रव्य-देश है, या (८) बहुत द्रव्य और बहुत द्रव्य-देश हैं ?

[उ.] गौतम ! वह कथंचित् एक द्रव्य है, कथंचित् एक द्रव्य-देश है, किन्तु वह बहुत द्रव्य नहीं, न बहुत द्रव्य-देश है, एक द्रव्य और एक द्रव्य-देश भी नहीं, यावत् बहुत द्रव्य और बहुत द्रव्य-देश भी नहीं।

23. [Q.] *Bhante* ! Is one space-point (or ultimate particle) of matter comprised of—(1) one *dravya* (entity or element), (2) one *dravya-desh* (part of an element), (3) many elements, (4) many parts of elements, (5) one element and one element-part, (6) one element and many element-parts, (7) many elements and one element-part, or (8) many elements and many element-parts.

[Ans.] Gautam ! It could be one *dravya* (entity or element), it could also be one *dravya-desh* (element-part), but it can never be many elements, or many element-parts, or one element and one element-part ... and so on up to... many elements and many element-parts.

२४. [प्र.] **दो भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं दव्वदेसे० पुच्छा तहेव ?**

[उ.] **गोयमा ! सिय दव्वं १, सिय दव्वदेसे २, सिय दव्वाइं ३, सिय दव्वदेसा ४, सिय दव्वं च दव्वदेसे य ५, नो दव्वं च दव्वदेसा य ६, सेसा पडिसेहेयव्वा।**

२४. [प्र.] भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेश क्या एक द्रव्य हैं, अथवा एक द्रव्य-देश हैं ? इत्यादि (पूर्वोक्त अष्टविकल्पात्मक) प्रश्न।

[उ.] गौतम ! १. कथंचित् द्रव्य हैं, २. कथंचित् द्रव्य-देश हैं, ३. कथंचित् बहुत द्रव्य हैं, ४. कथंचित् बहुत द्रव्य-देश हैं, और ५. कथंचित् एक द्रव्य और एक द्रव्य-देश हैं; परन्तु ६. एक द्रव्य और बहुत द्रव्य-देश नहीं, ७. बहुत द्रव्य और एक द्रव्य-देश नहीं, तथा ८. बहुत द्रव्य और बहुत द्रव्य-देश नहीं हैं। (अर्थात्-प्रथम के ५ भंगों के अतिरिक्त शेष भंगों का निषेध करना चाहिए।)

24. [Q.] *Bhante !* Are two space-points (or ultimate particles) of matter comprised of—one *dravya* (entity or element) or one *dravya-desh* (element-part) or all alternatives as aforesaid ?

[Ans.] Gautam ! (1) It could be one *dravya* (entity or element), (2) it could be one *dravya-desh* (element-par), (3) it could be many elements,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(4) it could be many element-parts, (5) it could be one element and one element-part; but (6) it can never be one element and many element-parts, (7) it can never be many elements and one element-part, and (8) it can never be many elements and many element-parts. (In other words the answer is affirmative for first five alternatives and negative for the remaining three.)

२५. [प्र.] तिण्णि भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं, दव्वदेसे० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सिय दव्वं १, सिय दव्वदेसे २, एवं सत्त भंगा भाणियव्वा, जाव सिय दव्वाइं च दव्वदेसे य; नो दव्वाइं च दव्वदेसा य।

२५. [प्र.] भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के तीन प्रदेश, क्या एक द्रव्य हैं अथवा एक द्रव्य-देश हैं ? इत्यादि पूर्वोक्त प्रश्न।

[उ.] गौतम ! १. कथंचित् एक द्रव्य हैं, २. कथंचित् एक द्रव्य-देश हैं; इस प्रकार यावत्-'कथंचित् बहुत द्रव्य और एक द्रव्य-देश है; यहाँ तक (पूर्वोक्त) सात भंग कहने चाहिए। किन्तु बहुत द्रव्य और बहुत द्रव्य-देश नहीं हैं';

25. [Q.] *Bhante* ! Are three space-points (or ultimate particles) of matter comprised of—one *dravya* (entity or element) or one *dravya-desh* (element-par) or all alternatives as aforesaid ?

[Ans.] Gautam ! (1) It could be one *dravya* (entity or element), (2) it could be one *dravya-desh* (element-part), ... and so on up to... the seventh alternative (7) it could be many elements and one element-part, but (8) it can never be many elements and many element-parts.

२६. [प्र.] चत्तारि भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सिय दव्वं १, सिय दव्वदेसे २, अट्ठ वि भंगा भाणियव्वा जाव सिय दव्वाइं च दव्वदेसा य ८।

२६. [प्र.] भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के चार प्रदेश क्या एक द्रव्य हैं या एक द्रव्य-देश हैं ? इत्यादि पूर्वोक्त प्रश्न . . . .।

[उ.] गौतम ! कथंचित् एक द्रव्य हैं, कथंचित् एक द्रव्य-देश हैं, इत्यादि आठों ही भंग, यावत् 'कथंचित् बहुत द्रव्य हैं और बहुत द्रव्य-देश हैं,' यहाँ तक कहने चाहिए।

26. [Q.] *Bhante* ! Are four space-points (or ultimate particles) of matter comprised of—one *dravya* (entity or element) or one *dravya-desh* (element-part) or all alternatives as aforesaid ?

[Ans.] Gautam ! (1) It could be one *dravya* (entity or element), (2) it could be one *dravya-desh* (element-part), ... and so on (mention all the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

eight alternatives) up to ... (8) it can be many elements and many element-parts.

२७. जहा चत्तारि भणिया एवं पंच छ सत्त जाव असंखेज्जा।

२७. जिस प्रकार चार प्रदेशों के विषय में कहा, उसी प्रकार पाँच, छह, सात यावत् असंख्यप्रदेशों तक के विषय में कहना चाहिए।

27. What has been said about four space-points should be repeated for five, six, seven ... and so on up to... innumerable space-points.

२८. [प्र.] अणंता भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा किं दव्वं ?

[उ.] एवं चेव जाव सिय दव्वाइं च दव्वदेसा य।

२८. [प्र.] भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के अनन्तप्रदेश क्या एक द्रव्य हैं या एक द्रव्य-देश हैं? इत्यादि (पूर्वोक्त) अष्टविकल्पात्मक) प्रश्न . . . .।

[उ.] गौतम ! पहले कहे अनुसार यहाँ भी यावत्-'कथंचित् बहुत द्रव्य हैं, और बहुत द्रव्य-देश हैं'; यहाँ तक आठों ही भंग कहने चाहिए।

28. [Q.] *Bhante* ! Are infinite space-points (or ultimate particles) of matter comprised of— one *dravya* (entity or element) or one *dravya-desh* (element-part) or all alternatives as aforesaid ?

[Ans.] Gautam ! As aforesaid, mention all the eight alternatives up to ... (8) it can be many elements and many element-parts.

विवेचन : **द्रव्य और द्रव्य-देश सम्बन्धी आठ भंग**-जब दूसरे द्रव्य के साथ उसका सम्बन्ध नहीं होता, तब वह द्रव्य है, और जब दूसरे द्रव्य के साथ उसका सम्बन्ध होता है, तब वह द्रव्य-देश (द्रव्य का अवयव) है। पुद्गलास्तिकाय के **एक प्रदेश** में प्रदेश एक ही है, इसलिए ६ भंग नहीं पाये जाते। पुद्गलास्तिकाय के द्विप्रदेशिकस्कन्धरूप से परिणत **दो प्रदेशों** में उपर्युक्त ८ भंगों में से पूर्व के पाँच भंग पाये जाते हैं और पुद्गलास्तिकाय के त्रिप्रदेशिकस्कन्धरूप से परिणत **तीन प्रदेशों** में पहले-पहले के सात भंग पाये जाते हैं। चार प्रदेशों में आठों ही भंग पाये जाते हैं। चार प्रदेशों से लेकर यावत् अनन्तप्रदेशी पुद्गलास्तिकाय तक में प्रत्येक में आठ-आठ भंग पाये जाते हैं। -*(वृत्ति, पत्रांक ४२१)*

Elaboration—The eight alternative combinations of element and element-part—When one element (*dravya*) does not combine with another element it remains the same and continues to be called '*dravya*'. But when it combines with another element the components are called element-part or *dravya-desh*. One space-point of matter is a single unit and therefore there is no scope of the last six aforesaid alternatives. An aggregate (*skandh*) of two ultimate-particles of matter has two space-points, as such first five of the said eight alternatives are applicable to it.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

An aggregate (*skandh*) of three ultimate-particles of matter has three space-points, as such first seven of the said eight alternatives are applicable to it. An aggregate (*skandh*) of four ultimate-particles of matter has four space-points, as such all the said eight alternatives are applicable to it. All aggregates of more than four ultimate-particles follow the same rule. *(Vritti, leaf 421)*

लोकाकाश के और प्रत्येक जीव के प्रदेश SPACE-POINTS OF LOKAKAASH AND JIVA

२९. [प्र.] **केवतिया णं भंते ! लोयागासपएसा पण्णत्ता ?**

[उ.] **गोयमा ! असंखेज्जा लोयागासपएसा पण्णत्ता।**

२९. [प्र.] भगवन् ! लोकाकाश के प्रदेश कितने कहे गये हैं ?

[उ.] गौतम ! लोकाकाश के असंख्येय प्रदेश कहे गये हैं।

29. [Q.] *Bhante* ! How many space-points *Lokakaash* (occupied space) is said to have ?

[Ans.] Gautam ! *Lokakaash* (occupied space) is said to have innumerable space-points.

३०. [प्र.] **एगमेगस्स णं भंते ! जीवस्स केवइया जीवपएसा पण्णत्ता ?**

[उ.] **गोयमा ! जावतिया लोगागासपएसा एगमेगस्स णं जीवस्स एवतिया जीवपएसा पण्णत्ता।**

३०. [प्र.] भगवन् ! एक-एक जीव के कितने-कितने जीवप्रदेश कहे गये हैं ?

[उ.] गौतम ! लोकाकाश के जितने प्रदेश कहे गये हैं, उतने ही एक-एक जीव के जीवप्रदेश कहे गये हैं।

30. [Q.] *Bhante* ! How many space-points each *jiva* (soul) is said to have ?

[Ans.] Gautam ! Each soul is said to have as many space-points as *Lokakaash* (occupied space) is said to have.

विवेचन : लोकाकाशप्रदेश और जीवप्रदेश की तुल्यता—लोक असंख्यातप्रदेशी है, इसलिए उसके प्रदेश असंख्यात हैं। जितने लोक के प्रदेश हैं, उतने ही एक जीव के प्रदेश हैं। जब जीव, केवली-समुद्घात करता है, तब वह आत्म-प्रदेशों से सम्पूर्ण लोक को व्याप्त कर देता है; अर्थात्-लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर एक-एक जीवप्रदेश अवस्थित हो जाता है। *-(वृत्ति, पत्रांक २१)*

Elaboration—Equivalency of space-points of *Lokakaash* and *jiva*— *Lok* (occupied space) has innumerable space-points. The number of space-points of a soul is equal to that of the occupied space. When a soul undergoes *Kevali Samudghat* it pervades the whole occupied space with

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

its space-points. In other words each of the soul's space-point occupies one space-point of the *Lok*. *(Vritti, leaf 21)*

आठ कर्मप्रकृतियाँ और संसारी जीव EIGHT KARMA SPECIES AND WORLDLY BEING

३१. [प्र.] कति णं भंते ! कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] **गोयमा ! अट्ठ कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ, तं जहा–नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं।**

३१. [प्र.] भगवन् ! कर्मप्रकृतियाँ कितनी कही गई हैं ?

[उ.] गौतम ! कर्मप्रकृतियाँ आठ कही गई हैं। यथा–ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय।

31. [Q.] *Bhante* ! How many *karma* species (*karma-prakriti*) are said to be there ?

[Ans.] Gautam ! *Karma* species are said to be eight—*Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) ... and so on up to... *Antaraya* (power hindering).

३२. [प्र. १] नेरइयाणं भंते ! कइ कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] **गोयमा ! अट्ठ।**

३२. [प्र. १] भगवन् ! नैरयिकों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ हैं ?

[उ.] गौतम ! (उनकी) आठ कर्मप्रकृतियाँ हैं।

32. [Q. 1] *Bhante* ! How many *karma* species do infernal beings have ?

[Ans.] Gautam ! (They have) eight *karma* species (*karma-prakriti*).

[२] एवं सव्वजीवाणं अट्ठ कम्मपगडीओ ठावेयव्वाओ जाव वेमाणियाणं।

[२] इसी प्रकार वैमानिकपर्यन्त सभी जीवों की आठ कर्मप्रकृतियों की प्ररूपणा करनी चाहिए।

[Q. 2] In the same way all beings up to *Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods) have eight *karma* species (*karma-prakriti*).

३३. [प्र.] नाणावरणिज्जस्स णं भंते ! कम्मस्स केवतिया अविभागपलिच्छेदा पण्णत्ता ?

[उ.] **गोयमा ! अणंता अविभागपलिच्छेदा पण्णत्ता।**

३३. [प्र.] भगवन् ! ज्ञानावरणीयकर्म के कितने अविभाग परिच्छेद कहे गये हैं ?

[उ.] गौतम ! उसके अनन्त अविभाग–परिच्छेद कहे गये हैं।

33. [Q.] *Bhante* ! How many ultimate fractions (*avibhaag parichchhed*) *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) is said to have ?

[Ans.] Gautam ! It is said to have infinite ultimate fractions.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४. [प्र.] नेरइयाणं भंते ! णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स केवतिया अविभागपलिच्छेया पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! अणंता अविभागपलिच्छेदा पण्णत्ता।

३४. [प्र.] भगवन् ! नैरयिकों के ज्ञानावरणीयकर्म के कितने अविभाग–परिच्छेद कहे गये हैं ?

[उ.] गौतम ! उसके अनन्त अविभाग–परिच्छेद कहे गये हैं।

34. [Q.] *Bhante* ! How many ultimate fractions (*avibhaag parichchhed*) knowledge obscuring *karma* of infernal beings is said to have ?

[Ans.] Gautam ! It is said to have infinite ultimate fractions.

३५. [प्र.] एवं सव्वजीवाणं जाव वेमाणियाणं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! अणंता अविभागपलिच्छेदा पण्णत्ता।

३५. [प्र.] भगवन् ! इसी प्रकार वैमानिकपर्यन्त सभी जीवों के ज्ञानावरणीयकर्म के कितने अविभाग-परिच्छेद कहे गये हैं ?

[उ.] गौतम ! अनन्त अविभाग–परिच्छेद कहे गये हैं।

35. *Bhante* ! In the same way how many ultimate fractions (*avibhaag parichchhed*) the *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) of all beings up to *Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods) is said to have ?

[Ans.] Gautam ! It is said to have infinite ultimate fractions.

३६. एवं जहा णाणावरणिज्जस्स अविभागपलिच्छेदा भणिया तहा अट्ठण्ह वि कम्मपगडीणं भाणियव्वा जाव वेमाणियाणं अंतराइयस्स।

३६. जिस प्रकार (सभी जीवों के) ज्ञानावरणीयकर्म के (अनन्त) अविभाग–परिच्छेद कहे हैं, उसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त सभी जीवों के यावत् अन्तराय कर्म तक आठों कर्मप्रकृतियों के (प्रत्येक के अनन्त–अनन्त) अविभाग–परिच्छेद कहने चाहिए।

36. What has been said about *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) of all beings should also be repeated for ultimate fractions of all the eight *karma* species up to *Antaraya karma* (power hindering *karma*) of all living beings up to *Vaimanik devs* (i.e. each has infinite ultimate fractions).

विवेचन : अविभाग–परिच्छेद की व्याख्या–परिच्छेद का अर्थ है–अंश और अविभाग का अर्थ है–जिसका विभाग न हो सके। अर्थात्–केवलज्ञानी की प्रज्ञा द्वारा भी जिसके विभाग (अंश) न किये जा सकें, ऐसे सूक्ष्म (निरंश) अंश को अविभाग–परिच्छेद कहते हैं। ज्ञानावरणीयकर्म के अनन्त अविभाग–परिच्छेद कहने का अर्थ है–ज्ञानावरणीयकर्म ज्ञान के जितने अंशों–भेदों को आवृत्त करता है, उतने ही उसके अविभाग–परिच्छेद होते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हैं, और ज्ञानावरणीय कर्मदलिकों की अपेक्षा वे उसके कर्म परमाणु रूप अनन्त होते हैं। प्रत्येक संसारी जीव (मनुष्य के सिवाय) ८ कर्मों में से प्रत्येक कर्म के अनन्त-अनन्त परमाणुओं (अविभाग-परिच्छेदों) से युक्त होता है, तथा उनसे आवेष्टित-परिवेष्टित (अर्थात् गाढ़ रूप से-चारों ओर से लिपटा हुआ-बद्ध) होता है। *-(सूत्र ३३-३६)*

Elaboration—Avibhaag parichchhed—*Parichchhed* means part or fraction and *avibhaag* means indivisible. Such a minute fraction that is indivisible even to the sharp insight of an omniscient is called *Avibhaag parichchhed* (ultimate fraction). The phrase 'infinite ultimate fractions of knowledge obscuring *karma*' conveys that the number of fractions of knowledge *Jnanavaraniya karma* obscures are the fractions of that *karma*. In terms of particulate matter of *Jnanavaraniya* class this number of ultimate particles is infinite. Each worldly being (other than humans) is infested, surrounded and enshrouded with infinite ultimate particles of *karmic* matter of each of these eight *karma* species. *(aphorisms 33-36)*

३७. [प्र.] एगमेगस्स णं भंते ! जीवस्स एगमेगे जीवपएसे णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स केवइएहिं अविभागपलिच्छेदेहिं आवेढियपरिवेढिए सिया ?

[उ.] गोयमा ! सिय आवेढियपरिवेढिए, सिय नो आवेढियपरिवेढिए। जइ आवेढियपरिवेढिए नियमा अणंतेहिं।

३७. [प्र.] भगवन् ! प्रत्येक जीव का प्रत्येक जीवप्रदेश ज्ञानावरणीयकर्म के कितने अविभाग-परिच्छेदों से आवेष्टित-परिवेष्टित (लिपटा हुआ) है ?

[उ.] हे गौतम ! वह कदाचित् आवेष्टित-परिवेष्टित (लिपटा हुआ) होता है, कदाचित् आवेष्टित-परिवेष्टित नहीं होता। यदि आवेष्टित-परिवेष्टित होता है तो वह नियमतः अनन्त अविभाग-परिच्छेदों से होता है।

37. [Q.] *Bhante* ! How many ultimate fractions of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) surround and enshroud each and every soul-space-point of each living being (soul) ?

[Ans.] Gautam ! It is sometimes surrounded and enshrouded and sometimes not. When it is surrounded and enshrouded, it is so by infinite ultimate fractions as a rule.

३८. [प्र.] एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स एगमेगे जीवपएसे णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स केवइएहिं अविभागपलिच्छेदेहिं आवेढियपरिवेढिते ?

[उ.] गोयमा ! नियमा अणंतेहिं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८. [प्र.] भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक जीव का प्रत्येक जीवप्रदेश ज्ञानावरणीयकर्म के कितने अविभाग-परिच्छेदों से आवेष्टित–परिवेष्टित होता है ?

[उ.] गौतम ! वह नियमतः अनन्त अविभाग–परिच्छेदों से आवेष्टित–परिवेष्टित होता है।

38. [Q.] *Bhante* ! How many ultimate fractions of *Jnanavaraniya karma* surround and enshroud each and every soul-space-point of each infernal being (soul) ?

[Ans.] Gautam ! As a rule it is surrounded and enshrouded by infinite ultimate fractions.

३९. जहा नेरइयस्स एवं जाव वेमाणियस्स। नवरं मणूसस्स जहा जीवस्स।

३९. जिस प्रकार नैरयिकों जीवों के विषय में कहा, उसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यन्त कहना चाहिए; परन्तु विशेष इतना है कि मनुष्य का कथन (औघिक–सामान्य) जीव की तरह करना चाहिए।

39. What has been said about infernal beings should be repeated for all living beings up to *Vaimanik devs*. The only change is that in case of human beings the general statement (*aughik*) for living beings should be repeated.

४०. [प्र.] **एगमेगस्स णं भंते ! जीवस्स एगमेगे जीवपएसे दरिसणावरणिज्जस्स कम्मस्स केवइएहिं ?**

[उ.] **एवं जहेव नाणावरणिज्जस्स तहेव दंडगो भाणियव्वो जाव वेमाणियस्स।**

४०. [प्र.] भगवन् ! प्रत्येक जीव का प्रत्येक जीवप्रदेश दर्शनावरणीयकर्म के कितने अविभागपरिच्छेदों से आवेष्टित–परिवेष्टित है ?

[उ.] गौतम ! जैसे ज्ञानावरणीयकर्म के विषय में दण्डक कहा गया है, वैसे यहाँ भी उसी प्रकार वैमानिक-पर्यन्त कहना चाहिए।

40. [Q.] *Bhante* ! How many ultimate fractions of *Darshanavaraniya karma* (perception/faith obscuring *karma*) surround and enshroud each and every soul-space-point of each living being (soul) ?

[Ans.] Gautam ! What has been said about *Jnanavaraniya karma* should be repeated for *Darshanavaraniya karma* ... and so on up to... *Vaimanik devs*.

४१. एवं जाव अंतराइयस्स भाणियव्वं, नवरं वेयणिज्जस्स आउयस्स नामस्स गोयस्स, एएसिं चउण्ह वि कम्माणं मणूसस्स जहा नेरइयस्स तहा भाणियव्वं, सेसं तं चेव।

४१. इसी प्रकार यावत् अन्तरायकर्म-पर्यन्त कहना चाहिए। विशेष इतना ही है कि वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र इन चार कर्मों के विषय में जिस प्रकार नैरयिक जीवों के लिए कथन किया गया है, उसी प्रकार मनुष्यों के लिए भी कहना चाहिए। शेष सब वर्णन पूर्वोक्त कथनानुसार कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

41. The same should also be stated for all aforesaid *karma* species up to *Antaraya karma* (power hindering *karma*). The difference is that in case of *Vedaniya karma* (pain and pleasure causing *karma*), *Ayushya karma* (life-span determining *karma*), *Naam karma* (form determining *karma*), and *Gotra karma* (status determining *karma*), for human beings repeat what has been stated about infernal beings. The remaining is as aforesaid.

विवेचन : औधिक (सामान्य) जीव-सूत्र ३७ में कदाचित् ज्ञानावरणीयकर्म के अविभाग-परिच्छेदों से आवेष्टित-परिवेष्टित न होने की जो बात कही गई है, वह केवली की अपेक्षा से कही गई है; क्योंकि उनके ज्ञानावरणीयकर्म का क्षय हो चुका है। इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकर्म ये घाति कर्म आवेष्टित-परिवेष्टित नहीं करते। *-(सूत्र ३७-४१)*

Elaboration—The statement about living beings (in general) sometimes not being surrounded and enshrouded by ultimate fractions of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring karma) relates to omniscient (*Kevali*). This is because they have completely shed this *karma*. The same is true for all *Ghaati karmas* (vitiating *karmas*), namely *Mohaniya karma* (deluding *karma*); *Antaraya karma*; *Jnanavaraniya karma*; and *Darshanavaraniya karma*. *(Aphorisms 37-41)*

आठ कर्मों का परस्पर सहभाव CO-RELATION BETWEEN EIGHT KARMAS

४२. [प्र.] जस्स णं भंते ! नाणावरणिज्जं तस्स दरिसणावरणिज्जं, जस्स दंसणावरणिज्जं तस्स नाणावरणिज्जं ?

[उ.] गोयमा ! जस्स णं नाणावरणिज्जं तस्स दंसणावरणिज्जं नियमा अत्थि, जस्स णं दरिसणावरणिज्जं तस्स वि नाणावरणिज्जं नियमा अत्थि।

४२. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव के ज्ञानावरणीयकर्म है, उसके क्या दर्शनावरणीयकर्म भी है और जिस जीव के दर्शनावरणीयकर्म है, उसके ज्ञानावरणीयकर्म भी है ?

[उ.] हाँ गौतम ! जिस जीव के ज्ञानावरणीयकर्म है, उसके नियमतः दर्शनावरणीयकर्म है और जिस जीव के दर्शनावरणीयकर्म है, उनके नियमतः (अवश्य) ज्ञानावरणीयकर्म भी है।

42. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) also infested with *Darshanavaraniya karma* (perception/faith obscuring *karma*) ? And is a soul (*jiva*) infested with *Darshanavaraniya karma* also infested with *Jnanavaraniya karma* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! A soul (*jiva*) infested with *Jnanavaraniya karma* is also, as a rule, infested with *Darshanavaraniya karma*. And a

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

soul (*jiva*) infested with *Darshanavaraniya karma* is also, as a rule, infested with *Jnanavaraniya karma*.

४३. [प्र.] जस्स णं भंते ! णाणावरणिज्जं तस्स वेयणिज्जं, जस्स वेयणिज्जं तस्स णाणावरिणज्जं ?

[उ.] गोयमा ! जस्स नाणावरणिज्जं तस्स वेयणिज्जं नियमा अत्थि, जस्स पुण वेयणिज्जं तस्स णाणावरणिज्जं सिय अत्थि, सिय नत्थि।

४३. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव के ज्ञानावरणीयकर्म है, क्या उसके वेदनीयकर्म है, और जिस जीव के वेदनीयकर्म है, क्या उसके ज्ञानावरणीयकर्म भी है ?

[उ.] गौतम ! जिस जीव के ज्ञानावरणीयकर्म है, उसके नियमतः वेदनीयकर्म है; किन्तु जिस जीव के वेदनीयकर्म है, उसके ज्ञानावरणीयकर्म कदाचित् होता है, कदाचित् नहीं होता।

43. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Jnanavaraniya karma* also infested with *Vedaniya karma* (*karma* that produces sensation of pleasure and pain) ? And is a soul (*jiva*) infested with *Vedaniya karma* also infested with *Jnanavaraniya karma* ?

[Ans.] Gautam ! A soul (*jiva*) infested with *Jnanavaraniya karma* is also, as a rule, infested with *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*). However, a soul (*jiva*) infested with *Vedaniya karma* may and may not be infested with *Jnanavaraniya karma*.

४४. [प्र.] जस्स णं भंते ! नाणावरणिज्जं तस्स मोहणिज्जं, जस्स मोहणिज्जं तस्स नाणावरणिज्जं ?

[उ.] गोयमा ! जस्स नाणावरणिज्जं तस्स मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण मोहणिज्जं तस्स नाणावरणिज्जं नियमा अत्थि।

४४. [प्र.] भगवन् ! जिसके ज्ञानावरणीयकर्म है, क्या उसके मोहनीयकर्म है, और जिसके मोहनीयकर्म है, क्या उसके ज्ञानावरणीयकर्म है ?

[उ.] गौतम ! जिसके ज्ञानावरणीयकर्म है, उसके मोहनीयकर्म कदाचित् होता है, कदाचित् नहीं भी होता; किन्तु जिसके मोहनीयकर्म है, उसके ज्ञानावरणीयकर्म नियमतः होता है।

44. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) also infested with *Mohaniya karma* (deluding *karma*) ? And is a soul (*jiva*) infested with *Mohaniya karma* also infested with *Jnanavaraniya karma* ?

[Ans.] Gautam ! A soul (*jiva*) infested with *Jnanavaraniya karma* may and may not be infested with *Mohaniya karma*. However, a soul (*jiva*) infested with *Mohaniya karma* is also, as a rule, infested with *Jnanavaraniya karma*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५. [प्र. १] जस्स णं भंते ! णाणावरणिज्जं तस्स आउयं० ?

[उ.] एवं जहा वेयणिज्जेण समं भणियं तहा आउएण वि समं भाणियव्वं।

[२] एवं नामेण वि, एवं गोएण वि समं।

[३] अंतराइएण वि जहा दरिसणावरणिज्जेण समं तहेव नियमा परोप्परं भाणियव्वाणि १।

४५. [प्र. १] भगवन् ! जिसके ज्ञानावरणीयकर्म है, क्या उसके आयुष्यकर्म होता है, और जिसके आयुष्यकर्म है, क्या उसके ज्ञानावरणीयकर्म है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार वेदनीयकर्म के साथ (ज्ञानावरणीय के विषय में) कहा गया, उसी प्रकार आयुष्यकर्म के साथ (ज्ञानावरणीय के विषय में) कहना चाहिए।

[२] इसी प्रकार नामकर्म और गोत्रकर्म के साथ (ज्ञानावरणीय के विषय में) भी कहना चाहिए।

[३] जिस प्रकार दर्शनावरणीय के साथ (ज्ञानावरणीयकर्म के विषय में) कहा, उसी प्रकार अन्तरायकर्म के साथ (ज्ञानावरणीय के विषय में) भी नियमतः परस्पर सहभाव कहना चाहिए।

45. [Q. 1] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Jnanavaraniya karma* also infested with *Ayushya karma* (life-span determining *karma*) ? And is a soul (*jiva*) infested with *Ayushya karma* also infested with *Jnanavaraniya karma* ?

[Ans.] Gautam ! What has been said about co-relation of *Jnanavaraniya karma* with *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*) should also be repeated for co-relation of *Jnanavaraniya karma* with *Ayushya karma* (life-span determining *karma*).

[2] The same is also true for co-relation of *Jnanavaraniya karma* with *Naam karma* (form determining *karma*) and *Gotra karma* (status determining *karma*).

[3] What has been said about co-relation of *Jnanavaraniya karma* with *Darshanavaraniya karma* (perception/faith obscuring *karma*) should also be repeated for co-relation of *Jnanavaraniya karma* with *Antaraya karma* (power hindering *karma*), i.e. they coexist as a rule.

४६. [प्र.] जस्स णं भंते ! दरिसणावरणिज्जं तस्स वेयणिज्जं, जस्स वेयणिज्जं तस्स दरिसणावरणिज्जं ?

[उ.] जहा नाणावरणिज्जं उवरिमेहिं सत्तहिं कम्मेहिं समं भणियं तहा दरिसणावरणिज्जं पि उवरिमेहिं छहिं कम्मेहिं समं भाणियव्वं जाव अंतराइएणं २।

४६. [प्र.] भगवन् ! जिसके दर्शनावरणीयकर्म है, क्या उसके वेदनीयकर्म होता है, और जिस जीव के वेदनीयकर्म है, क्या उसके दर्शनावरणीयकर्म होता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार ज्ञानावरणीयकर्म का कथन ऊपर के सात कर्मों के साथ किया गया, उसी प्रकार दर्शनावरणीयकर्म का भी ऊपर के छह कर्मों के साथ यावत् अन्तरायकर्म तक कथन करना चाहिए।

46. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Darshanavaraniya karma* (perception/faith obscuring *karma*) also infested with *Vedaniya karma* ? And is a soul (*jiva*) infested with *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*) also infested with *Darshanavaraniya karma* ?

[Ans.] What has been said about co-relation of *Jnanavaraniya karma* with aforesaid seven *karmas* should also be repeated for co-relation of *Darshanavaraniya karma* with aforesaid six *karmas* ... and so on up to... *Antaraya karma*.

४७. [प्र.] **जस्स णं भंते ! वेयणिज्जं तस्स मोहणिज्जं, जस्स मोहणिज्जं तस्स वेयणिज्जं ?**

[उ.] **गोयमा ! जस्स वेयणिज्जं तस्स मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण मोहणिज्जं तस्स वेयणिज्जं नियमा अत्थि।**

४७. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव के वेदनीयकर्म है, क्या उसके मोहनीयकर्म है, और जिस जीव के मोहनीयकर्म है, क्या उसके वेदनीयकर्म है ?

[उ.] गौतम ! जिस जीव के वेदनीयकर्म है, उसके मोहनीयकर्म कदाचित् होता है, कदाचित् नहीं भी होता, किन्तु जिस जीव के मोहनीयकर्म है, उसके वेदनीयकर्म अवश्य होता है।

47. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*) also infested with *Mohaniya karma* (deluding *karma*) ? And is a soul (*jiva*) infested with *Mohaniya karma* also infested with *Vedaniya karma* ?

[Ans.] Gautam ! A soul (*jiva*) infested with *Vedaniya karma* may and may not be infested with *Mohaniya karma*. However, a soul (*jiva*) infested with *Mohaniya karma* is also, as a rule, infested with *Vedaniya karma*.

४८. [प्र.] **जस्स णं भंते ! वेयणिज्जं तस्स आउयं०** ?

[उ.] **एवं एयाणिं परोप्परं नियमा।**

४८. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव के वेदनीयकर्म है, क्या उसके आयुष्यकर्म है, और जिसके आयुष्यकर्म है क्या उसके वेदनीयकर्म है ?

[उ.] गौतम ! ये दोनों कर्म नियमतः परस्पर साथ--साथ होते हैं।

48. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*) also infested with *Ayushya karma* (life-span

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

determining *karma*) ? And is a soul (*jiva*) infested with *Ayushya karma* also infested with *Vedaniya karma* ?

[Ans.] Gautam ! These two *karmas* coexist as a rule.

४९. जहा आउएण समं एवं नामेण वि, गोएण वि समं भाणियव्वं।

४९. जिस प्रकार आयुष्यकर्म के साथ (वेदनीयकर्म के विषय में) कहा, उसी प्रकार नाम और गोत्रकर्म के साथ भी (वेदनीयकर्म के विषय में) कहना चाहिए।

49. What has been said about co-relation of *Vedaniya karma* with *Ayushya karma* (life-span determining *karma*) should also be repeated for co-relation of *Vedaniya karma* with *Naam karma* (form determining *karma*) and *Gotra karma* (status determining *karma*).

५०. [प्र.] जस्स णं भंते ! वेयणिज्जं तस्स अंतराइयं० ? पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! जस्स वेयणिज्जं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण अंतराइयं तस्स वेयणिज्जं नियमा अत्थि ३।

५०. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव के वेदनीयकर्म है, क्या उसके अन्तरायकर्म है, और जिसके अन्तरायकर्म है, क्या उसके वेदनीयकर्म है ?

[उ.] गौतम ! जिस जीव के वेदनीयकर्म है, उसके अन्तरायकर्म कदाचित् होता है, कदाचित् नहीं भी होता, परन्तु जिसके अन्तरायकर्म होता है, उसके वेदनीयकर्म नियमतः होता है।

50. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Vedaniya karma* also infested with *Antaraya karma* (power hindering *karma*) ? And is a soul (*jiva*) infested with *Antaraya karma* also infested with *Vedaniya karma* ?

[Ans.] Gautam ! A soul (*jiva*) infested with *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*) may and may not be infested with *Antaraya karma* (power hindering *karma*). However, a soul (*jiva*) infested with *Antaraya karma* is also, as a rule, infested with *Vedaniya karma*.

५१. [प्र.] जस्स णं भंते ! मोहणिज्जं तस्स आउयं, जस्स आउयं तस्स मोहणिज्जं ?

[उ.] गोयमा ! जस्स मोहणिज्जं आउयं नियमा अत्थि, जस्स पुण आउयं तस्स पुण मोहणिज्जं सिय अत्थि सिय नत्थि।

५१. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव के मोहनीयकर्म होता है, क्या उसके आयुष्यकर्म होता है, और जिसके आयुष्यकर्म होता है, क्या उसके मोहनीयकर्म होता है ?

[उ.] गौतम ! जिस जीव के मोहनीयकर्म है, उसके आयुष्यकर्म अवश्य होता है, जिसके आयुष्यकर्म है, उसके मोहनीयकर्म कदाचित् होता है, कदाचित् नहीं भी होता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

51. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Mohaniya karma* (deluding *karma*) also infested with *Ayushya karma* (life-span determining *karma*) ? And is a soul (*jiva*) infested with *Ayushya karma* also infested with *Mohaniya karma* ?

[Ans.] Gautam ! A soul (*jiva*) infested with *Mohaniya karma* is also, as a rule, infested with *Ayushya karma*. However, a soul (*jiva*) infested with *Ayushya karma* may and may not be infested with *Mohaniya karma*.

५२. एवं नामं गोयं अंतराइयं च भाणियव्वं ४।

५२. इसी प्रकार नाम, गोत्र और अन्तरायकर्म के विषय में भी कहना चाहिए।

52. The same is true for *Naam karma* (form determining *karma*), *Gotra karma* (status determining *karma*) and *Antaraya karma* (power hindering *karma*).

५३. [प्र.] जस्स णं भंते ! आउयं तस्स नामं० ? पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दो वि परोप्परं नियमं।

५३. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव के आयुष्यकर्म होता है, क्या उसके नामकर्म होता है, और जिसके नामकर्म होता है, क्या उसके आयुष्यकर्म होता है ?

[उ.] गौतम ! ये दोनों कर्म परस्पर नियमतः होते हैं।

53. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Ayushya karma* (life-span determining *karma*) also infested with *Naam karma* ? And is a soul (jiva) infested with *Naam karma* also infested with *Ayushya karma* ?

[Ans.] Gautam ! These two *karmas* coexist as a rule.

५४. एवं गोत्तेण वि समं भाणियव्वं।

५४. (आयुष्यकर्म के विषय में) गोत्रकर्म के साथ भी इसी प्रकार कहना चाहिए।

54. The same is true for *Gotra karma* (status determining *karma*) (in context of *Ayushya karma*).

५५. [प्र.] जस्स णं भंते ! आउयं तस्स अंतराइयं ? पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! जस्स आउयं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण अंतराइयं तस्स आउयं नियमा ५।

५५. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव के आयुष्यकर्म होता है, क्या उसके अन्तरायकर्म होता है, और जिसके अन्तरायकर्म है, उसके आयुष्यकर्म होता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! जिसके आयुष्यकर्म होता है, उसके अन्तरायकर्म कदाचित् होता है, कदाचित् नहीं होता, किन्तु जिस जीव के अन्तरायकर्म होता है, उसके आयुष्यकर्म अवश्य होता है।

55. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Ayushya karma* also infested with *Antaraya karma* ? And is a soul (*jiva*) infested with *Antaraya karma* also infested with *Ayushya karma* ?

[Ans.] Gautam ! A soul (*jiva*) infested with *Ayushya karma* may and may not be infested with *Antaraya karma* (power hindering *karma*). However, a soul (*jiva*) infested with *Antaraya karma* is also, as a rule, infested with *Ayushya karma* (life-span determining *karma*).

५६. [प्र.] जस्स णं भंते ! नामं तस्स गोयं, जस्स णं गोयं तस्स णं नामं ?

[उ.] गोयमा ! जस्स णं णामं तस्स णं नियमा गोयं, जस्स णं गोयं तस्स णं नियमा नामं—गोयमा ! दो वि एए परोप्परं नियमा।

५६. [प्र.] भगवन् ! जिस जीव के नामकर्म होता है, क्या उसके गोत्रकर्म होता है, और जिसके गोत्रकर्म होता है, उसके नामकर्म होता है ?

[उ.] गौतम ! जिसके नामकर्म होता है, उसके गोत्रकर्म अवश्य होता है, और जिसके गोत्रकर्म होता है, उसके नामकर्म भी अवश्य होता है। गौतम! ये दोनों कर्म सहभावी हैं।

56. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Naam karma* (form determining *karma*) also infested with *Gotra karma* (status determining *karma*) ? And is a soul (*jiva*) infested with *Gotra karma* also infested with *Naam karma* ?

[Ans.] Gautam ! A soul (*jiva*) infested with *Naam karma* is, as a rule, also infested with *Gotra karma*. And a soul (*jiva*) infested with *Gotra karma* is, as a rule, also infested with *Naam karma*. These two *karmas* coexist as a rule.

५७. [प्र.] जस्स णं भंते ! णामं तस्स अंतराइयं० ? पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! जस्स नामं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण अंतराइयं तस्स नामं नियमा अत्थि ६।

५७. [प्र.] भगवन् ! जिसके नामकर्म होता है, क्या उसके अन्तरायकर्म होता है, और जिसके अन्तरायकर्म होता है, उसके नामकर्म होता है ?

[उ.] गौतम ! जिस जीव के नामकर्म होता है, उसके अन्तरायकर्म होता भी है, नहीं भी होता किन्तु जिसके अन्तरायकर्म होता है, उसके नामकर्म नियमतः होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

57. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Naam karma* (form determining *karma*) also infested with *Antaraya karma* ? And is a soul (*jiva*) infested with *Antaraya karma* also infested with *Naam karma* ?

[Ans.] Gautam ! A soul (*jiva*) infested with *Naam karma* may and may not be infested with *Antaraya karma*. However, a soul (*jiva*) infested with *Antaraya karma* is also, as a rule, infested with *Naam karma*.

५८. [प्र.] जस्स णं भंते ! गोयं तस्स अंतराइयं० ? पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! जस्स णं गोयं तस्स अंतराइयं सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण अंतराइयं तस्स गोयं नियमा अत्थि ७।

५८. [प्र.] भगवन् ! जिसके गोत्रकर्म होता है, क्या उसके अन्तरायकर्म होता है, और जिस जीव के अन्तराय कर्म होता है, क्या उसके गोत्रकर्म होता है ?

[उ.] गौतम ! जिसके गोत्रकर्म है, उसके अन्तरायकर्म होता भी है, और नहीं भी होता, किन्तु जिसके अन्तरायकर्म है, उसके गोत्रकर्म अवश्य होता है।

58. [Q.] *Bhante* ! Is a soul (*jiva*) infested with *Gotra karma* (form determining *karma*) also infested with *Antaraya karma* (power hindering *karma*) ? And is a soul (*jiva*) infested with *Antaraya karma* also infested with *Gotra karma* ?

[Ans.] Gautam ! A soul (*jiva*) infested with *Gotra karma* may and may not be infested with *Antaraya karma*. However, a soul (*jiva*) infested with *Antaraya karma* is also, as a rule, infested with *Gotra karma*.

विवेचन : कर्मों के परस्पर सहभाव की वक्तव्यता–प्रस्तुत १७ सूत्रों (सूत्र ४२ से ५८ तक) में ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का अपने से उत्तरोत्तर कर्मों के साथ नियम से होने अथवा न होने का विचार किया गया है।

'नियमा' और 'भजना' का अर्थ–नियमा का अर्थ है–नियम से, अवश्य, और 'भजना' का अर्थ है–विकल्प से, कदाचित् होना, कदाचित् न होना।

किसमें किन–किन कर्मों की नियमा और भजना–मनुष्य में ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय, इन चार घातिकर्मों की भजना है (क्योंकि केवली के ये चार घातिकर्म नष्ट हो जाते हैं), जबकि वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्रकर्म की नियमा है। शेष २३ दण्डकों में आठ कर्मों की नियमा है। सिद्ध भगवान में कर्म होते ही नहीं। इस प्रकार आठ कर्मों की नियमा और भजना के कुल २८ भंग समुत्पन्न होते हैं। यथा–ज्ञानावरणीय से ७, दर्शनावरणीय से ६, वेदनीय से ५, मोहनीय से ४, आयुष्य से ३, नामकर्म से २, और गोत्रकर्म से १। *(इनकी चर्चा मूल सूत्र में आ चुकी है। विस्तार के लिए व्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्र, भाग २, पृष्ठ ४२० देखें)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration—Co-relation between *karmas*—The rules of co-relation between *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) and following *karmas* has been discussed in aforesaid 17 aphorisms (42-58).

Niyama and bhajana—The term *niyama* means essentially or as a rule. *Bhajana* means probability or may and may not.

The rule—In human beings the bondage of four vitiating *karmas* (*ghaati karma*), namely *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*), *Darshanavaraniya karma* (perception/faith obscuring *karma*), *Mohaniya karma* (deluding *karma*), and *Antaraya karma* (power hindering *karma*) is probable. This is because these *karmas* can be destroyed to attain omniscience. On the other hand, the bondage of *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*), *Ayushya karma* (life-span determining *karma*), Naam *karma* (form determining *karma*), and *Gotra karma* (status determining *karma*) is essential or manifests as a rule. In the remaining 23 places of suffering (*dandak*) bondage of all eight *karmas* is essential. The *Siddha* State is free of *karmas*. This way there are 28 alternative combinations of two options of *niyama* and *bhajana* for coexistence of eight *karmas*—7 for *Jnanavaraniya karma*, 6 for *Darshanavaraniya karma*, 5 for *Vedaniya karma*, 4 for *Mohaniya karma*, 3 for *Ayushya karma*, 2 for *Naam karma*, and 1 for *Gotra karma*. *(for details see Vyakhya Prajnapti Sutra, part-2, p. 420)*

पुद्गली और पुद्गल का विचार MATTER AND POSSESSOR OF MATTER

५९. [प्र. १] जीवे णं भंते ! किं पोग्गली, पोग्गले ?

[उ.] गोयमा ! जीवे पोग्गली वि, पोग्गले वि।

५९. [प्र. १] भगवन् ! जीव पुद्गली है अथवा पुद्गल है ?

[उ.] गौतम ! जीव पुद्गली भी है और पुद्गल भी।

59. [Q. 1] *Bhante* ! Is *jiva* (living being/soul) possessor of matter (*pudgali*) or matter (*pudgal*) ?

[Ans.] Gautam ! Jiva (living being/soul) is both a possessor of matter (*pudgali*) as well as matter (*pudgal*).

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'जीवे पोग्गली वि पोग्गले वि'?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए छत्तेणं छत्ती, दंडेणं दंडी, घडेणं घडी, पडेणं पडी, करेणं करी एवामेव–गोयमा ! जीवे वि सोइंदिय–चक्खिंदिय–घाणिंदिय–जिब्भिंदिय–फासिंदियाइं पडुच्च पोग्गली, जीवं पडुच्च पोग्गले, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ 'जीवे पोग्गली वि पोग्गले वि'।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से आप ऐसा कहते हैं कि जीव पुद्गली भी है और पुद्गल भी है ?

[उ.] गौतम ! जैसे किसी पुरुष के पास छत्र हो उसे छत्री, दण्ड हो उसे दण्डी, घट होने से घटी, पट होने से पटी, एवं कर होने से करी कहा जाता है, इसी तरह, हे गौतम ! जीव श्रोत्रेन्द्रिय-चक्षुरिन्द्रिय घ्राणेन्द्रिय-जिह्वेन्द्रिय-स्पर्शेन्द्रिय-(स्वरूप पुद्गल वाला होने से) की अपेक्षा से 'पुद्गली' कहलाता है, तथा स्वयं जीव की अपेक्षा 'पुद्गल' कहलाता है। इस कारण से हे गौतम ! मैं कहता हूँ कि जीव पुद्गली भी है और पुद्गल भी है।

59. [Q. 2] *Bhante* ! Why do you say that *jiva* (living being/soul) is both a possessor of matter (*pudgali*) as well as matter (*pudgal*) ?

[Ans.] Gautam ! As a person with a *chhatra* (umbrella) is called *chhatri* (the owner of umbrella), a person with a *dand* (staff) is called *dandi* (the owner of staff), a person with a *ghat* (urn) is called *ghati* (the owner of urn), a person with a *pat* (piece of cloth) is called *pati* (the owner of piece of cloth), and a person with a *kar* (hand) is called *kari* (the owner of hand); in the same way, Gautam ! Because a *jiva* (living being) has the sense organ of hearing (a form of matter), that of seeing, that of smell, that of taste and that of touch, it is called possessor of matter (*pudgal*). And in itself or in context of soul it is matter (*pudgal*). That is why, Gautam ! I say that *jiva* (living being/soul) is both a possessor of matter (*pudgali*) as well as matter (*pudgal*).

६०. [प्र. १] नेरइए णं भंते ! किं पोग्गली० ?

[उ.] एवं चेव।

[२] एवं जाव वेमाणिए। नवरं जस्स जइ इंदियाइं तस्स तइ वि भाणियव्वाइं।

६०. [प्र. १] भगवन् ! नैरयिक जीव पुद्गली है, अथवा पुद्गल है ?

[उ.] गौतम ! उपर्युक्त सूत्रानुसार यहाँ भी कथन करना चाहिए।

[२] इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक कहना चाहिए, किन्तु साथ ही, जिस जीव की जितनी इन्द्रियाँ हों, उसकी उतनी इन्द्रियाँ कहनी चाहिए।

60. [Q. 1] *Bhante* ! Is *Nairayik jiva* (infernal being/soul) possessor of matter (*pudgali*) or matter (*pudgal*) ?

[Ans.] Gautam ! The aforesaid (about *jiva* in general) should be repeated here.

[2] The same should also be repeated for all beings up to *Vaimanik devs*, but in each case the number of sense organs should be specifically stated.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६१. [प्र. १] **सिद्धे णं भंते ! किं पोग्गली, पोग्गले ?**

[उ.] **गोयमा ! नो पोग्गली, पोग्गले।**

६१. [प्र. १] भगवन् ! सिद्धजीव पुद्‌गली हैं या पुद्‌गल हैं ?

[उ.] गौतम ! सिद्धजीव पुद्‌गली नहीं, किन्तु पुद्‌गल हैं।

61. [Q. 1] *Bhante* ! Is *Siddha jiva* (liberated soul) possessor of matter (*pudgali*) or matter (*pudgal*) ?

[Ans.] Gautam ! *Siddha jiva* (liberated soul) is not possessor of matter (*pudgali*) but matter (*pudgal*) itself.

[प्र. २] **से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव पोग्गले ?**

[उ.] **गोयमा ! जीवं पडुच्च, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ 'सिद्धे नो पोग्गली, पोग्गले'।**

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ अट्ठमसए : दसमो उद्देसओ समत्तो ॥

॥ अट्ठमं सयं समत्तं ॥

[प्र. २] भगवन् ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं, कि सिद्धजीव पुद्‌गली नहीं, किन्तु पुद्‌गल हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव की अपेक्षा सिद्धजीव पुद्‌गल हैं; (किन्तु उनके इन्द्रियाँ न होने से वे पुद्‌गली नहीं हैं); इस कारण से मैं कहता हूँ कि सिद्धजीव पुद्‌गली नहीं, किन्तु पुद्‌गल हैं।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर श्री गौतम स्वामी यावत् विचरण करते हैं।

61. [Q. 2] *Bhante* ! Why do you say that *Siddha jiva* (liberated soul) is not possessor of matter (*pudgali*) but matter (*pudgal*) itself ?

[Ans.] Gautam ! In context of its existence as a soul it is *pudgal* (matter), (but as it does not have sense organs it is not *pudgali*), that is why I say that *Siddha jiva* (liberated soul) is not possessor of matter (*pudgali*) but matter (*pudgal*) itself.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : पुद्‌गली एवं पुद्‌गल की व्याख्या—प्रस्तुत प्रकरण में 'पुद्‌गली' उसे कहते हैं, जिसके श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय आदि पुद्‌गल हों। इन्द्रियों रूपी पुद्‌गलों के संयोग से औधिक जीव तथा चौबीस दण्डकवर्ती जीवों को 'पुद्‌गली' कहा गया है। सिद्धजीवों के इन्द्रियरूपी पुद्‌गल नहीं होते, इसलिए वे 'पुद्‌गली' नहीं कहलाते। जीव को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ जो 'पुद्गल' कहा गया है, वह जीव की संज्ञा मात्र है। 'पुद्गल' शब्द से 'रूपी अजीव द्रव्य' ऐसा अर्थ नहीं समझना चाहिए। *-(वृत्ति, पत्रांक ४२४)*

॥ अष्टम शतक : दशम उद्देशक समाप्त ॥

॥ अष्टम शतक सम्पूर्ण ॥

Elaboration—*Pudgali* and *pudgal*—Here *pudgali* is one who possesses matter in the form of sense organs including those of hearing and seeing. Due to their association with matter in the form of sense organs soul in general and all living beings belonging to the 24 places of suffering (*dandak*) are categorized as *pudgali* (possessors of matter). As liberated souls (*Siddha*) do not have matter in the form of sense organs they are not categorized as *pudgali*. Here the term *pudgal* is not used in its normal sense of matter, the non-living entity with a form. It is just a name given to soul, the living entity, in recognition of its association with matter in the realm of the tangible. *(Vritti, leaf 424)*

● END OF THE TENTH LESSON OF THE EIGHTH CHAPTER ●

● END OF THE EIGHTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नवमं सयं : नवम शतक
NAVAM SHATAK (CHAPTER NINE)

प्राथमिक INTRODUCTION

व्याख्या प्रज्ञप्ति के नौवे शतक में जम्बूद्वीप, चंद्रमा आदि, अन्तर्द्वीपज, अश्रुत्वा केवली, गांगेय--प्रश्नोत्तर, ऋषभदत्त–देवानन्दा प्रकरण, जमालि अनगार एक पुरुषहन्ता आदि से संबद्ध प्रश्नोत्तर आदि विषयों के प्रतिपादक चौंतीस उद्देशक हैं।

The ninth chapter of *Vyakhya Prajnapti* contains thirty four lessons with questions and answers about a variety of topics including Jambudveep, Moon etc., Middle islands, Non-listener omniscient, Gangeya, Rishbhdatt-Dewananda, Jamali and Purush-hanta.

नौवें शतक की संग्रहणी गाथा COLLATIVE VERSE

१. जंबुद्दीवे १ जोइस २ अंतरदीवा ३० असोच्च ३१ गंगेय ३२।

कुंडग्गामे ३३ पुरिसे ३४ नवमम्मि सयम्मि चोत्तीसा॥१॥

१. (गाथार्थ–) १. जम्बूद्वीप, २. ज्योतिष, ३ से ३० तक (अट्ठाईस) अन्तर्द्वीप, ३१. अश्रुत्वा (–केवली इत्यादि), ३२. गांगेय (अनगार), ३३. (ब्राह्मण–) कुण्डग्राम, और ३४. पुरुष (पुरुषहन्ता इत्यादि)। नौवें शतक में ये चौंतीस उद्देशक हैं।

1. (1) Jambudveep (Jambu continent), (2) Jyotish (Stellar gods), (3-30) Antardveep (middle islands), (31) Ashrutva (non-listener), (32) Gangeya (the ascetic), (33) Kundagram (Brahmin Kundagram), and (34) Purush (killer of men).

पढमो उद्देसओ : 'जंबुद्दीवे'
प्रथम उद्देशक : जम्बूद्वीप
PRATHAM UDDESHAK (FIRST LESSON) : JAMBUDVEEP (JAMBU CONTINENT)

जम्बूद्वीपनिरूपण JAMBU CONTINENT

२. तेणं कालेणं तेणं समएणं मिहिला नामं नगरी होत्था। वण्णओ। माणिभद्दे चेइए। वण्णओ। सामी समोसढे। परिसा निग्गया। धम्मो कहिओ। जाव भगवं गोयमे पज्जुवासमाणे एवं वयासी–

२. (उपोद्घात) उस काल और उस समय में मिथिला नाम की नगरी थी–वर्णन। वहाँ माणिभद्र नाम का चैत्य था। वर्णन (उसका वर्णन भी औपपातिक सूत्र के अनुसार समझ लेना चाहिये।) श्रमण भगवान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महावीर स्वामी का समवसरण हुआ। (उनके दर्शन-वन्दन आदि करने के लिए) परिषद् निकली। (भगवान ने) धर्म कहा-धर्मोपदेश दिया, यावत् भगवान गौतम ने पर्युपासना करते हुए (भगवान महावीर से) इस प्रकार पूछा-

2. During that period of time there was a city called Mithila. Description (as in *Aupapatik Sutra*). Outside the city there was a *Chaitya* called Manibhadra. Description (of the *Chaitya*). (Once) Bhagavan Mahavir arrived there... and so on up to... People came out to pay homage and attend the discourse ... and so on up to... Indrabhuti Anagaar, the senior disciple of Bhagavan Mahavir... and so on up to... paid his homage and obeisance and submitted—

३. [प्र.] कहि णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे ? किंसंठिए णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे ?

[उ.] एवं जंबुद्दीवपण्णत्ती भाणियव्वा जाव एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे चोद्दस सलिलासयसहस्सा छप्पन्नं च सहस्सा भवंतीति मक्खाया।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ नवम सए : पढमो उद्देसओ समत्तो ॥

३. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप कहाँ है ? (उसका) संस्थान (आकार) किस प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! इस विषय में जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति में कहे अनुसार यावत्-इसी तरह जम्बूद्वीप नामक द्वीप में पूर्व सहित अपर (पूर्व समुद्र और पश्चिम समुद्र) की ओर जाकर उनमें गिरने वाली चौदह लाख छप्पन हजार नदियाँ हैं, ऐसा कहा गया है; (यहाँ तक) कहना चाहिए।

3. [Q.] *Bhante* ! Please tell me what is the location of the continent called Jambudveep ? What is its structure (*samsthaan*) ?

[Ans.] Gautam ! On this, refer to *Jambudveep Prajnapti* ... and so on up to... 'This way it is said that in the continent called Jambudveep there are one million fifty six thousand rivers flowing towards and falling in the eastern sea and the western sea.'

विवेचन : जम्बूद्वीप सम्बन्धी समग्र वर्णन जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति वक्षस्कार १, ३ तथा ६ में देखें।

Elaboration—Complete description of Jambudveep is available in Chapters (*Vakshaskar*) 1, 3 and 6 of *Jambudveep Prajnapti*.

॥ नवम शतक : प्रथम उद्देशक समाप्त ॥

• END OF THE FIRST LESSON OF THE NINTH CHAPTER •

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बीओ उद्देसओ : 'जोइस'
नवम शतक : द्वितीय उद्देशक : ज्योतिष
NINTH SHATAK (Chapter Ninth) : SECOND LESSON : JYOTISH (STELLAR GODS)

१. रायगिहे जाव एवं वयासी–

१. राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा–

1. In Rajagriha city ... and so on up to... (Gautam Swami) submitted—

जम्बूद्वीप आदि द्वीप–समुद्रों में चन्द्र आदि की संख्या

NUMBER OF MOONS IN JAMBUDVEEP AND OTHER AREAS

२. [प्र.] जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे केवइया चंदा पभासिंसु वा पभासेंति वा पभासिस्संति वा ?

[उ.] एवं जहा जीवाभिगमे जाव– एगं च सयसहस्सं, तेत्तीस खलु भवे सहस्साइं। 'नव य सया पण्णासा तारागणकोडाकोडीणं'। सोभं सोभिंसु सोभिंति सोभिस्संति।।

२. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप में कितने चन्द्रों ने प्रकाश किया, प्रकाश करते हैं और प्रकाश करेंगे ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार जीवाभिगमसूत्र में कहा है, उसी प्रकार जानना चाहिए, यावत् 'एक लाख तेतीस हजार नौ सौ पचास कोड़ाकोड़ी तारों के समूह शोभित हुए, शोभित होते हैं और शोभित होंगे'; यहाँ तक जानना चाहिए। *(जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, वक्षस्कार ७ में उक्त वर्णन है)*

2. [Q.] *Bhante* ! How many moons did shine, do shine and will shine in the continent called Jambudveep ?

[Ans.] Gautam ! On this, refer to *Jambudveep Prajnapti* ... and so on up to... 'One hundred thirty three thousand nine hundred fifty hundred trillion (1,33,950 *Kodakodi*) clusters of stars did glitter, do glitter and will glitter. (More details are available in chapter 7 of *Jambudveep Prajnapti*).

३. [प्र.] लवणे णं भंते ! समुद्दे केवतिया चंदा पभासिंसु वा पभासिंति वा पभासिस्संति वा ?

[उ.] एवं जहा जीवाभिगमे जाव ताराओ।

३. [प्र.] भगवन् ! लवणसमुद्र में कितने चन्द्रों ने प्रकाश किया, प्रकाश करते हैं और प्रकाश करेंगे ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार जीवाभिगमसूत्र में कहा है, उसी प्रकार तारों के वर्णन तक जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्य क्षेत्र में ज्योतिषचक्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 15

Illustration No. 15

मनुष्य क्षेत्र में ज्योतिष चक्र

मध्यलोक में असंख्य द्वीप समुद्र हैं। इन द्वीप समुद्रों के मध्य में अढ़ाई द्वीप और दो समुद्र हैं, जिसमें जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड और अर्ध पुष्करवर द्वीप एवं लवण समुद्र और कालोदधि समुद्र हैं। इन द्वीपों में मनुष्यों का निवास है इसलिए इसे मनुष्य क्षेत्र भी कहते हैं। प्रस्तुत चित्र में मनुष्य लोक में सूर्य और चन्द्रमा के बारे में बताया गया है–(1) एक लाख योजन लम्बे-चौड़े गोल जंबूद्वीप में दो सूर्य और दो चंद्र हैं। एक सूर्य जब भरतक्षेत्र में होता है तब दूसरा सूर्य ऐरावत क्षेत्र में (180° के अंतर पर) होता है। तब एक चंद्र पूर्व महाविदेह में और एक चंद्र पश्चिम महाविदेह में (180° पर) होता है। (2) लवण समुद्र में 4 सूर्य और 4 चंद्र हैं। (3) धातकी खंड में 12 सूर्य और 12 चंद्र हैं। (4) कालोदधि समुद्र में 42 सूर्य और 42 चंद्र हैं। (5) अर्ध पुष्कर द्वीप में 72 सूर्य और 72 चंद्र हैं। इस तरह मनुष्य क्षेत्र में कुल 132 सूर्य और 132 चंद्र हैं, जो अपने परिवार के साथ चर हैं (घूमते हैं)। परिवार का अर्थ है कि जहाँ 1 सूर्य और 1 चंद्र है वहाँ 28 नक्षत्र, 88 ग्रह, 66975 क्रोड़ाक्रोड़ तारे हैं। सभी सूर्य और चंद्र एक पंक्ति में होते हैं। मनुष्य क्षेत्र के बाहर ज्योतिष चक्र अचर है।

—शतक 9, उ. 2, सूत्र 2-5

STELLAR ORBITS IN THE AREA OF HUMANS

In the middle world there are infinite continents and seas. At the center of these are two and a half continents and two seas – Jambudveep, Dhaatakikhand and Half Pushkaravar Dveep; Lavan Samudra and Kalodadhi Samudra. As humans dwell in these continents this area is known as the area of humans. The illustration explains about the orbits of suns and moons in this area of humans — (1) There are two suns and two moons in the one Lac Yojan diameter Jambu continent. When one of these suns shines n Bharat area the other is in Airavat area (with a shift of 180°). At that moment one of the moons is in East Mahavideh and the other in west Mahavideh (with the same shift). (2) There are 4 suns and 4 moons in Lavan Samudra. (3) In Dhaatakikhand there are 12 suns and 12 moons. (4) In Kaalodadhi Samudra there are 42 suns and 42 moons. (4) In Half Pushkaravar Dveep there are 72 suns and 72 moons. Thus there are 132 suns and a32 moons in the whole area of humans. All these move around in their orbits along with their families. A family of one sun and one moon includes 28 constellations, 88 planets and 66975 Kodakodi stars. All suns and moons are in one row. The stellar area beyond the human area is static.

— Shatak-9, lesson-2, Sutra-2-5

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

3. [Q.] *Bhante* ! How many moons did shine, do shine and will shine on Lavan sea ?

[Ans.] Gautam ! On this, refer to *Jambudveep Prajnapti* ... and so on up to... the description of stars.

४. धायइसंडे कालोदे पुक्खरवरे अब्भिंतरपुक्खरद्धे मणुस्सखेत्ते, एएसु सव्वेसु जहा जीवाभिगमे जाव–'एग ससीपरिवारो तारागणकोडिकोडीणं'।

४. धातकीखण्ड, कालोदधि, पुष्करवरद्वीप, आभ्यन्तर पुष्करार्द्ध और मनुष्यक्षेत्र; इन सब का वर्णन जीवाभिगमसूत्र के अनुसार, यावत् "एक चन्द्र का परिवार कोटाकोटी तारागण (सहित) होता है" (यहाँ तक जानना चाहिए)।

4. The description of Dhatakikhand, Kaalodadhi, Pushkaravar Dveep, Abhyantar Pushkarardha and area inhabited by humans (*Manushya Kshetra*), all these should be quoted from *Jivabhigam Sutra* ... and so on up to... "the family of one moon includes *Kotakoti* (ten million times ten million; 10^{14}) stars."

५. [प्र.] पुक्खरोदे णं भंते ! समुद्दे केवइया चंदा पभासिंसु वा पभासंति वा पभासिस्संति वा ?

[उ.] एवं सव्वेसु दीव–समुद्देसु जोतिसियाणं भाणियव्वं जाव सयंभूरमणे जाव सोभं सोभिंसु वा सोभंति वा सोभिस्संति वा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ नवम सए : बीओ उद्देसओ समत्तो ॥

५. [प्र.] भगवन् ! पुष्करोद समुद्र में कितने चन्द्रों ने प्रकाश किया, प्रकाश करते हैं और प्रकाश करेंगे ?

[उ.] (जीवाभिगमसूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति के दूसरे उद्देशक में) समस्त द्वीपों और समुद्रों में ज्योतिष्क देवों का जो वर्णन किया गया है, उसी प्रकार, यावत् स्वयंभूरमण समुद्र में यावत् शोभित हुए, शोभित होते हैं और शोभित होंगे; (वहाँ तक कहना चाहिए)।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है; भगवन् ! यह इसी प्रकार है; (यों कहकर यावत् भगवान गौतम विचरते हैं)।

5. [Q.] *Bhante* ! How many moons did shine, do shine and will shine on Pushkarardha sea ?

[Ans.] This follows the description of the Stellar gods in all continents and seas (as mentioned in the second lesson of the third chapter of *Jivabhigam Sutra*) ... and so on up to... "did shine, do shine and will shine on Svayambhuraman sea."

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : जीवाभिगमसूत्रगत वर्णन का सार–जीवाभिगमसूत्र के अनुसार–मुख्यतया चन्द्रमा की संख्या–जम्बूद्वीप में २, लवणसमुद्र में ४, धातकीखण्डद्वीप में १२, कालोदसमुद्र में ४२, पुष्करवरद्वीप में १४४, आभ्यन्तर पुष्करार्द्ध में ७२ तथा मनुष्यक्षेत्र में १३२, एवं पुष्करोदसमुद्र में संख्यात हैं। इसके पश्चात् मनुष्यक्षेत्र के बाहर के वरुणवरद्वीप एवं वरुणोदसमुद्र आदि असंख्यात द्वीप–समुद्रों में यथासम्भव संख्यात एवं असंख्यात चन्द्रमा हैं और जहां एक चन्द्र है वहां एक सूर्य, २८ नक्षत्र, ८८ ग्रह और ६६९७५ क्रोडा कोड तारागण हैं, ये एक चन्द्र का परिवार है। इसी प्रकार इन सब में सूर्य, नक्षत्र, ग्रह तथा ताराओं की संख्या भी जीवाभिगमसूत्र से जान लेनी चाहिए। इतना विशेष है कि मनुष्यक्षेत्र में जो भी चन्द्र, सूर्य आदि ज्योतिष्कदेव हैं, वे सब चर (गति करने वाले) हैं, जबकि मनुष्यक्षेत्र के बाहर के सब अचर (स्थिर) हैं। *(जीवाभिगमसूत्र, प्रतिपत्ति ३, उद्देशक २, वृत्ति, सू. १५३, १५५, १७५–१७७, पत्र ३००, ३०३, ३२७–३३५)*

Elaboration—Gist of description in *Jivabhigam Sutra* (mainly about number of moons)— the number of moons in Jambu Dveep—2, in Lavan Samudra—4, in Dhatakikhand Dveep—12, in Kaloda Sea—42, in Pushkaravar Dveep—144, in Abhyantar Pushkarardha—72, in Manushya Kshetra—132, and in Pushkarod Sea—countable. After this in areas outside *Manushya Kshetra* including Varunavar Dveep and Varunod Sea the place-specific number of moons is countable or innumerable. In the same way the number of the suns, constellations, planets and stars should also be quoted from *Jivabhigam Sutra*. The point to be specially noted is that the Stellar gods of *Manushya Kshetra* are moving whereas those outside are stationary. (*Jivabhigam Sutra*, Pratipatti-3, Uddeshak-2; *Vritti*, Sutra 153, 155, 175-177, leaves 300, 303, 327-335)

॥ नवम शतक : द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥

• END OF THE SECOND LESSON OF THE NINTH CHAPTER •

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

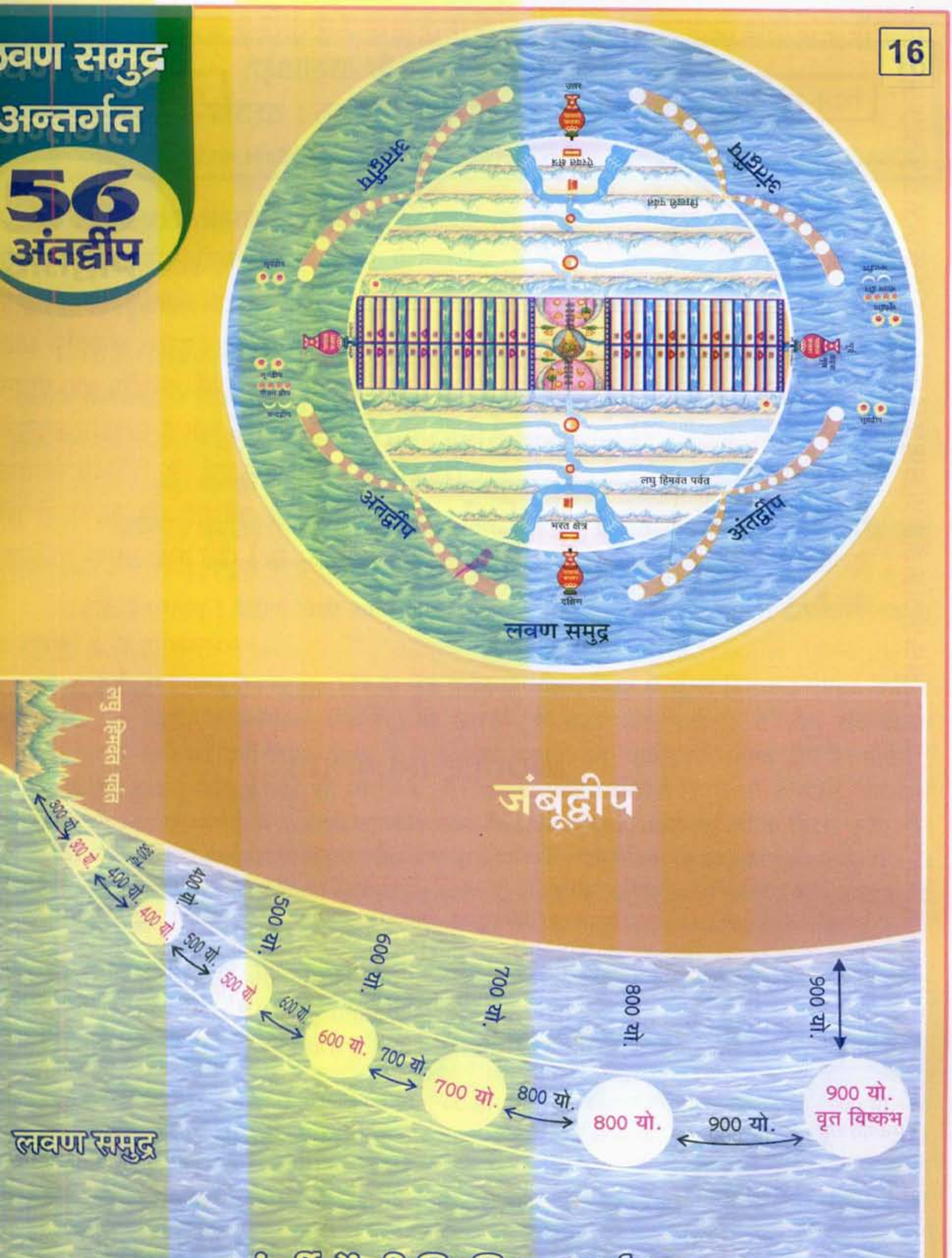

अंतर्द्वीपों की स्थिति का दर्शन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 16

Illustration No. 16

अन्तर्द्वीप

जम्बूद्वीप में मेरू पर्वत की दक्षिण दिशा में चुल्लहिमवंत नामक वर्षधर पर्वत है। इस पर्वत के पूर्व और पश्चिम दिशाओं में, चरमान्त से लवण समुद्र में चारों विदिशाओं में जगती की कोट से 300-300 योजन लवण समुद्र में जाने पर पहला अन्तर्द्वीप आता है। ये अन्तर्द्वीप 300 योजन लम्बा-चौड़ा गोल है। यहाँ से 400 योजन की दूरी पर दूसरा अन्तर्द्वीप 400 योजन लम्बा-चौड़ा गोल है। इसी क्रम से 900 योजन की दूरी पर 7वाँ अन्तर्द्वीप 900 योजन लम्बा-चौड़ा गोल है। यह द्वीप आपस में थोड़े-थोड़े अंतर पर होने के कारण अन्तर्द्वीप कहलाते हैं। इसी प्रकार मेरू पर्वत के उत्तर दिशा में शिखरी पर्वत है। इसके पूर्व और पश्चिम चरमान्त से भी चारों विदिशाओं में 28 अन्तर्दीप हैं। इनकी भी लम्बाई-चौड़ाई और आपस में दूरी चुल्लहिमवंत पर्वत के अन्तर्द्वीपों के समान समझनी चाहिए। यहाँ रहने वाले मनुष्य युगलिया होते हैं।

—शतक 9, उ. 2, सूत्र 1-3

MIDDLE ISLANDS

In Jambudveep, to the south of Meru mountain lies the *Varshadhar* mountain called Chullahimavant. Going three hundred Yojan in the northeastern direction from the eastern extremity lies the first middle island. The length and width of this island is three hundred Yojans. In this sequence there are seven gradually large islands each in the four sub-directions; the seventh middle island being 900 Yojans long and wide. As these islands are separated by short distance they are called middle islands. In the same way to the north of Jambudveep lies Shikhari mountain. This also has 28 middle islands having same dimensions in the four sub-directions. People living in these islands are twin couples.

— Shatak-9, lesson-3, Sutra-1-3

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तईआइया तीसंता उद्देसा : 'अंतरदीवा'
नवम शतक : तृतीय से तीसवें उद्देशक तक : अन्तर्द्वीप
NINTH SHATAK (Chapter Ninth) : THIRD TO THIRTIETH LESSONS : ANTARDVEEP (MIDDLE ISLANDS)

उपोद्‌घात INTRODUCTION

१. रायगिहे जाव एवं वयासी–

१. राजगृह नगर में, यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा–

1. In Rajagriha city ... and so on up to... (Gautam Swami) submitted—

एकोरुक आदि अट्ठाईस अन्तर्द्वीपक मनुष्य

HUMANS OF TWENTY EIGHT MIDDLE ISLANDS INCLUDING EKORUK

२. [प्र.] कहि णं भंते ! **दाहिणिल्लाणं एगोरुयमणुस्साणं एगोरुयदीवे णामं दीवे पन्नत्ते ?**

[उ.] गोयमा ! **जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं एवं जहा जीवाभिगमे जाव सुद्धदंतदीवे जाव** देवलोगपरिग्गहा णं ते **मणुया पण्णत्ता समणाउसो।**

२. [प्र.] भगवन् ! दक्षिण दिशा का 'एकोरुक' मनुष्यों या 'एकोरुकद्वीप' नामक द्वीप कहाँ बताया गया है ?

[उ.] गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के मेरु पर्वत से दक्षिण दिशा में चुल्ल हिमवन्त नामक वर्षधर पर्वत के पूर्व दिशागत चरमान्त (किनारे) से उत्तर-पूर्व दिशा (ईशानकोण) में तीन सौ योजन लवणसमुद्र में जाने पर वहाँ दक्षिण दिशा के 'एकोरुक' मनुष्यों का 'एकोरुक' नामक द्वीप है। गौतम ! उस द्वीप की लम्बाई-चौड़ाई तीन सौ योजन है और उसकी परिधि (परिक्षेप) नौ सौ उनचास योजन से कुछ कम है। वह द्वीप एक पद्मवरवेदिका और एक वनखण्ड से चारों ओर से वेष्टित (घिरा हुआ) है। इन दोनों (पद्मवरवेदिका और वनखण्ड) का प्रमाण और वर्णन जीवाभिगमसूत्र (की तृतीय प्रतिपत्ति के प्रथम उद्देशक) के अनुसार इसी क्रम से यावत् शुद्धदन्तद्वीप तक का वर्णन (जान लेना चाहिए)। यावत् हे आयुष्यमन् श्रमण ! इन द्वीपों के मनुष्य देवगतिगामी कहे गये हैं–यहाँ तक का वर्णन जान लेना चाहिए।

2. [Q.] *Bhante* ! Where the Southern Ekoruk island, belonging to Ekoruk humans, is said to be located ?

[Ans.] Gautam ! In Jambudveep, to the south of Meru mountain [going three hundred Yojan (a linear measure equivalent to eight miles) in the north-eastern direction from the eastern extremity of the *Varshadhar* mountain called Chullahimavant, lies the Southern Ekoruk island belonging to Ekoruk humans. Gautam ! The length and width of this island is three hundred Yojans and its circumference is slightly less

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

than nine hundred forty-nine Yojans. This island is surrounded by a plateau (*Padmavarvedika*) and a forest. The dimensions and description of these two should be read from] the first lesson of the third chapter of *Jivabhigam Sutra*. In this sequence ... and so on up to... the description of Shuddhadant Dveep should be quoted ... and so on up to... "O long lived *Shraman* ! It is said that the human beings of these islands are destined to reincarnate in the divine realm."

३. एवं अट्ठावीसं पि अंतरदीवा सएणं सएणं आयाम-विक्खंभेणं भाणियव्वा, नवरं दीवे दीवे उद्देसओ। एवं सव्वे वि अट्ठावीसं उद्देसगा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ नवम सए : तइयाइआ तीसंता उद्देसा समत्ता ॥

३. इस प्रकार अपनी-अपनी लम्बाई-चौड़ाई के अनुसार इन अट्ठाईस अन्तर्द्वीपों का वर्णन कहना चाहिए। विशेष यह है कि यहाँ एक-एक द्वीप के नाम से एक-एक उद्देशक कहना चाहिए। इस प्रकार ये सब मिलकर इन अट्ठाईस अन्तर्द्वीपों के अट्ठाईस उद्देशक होते हैं।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है; यों कहकर भगवान गौतम यावत् विचरण करते हैं।

3. This way the description of these twenty-eight middle islands (*Antardveep*) should be mentioned according to their respective dimensions. It should be noted that one independent lesson (*Uddeshak*) is to be devoted to each island. Thus there are twenty-eight lessons for these twenty-eight islands.

"Bhante ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : अन्तर्द्वीप और वहाँ के निवासी मनुष्य—ये द्वीप लवणसमुद्र के अन्दर होने से 'अन्तर्द्वीप' कहलाते हैं। इनके रहने वाले मनुष्य अन्तर्द्वीपक कहलाते हैं। यों तो उत्तरवर्ती और दक्षिणवर्ती समस्त अन्तर्द्वीप छप्पन होते हैं, परन्तु यहाँ पर दक्षिण दिशावर्ती अन्तर्द्वीपों के सम्बन्ध में ही प्रश्न हैं और वे २८ हैं। प्रज्ञापनासूत्र के अनुसार उनके नाम इस प्रकार हैं--(१) एकोरुक, (२) आभासिक, (३) लांगूलिक, (४) वैषाणिक, (५) हयकर्ण, (६) गजकर्ण, (७) गोकर्ण, (८) शष्कुलीकर्ण, (९) आदर्शमुख, (१०) मेण्ढ्रमुख, (११) अयोमुख, (१२) गोमुख, (१३) अश्वमुख, (१४) हस्तिमुख, (१५) सिंहमुख, (१६) व्याघ्रमुख, (१७) अश्वकर्ण, (१८) सिंहकर्ण, (१९) अकर्ण, (२०) कर्णप्रावरण, (२१) उल्कामुख, (२२) मेघमुख, (२३) विद्युन्मुख, (२४) विद्युद्दन्त, (२५) घनदन्त, (२६) लष्टदन्त, (२७) गूढदन्त, और (२८) शुद्धदन्त द्वीप। इन्हीं अन्तर्द्वीपों के नाम पर इनके रहने वाले मनुष्य भी इसी नाम वाले कहलाते हैं तथा एकोरुक आदि २८ अन्तर्द्वीपों में से प्रत्येक अन्तर्द्वीप के नाम से एक-एक उद्देशक है। यहाँ रहने वाले मनुष्य युगलिया होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उन मनुष्यों की स्थिति पल्योपम के असंख्यातवें भाग होती है। छह मास आयुष्य शेष रहने पर वे एक साथ पुत्र-पुत्रीयुगल को जन्म देते हैं। ७९ दिन तक उनका पालन-पोषण करते हैं। तत्पश्चात् मरकर वे देवगति में उत्पन्न होते हैं।

वे अन्तर्द्वीप कहाँ ?—जीवाभिगमसूत्र के अनुसार-जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र और हैमवत क्षेत्र की सीमा बाँधने वाला चुल्ल हिमवान पर्वत है। वह पर्वत पूर्व और पश्चिम में लवणसमुद्र को स्पर्श करता है। इसी पर्वत के पूर्वी और पश्चिमी किनारे से लवणसमुद्र में, चारों विदिशाओं में से प्रत्येक विदिशा में तीन-तीन सौ योजन आगे जाने पर एकोरुक आदि एक-एक करके चार अन्तर्द्वीप आते हैं। ये द्वीप गोल हैं। इनकी लम्बाई-चौड़ाई तीन-तीन सौ योजन की है। इन द्वीपों से आगे ४००-४०० योजन लवणसमुद्र में जाने पर चार-चार सौ योजन लम्बे-चौडे हयकर्ण आदि चार द्वीप आते हैं। ये भी गोल हैं।

इसी प्रकार इनसे आगे क्रमशः पाँच सौ, छह सौ, सात सौ, आठ सौ एवं नौ सौ योजन जाने पर क्रमशः ४-४ द्वीप आते हैं, जिनके नाम पहले बता चुके हैं। इन चार-चार अन्तर्द्वीपों की लम्बाई-चौड़ाई भी क्रमशः पाँच सौ से लेकर नौ सौ योजन तक जाननी चाहिए। ये सभी गोल हैं। इसी प्रकार चुल्ल हिमवान पर्वत की चारों विदिशाओं में ये २८ अन्तर्द्वीप हैं।

छप्पन अन्तर्द्वीप—जिस प्रकार चुल्ल हिमवान पर्वत की चारों विदिशाओं में २८ अन्तर्द्वीप कहे गये हैं, इसी प्रकार मेरु पर्वत के उत्तर में ऐरवत क्षेत्र की सीमा बांधने वाले शिखरी पर्वत की चारों विदिशाओं में भी २८ अन्तर्द्वीप हैं, जिनका वर्णन इसी शास्त्र में १०वें शतक के ७वें से लेकर ३४वें उद्देशक तक २८ उद्देशकों में किया गया है। उन अन्तर्द्वीपों के नाम भी इन्हीं के समान हैं। *(प्रज्ञापना, पहला पद, जीवाभिगम, प्रतिपत्ति ३)* (स्पष्टता के लिए संलग्न चित्र देखें)

Elaboration—Middle islands and their human inhabitants—As these islands are in Lavan Samudra they are called *Antardveep* (middle islands). Human beings living on these islands are called *Antardveepak* (middle island men). The total number of middle islands is 56 (28 northern and 28 southern). Here the question is only about the southern islands and they are 28 in number. Their names according to *Prajnapana Sutra* are—(1) Ekoruk, (2) Aabhaasik, (3) Langoolik, (4) Vaishaanik, (5) Hayakarn, (6) Gajakarn, (7) Gokarn, (8) Shashkulikarn, (9) Adarsh-mukh, (10) Mendhramukh, (11) Ayomukh, (12) Gomukh, (13) Ashvamukh, (14) Hastimukh, (15) Simhamukh, (16) Vyaghramukh, (17) Ashvakarn, (18) Simhakarn, (19) Akarn, (20) Karnapravaran, (21) Ulkamukh, (22) Meghmukh, (23) Vidyunmukh, (24) Vidyuddant, (25) Ghanadant, (26) Lashtadant, (27) Goodhadant, and (28) Shuddhadant. The group name of the humans on each island follow the name of the respective island. The titles of the twenty-eight lessons also follow the same pattern. The human beings living here are *Yugalias* (twins—one male and one female).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The life-span of these human beings is innumerable fraction of one *Palyopam* (a metaphoric unit of time). They give birth to twins, one male and one female, six months before the end of there life-span. They look after them just for 79 days. After death they reincarnate as divine beings.

Location—According to *Jivabhigam Sutra* the Chullahimavant mountain defines the boundary between Bharat area and Haimavat area in Jambudveeep. This mountain touches Lavan Samudra in the east as well as west. From the eastern and western extremities of this mountain, three hundred Yojans away in the Lavan Samudra, there are four islands including Ekoruk, one each in all the four sub-directions. These islands are circular in shape. The length and width of each of these is 300 Yojans. Going 400 hundred Yojans further from each of these there are four more islands, including Hayakarn, of 400 Yojan length-width each. They are also circular in shape.

In the same way going 500, 600, 700, 800, and 900 Yojans further in each direction there are four islands at each distance level. Their length-width follows the same pattern (500 to 900 Yojans). They too are circular. This way there are twenty-eight islands around Chullahimavant mountain.

Fifty-six middle islands—Like the 28 islands around Chullahimavant mountain there are 28 middle islands around Shikhari mountain to the north of Meru mountain. The description of these is mentioned in the 7th to 34th lessons of Chapter 10 of this book. They also have the same names. (*Prajnapana Sutra* Chapter-1; *Jivabhigam Sutra*, Pratipatti-3) (for clarity see illustration)

॥ नवम शतक : तीसरे से तीसवें उद्देशक तक समाप्त ॥

● END OF THIRD TO THIRTIETH LESSONS OF THE NINTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगत्तीसइमो उद्देसओ : 'असोच्चा केवली'
नवम शतक : इकतीसवाँ उद्देशक : अश्रुत्वा केवली
NINTH SHATAK (Chapter Ninth) : THIRTY FIRST LESSON : ASHRUTVA KEVALI (SELF-ENLIGHTENED OMNISCIENT)

उपोद्घात INTRODUCTION

१. रायगिहे जाव एवं वयासी–

१. राजगृह नगर में यावत् (गौतम स्वामी ने भगवान महावीर स्वामी से) इस प्रकार पूछा–

1. In Rajagriha city ... and so on up to... (Gautam Swami) submitted—

धर्मश्रवण लाभालाभ BENEFIT OF HEARING THE SERMON

२. [प्र. १] असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा केवलिसावगस्स वा केवलिसावियाए वा केवलिउवासगस्स वा केवलिउवासियाए वा तप्पक्खियस्स वा तप्पक्खियसावगस्स वा तप्पक्खियसावियाए वा तप्पक्खियउवासगस्स वा तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए ?

[उ.] गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा अत्थेगइए केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए, अत्थेगइए केवलिपण्णत्तं धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए।

२. [प्र. १] भगवन् ! केवली, केवली के श्रावक, केवली की श्राविका, केवली के उपासक, केवली की उपासिका, **केवलि–पाक्षिक** (स्वयंबुद्ध), केवलि–पाक्षिक के श्रावक, केवलि–पाक्षिक की श्राविका, केवलि–पाक्षिक के उपासक, केवलि–पाक्षिक की उपासिका, (इनमें से किसी) से बिना सुने ही किसी जीव को केवलि–प्ररूपित धर्मश्रवण का लाभ होता है ?

[उ.] गौतम ! केवली यावत् केवलि–पाक्षिक की उपासिका (इन दस) से सुने बिना ही किसी जीव को केवलि–प्ररूपित धर्मश्रवण का लाभ होता है और किसी जीव को नहीं भी होता।

2. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *jiva* (living being) derive the benefits of hearing the sermon of (the religion propagated by) an omniscient (*Kevali*) even without hearing it from the omniscient, or his male disciple (*shravak*), or his female disciple (*shravika*), or his male devotee (*upaasak*), or his female devotee (*upaasika*); or a self-enlightened omniscient (*Kevali-paakshik*), or his male disciple (*shravak*), or his female disciple (*shravika*), or his male devotee (*upaasak*), or his female devotee (*upaasika*) ?

[Ans.] Gautam ! Some *jiva* (living being) derives and some does not derive the benefits of hearing the sermon of an omniscient (*Kevali*) even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. [प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–असोच्चा णं जाव नो लभेज्जा सवणयाए ?

[उ.] गोयमा ! जस्स णं नाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्ज सवणयाए, जस्स णं नाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपण्णत्तं धम्मं नो लभेज्ज सवणयाए, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–तं चेव जाव नो लभेज्ज सवणयाए।

२. [प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है कि केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका (इन दस) से सुने बिना ही किसी जीव को केवलि-प्ररूपित धर्मश्रवण का लाभ होता है और किसी को नहीं भी होता ?

[उ.] गौतम ! जिस जीव ने ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम किया हुआ है, उसको केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका (इन) में से किसी से सुने बिना ही केवलि-प्ररूपित धर्मश्रवण का लाभ (धर्मबोध की प्राप्ति) होता है और जिस जीव ने ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया हुआ है, उसे केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना केवलि-प्ररूपित धर्मश्रवण का लाभ नहीं होता। हे गौतम ! इसी कारण ऐसा कहा गया कि यावत् किसी को धर्मश्रवण का लाभ होता है और किसी को नहीं होता। (स्वाभाविक धर्मानुराग तथा धर्मश्रवण निमित्त कारण है, ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम अन्तरंग कारण है)।

2. [Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that some *jiva* (living being) derives and some does not derive the benefits of hearing the sermon of an omniscient (*Kevali*) even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*) ?

[Ans.] Gautam ! A jiva who has accomplished destruction-cum-pacification of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) derives the benefits of hearing the sermon of an omniscient (*Kevali*) even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*). And a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) does not derive the benefits of hearing the sermon of an omniscient (*Kevali*) without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*). That is why it is said that some *jiva* (living being) derives and some does not derive the benefits of hearing the sermon. (Liking for and listening to the sermon is the instrumental cause whereas destruction-cum-pacification of *Jnanavaraniya karma* is the actual cause.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : केवली आदि शब्दों का तात्पर्य–केवलिस्स–जिन अथवा तीर्थंकर। केवलि–श्रावक–जिसने केवली भगवान से स्वयमेव पूछा है, अथवा उनके वचन सुने हैं, वह। केवलि–उपासक–केवली की उपासना करने वाले अथवा केवली द्वारा दूसरे को कहे गये वचन को सुनकर बना हुआ उपासक भक्त। केवलि–पाक्षिक–केवलि–पाक्षिक अर्थात् स्वयंबुद्ध केवली। असोच्चा केवली–जिसने केवली भगवान की देशना सुनी नहीं है ऐसे जीव। *(वृत्ति, पत्र ४३२)*

Technical terms—*Kevali*—*Jina* or *Tirthankar*. ***Kevali-shravak***—a lay disciple who has asked a question or listened to the *Kevali* in person. ***Kevali-upaasak***—a devotee who indirectly knows about the *Kevali* and his sermon. ***Kevali-paakshik***—self-enlightened omniscient. (*Vritti*, leaf 432)

शुद्ध बोधि का लाभालाभ BENEFIT OF RIGHT PERCEPTION/FAITH

३. [प्र. १] असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलं बोहिं बुज्झेज्जा?

[उ.] गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव अत्थेगइए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा, अत्थेगइए केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा।

३. [प्र. १] भगवन् ! केवली यावत् केवलि–पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना ही क्या कोई जीव शुद्ध बोधि (सम्यग्दर्शन) प्राप्त कर लेता है ?

[उ.] गौतम ! केवली यावत् केवलि–पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना ही कई जीव शुद्ध बोधि को प्राप्त कर लेते हैं और कई जीव प्राप्त नहीं कर पाते।

3. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *jiva* (living being) attain pure enlightenment (right perception/faith) even without hearing (the sermon) from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*) ?

[Ans.] Gautam ! Some *jiva* (living being) does and some does not attain pure enlightenment (right perception/faith) even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his female devotee (*upaasika*).

३. [प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! जाव नो बुज्झेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलं बोहिं बुज्झेज्जा, जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव णो बुज्झेज्जा।

३. [प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है कि यावत् शुद्ध बोधि प्राप्त नहीं कर पाते ?

[उ.] हे गौतम ! जिस जीव ने दर्शनावरणीय (दर्शन–मोहनीय) कर्म का क्षयोपशम किया है, वह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीव केवली यावत् केवलि-पाक्षिक उपासिका से सुने बिना ही शुद्ध बोधि (सम्यग्दर्शन) प्राप्त कर लेता है, किन्तु जिस जीव ने दर्शनावरणीय कर्मों का क्षयोपशम नहीं किया है, उस जीव को केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना शुद्ध बोधि का लाभ नहीं होता। इसी कारण से हे गौतम ! ऐसा कहा गया है कि यावत् किसी को सुने बिना शुद्ध बोधि का लाभ नहीं होता।

3. [Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that ... and so on up to... and some does not attain pure enlightenment (right perception/faith) ?

[Ans.] Gautam ! A *jiva* who has accomplished destruction-cum-pacification of *Darshanavaraniya karma* (perception/faith obscuring *karma*) attains pure enlightenment (right perception/faith) even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*). And a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Darshanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) does not attain pure enlightenment (right perception/faith) without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*). Gautam ! That is why it is said that ... and so on up to... does not attain pure enlightenment (right perception/faith) without hearing the sermon.

अनगारिता का ग्रहण-अग्रहण INITIATION AS HOMELESS ASCETIC

४. [प्र. १] असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा ?

[उ.] गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगइए केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइज्जा, अत्थेगइए केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं नो पव्वएज्जा।

४. [प्र. १] भगवन् ! केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना ही क्या कोई जीव केवल मुण्डित होकर अगारवास त्यागकर अनगारधर्म में प्रव्रजित हो सकता है ?

[उ.] गौतम ! केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना ही कोई जीव मुण्डित होकर अगारवास छोड़कर शुद्ध या सम्पूर्ण अनगारिता में प्रव्रजित हो पाता है और कोई प्रव्रजित नहीं हो पाता।

4. [Q. 1] *Bhante* ! Can a *jiva* (living being) tonsure his head, renounce his home and get initiated to accept the life of a homeless-ascetic (*anagaar*) even without hearing (the sermon) from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! Some *jiva* (living being) can and some cannot tonsure his head, renounce his home and get initiated to accept the life of a homeless-ascetic (*anagaar*) even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his female devotee (*upaasika*).

४. [प्र. २] से केणट्ठेणं जाव नो पव्वएज्जा ?

[उ.] गोयमा ! जस्स णं धम्मंतराइयाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवति से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा, जस्स णं धम्मंतराइयाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवति से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव मुंडे भवित्ता जाव णो पव्वएज्जा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव नो पव्वएज्जा।

४. [प्र. २] भगवन् ! किस कारण से यावत् कोई जीव प्रव्रजित नहीं हो पाता ?

[उ.] गौतम ! जिस जीव ने धर्मान्तरायिक कर्मों का क्षयोपशम किया हुआ है, वह जीव केवलि आदि से सुने बिना ही मुण्डित होकर अगारवास से अनगारधर्म में प्रव्रजित हो जाता है, किन्तु जिस जीव के धर्मान्तरायिक कर्मों का क्षयोपशम नहीं हुआ है, वह मुण्डित होकर अगारवास से अनगारधर्म में प्रव्रजित नहीं हो पाता। इसी कारण से हे गौतम ! यह कहा गया है कि यावत् वह (कोई जीव) प्रव्रज्या ग्रहण नहीं कर पाता।

4. [Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that ... and so on up to... some cannot get initiated to accept the life of a homeless-ascetic (*anagaar*) ?

[Ans.] Gautam ! A *jiva* who has accomplished destruction-cum-pacification of *Dharmantarayik karma* (religion hindering *karma*) can tonsure his head, renounce his home and get initiated to accept the life of a homeless-ascetic (anagaar) even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on .... And a jiva who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Dharmantarayik karma* (religion hindering *karma*) cannot tonsure his head, renounce his home and get initiated to accept the life of a homeless-ascetic (*anagaar*) without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on ..... Gautam ! That is why it is said that ... and so on up to... cannot tonsure his head, renounce his home and get initiated.

विवेचन : धम्मंतराइयाणं कम्माणं–धर्म में अर्थात् चारित्र अंगीकार रूप धर्म में अन्तराय–विघ्न डालने वाले कर्म। धर्मान्तरायिक कर्म अर्थात् वीर्यान्तराय एवं विविध चारित्रमोहनीय कर्म।

Elaboration—*Dhammamantaraiyaanam kammanam*—the *karma* that hinders passage into religion effected by initiation into the order. This includes *Viryantaraya karma* (potency hindering *karma*) and various *Chaaritra mohaniya karmas* (conduct deluding *karmas*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. [प्र. १] असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगइए केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा, अत्थेगइए केवलं बंभचेरवासं नो आवसेज्जा।

५. [प्र. १] भगवन् ! केवली यावत् केवलि–पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना ही क्या कोई जीव (मैथुन विरमणरूप) शुद्ध ब्रह्मचर्यवास धारण कर पाता है ?

[उ.] गौतम ! केवली यावत् केवलि–पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना ही कोई जीव शुद्ध ब्रह्मचर्यवास को धारण कर लेता है और कोई नहीं कर पाता।

5. [Q. 1] *Bhante* ! Is it possible for a *jiva* (living being) to lead a life of strict celibacy even without hearing (the sermon) from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*) ?

[Ans.] Gautam ! It may be possible for some *jiva* (living being) and not for some to lead a life of strict celibacy without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his female devotee (*upaasika*).

५. [प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव नो आवसेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! जस्स णं चरित्तावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा, जस्स णं चरित्तावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव नो आवसेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो आवसेज्जा।

५. [प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि यावत् कोई जीव धारण नहीं कर पाता ?

[उ.] गौतम ! जिस जीव ने चारित्रावरणीय वेद नोकषायमोहनीयरूप कर्म का क्षयोपशम किया है, वह केवली आदि से सुने बिना ही शुद्ध ब्रह्मचर्यवास को धारण कर लेता है, किन्तु जिस जीव ने चारित्रावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया है, वह जीव यावत् शुद्ध ब्रह्मचर्यवास को धारण नहीं कर पाता। इस कारण से ऐसा कहा जाता है कि यावत् वह धारण नहीं कर पाता।

5. [Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that ... and so on up to... It may be possible for some *jiva* (living being) and not for some to lead a life of strict celibacy ?

[Ans.] Gautam ! A *jiva* who has accomplished destruction-cum-pacification of *Chaaritravaraniya karma* (conduct obscuring *karma*; here it specifically indicates the gender producing *karma* because that is the deluding factor) may lead a life of strict celibacy even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on .... And a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Chaaritravaraniya karma*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(conduct obscuring *karma*) cannot lead a life of strict celibacy without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on ... Gautam ! That is why it is said that ... and so on up to... cannot lead a life of strict celibacy.

शुद्ध संयम का ग्रहण–अग्रहण **ENDEAVOUR FOR ASCETIC-DISCIPLINE**

६. [प्र. १] असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा, जाव उवासियाए वा जाव अत्थेगइए केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा, अत्थेगइए केवलेणं संजमेणं नो संजमेज्जा।

६. [प्र. १] भगवन् ! केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना ही क्या कोई जीव शुद्ध संयम (निरतिचार संयम आराधना) द्वारा संयम-यतना करता है ?

[उ.] हे गौतम ! केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना ही कोई जीव शुद्ध संयम द्वारा संयम-यतना करता है और कोई जीव नहीं करता।

6. [Q. 1] *Bhante* ! Can a *jiva* (living being) practice ascetic-discipline (*samyam-yatana*) through strict restraint even without hearing (the sermon) from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*) ?

[Ans.] Gautam ! Some *jiva* (living being) can and some cannot practice ascetic-discipline (*samyam-yatana*) through strict restraint even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his female devotee (*upaasika*).

६. [प्र. २] से केणट्ठेणं जाव नो संजमेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! जस्स णं जयणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा ण केवलिस्स वा जाव केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा, जस्स णं जयणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव नो संजमेज्जा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव अत्थेगइए नो संजमेज्जा।

६. [प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि यावत् कोई जीव शुद्ध संयम द्वारा संयम-यतना करता है और कोई जीव नहीं करता ?

[उ.] गौतम ! जिस जीव ने यतनावरणीय कर्म (चारित्र विषयक वीर्यान्तराय कर्म) का क्षयोपशम किया हुआ है, वह केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना ही शुद्ध संयम द्वारा संयम-यतना करता है, किन्तु जिसने यतनावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया है, वह केवली आदि से सुने बिना यावत् शुद्ध संयम द्वारा संयम-यतना नहीं करता। इसीलिए हे गौतम ! पूर्वोक्त प्रकार से कहा गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

6. [Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that ... and so on up to... some cannot practice ascetic-discipline (*samyam-yatana*) through strict restraint ?

[Ans.] Gautam ! A *jiva* who has accomplished destruction-cum-pacification of *Yatanavaraniya karma* (endeavour obscuring *karma*; here it is potency hindering *karma* related to conduct) can practice ascetic-discipline (*samyam-yatana*) through strict restraint even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on .... And a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Yatanavaraniya karma* (endeavour obscuring *karma*) cannot practice ascetic-discipline (*samyam-yatana*) through strict restraint without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on ..... Gautam ! That is why it is said that ... and so on up to... cannot can practice ascetic-discipline (*samyam-yatana*) through strict restraint.

शुद्ध संवर का आचरण–अनाचरण PERFECT BLOCKAGE OF INFLOW OF KARMAS

७. [प्र. १] असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा ?

[उ.] **गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स जाव अत्थेगइए केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा, अत्थेगइए केवलेणं जाव नो संवरेज्जा।**

७. [प्र. १] भगवन् ! केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका से धर्मश्रवण किये बिना ही क्या कोई जीव शुद्ध संवर (आस्रव निरोध) द्वारा संवृत होता है ?

[उ.] गौतम ! केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना ही कोई जीव शुद्ध संवर से संवृत होता है और कोई जीव शुद्ध संवर से संवृत नहीं होता।

7. [Q. 1] *Bhante* ! Can a *jiva* (living being) accomplish perfect blockage of inflow of *karmas* (*shuddha samvar*) through sincere withdrawal even without hearing (the sermon) from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*) ?

[Ans.] Gautam ! Some *jiva* (living being) can and some cannot accomplish perfect blockage of inflow of *karmas* (*shuddha samvar*) through sincere withdrawal even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his female devotee (*upaasika*).

७. [प्र. २] से केणट्ठेणं जाव नो संवरेज्जा ?

[उ.] **गोयमा ! जस्स णं अज्झवसाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा, जस्स णं अज्झवसाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव नो संवरेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो संवरेज्जा।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. [प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि कोई जीव केवली आदि से सुने बिना ही शुद्ध संवर से संवृत होता है और कोई जीव यावत् नहीं होता ?

[उ.] गौतम ! जिस जीव ने अध्यवसानावरणीय (भावचारित्रवरणीय) कर्मों का क्षयोपशम किया है, वह केवली आदि से सुने बिना ही, यावत् शुद्ध संवर से संवृत हो जाता है, किन्तु जिसने अध्यवसानावरणीय कर्मों का क्षयोपशम नहीं किया है, वह जीव केवली आदि से सुने बिना यावत् शुद्ध संवर से संवृत नहीं होता। इसी कारण से हे गौतम ! यह कहा जाता है कि यावत् शुद्ध संवर से संवृत नहीं होता।

7. [Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that ... and so on up to... some cannot accomplish perfect blockage of inflow of *karmas* (*shuddha samvar*) through sincere withdrawal ?

[Ans.] Gautam ! A jiva who has accomplished destruction-cum-pacification of *Adhyavasanavaraniya karma* (conation obscuring *karma*; here it is cognition obscuring *karma* related to conduct) can accomplish perfect blockage of inflow of *karmas* (*shuddha samvar*) through sincere withdrawal even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on .... And a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Adhyavasanavaraniya karma* (conation obscuring *karma*) cannot accomplish perfect blockage of inflow of *karmas* (*shuddha samvar*) through sincere withdrawal without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on ..... Gautam ! That is why it is said as aforementioned ... and so on up to... cannot attain perfect blockage of inflow of *karmas* (*shuddha samvar*) through sincere withdrawal.

ज्ञान–उपार्जन–अनुपार्जन KNOWLEDGE–ACQUIRE–NOT ACQUIRE

८. [प्र. १] असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स जाव केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगइए केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा, अत्थेगइए केवलं आभिणिबोहियनाणं नो उप्पाडेज्जा।

८. [प्र. १] भगवन् ! केवली आदि से सुने बिना ही क्या कोई जीव शुद्ध आभिनिबोधिकज्ञान उपार्जन कर लेता है ?

[उ.] गौतम ! केवली आदि से सुने बिना कोई जीव शुद्ध आभिनिबोधिकज्ञान प्राप्त करता है और कोई जीव यावत् नहीं प्राप्त करता।

8. [Q. 1] *Bhante* ! Can a *jiva* (living being) acquire *Abhinibodhik jnana* or *mati-jnana* (sensory knowledge or to know the apparent form of things coming before the soul by means of five sense organs and the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

mind) even without hearing (the sermon) from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*)?

[Ans.] Gautam ! Some *jiva* (living being) can and some cannot acquire *Abhinibodhik jnana* or *mati-jnana* (sensory knowledge or to know the apparent form of things coming before the soul by means of five sense organs and the mind) even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his female devotee (*upaasika*).

८. [प्र. २] से केणट्ठेणं जाव नो उप्पाडेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! जस्स णं आभिणिबोहियनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा, जस्स णं आभिणिबोहियनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलं आभिणिबोहियनाणं नो उप्पाडेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो उप्पाडेज्जा।

८. [प्र. २] भगवन् ! किस कारण से यावत् नहीं प्राप्त करता ?

[उ.] गौतम ! जिस जीव ने आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय कर्मों का क्षयोपशम किया है, वह केवली आदि से सुने बिना ही शुद्ध आभिनिबोधिकज्ञान उपार्जन कर लेता है, किन्तु जिसने आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय कर्मों का क्षयोपशम नहीं किया है, वह केवली आदि से सुने बिना शुद्ध आभिनिबोधिकज्ञान का उपार्जन नहीं कर पाता। हे गौतम ! इसीलिए कहा जाता है कि कोई जीव यावत् शुद्ध आभिनिबोधिकज्ञान उपार्जन कर लेता है और कोई नहीं कर पाता।

8. [Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that ... and so on up to... some cannot acquire *Abhinibodhik jnana* (sensory knowledge or to know the apparent form of things coming before the soul by means of five sense organs and the mind)?

[Ans.] Gautam ! A *jiva* who has accomplished destruction-cum-pacification of *Abhinibodhik-jnanaavaraniya karma* (sensory knowledge obscuring *karma*) can acquire *Abhinibodhik jnana* (sensory knowledge) even without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on .... And a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Abhinibodhik-jnanaavaraniya karma* (sensory knowledge obscuring *karma*) cannot acquire *Abhinibodhik jnana* without hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on ... Gautam ! That is why it is said as aforementioned ... and so on up to... cannot acquire *Abhinibodhik jnana*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९. [प्र.] असोच्चा णं भंते ! केवलि० जाव केवलं सुयनाणं उप्पाडेज्जा ?

[उ.] एवं जहा आभिणिबोहियनाणस्स वत्तव्वया भणिया तहा सुयनाणस्स वि भाणियव्वा, नवरं सुयनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे।

९. [प्र.] भगवन् ! केवली आदि से सुने बिना ही क्या कोई जीव श्रुतज्ञान उपार्जन कर लेता है ?

[उ.] (गौतम !) जिस प्रकार आभिनिबोधिकज्ञान का कथन किया गया, उसी प्रकार शुद्ध श्रुतज्ञान के विषय में भी कहना चाहिए। विशेष इतना ही है कि यहाँ श्रुतज्ञानावरणीय कर्मों का क्षयोपशम कहना चाहिए।

9. [Q.] *Bhante* ! Can a *jiva* (living being) acquire *Shrut-jnana* (scriptural knowledge) even without hearing (the sermon) from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*) ?

[Ans.] Gautam ! What has been said about *Abhinibodhik jnana* should be repeated here. The only difference is that in this case the destruction-cum-pacification is of *Shrut-jnanaavaraniya karma* (scriptural knowledge obscuring *karma*).

१०. एवं चेव केवलं ओहिनाणं भाणियव्वं; नवरं ओहिणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे।

१०. इसी प्रकार शुद्ध अवधिज्ञान के उपार्जन के विषय में कहना चाहिए। विशेष यह है कि यहाँ अवधिज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम कहना चाहिए।

10. The same should be repeated for *Avadhi-jnana* (extrasensory perception of the physical dimension; something akin to clairvoyance). The only difference is that in this case the destruction-cum-pacification is of *Avadhi-jnanaavaraniya karma* (*karma* that obscures extrasensory perception of the physical dimension).

११. एवं केवलं मणपज्जवनाणं उप्पाडेज्जा, नवरं मणपज्जवणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे।

११. इसी प्रकार शुद्ध मनःपर्ययज्ञान के उत्पन्न होने के विषय में कहना चाहिए। विशेष इतना ही है कि मनःपर्ययज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम का कथन करना चाहिए।

11. The same should be repeated for *Manah-paryav-jnana* (extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings, something akin to telepathy). The only difference is that in this case the destruction-cum-pacification is of *Manah-paryav-jnanaavaraniya karma* (*karma* that obscures extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. [प्र.] असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलनाणं उप्पाडेज्जा?

[उ.] एवं चेव, नवरं केवलनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए भाणियव्वे, सेसं तं चेव। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जाव केवलनाणं उप्पाडेज्जा।

१२. [प्र.] भगवन् ! केवली आदि से सुने बिना ही क्या कोई जीव केवलज्ञान उपार्जन कर लेता है ?

[उ.] (गौतम !) पूर्ववत् यहाँ भी कहना चाहिए। विशेष इतना ही है कि यहाँ केवलज्ञानावरणीय कर्मों का क्षय कहना चाहिए। शेष सब कथन पूर्ववत् हैं। इसीलिए हे गौतम ! यह कहा जाता है कि यावत् केवलज्ञान का उपार्जन नहीं करता।

12. [Q.] *Bhante* ! Can a *jiva* (living being) acquire *Keval-jnana* (omniscience) even without hearing (the sermon) from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*) ?

[Ans.] The aforesaid should be repeated here. The only difference is that in this case the destruction-cum-pacification is of *Keval-jnanaavaraniya karma* (*karma* that obscures omniscience). Gautam ! That is why it is said as aforementioned ... and so on up to... can not acquire *Keval-jnana* (omniscience).

ग्यारह बोलों की प्राप्ति और अप्राप्ति **PERFECTION OF ELEVEN ACTS**

१३. [प्र. १] असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए व केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए १?, केवलं बोहिं बुज्झेज्जा २?, केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा ३?, केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा ४?, केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा ५?, केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा ६?, केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा ७?, जाव केवलं मणपज्जवनाणं उप्पाडेज्जा १०?, केवलनाणं उप्पाडेज्जा ११?

[उ.] गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगइए केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए, अत्थेगइए केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए १; अत्थेगइए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा, अत्थेगइए केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा २; अत्थेगइए केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा, अत्थेगइए जाव नो पव्वएज्जा ३; अत्थेगइए केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा, अत्थेगइए केवलं बंभचेरवासं नो आवसेज्जा ४; अत्थेगइए केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा, अत्थेगइए केवलेणं संजमेणं नो संजमेज्जा ५; एवं संवरेण वि ६; अत्थेगइए केवलं आभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा, अत्थेगइए जाव नो उप्पाडेज्जा ७; एवं जाव मणपज्जवनाणं ८-९-१०; अत्थेगइए केवलनाणं उप्पाडेज्जा, अत्थेगइए केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा ११।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. [प्र. १] भगवन् ! केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका (इन दस) के पास से धर्मश्रवण किये बिना ही (१) क्या कोई जीव केवलि-प्ररूपित धर्मश्रवण-लाभ करता है, (२) शुद्ध बोधि (सम्यग्दर्शन) प्राप्त करता है, (३) मुण्डित होकर अगारवास से शुद्ध अनगारिता को स्वीकार करता है, (४) शुद्ध ब्रह्मचर्यवास धारण करता है, (५) शुद्ध संयम द्वारा संयम-यतना करता है, (६) शुद्ध संवर से संवृत होता है, (७-८-९) शुद्ध आभिनिबोधिकज्ञान उत्पन्न करता है, यावत् (१०) शुद्ध मनःपर्यवज्ञान, तथा (११) केवलज्ञान उत्पन्न करता है ?

[उ.] गौतम ! केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका से सुने बिना ही (१) कोई जीव केवलि-प्ररूपित धर्मश्रवण का लाभ पाता है, कोई जीव नहीं पाता, (२) कोई जीव शुद्ध बोधिलाभ प्राप्त करता है, कोई नहीं प्राप्त करता, (३) कोई जीव मुण्डित होकर अगारवास से शुद्ध अनगारधर्म में प्रव्रजित होता है और कोई प्रव्रजित नहीं होता, (४) कोई जीव शुद्ध ब्रह्मचर्यवास को धारण करता है और कोई नहीं धारण करता, (५) कोई जीव शुद्ध संयम से संयम--यतना करता है और कोई नहीं करता, (६) कोई जीव शुद्ध संवर से संवृत होता है और कोई जीव संवृत नहीं होता, (७) इसी प्रकार कोई जीव आभिनिबोधिकज्ञान का उपार्जन करता है और कोई उपार्जन नहीं करता, (८-९-१०) कोई जीव श्रुतज्ञान-अवधिज्ञान यावत् मनःपर्यवज्ञान का उपार्जन करता है और कोई नहीं करता, (११) कोई जीव केवलज्ञान का उपार्जन करता है और कोई नहीं करता।

13. [Q. 1] *Bhante* ! Can a *jiva* (living being) (1) derive the benefits of hearing the sermon of an omniscient, (2) attain pure enlightenment, (3) tonsure his head, renounce his home and get initiated to accept the life of a homeless-ascetic, (4) lead a life of strict celibacy, (5) practice ascetic-discipline through strict restraint, (6) attain perfect blockage of inflow of *karmas* through sincere withdrawal, (7, 8, 9) acquire *Abhinibodhik jnana* ... and so on up to... (10) *Manah-paryav-jnana*, and (11) acquire *Keval-jnana* (omniscience), even without hearing (the sermon) from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*) (these ten) ?

[Ans.] Gautam ! Even without hearing (the sermon) from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*) (these ten) (1) some *jiva* (living being) may and some other may not derive the benefits of hearing the sermon of an omniscient, (2) some *jiva* (living being) may and some other may not attain pure enlightenment, (3) some *jiva* (living being) may and some other may not tonsure his head, renounce his home and get initiated to accept the life of a homeless-ascetic, (4) some *jiva* (living being) may and some other may not lead a life of strict celibacy, (5) some *jiva* (living being) may and some other may not practice ascetic-discipline through

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

strict restraint, (6) some *jiva* (living being) may and some other may not attain perfect blockage of inflow of *karmas* through sincere withdrawal, (7, 8, 9) some *jiva* (living being) may and some other may not acquire *Abhinibodhik jnana* ... and so on up to... (10) *Manah-paryav-jnana*, and (11) some *jiva* (living being) may and some other may not acquire *Keval-jnana* (omniscience).

१३. [प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ असोच्चा णं तं चेव जाव अत्थेगइए केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! जस्स णं नाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ १, जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ २, जस्स णं धम्मंतराइयाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ ३, एवं चरित्तावरणिज्जाणं ४, जयणावरणिज्जाणं ५, अज्झवसाणावरणिज्जाणं ६, आभिणिबोहियनाणावरणिज्जाणं ७, जाव मणपज्जवनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे नो कडे भवइ ८-९-१०, जस्स णं केवलनाणावरणिज्जाणं जाव खए नो कडे भवइ ११, से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए, केवलं बोहिं नो बुज्झेज्जा जाव केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा। जस्स णं नाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवति १, जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ २, जस्स णं धम्मंतराइयाणं ३, एवं जाव जस्स णं केवलनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए कडे भवइ ११, से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए १, केवलं बोहिं बुज्झेज्जा २, जाव केवलणाणं उप्पाडेज्जा ११।

१३. [प्र. २] भगवन् ! इस (पूर्वोक्त) कथन का क्या कारण है कि कोई जीव केवलि-प्ररूपित धर्मश्रवण-लाभ करता है, यावत् केवलज्ञान का उपार्जन करता है और कोई यावत् केवलज्ञान का उपार्जन नहीं करता ?

[उ.] गौतम ! (१) जिस जीव ने ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (२) जिस जीव ने दर्शनावरणीय (दर्शनमोहनीय) कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (३) धर्मान्तरायिक कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (४) चारित्रावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (५) यतनावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (६) अध्यवसानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (७) आभिनिबोधिकज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (८-९-१०) इसी प्रकार श्रुतज्ञानावरणीय, अवधिज्ञानावरणीय और मनःपर्यवज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, तथा (११) केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय नहीं किया, वे जीव केवली आदि से धर्मश्रवण किये बिना धर्मश्रवण-लाभ नहीं पाते, शुद्ध बोधिलाभ का अनुभव नहीं करते, यावत् केवलज्ञान को उत्पन्न नहीं कर पाते। (१) जिस जीव ने ज्ञानावरणीय कर्मों का क्षयोपशम किया है, (२) जिसने दर्शनावरणीय कर्मों का क्षयोपशम किया है, (३) जिसने धर्मान्तरायिक कर्मों का क्षयोपशम किया है, (४-११) यावत् जिसने केवलज्ञानावरणीय कर्मों का क्षय किया है, वह केवली आदि से धर्मश्रवण किये बिना ही केवलि-प्ररूपित धर्मश्रवण लाभ प्राप्त करता है, शुद्ध बोधिलाभ का अनुभव करता है, यावत् केवलज्ञान को उपार्जित कर लेता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

13. [**Q.** 2] *Bhante* ! Why is it said that some *jiva* (living being) may and some other may not derive the benefits of hearing the sermon of an omniscient ... and so on up to... some *jiva* (living being) may and some other may not acquire *Keval-jnana* (omniscience) ?

[**Ans.**] Gautam ! (1) A *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*), (2) a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Darshanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*), (3) a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Dharmantarayik karma* (religion hindering karma), (4) a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Chaaritravaraniya karma* (conduct obscuring *karma*), (5) a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Yatanavaraniya karma* (endeavour obscuring *karma*), (6) a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Adhyavasanavaraniya karma* (conation obscuring *karma*), (7) a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Abhinibodhik-jnanaavaraniya karma* (sensual knowledge obscuring *karma*), (8, 9, 10) in the same way a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Shrut-jnanaavaraniya karma* (scriptural knowledge obscuring *karma*), *Avadhi-jnanaavaraniya karma* (*karma* that obscures extrasensory perception of the physical dimension) and (10) *Manah-paryav-jnana avaraniya karma* (karma that obscures extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings), and (11) a *jiva* who has not accomplished destruction-cum-pacification of *Keval-jnanaavaraniya karma* (karma that obscures omniscience), does not derive the benefits of hearing the sermon of an omniscient (*Kevali*), does not attain pure enlightenment (right perception/faith), ... and so on up to... does not acquire *Keval-jnana*, without hearing it from the omniscient (etc.). A *jiva* who has accomplished destruction-cum-pacification of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*), (2) a *jiva* who has accomplished destruction-cum-pacification of *Darshanavaraniya karma* (knowledge obscuring karma), (3) a *jiva* who has accomplished destruction-cum-pacification of *Dharmantarayik karma* (religion hindering karma), ... and so on up to... (4-11) a *jiva* who has accomplished destruction-cum-pacification of *Keval-jnanaavaraniya karma* (*karma* that obscures omniscience), may derive the benefits of hearing the sermon of an omniscient (*Kevali*), may attain pure enlightenment (right perception/faith), ... and so on up to... may acquire *Keval-jnana*, without hearing it from the omniscient (etc.).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभंगज्ञान एवं अवधिज्ञान प्राप्त होने की क्रमिक प्रक्रिया

GRADUAL PROCESS OF RISING FROM VIBHANGAA-JNANA TO AVADHI-JNANA

१४. तस्स णं छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय पगिज्झिय सूराभिमुहस्स आयावणभूमीए आयावेमाणस्स पगइभद्दयाए पगइउवसंतयाए पगइपयणुकोह–माण–माया–लोभयाए मिउमद्दवसंपन्नयाए अल्लीणताए भद्दताए विणीततताए अण्णया कयाइ सुभेणं अज्झवसाणेणं, सुभेणं परिणामेणं, लेस्साहिं विसुज्झमाणीहिं तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहापोहमग्गण–गवेसणं करेमाणस्स विब्भंगे नामं अन्नाणे समुप्पज्जइ, से णं तेणं विब्भंगनाणेणं समुप्पन्नेणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं जाणइ पासइ, से णं तेणं विब्भंगनाणेणं समुप्पन्नेणं जीवे वि जाणइ, अजीवे वि जाणइ, पासंडत्थे सारंभे सपरिग्गहे संकिलिस्समाणे वि जाणइ, विसुज्झमाणे वि जाणइ, से णं पुव्वामेव सम्मत्तं पडिवज्जइ, सम्मत्तं पडिवज्जित्ता समणधम्मं रोएति, समणधम्मं रोएत्ता चरित्तं पडिवज्जइ, चरित्तं पडिवज्जित्ता लिंगं पडिवज्जइ, तस्स णं तेहिं मिच्छत्तपज्जवेहिं परिहायमाणेहिं परिहायमाणेहिं, सम्मद्दंसणपज्जवेहिं परिवड्ढमाणेहिं परिवड्ढमाणेहिं से विब्भंगे अन्नाणे सम्मत्तपरिग्गहिए खिप्पामेव ओही परावत्तइ।

१४. (विभंग ज्ञान प्राप्ति के कारण) निरन्तर छठ–छठ (बेले–बेले) का तपःकर्म करते हुए सूर्य के सम्मुख बाहें ऊँची करके आतापनाभूमि में आतापना लेते हुए उस (बिना धर्मश्रवण किए केवलज्ञान तक प्राप्त करने वाले) जीव की प्रकृति–भद्रता (सरलता) से, प्रकृति की उपशान्तता से स्वाभाविक रूप से ही क्रोध, मान, माया और लोभ की अत्यन्त मन्दता होने से, अत्यन्त मृदुत्वसम्पन्नता से, कामभोगों में अनासक्ति से, भद्रता और विनीतता से तथा किसी समय शुभ अध्यवसाय, शुभ परिणाम, विशुद्ध लेश्या एवं तदावरणीय (विभंगज्ञानावरणीय) कर्मों के क्षयोपशम से ईहा (ज्ञान–प्राप्ति की चेष्टा), अपोह (वस्तु तत्त्व की विचारणा), मार्गणा (विद्यमान गुणों का आलोचन) और गवेषणा (व्यतिरेक धर्मों का निराकरण) करते हुए 'विभंग' नामक अज्ञान उत्पन्न होता है। फिर वह उस उत्पन्न हुए विभंगज्ञान द्वारा जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट असंख्यात हजार योजन तक जानता और देखता है। उस उत्पन्न हुए विभंगज्ञान से वह जीवों को भी जानता है और अजीवों को भी जानता है। वह पाषण्डस्थ (व्रतों का पालन करने वाला), सारम्भी (आरम्भयुक्त), सपरिग्रह (परिग्रही) और संक्लेश पाते हुए जीवों को भी जानता है और विशुद्ध होते हुए जीवों को भी जानता है। (तत्पश्चात्) वह विभंगज्ञानी (विभंगज्ञान अवधिज्ञान में परिणत होने की प्रक्रिया) सर्वप्रथम सम्यक्त्व प्राप्त करता है, सम्यक्त्व प्राप्त करके श्रमणधर्म पर रुचि करता है, श्रमणधर्म पर रुचि करके चारित्र अंगीकार करता है। चारित्र अंगीकार करके लिंग (साधुवेश) स्वीकार करता है। तब उस (भूतपूर्व विभंगज्ञानी) के मिथ्यात्व के पर्याय क्रमशः क्षीण होते–होते और सम्यग्दर्शन के पर्याय क्रमशः बढ़ते–बढ़ते वह 'विभंग' नामक अज्ञान, सम्यक्त्वयुक्त होता है और शीघ्र ही अवधि (ज्ञान) के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

14. An aspirant who continuously observes the austerity of two day fasts, missing six meals, and exposes himself to the scorching sun raising his arms standing at the allotted spot; at some point of time that being (capable of attaining omniscience without hearing the sermon) acquires the pervert knowledge called *Vibhanga-jnana* due to his natural simplicity, natural gentleness, natural very low intensity of anger, conceit, deceit and greed, very humble disposition, detachment from indulgence in mundane pleasures, nobility and humility, as well as through his noble endeavour, noble intent, pure soul-complexion, and destruction-cum-pacification of *karmas* obscuring that (*Vibhanga-jnana*), undergoing the progressive process of *Iha* (effort to acquire knowledge or conceiving of the proper meaning), *Apoh* (to ascertain through contemplation), *Margana* (the search for supporting values) and *Gaveshana* (the comparison with opposing values and their negation). With the help of this pervert knowledge he is able to know and see up to a minimum distance of uncountable fraction of an Angul (a unit of linear measure equal to width of a finger) and maximum distance of innumerable thousand Yojans (about eight miles). With this acquired knowledge he knows the world of the living as well as that of the non-living. That *paakhandasth* (ritual observer of vows) knows sinning, covetous, and tortured living beings as well as those undergoing purification. Later, this aspirant first of all attains righteousness (*samyaktva*); thereafter he gets inclined towards the *Shraman* religion and accepts the code of conduct; then he gets initiated and takes the ascetic garb. Consequently his state of unrightousness (*mithyatva*) gradually fades and that of righteousness increases. So much so that the *Vibhanga-jnana* gets infused with righteousness and soon turns into *Avadhi-jnana*.

विवेचन : विभंगज्ञानी को सम्यक्त्व-प्राप्ति किस प्रकार होती है ? इसकी प्रक्रिया बताने के लिए अन्त में पाठ दिया गया है- '''**विभंगे अण्णाणे सम्मत्त-परिग्गहिए**'''। उसका आशय यह है कि चारित्र-प्राप्ति से पहले वह भूतपूर्व विभंगज्ञानी सम्यक्त्व प्राप्त करता है और सम्यक्त्व प्राप्त होते ही उसका विभंगज्ञान अवधिज्ञान के रूप में परिणत हो जाता है। उसके बाद की प्रक्रिया है-श्रमणधर्म की रुचि, चारित्रधर्म स्वीकार, वेशग्रहण आदि। *(वृत्ति, पत्र ४३३-४३४)*

Elaboration—The last sentence of this aphorism—*Vihanga annaane sammat-pariggahiye* ... explains the process of *Vibhanga-jnana* evolving into *Avadhi-jnana*. It conveys that prior to accepting the code of conduct, one who was *Vibhanga-jnani* (one having pervert knowledge) attains righteousness (*samyaktva*). The moment he attains righteousness his

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

pervert knowledge transforms into *Avadhi-jnana*. Thereafter follow interest in *Shraman* religion, acceptance of code of conduct, initiation etc. (*Vritti*, leaves 433-434)

पूर्वोक्त अवधिज्ञानी में लेश्या, ज्ञान आदि QUALITIES OF THE SAID AVADHI-JNANI

१५. [प्र.] से णं भंते ! कतिसु लेस्सासु होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! तिसु विसुद्धलेस्सासु होज्जा, तं जहा–तेउलेस्साए पम्हलेस्साए सुक्कलेस्साए।

१५. [प्र.] भगवन् ! वह (पूर्वोक्त) अवधिज्ञानी कितनी लेश्याओं में होता है ?

[उ.] गौतम ! वह तीन विशुद्ध लेश्याओं में होता है। यथा–(१) तेजोलेश्या, (२) पद्मलेश्या, और (३) शुक्ललेश्या।

15. [Q.] *Bhante* ! In how many soul-complexions (*leshya*) does that (aforesaid) *Avadhi-jnani* (the possessor of *Avadhi-jnana*) dwell ?

[Ans.] Gautam ! He dwells in three pure soul complexions—(1) *Tejoleshya* (fiery complexion of soul), (2) *Padma leshya* (yellow soul-complexion) and (3) *Shukla leshya* (white soul-complexion).

१६. [प्र.] से णं भंते ! कतिसु णाणेसु होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! तिसु, आभिणिबोहियनाण–सुयनाण–ओहिनाणेसु होज्जा।

१६. [प्र.] भगवन् ! वह अवधिज्ञानी कितने ज्ञानों में होता है ?

[उ.] गौतम ! वह आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान; इन तीन ज्ञानों में होता है।

16. [Q.] *Bhante* ! In how many *jnanas* (types of knowledge) does that (aforesaid) *Avadhi-jnani* (the possessor of *Avadhi-jnana*) dwell ?

[Ans.] Gautam ! He dwells in three *jnanas* (types of knowledge)—*Abhinibodhik jnana* (sensory knowledge), *Shrut-jnana* (scriptural knowledge) and *Avadhi-jnana* (extrasensory perception of the physical dimension; something akin to clairvoyance).

१७. [प्र. १] से णं भंते ! किं सजोगी होज्जा, अजोगी होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! सजोगी होज्जा, नो अजोगी होज्जा।

१७. [प्र. १] भगवन् ! वह सयोगी होता है, या अयोगी ?

[उ.] गौतम ! वह सयोगी होता है, अयोगी नहीं होता।

17. [Q. 1] *Bhante* ! Is he *sayogi* (with association or activity) or *ayogi* (without association or activity) ?

[Ans.] Gautam ! He is *sayogi* (with association or activity) and not *ayogi* (without association or activity).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७. [प्र. २] जइ सजोगी होज्जा किं मणजोगी होज्जा, वइजोगी होज्जा, कायजोगी होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! मणजोगी वा होज्जा, वइजोगी वा होज्जा, कायजोगी वा होज्जा।

१७. [प्र. २] भगवन् ! यदि वह सयोगी होता है, तो क्या मनोयोगी होता है, वचनयोगी होता है या काययोगी होता है ?

[उ.] गौतम ! वह मनोयोगी होता है, वचनयोगी होता है और काययोगी भी होता है।

[Q. 2] *Bhante* ! If he is *sayogi* (with association or activity) then is he *manoyogi* (with activity of mind), *vachan-yogi* (with activity of speech), or *kaayayogi* (with activity of body) ?

[Ans.] Gautam ! He is *manoyogi* (with activity of mind), *vachan-yogi* (with activity of speech), as well as *kaayayogi* (with activity of body).

१८. [प्र.] से णं भंते ! किं सागारोवउत्ते होज्जा, अणागारोवउत्ते होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! सागारोवउत्ते वा होज्जा, अणागारोवउत्ते वा होज्जा।

१८. [प्र.] भगवन् ! वह साकारोपयोगयुक्त होता है, अथवा अनाकारोपयोगयुक्त होता है ?

[उ.] गौतम ! वह साकारोपयोगयुक्त भी होता है और अनाकारोपयोगयुक्त भी होता है।

18. [Q.] *Bhante* ! Is he with *saakaar upayoga* (*jnanopayoga* or cognitive involvement) or with *anaakaar upayoga* (*darshanopayoga* or perceptive involvement) ?

[Ans.] Gautam ! He is with *saakaar upayoga* (*jnanopayoga* or cognitive involvement) as well as with *anaakaar upayoga* (*darshanopayoga* or perceptive involvement).

१९. [प्र.] से णं भंते ! कयरम्मि संघयणे होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! वइरोसभनारायसंघयणे होज्जा।

१९. [प्र.] भगवन् ! वह किस संहनन में होता है ?

[उ.] गौतम ! वह वज्रऋषभनाराचसंहनन वाला होता है।

19. [Q.] *Bhante* ! What type of *samhanan* (body constitution) does he have ?

[Ans.] Gautam ! He has *vajra-rishabh-narach samhanan* (a specific type of constitution of human body where the joints are perfect and strongest).

२०. [प्र.] से णं भंते ! कयरम्मि संठाणे होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! छण्हं संठाणाणं अन्नयरे संठाणे होज्जा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. [प्र.] भगवन् ! वह किस संस्थान में होता है ?

[उ.] गौतम ! वह छह संस्थानों में से किसी भी संस्थान में होता है।

20. [Q.] *Bhante* ! What type of *samsthan* (body structure) does he have ?

[Ans.] Gautam ! He may have any of the six (defined) *samsthans* (body structures).

२१. [प्र.] से णं भंते ! कयरम्मि उच्चत्ते होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं सत्त रयणी, उक्कोसेणं पंचधणुसतिए होज्जा।

२१. [प्र.] भगवन् ! वह कितनी ऊँचाई वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! वह जघन्य सात हाथ (रत्नि) और उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष ऊँचाई वाला होता है।

21. [Q.] *Bhante* ! How tall is he ?

[Ans.] Gautam ! He has a minimum height of seven cubits and a maximum of five hundred Dhanush (a linear measure).

२२. [प्र.] से णं भंते ! कयरम्मि आउए होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं साइरेगट्ठावासाउए, उक्कोसेणं पुव्वकोडिआउए होज्जा।

२२. [प्र.] भगवन् ! वह कितनी आयुष्य वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! वह जघन्य साधिक आठ वर्ष और उत्कृष्ट पूर्वकोटि आयुष्य वाला होता है।

22. [Q.] *Bhante* ! What is his life-span ?

[Ans.] Gautam ! He has a minimum life-span of slightly more than eight years and a maximum of Purvakoti (One crore or ten million Purva is called Purvakoti. Where one Purvanga is 8.4 million years and one Purva is 84 Purvanga).

२३. [प्र. १] से णं भंते ! किं सवेदए होज्जा, अवेदए होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! सवेदए होज्जा, नो अवेदए होज्जा।

२३. [प्र. १] भगवन् ! वह सवेदी होता है या अवेदी ?

[उ.] गौतम ! वह सवेदी होता है, अवेदी नहीं होता।

23. [Q. 1] *Bhante* ! Is he *savedi* (genderic) or *avedi* (non-genderic) ?

[Ans.] Gautam ! He is *savedi* (genderic) and not *avedi* (non-genderic).

२३. [प्र. २] जइ सवेदए होज्जा किं इत्थीवेदए होज्जा, पुरिसवेदए होज्जा, नपुंसगवेदए होज्जा, पुरिसनपुंसगवेदए होज्जा ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! नो इत्थिवेदए होज्जा, पुरिसवेदए वा होज्जा, नो नपुंसगवेदए होज्जा, पुरिसनपुंसगवेदए वा होज्जा।

२३. [प्र. २] भगवन् ! यदि वह सवेदी होता है तो क्या स्त्रीवेदी होता है, पुरुषवेदी होता है अथवा नपुंसकवेदी होता है, या पुरुष-नपुंसक (-कृत्रिम नपुंसक-) वेदी होता है ?

[उ.] गौतम ! वह स्त्रीवेदी नहीं होता, पुरुषवेदी होता है, नपुंसकवेदी नहीं होता, किन्तु पुरुष-नपुंसकवेदी होता है।

24. [Q. 2] *Bhante* ! If he is *savedi* (genderic), then is he *strivedi* (feminine), *purush-vedi* (masculine), *napumsak-vedi* (neuter) or *purush-napumsak* (masculine-neuter) ?

[Ans.] Gautam ! He cannot be *strivedi* (feminine), can be *purush-vedi* (masculine), cannot be *napumsak-vedi* (neuter) and can be *purush-napumsak* (masculine-neuter).

२४. [प्र. १] से णं भंते ! किं सकसाई होज्जा, अकसाई होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! सकसाई होज्जा, नो अकसाई होज्जा।

२४. [प्र. १] भगवन् ! क्या वह (अवधिज्ञानी) सकषायी होता है, अथवा अकषायी होता है ?

[उ.] गौतम ! वह सकषायी होता है, अकषायी नहीं होता।

24. [Q. 1] *Bhante* ! Is he (the *Avadhi-jnani*) with passions (*sakashayi*) or without passions (*akashayi*) ?

[Ans.] Gautam ! He is with passions (*sakashayi*) and not without passions (*akashayi*).

२४. [प्र. २] जइ सकसाई होज्जा, से णं भंते ! कतिसु कसाएसु होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! चउसु संजलणकोह-माण-माया-लोभेसु होज्जा।

२४. [प्र. २] भगवन् ! यदि वह सकषायी होता है, तो वह कितने कषायों वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! वह संज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभ; इन चार कषायों से युक्त होता है।

24. [Q. 2] *Bhante* ! If he is with passions (*sakashayi*), then how many passions he has ?

[Ans.] Gautam ! He has these four passions—evanescent (*sanjvalan*) anger, conceit, deceit and greed.

२५. [प्र. १] तस्स णं भंते ! केवतिया अज्झवसाणा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! असंखेज्जा अज्झवसाणा पण्णत्ता।

२५. [प्र. १] भगवन् ! उसके कितने अध्यवसाय होते हैं ?

[उ.] गौतम ! उसके असंख्यात अध्यवसाय होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

25. [Q. 1] *Bhante* ! How many kinds of mental activity (*adhyavasaaya*) he has ?

[**Ans.**] Gautam ! He has innumerable kinds of mental activity (*adhyavasaaya*).

२५. [प्र. २] ते णं भंते ! किं पसत्था अप्पसत्था ?

[उ.] गोयमा ! पसत्था, नो अप्पसत्था।

२५. [प्र. २] भगवन् ! उसके वे अध्यवसाय प्रशस्त होते हैं या अप्रशस्त ?

[उ.] गौतम ! वे प्रशस्त होते हैं, अप्रशस्त नहीं होते।

25. [Q. 2] *Bhante* ! Are all these kinds of his mental activity noble (*prashast*) or ignoble ?

[**Ans.**] Gautam ! They are noble and not ignoble.

विवेचन : **विशेषार्थ**–(१५) **'तिसु विसुद्धलेसासु होज्ज'**–प्रशस्त भावलेश्या होने पर ही सम्यक्त्वादि प्राप्त होते हैं, अप्रशस्त लेश्याओं में नहीं। (१६) **तिसु ... णाणेसु होज्ज**–विभंगज्ञानी को सम्यक्त्व प्राप्त होते ही उसके मति-अज्ञान, श्रुत-अज्ञान और विभंगज्ञान; ये तीनों अज्ञान, (मति-श्रुतावधि-) ज्ञानरूप में परिणत हो जाते हैं। (१७) **णो अजोगी होज्ज**–अवधिज्ञानी को अवधिज्ञान काल में अयोगी-अवस्था प्राप्त नहीं होती। (१८) **ज्ञानोपयोग**–साकारोपयोग अर्थात् ज्ञान और **अनाकारोपयोग** अर्थात् ज्ञानोपयोग से पूर्व होने वाला दर्शन (निराकार ज्ञान)। (१९) **वज्रऋषभनाराच-संहनन ही क्यों?**–यहाँ जो अवधिज्ञानी के लिए वज्रऋषभनाराच-संहनन का कथन किया गया है, वह आगे प्राप्त होने वाले केवलज्ञान की अपेक्षा से समझना चाहिए, क्योंकि केवलज्ञान की प्राप्ति वज्रऋषभनाराच-संहनन वालों को ही होती है। जिस प्रकार डोमेस्टिक बिजली के साधारण तारों में से हाइवोल्टेज विद्युत प्रवाहित नहीं हो सकती, उसके लिए तार आदि सभी विद्युत उपकरण विशेष शक्ति के होते हैं। इसी प्रकार विशिष्ट आध्यात्मिक ऊर्जा प्रवाहित करने के लिए संहनन भी सुदृढ़ होने चाहिए। चार घाति कर्मों का क्षय करने के लिए अत्यधिक विशिष्ट आत्म-ऊर्जा की जरूरत होती है। (२३) **सवेदी आदि का तात्पर्य**–विभंगज्ञान से अवधिज्ञान काल में साधक सवेदी होता है, क्योंकि उस दशा में उसके वेद का क्षय नहीं होता। विभंगज्ञान से अवधिज्ञान प्राप्त करने की जो प्रक्रिया है, उस प्रक्रिया का स्त्री में स्वभावतः अभाव होता है। अतः सवेदी में वह पुरुषवेदी एवं कृत्रिमनपुंसकवेदी होता है। (२४) **सकसाई होज्ज**–विभंगज्ञान एवं अवधिज्ञान के काल में कषाय क्षय नहीं होता, किन्तु संज्वलनकषाय होता है, क्योंकि विभंगज्ञान के अवधिज्ञान में परिणत होने पर वह अवधिज्ञानी साधक जब चारित्र अंगीकार कर लेता है, तब उसमें संज्वलन के ही क्रोधादि चार कषाय होते हैं। (२५) **प्रशस्त अध्यवसायस्थान ही क्यों ?**–विभंगज्ञान से अवधिज्ञान की प्राप्ति अप्रशस्त अध्यवसाय वाले को नहीं होती, इसलिए अवधिज्ञानी में प्रशस्त अध्यवसायस्थान ही होते हैं।

Elaboration—(aphorisms—) 15. *'tisu visuddhalesasu hojja'*—righteousness (*samyaktva*) and other entailing qualities can only be attained when the soul-complexion is pure and not when it is impure. 16. *'tisu ... naanesu hojja'*—the moment a *Vibhanga jnani* (one having pervert knowledge) attains righteousness his distorted sensual

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

knowledge, distorted scriptural knowledge and pervert knowledge transform into right sensual knowledge, right scriptural knowledge and *Avadhi-jnana* respectively. 17. '*no ajogi hojja*'—A person does not attain the level of dissociation or inactivity (*ayogi avastha*) while he is still at the level of *Avadhi-jnana*. 18. '*jnanopayoga*'—*saakaar upayoga* means *jnanopayoga* or cognitive involvement and *anaakaar upayoga* means the preceding *darshanopayoga* or perceptive involvement. 19. Why only *vajra-rishabh-narach samhanan*—The perfect and strong constitution prescribed here in connection with *Avadhi-jnana* is, in fact, with reference to the impending *Keval-jnana*. The reason being that only those who have such perfect constitution attain *Keval-jnana*. It is just like high voltage current cannot pass through the ordinary domestic wiring; for that special quality of wires and equipment are needed. In the same way for the flow of special spiritual energy special body constitution is required. In order to destroy the four vitiating *karmas* very high spiritual energy is required. 23. *Savedi* etc.—During the shift from *Vibhanga-jnana* to *Avadhi-jnana* the aspirant remains genderic because in that state the *karma* defining gender is not shed. The process involved in this transformation is naturally absent in females, therefore among the genderic beings such aspirant can only be either masculine or masculine-neuter. 24. '*sakasaai hojja*'—In the states of *Vibhanga-jnana* and *Avadhi-jnana* total absence of passions is not possible. Passions in evanescent form exist. This is because on transformation of *Vibhanga-jnana* into *Avadhi-jnana* when the aspirant gets initiated, the four passions remain only in evanescent form. 25. Why only *prashast adhyavasaaya* ?—An aspirant with ignoble mental activity is not capable of transforming *Vibhanga-jnana* into *Avadhi-jnana*. Therefore the said *Avadhijnani* has only noble mental activity.

केवलज्ञान–प्राप्ति का क्रम PROGRESSION INTO KEVAL-JNANA

२६. से णं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं वट्टमाणेहिं अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिंतो अप्पाणं विसंजोएइ, अणंतेहिं तिरिक्खजोणिय जाव विसंजोएइ, अणंतेहिं मणुस्सभवग्गहणेहिंतो अप्पाणं विसंजोएइ, अणंतेहिं देवभवग्गहणेहिंतो अप्पाणं विसंजोएइ, जाओ वि य से इमाओ नेरइय–तिरिक्खजोणिय–मणुस्स–देवगतिनामाओ चत्तारि उत्तरपयडीओ तासिं च णं उवग्गहिए अणंताणुबंधी कोह–माण–माया–लोभे खवेइ, अणंताणुबंधी कोह–माण–माया–लोभे खवित्ता अपच्चक्खाणकसाए कोह–माण–माया–लोभे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खवेइ, अपच्चक्खाणकसाए कोह–माण–माया–लोभे खवित्ता पच्चक्खाणावरणे कोह–माण–माया–लोभे खवेइ, पच्चक्खाणावरणे कोह–माण–माया–लोभे खवित्ता संजलणे कोह–माण–माया–लोभे खवेइ। संजलणे कोह–माण–माया–लोभे खवित्ता पंचविहं नाणावरणिज्जं नवविहं दरिसणावरणिज्जं पंचविहमंतराइयं तालमत्थकडं च णं मोहणिज्जं कट्टु कम्मरयविकरणकरं अपुव्वकरणं अणुपविट्ठस्स अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुण्णे केवलवरनाण–दंसणे समुप्पज्जति।

२६. वह (पूर्वोक्त) अवधिज्ञानी बढ़ते हुए प्रशस्त अध्यवसायों के प्रभाव से, अनन्त नैरयिकभव–ग्रहणों से अपनी आत्मा को विसंयुक्त (–विमुक्त) कर लेता है, अनन्त तिर्यञ्चयोनिक भवों से अपनी आत्मा को विसंयुक्त कर लेता है, अनन्त मनुष्यभव–ग्रहणों से अपनी आत्मा को विसंयुक्त कर लेता है और अनन्त देव–भवों से अपनी आत्मा को विसंयुक्त कर लेता है। जो ये नरकगति, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति और देवगति नामक चार उत्तर (कर्म–) प्रकृतियाँ हैं, उन प्रकृतियों के आधारभूत अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया और लोभ का क्षय करता है। अनन्तानुबन्धी क्रोध–मान–माया–लोभ का क्षय करके अप्रत्याख्यानकषाय क्रोध, मान, माया, लोभ का क्षय करता है, अप्रत्याख्यान क्रोधादि कषाय का क्षय करके प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया और लोभ का क्षय करता है; प्रत्याख्यानावरण क्रोधादि कषाय का क्षय करके संज्वलन के क्रोध, मान, माया और लोभ का क्षय करता है। संज्वलन के क्रोध, मान, माया, लोभ का क्षय करके पंचविध (पाँच प्रकार के) ज्ञानावरणीय कर्म, नवविध (नौ प्रकार के) दर्शनावरणीय कर्म, पंचविध अन्तराय कर्म को तथा मोहनीय कर्म को कटे हुए ताड़ वृक्ष के समान बनाकर, कर्मरज को बिखेरने वाले अपूर्वकरण में प्रविष्ट उस जीव के अनन्त, अनुत्तर, व्याघातरहित, आवरणरहित, कृत्स्न (सम्पूर्ण), प्रतिपूर्ण एवं श्रेष्ठ केवलज्ञान और केवलदर्शन (एक साथ) उत्पन्न होता है।

26. With the effect of the enhancing noble mental activity (*prashast adhyavasaaya*) that (aforesaid) *Avadhi-jnani* extricates his soul from infinite infernal rebirths, extricates his soul from infinite animal rebirths, extricates his soul from infinite human rebirths and extricates his soul from infinite divine rebirths. He destroys anger, conceit, deceit and greed of extreme bond-intensity (*anantanubandhi*) that are the root cause of the aforesaid four auxiliary species (*uttar-prakriti*) of *karmas*, causing the aforesaid rebirths, namely infernal, animal, human and divine. After destroying anger, conceit, deceit and greed of extreme bond-intensity (*anantanubandhi*) he destroys unrenounced passions (*apratyakhyan kashaya*) including anger, conceit, deceit and greed. After destroying unrenounced passions he destroys evanescent (*sanjvalan*) anger, conceit, deceit and greed. After destroying evanescent (*sanjvalan*) anger, conceit, deceit and greed he dissipates the *karmic* dust by turning five kinds of knowledge obstructing *karmas* (*Jnanavaraniya*), nine kinds of perception/faith obstructing *karmas* (*Darshanavaraniya*), five kinds of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

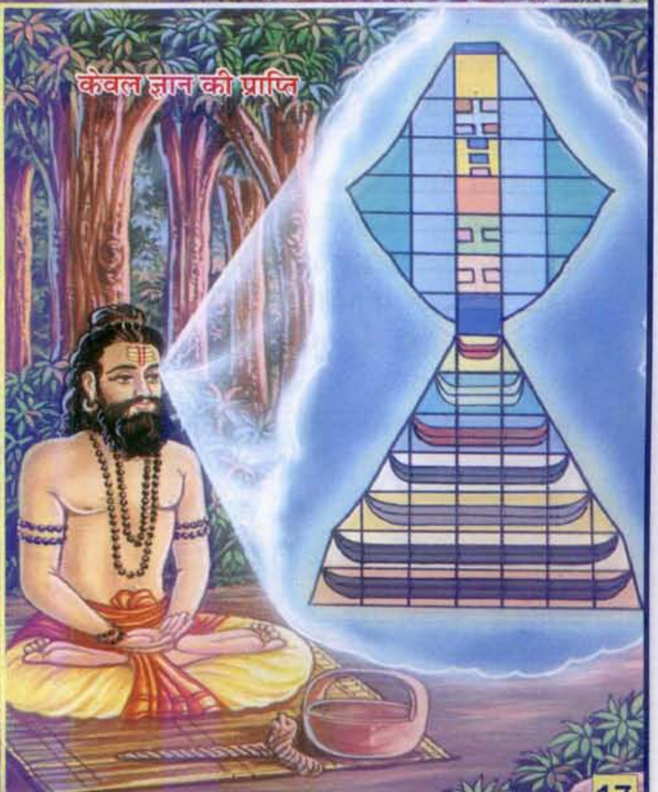

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 17

Illustration No. 17

असोच्चा केवली

केवली की देशना सुने बिना ही जिस जीव को केवलज्ञान की प्राप्ति हो जाती है उसे **असोच्चा केवली** कहते हैं। सर्व प्रथम किसी संन्यासी तापस आदि अन्य मत वाले जीव को तप के प्रभाव से विभंगज्ञान उत्पन्न होता है। वह अपने इस विभंग ज्ञान से अढ़ाई द्वीप में स्थित तीर्थंकर और उनके साधु-साध्वियों को देखता है और उन पर श्रद्धा करता है। इसी श्रद्धा से उसकी मिथ्यादृष्टि सम्यग्दृष्टि में परिवर्तित हो जाती है और वह सम्यक्त्व प्राप्त करता है। जिसके फलस्वरूप उसका विभंगज्ञान अवधिज्ञान में परिणत हो जाता है। परिणाम की विशुद्धि बढ़ती है। धर्मध्यान, शुक्लध्यान में परिवर्तित होता है और गुणस्थान आरोहण करते-करते वह मोहनीय कर्म को क्षीण करते हुए ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय एवं अंतराय कर्म का क्षय करता है और केवलज्ञान-केवलदर्शन को प्राप्त करता है। असोच्चा केवली किसी को दीक्षा भी नहीं देते हैं। ये सिर्फ पुरुष और पुरुष नपुंसक होते हैं। जो अन्यलिंग में सिद्ध होते हैं।

—शतक 9, उ. 31, सूत्र 26-31

SELF-ENLIGHTENED OMNISCIENT

An aspirant who attains omniscience even without hearing the sermon of an omniscient is called Ashrutva Kevali (self-enlightened omniscient). The beginning of the process is that a monk or hermit acquires Vibhang Jnana (pervert knowledge) as a result of his austerities. With the help of this knowledge he sees a Tirthankar and his disciples somewhere in Adhai-dveep and develops faith in him. This faith turns his unrighteousness into righteousness and he attains Samyaktva. As a consequence his Vibhang Jnana turns into Avadhi Jnana and his spiritual purity increases continuously. Pious meditation evolves into pure higher meditation (Shukla Dhyan). He then progresses on the path of Gunasthan. He gradually destroys deluding karmas, knowledge and faith obscuring karmas as well as power hindering karmas. This is when he attains omniscience. A self-enlightened omniscient does not initiate anyone. As a rule they are either masculine or masculine-neuter).

— Shatak-9, lesson-31, Sutra-26-31

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

power hindering *karmas* (*Antaraaya*) and deluding *karmas* (*Mohaniya*) into likeness of a top-punctured palm tree. This *jiva* (living being/soul) having reached the level of *Apurvakaran* (unprecedented purity; eighth *Gunasthan*) gets (in due course) endowed with infinite, supreme, unobstructed, unclouded, complete and perfect 'ultimate knowledge' or *Keval-jnana* and 'ultimate perception' or *Keval-darshan*.

विवेचन : प्रस्तुत सूत्र में विभंग ज्ञान के बाद प्राप्त हुये अवधिज्ञानी के प्रशस्त अध्यवसायों के प्रभाव से होने वाली विशेष आत्म-विशुद्धि से केवलज्ञान प्राप्त होने तक का क्रम बताया है-

मोहनीय कर्म का नाश-मुख्य प्रस्तुत सूत्र में ज्ञानावरणीयादि तीनों कर्मों का उत्तरप्रकृतियों सहित क्षय पहले बताया है, किन्तु मोहनीय कर्म के क्षय हुए बिना इन तीनों कर्मों का क्षय नहीं होता। इसी तथ्य को प्रकट करने के लिए यहाँ कहा गया है-**'तालमत्थकडं च णं मोहणिज्जं कट्टु'**, इसका भावार्थ यह है कि जिस प्रकार ताड़ वृक्ष का मस्तक सूचि भेद (सुई से या सुई की तरह छिन्न-भिन्न) करने से वह सारा का सारा वृक्ष क्षीण (नष्ट) हो जाता है, उसी प्रकार मोहनीय कर्म का क्षय होने पर शेष घातिकर्मों का भी क्षय हो जाता है। अर्थात् मोहनीय कर्म की शेष प्रकृतियों का क्षय करके साधक ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय; इन तीनों कर्मों की सभी प्रकृतियों का क्षय कर देता है। *(वृत्ति, पत्र ४३५)*

मस्तकसूचिविनाशे, तालस्य यथा ध्रुवो भवति नाशः।

तद्वत् कर्मविनाशोऽपि मोहनीयक्षये नित्यम्॥१॥

-भगवती. अ. वृत्ति, पत्र ४३६

केवलज्ञान, विषय की अनन्तता के कारण अनन्त है। केवलज्ञान से बढ़कर दूसरा कोई ज्ञान नहीं है, इसलिए वह अनुत्तर (सर्वोत्तम) है। वह दीवार, भींत आदि के व्यवधान के कारण प्रतिहत (स्खलित) नहीं होता। इसलिए वह **'निर्व्याघात'** है। सम्पूर्ण आवरणों के क्षय होने पर उत्पन्न होने से वह **'निरावरण'** है। सकल पदार्थों का ग्राहक होने से वह **'कृत्स्न'** होता है। अपने सम्पूर्ण अंशों से युक्त उत्पन्न होने से वह **'प्रतिपूर्ण'** होता है। *(भगवतीसूत्र, भा. ४ [पं. घेवरचन्द जी], पृ. १६०४)*

Elaboration—This aphorism describes the process of attaining *Keval-jnana* by an initiated *Avadhijnani* through extensive spiritual purity gained by noble mental activity.

Destruction of deluding karma—Here the first step is described as destruction of auxiliary species of three *karmas* including knowledge obstructing *karma*. But these three *karmas* cannot be destroyed unless deluding *karma* is first destroyed. This fact has been indicated here by the phrase—'*taalmatthakadam cha nam mohanijjam kattu*'. This phrase conveys that as a palm tree is destroyed simply by piercing or cutting its head, in the same way once deluding *karma* is destroyed the remaining three vitiating *karmas* are also destroyed. In other words when an aspirant destroys all the species of deluding *karma*, he also destroyes all

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the species of knowledge and perception obstructing *karmas* as well as power hindering *karma*. (*Vritti*, leave 435)

As the range of subjects covered by *Keval-jnana* is infinite it is called infinite (*anant*). As there is no other knowledge higher than *Keval-jnana*, it is called supreme (*anuttar*). As it is not obstructed by a wall or any other obstruction it is called unobstructed (*nirvyaghaat*). As it appears when all veils are removed it is called unveiled or unclouded (*niravaran*). As it grasps all things it is called complete (*kritsna*). As it has no component of knowledge missing, it is called perfect (*pratipurna*).

असोच्चा केवली द्वारा उपदेश–प्रव्रज्या SERMON AND INITIATION BY ASHRUTVA KEVALI

२७. [प्र.] **से णं भंते ! केवलिपण्णत्तं धम्मं आघवेज्जा वा पण्णवेज्जा वा परूवेज्जा वा ?**

[उ.] **नो इणट्ठे समट्ठे, णऽन्नत्थ एगणाएण वा एगवागरणेण वा।**

२७. [प्र.] भगवन् ! वे असोच्चा केवली, केवलि-प्ररूपित धर्म कहते हैं, बतलाते हैं अथवा प्ररूपणा करते हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ (बात) समर्थ (शक्य) नहीं है। वे (केवल) एक ज्ञात (उदाहरण) के अथवा एक (व्याकरण) प्रश्न के उत्तर के सिवाय अन्य (धर्म का) उपदेश नहीं करते।

27. [Q.] *Bhante* ! Does he (*Ashrutva Kevali* or self-enlightened omniscient) say, elaborate and propagate the religion propagated by the omniscient ?

[Ans.] Gautam ! That is not true. Beyond citing one example or illustration and replying to one question, he preaches nothing else (the religion).

२८. [प्र.] **से णं भंते ! पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा ?**

[उ.] **णो इणट्ठे समट्ठे, उवदेसं पुण करेज्जा।**

२८. [प्र.] भगवन् ! वे असोच्चा केवली (किसी को) प्रव्रजित करते हैं या मुण्डित करते हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं। किन्तु उपदेश करते (कहते) हैं (कि तुम अमुक के पास प्रव्रज्या ग्रहण करो)।

28. [Q.] *Bhante* ! Does he initiate or tonsure (someone) ?

[Ans.] Gautam ! That is not true. However, he simply inspires and directs (someone to get initiated by some other competent person).

२९. [प्र.] **से णं भंते ! सिज्झति जाव अंतं करेति ?**

[उ.] **हंता, सिज्झति जाव अंतं करेति।**

२९. [प्र.] भगवन् ! (क्या असोच्चा केवली) सिद्ध होते हैं, यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे सिद्ध होते हैं, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

29. [Q.] *Bhante* ! Does he become *Siddha* (perfected soul) ... and so on up to... end all misery ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He becomes *Siddha* (perfected soul) ... and so on up to... end all misery.

३०. [प्र.] से णं भंते ! किं उड्ढं होज्जा, अहो होज्जा, तिरियं होज्जा ?

[उ.] **गोयमा ! उड्ढं वा होज्जा, अहो वा होज्जा, तिरियं वा होज्जा। उड्ढं होज्जमाणे सद्दावइवियडावइ–गंधावइ–मालवंतपरियाएसु वट्टवेयड्ढपव्वएसु होज्जा, साहरणं पडुच्च सोमणसवणे वा पंडगवणे वा होज्जा। अहे होज्जमाणे गड्डाए वा दरीए वा होज्जा, साहरणं पडुच्च पायाले वा भवणे वा होज्जा। तिरियं होज्जमाणे पण्णरससु कम्मभूमीसु होज्जा, साहरणं पडुच्च अड्ढाइज्जदीव–समुद्दत–देक्कदेसभाए होज्जा।**

३०. [प्र.] भगवन् ! वे असोच्चा केवली ऊर्ध्वलोक में होते हैं, अधोलोक में होते हैं या तिर्यक्लोक में होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे ऊर्ध्वलोक में भी होते हैं, अधोलोक में भी होते हैं और तियक्लोक में भी होते हैं। यदि ऊर्ध्वलोक में होते हैं तो शब्दापाती, विकटापाती, गन्धापाती और माल्यवन्त नामक वृत्त (वैताढ्य) पर्वतों में होते हैं तथा संहरण की अपेक्षा सौमनसवन में अथवा पाण्डुकवन में भी होते हैं। यदि अधोलोक में होते हैं तो गर्त्ता (अधोलोक ग्रामादि) में अथवा गुफा में होते हैं तथा संहरण की अपेक्षा पातालकलशों में अथवा भवनवासी देवों के भवनों में होते हैं। यदि तिर्यक्लोक में होते हैं तो पन्द्रह कर्मभूमि में होते हैं तथा संहरण की अपेक्षा अढाई द्वीप और समुद्रों के एक भाग में होते हैं।

30. [Q.] *Bhante* ! Do such individuals (self-enlightened omniscients) exist in the upper world (*Urdhva-lok*), the lower world (*Adho-lok*) or the middle world (*Tiryak-lok*) ?

[Ans.] Gautam ! They exist in the upper world (*Urdhva-lok*), in the lower world (*Adho-lok*) as well as in the middle world (*Tiryak-lok*). If in the upper world, they exist on the *Vritta Vaitadhya* mountains called Shabdapaati, Vikatapaati, Gandhapaati and Malyavant; in context of migration (*samharan*) they also exist in Saumanas and Panduk forests. If in the lower world, they exist in chasms (*garta*) and caves; in context of migration they also exist in Patal-kalash and abodes of abode-dwelling gods (*Bhavanavasi Dev*). If in the middle world, they exist in the fifteen *Karma Bhumis* (lands of endeavour) and in context of migration they also exist in Adhai Dveep (two and a half continents) and a portion of oceans.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१. [प्र.] ते णं भंते ! एगसमएणं केवतिया होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा, उक्कोसेणं दस। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ 'असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव अत्थेगइए केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए, अत्थेगइए असोच्चा णं केवलि जाव नो लभेज्जा सवणयाए जाव अत्थेगइए केवलनाणं उप्पाडेज्जा, अत्थेगइए केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा।

३१. [प्र.] भगवन् ! वे असोच्चा केवली एक समय में कितने होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे जघन्य एक, दो अथवा तीन और उत्कृष्ट दस होते हैं।

31. [Q.] *Bhante* ! How many of them exist at a given moment of time ?

[Ans.] Gautam ! A minimum of one, two or three and a maximum of ten.

[उपसंहार–] इसलिए हे गौतम ! मैं ऐसा कहता हूँ कि केवली यावत् केवलि–पाक्षिक की उपासिका से धर्मश्रवण किये बिना ही किसी जीव को केवलि–प्ररूपित धर्मश्रवण प्राप्त होता है और किसी को नहीं होता; यावत् कोई जीव केवलज्ञान उत्पन्न कर लेता है और कोई जीव केवलज्ञान उत्पन्न नहीं कर पाता।

(Concluding statement) That is why, Gautam ! I say that even without hearing (the sermon) from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*) some *jiva* (living being) may and some other may not derive the benefits of hearing the sermon of an omniscient ... and so on up to... some *jiva* (living being) may and some other may not acquire *Keval-jnana* (omniscience).

विवेचन : विशेषार्थ–आघवेज्ज–शिष्यों को शास्त्र का अर्थ ग्रहण कराते हैं, अथवा अर्थ–प्रतिपादन करके सत्कार प्राप्त कराते हैं। **पन्नवेज्ज**–भेद बताकर या भिन्न–भिन्न करके समझाते हैं। **परूवेज्ज**–उपपत्तिकथनपूर्वक प्ररूपण करते हैं। **पव्वावेज्ज मुंडावेज्ज**–रजोहरण आदि द्रव्यवेश देकर प्रव्रजित (दीक्षित) करते हैं, मस्तक का लोच करके मुण्डित करते हैं। **उवएसं पुण करेज्ज**–किसी दीक्षार्थी के उपस्थित होने पर 'अमुक के पास दीक्षा लो' केवल इतना-सा उपदेश करते हैं। **सद्दावइ इत्यादि पदों का आशय**–शब्दापाती, विकटापाती गन्धापाती और माल्यवन्त; ये स्थान जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति के अनुसार क्षेत्रसमास के अभिप्राय से क्रमशः हैमवत, ऐरण्यवत, हरिवर्ष और रम्यक्‌वर्ष क्षेत्र में हैं। *(वृत्ति, पत्र ४३६)*

Elaboration—Technical terms—Aaghvejj—to explain the meaning of scriptures to disciples or get honoured by explaining the meanng. **Pannavejj**—to explain by showing the differences or explain by splitting. **Paruvejj—**to authenticate with the help of etymology. **Pavvavejj—**to initiate by giving the ascetic garb and equipment. **Mundavejj—**to tonsure by pulling out hair. **Uvaesam puna karejj—**when some aspirant approaches for initiation they just direct him by

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

saying—'Go to him and get initiated.' **Saddavai etc.**—According to *Jambudveep Prajnapti* the places Shabdapaati, Vikatapaati, Gandhapaati and Malyavant are in Airanyavat, Harivarsh and Ramyakvarsh regions. (*Vritti*, leave 436)

सोच्चा से सम्बन्धित प्रश्नोत्तर QUESTIONS ABOUT SOCHCHA

३२. [प्र.] सोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए ?

[उ.] गोयमा ! सोच्चा णं केवलिस्स वा जाव अत्थेगइए केवलिपण्णत्तं धम्मं०। एवं जा चेव असोच्चाए वत्तव्वया सा चेव सोच्चाए वि भाणियव्वा, नवरं अभिलावो सोच्चेति। सेसं तं चेव निरवसेसं जाव 'जस्स णं मणपज्जवनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ, जस्स णं केवलनाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए कडे भवइ से णं सोच्चा केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा केवलिपण्णत्तं धम्मं लभिज्ज सवणयाए, केवलं वोहिं बुज्झेज्जा जाव केवलनाणं उप्पाडेज्जा (सु. १३ [२])।

३२. [प्र.] भगवन् ! केवली यावत् केवली-पाक्षिक की उपासिका से (धर्मप्रतिपादक वचन) श्रवण कर क्या कोई जीव केवलि-प्ररूपित धर्मबोध (श्रवण) प्राप्त करता है ?

[उ.] गौतम ! केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका से धर्म-वचन सुनकर कोई जीव केवलि-प्ररूपित धर्म का बोध प्राप्त करता है और कोई जीव प्राप्त नहीं करता। इस विषय में जिस प्रकार असोच्चा की वक्तव्यता में कही, उसी प्रकार 'सोच्चा' की वक्तव्यता कहनी चाहिए। विशेष यह है कि यहाँ सर्वत्र 'सोच्चा' ऐसा पाठ कहना चाहिए। शेष सभी पूर्वोक्त वक्तव्यता कहनी चाहिए; यावत् जिसने मनःपर्यवज्ञानावरणीय कर्मों का क्षयोपशम किया है तथा जिसने केवलज्ञानावरणीय कर्मों का क्षय किया है, वह केवली यावत् केवलि-पाक्षिक की उपासिका से धर्म-वचन सुनकर केवलि-प्ररूपित धर्मबोध (श्रवण) प्राप्त करता है, शुद्ध बोधि (सम्यग्दर्शन) का अनुभव करता है, यावत् केवलज्ञान प्राप्त करता है।

32. [Q.] *Bhante* ! Does a *jiva* (living being) derive the benefits of hearing the sermon of (the religion propagated by) an omniscient (*Kevali*) by hearing it from the omniscient, or his male disciple (*shravak*) ... and so on up to... female devotee (*upaasika*) of a self-enlightened omniscient (*Kevali-paakshik*) ?

[Ans.] Gautam ! Some *jiva* (living being) derives and some does not derive the benefits of hearing the sermon of an omniscient (*Kevali*) by hearing it from (these ten) the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*). In this regard repeat all what has been said about *asochcha* (without hearing). The only difference is that instead of *asochcha* (without hearing) mention *sochcha* (by hearing). All the rest should be as aforesaid ... and so on up

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

to... a *jiva* who has accomplished destruction-cum-pacification of *Avadhi-jnanaavaraniya karma* (*karma* that obscures *Avadhi-jnana*) and a *jiva* who has accomplished destruction-cum-pacification of *Keval-jnanaavaraniya karma* (*karma* that obscures omniscience), may derive the benefits of hearing the sermon of an omniscient (*Kevali*), may attain pure enlightenment (right perception/faith), ... and so on up to... may acquire *Keval-jnana*, by hearing it from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*).

केवली आदि से सुनकर अवधिज्ञान की उपलब्धि ACQUIRING AVADHI-JNANA BY HEARING

३३. तस्स णं अट्ठमंअट्ठमेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणस्स पगइभद्दयाए तहेव जाव गवेसणं करेमाणस्स ओहिणाणे समुप्पज्जइ। से णं तेणं ओहिनाणेणं समुप्पन्नेणं जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं असंखेज्जाइं अलोए लोयप्पमाणमेत्ताइं खंडाइं जाणइ पासइ।

३३. (केवली आदि से धर्म-वचन सुनकर सम्यग्दर्शनादि प्राप्त जीव को) निरन्तर तेले-तेले (अट्ठम-अट्ठम) तपःकर्म से अपनी आत्मा को भावित करते हुए प्रकृतिभद्रता आदि (पूर्वोक्त) गुणों से यावत् ईहा, अपोह, मार्गण एवं गवेषण करते हुए अवधिज्ञान समुत्पन्न होता है। वह उस उत्पन्न अवधिज्ञान के प्रभाव से जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट अलोक में भी लोकप्रमाण असंख्य खण्डों को जानता और देखता है।

33. An aspirant (hearing sermon from the omniscient etc.) who continuously observes the austerity of three day fasts, missing eight meals, and other austerities; at some point of time that *jiva* (living being), due to his natural simplicity ... and so on up to... undergoing the progressive process of *Iha* etc. acquires *Avadhi-jnana*. With the help of this acquired *Avadhi jnana* he is able to know and see up to a minimum distance of uncountable fraction of an Angul and maximum of innumerable portions of unoccupied space (*Alok*), each as vast as the occupied space (*Lok*).

विवेचन : केवली आदि से बिना सुने अवधिज्ञान प्राप्त करने वाले जीव को पहले विभंगज्ञान प्राप्त होता है, फिर सम्यक्त्वादि प्राप्त होने पर वही विभंगज्ञान अवधिज्ञान में परिणत हो जाता है, जबकि सुनकर अवधिज्ञान प्राप्त करने वाला जीव बेले के बदले निरन्तर तेले की तपस्या करता है। प्रकृतिभद्रता आदि गुण तथा उससे ईहादि के कारण अवधिज्ञान प्राप्त हो जाता है, जिसके प्रभाव से उत्कृष्टतः अलोक में भी लोकप्रमाण असंख्य खण्डों को जानता-देखता है। फिर वह सम्यक्त्व, चारित्र, साधुवेश आदि से केवलज्ञान भी प्राप्त कर लेता है। *(वृत्ति, पत्र ४३८)*

Elaboration—An aspirant who does not hear the sermon from the omniscient etc. first acquires pervert knowledge and then, when he is endowed with righteousness and other virtues, this pervert knowledge turns into *Avadhi-jnana*. On the other hand an aspirant who hears the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

sermon from the omniscient etc. observes the austerity of three-day fasts instead of two-day fasts. That being acquires *Avadhi-jnana* due to his natural simplicity and other virtues and undergoes the progressive process of *Iha* etc. With the help of this acquired *Avadhi-jnana* he is able to know and see a maximum of innumerable portions of unoccupied space (*Alok*), each as vast as the occupied space (*Lok*). In due course, following righteous conduct in the ascetic garb etc., he also attains omniscience. (*Vritti*, leave 438)

तथारूप अवधिज्ञानी में लेश्या आदि **LESHYAS AND OTHER ATTRIBUTES**

३४. [प्र.] से णं भंते ! कतिसु लेस्सासु होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! छसु लेस्सासु होज्जा, तं जहा—कण्हलेसाए जाव सुक्कलेसाए।

३४. [प्र.] भगवन् ! वह (तथारूप अवधिज्ञानी जीव) कितनी लेश्याओं में होता है ?

[उ.] गौतम ! छहों लेश्याओं में होता है। यथा—कृष्णलेश्या यावत् शुक्ललेश्या।

34. [Q.] *Bhante* ! In how many soul-complexions (*leshya*) does that (aforesaid) *Avadhi-jnani* (the possessor of *Avadhi-jnana*) dwell ?

[Ans.] Gautam ! He dwells in all the six soul complexions—*Krishna leshya* (black complexion of soul) ... and so on up to... *Shukla leshya* (white soul-complexion).

३५. [प्र.] से णं भंते ! कतिसु णाणेसु होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! तिसु वा चउसु वा होज्जा। तिसु होज्जमाणे आभिणिबोहियनाण—सुयनाण—ओहिनाणेसु होज्जा, चउसु होज्जमाणे आभिणिबोहियनाण—सुयनाण—ओहिनाण—मणपज्जवनाणेसु होज्जा।

३५. [प्र.] भगवन् ! वह (तथारूप अवधिज्ञानी जीव) कितने ज्ञान में होता हैं ?

[उ.] गौतम ! तीन या चार ज्ञानों में होता है। यदि तीन ज्ञान होते हैं, तो आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान में होता है। यदि चार ज्ञान होते हैं तो आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्यवज्ञान।

35. [Q.] *Bhante* ! In how many *jnanas* (types of knowledge) does that (aforesaid) *Avadhi-jnani* (the possessor of *Avadhi-jnana*) dwell ?

[Ans.] Gautam ! He dwells in three or four *jnanas* (types of knowledge)—If three, they are *Abhinibodhik jnana* (sensory knowledge), *Shrut-jnana* (scriptural knowledge) and *Avadhi-jnana* (extrasensory perception of the physical dimension; something akin to clairvoyance). If four, they are *Abhinibodhik jnana*, *Shrut-jnana*, *Avadhi-jnana* and *Manah-paryav-jnana* (extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings, something akin to telepathy).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६. [प्र.] से णं भंते ! किं सजोगी होज्जा, अजोगी होज्जा ?

[उ.] एवं जोगो उवओगो संघयणं संठाणं उच्चत्तं आउयं च एयाणि सव्वाणि जहा असोच्चाए (सु. १७–२२) तहेव भाणियव्वाणि।

३६. [प्र.] भगवन् ! वह (तथारूप अवधिज्ञानी) सयोगी होता है अथवा अयोगी होता है ? (आदि प्रश्न यावत् आयुष्य तक)

[उ.] गौतम ! जैसे 'असोच्चा' के योग, उपयोग, संहनन, संस्थान, ऊँचाई और आयुष्य के विषय में कहा, उसी प्रकार यहाँ (सोच्चा के) भी योगादि के विषय में कहना चाहिए।

36. [Q.] *Bhante* ! Is he *sayogi* (with association or activity) or *ayogi* (without association or activity) ?

[Ans.] Gautam ! What has been said about *Asochcha* with regard to *yoga* (association or activity), *upayoga*, *samhanan* (body constitution), *samsthan* (body structure), height, and life-span, should be repeated here in case of *Sochcha* (accomplished due to hearing the sermon).

३७. [प्र. १] से णं भंते ! किं सवेदए० पुच्छा ?

[उ.] गोयमा ! सवेदए वा होज्जा, अवेदए वा होज्जा।

३७. [प्र. १] भगवन् ! वह अवधिज्ञानी सवेदी होता है अथवा अवेदी ?

[उ.] गौतम ! वह सवेदी होता है अथवा अवेदी भी होता है।

37. [Q. 1] *Bhante* ! Is he *savedi* (genderic) or *avedi* (non-genderic) ?

[Ans.] Gautam ! He is *savedi* (genderic) as well as *avedi* (non-genderic).

३७. [प्र. २] जइ अवेदए होज्जा किं उवसंतवेयए होज्जा, खीणवेयए होज्जा ?

[उ.] गोयमा ! नो उवसंतवेदए होज्जा, खीणवेदए होज्जा।

३७. [प्र. २] भगवन् ! यदि वह अवेदी होता है तो क्या उपशान्तवेदी होता है अथवा क्षीणवेदी होता है ?

[उ.] गौतम ! वह उपशान्तवेदी नहीं होता, क्षीणवेदी होता है।

37. [Q. 2] *Bhante* ! If he is *avedi* (non-genderic), then is he *upshaant-vedi* (with subdued gender) or *ksheen-vedi* (with absence of gender) ?

[Ans.] Gautam ! He is not *upshaant-vedi* (with subdued gender) but *ksheen-vedi* (with absence of gender).

३७. [प्र. ३] जइ सवेदए होज्जा किं इत्थीवेदए होज्जा० पुच्छा ?

[उ.] गोयमा ! इत्थीवेदए वा होज्जा, पुरिसवेदए वा होज्जा, पुरिसनपुंसगवेदए वा होज्जा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७. [प्र. ३] भगवन् ! यदि वह सवेदी होता है तो क्या स्त्रीवेदी होता है, पुरुषवेदी होता है, नपुंसकवेदी होता है, अथवा पुरुष–नपुंसकवेदी होता है ?

[उ.] गौतम ! वह स्त्रीवेदी भी होता है या पुरुषवेदी होता है अथवा पुरुष–नपुंसकवेदी होता है।

[Q. 3] *Bhante* ! If he is *savedi* (genderic), then is he *strivedi* (feminine), *purush-vedi* (masculine), *napumsak-vedi* (neuter) or *purush-napumsak* (masculine-neuter) ?

[Ans.] Gautam ! He can be *strivedi* (feminine), *purush-vedi* (masculine), or *purush-napumsak* (masculine-neuter).

३८. [प्र. १] **से णं भंते ! सकसाई होज्जा ? अकसाई होज्जा ?**

[उ.] **गोयमा ! सकसाई वा होज्जा, अकसाई वा होज्जा।**

३८. [प्र. १] भगवन् ! वह अवधिज्ञानी सकषायी होता है अथवा अकषायी होता है ?

[उ.] गौतम ! वह सकषायी होता है अथवा अकषायी भी होता है।

38. [Q. 1] *Bhante* ! Is he (the said *Avadhi-jnani*) with passions (*sakashayi*) or without passions (*akashayi*) ?

[Ans.] Gautam ! He is with passions (*sakashayi*) as well as without passions (*akashayi*).

३८. [प्र. २] **जइ अकसाई होज्जा किं उवसंतकसाई होज्जा, खीणकसाई होज्जा ?**

[उ.] **गोयमा ! नो उवसंतकसाई होज्जा, खीणकसाई होज्जा।**

३८. [प्र. २] भगवन् ! यदि वह अकषायी होता है तो क्या उपशान्तकषायी होता है या क्षीणकषायी ?

[उ.] गौतम ! वह उपशान्तकषायी नहीं होता, किन्तु क्षीणकषायी होता है।

[Q. 2] *Bhante* ! If he is without passions (*akashayi*), then is he *upshaant-kashaayi* (with subdued passions) or *ksheen-kashaayi* (with destroyed passions) ?

[Ans.] Gautam ! He is not *upshaant-kashaayi* (with subdued passions) but *ksheen-kashaayi* (with destroyed passions).

३८. [प्र. ३] **जइ सकसाई होज्जा से णं भंते ! कतिसु कसाएसु होज्जा ?**

[उ.] **गोयमा ! चउसु वा, तिसु वा, दोसु वा, एक्कम्मि वा होज्जा। चउसु होज्जमाणे चउसु संजलणकोह–माण–माया–लोभेसु होज्जा, तिसु होज्जमाणे तिसु संजलणमाण–माया–लोभेसु होज्जा, दोसु होज्जमाणे दोसु संजलणमाया–लोभेसु होज्जा, एगम्मि होज्जमाणे एगम्मि संजलणे लोभे होज्जा।**

३८. [प्र. ३] भगवन् ! यदि वह सकषायी होता है तो उसमें कितने कषाय होते हैं ?

[उ.] गौतम ! उसमें चार कषाय, तीन कषाय, दो कषाय अथवा एक कषाय होता है। यदि चार कषाय होते हैं, तो संज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभ होता है। यदि तीन कषाय होते हैं, तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संज्वलन मान, माया और लोभ होते हैं। यदि दो कषाय होते हैं तो संज्वलन माया और लोभ होते हैं और यदि एक कषाय होता है तो संज्वलन लोभ होता है।

[Q. 3] *Bhante* ! If he is with passions (*sakashayi*), then how many passions he has ?

[Ans.] Gautam ! He has four or three or two or just one of the passions. If four, they are—evanescent (*sanjvalan*) anger, conceit, deceit and greed. If three, they are—evanescent (*sanjvalan*) conceit, deceit and greed. If two, they are—evanescent (*sanjvalan*) deceit and greed. If one, it is—evanescent (*sanjvalan*) greed.

३९. [प्र.] **तस्स णं भंते ! केवतिया अज्झवसाणा पण्णत्ता ?**

[उ.] **गोयमा ! असंखेज्जा, एवं जहा असोच्चाए (सु. २५–२६) तहेव जाव केवलवरनाण–दंसणे समुप्पज्जइ (सु. २६)।**

३९. [प्र.] भंते ! उस (तथारूप) अवधिज्ञानी के कितने अध्यवसाय बताए गए हैं ?

[उ.] गौतम ! उसके असंख्यात अध्यवसाय होते हैं। जिस प्रकार (सू. २५, २६ में) असोच्चा केवली के अध्यवसाय के विषय में कहा गया, उसी प्रकार यहाँ भी 'सोच्चा केवली' के लिए यावत् उसे केवलज्ञान–केवलदर्शन उत्पन्न होता है, यहाँ तक कहना चाहिए।

39. [Q.] *Bhante* ! How many kinds of mental activity (*adhyavasaaya*) he has ?

[Ans.] Gautam ! He has innumerable kinds of mental activity (*adhyavasaaya*). What has been said about mental activity of *Asochcha Kevali* should also be repeated here about *Sochcha Kevali* (omniscient by hearing the sermon)... and so on up to... he gets endowed with 'ultimate knowledge' or *Keval-jnana* and 'ultimate perception' or *Keval-darshan*.

***सोच्चा केवली द्वारा उपदेश, प्रव्रज्या आदि* PREACHING, INTITIATION ETC. BY SOCHCHA KEVALI**

४०. [प्र.] **से णं भंते ! केवलिपण्णत्तं धम्मं आघवेज्जा वा, पण्णावेज्ञा वा, परूवेज्जा वा ?**

[उ.] **हंता, आघविज्ज वा, पण्णवेज्ज वा, परूवेज्ज वा।**

४०. [प्र.] भंते ! वह 'सोच्चाकेवली' केवलि–प्ररूपित धर्म कहते हैं, बतलाते हैं या प्ररूपित करते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे केवलि–प्ररूपित धर्म कहते हैं, बतलाते हैं और उसकी प्ररूपणा भी करते हैं।

40. [Q.] *Bhante* ! Does he (*Sochcha Kevali* or omniscient by hearing the sermon) say, elaborate and propagate the religion propagated by the omniscient ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He does say, elaborate and propagate the religion propagated by the omniscient.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१. [प्र. १] से णं भंते ! पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! पव्वावेज्ज वा, मुंडावेज्ज वा।

४१. [प्र. १] भगवन् ! वे सोच्चा केवली किसी को प्रव्रजित करते हैं या मुण्डित करते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे प्रव्रजित भी करते हैं, मुण्डित भी करते हैं।

41. [Q. 1] *Bhante* ! Does he initiate or tonsure (someone) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He does initiate and he does tonsure (someone) as well.

४१. [प्र. २] तस्स णं भंते ! सिस्सा वि पव्वावेज्ज वा, मुंडावेज्ज वा ?

[उ.] हंता, पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा।

४१. [प्र. २] भगवन् ! उन सोच्चा केवली के शिष्य किसी को प्रव्रजित करते हैं या मुण्डित करते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! उनके शिष्य भी प्रव्रजित करते हैं और मुण्डित करते हैं।

41. [Q. 2] *Bhante* ! Do his disciples too initiate or tonsure (someone) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! His disciples too initiate and tonsure (someone).

४१. [प्र. ३] तस्स णं भंते ! पसिस्सा वि पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा ?

[उ.] हंता, पव्वावेज्ज वा मुंडावेज्ज वा।

४१. [प्र. ३] भगवन् ! क्या उन सोच्चा केवली के प्रशिष्य भी किसी को प्रव्रजित और मुण्डित करते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! उनके प्रशिष्य भी प्रव्रजित करते हैं और मुण्डित करते हैं।

41. [Q. 3] *Bhante* ! Do disciples of his disciples too initiate or tonsure (someone) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Disciples of his disciples too initiate and tonsure (someone).

४२. [प्र. १] से णं भंते ! सिज्झइ बुज्झइ जाव अंतं करेइ ?

[उ.] हंता, सिज्झइ जाव अंतं करेइ।

४२. [प्र. १] भगवन् ! वे श्रुत्वाकेवली सिद्ध होते हैं, बुद्ध होते हैं, यावत् सर्वदुःखों का अन्त करते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे सिद्ध होते हैं, यावत् सर्वदुःखों का अन्त करते हैं।

42. [Q. 1] *Bhante* ! Does he become *Siddha* (perfected soul), *Buddha* (enlightened) ... and so on up to... end all misery ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He becomes *Siddha* (perfected soul) ... and so on up to... end all misery.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२. [प्र. २] **तस्स णं भंते ! सिस्सा वि सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?**

[उ.] **हंता, सिज्झंति जाव अंतं करेंति।**

४२. [प्र. २] भंते ! क्या उन सोच्चाकेवली के शिष्य भी सिद्ध होते हैं यावत् सर्वदुःखों का अन्त करते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे भी सिद्ध, बुद्ध होते हैं, यावत् सर्वदुःखों का अन्त करते हैं।

42. [Q. 2] *Bhante* ! Do his disciples also become *Siddha* (perfected soul) ... and so on up to... end all misery ?

[Ans.] Yes, Gautam ! His disciples also become *Siddha* (perfected soul) ... and so on up to... end all misery.

४२. [प्र. ३] **तस्स णं भंते ! पसिस्सा वि सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?**

[उ.] **एवं चेव जाव अंतं करेंति।**

४२. [प्र. ३] भगवन् ! क्या उनके प्रशिष्य भी सिद्ध होते हैं, यावत् सर्वदुःखों का अन्त करते हैं ?

[उ.] हाँ ! वे भी सिद्ध–बुद्ध हो जाते हैं, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं।

42. [Q. 3] *Bhante* ! Do disciples of his disciples also become *Siddha* (perfected soul) ... and so on up to... end all misery ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Disciples of his disciples also become *Siddha* (perfected soul) ... and so on up to... end all misery.

४३. **से णं भंते ! किं उड्ढं होज्जा ? जहेव असोच्चाए (सु. ३०) जाव तदेक्कदेसभाए होज्जा।**

४३. भंते ! वे सोच्चाकेवली ऊर्ध्वलोक में होते हैं, अधोलोक में होते हैं और तिर्यक्लोक में भी होते हैं ? इत्यादि प्रश्न। जैसे (सू. ३० में) असोच्चाकेवली के विषय में कहा गया है, उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिए। यावत् वे अढाई द्वीप -समूह के एक भाग में होते हैं, यहाँ तक कहना चाहिए।

43. [Q.] *Bhante* ! Do such individuals (*Sochcha Kevali*) exist in the upper world (*Urdhva-lok*), the lower world (*Adho-lok*) or the middle world (*Tiryak-lok*) ? The answer to this question is same as mentioned about *Asochcha Kevali* (aphorism 30) ... and so on up to... they also exist in Adhai Dveep (two and a half continents) and a portion of oceans.

४४. [प्र.] **ते णं भंते ! एगसमएणं केवइया होज्जा ?**

[उ.] **गोयमा ! जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं अट्ठसयं–१०८।**

से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–सोच्चा णं केवलिस्स वा जाव केवलिउवासियाए वा जाव अत्थेगइए केवलनाणं उप्पाडेज्जा, अत्थेगइए केवलनाणं नो उप्पाडेज्जा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ।

॥ नवमसयस्स इगतीसइमो उद्देसो ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४. [प्र.] भगवन् ! वे सोच्चाकेवली एक समय में कितने होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे एक समय में जघन्य एक, दो या तीन होते हैं और उत्कृष्ट एक सौ आठ होते हैं।

44. [Q.] *Bhante* ! How many of them exist at a given moment of time ?

[Ans.] Gautam ! A minimum of one, two or three and a maximum of one hundred and eight.

[उपसंहार–] इसीलिए हे गौतम ! ऐसा कहा गया है कि केवली यावत् केवलि–पाक्षिक की उपासिका से धर्मप्रतिपादक वचन सुनकर यावत् कोई जीव केवलज्ञान- केवलदर्शन प्राप्त करता है और कोई प्राप्त नहीं करता।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है; ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरण करते हैं।

(Concluding statement) That is why, Gautam ! I say that by hearing (the sermon) from the omniscient ... and so on up to... or his (self-enlightened omniscient's) female devotee (*upaasika*) some *jiva* (living being) may and some other may not acquire *Keval-jnana* (omniscience).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : असोच्चा से सोच्चा अवधिज्ञानी की कुछ बातों में अन्तर–(१) लेश्या–असोच्चा अवधिज्ञानी में तीन ही विशुद्ध लेश्याएँ बताई गई हैं, जबकि सोच्चा अवधिज्ञानी में छह लेश्याएँ बताई गई हैं। उसका रहस्य यह है कि यद्यपि तीन प्रशस्त भावलेश्या होने पर ही अवधिज्ञान प्राप्त होता है, तथापि द्रव्यलेश्या की अपेक्षा से वह सम्यक्त्व श्रुत की तरह छह लेश्याओं में होता है। (२) **ज्ञान–**तेले-तेले की विकट तपस्या करने वाले साधु को अवधिज्ञान उत्पन्न होता है और अवधिज्ञानी में प्रारम्भिक दो ज्ञान (मति-श्रुतज्ञान) अवश्य होने से उसे तीन ज्ञानों में बतलाया गया है। जो मनःपर्यायज्ञानी होता है, उसके अवधिज्ञान उत्पन्न होने पर अवधिज्ञानी चार ज्ञानों से युक्त हो जाता है। (३) **वेद–**यदि अक्षीणवेदी को अवधिज्ञान की उत्पत्ति हो तो वह सवेदक होता है, उस समय या तो वह स्त्रीवेदी होता है या पुरुषवेदी अथवा पुरुषनपुंसकवेदी होता है और अवेदी को अवधिज्ञान होता है तो वह क्षीणवेदी को होता है, उपशान्तवेदी को नहीं होता, क्योंकि आगे इसी अवधिज्ञानी के केवलज्ञान की उत्पत्ति का कथन विवक्षित है। (४) **कषाय–**कषायक्षय न होने की स्थिति में अवधिज्ञान प्राप्त होता है तो वह जीव सकषायी होता है और कषायक्षय होने पर अवधिज्ञान होता है तो अकषायी होता है। यदि अक्षीणकषायी अवधिज्ञान प्राप्त करता है तो चारित्रयुक्त होने से चार संज्वलन कषायों में होता है, जब क्षपकश्रेणिवर्ती होने से संज्वलन क्रोध क्षीण हो जाता है, तब अवधिज्ञान प्राप्त होता है, तो संज्वलनमानादि तीन कषाययुक्त होता है, जब क्षपकश्रेणि की दशा में संज्वलन क्रोध-मान क्षीण हो जाता है तो संज्वलन माया-लोभ से युक्त होता है और जब तीनों क्षीण हो जाते हैं तो वह अवधिज्ञानी एक मात्र संज्वलन लोभ से युक्त होता है। *(वृत्ति, पत्र ४३८)*

Elaboration—**Some differences between Asochcha and Sochcha Avadhi-jnani—(1) Leshya (soul complexion)**—In case of *Asochcha Avadhi-jnani* only three *Leshyas* have been mentioned whereas in case of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Sochcha Avadhi-jnani six *Leshyas* have been mentioned. The reason for this is that although *Avadhi-jnana* is acquired only when three noble spiritual *Leshyas* exist, in terms of physical *Leshyas* the needed righteousness (*samyaktva*), like scriptural knowledge, occurs in all the six *Leshyas*. **(2) Jnana (knowledge)**—An ascetic observing the tough austerity of continuous three day fasts acquires *Avadhi-jnana* and an *Avadhi-jnani* essentially has two primary *Jnanas* (sensual and scriptural); that is why he is said to exist in three *Jnanas*. One who is endowed with *Avadhi-jnana* gets four *jnanas* when he acquires *Manah-paryav-jnana*. **(3) Veda (gender)**—When an individual who has not shed gender acquires *Avadhi-jnana*, it is with gender (*savedak*). It is either feminine, masculine or masculine-neuter. When an individual who is non-genderic acquires *Avadhi-jnana* then it happens only with one who has shed gender and not to one who has subdued gender. This is because he is on the path of spiritual uplift to acquire *Keval-jnana*. **(4) Kashaaya (passions)**—When a being acquires *Avadhi-jnana* without destruction of passions he is infected with passions (*sakashayi*) and when he does that on destruction of passions he is free of passions (*akashayi*). When a being acquires *Avadhi-jnana* without destroying passions (*aksheen kashaayi*) he has four evanescent passions (*sanjvalan kashaaya*) due to his right conduct. However, if he acquires *Avadhi-jnana* when he is on progressive spiritual ascent through destruction of *karmas* (*kshapak shreni*) and destroyes anger, he is left with only three passions including conceit. When during that ascent he destroys evanescent conceit also, he is left with evanescent deceit and greed. When the first three passions are destroyed that Avadhi-jnani is left with only evanescent greed. (Vritti, leave 438)

॥ नवम शतक : इकतीसवाँ उद्देशक समाप्त ॥

● END OF THIRTY FIRST LESSON OF THE NINTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बत्तीसइमो उद्देसओ : 'गंगेय'

नवम शतक : बत्तीसवाँ उद्देशक : गांगेय

NINTH SHATAK (Chapter Ninth) : THIRTY SECOND LESSON : GANGEYA

उपोद्घात INTRODUCTION

१. तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियग्गामे नामं नयरे होत्था। वण्णओ। दूतिपलासे चेइए। सामी समोसढे। परिसा निग्गया। धम्मो कहिओ। परिसा पडिगया।

१. उस काल, उस समय में वाणिज्यग्राम नामक नगर था। (उसका वर्णन जान लेना चाहिए)। वहाँ द्युतिपलाश नाम का चैत्य (उद्यान) था। (एक बार) वहाँ भगवान महावीर स्वामी (पधारे), (उन) का समवसरण लगा। परिषद् वन्दन के लिये निकली। (भगवान ने) धर्मोपदेश दिया। परिषद् वापस लौट गई।

1. During that period of time there was a city called Vanijyagram. Description (as in *Aupapatik Sutra*). Outside the city there was a *Chaitya* called Dyutipalash. (Once) Bhagavan Mahavir arrived there and the religious assembly started. People came out to pay homage and attend the discourse. People returned.

२. तेणं कालेणं तेणं समएणं पासावच्चिज्जे गंगेए नामं अणगारे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते ठिच्चा समणं भगवं महावीरं एवं वयासी–

२. उस काल उस समय में पार्श्वापत्य (पुरुषादानीय भगवान पार्श्वनाथ के शिष्यानुशिष्य) गांगेय नामक अनगार थे। जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ वे आए और श्रमण भगवान महावीर के न अति निकट और न अति दूर खड़े रहकर उन्होंने श्रमण भगवान महावीर से इस प्रकार पूछा–

2. During that period of time there was an ascetic in the lineage of Purushadaniya Bhagavan Parshvanaath (*Parshvapatya*) called Gangeya Anagar. He arrived where Bhagavan Mahavir was seated. Standing neither very near nor very far from Bhagavan Mahavir he submitted thus—

विवेचन : वैशाली के निकट गंडवी नदी के दक्षिण तट पर यह वाणिज्यग्राम अपने समय में व्यापार का प्रमुख केन्द्र था। भगवान का परम उपासक आनन्द गाथापति यहाँ का निवासी था। वर्तमान में बसाड़ पट्टी के पास वजिया गाँव है। जिसे प्राचीन समय का वाणिज्य ग्राम माना जाता है।

Elaboration—This Vanijyagram, located at the southern bank of river Gandavi near Vaishali, was a prominent trading center at that time. Anand Gaathapati, Bhagavan Mahavir's devout follower, lived there. Modern Vajiya village, near Basad Patti, is believed to be the Vanijyagram of the past.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. [प्र.] संतरं भंते ! नेरइया उववज्जंति, निरंतरं नेरइया उववज्जंति ?

[उ.] गंगेया ! संतरं पि नेरइया उववज्जंति, निरंतरं पि नेरइया उववज्जंति।

३. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक सान्तर (काल के व्यवधान सहित) उत्पन्न होते हैं या निरन्तर (बीच में समय के व्यवधान बिना) उत्पन्न होते हैं ?

[उ.] हे गांगेय ! नैरयिक सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी।

3. [Q.] *Bhante !* Are infernal beings born with interruption (*saantar*) or are they born continually (*nirantar*) ?

[Ans.] Gangeya ! Infernal beings are born with interruption (*saantar*) as well as continually (*nirantar*).

४. [प्र. १] संतरं भंते ! असुरकुमारा उववज्जंति, निरंतरं असुरकुमारा उववज्जंति ?

[उ.] गंगेया ! संतरं पि असुरकुमारा उववज्जंति, निरंतरं पि असुरकुमारा उववज्जंति।

[२] एवं जाव थणियकुमारा।

४. [प्र. १] भगवन् ! असुरकुमार सान्तर उत्पन्न होते हैं या निरन्तर ?

[उ.] गांगेय ! वे सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी।

[२] इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार तक जानना चाहिए।

4. [Q. 1] *Bhante !* Are *Asur Kumar devs* (divine beings of *Asur Kumar* class) born with interruption (*saantar*) or are they born continually (*nirantar*) ?

[Ans.] Gangeya ! *Asur Kumar devs* are born with interruption (*saantar*) as well as continually (*nirantar*).

[2] The same is true for divine beings up to *Stanit Kumar devs*.

५. [प्र. १] संतरं भंते ! पुढविकाइया उववज्जंति, निरंतरं पुढविकाइया उववज्जंति ?

[उ.] गंगेया ! नो संतरं पुढविकाइया उववज्जंति, निरंतरं पुढविकाइया उववज्जंति।

[२] एवं जाव वणस्सइकाइया।

५. [प्र. १] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव सान्तर उत्पन्न होते हैं या निरन्तर उत्पन्न होते हैं ?

[उ.] गांगेय ! पृथ्वीकायिक जीव सान्तर उत्पन्न नहीं होते; निरन्तर उत्पन्न होते हैं।

[२] इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक जीवों तक जानना चाहिए।

5. [Q. 1] *Bhante !* Are earth-bodied beings (*prithvikaayik jivas*) born with interruption (*saantar*) or are they born continually (*nirantar*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

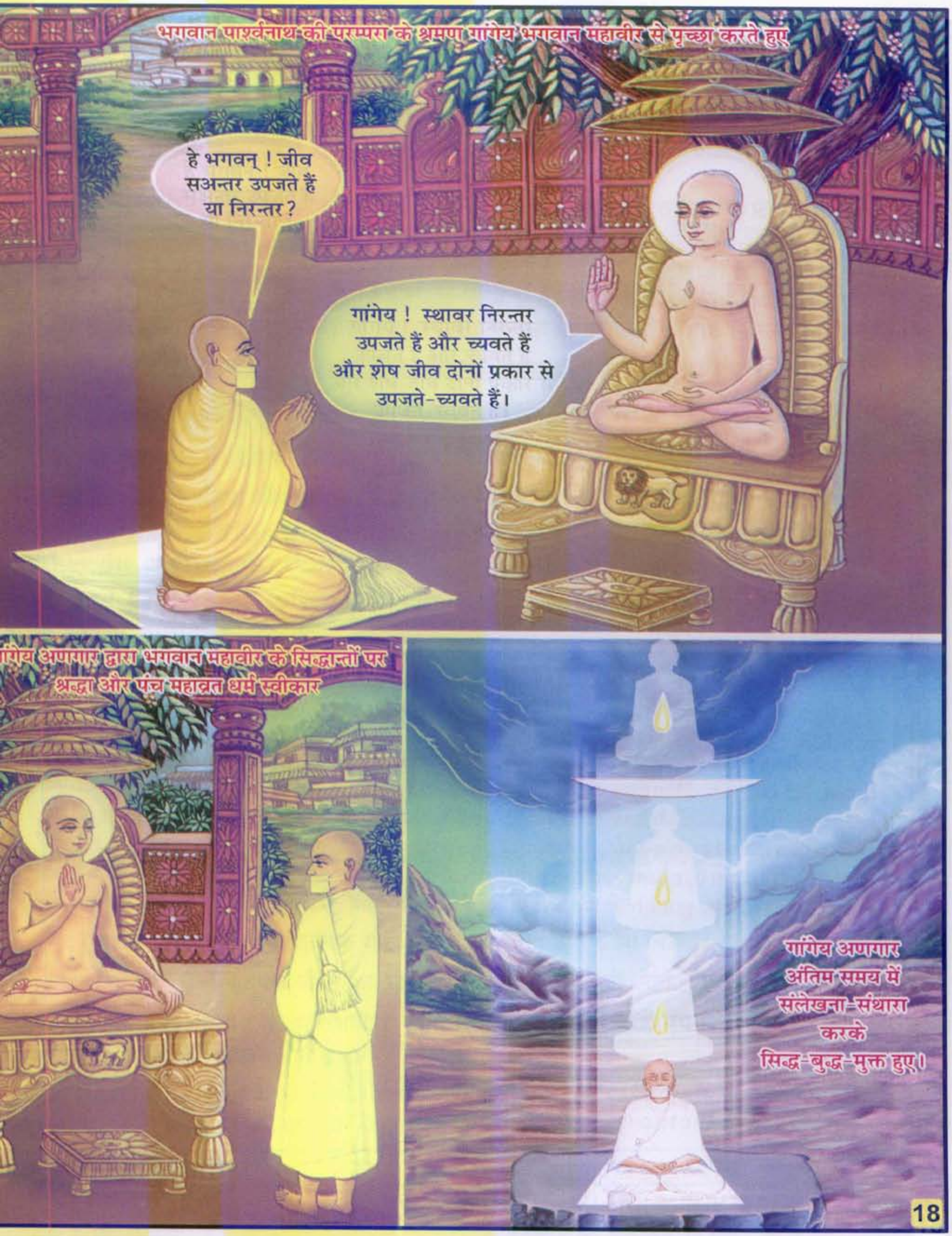

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 18

Illustration No. 18

गांगेय अणगार

गांगेय अणगार पुरुषादानीय भगवान पार्श्वनाथ की शिष्य परम्परा के सरल, भद्रिक साधु थे। वे चार महाव्रतधारी थे और रंगीन वस्त्र पहनते थे। भगवान महावीर के पास आकर उन्होंने अपने मन में उत्पन्न जिज्ञासाएँ भगवान के समक्ष प्रस्तुत कीं। प्रभु महावीर ने उनका समाधान किया। अपनी जिज्ञासाओं का समाधान पाकर गांगेय अणगार ने भगवान के समक्ष पाँच महाव्रत अंगीकार किये। भगवान महावीर की परम्परा के अनुसार सफेद वस्त्र धारण किये और शुद्ध चारित्र का पालन करके आराधक होकर सिद्ध, बुद्ध और मुक्त हुये।

—शतक 9, उ. 32

GANGEYA ANAGAR

Gangeya Anagar was simple and noble ascetic of the disciple lineage of Purushadaniya Bhagavan Parshvanaath. He observed four great vows and wore coloured dress. He came to Bhagavan Mahavir and put forth his doubts and questions before Mahavir. Bhagavan Mahavir removed his doubts and, Gangeya Anagar got initiated by Bhagavan into the five-vow religion. Following Bhagavan Mahavir's tradition he accepted white garb, observed the prescribed conduct meticulously to become a true aspirant. At last he got liberated and enlightened to end all misery.

— Shatak-9, lesson-32

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gangeya ! Earth-bodied beings (*prithvikaayik jivas*) are not born with interruption (*saantar*) but are born continually (*nirantar*).

[2] The same is true for one-sensed beings up to plant-bodied beings (*vanaspatikaayik jivas*).

६. बेइंदिया जाव वेमाणिया, एते जहा णेरइया।

६. द्वीन्द्रिय जीवों से लेकर यावत् वैमानिक देवों तक नैरयिकों के समान (उत्पत्ति) जानना चाहिए।

6. Living beings from two-sensed beings (*dvindriya jivas*) to *Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods) follow the pattern (of birth) of infernal beings.

७. [प्र.] संतरं भंते ! नेरइया उव्वट्टंति, निरंतरं नेरइया उव्वट्टंति ?

[उ.] गंगेया ! संतरं पि नेरइया उव्वट्टंति, निरंतरं पि नेरइया उव्वट्टंति।

७. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक जीव सान्तर उद्‌वर्तित होते (मरते) हैं या निरन्तर ?

[उ.] गांगेय ! नैरयिक जीव सान्तर भी उद्‌वर्तित होते हैं और निरन्तर भी।

7. [Q.] *Bhante !* Do infernal beings die with interruption (*saantar*) or do they die continually (*nirantar*) ?

[Ans.] Gangeya ! Infernal beings die with interruption (*saantar*) as well as continually (*nirantar*).

८. एवं जाव थणियकुमारा।

८. इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक (के उद्‌वर्त्तन के सम्बन्ध में) जानना चाहिए।

8. The same is true for death of living beings up to *Stanit Kumar devs*.

९. [प्र. १] संतरं भंते ! पुढविक्काइया उव्वट्टंति० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! णो संतरं पुढविक्काइया उव्वट्टंति, निरंतरं पुढविक्काइया उव्वट्टंति।

[२] एवं जाव वणस्सइकाइया नो संतरं, निरंतरं उव्वट्टंति।

९. [प्र. १] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव सान्तर उद्‌वर्तित होते हैं या निरन्तर ?

[उ.] गांगेय ! पृथ्वीकायिक जीवों का उद्‌वर्तन (मरण) सान्तर नहीं होता, निरन्तर होता रहता है।

[२] इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक जीवों तक (के उद्‌वर्तित के विषय में) जानना चाहिए। ये सान्तर नहीं, निरन्तर उद्‌विर्तत होते हैं।

9. [Q. 1] *Bhante !* Do earth-bodied beings (*prithvikaayik jivas*) die with interruption (*saantar*) or do they die continually (*nirantar*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gangeya ! Earth-bodied beings (*prithvikaayik jivas*) do not die with interruption (*saantar*) but die continually (*nirantar*).

[2] The same is true for death of living beings up to plant-bodied beings (*vanaspatikaayik jivas*). They do not die with interruption (*saantar*) but die continually (*nirantar*).

१०. [प्र.] संतरं भंते ! बेइंदिया उव्वट्टंति, निरंतरं बेइंदिया उव्वट्टंति ?

[उ.] गंगेया ! संतरं पि बेइंदिया उव्वट्टंति, निरंतरं पि बेइंदिया उव्वट्टंति।

१०. [प्र.] भगवन् ! द्वीन्द्रिय जीवों का उद्वर्तन (मरण) सान्तर होता है या निरन्तर ?

[उ.] गांगेय ! द्वीन्द्रिय जीवों का उद्वर्तन सान्तर भी होता है और निरन्तर भी।

10. [Q.] *Bhante !* Do two-sensed beings (*dvindriya jivas*) die with interruption (*saantar*) or do they die continually (*nirantar*) ?

[Ans.] Gangeya ! Two-sensed beings (*dvindriya jivas*) die with interruption (*saantar*) as well as continually (*nirantar*).

११. एवं जाव वाणमंतरा।

११. इसी प्रकार यावत् वाणव्यन्तर तक जानना चाहिए।

11. The same is true for all beings up to *Vanavyantar devs* (interstitial gods).

१२. [प्र.] संतरं भंते ! जोइसिया चयंति० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! संतरं पि जोइसिया चयंति, निरंतरं पि जोइसिया चयंति।

१२. [प्र.] भगवन् ! ज्योतिष्क देवों का च्यवन (मरण) सान्तर होता है या निरन्तर ?

[उ.] गांगेय ! ज्योतिष्क देवों का च्यवन सान्तर भी होता है और निरन्तर भी।

12. [Q.] *Bhante !* Do *Jyotishk devs* (stellar gods) die or descend with interruption (*saantar*) or do they die continually (*nirantar*) ?

[Ans.] Gangeya ! *Jyotishk devs* (stellar gods) die or descend with interruption (*saantar*) as well as continually (*nirantar*).

१३. एवं जाव वेमाणिया वि।

१३. इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक (च्यवन के सम्बन्ध में) जान लेना चाहिए।

13. The same is true for all beings up to *Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods).

विवेचन : जीवों के जन्म या उत्पत्ति को **उपपात** और मरण को च्यवन या उद्वर्तन कहते हैं। वैमानिक और ज्योतिष्क देवों का मरण **'च्यवन'** कहलाता है (ऊपर से नीचे आते हैं)। नारकादि का मरण **उद्वर्तन** कहलाता है (नीचे से ऊपर आते हैं)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकेन्द्रिय जीव प्रति समय उत्पन्न होते और प्रति समय मरते हैं। इसलिए उनकी उत्पत्ति और उद्वर्तन सान्तर नहीं, निरन्तर होता है। एकेन्द्रिय के सिवाय शेष सभी जीवों की उत्पत्ति और मृत्यु में अन्तर सम्भव है। इसलिए वे सान्तर एवं निरन्तर, दोनों प्रकार से उत्पन्न होते और मरते हैं। *(भगवतीसूत्र [अर्थ-विवेचन], भा. ४ [पं. घेवरचन्द जी], पृ. १६१७)*

Elaboration—The birth of living beings is called *upapaat* and their death is called *udvartan* or *chyavan*. The death of celestial-vehicular gods and stellar gods is generally called *chyavan* (descent) and that of other living beings including infernal beings is called *udvartan*.

One-sensed beings get born and die every moment. That is why their birth and death are said to be continual (*nirantar*) and not with interruption (*saantar*). All living beings other than one-sensed beings have chances of interruption in their birth and death. That is why their birth and death are said to be both continual and with interruption. (*Bhagavati Sutra* part-4, meaning and elaboration by Pt. Ghewar Chand, p. 1617)

प्रवेशनक : चार प्रकार **ENTRANCE: FOUR TYPES**

१४. [प्र.] कइविहे णं भंते ! पवेसणए पण्णत्ते ?

[उ.] गंगेया ! चउव्विहे पवेसणए पण्णत्ते, तं जहा–नेरइयपवेसणए तिरिक्खजोणियपवेसणए मणुस्सपवेसणए देवपवेसणए।

१४. [प्र.] भगवन् ! प्रवेशनक कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गांगेय ! प्रवेशनक चार प्रकार का कहा गया है। यह इस प्रकार है–(१) नैरयिक-प्रवेशनक, (२) तिर्यग्योनिक-प्रवेशनक, (३) मनुष्य-प्रवेशनक, और (४) देव-प्रवेशनक।

14. [Q.] *Bhante !* How many types of *praveshanak* (entrance) are there?

[Ans.] Gangeya ! *Praveshanak* (entrance) is said to be of four types—(1) *Nairayik-praveshanak* (entrance into infernal genus), (2) *Tiryagyonik-praveshanak* (entrance into animal genus), (3) *Manushya-praveshanak* (entrance into human genus) and (4) *Dev-praveshanak* (entrance into divine genus).

विवेचन : प्रवेशनक एक गति से मरकर दूसरी गति में उत्पन्न होना कहलाता है। टीकाकार के मतानुसार विजातीय से निकलकर विजातीय भव में उत्पन्न होना 'प्रवेशनक' है।

Elaboration—To reincarnate in another genus after death in one genus is called *Praveshanak* (act of entering or entrance). In the commentator's opinion rebirth in a genus other than the one in which a living being has died is called *Praveshanak* (act of genus shift or entrance into a new genus).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिक–प्रवेशनक निरूपण NAIRAYIK-PRAVESHANAK

१५. [प्र.] नेरइयपवेसणए णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गंगेया ! सत्तविहे पन्नत्ते, तं जहा–**रयणप्पभापुढविनेरइयपवेसणए** जाव **अहेसत्तमापुढविनेरइयपवेसणए।**

१५. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक–प्रवेशनक कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गांगेय ! (नैरयिक–प्रवेशनक) सात प्रकार का कहा गया है, जैसे कि रत्नप्रभा–पृथ्वी नैरयिक–प्रवेशनक यावत् अधःसप्तम–पृथ्वी नैरयिक–प्रवेशनक।

15. [Q.] How many types of *Nairayik-praveshanak* (entrance into infernal genus) are there ?

[Ans.] Gangeya ! *Nairayik-praveshanak* (entrance into infernal genus) are said to be of seven types—Ratna-prabha Prithvi *Nairayik-praveshanak* (entrance into the first hell), ... and so on up to... Adhah-saptam Prithvi *Nairayik-praveshanak* (entrance into the seventh hell).

एक नैरयिक के प्रवेशनक भंग OPTIONS FOR ONE INFERNAL BEING

१६. [प्र.] **एगे भंते ! नेरइए नेरइयपवेसणए णं पविसमाणे किं रयणप्पभाए होज्जा, सक्करप्पभाए होज्जा, जाव अहेसत्तमाए होज्जा ?**

[उ.] गंगेया ! **रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा।**

१६. [प्र.] भंते ! क्या एक नैरयिक जीव नैरयिक–प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करता हुआ रत्नप्रभा–पृथ्वी में होता है, या शर्कराप्रभा–पृथ्वी में होता है अथवा यावत् अधःसप्तम–पृथ्वी में होता है ?

[उ.] गांगेय ! वह नैरयिक रत्नप्रभा–पृथ्वी में होता है, या यावत् अधःसप्तम–पृथ्वी में होता है।

16. [Q.] *Bhante !* When one *jiva* (soul) enters the infernal realm does he take birth in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi) ?

[Ans.] Gangeya ! It either gets born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or any other ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

विवेचन : एक नैरयिक के असंयोगी सात प्रवेशक भंग–यदि एक नारक रत्नप्रभा आदि नरकों में उत्पन्न (प्रविष्ट) हो तो उसके सात विकल्प होते हैं। जैसे कि (१) या तो वह रत्नप्रभा–पृथ्वी में उत्पन्न होता है, (२) या शर्कराप्रभा–पृथ्वी में, (३ से ७) इस प्रकार असंयोगी सात भंग होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration—Seven alternatives of entrance of one infernal being– When one *jiva* enters the infernal realm there are seven alternatives–(1) it enters the first hell (Ratnaprabha Prithvi), (2) it enters the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), ... and so on up to...(7) it enters the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

दो नैरयिकों के प्रवेशनक भंग **OPTIONS FOR TWO INFERNAL BEING**

१७. [प्र.] दो भंते ! **नेरइया नेरइयपवेसणए णं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा जाव अहेसत्तमाए होज्जा ?**

[उ.] **गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा।**

अहवा एगे रयणप्पभाए होज्जा, एगे सक्करप्पभाए होज्जा १। अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे वालुयप्पभाए होज्जा २। जाव एगे रयणप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा, ३-४-५-६। अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा ७। जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ८-९-१०-११। अहवा एगे वालुयप्पभाए, एगे पंकप्पभाए होज्जा १२। एवं जाव अहवा एगे वालुयप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा, १३-१४-१५। एवं एक्केक्का पुढवी छड्डेयव्वा जाव अहवा एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा, १६-१७-१८-१९-२०-२१।

१७. [प्र.] भगवन् ! दो नैरयिक जीव, नैरयिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा-पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम-पृथ्वी में ?

[उ.] गांगेय ! वे दोनों (१) रत्नप्रभा-पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं, अथवा (२ से ७) यावत् अधः सप्तम-पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं।

अथवा (१) एक रत्नप्रभा-पृथ्वी में उत्पन्न होता है और एक शर्कराप्रभा-पृथ्वी में। अथवा (२) एक रत्नप्रभा-पृथ्वी में और एक बालुकाप्रभा-पृथ्वी में (३-४-५-६)। अथवा यावत् एक रत्नप्रभा-पृथ्वी में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में। (अर्थात् एक रत्नप्रभा-पृथ्वी में और एक पंकप्रभा-पृथ्वी में, एक रत्नप्रभा-पृथ्वी में और एक धूमप्रभा-पृथ्वी में, एक रत्नप्रभा-पृथ्वी में और एक तमःप्रभा-पृथ्वी में, या एक रत्नप्रभा पृथ्वी में और एक तमस्तमःप्रभा-पृथ्वी में उत्पन्न होता है। इस प्रकार रत्नप्रभा के साथ छह विकल्प होते हैं।) अथवा (७) एक शर्कराप्रभा-पृथ्वी में उत्पन्न होता है और एक बालुकाप्रभा पृथ्वी में, अथवा (८-९-१०-११) यावत् एक शर्कराप्रभा-पृथ्वी में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में। इस प्रकार शर्कराप्रभा के साथ पाँच विकल्प हुए। (१२) अथवा एक बालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में उत्पन्न होता है; (१३-१४-१५) अथवा इसी प्रकार यावत् एक बालुकाप्रभा में और एक अधः सप्तम-पृथ्वी में उत्पन्न होता है। इस प्रकार बालुकाप्रभा के साथ चार विकल्प हुए। (१६-१७-१८-१९-२०-२१) इसी प्रकार (पूर्व-पूर्व की) एक-एक पृथ्वी छोड़ देनी चाहिए; यावत् एक तमःप्रभा में और एक तमस्तमःप्रभा में उत्पन्न होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

17. [Q.] *Bhante !* When two *jivas* (souls) enter the infernal realm do they get born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi) ?

[Ans.] Gangeya ! They both get born either (1) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or (2-7) in any other ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

Or (1) one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and the other in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (2) one in first hell (Ratnaprabha Prithvi) and the other in the third hell (Balukaprabha Prithvi) or one in first hell (Ratnaprabha Prithvi) and the other in ... and so on up to... (3, 4, 5, 6) the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). [Which means one in first hell (Ratnaprabha Prithvi) and the other in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in first hell and the other in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), one in first hell (Ratnaprabha Prithvi) and the other in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi), one in first hell (Ratnaprabha Prithvi) and the other in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Thus there are six options when first one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi)].

Or (7) one is born in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and the other in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or (8. 9. 10. 11) one in second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and the other in ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Thus there are five alternatives when first one is born in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi).

Or (12) one is born in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and the other in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (13, 14, 15) one in third hell (Balukaprabha Prithvi) and the other in ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Thus there are four alternatives when first one is born in the third hell (Balukaprabha Prithvi).

Or (16, 17, 18, 19, 20, 21) In the same way proceeding to the next hell respective alternative combinations should be detailed ... and so on up to... one is born in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and the other in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

विवेचन : दो नैरयिकों के प्रवेशनक भंग–दो नैरयिकों के कुल प्रवेशनक भंग २८ होते हैं। (१) जिनमें से एक-एक नरक में दोनों नैरयिकों के एक साथ उत्पन्न होने की अपेक्षा से ७ भंग होते हैं। (२) दो नरकों में एक-एक नैरयिक की एक साथ उत्पत्ति होने की अपेक्षा से द्विकसंयोगी कुल २१ भंग होते हैं, जिनमें रत्नप्रभा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के साथ ६, शर्कराप्रभा के साथ ५, बालुकाप्रभा के साथ ४, पंकप्रभा के साथ ३, धूमप्रभा के साथ २ और तमःप्रभा के साथ १; इस प्रकार कुल मिलाकर २१ भंग होते हैं। दो नैरयिकों के असंयोगी ७ और द्विकसंयोगी २१, ये दोनों मिलाकर कुल २८ भंग (विकल्प) होते हैं।

Elaboration—Alternative combinations for entrance of two souls in the infernal realm—The total number of alternative combinations for entrance of two souls in the infernal realm is 28. (1) Of these seven are for two souls entering the same hell together. (2) Remaining twenty-one alternative combinations are for each of the two entering a different hell at the same time. Of these six are for the first hell (Ratnaprabha Prithvi) five for the second, four for the third, three for the fourth, two for the fifth and one for the sixth. That means there are seven options for no alternative combination of two and twenty one for alternative combinations of two.

तीन नैरयिकों के प्रवेशनक भंग OPTIONS FOR THREE INFERNAL BEING

१८. [प्र.] तिण्णि भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणए णं पविसमाणा किं रणयप्पभाए होज्जा जाव अहेसत्तमाए होज्जा ?

[उ.] गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा।

(क) अहवा एगे रयणप्पभाए, दो सक्करप्पभाए होज्जा १। जाव अहवा एगे रयणप्पभाए, दो अहेसत्तमाए होज्जा, २-३-४-५-६। अहवा दो रयणप्पभाए, एगे सक्करप्पभाए होज्जा १। जाव अहवा दो रयणप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा, २-३-४-५-६ = १२। अहवा एगे सक्करप्पभाए, दो वालुयप्पभाए होज्जा १। जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए, दो अहेसत्तमाए होज्जा, २-३-४-५ = १७। अहवा दो सक्करप्पभाए, एगे वालुयप्पभाए होज्जा १। जाव अहवा दो सक्करप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा, २-३-४-५ = २२। एवं जहा सक्करप्पभाए वत्तव्वया भणिया तहा सव्वपुढवीणं भाणियव्वा, जाव अहवा दो तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा। ४-४, ३-३, २-२, १-१ = ४२।

(ख) अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे सक्करप्पभाए, एगे वालुयप्पभाए होज्जा १। अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे सक्करप्पभाए, एगे पंकप्पभाए होज्जा २। जाव अहवा एगे रयणप्पभाए, एगेसक्करप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा, ३-४-५। अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा ६। अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे वालुयप्पभाए, एगे धूमप्पभाए होज्जा ७। एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे वालुयप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा, ८-९। अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे पंकप्पभाए, एगे धूमप्पभाए होज्जा १०। जाव अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे पंकप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा, ११-१२। अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे धूमप्पभाए, एगे तमाए होज्जा १३। अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे धूमप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १४।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ग) अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५। अहवा एगे सक्करप्पभाए, एगे वालुयप्पभाए, एगे पंकप्पभाए होज्जा १६। अहवा एगे सक्करप्पभाए, एगे वालुयप्पभाए, एगे धूमप्पभाए होज्जा १७। जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए, एगे वालुयप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १८-१९। अहवा एगे सक्करप्पभाए, एगे पंकप्पभाए, एगे धूमप्पभाए होज्जा २०। जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए, एगे पंकप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा, २१-२२। अहवा एगे सक्करप्पभाए, एगे धूमप्पभाए, एगे तमाए होज्जा २३। अहवा एगे सक्करप्पभाए, एगे धूमप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा २४। अहवा एगे सक्करप्पभाए, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा २५।

(घ) अहवा एगे वालुयप्पभाए, एगे पंकप्पभाए, एगे धूमप्पभाए होज्जा २६। अहवा एगे वालुयप्पभाए, एगे पंकप्पभाए, एगे तमाए होज्जा २७। अहवा एगे वालुयप्पभाए, एगे पंकप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा २८। अहवा एगे वालुयप्पभाए, एगे धूमप्पभाए, एगे तमाए होज्जा २९। अहवा एगे वालुयप्पभाए, एगे धूमप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३०। अहवा एगे वालुयप्पभाए, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३१। अहवा एगे पंकप्पभाए, एगे धूमप्पभाए, एगे तमाए होज्जा ३२। अहवा एगे पंकप्पभाए, एगे धूमप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३३। अहवा एगे पंकप्पभाए, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३४। अहवा एगे धूमप्पभाए, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३५। ८४।

१८. [प्र.] भगवन् ! तीन नैरयिक नैरयिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् अधःसप्तम-पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं ?

[उ.] गांगेय ! वे तीन नैरयिक (एक साथ) रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम में उत्पन्न होते हैं।

(क) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में और दो शर्कराप्रभा में; अथवा (२-३-४-५-६ नरक) यावत् एक रत्नप्रभा में और दो अधःसप्तम पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं। (इस प्रकार १-२ का रत्नप्रभा के साथ अनुक्रम से दूसरे नरकों के साथ संयोग करने से छह भंग होते हैं)। (१) अथवा दो नैरयिक रत्नप्रभा में और एक शर्कराप्रभा में उत्पन्न होते हैं। (२-३-४-५-६) अथवा यावत् दो जीव रत्नप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार २-१ के भी पूर्ववत् ६ भंग होते हैं)। (१) अथवा एक शर्कराप्रभा में और दो बालुकाप्रभा में होते हैं, (२-३-४-५) अथवा यावत् एक शर्कराप्रभा में और दो अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार शर्कराप्रभा के साथ १-२ के पाँच भंग होते हैं)। (१) अथवा दो शर्कराप्रभा में और एक बालुकाप्रभा में होता है, अथवा (२-३-४-५) यावत् दो शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में उत्पन्न होता है। (इस प्रकार २-१ के पूर्ववत् पाँच भंग होते हैं)। जिस प्रकार शर्कराप्रभा की वक्तव्यता कही, उसी प्रकार सातों नरकों की वक्तव्यता, यावत् दो तमःप्रभा में और एक तमस्तमःप्रभा में होता है, यहाँ तक जानना चाहिए। (इस प्रकार ६ + ६ + ५ + ५ = २२ तथा ४-४, ३-३, २-२, १-१ = कुल ४२ भंग हुए)

(ख) अथवा (१) एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और एक बालुकाप्रभा में (२) अथवा एक रत्नप्रभा में एक शर्कराप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है। अथवा (३-४-५) यावत् एक रत्नप्रभा में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक शर्करप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार रत्नप्रभा और शर्कराप्रभा के साथ ५ विकल्प होते हैं।) अथवा (६) एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है। (७) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। (८-९) इसी प्रकार यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। इस प्रकार रत्नप्रभा और बालुकाप्रभा के साथ ४ विकल्प होते हैं। अथवा (१०) एक रत्नप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है; (११-१२) यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार बालुकाप्रभा को छोड़ने पर रत्नप्रभा और पंकप्रभा के साथ तीन विकल्प होते हैं।) अथवा (१३) एक रत्नप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है; (१४) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार पंकप्रभा को छोड़ देने पर, रत्नप्रभा और धूमप्रभा के साथ दो विकल्प होते हैं।)

(१५) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (धूमप्रभा को छोड़ देने पर यह एक विकल्प होता है।) इस प्रकार रत्नप्रभा के ५ + ४ + ३ + २ + १ = १५ विकल्प होते हैं। (ग) (१६) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है; (१७) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है; (१८-१९) यावत् अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार शर्कराप्रभा और बालुकाप्रभा के साथ चार विकल्प होते हैं।) (२०) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है; (२१-२२) यावत् अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार बालुकाप्रभा को छोड़ देने पर शर्कराप्रभा और पंकप्रभा के साथ तीन विकल्प होते हैं।) (२३) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (२४) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार पंकप्रभा को छोड़ देने पर शर्कराप्रभा और धूमप्रभा के साथ दो विकल्प होते हैं।) (२५) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार धूमप्रभा को छोड़ देने पर एक विकल्प होता है। यों शर्कराप्रभा के साथ ४ + ३ + २ + १ = १० विकल्प होते हैं।)

(घ) (२६) अथवा एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। (२७) अथवा एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (२८) अथवा एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (२९) अथवा एक बालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (३०) अथवा एक बालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (३१) अथवा एक बालुकाप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार बालुकाप्रभा के साथ ३ + २ + १ = ६ विकल्प होते हैं।) (३२) अथवा एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (३३) अथवा एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (यों पंकप्रभा और धूमप्रभा के साथ दो विकल्प होते हैं।) (३४) अथवा एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है। (इस प्रकार पंकप्रभा के साथ २ + १ = ३ विकल्प होते हैं।) (३५) अथवा एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस तरह धूमप्रभा-पृथ्वी के साथ एक विकल्प होता है।) (र. १५ + श. १० + वा. ६ + पं. ३ + धू. १, यों त्रिकसंयोगी कुल भंग ३५ होते हैं।)

18. [Q.] *Bhante !* When three *jivas* (souls) enter the infernal realm do they get born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi)?

[Ans.] Gangeya ! All the three together get born either in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or in any other ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(a) Or (1) one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (2, 3, 4, 5, 6) one in first hell (Ratnaprabha Prithvi) and two in the third hell (Balukaprabha Prithvi) ... and so on up to... one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and two in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are six alternative combinations of 1 and 2 for the first and the following six hells.)

Or (1) two are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (2, 3, 4, 5, 6) two in first hell (Ratnaprabha Prithvi) and one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) ... and so on up to... two are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are six alternative combinations of 2 and 1 for the first and the following six hells.)

Or (1) one is born in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and two in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or (2, 3, 4, 5) one in second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and two in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) ... and so on up to... one is born in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and two in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are five alternative combinations of 1 and 2 for the second and the following five hells.)

Or (1) two are born in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or (2, 3, 4, 5) two in second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) ... and so on up to... two are born in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are five alternative combinations of 2 and 1 for the second and the following five hells.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

What has been said with regard to the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) should be repeated for all the seven hells ... and so on up to... two are born in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (Thus the number of alternative combinations is 6+6+5+5 = 22 and 4+4+3+3+2+2+1+1 = 20 making a total of 42).

(b) Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (3,4,5) ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). This way there are 5 alternative combinations for the set of the first and the second hells).

Or (6) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (7) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). Or (8, 9) ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 4 alternative combinations for the set of the first and the third hells).

Or (10) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). Or (11, 12) ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (Thus ignoring the third hell, there are three alternative combinations for the set of the first and the fourth hells).

Or (13) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (14) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (Thus ignoring the fourth hell, there are two alternative combinations for the set of the first and the fifth hells).

Or (15) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Prithvi). (Thus ignoring the fifth hell, there is one alternative combination for the set of the first and the fifth hells). This way the total number of alternative combinations related to first hell are 5+4+3+2+1 = 15.

(c) Or (16) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (17) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). Or (18,19) ... and so on up to... one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 4 alternative combinations for the set of the second and the third hells).

Or (20) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). Or (21,22) ... and so on up to... one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (Thus ignoring the third hell, there are three alternative combinations for the set of the second and the fourth hells).

Or (23) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (24) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (Thus ignoring the fourth hell, there are two alternative combinations for the set of the second and the fifth hells).

Or (25) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (Thus ignoring the fifth hell, there is one alternative combination for the set of the second and the fifth hells). This way the total number of alternative combinations related to second hell are 4+3+2+1 = 10.

(d) Or (26) one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). Or (27) one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (28) one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (29) one in the third hell

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(Balukaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (30) one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (31) one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). This way the total number of alternative combinations related to the third hell are 3+2+1 = 6.

Or (32) one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (33) one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (Thus there are 2 alternative combinations for the set of the fourth and the fifth hells). Or (34) one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). This way the total number of alternative combinations related to the fourth hell are 2+1 = 3.

Or (35) one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). This way the total number of alternative combinations related to the fifth hell is1. (Thus the total number of alternative combinations related to sets of three hells are—(I) 15 + (II) 10 + (III) 6 + (IV) 3 + (V) 1 = 35)

विवेचन : यदि तीन जीव नरक में उत्पन्न हों तो उनके असंयोगी (एक-एक) भंग ७, द्विकसंयोगी ४२ और त्रिकसंयोगी ३५, ये सब मिलकर ८४ भंग होते हैं, जो सूत्र में बतलाा दिये गये हैं।

Elaboration—When three souls enter the infernal world the number of alternative combinations are—7 for individual (or no alternative combination), 42 for alternative combinations of sets of two, and 35 for alternative combinations of sets of three, totaling to 84 as detailed in the aforesaid aphorism.

चार नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ALTERNATIVES FOR FOUR INFERNAL BEING

१९. [प्र.] चत्तारि भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणए णं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए चार नैरयिक जीव क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! वे चार नैरयिक जीव रत्नप्रभा में होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार असंयोगी सात विकल्प और सात ही भंग होते हैं।)

19. [Q.] *Bhante !* When four *jivas* (souls) enter the infernal realm do they get born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi) ?

[Ans.] Gangeya ! All the four together get born either in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or in any other ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). This way the number of alternative combinations for all four souls as individuals (no set-related alternative combination) are seven.

द्विकसंयोगी ६३ भंग **63 OPTIONS FOR SETS OF TWO**

१९. (क) अहवा एगे रयणप्पभाए, तिण्णि सक्करप्पभाए होज्जा १। अहवा एगे रयणप्पभाए, तिण्णि वालुयप्पभाए होज्जा २। एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए, तिण्णि अहेसत्तभाए होज्जा ३-६। अहवा दो रयणप्पभाए, दो सक्करप्पभाए होज्जा १, एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए, दो अहेसत्तमाए होज्जा २-६ = १२।

अहवा तिण्णि रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए होज्जा १। एवं जाव अहवा तिण्णि रयणप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा २-६ = १५।

अहवा एगे सक्करप्पभाए, तिण्णि वालुयप्पभाए होज्जा १, एवं जहेव रयणप्पभाए उवरिमाहिं समं चारियं तहा सक्करप्पभाए वि उवरिमाहिं समं चारियव्वं २-१५ = ३३।

एवं एक्केक्काए समं चारेयव्वं जाव अहवा तिण्णि तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५-१५ = ६३।

१९. (क) **(द्विकसंयोगी तिरेसठ भंग)**-(१) अथवा एक रत्नप्रभा में और तीन शर्कराप्रभा में होते हैं; (२) अथवा एक रत्नप्रभा में और तीन बालुकाप्रभा में होते हैं; (३-४-५-६) इसी प्रकार यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में और तीन अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार रत्नप्रभा के साथ १-३ के ६ भंग होते हैं।) (७) अथवा दो रत्नप्रभा में और दो शर्कराप्रभा में होते हैं; (८-९-१०-११-१२) इसी प्रकार यावत् अथवा दो रत्नप्रभा में और दो अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (यों रत्नप्रभा के साथ २-२ के छह भंग होते हैं।)

(१३) अथवा तीन रत्नप्रभा में और एक शर्कराप्रभा में होता है; (१४-१८) इसी प्रकार यावत् अथवा तीन रत्नप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार रत्नप्रभा के साथ ३-१ के ६ भंग होते हैं। यों रत्नप्रभा के साथ कुल भंग ६ + ६ + ६ = १८ हुए।)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१) अथवा एक शर्कराप्रभा में और तीन बालुकाप्रभा में होते हैं। जिस प्रकार रत्नप्रभा का आगे की नरक-पृथ्वियों के साथ संचार (योग) किया, उसी प्रकार शर्कराप्रभा का भी उसके आगे की नरकों के साथ संचार करना चाहिए। (इस प्रकार शर्कराप्रभा के साथ १-३ के ५ भंग, २-२ के ५ भंग एवं ३-१ के ५ भंग; यों कुल मिलाकर १५ भंग हुए।)

इसी प्रकार आगे की एक-एक (बालुकाप्रभा, पंकप्रभा, आदि) नरक-पृथ्वियों के साथ योग करना चाहिए। (इस प्रकार बालुकाप्रभा के साथ भी १-३ के ४, २-२ के ४ और ३-१ के ४; यों कुल १२ भंग पंकप्रभा के साथ १-३ के ३, २-२ के ३ और ३-१ के ३; यों कुल ९ भंग तथा धूमप्रभा के साथ १-३ के २, २-२ के २ और ३-१ के २; तथा तमःप्रभा के साथ १-३ का १, २-२ का १ और ३-१ का १ होता है।) यावत् अथवा तीन तमःप्रभा में और एक तमस्तमःप्रभा में होता है, यहाँ तक कहना चाहिए। (इस प्रकार द्विकसंयोगी कुल ६३ भंग हुए।)

19. (a) Or (1) one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and three in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and three in the third hell (Balukaprabha Prithvi), (3, 4, 5, 6) ... and so on up to... one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and three in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are six alternative combinations of 1 and 3 for the first and the following six hells.)

Or (7) two are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (8, 9, 10, 11, 12) ... and so on up to... two are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and two in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are six alternative combinations of 2 and 2 for the first and the following six hells.)

Or (13) three are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (14 -18) in the same way ... and so on up to... three are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are six alternative combinations of 3 and 1 for the first and the following six hells. And a total of 6+6+6 = 18 alternative combinations related to the first hell)

Or (1) one is born in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and three in the third hell (Balukaprabha Prithvi). As the following hells have been associated with the first hell, in the same way they should be associated with the second hell. (This way there are 5 alternative combinations for sets of 1 and 3, 5 for sets of 2 and 2 and 5 for sets of 3 and 1 making a total of 15 alternative combinations.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

In the same way alternative combinations for each following hell should be made. ... and so on up to... three are born in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way for the third hell there are 4 alternative combinations for sets of 1 and 3, 4 for sets of 2 and 2 and 4 for sets of 3 and 1 making a total of 12 alternative combinations. For the fourth hell there are 3 alternative combinations for sets of 1 and 3, 3 for sets of 2 and 2 and 3 for sets of 3 and 1 making a total of 9 alternative combinations. For the fifth hell there are 2 alternative combinations for sets of 1 and 3, 2 for sets of 2 and 2 and 2 for sets of 3 and 1 making a total of 6 alternative combinations. For the fifth hell there is 1 alternative combination for sets of 1 and 3, 1 for sets of 2 and 2 and 1 for sets of 3 and 1 making a total of 12 alternative combinations. All these make a total of 63 alternative combinations for sets of two.)

त्रिकसंयोगी १०५ भंग **105 OPTIONS FOR SETS OF THREE**

(ख) अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे सक्करप्पभाए, दो वालुयप्पभाए होज्जा १। अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे सक्कर०, दो पंकप्पभाए होज्जा २। एवं जाव एगे रयणप्पभाए, एगे सक्कर०, दो अहेसत्तमाए होज्जा ३-४-५।

अहवा एगे रयण०, दो सक्कर०, एगे वालुयप्पभाए होज्जा १। एवं जाव अहवा एगे रयण०, दो सक्कर०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा २-३-४-५ = १०।

अहवा दो रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुयप्पभाए होज्जा १ = ११। एवं जाव अहवा दो रयण०, एगे सक्कर०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ५ = १५। अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, दो पंकप्पभाए होज्जा १ = १६। एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे वालुय०, दो अहेसत्तमाए होज्जा २-३-४ = १९। एवं एएणं गमएणं जहा तिण्हं तियजोगो तहा भाणियव्वो जाव अहवा दो धूमप्पभाए, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १०५।

१९. (ख) (त्रिकसंयोगी १०५ भंग)-(१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और दो बालुकाप्रभा में होते हैं। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और दो पंकप्रभा में होते हैं। (३-४-५) इसी प्रकार यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और दो अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार १-१-२ के पाँच भंग हुए।)

(१) अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और एक बालुकाप्रभा में होता है; (२ से ५) इसी प्रकार यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में दो शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। इसी प्रकार १-२-१ के भी पाँच भंग हुए। (१) अथवा दो रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बालुकाप्रभा में होता है। (२ से ५) इसी प्रकार यावत् अथवा दो रत्नप्रभा में एक शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार २-१-१ के पाँच भंग हुए।)

(१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और दो पंकप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और दो अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं (२-३-४)। (इस प्रकार रत्नप्रभा और बालुकाप्रभा के साथ ४ भंग होते हैं।) इसी प्रकार के अभिलाप द्वारा जैसे तीन नैरयिकों के त्रिकसंयोगी भंग कहे, उसी प्रकार चार नैरयिकों के भी त्रिकसंयोगी भंग जानना चाहिए; यावत् दो धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक तमस्तमःप्रभा में होता है। (इस प्रकार त्रिकसंयोगी कुल १०५ भंग हुए।)

19. (b) Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and two in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and two in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (3,4,5) ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and two in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). This way there are 5 alternative combinations for the set of 1-1-2).

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or (2-5) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). This way there are 5 alternative combinations for the set of 1-2-1).

Or (1) two in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or (2-5) two in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). This way there are 5 alternative combinations for the set of 2-1-1).

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and two in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (2, 3,4) ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and two in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). This way there are 4 alternative combinations related to the first and the third hell).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

In the same way, like alternative combinations for three infernal beings in sets of three, alternative combinations for four infernal beings in sets of three should be mentioned ... and so on up to... two in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). All these make a total of 105 alternative combinations for sets of three.)

चतुःसंयोगी ३५ भंग 35 ALTERNATIVES FOR SETS OF FOUR

१९. (ग) अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे सक्करप्पभाए, एगे वालुयप्पभाए, एगे पंकप्पभाए होज्जा १। अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे सक्कर०, एगे वालुय०, एगे धूमप्पभाए होज्जा २। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुय०, एगे तमाए होज्जा ३। अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे सक्करप्पभाए, एगे वालुयप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ४। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे पंक०, एगे धूमप्पभाए होज्जा १ = ५। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे पंकप्पभाए, एगे तमाए होज्जा २–६। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे पंक०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३–७। अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे सक्कर०, एगे धूम०, एगे तमाए होज्जा १ = ८। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे धूम०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा २–९। अहवा एगे रयण०, एगे सक्करप्पभाए, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १ = १०। अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, एगे पंक०, एगे धूमप्पभाए होज्जा १–११। अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, एगे पंक०, एगे तमाए होज्जा २–१२। अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, एगे पंक०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३–१३। अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, एगे धूम०, एगे तमाए होज्जा १–१४। अहवा एगे रयणप्पभाए, एगे वालुय०, एगे धूम०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा २–१५। अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १–१६। अहवा एगे रयण०, एगे पंक०, एगे धूम०, एगे तमाए होज्जा १–१७। अहवा एगे रयण०, एगे पंक०, एगे धूम०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा २–१८। अहवा एगे रयण०, एगे पंक०, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १–१९। अहवा एगे रयण०, एगे धूम०, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १–२०। अहवा एगे सक्कर०, एगे वालुय०, एगे पंक०, एगे धूमप्पभाए होज्जा १–२१। एवं जहा रयणप्पभाए उवरिमाओ पुढवीओ चारियाओ तहा सक्करप्पभाए वि उवरिमाओ चारियव्वाओ जाव अहवा एगे सक्कर०, एगे धूम०, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १०–३०। अहवा एगे वालुय०, एगे पंक०, एगे धूम०, एगे तमाए होज्जा १–३१। अहवा एगे वालुय०, एगे पंक०, एगे धूमप्पभाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा २–३२। अहवा एगे वालुय०, एगे पंक०, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३–३३। अहवा एगे वालुय०, एगे धूम०, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ४–३४। अहवा एगे पंक०, एगे धूम०, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १–३५।

१९. (ग) (चतुःसंयोगी ३५ भंग–) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बालुकाप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। (३) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (४) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (ये चार भंग हुए।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (३) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार ये तीन भंग हुए।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार ये दो भंग हुए।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (यह एक भंग हुआ।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (३) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (ये तीन भंग हुए।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (ये दो भंग हुए।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (यह एक भंग हुआ।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (ये दो भंग होते हैं।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (यह एक भंग) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक धूमप्रभा में एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (यह एक भंग हुआ। इस प्रकार रत्नप्रभा के संयोग वाले ४ + ३ + २ + १, + ३ + २ + १, + २ + १ + १ = २० भंग होते हैं।) (१) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। जिस प्रकार रत्नप्रभा का उससे आगे की पृथ्वियों के साथ संचार (योग) किया, उसी प्रकार शर्कराप्रभा का उससे आगे की पृथ्वियों के साथ योग करना चाहिए। यावत् अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार शर्कराप्रभा के संयोग वाले १० भंग होते हैं।) (१) अथवा एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (२) अथवा एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (३) अथवा एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस तरह बालुकाप्रभा के संयोग वाले ४ भंग हुए।) (१) अथवा एक बालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है अथवा एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। इस प्रकार सब मिलकर चतुःसंयोगी भंग २० + १० + ४ + १ = ३५ होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

19. (d) Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). Or (3) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (4) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 4 alternative combinations.)

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (3) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 3 alternative combinations.)

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 2 alternative combinations.)

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there is only 1 alternative combinations.)

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Or (3) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 3 alternative combinations.)

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 2 alternative combinations.)

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there is only 1 alternative combinations.)

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 2 alternative combinations.)

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there is only 1 alternative combinations.)

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there is only 1 alternative combinations. Thus there are 4+3+2+1+3+2+1+2+1+1 = 20 alternative combinations starting with the first hell.)

Or (1) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). As alternative combinations related to the first hell with its following hells have been

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

mentioned, in the same way alternative combinations related to the second hell with its following hells should be detailed. ... and so on up to... one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (Thus there are 10 alternative combinations starting with the second hell.)

Or (1) one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (2) one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (3) one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (Thus there are 3 alternative combinations starting with the third hell.)

Or (1) one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (1) one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way the total number of alternative combinations related to sets of four becomes 20+10+4+1 =35. Thus the total number of alternative combinations related to four infernal beings becomes – 7 options for no alternative combination of four, 63 options for alternative combination of 2, 105 options for alternative combination of 3, and 35 options for alternative combination of 4, making a total of 210 options.)

विवेचन : यों चार नैरयिकों की अपेक्षा से असंयोगी ७, द्विकसंयोगी ६३, त्रिकसंयोगी १०५ और चतुःसंयोगी ३५; यों कुल २१० भंग होते हैं। *(विस्तार के लिए देखें–व्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्र, भा. २, पृ. ४७०-४७१)*

Elaboration—Thus the total number of alternative combinations related to four infernal beings becomes – 7 options for no alternative combination of four, 63 options for alternative combination of 2, 105 options for alternative combination of 3, and 35 options for alternative combination of 4, making a total of 210 options. (For details see *Vyakhyaprajnapti Sutra*, part-2, pp. 470-471)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाँच नैरयिकों के प्रवेशनक भंग **ALTERNATIVES FOR FIVE INFERNAL BEINGS**

२०. [प्र.] पंच भंते ! नेरइया नेरइयप्पवेसणए णं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७।

२०. [प्र.] भगवन् ! पाँच नैरयिक जीव, नैरयिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि पृच्छा।

[उ.] गांगेय ! रत्नप्रभा में होते हैं, यावत् अधःसप्तम-पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं। (इस प्रकार असंयोगी सात भंग होते हैं।)

20. [Q.] *Bhante !* When five *jivas* (souls) enter the infernal realm do they get born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi) ?

[Ans.] Gangeya ! All the five together get born either in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or in any other ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way the number of alternative combinations for all five souls as individuals are seven.)

पाँच नैरयिकों के द्विसंयोगी ८४ भंग **84 ALTERNATIVES FOR SETS OF TWO**

२०. (क) अहवा एगे रयण०, चत्तारि सक्करप्पभाए होज्जा १। जाव अहवा एगे रयण०, चत्तारि अहेसत्तमाए होज्जा ६। अहवा दो रयण० तिण्णि सक्करप्पभाए होज्जा १-७। एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए, तिण्णि अहेसत्तमाए होज्जा ६ = १२। अहवा तिण्णि रयण०, दो सक्करप्पभाए होज्जा १-१३। एवं जाव अहेसत्तमाए होज्जा ६ = १८। अहवा चत्तारि रयण०, एगे सक्करप्पभाए होज्जा १-१९। एवं जाव अहवा चत्तारि रयण०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ६ = २४। अहवा एगे सक्कर०, चत्तारि वालुयप्पभाए होज्जा १। एवं जहा रयणप्पभाए समं उवरिमपुढवीओ चारियाओ तहा सक्करप्पभाए वि समं चारेयव्वाओ जाव अहवा चत्तारि सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा २०। एवं एक्केक्काए समं चारेयव्वाओ जाव अहवा चत्तारि तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ८४।

२०. (क) (द्विकसंयोगी ८४ भंग-)(१) अथवा एक रत्नप्रभा में और चार शर्कराप्रभा में होते हैं; (२-६) यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में और चार अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार रत्नप्रभा के साथ १-४ शेष पृथ्वियों का योग करने पर ६ भंग होते हैं।) (१) अथवा दो रत्नप्रभा में और तीन शर्कराप्रभा में होते हैं; (२-६) इसी प्रकार यावत् अथवा दो रत्नप्रभा में और तीन अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (यों २-३ से ६ भंग होते हैं।) (१) अथवा तीन रत्नप्रभा में और दो शर्कराप्रभा में होते हैं। २-६ इसी प्रकार यावत् अथवा तीन रत्नप्रभा में और दो अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (यों ३-२ से ६ भंग होते हैं।) (१) अथवा चार रत्नप्रभा में और एक शर्कराप्रभा में होता है, (२-६) यावत् अथवा चार रत्नप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार ४-१ से ६ भंग होते हैं। यों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रत्नप्रभा के साथ शेष पृथ्वियों के संयोग से कुल चौबीस भंग होते हैं।) (१) अथवा एक शर्कराप्रभा में और चार बालुकाप्रभा में होते हैं। जिस प्रकार रत्नप्रभा के साथ (१-४, २-३, ३-२ और ४-१ से आगे की पृथ्वियों का संयोग किया, उसी प्रकार शर्कराप्रभा के साथ संयोग करने पर बीस भंग (५ + ५ + ५ + ५ = २०) होते हैं। यावत् अथवा चार शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। इसी प्रकार बालुकाप्रभा आदि एक-एक पृथ्वी के साथ आगे की पृथ्वियों का (१-४, २-३, ३-२ और ४-१ से) योग करना चाहिए; यावत् चार तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है।

20. (a) Or (1) one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and four in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (2-6) ... and so on up to... one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and four in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are six alternative combinations of 1 and 4 for the first and the following six hells.)

Or (1) two are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and three in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (2-6) ... and so on up to... two are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and three in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are six alternative combinations of 2 and 3 for the first and the following six hells.)

Or (1) three are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (2 - 6) in the same way ... and so on up to... three are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and two in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are six alternative combinations of 3 and 2 for the first and the following six hells.)

Or (1) four are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (2 - 6) in the same way ... and so on up to... four are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are six alternative combinations of 4 and 1 for the first and the following six hells. And a total of 6+6+6+6 = 18 alternative combinations related to the first hell)

Or (1) one is born in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and four in the third hell (Balukaprabha Prithvi). As the following hells have been associated with the first hell (1-4, 2-3, 3-2, and 4-1), in the same way they should be associated with the second hell. ... and so on up to... four are born in the second hell (Ratnaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 5 alternative combinations for aforesaid 4 sets making a total of 20 alternative

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

combinations.) In the same way alternative combinations should be stated for the third and following hells ... and so on up to... four are born in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

विवेचन : पाँच नैरयिकों के द्विकसंयोगी ८४ भंग–इसके ४ विकल्प होते हैं। यथा–१-४, २-३, ३-२ और ४-१। रत्नप्रभा के द्विकसंयोगी ६ भंगों के साथ ४ विकल्पों का गुणा करने पर २४ भंग होते हैं। शर्कराप्रभा के साथ ५ भंगों से ४ विकल्पों का गुणा करने पर २०, बालुकाप्रभा के साथ १६, पंकप्रभा के साथ १२, धूमप्रभा के साथ ८ और तमःप्रभा के साथ ४ भंग होते हैं। इस प्रकार कुल २४ + २० + १६ + १२ + ८ + ४ = ८४ भंग द्विकसंयोगी होते हैं।

Elaboration—There are four sets of combinations for the five infernal beings – 1-4, 2-3, 3-2, and 4-1. There are 6 alternatives for these four sets of combinations for the first hell, making a total of 6x4 = 24 alternative combinations. For the second hell there are 5x4 = 20 alternative combinations. For the third hell there are 4x4 = 16 alternative combinations. For the fourth hell there are 4x4 = 16 alternative combinations. For the fifth hell there are 3x4 = 12 alternative combinations. For the sixth hell there are 2x4 = 8 alternative combinations. And for the seventh hell there are 1x4 = 4 alternative combinations. Thus the total number of alternative combinations for sets of two are 24+20+16+12+8+4 = 84.

पाँच नैरयिकों के त्रिसंयोगी भंग 210 ALTERNATIVES FOR SETS OF THREE

२०. (ख) अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, तिण्णि वालुयप्पभाए होज्जा १। एवं जाव अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, तिण्णि अहेसत्तमाए होज्जा ५। अहवा एगे रयण०, दो सक्कर०, दो वालुयप्पभाए होज्जा १–६। एवं जाव अहवा एगे रयण०, दो सक्कर०, दो अहेसत्तमाए होज्जा ५–१०। अहवा दो रयणप्पभाए, एगे सक्करप्पभाए, दो वालुयप्पभाए होज्जा १–११। एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए, एगे सक्करप्पभाए, दो अहेसत्तमाए होज्जा ५–१५। अहवा एगे रयण०, तिण्णि सक्कर०, एगे वालुयप्पभाए होज्जा १–१६। एवं जाव अहवा एगे रयण०, तिण्णि सक्कर०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ५–२०। अहवा दो रयण०, दो सक्कर०, एगे वालुयप्पभाए होज्जा १–२१। एवं जाव दो रयण०, दो सक्कर०, एगे अहेसत्तमाए ५–२५। अहवा तिण्णि रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुयप्पभाए होज्जा १–२६। एवं जाव अहवा तिण्णि रयण०, एगे सक्कर०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ५–३०। अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, तिण्णि पंकप्पभाए होज्जा १–३१। एवं एएणं कमेणं जहा चउण्हं तियसंजोगो भणितो तहा पंचण्ह वि तियसंजोगो भाणियव्वो; नवरं तत्थ एगो संचारिज्जइ, इह दोण्णि, सेसं तं चेव, जाव अहवा तिण्णि धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा २१०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. (ख) **(पाँच नैरयिकों के त्रिकसंयोगी २१० भंग–)** अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और तीन बालुकाप्रभा में होते हैं। इसी प्रकार यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और तीन अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार एक, एक और तीन के रत्नप्रभा-शर्कराप्रभा के साथ संयोग से पाँच भंग होते हैं।) अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और दो बालुकाप्रभा में होते हैं। इसी प्रकार यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और दो अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार एक, दो, दो के संयोग से पाँच भंग होते हैं।) अथवा दो रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और दो बालुकाप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् अथवा दो रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और दो अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (यों दो, एक, दो के संयोग से पाँच भंग होते हैं।) अथवा एक रत्नप्रभा में, तीन शर्कराप्रभा में और एक बालुकाप्रभा में होता है। इसी प्रकार यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, तीन शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार एक, तीन, एक के संयोग से पाँच भंग होते हैं।) अथवा दो रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और एक बालुकाप्रभा में होता है। इसी प्रकार यावत् दो रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार दो, दो, एक के संयोग से पाँच भंग हुए।) अथवा तीन रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और एक बालुकाप्रभा में होता है। इस प्रकार यावत् तीन रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (यों ३-१-१ के संयोग से ५ भंग होते हैं।) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और तीन पंकप्रभा में होता है। इस क्रम से जिस प्रकार चार नैरयिकों के त्रिकसंयोगी भंग जानना चाहिए। विशेष यह है कि वहाँ 'एक' संचार था उसके स्थान पर। यहाँ दो का संचार करना चाहिए। शेष सब पूर्ववत् जान लेना चाहिए। यावत् अथवा तीन धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है; यहाँ तक करना चाहिए।

20. (b) Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and three in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and three in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 5 alternative combinations for the set of 1-1-3).

Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and two in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and two in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 5 alternative combinations for the set of 1-2-2).

Or two in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and two in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or ... and so on up to... two in the first hell (Ratnaprabha

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and two in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 5 alternative combinations for the set of 2-1-2).

Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), three in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), three in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 5 alternative combinations for the set of 1-3-1).

Or two in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or ... and so on up to... two in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 5 alternative combinations for the set of 2-2-1).

Or three in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or ... and so on up to... three in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 5 alternative combinations for the set of 3-1-1).

विवेचन : पाँच नैरयिकों के त्रिकसंयोगी विकल्प ६ होते हैं। यथा–१–१–३, १–२–२, २–१–२, १–३–१, २–२–१ और ३–१–१; ये ६ विकल्प। प्रत्येक नरक के साथ संयोग होने से प्रत्येक के ५–५ भंग होते हैं। यों ७ × ५ = ३५ भंग हुए। इन ३५ भंगों को ६ विकल्पों के साथ गुणा करने से ३५ × ६ = २१० भंग कुल होते हैं।

त्रिकसंयोगी भंग–इनमें से रत्नप्रभा के संयोग वाले ९०, शर्कराप्रभा के संयोग वाले ६०, बालुकाप्रभा के संयोग वाले ३६, पंकप्रभा के संयोग वाले १८ और धूमप्रभा के संयोग वाले ६ भंग होते हैं। ये सभी ९० + ६० + ३६ + १८ + ६ = २१० भंग त्रिकसंयोगी होते हैं।

Elaboration—There are six options for sets of three – 1-1-3, 1-2-2, 2-1-2, 1-3-1, 2-2-1, and 3-1-1. Associated with each of the seven hells there are five combinations for each, making a total of 35 different combinations. Each of these combinations has six alternatives making a total of 35x6 = 210 alternative combinations.

Alternative combinations for sets of three–Of these 90 are related to the first hell, 60 to the second, 36 to the third, 18 to the fourth, and 6 to the fifth hell. this makes a total of 90+60+36+18+6 = 210 Alternative combinations for sets of three.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. (ग) अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुय०, दो पंकप्पभाए होज्जा १। एवं जाव अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुय०, दो अहेसत्तमाए होज्जा ४। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, दो वालुय०, एगे पंकप्पभाए होज्जा १-५। एवं जाव अहेसत्तमाए ४-८। अहवा एगे रयण०, दो सक्करप्पभाए, एगे वालुय०, एगे पंकप्पभाए होज्जा १-९। एवं जाव अहवा एगे रयण०, दो सक्कर०, एगे वालुय०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ४-१२। अहवा दो रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुय०, एगे पंकप्पभाए होज्जा १-१३। एवं जाव अहवा दो रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुय०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ४-१६। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे पंक०, दो धूमप्पभाए होज्जा १-१७। एवं जहा चउण्हं चउक्कसंजोगो भणिओ तहा पंचण्ह वि चउक्कसंजोगो भाणियव्वो, नवरं अब्भहियं एगो संचारेयव्वो, एवं जाव अहवा दो पंक०, एगे धूम०, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १४०।

२०. (ग) (पाँच नैरयिकों के चतुःसंयोगी १४० भंग) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और दो पंकप्रभा में होते हैं। इसी प्रकार (२-४) यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और दो अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (यों १-१-१-२ के संयोग से चार भंग होते हैं।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, दो बालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है। इसी प्रकार (२-४) यावत् एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, दो बालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (यों १-१-२-१ के संयोग से चार भंग होते हैं।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है। इस प्रकार (२-४) यावत् एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (यों १-२-१-१ के संयोग से चार भंग होते हैं।) (१) अथवा दो रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में होते हैं। इसी प्रकार यावत् (२-४) अथवा दो रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (यों २-१-१-१ के संयोग से चार भंग होते हैं।) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में और दो धूमप्रभा में होते हैं। जिस प्रकार चार नैरयिक जीवों के चतुःसंयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार पाँच नैरयिक जीवों के चतुःसंयोगी भंग कहना चाहिए, किन्तु यहाँ एक अधिक का संचार (संयोग) करना चाहिए। इस प्रकार यावत् दो पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है, यहाँ तक कहना चाहिए। (ये चतुःसंयोगी १४० भंग होते हैं।)

20. (c) 140 options for sets of four – Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and two in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (2-4) ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi),

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and two in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 4 alternative combinations for the set of 1-1-1-2).

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), two in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (2-4) ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), two in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 4 alternative combinations for the set of 1-1-2-1).

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (2-4) ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 4 alternative combinations for the set of 1-2-1-1).

Or (1) two in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (2-4) ... and so on up to... two in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way there are 4 alternative combinations for the set of 2-1-1-1).

Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and two in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). As alternative combinations related to sets of four have been stated for four infernal beings, in the same way alternative combinations related to sets of four should be stated for five infernal beings. The only difference is that one more infernal being should be added ... and so on up to... two in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (this way the total number of alternative combinations for sets of four are 140)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : चतुःसंयोगी ४ विकल्प होते हैं। यथा-१-१-१-२, १-१-२-१, १-२-१-१ और २-१-१-१। सात नरकों के चतुःसंयोगी पैंतीस भंग होते हैं। इन पैंतीस को ४ से गुणा करने पर कुल १४० भंग होते हैं। यथा-रत्नप्रभा के संयोग वाले ८०, शर्कराप्रभा के संयोग वाले ४०, बालुकाप्रभा के संयोग वाले १६ और पंकप्रभा के संयोग वाले ४; ये सभी मिलकर पंच नैरयिकों के चतुःसंयोगी १४० भंग होते हैं।

Elaboration—There are four alternatives for sets of four – 1-1-1-2, 1-1-2-1, 1-2-1-1, and 2-1-1-1. Associated with each of the seven hells there are five combinations for each, making a total of 35 different combinations. Each of these combinations has four aforesaid alternatives making a total of 35x4 = 140 alternative combinations. Of these 80 are related to the first hell, 40 to the second, 16 to the third, and 4 to the fourth, This makes a total of 140 alternative combinations for sets of four.

पाँच नैरयिकों के पंचसंयोगी भंग **21 ALTERNATIVES FOR SETS OF FIVE**

२०. (घ) अहवा १-१-१-१-१ एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुय, एगे पंक०, एगे धूमप्पभाए होज्जा १। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुय०, एगे पंक०, एगे तमाए होज्जा २। अहवा एगे रयण०, जाव एगे पंक०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुयप्पभाए, एगे धूमप्पभाए, एगे तमाए होज्जा ४। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुय०, एगे धूमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ५। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुय०, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ६। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे पंक०, एगे धूम०, एगे तमाए होज्जा ७। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे पंक०, एगे धूम०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ८। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे पंक०, एगे तम०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ९। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे धूम०, एगे तम०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १०। अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, एगे पंक०, एगे धूम०, एगे तमाए होज्जा ११। अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, एगे पंक०, एगे धूम०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १२। अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, एगे पंक०, एगे तम०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १३। अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, एगे धूम०, एगे तम०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १४। अहवा एगे रयण०, एगे पंक०, जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५। अहवा एगे सक्कर०, एगे वालुय० जाव एगे तमाए होज्जा १६। अहवा एगे सक्कर०, एगे वालुय०, एगे पंक०, एगे धूम०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १७। अहवा एगे सक्कर०, जाव एगे पंक०, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १८। अहवा एगे सक्कर०, एगे वालुय०, एगे धूम०, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा १९। अहवा एगे सक्कर०, एगे पंक०, जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा २०। अहवा एगे वालुय० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा २१। ४६२।

२०. (घ) (पाँच नैरयिकों के पंचसंयोगी २१ भंग-) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (३) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (४) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (५) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (६) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (७) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (८) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (९) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधः सप्तम-पृथ्वी में होता है। (१०) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमः प्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (११) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (१२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (१३) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (१४) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (१५) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक पंकप्रभा में, यावत् अधः सप्तम-पृथ्वी में होता है। (१६) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (१७) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (१८) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (१९) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधः सप्तम-पृथ्वी में होता है। (२०) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमः प्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (२१) अथवा एक बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है।

20. (d) 21 alternatives for sets of five–Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (3) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Or (4) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (5) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

Or (6) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

Or (7) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (8) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

Or (9) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Frithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (10) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (11) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (12) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (13) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), sixth hell (Tamah-prabha Prithvi), and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (14) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(Balukaprabha Prithvi), fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), sixth hell (Tamah-prabha Prithvi), and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (15) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) ... and so on up to... and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (16) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), and one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (17) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (18) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi), and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (19) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi), and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (20) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi), and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (21) one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi), and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

विवेचन : पंच नैरयिकों का पंचसंयोगी विकल्प एवं भंग १-१-१-१-१ एक ही होता है। इस प्रकार सात नरकों के पंचसंयोगी २१ ही विकल्प और २१ ही भंग होते हैं, जिनमें से रत्नप्रभा-पृथ्वी के संयोग वाले १५, शर्कराप्रभा के संयोग वाले ५ और बालुकाप्रभा के संयोग वाला १ भंग होता है। यों सभी मिलकर १५ + ५ + १ = २१ भंग पंचसंयोगी होते हैं।

पाँच नैरयिकों के समस्त भंग-पाँच नैरयिक जीवों के असंयोगी ७, द्विकसंयोगी ८४, त्रिकसंयोगी २१०, चतुःसंयोगी १४० और पंचसंयोगी २१; ये सभी मिलकर ७ + ८४ + २१० + १४० + २१ = ४६२ भंग होते हैं। *(वृत्ति, पत्र ४४४)*

Elaboration—For five infernal beings there is only one option for sets of five – 1-1-1-1-1. Associated with each of the seven hells there are only twenty-one alternative combinations. Of these 15 are related to the first hell, 5 to the second and 1 to the third. This makes a total of 15+5+1 = 21 alternative combinations for sets of five.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Thus the total number of alternative combinations related to five infernal beings becomes – 7 options for no alternative combination of five, 84 options for alternative combination of 2, 210 options for alternative combination of 3, and 140 options for alternative combination of 4, 21 options for alternative combination of 5 making a total of 7+84+210+140+21 = 462 options. (*Vritti*, leaf 444)

छह नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ALTERNATIVES FOR SIX INFERNAL BEING

२१. [प्र.] छब्भंते ! नेरइया नेरइयप्पवेसणए णं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७।

२१. [प्र.] भगवन् ! छह नैरयिक जीव, नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! वे रत्नप्रभा में होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार ये असंयोगी ७ भंग होते हैं।)

21. [Q.] *Bhante !* When six *jivas* (souls) enter the infernal realm do they get born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi) ?

[Ans.] Gangeya ! All the six together get born either in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or in any other ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). This way the number of alternative combinations for all six souls as individuals (no set-related alternative combination) are seven.

द्विकसंयोगी १०५ भंग 105 ALTERNATIVES FOR SETS OF TWO

२१. (क) अहवा एगे रयण०, पंच सक्करप्पभाए वा होज्जा १। अहवा एगे रयण०, पंच वालुयप्पभाए वा होज्जा २। जाव अहवा एगे रयण०, पंच अहेसत्तमाए होज्जा ६। अहवा दो रयण०, चत्तारि सक्करप्पभाए होज्जा १-७। जाव अहवा दो रयण०, चत्तारि अहेसत्तमाए होज्जा ६-१२। अहवा तिण्णि रयण०, तिण्णि सक्कर. १-१३। एवं एएणं कमेणं जहा पंचण्हं दुयासंजोगो तहा छण्ह वि भाणियव्वो, नवरं एक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो जाव अहवा पंच तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १०५।

२१. (क) (द्विकसंयोगी १०५ भंग-)(१) अथवा एक रत्नप्रभा में और पाँच शर्कराप्रभा में होते हैं। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में और पाँच बालुकाप्रभा में होते हैं। अथवा (३-६) यावत् एक रत्नप्रभा में और पाँच अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (१) अथवा दो रत्नप्रभा में और चार शर्कराप्रभा में होते हैं, अथवा (२-६) यावत् दो रत्नप्रभा में और चार अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (१) अथवा तीन रत्नप्रभा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में और तीन शर्कराप्रभा में होते हैं। इस क्रम द्वारा जिस प्रकार पाँच नैरयिक जीवों के द्विकसंयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार छह नैरयिकों के भी कहने चाहिए। विशेष यह है कि यहाँ एक अधिक का संचार करना चाहिए, यावत् अथवा पाँच तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है।

21. (a) Or (1) one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and five in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (2) one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and five in the third hell (Balukaprabha Prithvi), (3-6) ... and so on up to... one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and five in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

Or (1) two are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and four in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (2-6) ... and so on up to... two are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and four in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

Or (1) three are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and three in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (2 - 6) in the same way ... and so on up to... three are born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and three in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

In this sequence as alternative combinations related to sets of two have been stated for five infernal beings, in the same way alternative combinations related to sets of two should be stated for six infernal beings. The only difference is that one more infernal being should be added ... and so on up to... five in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

त्रिकसंयोगी ३५० भंग **350 ALTERNATIVES FOR SETS OF THREE**

२१. (ख) अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, चत्तारि वालुयप्पभाए होज्जा १। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, चत्तारि पंकप्पभाए होज्जा २। एवं जाव अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, चत्तारि अहेसत्तमाए होज्जा ५। अहवा एगे रयण०, दो सक्कर०, तिण्णि वालुयप्पभाए होज्जा ६। एवं एएणं कमेणं जहा पंचण्हं तियासंजोगो भणिओ तहा छण्ह वि भाणियव्वो, नवरं एक्को अब्भहिओ उच्चारेयव्वो, सेसं तं चेव। ३५०।

चउक्कसंजोगो वि तहेव। ३५०।

२१. (ख) (त्रिकसंयोगी ३५० भंग-)(१) एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और चार बालुकाप्रभा में होते हैं। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में एक शर्कराप्रभा में और चार पंकप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् (३-५) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और चार अधःसप्तम-पृथ्वी में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होते हैं। (६) अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और तीन बालुकाप्रभा में होते हैं। इस क्रम से जिस प्रकार पाँच नैरयिक जीवों के त्रिकसंयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार छह नैरयिक जीवों के भी त्रिकसंयोगी भंग कहने चाहिए। विशेष इतना ही है कि यहाँ एक का संचार अधिक करना चाहिए। शेष सब पूर्ववत् जानना चाहिए। (इस प्रकार त्रिकसंयोगी कुल ३५० भंग हुए।)

चतुष्कसंयोगी ३५० भंग–जिस प्रकार पाँच नैरयिकों के चतुष्कसंयोगी भंग कहे गये, उसी प्रकार छह नैरयिकों के चतु:संयोगी भंग जान लेने चाहिए।

21. (b) 350 alternatives for sets of three—Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and four in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and four in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (3-5) ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and three in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (6) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and three in the third hell (Balukaprabha Prithvi). In this sequence, as alternative combinations related to sets of three have been stated for five infernal beings, in the same way alternative combinations related to sets of three should be stated for six infernal beings. The only difference is that one more infernal being should be added. All the rest is same as aforesaid (with regard to five infernal beings). (This makes a total of 350 alternative combinations for sets of three.)

350 alternatives for sets of four—As alternative combinations related to sets of four have been stated for five infernal beings, in the same way alternative combinations related to sets of four should be stated for six infernal beings.

पंचसंयोगी १०५ भंग 105 ALTERNATIVES FOR SETS OF FIVE

२१. (ग) पंचसंजोगो वि तहेव, नवरं एक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो जाव पच्छिमो भंगो–अहवा दो वालुय०, एगे पंक०, एगे धूम०, एगे तम०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा। १०५।

२१. (ग) (**पंचसंयोगी १०५ भंग–**) पाँच नैरयिकों के जिस प्रकार पंचसंयोगी भंग कहे गये, उसी प्रकार छह नैरयिकों के पंचसंयोगी भंग जान लेने चाहिए, परन्तु इसमें एक नैरयिक का अधिक संचार करना चाहिए। यावत् अन्तिम भंग (इस प्रकार है–) दो बालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम–पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार पंचसंयोगी कुल १०५ भंग हुए।)

21. (c) 105 alternatives for sets of five–As alternative combinations related to sets of five have been stated for five infernal beings, in the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

same way alternative combinations related to sets of five should be stated for six infernal beings. The only difference is that one more infernal being should be added. ... and so on up to... the last alternative combination (is like this –) Or two in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi), and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This makes a total of 105 alternative combinations for sets of five.)

षट्संयोगी ७ भंग 7 ALTERNATIVES FOR SETS OF SIX

२१. (घ) अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर० जाव एगे तमाए होज्जा १, अहवा एगे रयण० जाव एगे धूम०, एगे अहेसत्तमाए होज्जा २, अहवा एगे रयण० जाव एगे पंक०, एगे तमाए, एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३, अहवा एगे रयण० जाव एगे वालुय०, एगे धूम० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ४, अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, एगे पंक० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ५, अहवा एगे रयण०, एगे वालुय० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ६, अहवा एगे सक्करप्पभाए, एगे वालुयप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ७। १२४।

२१. (घ) (षट्संयोगी ७ भंग–) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में एक शर्कराप्रभा में, यावत् एक तमःप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, यावत् एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (३) अथवा एक रत्नप्रभा में, यावत् एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (४) अथवा एक रत्नप्रभा में, यावत् एक बालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में, यावत् एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (५) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में, यावत् एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (६) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, यावत् एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (७) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में यावत् एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है।

21. (d) 7 alternatives for sets of six—Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (3) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (4) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the third hell (Balukaprabha Prithvi), one in the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) ... and so on up to... one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (5) one in the first hell (Ratnaprabha

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (6) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (7) one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

विवेचन : इस प्रकार ६ नैरयिक जीवों के असंयोगी ७ भंग, द्विकसंयोगी १०५, त्रिकसंयोगी ३५०, चतुष्कसंयोगी ३५०, पंचसंयोगी १०५ और षट्संयोगी ७; ये सब मिलकर ९२४ प्रवेशनक भंग होते हैं। *(विस्तार से समझने के लिए व्याख्या., भाग २, पृ. ४७९ देखें)*

Elaboration—Thus the total number of alternative combinations related to six infernal beings becomes – 7 options for no alternative combination of six, 105 options for alternative combination of 2, 350 options for alternative combination of 3, 350 options for alternative combination of 4, 105 options for alternative combination of 5 and 7 options for alternative combination of 6, making a total of 7+105+350+350+105+7 = 924 alternatives. (*Vyakhyaprajnapti Sutra*, part-2, p. 479)

सात नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ALTERNATIVES FOR SEVEN INFERNAL BEING

२२. [प्र.] सत्त भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७।

(क) अहवा एगे रयणप्पभाए, छ सक्करप्पभाए होज्जा, एवं एएणं कमेणं जहा छण्हं दुयासंजोगो तहा सत्तण्ह वि भावियव्वं नवरं एगो अब्भहिओ संचारिज्जइ। सेसं तं चेव।

तियासंजोगो, चउक्कसंजोगो, पंचसंजोगो, छक्कसंजोगो य छण्हं जहा तहा सत्तण्ह वि भाणियव्वो, नवरं एक्केको अब्भहिओ संचारेयव्वो जाव छक्कगसंजोगो। अहवा दो सक्कर० एगे वालुय० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा।

(ख) अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा १। १७१६।

२२. [प्र.] (एकसंयोगी ७ भंग–) भगवन् ! सात नैरयिक जीव, नैरयिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा-पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! वे सातों नैरयिक रत्नप्रभा में होते हैं, यावत् अथवा अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार असंयोगी ७ भंग होते हैं।)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(क) (द्विकसंयोगी १२६ भंग–) अथवा एक रत्नप्रभा में और छह शर्कराप्रभा में होते हैं। इस क्रम से जिस प्रकार छह नैरयिक जीवों के द्विकसंयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार सात नैरयिक जीवों के भी द्विकसंयोगी भंग कहने चाहिए। इतना विशेष है कि यहाँ एक नैरयिक का अधिक संचार करना चाहिए। शेष सभी पूर्ववत् जानना चाहिए।

जिस प्रकार छह नैरयिकों के त्रिकसंयोगी, चतुःसंयोगी, पंचसंयोगी और षट्संयोगी भंग कहे, उसी प्रकार सात नैरयिकों के त्रिकसंयोगी आदि भंगों के विषय में भी कहना चाहिए। विशेषता इतनी है कि यहाँ एक-एक नैरयिक जीव का अधिक संचार करना चाहिए। यावत् सप्तसंयोगी का अन्तिम भंग इस प्रकार कहना चाहिए–अथवा दो शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में, यावत् एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (यहाँ तक जानना चाहिए।)

(ख) (सप्तसंयोगी एक भंग–) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में यावत् एक अधः सप्तम-पृथ्वी में होता है। इस प्रकार कुल १७१६ भंग होते हैं।

22. [Q.] *Bhante !* When seven *jivas* (souls) enter the infernal realm do they get born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi) ?

[Ans.] Gangeya ! All the seven together get born either in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or in any other ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). This way the number of alternative combinations for all seven souls as individuals (no set-related alternative combination) are seven.

(a) 126 alternatives for sets of two—Or one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and six in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). In this sequence, as alternative combinations related to sets of two have been stated for six infernal beings, in the same way alternative combinations related to sets of two should be stated for seven infernal beings. The only difference is that one more infernal being should be added. All the rest is same as aforesaid (with regard to six infernal beings).

As alternative combinations related to sets of three, four, five and six have been stated for six infernal beings, in the same way alternative combinations related to sets of three (etc.) should be stated for seven infernal beings. The only difference is that one more infernal being each should be added. The last alternative combination being – Or two are born in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(b) One alternative for set of seven—Or one is born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). The total number of alternatives are 1716.

विवेचन : इस प्रकार सात नैरयिकों के नरक-प्रवेशनक में एकसंयोगी ७, द्विकसंयोगी १२६, त्रिकसंयोगी ५२५, चतुष्कसंयोगी ७००, पंचसंयोगी ३१५, षट्संयोगी ४२ और सप्तसंयोगी १; यों कुल मिलाकर १७१६ भंग हुए। *(वृत्ति, पत्र ४४५)*

Elaboration—The total number of alternative combinations related to seven infernal beings are – 7 options for no alternative combination of seven, 126 options for alternative combination of 2, 525 options for alternative combination of 3, 700 options for alternative combination of 4, 315 options for alternative combination of 5, 42 options for alternative combination of 6 and one option for the combination of 7, making a total of 1716 options. (*Vritti*, leaf 445)

आठ नैरयिकों के प्रवेशनक भंग **ALTERNATIVES FOR EIGHT INFERNAL BEING**

२३. [प्र.] अट्ठ भंते ! नेरतिया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७।

अहवा १ + ७ ऐगे रयण० सत्त सक्करप्पभाए होज्जा १। एवं दुयासंजोगो जाव छक्कसंजोगो य जहा सत्तण्हं भणिओ तहा अट्ठण्ह वि भाणियव्वो, नवरं एक्केको अब्भहिओ संचारेयव्वो। सेसं तं चेव जाव छक्कसंजोगस्स। अहवा ३ + १ + १ + १ + १ + १ तिण्णि सक्कर० एगे वालुय० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा, अहवा एगे रयण० जाव एगे तमाए दो अहेसत्तमाए होज्जा, अहवा एगे रयण० जाव दो तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा, एवं संचारेयव्वं जाव अहवा दो रयण०, एगे सक्कर० जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा। ३००३।

२३. [प्र.] भगवन् ! आठ नैरयिक जीव, नैरयिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! रत्नप्रभा में होते हैं, यावत् अथवा अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं।

अथवा एक रत्नप्रभा में और सात शर्कराप्रभा में होते हैं, इत्यादि। जिस प्रकार सात नैरयिकों के द्विकसंयोगी, त्रिकसंयोगी, चतुःसंयोगी, पंचसंयोगी और षट्संयोगी भंग कहे गये हैं, उसी प्रकार आठ नैरयिकों के भी द्विकसंयोगी आदि भंग कहने चाहिए; किन्तु इतना विशेष है कि एक-एक नैरयिक का अधिक संचार करना चाहिए। शेष सभी षट्संयोगी तक पूर्वोक्त प्रकार से कहना चाहिए। अन्तिम भंग यह है-अथवा तीन शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में यावत् एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, यावत् एक तमःप्रभा में और दो अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (२) अथवा एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रत्नप्रभा में यावत् दो तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। इसी प्रकार सभी स्थानों में संचार करना चाहिए। यावत् अथवा दो रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में यावत् एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है। इस प्रकार कुल ३००३ भंग होते हैं।

23. [Q.] *Bhante !* When eight *jivas* (souls) enter the infernal realm do they get born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi) ?

[Ans.] Gangeya ! All the eight together get born either in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... seven in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). As alternative combinations related to sets of three, four, five and six have been stated for seven infernal beings, in the same way alternative combinations related to sets of two, three (etc.) should be stated for eight infernal beings. The only difference is that one more infernal being each should be added. All the rest up to sets of six should be stated as aforesaid (with regard to seven infernal beings). The last alternative combination being – Or three born in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (1) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and two in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (2) one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... two in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). In the same way the following combinations should be stated ... and so on up to... two in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). The total number of alternatives are 3003.

विवेचन : आठ नैरयिकों के नरक-प्रवेशनक के असंयोगी ७ भंग, द्विकसंयोगी १४७, त्रिकसंयोगी ७३५, चतुष्कसंयोगी १२२५, पंचसंयोगी ७३५, षट्संयोगी १४७ और सप्तसंयोगी ७ भंग; यों कुल मिलाकर सब भंग ३००३ होते हैं। *(वृत्ति, पत्र ४४६)*

Elaboration—The total number of alternative combinations related to eight infernal beings are – 7 options for no alternative combination of seven, 147 options for alternative combination of 2, 735 options for alternative combination of 3, 1225 options for alternative combination of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

4. 735 options for alternative combination of 5, 147 options for alternative combination of 6 and 7 options for the combination of 7, making a total of 3003 options. (*Vritti*, leaf 446)

नौ नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ALTERNATIVES FOR NINE INFERNAL BEING

२४. [प्र.] नव भंते ! नेरतिया नेरतियपवेसणएणं पविसमाणा० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७।

अहवा १–८ एगे रयण० अट्ठ सक्करप्पभाए होज्जा। एवं दुयासंजोगो जाव सत्तगसंजोगो य। जहा अट्ठण्हं भणियं तहा नवण्हं पि भाणियव्वं, नवरं एक्केक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो, सेसं तं चेव। पच्छिमो आलावगो—अहवा तिण्णि रयण०, एगे सक्कर०, एगे वालुय, जाव एगे अहेसत्तमाए वा होज्जा। ५००५।

२४. [प्र.] भगवन् ! नौ नैरयिक जीव, नैरयिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] हे गांगेय ! वे नौ नैरयिक जीव रत्नप्रभा में होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं।

अथवा एक रत्नप्रभा में और आठ शर्कराप्रभा में होते हैं; इत्यादि। जिस प्रकार अष्ट नैरयिकों के द्विकसंयोगी, त्रिकसंयोगी, चतुष्कसंयोगी, पंचसंयोगी, षट्संयोगी और सप्तसंयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार नौ नैरयिकों के विषय में भी कहना चाहिए। विशेष यह है कि एक-एक नैरयिक का अधिक संचार करना चाहिए। शेष सभी पूर्वोक्त प्रकार से जानना चाहिए। अंतिम भंग इस प्रकार है–अथवा तीन रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में यावत् एक अधःसप्तम-पृथ्वी में होता है।

24. [Q.] *Bhante !* When nine *jivas* (souls) enter the infernal realm do they get born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi) ?

[Ans.] Gangeya ! All the nine together get born either in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... eight in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). As alternative combinations related to sets of three, four, five, six and seven have been stated for eight infernal beings, in the same way alternative combinations related to sets of two, three (etc.) should be stated for nine infernal beings. The only difference is that one more infernal being each should be added. All the rest should be stated as aforesaid (with regard to eight infernal beings). The last alternative combination being – three in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(Sharkaraprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). 5005.

विवेचन : नौ नैरयिकों के नरक-प्रवेशनक के एकसंयोगी (असंयोगी) ७ भंग, द्विकसंयोगी १६८, त्रिकसंयोगी ९८०, चतुष्कसंयोगी १९६०, पंचसंयोगी १४७०, षट्संयोगी ३९२ और सप्तसंयोगी २८ भंग; ये सब मिलाकर ५००५ भंग हुए।

Elaboration—The total number of alternative combinations related to nine infernal beings are—7 options for no alternative combination of seven, 168 options for alternative combination of 2, 980 options for alternative combination of 3, 1960 options for alternative combination of 4, 1470 options for alternative combination of 5, 392 options for alternative combination of 6 and 28 options for the combination of 7, making a total of 5005 options.

दस नैरयिकों के प्रवेशनक भंग **ALTERNATIVES FOR TEN INFERNAL BEING**

२५. [प्र.] दस भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणएणं पविसमाणा० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! रयणप्पभाए होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७।

अहवा १ + ९ एगे रयणप्पभाए, नव सक्करप्पभाए होज्जा। एवं दुयासंजोगो जाव सत्तसंजोगो य जहा नवण्हं, नवरं एक्केक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो। सेसं तं चेव। अपच्छिमआलावगो–अहवा ४ + १ + १ + १ + १ + १ + १, चत्तारि रयण०, एगे सक्करप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा। ८००८।

२५. [प्र.] भगवन् ! दस नैरयिक जीव, नैरयिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में होते हैं ? इत्यादि (पूर्ववत्) प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! वे दस नैरयिक जीव, रत्नप्रभा में होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं।

अथवा एक रत्नप्रभा में और नौ शर्कराप्रभा में होते हैं; इत्यादि। जिस प्रकार नौ नैरयिक जीवों के द्विकसंयोगी, त्रिकसंयोगी, चतुःसंयोगी, पंचसंयोगी, षट्संयोगी एवं सप्तसंयोगी भंग कहे गये हैं, उसी प्रकार दस नैरयिक जीवों के भी (द्विकसंयोगी यावत् सप्तसंयोगी) कहने चाहिए। विशेष यह है कि यहाँ एक-एक नैरयिक का अधिक संचार करना चाहिए, शेष सभी भंग पूर्ववत् जानने चाहिए। उनका अन्तिम आलापक (भंग) इस प्रकार है–अथवा चार रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में यावत् एक अधः सप्तम-पृथ्वी में होता है। ८००८।

25. [Q.] *Bhante !* When ten *jivas* (souls) enter the infernal realm do they get born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gangeya ! All the ten together get born either in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... nine in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). As alternative combinations related to sets of three, four, five, six and seven have been stated for nine infernal beings, in the same way alternative combinations related to sets of two, three (etc.) should be stated for ten infernal beings. The only difference is that one more infernal being each should be added. All the rest should be stated as aforesaid (with regard to eight infernal beings). The last alternative combination being – four in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). 8008.

विवेचन : दस नैरयिकों के नरक-प्रवेशनक के असंयोगी ७, द्विकसंयोगी १८९, त्रिकसंयोगी १२६०, चतुष्कसंयोगी २९४०, पंचसंयोगी २६४६, षट्संयोगी ८८२ और सप्तसंयोगी ८४ भंग; ये सभी मिलकर दस नैरयिक जीवों के कुल ८००८ भंग होते हैं।

Elaboration—The total number of alternative combinations related to ten infernal beings are – 7 options for no alternative combination of seven, 189 options for alternative combination of 2, 1260 options for alternative combination of 3, 2940 options for alternative combination of 4, 2646 options for alternative combination of 5, 882 options for alternative combination of 6 and 84 options for the combination of 7, making a total of 8008 options.

संख्यात नैरयिकों के प्रवेशनक भंग ALTERNATIVES FOR COUNTABLE INFERNAL BEING

२६. [प्र.] संखेज्जा भंते ! नेरइया नेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७।

द्विकसंयोगी २३१ भंग

(क) अहवा एगे रयणप्पभाए, संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा, एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए, संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। (ख) अहवा दो रयण०, संखेज्जा सक्करप्पभाए वा होज्जा, एवं जाव अहवा दो रयण०, संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। (ग) अहवा तिण्णि रयण०, संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा। एवं एएणं कमेणं एक्केक्को संचारेयव्वो जाव अहवा दस रयण०, संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा, एवं जाव अहवा दस रयण०, संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। (घ) अहवा संखेज्जा रयण०, संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा; जाव अहवा संखेज्जा रयणप्पभाए, संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। (च) अहवा एगे सक्कर०,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा; एवं जहा रयणप्पभाए उवरिमपुढवीहिं समं चारिया एवं सक्करप्पभाए वि उवरिमपुढवीहिं समं चारेयव्वा। एवं एक्केक्का पुढवी उवरिमपुढवीहिं समं चारेयव्वा जाव अहवा संखेज्जा तमाए, संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। २३१।

(१) अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा। अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, संखेज्जा पंकप्पभाए होज्जा। जाव अहवा एगे रयण०, एगे सक्कर०, संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। (२) अहवा एगे रयण०, दो सक्कर०, संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा। जाव अहवा एगे रयण०, दो सक्कर०, संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। (३) अहवा एगे रयण०, तिण्णि सक्कर०, संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा। एवं एएणं कमेणं एक्केक्को संचारेयव्वो। (४) अहवा एगे रयण०, संखेज्जा सक्कर०, संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा; जाव अहवा एगे रयण०, संखेज्जा वालुय०, संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। (५) अहवा दो रयण०, संखेज्जा सक्कर०, संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा। जाव अहवा दो रयण०, संखेज्जा सक्कर०, संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। (६) अहवा तिण्णि रयण०, संखेज्जा सक्कर०, संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा। एवं एएणं कमेणं एक्केक्को रयणप्पभाए संचारेयव्वो, जाव अहवा संखेज्जा रयण०, संखेज्जा सक्कर०, संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा; जाव अहवा संखेज्जा रयण०, संखेज्जा सक्कर०, संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। (७) अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, संखेज्जा पंकप्पभाए होज्जा; जाव अहवा एगे रयण०, एगे वालुय०, संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। (८) अहवा एगे रयण०, दो वालुय०, संखेज्जा पंकप्पभाए होज्जा। एवं एएणं कमेणं तियासंजोगो चउक्कसंजोगो जाव सत्तगसंजोगो य जहा दसण्हं तहेव भाणियव्वो। पच्छिमो आलावगो सत्तसंजोगस्स–अहवा संखेज्जा रयण०, संखेज्जा सक्कर०, जाव संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। ३३३७।

२६. [प्र.] भगवन् ! संख्यात नैरयिक जीव, नैरयिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! संख्यात नैरयिक रत्नप्रभा में होते हैं, यावत् अथवा अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (ये असंयोगी ७ भंग होते हैं।)

(क) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में होता है और संख्यात शर्कराप्रभा में होते हैं, (२-६) इसी प्रकार यावत् एक रत्नप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (ये ६ भंग हुए।) (ख) (१) अथवा दो रत्नप्रभा में और संख्यात शर्कराप्रभा में होते हैं, (२-६) इसी प्रकार यावत् दो रत्नप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (ये भी ६ भंग हुए।) (ग) (१) अथवा तीन रत्नप्रभा में और संख्यात शर्कराप्रभा में होते हैं। इसी प्रकार इसी क्रम से एक-एक नारक का संचार करना चाहिए। यावत् दस रत्नप्रभा में और संख्यात शर्कराप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् अथवा दस रत्नप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (घ) अथवा संख्यात रत्नप्रभा में और संख्यात शर्करप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् संख्यात रत्नप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (च) अथवा एक शर्कराप्रभा में और संख्यात बालुकाप्रभा में होते हैं। जिस प्रकार रत्नप्रभा-पृथ्वी का शेष नरक-पृथ्वीयों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के साथ संयोग-क्रिया उसी प्रकार शर्कराप्रभा-पृथ्वी का भी आगे की सभी नरक-पृथ्वियों के साथ संयोग करना चाहिए। इसी प्रकार एक-एक पृथ्वी का आगे की नरक-पृथ्वियों के साथ संयोग करना चाहिए; यावत् अथवा संख्यात तमःप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार द्विकसंयोगी भंगों की कुल संख्या २३१ हुई।)

(१) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और संख्यात बालुकाप्रभा में होते हैं। अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और संख्यात पंकप्रभा में होते हैं। इसी प्रकार यावत् एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और संख्यात बालुकाप्रभा में होते हैं। यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (३) अथवा एक रत्नप्रभा में, तीन शर्कराप्रभा में और संख्यात बालुकाप्रभा में होते हैं। इस प्रकार इसी क्रम से एक-एक नारक का अधिक संचार करना चाहिए। (४) अथवा एक रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा और संख्यात बालुकाप्रभा में होते हैं। यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, संख्यात बालुकाप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (५) अथवा दो रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा में और संख्यात बालुकाप्रभा में होते हैं। यावत् अथवा दो रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (६) अथवा तीन रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा में और संख्यात बालुकाप्रभा में होते हैं। इस प्रकार इस क्रम से रत्नप्रभा में एक-एक नैरयिक का संचार करना चाहिए, यावत् अथवा संख्यात रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा में और संख्यात बालुकाप्रभा में होते हैं। यावत् अथवा संख्यात रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (७) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और संख्यात पंकप्रभा में होते हैं। यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (८) अथवा एक रत्नप्रभा में, दो बालुकाप्रभा में और संख्यात पंकप्रभा में होते हैं। इसी प्रकार इसी क्रम से त्रिकसंयोगी, चतुष्कसंयोगी, यावत् सप्तसंयोगी भंगों का कथन, दस नैरयिक सम्बन्धी भंगों के समान करना चाहिए। अन्तिम भंग (आलापक) जो सप्तसंयोगी है, यह है-अथवा संख्यात रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा में यावत् संख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। ३३३७।

26. [Q.] *Bhante !* When countable (*sankhyat*) *jivas* (souls) enter the infernal realm do they get born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi) ?

[Ans.] Gangeya ! All the countable *jivas* together get born either in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(a) Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and countable in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (6 alternative combinations) (b) Or

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

two in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) ... and so on up to... two in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and countable in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (6 alternative combinations) (c) Or three in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). In the same way the sequence should be extended by adding one infernal being to the preceding number ... and so on up to... ten in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the second hell. It should be further extended ... and so on up to... ten in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (d) Or countable (*sankhyat*) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). In the same way ... and so on up to... countable (*sankhyat*) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (e) Or one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the third hell (Balukaprabha Prithvi). As first hell has been combined with following hells one by one, in the same way second hell should also be combined with following hells one by one. In the same way each hell should also be combined with following hells; ... and so on up to... Or countable in the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (This way the total number of alternative combinations for sets of two becomes 231)

(1) Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the third hell (Balukaprabha Prithvi). Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). In the same way... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(2) Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the third hell (Balukaprabha Prithvi). ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), two in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(3) Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), three in the second

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the third hell (Balukaprabha Prithvi). In the same way one more infernal being should be added continuing the sequence.

(4) Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), countable in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the third hell (Balukaprabha Prithvi). ... and so on up to... one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), countable in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(5) Or two in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), countable in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the third hell (Balukaprabha Prithvi). ... and so on up to... two in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), countable in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(6) Or three in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), countable in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the third hell (Balukaprabha Prithvi). In the same way one more infernal being should be added to the first hell continuing the sequence. ... and so on up to... Or countable in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), countable in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the third hell (Balukaprabha Prithvi). ... and so on up to... Or three in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), countable in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(7) Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and countable in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). ... and so on up to... Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), one in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and countable in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(8) Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), two in the third hell (Balukaprabha Prithvi) and countable in the fourth hell (Pankaprabha Prithvi).

In the same way, in this sequence, alternative combinations related to sets of three, four, ... and so on up to... seven should be stated following the pattern of ten infernal beings. The last alternative combination, which is related to sets of seven is—Or countable in the first hell

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(Ratnaprabha Prithvi), countable in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and countable (*sankhyat*) in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). (3337)

विवेचन : संख्यात का स्वरूप–आगमिक यहाँ ग्यारह से लेकर शीर्षप्रहेलिका तक की संख्या को संख्यात कहा गया है।

असंयोगी ७ भंग, द्विकसंयोगी २३१ भंग, त्रिकसंयोगी ७३५ भंग, चतुःसंयोगी १०८५ भंग, पंचसंयोगी ८६१ भंग, षट्संयोगी ३५७ भंग, सप्तसंयोगी ६१ भंग पूर्वोक्त रीति से समझने चाहिए। इस प्रकार संख्यात नैरयिक जीवों आश्रयी ७ + २३१ + ७३५ + १०८५ + ८६१ + ३५७ + ६१ = ३३३७ कुल भंग होते हैं। *(भगवती. विवेचनयुक्त [पं. घेवरचन्दजी], भा. ४, पृ. १६६०-१६६१)*

Elaboration—Sankhyat—It is the general term covering all numbers from starting from eleven to *Sheershaprahelika* (10^{257}).

The total number of alternative combinations related to countable infernal beings are—7 options for no alternative combination of seven, 231 options for alternative combination of 2, 735 options for alternative combination of 3, 1085 options for alternative combination of 4, 861 options for alternative combination of 5, 357 options for alternative combination of 6 and 61 options for the combination of 7, making a total of 7+231+735+1085+861+357+61 = 3337 options related to countable infernal beings. (*Bhagavati Sutra* with elaboration by Pt. Ghevar Chand ji, part-4, pp. 1660-1661)

असंख्यात नैरयिकों के प्रवेशनक भंग **ALTERNATIVES FOR INNUMERABLE INFERNAL BEING**

२७. [प्र.] **असंखेज्जा भंते ! नेरइया नेरइयपवेसणएणं० ? पुच्छा।**

[उ.] **गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ७।**

अहवा एगे रयण०, असंखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा। एवं दुयासंजोगो जाव सत्तगसंजोगो य जहा संखेज्जाणं भणिओ तहा असंखेज्जाण वि भाणियव्वो, नवरं असंखेज्जाओ अब्भहिओ भाणियव्वो, सेसं तं चेव जाव सत्तगसंजोगस्स पच्छिमो आलावगो–अहवा असंखेज्जा रयण० असंखेज्जा सक्कर० जाव असंखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा।

२७. [प्र.] भगवन् ! असंख्यात नैरयिक, नैरयिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! वे रत्नप्रभा में होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं, अथवा एक रत्नप्रभा में और असंख्यात शर्कराप्रभा में होते हैं।

जिस प्रकार संख्यात नैरयिकों के द्विकसंयोगी यावत् सप्तसंयोगी भंग कहे, उसी प्रकार असंख्यात के भी कहना चाहिए। परन्तु इतना विशेष है कि यहाँ 'असंख्यात' यह पद कहना चाहिए। (अर्थात् बारहवाँ असंख्यात पद कहना चाहिए।) शेष सभी पूर्वोक्त प्रकार से जानना चाहिए। यावत् अन्तिम आलापक यह है -अथवा असंख्यात रत्नप्रभा में, असंख्यात शर्कराप्रभा में यावत् असंख्यात अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

27. [Q.] *Bhante !* When innumerable (*asankhyat*) *jivas* (souls) enter the infernal realm do they get born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi) ?

[Ans.] Gangeya ! All the innumerable (*asankhyat*) *jivas* together get born either in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or one in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and innumerable (*asankhyat*) in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi).

As alternative combinations for sets of two to seven have been stated with regard to countable infernal beings, in the same way they should be stated for innumerable (*asankhyat*) infernal beings. The only difference is that replace the term countable with innumerable (In other words the twelfth sequence is for innumerable infernal beings.) All the rest follows the aforesaid pattern. ... and so on up to... the last alternative combination is—Or innumerable in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), innumerable in the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and innumerable (*asankhyat*) in the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

विवेचन : असंख्यात पद के एकसंयोगी भंग–सात होते हैं। **द्विकसंयोगी से सप्तसंयोगी तक भंग–**असंख्यात पद के द्विकसंयोगी २५२, त्रिकसंयोगी ८०५, चतुष्कसंयोगी ११९०, पंचसंयोगी ९४५, षट्संयोगी ३९२ एवं सप्तसंयोगी ६७ भंग होते हैं। इस प्रकार असंख्यात नैरयिकों के नैरयिक-प्रवेशनक के कुल मिलाकर ३६५८ भंग होते हैं।

Elaboration—The total number of alternative combinations related to innumerable infernal beings are—7 options for no alternative combination of seven, 252 options for alternative combination of 2, 805 options for alternative combination of 3, 1190 options for alternative combination of 4, 945 options for alternative combination of 5, 392 options for alternative combination of 6 and 67 options for the combination of 7, making a total of 3658 options related to innumerable infernal beings.

उत्कृष्ट नैरयिक–प्रवेशनक प्ररूपणा ALTERNATIVES FOR MAXIMUM NUMBER OF INFERNAL BEING

२८. [प्र.] उक्कोसा णं भंते ! नेरइया नेरतियपवेसणएणं० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! सव्वे वि ताव रयणप्पभाए होज्जा ७।

(क) अहवा रयणप्पभाए य सक्करप्पभाए य होज्जा। अहवा रयणप्पभाए य वालुयप्पभाए य होज्जा, जाव अहवा रयणप्पभाए य अहेसत्तमाए य होज्जा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) अहवा रयणप्पभाए य सक्करप्पभाए य वालुयप्पभाए य होज्जा। एवं जाव अहवा रयण०, सक्करप्पभाए य अहेसत्तमाए य होज्जा ५। अहवा रयण०, वालुय०, पंकप्पभाए य होज्जा; जाव अहवा रयण०, वालुय०, अहेसत्तमाए य होज्जा ४। अहवा रयण०, पंकप्पभाए य, धूमाए य होज्जा। एवं रयणप्पभं अमुयंतेसु जहा तिण्हं तियासंजोगो भणिओ तहा भाणियव्वं जाव अहवा रयण०, तमाए य, अहेसत्तमाए य होज्जा १५।

(ग) अहवा रयणप्पभाए, सक्करप्पभाए, वालुय०, पंकप्पभाए य होज्जा। अहवा रयणप्पभाए, सक्करप्पभाए, वालुय०, धूमप्पभाए य होज्जा; जाव अहवा रयणप्पभाए, सक्करप्पभाए, वालुय०, अहेसत्तमाए य होज्जा ४। अहवा रयण०, सक्कर०, पंक०, धूमप्पभाए य होज्जा। एवं रयणप्पभं अमुयंतेसु जहा चउण्हं चउक्कसंजोगो तहा भाणियव्वं जाव अहवा रयण०, धूम०, तमाए, अहेसत्तमाए होज्जा २०।

(घ) अहवा रयण०, सक्कर०, वालुय०, पंक०, धूमप्पभाए य होज्जा १। अहवा रयणप्पभाए जाव पंक०, तमाए य होज्जा २। अहवा रयण० जाव पंक०, अहेसत्तमाए य होज्जा ३। अहवा रयण०, सक्कर०, वालुय०, धूम०, तमाए य होज्जा ४। एवं रयणप्पभं अमुयंतेसु जहा पंचण्हं पंचकसंजोगो तहा भाणियव्वं जाव अहवा रयण०, पंकप्पभा, जाव अहेसमाए होज्जा १५।

(च) अहवा रयण०, सक्कर०, जाव धूमप्पभाए, तमाए य होज्जा १। अहवा रयण०, जाव धूम०, अहेसत्तमाए य होज्जा २। अहवा रयण०, सक्कर०, जाव पंक०, तमाए य, अहेसत्तमाए य होज्जा ३। अहवा रयण०, सक्कर०, वालुय०, धूमप्पभाए, तमाए, अहेसत्तमाए होज्जा ४। अहवा रयण०, सक्कर०, पंक० जाव अहेसत्तमाए य होज्जा ५। अहवा रयण०, वालुय०, जाव अहेसत्तमाए होज्जा ६।

(छ) अहवा रयणप्पभाए य, सक्कर०, जाव अहेसत्तमाए होज्जा १।

२८. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक जीव नैरयिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए उत्कृष्ट पद में क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! उत्कृष्ट पद में सभी नैरयिक रत्नप्रभा में होते हैं।

(क) (द्विकसंयोगी ६ भंग–) (१) अथवा रत्नप्रभा और शर्कराप्रभा में होते हैं। (२) अथवा रत्नप्रभा और बालुकाप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् (३-६) रत्नप्रभा और अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं।

(ख) (त्रिकसंयोगी १५ भंग–) (१) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा और बालुकाप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् (२-५) रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा और अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (६) अथवा रत्नप्रभा, बालुकाप्रभा और पंकप्रभा में होते हैं। यावत् (७-९) अथवा रत्नप्रभा, बालुकाप्रभा और अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (१०) अथवा रत्नप्रभा, पंकप्रभा और धूमप्रभा में होते हैं। जिस प्रकार रत्नप्रभा को न छोड़ते हुए तीन नैरयिक जीवों के त्रिकसंयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए। यावत् (१५) अथवा रत्नप्रभा, तमःप्रभा और अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ग) (चतुःसंयोगी २० भंग—) (१) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा और पंकप्रभा में होते हैं। (२) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा और धूमप्रभा में होते हैं। यावत् (४) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा और अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (५) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, पंकप्रभा और धूमप्रभा में होते हैं। रत्नप्रभा को न छोड़ते हुए जिस प्रकार चार नैरयिक जीवों के चतुः संयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए। यावत् (२०) अथवा रत्नप्रभा, धूमप्रभा, तमः प्रभा और अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं।

(घ) (पंचसंयोगी १५ भंग—) (१) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पंकप्रभा और धूमप्रभा में होते हैं। (२) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पंकप्रभा और तमःप्रभा में होते हैं। (३) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पंकप्रभा और अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (४) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, धूमप्रभा और तमःप्रभा में होते हैं। रत्नप्रभा को न छोड़ते हुए जिस प्रकार ५ नैरयिक जीवों के पंचसंयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए। अथवा यावत् (१५) रत्नप्रभा, पंकप्रभा यावत् अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं।

(च) (षट्संयोगी ६ भंग—) (१) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा यावत् धूमप्रभा और तमःप्रभा में होते हैं। (२) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा यावत् धूमप्रभा और अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (३) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा यावत् पंकप्रभा, तमःप्रभा और अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (४) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा और अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (५) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, पंकप्रभा, यावत् अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं। (६) अथवा रत्नप्रभा, बालुकाप्रभा यावत् अधःसप्तम-पृथ्वी में होते हैं।

(छ) (सप्तसंयोगी एक भंग—) (१) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, यावत् अधः सप्तम-पृथ्वी में होते हैं। इस प्रकार उत्कृष्ट पद के सभी मिलकर चौंसठ (६ + १५ + २० + १५ + ६ + १ = ६४ भंग होते हैं।

28. [Q.] *Bhante !* When maximum (*utkrisht*) number of *jivas* (souls) enter the infernal realm do they get born in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) or the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) or ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi) ?

[a.] Gangeya ! Either all maximum (*utkrisht*) number of *jivas* get born in the first hell.

(a) 6 alternative combinations for sets of two–Or (1) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and the second hell (Sharkaraprabha Prithvi). Or (2) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and the third hell (Balukaprabha Prithvi). ... and so on up to... (3-6) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi) and the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(b) 15 alternative combinations for sets of three–Or (1) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Prithvi) and the third hell (Balukaprabha Prithvi). In the same way ... and so on up to... Or (2-5) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi) and the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (6) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi), and the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). ... and so on up to... (7-9) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi), and the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (10) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) and the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). As alternative combinations for sets of three has been stated for three infernal beings, in the same should be repeated here without leaving the first hell ... and so on up to... Or in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(c) 20 alternative combinations for sets of four–Or (1) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi), and the fourth hell (Pankaprabha Prithvi). Or (2) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi), and the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). ... and so on up to... Or (3-4) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi), and the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (5) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), and the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). As alternative combinations for sets of four has been stated for four infernal beings, in the same should be repeated here without leaving the first hell ... and so on up to... Or (20) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(d) 15 alternative combinations for sets of five—Or (1) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi), the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), and the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi). Or (2) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi), the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), and the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (3)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi), the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), and the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (4) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi), the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), and the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). As alternative combinations for sets of five has been stated for five infernal beings, the same should be repeated here without leaving the first hell ... and so on up to... Or (15) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(e) 6 alternative combinations for sets of six—Or (1) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi), the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi). Or (2) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), ... and so on up to... the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi) and the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (3) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), ... and so on up to... the fourth hell (Pankaprabha Prithvi), the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (4) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi), the fifth hell (Dhoom-prabha Prithvi), the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) and the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (5) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), the fourth hell (Pankaprabha Prithvi) ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi). Or (6) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi) ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

(f) 1 alternative combination for set of seven—Or (1) in the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), the third hell (Balukaprabha Prithvi), ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi).

विवेचन : उत्कृष्ट पद में नैरयिक-प्रवेशनक भंग–उत्कृष्ट पद में सभी नैरयिक रत्नप्रभा में होते हैं। इसलिए रत्नप्रभा का प्रत्येक भंग के साथ संयोग होता है।

द्विकसंयोगी ६ भंग–१-२, १-३, १-४, १-५, १-६, १-७ ये ६ भंग होते हैं। **त्रिकसंयोगी १५ भंग**–१-२-३, १-२-४, १-२-५, १-२-६, १-२-७, १-३-४, १-३-५, १-३-६, १-३-७, १-४-५,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१-४-६, १-४-७, १-५-६, १-५-७ और १-६-७। चतुष्कसंयोगी २० भंग—१-२-३-४, १-२-३-५, १-२-३-६, १-२-३-७, १-२-४-५, १-२-४-६, १-२-४-७, १-२-५-६, १-२-५-७, १-२-६-७, १-३-४-५, १-३-४-६, १-३-४-७, १-३-५-६, १-३-५-७, १-३-६-७, १-४-५-६, १-४-५-७, १-४-६-७ और १-५-६-७। पंचसंयोगी १५ भंग—१-२-३-४-५, १-२-३-४-६, १-२-३-४-७, १-२-३-५-६, १-२-३-५-७, १-२-३-६-७, १-२-४-५-६, १-२-४-५-७, १-२-४-६-७, १-२-५-६-७, १-३-४-५-६, १-३-४-५-७, १-३-४-६-७, १-३-५-६-७ और १-४-५-६-७। षट्संयोगी ६ भंग—१-२-३-४-५-६, १-२-३-४-५-७, १-२-३-४-६-७, १-२-३-५-६-७, १-२-४-५-६-७ और १-३-४-५-६-७। सप्तसंयोगी १ भंग—१-२-३-४-५-६-७। *(भगवती, विवेचन, [पं. घेवरचन्द जी], भा. ४, पृ. १६६६)*

Elaboration—Alternatives for maximum number of infernal beings – When talking of maximum numbers the first hell is always inclusive. Thus every set of alternative combinations essentially has the first hell. The details are –

6 alternatives for alternative combination of 2 – 1-2, 1-3, 1-4, 1-5, 1-6, 1-7. 15 alternatives for alternative combination of 3 – 1-2-3, 1-2-4, 1-2-5, 1-2-6, 1-2-7, 1-3-4, 1-3-5, 1-3-6, 1-3-7, 1-4-5, 1-4-6, 1-4-7, 1-5-6, 1-5-7, and 1-6-7. 20 alternatives for alternative combination of 4 – 1-2-3-4, 1-2-3-5, 1-2-3-6, 1-2-3-7, 1-2-4-5, 1-2-4-6, 1-2-4-7, 1-2-5-6, 1-2-5-7, 1-2-6-7, 1-3-4-5, 1-3-4-6, 1-3-4-7, 1-3-5-6, 1-3-5-7, 1-3-6-7, 1-4-5-6, 1-4-5-7, 1-4-6-7, and 1-5-6-7. 15 alternatives for alternative combination of 5 – 1-2-3-4-5, 1-2-3-4-6, 1-2-3-4-7, 1-2-3-5-6, 1-2-3-5-7, 1-2-3-6-7, 1-2-4-5-6, 1-2-4-5-7, 1-2-4-6-7, 1-2-5-6-7, 1-3-4-5-6, 1-3-4-5-7, 1-3-4-6-7, 1-3-5-6-7, and 1-4-5-6-7. 6 alternatives for alternative combination of 6 – 1-2-3-4-5-6, 1-2-3-4-5-7, 1-2-3-4-6-7, 1-2-3-5-6-7, 1-2-4-5-6-7, and 1-3-4-5-6-7. 1 alternative for the combination of 7 – 1-2-3-4-5-6-7. (*Bhagavati Sutra* with elaboration by Pt. Ghevar Chand ji, part-4, pp. 1666)

नैरयिक प्रवेशनकों का अल्पबहुत्व COMPARATIVE NUMBERS OF INFERNAL ENTRIES

२९. [प्र.] एयस्स णं भंते ! रयणप्पभापुढविनेरइयपवेसणगस्स सक्करप्पभापुढवि० जाव अहेसत्तमापुढविनेरइयपवेसणगस्स य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा? बहुया वा? तुल्ला वा? विसेसाहिए वा?

[उ.] गंगेया ! सव्वत्थोवे अहेसत्तमापुढविनेरइयपवेसणए, तमापुढविनेरइयपवेसणए असंखेज्जगुणे, एवं पडिलोमगं जाव रयणप्पभापुढविनेरइयपवेसणए असंखेज्जगुणे।

२९. [प्र.] भगवन् ! रत्नप्रभा-पृथ्वी के नैरयिक-प्रवेशनक, शर्कराप्रभा-पृथ्वी के नैरयिक-प्रवेशनक, यावत् अधःसप्तम-पृथ्वी के नैरयिक-प्रवेशनक हैं, इनमें से कौन प्रवेशनक, किस प्रवेशनक से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गांगेय ! सबसे अल्प अधःसप्तम-पृथ्वी के नैरयिक-प्रवेशनक हैं, उनसे तमःप्रभा-पृथ्वी नैरयिक-प्रवेशनक असंख्यातगुण हैं। इस प्रकार उल्टे क्रम से, यावत् रत्नप्रभा-पृथ्वी नैरयिक-प्रवेशनक असंख्यातगुण हैं।

29. [Q.] *Bhante* ! Of the (aforesaid) entries (*praveshanak*) into the first hell (Ratnaprabha Prithvi), the second hell (Sharkaraprabha Prithvi), ... and so on up to... the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi), which of the entries are comparatively less, more, equal and much more ?

[**Ans.**] Gangeya ! Minimum are entries (*praveshanak*) into the seventh hell (Adhah-saptam Prithvi), innumerable times more than these are those into the sixth hell (Tamah-prabha Prithvi) ... and so on up to... (descending order) the first hell (Ratnaprabha Prithvi).

तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक : प्रकार और भंग

TIRYANCH-YONIK-PRAVESHANAK—TYPES AND ALTERNATIVES

३०. [प्र.] **तिरिक्खजोणियपवेसणए णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?**

[उ.] **गंगेया ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा-एगिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए जाव पंचेंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए।**

३०. [प्र.] भगवन् ! तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गांगेय ! वह पाँच प्रकार का कहा गया है। यथा-एकेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक यावत् पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक।

30. [Q.] *Bhante !* How many types of *Tiryanch-yonik-praveshanak* (entrance into animal genus) are there ?

[**Ans.**] Gangeya ! *Tiryanch-yonik-praveshanak* (entrance into animal genus) are said to be of five types – *Ekendriya Tiryanch-yonik-praveshanak* (entrance into the one-sensed animal genus), ... and so on up to... *Panchendriya Tiryanch-yonik-praveshanak* (entrance into the five-sensed animal genus).

३१. [प्र.] **एगे भंते ! तिरिक्खजोणिए तिरिक्खजोणियपवेसणएणं पविसमाणे किं एगिंदिएसु होज्जा जाव पंचिंदिएसु होज्जा ?**

[उ.] **गंगेया ! एगिंदिएसु वा होज्जा जाव पंचिंदिएसु वा होज्जा।**

३१. [प्र.] भगवन् ! एक तिर्यञ्चयोनिक जीव, तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करता हुआ क्या एकेन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होता है अथवा यावत् पंचेन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होता है ?

[उ.] गांगेय ! एक तिर्यञ्चयोनिक जीव, एकेन्द्रिय में होता है, अथवा यावत् पंचेन्द्रियों में उत्पन्न होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

31. [Q.] *Bhante !* When one *jiva* (soul) enters the animal genus does he take birth among the one-sensed beings or ... and so on up to... the five-sensed beings ?

[Ans.] Gangeya ! It either gets born among the one-sensed beings or ... and so on up to... the five-sensed beings.

३२. [प्र.] दो भंते ! तिरिक्खजोणिया० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! एगिंदिएसु वा होज्जा जाव पंचिंदिएसु वा होज्जा ५। अहवा एगे एगिंदिएसु होज्जा एगे बेइंदिएसु होज्जा। एवं जहा नेरइयपवेसणए तहा तिरिक्खजोणियपवेसणए वि भाणियव्वे जाव असंखेज्जा।

३२. [प्र.] भगवन् ! दो तिर्यञ्चयोनिक जीव, तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या एकेन्द्रियों में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! एकेन्द्रियों में होते हैं, अथवा यावत् पंचेन्द्रियों में होते हैं। अथवा एक एकेन्द्रिय में और एक द्वीन्द्रिय में होता है। जिस प्रकार नैरयिक जीवों के विषय में कहा, उसी प्रकार तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक के विषय में भी कहना चाहिए। यावत् असंख्य तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक तक कहना चाहिए।

32. [Q.] *Bhante !* When two *jivas* (souls) enter the animal genus do they take birth among one-sensed beings or ... and so on up to... five-sensed beings ? (and other questions)

[Ans.] Gangeya ! They both get born either among one-sensed beings or ... and so on up to... five-sensed beings. Or one is born among one-sensed beings and the other among two-sensed beings. As has been stated with regard to entrance among infernal beings, the same should be repeated for the entrance among animals. ... and so on up to... entrance for innumerable animals (*asankhyat tiryanch-yonik praveshanak*).

उत्कृष्ट तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक प्ररूपणा ALTERNATIVES FOR MAXIMUM NUMBER OF ANIMALS

३३. [प्र.] उक्कोसा भंते ! तिरिक्खजोणिया० पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! सव्वे वि ताव एगिंदिएसु वा होज्जा। अहवा एगिंदिएसु वा बेइंदिएसु वा होज्जा। एवं जहा नेरतिया चारिया तहा तिरिक्खजोणिया वि चारेयव्वा। एगिंदिया अमुयंतेसु दुयासंजोगो तियासंजोगो चउक्कसंजोगो पंचसंजोगो उवउज्जिऊण भाणियव्वो जाव अहवा एगिंदिएसु वा बेइंदिय जाव पंचिंदिएसु वा होज्जा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३. [प्र.] भगवन् ! उत्कृष्ट तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक के विषय में पृच्छा।

[उ.] गांगेय ! ये सभी एकेन्द्रियों में होते हैं। अथवा एकेन्द्रिय और द्वीन्द्रियों में होते हैं। जिस प्रकार नैरयिक जीवों में संचार किया गया है, उसी प्रकार तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक के विषय में भी संचार करना चाहिए। एकेन्द्रिय जीवों को न छोड़ते हुए द्विकसंयोगी, त्रिकसंयोगी, चतुःसंयोगी और पंचसंयोगी भंग उपयोगपूर्वक कहने चाहिए; यावत् अथवा एकेन्द्रिय जीवों में, द्वीन्द्रियों में, यावत् पंचेन्द्रियों में होते हैं।

33. [Q.] *Bhante !* Now the same question about entrance of maximum number (*utkrisht*) of animals ?

[a.] Gangeya ! Either all maximum (*utkrisht*) number of *jivas* get born among one-sensed beings. Or among one-sensed and two-sensed beings. As has been stated with regard to entrance among infernal beings, the same should be repeated for the entrance among animals. ... and so on up to... entrance for innumerable animals (*asankhyat tiryanch-yonik praveshanak*). Essentially including one-sensed beings, alternative combinations of sets of two, three, four and five should be carefully stated ... and so on up to... Or among one-sensed beings, two-sensed beings ... and so on up to... five-sensed beings.

एकेन्द्रियादि तिर्यञ्च-प्रवेशनकों का अल्पबहुत्व COMPARATIVE NUMBERS OF ANIMALS

३४. [प्र.] एयस्स णं भंते ! एगिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणगस्स जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणयस्स य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा? बहुया वा? तुल्ला वा? विसेसाहिए वा?

[उ.] गंगेया ! सव्वत्थोवे पंचिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए, चउरिंदियतिरिक्खजोणियप० विसेसाहिए, तेइंदिय० विसेसाहिए, बेइंदिय० विसेसाहिए, एगिंदियतिरिक्ख० विसेसाहिए।

३४. [प्र.] भगवन् ! एकेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक से लेकर यावत् पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक तक में से कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक है ?

[उ.] गांगेय ! सबसे थोड़े पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक हैं, उनसे चतुरिन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक विशेषाधिक हैं, उनसे त्रीन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक विशेषाधिक हैं, उनसे द्वीन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक विशेषाधिक हैं और उनसे एकेन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक विशेषाधिक हैं।

29. [Q.] Bhante ! Of the (aforesaid) entries among one-sensed beings (*Ekendriya Tiryanch-yonik-praveshanak*) ... and so on up to... five-sensed beings (*Panchendriya Tiryanch-yonik-praveshanak*), which of the entries are comparatively less, more, equal and much more ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gangeya ! Minimum are entries (*praveshanak*) among five-sensed beings. Much more than these are among four-sensed beings. Much more than these are among three-sensed beings. Much more than these are among two-sensed beings. Much more than these are among one-sensed beings.

मनुष्य-प्रवेशनक : प्रकार और भंग **MANUSHYA-PRAVESHANAK—TYPES AND ALTERNATIVES**

३५. [प्र.] **मणुस्सपवेसणए णं भंते ! कतिविहे पन्नत्ते ?**

[उ.] **गंगेया ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–सम्मुच्छिममणुस्सपवेसणए, गब्भवक्कंतियमणुस्सपवेसणए य।**

३५. [प्र.] भगवन् ! मनुष्य-प्रवेशनक कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गांगेय ! मनुष्य-प्रवेशनक दो प्रकार का कहा गया है। वे इस प्रकार-(१) सम्मूर्च्छिम मनुष्य-प्रवेशनक, और (२) गर्भजमनुष्य-प्रवेशनक।

35. [Q.] *Bhante !* How many types of *Manushya-praveshanak* (entrance into human genus) are there ?

[Ans.] Gangeya ! *Manushya-praveshanak* (entrance into human genus) are said to be of two types – (1) *Sammurchhim Manushya-praveshanak* (entrance into the human genus of asexual origin) and (2) *Garbhaj Manushya-praveshanak* (entrance into the human genus of placental origin).

३६. [प्र.] **एगे भंते ! मणुस्से मणुस्सपवेसणए णं पविसमाणे किं सम्मुच्छिममणुस्सेसु होज्जा, गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा ?**

[उ.] **गंगेया ! सम्मुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा, गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा।**

३६. [प्र.] भगवन् ! मनुष्य-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करता हुआ एक मनुष्य क्या सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में उत्पन्न होता है, अथवा गर्भज मनुष्यों में उत्पन्न होता है ?

[उ.] हे गांगेय ! वह या तो सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में उत्पन्न होता है अथवा गर्भज मनुष्यों में उत्पन्न होता है।

36. [Q.] *Bhante !* When cne *jiva* (soul) enters the human genus does he take birth among humans of asexual origin or those of placental origin ?

[Ans.] Gangeya ! It either gets born among humans of asexual origin or those of placental origin.

३७. [प्र.] **दो भंते ! मणुस्सा० ? पुच्छा।**

[उ.] **गंगेया ! सम्मुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा, गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा। अहवा एगे सम्मुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा, एगे गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा। एवं एएणं कमेणं जहा नेरइयपवेसणए तहा मणुस्सपवेसणए वि भाणियव्वे जाव दस।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७. [प्र.] भगवन् ! दो मनुष्य, मनुष्य-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि (पूर्ववत्) प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! दो मनुष्य या तो सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं, अथवा गर्भज मनुष्यों में होते हैं। अथवा एक सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में और एक गर्भज मनुष्यों में होता है। इस क्रम से जिस प्रकार नैरयिक-प्रवेशनक कहा, उसी प्रकार मनुष्य-प्रवेशनक भी कहना चाहिए। यावत् दस मनुष्यों तक कहना चाहिए।

37. [Q.] *Bhante !* When two *jivas* (souls) enter the human genus do they take birth among humans of asexual origin or those of placental origin ? (and other questions)

[Ans.] Gangeya ! They both get born either among humans of asexual origin or those of placental origin. Or one is born among humans of asexual origin and the other among those of placental origin. As has been stated with regard to entrance among infernal beings, the same should be repeated for the entrance among human beings ... and so on up to... entrance for ten human beings.

३८. [प्र.] संखेज्जा भंते ! मणुस्सा० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! सम्मुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा। अहवा एगे सम्मुच्छिममणुस्सेसु होज्जा, संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा। अहवा दो सम्मुच्छिममणुस्सेसु होज्जा, संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा। एवं एक्केक्कं ओसारिंतेसु जाव अहवा संखेज्जा सम्मुच्छिममणुस्सेसु होज्जा, संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा।

३८. [प्र.] भगवन् ! संख्यात मनुष्य, मनुष्य-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! वे सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं, अथवा गर्भज मनुष्यों में होते हैं। अथवा एक सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में होता है और संख्यात गर्भज मनुष्यों में होते हैं। अथवा दो सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में होते हैं और संख्यात गर्भज मनुष्यों में होते हैं। इस प्रकार उत्तरोत्तर एक-एक बढ़ाते हुए यावत् संख्यात सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में और संख्यात गर्भज मनुष्यों में होते हैं।

38. [Q.] *Bhante !* When countable (*sankhyat*) *jivas* (souls) enter the human genus do they take birth among humans of asexual origin or those of placental origin ? (and other questions)

[Ans.] Gangeya ! All the countable *jivas* together get born either among humans of asexual origin or those of placental origin. Or one is born among humans of asexual origin and countable among those of placental origin. In this sequence keep on adding one human being ... and so on up to... Or countable are born among humans of asexual origin and countable among those of placental origin.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९. [प्र.] असंखेज्जा भंते ! मणुस्सा० पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! सव्वे वि ताव सम्मुच्छिममणुस्सेसु होज्जा। अहवा असंखेज्जा सम्मुच्छिममणुस्सेसु, एगे गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा। अहवा असंखेज्जा सम्मुच्छिममणुस्सेसु, दो गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा। एवं जाव असंखेज्जा सम्मुच्छिममणुस्सेसु होज्जा, संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा।

३९. [प्र.] भगवन् ! असंख्यात मनुष्य, मनुष्य-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए, इत्यादि प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! वे सभी सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में होते हैं। अथवा असंख्यात सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में होते हैं और एक गर्भज मनुष्यों में होता है। अथवा असंख्यात सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में होते हैं और दो गर्भज मनुष्यों में होते हैं। अथवा इस प्रकार यावत् असंख्यात सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में होते हैं और संख्यात गर्भज मनुष्यों में होते हैं।

39. [Q.] *Bhante !* When innumerable (*asankhyat*) *jivas* (souls) enter the human genus do they take birth among humans of asexual origin or those of placental origin ? (and other questions)

[Ans.] Gangeya ! All the innumerable *jivas* together get born among humans of asexual origin. Or innumerable are born among humans of asexual origin and one among those of placental origin. Or innumerable are born among humans of asexual origin and two among those of placental origin. ... and so on up to... Or innumerable are born among humans of asexual origin and countable among those of placental origin.

विवेचन : मनुष्य-प्रवेशनक के प्रकार और भंग-मनुष्य-प्रवेशनक के दो प्रकार हैं-सम्मूर्च्छिम-मनुष्य-प्रवेशनक और गर्भज-मनुष्य-प्रवेशनक। इन दोनों की अपेक्षा एक से लेकर संख्यात तक भंग पूर्ववत् समझना चाहिए। संख्यात पद में द्विकसंयोगी भंग पूर्ववत् ११ ही होते हैं। असंख्यात पद में पहले बारह विकल्प बताये गये हैं, लेकिन यहाँ ११ ही विकल्प (भंग) होते हैं; क्योंकि यदि सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में असंख्यातपन की तरह गर्भज मनुष्यों में भी असंख्यातपन होता, तभी बारह भंग बन सकते थे, किन्तु गर्भज मनुष्य असंख्यात नहीं होते। अतएव उनके प्रवेशनक में असंख्यातपन नहीं हो सकता।

Elaboration—There are two types of *Manushya-praveshanak* (entrance into human genus)—*Sammurchhim Manushya-praveshanak* (entrance into the human genus of asexual origin) and *Garbhaj Manushya-praveshanak* (entrance into the human genus of placental origin). Alternative combinations related to these follow the aforesaid pattern for numbers from one to countable. With regard to countable number there are eleven alternatives like preceding classes of beings. As regards innumerable beings earlier twelve alternatives are mentioned but here only eleven are possible. This is because placental human beings are never innumerable.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्कृष्ट रूप से मनुष्य-प्रवेशनक प्ररूपणा ALTERNATIVES FOR MAXIMUM NUMBER OF HUMANS

४०. [प्र.] उक्कोसा भंते ! मणुस्सा० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! सव्वे ति ताव सम्मुच्छिममणुस्सेसु होज्जा। अहवा सम्मुच्छिममणुस्सेसु य गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा।

४०. [प्र.] भगवन् ! मनुष्य उत्कृष्ट रूप से किस प्रवेशनक में होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! वे सभी सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में होते हैं। अथवा सम्मूर्च्छिम मनुष्यों में और गर्भज मनुष्यों में होते हैं।

40. [Q.] *Bhante !* Now the same question about entrance of maximum number (*utkrisht*) of humans ?

[a.] Gangeya ! Either all maximum (*utkrisht*) number of *jivas* get born among humans of asexual origin. Or among humans of asexual origin and those of placental origin.

मनुष्य-प्रवेशनकों का अल्पबहुत्व COMPARATIVE NUMBERS OF HUMANS

४१. [प्र.] एयस्स णं भंते ! सम्मुच्छिममणुस्सपवेसणगस्स गब्भवक्कंतियमणुस्सपवेसणगस्स य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा? बहुया वा? तुल्ला वा? विसेसाहिए वा?

[उ.] गंगेया ! सव्वत्थोवे गब्भवक्कंतियमणुस्सपवेसणए, सम्मुच्छिममणुस्सपवेसणए असंखेज्जगुणे।

४१. [प्र.] भगवन् ! सम्मूर्च्छिम-मनुष्य-प्रवेशनक और गर्भज-मनुष्य-प्रवेशनक, इन (दोनों) में से कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ?

[उ.] गांगेय ! सबसे थोड़े गर्भज-मनुष्य-प्रवेशनक हैं, उनसे सम्मूर्च्छिम-मनुष्य-प्रवेशनक असंख्यातगुणे हैं।

41. [Q.] *Bhante* ! Of the (aforesaid) entries among human beings, *Sammurchhim Manushya-praveshanak* (entrance into the human genus of asexual origin) and *Garbhaj Manushya-praveshanak* (entrance into the human genus of placental origin), which of the entries are comparatively less, more, equal and much more ?

[Ans.] Gangeya ! Minimum are entries (*praveshanak*) among human beings of placental origin. Innumerable times more than these are entries among human beings of asexual origin.

देव-प्रवेशनक : प्रकार और भंग DEV-PRAVESHANAK—TYPES AND ALTERNATIVES

४२. [प्र.] देवपवेसणए णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गंगेया ! चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा—भवणवासिदेवपवेसणए जाव वेमाणियदेवपवेसणए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२. [प्र.] भगवन् ! देव-प्रवेशनक कितने प्रकार का कहा गया है ?

[उ.] गांगेय ! वह चार प्रकार का कहा गया है-(१) भवनवासी-देव-प्रवेशनक, (२) वाणव्यन्तर-देव-प्रवेशनक, (३) ज्योतिष्क-देव-प्रवेशनक, और (४) वैमानिक-देव-प्रवेशनक।

42. [Q.] *Bhante !* How many types of *Dev-praveshanak* (entrance into divine realm) are there ?

[Ans.] Gangeya ! *Dev-praveshanak* (entrance into divine realm) are said to be of four types – (1) *Bhavan-vaasi Dev-praveshanak* (entrance into the realm of abode-dwelling gods), (2) *Vanavyantar Dev-praveshanak* (entrance into the realm of interstitial gods), (3) *Jyotishk Dev-praveshanak* (entrance into the realm of stellar gods), and (4) *Vaimanik Dev-praveshanak* (entrance into the realm of celestial-vehicular gods).

४३. [प्र.] एगे भंते ! देवे देवपवेसणए णं पविसमाणे किं भवणवासीसु होज्जा वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिएसु होज्जा ?

[उ.] गंगेया ! भवणवासीसु वा होज्जा वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिएसु वा होज्जा।

४३. [प्र.] भगवन् ! एक देव, देव-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करता हुआ क्या भवनवासी देवों में होता है, वाणव्यन्तर देवों में होता है, ज्योतिष्क देवों में होता है अथवा वैमानिक देवों में होता है ?

[उ.] गांगेय ! एक देव, देव-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करता हुआ, भवनवासी देवों में होता है, अथवा वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क अथवा वैमानिक देवों में होता है।

43. [Q.] *Bhante !* When one *jiva* (soul) enters the divine realm does he take birth among *Bhavan-vaasi devs* (abode-dwelling gods), *Vanavyantar devs* (interstitial gods), *Jyotishk devs* (stellar gods), or *Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods) ?

[Ans.] Gangeya ! It either gets born among *Bhavan-vaasi Devs* (abode-dwelling gods), or *Vanavyantar Devs* (interstitial gods), or *Jyotishk Devs* (stellar gods), or *Vaimanik Devs* (celestial-vehicular gods).

४४. [प्र.] दो भंते ! देवा देवपवेसणए० पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! भवणवासीसु वा होज्जा, वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिएसु वा होज्जा। अहवा एगे भवणवासीसु, एगे वाणमंतरेसु होज्जा। एवं जहा तिरिक्खजोणियपवेसणए तहा देवपवेसणए वि भाणियव्वे जाव असंखिज्ज त्ति।

४४. [प्र.] भगवन् ! दो देव, देव-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या भवनवासी देवों में, इत्यादि (पूर्ववत्) प्रश्न।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गांगेय ! वे भवनवासी देवों में होते हैं, अथवा वाणव्यन्तर देवों में होते हैं, या ज्योतिष्क देवों में होते हैं, अथवा वैमानिक देवों में होते हैं। अथवा एक भवनवासी देवों में होता है और एक वाणव्यन्तर देवों में होता है। जिस प्रकार तिर्यञ्चयोनिक-प्रवेशनक कहा, उसी प्रकार देव-प्रवेशनक भी कहना चाहिए, यावत् असंख्यात देव-प्रवेशनक तक कहना चाहिए।

44. [Q.] *Bhante !* When two *jivas* (souls) enter the divine realm do they take birth among *Bhavan-vaasi devs* (abode-dwelling gods) etc. ?

[Ans.] Gangeya ! They both get born either among *Bhavan-vaasi devs* (abode-dwelling gods), *Vanavyantar devs* (interstitial gods), *Jyotishk devs* (stellar gods), or *Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods). Or one is born among *Bhavan-vaasi devs* (abode-dwelling gods) and the other among *Vanavyantar devs* (interstitial gods). As has been stated with regard to entrance among infernal beings, the same should be repeated for the entrance among divine beings ... and so on up to... entrance for innumerable divine beings (*asankhyat Dev-praveshanak).*

उत्कृष्ट रूप से देव-प्रवेशनक प्ररूपणा ALTERNATIVES FOR MAXIMUM NUMBER OF DIVINE BEINGS

४५. [प्र.] उक्कोसा भंते ! पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! सव्वे वि ताव जोइसिएसु होज्जा।

अहवा जोइसिय-भवणवासीसु य होज्जा। अहवा जोइसिय-वाणमंतरेसु य होज्जा। अहवा जोइसिय-वेमाणिएसु य होज्जा।

अहवा जोइसिएसु य भवणवासीसु य वाणमंतरेसु य होज्जा। अहवा जोइसिएसु य भवणवासीसु य वेमाणिएसु य होज्जा। अहवा जोइसिएसु य वाणमंतरेसु य वेमाणिएसु य होज्जा।

अहवा जोइसिएसु य भवणवासीसु य वाणमंतरेसु य वेमाणिएसु य होज्जा।

४५. [प्र.] भगवन् ! उत्कृष्ट रूप से देव, देव-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए किन देवों में होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] गांगेय ! वे सभी ज्योतिष्क देवों में होते हैं। (क्योंकि ज्योतिष्क देव सबसे ज्यादा हैं)

अथवा ज्योतिष्क और भवनवासी देवों में होते हैं, अथवा ज्योतिष्क और वाणव्यन्तर देवों में होते हैं, अथवा ज्योतिष्क और वैमानिक देवों में होते हैं।

अथवा ज्योतिष्क, भवनवासी और वाणव्यन्तर देवों में होते हैं, अथवा ज्योतिष्क, भवनवासी और वैमानिक देवों में होते हैं, अथवा ज्योतिष्क, वाणव्यन्तर और वैमानिक देवों में होते हैं।

अथवा ज्योतिष्क, भवनवासी, वाणव्यन्तर और वैमानिक देवों में होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

45. [Q.] *Bhante !* Now the same question about entrance of maximum number (*utkrisht*) of divine beings ?

[a] Gangeya ! Either all maximum (*utkrisht*) number of *jivas* get born among *Jyotishk devs* (stellar gods). Or among *Jyotishk devs* (stellar gods) and *Bhavan-vaasi devs* (abode-dwelling gods), or *Jyotishk devs* (stellar gods) and *Vanavyantar devs* (interstitial gods), or *Jyotishk devs* (stellar gods) and *Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods). Or among *Jyotishk devs* (stellar gods), *Bhavan-vaasi devs* (abode-dwelling gods) and *Vanavyantar devs* (interstitial gods), or *Jyotishk devs* (stellar gods), *Bhavan-vaasi devs* (abode-dwelling gods), and *Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods). Or among *Jyotishk devs* (stellar gods), *Vanavyantar devs* (interstitial gods) and *Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods). Or among *Jyotishk devs* (stellar gods), *Bhavan-vaasi devs* (abode-dwelling gods), *Vanavyantar devs* (interstitial gods) and *Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods).

भवनवासी आदि देवों के प्रवेशनकों का अल्पबहुत्व COMPARATIVE NUMBERS OF DIVINE BEINGS

४६. [प्र.] एयस्स णं भंते ! भवणवासिदेवपवेसणगस्स वाणमंतरदेवपवेसणगस्स जोइसियदेवपवेसणगस्स वेमाणियदेवपवेसणगस्स य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा जाव विसेसाहिए वा ?

[उ.] गंगेया ! सव्वत्थोवे वेमाणियदेवपवेसणए, भवणवासिदेवपवेसणए असंखेज्जगुणे, वाणमंतरदेवपवेसणए असंखेज्जगुणे, जोइसियदेवपवेसणए संखेज्जगुणे।

४६. [प्र.] भगवन् ! भवनवासीदेव-प्रवेशनक, वाणव्यन्तरदेव-प्रवेशनक, ज्योतिष्कदेव-प्रवेशनक और वैमानिकदेव-प्रवेशनक; इन चारों प्रवेशनकों में से कौन प्रवेशनक किस प्रवेशनक से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ?

[उ.] गांगेय ! सबसे थोड़े वैमानिकदेव-प्रवेशनक हैं, उनसे भवनवासीदेव-प्रवेशनक असंख्यातगुणे हैं, उनसे वाणव्यन्तरदेव-प्रवेशनक असंख्यातगुणे हैं और उनसे ज्योतिष्कदेव-प्रवेशनक संख्यातगुणे हैं।

46. [Q.] *Bhante* ! Of the (aforesaid) entries among divine beings, *Bhavan-vaasi Dev-praveshanak* (entrance into the realm of abode-dwelling gods), *Vanavyantar Dev-praveshanak* (entrance into the realm of interstitial gods), *Jyotishk Dev-praveshanak* (entrance into the realm of stellar gods), and *Vaimanik Dev-praveshanak* (entrance into the realm of celestial-vehicular gods), which of the entries are comparatively less, more, equal and much more ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gangeya ! Minimum are entries into the realm of celestial-vehicular gods (*Vaimanik Dev-praveshanak*), innumerable times more than these are entries into the realm of abode-dwelling gods (*Bhavan-vaasi Dev-praveshanak*), innumerable times more than these are entries into the realm of interstitial gods (*Vanavyantar Dev-praveshanak*), and countable times more than these are entries into the realm of stellar gods (*Jyotishk Dev-praveshanak*).

नारक–तिर्यञ्च–मनुष्य–देव प्रवेशनकों का अल्पबहुत्व COMPARATIVE NUMBERS OF ALL BEINGS

४७. [प्र.] एयस्स णं भंते ! नेरइयपवेसणगस्स तिरिक्ख० मणुस्स० देवपवेसणगस्स य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा जाव विसेसाहिए वा ?

[उ.] गंगेया ! सव्वत्थोवे मणुस्सपवेसणए, नेरइयपवेसणए असंखेज्जगुणे, देवपवेसणए असंखेज्जगुणे, तिरिक्खजोणियपवेसणए असंखेज्जगुणे।

४७. [प्र.] भगवन् ! इन नैरयिक–प्रवेशनक, तिर्यञ्चयोनिक–प्रवेशनक, मनुष्य–प्रवेशनक और देव–प्रवेशनक; इन चारों में से कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ?

[उ.] गांगेय ! सबसे अल्प मनुष्य–प्रवेशनक है, उससे नैरयिक–प्रवेशनक असंख्यातगुणा है और उससे देव–प्रवेशनक असंख्यातगुणा है, और उससे तिर्यञ्चयोनिक–प्रवेशनक असंख्यातगुणा है।

47. [Q.] *Bhante* ! Of the (aforesaid) entries among infernal beings, animals, humans and divine beings (*Nairayik-praveshanak*, *Tiryagyonik-praveshanak*, *Manushya-praveshanak* and *Dev-praveshanak)* which of the entries are comparatively less, more, equal and much more ?

[Ans.] Gangeya ! Minimum are entries into the human genus (*Manushya-praveshanak*), innumerable times more than this are entries into the infernal world (*Nairayik-praveshanak*), innumerable times more than this are entries into the divine realm (*Dev-praveshanak*) and innumerable times more than this are entries into the animal world (*Tiryagyonik-praveshanak*).

विवेचन : चारों गतियों के जीवों के प्रवेशनकों का अल्पबहुत्व—सबसे अल्प मनुष्य–प्रवेशनक हैं, क्योंकि मनुष्य सिर्फ मनुष्य क्षेत्र में ही हैं, जोकि बहुत ही अल्प हैं। उससे नैरयिक–प्रवेशनक असंख्यातगुणा हैं, क्योंकि नरक में जाने वाले जीव असंख्यातगुण हैं। इसी प्रकार देव–प्रवेशनक और तिर्यञ्चयोनिक–प्रवेशनक के विषय में समझना चाहिए।

Elaboration—Comparative numbers of entries of beings in four genuses – Minimum of these are the entries into the human genus. This is because humans exist only in a comparatively small area that is called *Manushya Kshetra* (area of humans). Innumerable times more than this are entries into the infernal world, because a very large number of souls are reborn in hells. The same sequence is followed by entries into divine realms and animal world.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४८. [प्र.] संतरं भंते ! नेरइया उववज्जंति ? निरंतरं नेरइया उववज्जंति ? संतरं असुरकुमारा उववज्जंति ? निरंतरं असुरकुमारा जाव संतरं वेमाणिया उववज्जंति ? निरंतरं वेमाणिया उववज्जंति ? संतरं नेरइया उव्वट्टंति ? निरंतरं नेरइया उव्वट्टंति ? जाव संतरं वाणमंतरा उव्वट्टंति ? निरंतरं वाणमंतरा उव्वट्टंति ? संतरं जोइसिया चयंति ? निरंतरं जोइसिया चयंति ? संतरं वेमाणिया चयंति ? निरंतरं वेमाणिया चयंति ?

[उ.] गंगेया ! संतरं पि नेरइया उववज्जंति, निरंतरं पि नेरइया उववज्जंति जाव संतरं पि थणियकुमारा उववज्जंति, निरंतरं पि थणियकुमारा उववज्जंति। नो संतरं पुढविक्काइया उववज्जंति, निरंतरं पुढविक्काइया उववज्जंति; एवं जाव वणस्सइकाइया। सेसा जहा नेरइया जाव संतरं पि वेमाणिया उववज्जंति, निरंतरं पि वेमाणिया उववज्जंति। संतरं पि नेरइया उव्वट्टंति, निरंतरं पि नेरइया उव्वट्टंति; एवं जाव थणियकुमारा। नो संतरं पुढविक्काइया उव्वट्टंति, निरंतरं पुढविक्काइया उव्वट्टंति; एवं जाव वणस्सइकाइया। सेसा जहा नेरइया, नवरं जोइसिय-वेमाणिया चयंति अभिलावो, जाव संतरं पि वेमाणिया चयंति, निरंतरं पि वेमाणिया चयंति।

४८. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक सान्तर (अन्तरसहित) उत्पन्न होते हैं या निरन्तर (लगातार) उत्पन्न होते हैं? असुरकुमार सान्तर उत्पन्न होते हैं अथवा निरन्तर? यावत् वैमानिक देव सान्तर उत्पन्न होते हैं या निरन्तर? (इसी तरह) नैरयिक का उद्वर्तन सान्तर होता है अथवा निरन्तर? यावत् वाणव्यन्तर देवों का उद्वर्तन सान्तर होता है या निरन्तर? ज्योतिष्क देवों का सान्तर च्यवन होता है या निरन्तर? वैमानिक देवों का सान्तर च्यवन होता है या निरन्तर?

[उ.] हे गांगेय ! नैरयिक सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी, यावत् स्तनितकुमार सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी उत्पन्न होते हैं। पृथ्वीकायिक जीव सान्तर उत्पन्न नहीं होते, परन्तु निरन्तर ही उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक जीव सान्तर उत्पन्न नहीं होते, किन्तु निरन्तर उत्पन्न होते हैं। शेष सभी जीव नैरयिक जीवों के समान सान्तर भी उत्पन्न होते हैं, निरन्तर भी, यावत् वैमानिक देव सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी। नैरयिक जीव सान्तर भी उद्वर्तन करते हैं, निरन्तर भी। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक कहना चाहिए। पृथ्वीकायिक जीव सान्तर नहीं उद्वर्तते, निरन्तर उद्वर्तित होते हैं। इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिकों तक कहना चाहिए। शेष सभी जीवों का कथन नैरयिकों के समान जानना चाहिए। इतना विशेष है कि ज्योतिष्क देव और वैमानिक देव च्यवते हैं, ऐसा पाठ (अभिलाप) कहना चाहिए यावत् वैमानिक देव सान्तर भी च्यवते हैं और निरन्तर भी।

48. [Q.] *Bhante !* Are infernal beings born (*upapaad*) with a gap or continuously without a gap ? Are *Asur Kumar* gods born (*upapaad*) with a gap or continuously without a gap ? ... and so on up to... Are Celestial-vehicular gods born (*upapaad*) with a gap or continuously without a gap?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

In the same way do infernal beings die with a gap or continuously without a gap ? ... and so on up to... Do Interstitial gods (*Vanavyantar Devs*) die with a gap or continuously without a gap ? Do Stellar gods (*Jyotishk Devs*) die with a gap or continuously without a gap ? Do Celestial-vehicular gods (*Vaimanik Devs*) die with a gap or continuously without a gap ?

[**Ans.**] Gangeya ! Infernal beings are born (*upapaad*) with a gap as well as continuously without a gap. ... and so on up to... *Stanit Kumar* gods too are born (*upapaad*) with a gap as well as continuously without a gap. Earth-bodied beings are not born (*upapaad*) with a gap but continuously without a gap. In the same way, ... and so on up to... plant-bodied beings are not born (*upapaad*) with a gap but continuously without a gap. All the remaining living beings, like infernal beings, are born (*upapaad*) with a gap as well as continuously without a gap. ... and so on up to... Celestial-vehicular gods too are born (*upapaad*) with a gap as well as continuously without a gap.

Infernal beings die (*udvartan*) with a gap as well as continuously without a gap. ... and so on up to... *Stanit Kumar* gods too die (*udvartan*) with a gap as well as continuously without a gap. Earth-bodied beings do not die (*udvartan*) with a gap but continuously without a gap. In the same way, ... and so on up to... plant-bodied beings do not die (*udvartan*) with a gap but continuously without a gap. All the remaining living beings, like infernal beings, die (*udvartan*) with a gap as well as continuously without a gap. The only difference is that in case of Stellar and Celestial-vehicular gods mention 'descend' instead of 'die' ... and so on up to... Celestial-vehicular gods too descend (*chyavan*) with a gap as well as continuously without a gap.

विवेचन : शंका–समाधान–यहाँ शंका उपस्थित होती है कि नैरयिक आदि की उत्पत्ति के सान्तर–निरन्तर आदि तथा उद्वर्तनादि का कथन प्रवेशनक–प्रकरण से पूर्व किया ही था, फिर यहाँ पुनः सान्तर–निरन्तर आदि का कथन क्यों किया गया है ? इसका समाधान यह है कि यहाँ पुनः सान्तर आदि का निरूपण नारकादि सभी जीवों के भेदों का सामुदायिक रूप से सामूहिक उत्पाद एवं उद्वर्तन की दृष्टि से किया गया है।

Elaboration—A doubt - Birth and death with and without gap of infernal and other beings has already been discussed before the topic of entrances. Why then the same has been mentioned once again ? The reason for this is that here it is given with regard to birth and death of all classes of living beings grouped together.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४९. [प्र.] **सओ भंते ! नेरइया उववज्जंति ? असओ भंते ! नेरइया उववज्जंति ?**

[उ.] **गंगेया ! सओ नेरइया उववज्जंति, नो असओ नेरइया उववज्जंति। एवं जाव वेमाणिया।**

४९. [प्र.] भगवन् ! सत् (विद्यमान) नैरयिक जीव उत्पन्न होते हैं या असत् (अविद्यमान) नैरयिक उत्पन्न होते हैं ?

[उ.] गांगेय ! सत् नैरयिक उत्पन्न होते हैं, असत् नैरयिक उत्पन्न नहीं होते। इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक जानना चाहिए।

49. [Q.] *Bhante !* Are the existent (*sat*) infernal beings born ? Or are the non-existent (*asat*) infernal beings born ?

[Ans.] Gangeya ! Only the existent (*sat*) infernal beings are born and not the non-existent (*asat*) infernal beings. The same holds good ... and so on up to... *Vaimaniks* (celestial-vehicular gods).

५०. [प्र.] **सओ भंते ! नेरइया उव्वट्टंति, असओ नेरइया उव्वट्टंति ?**

[उ.] **गंगेया ! सओ नेरइया उव्वट्टंति, नो असओ नेरइया उव्वट्टंति। एवं जाव वेमाणिया, नवरं जोइसिय-वेमाणिएसु 'चयंति' भाणियव्वं।**

५०. [प्र.] भगवन् ! सत् नैरयिक उद्वर्तते हैं या असत् नैरयिक उद्वर्तते हैं ?

[उ.] गांगेय ! सत् नैरयिक उद्वर्तते हैं, किन्तु असत् नैरयिक उद्ववर्तिते नहीं होते। इसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यन्त जानना चाहिए। विशेष इतना ही है कि ज्योतिष्क और वैमानिक देवों के लिए 'च्यवते हैं', ऐसा कहना चाहिए।

50. [Q.] *Bhante !* Do the existent (*sat*) infernal beings die ? Or do the non-existent (*asat*) infernal beings die ?

[Ans.] Gangeya ! Only the existent (*sat*) infernal beings die and not the non-existent (*asat*) infernal beings. The same holds good ... and so on up to... *Vaimaniks* (celestial-vehicular gods). The only difference is that for *Jyotishks* and*Vaimaniks* state descend instead of die.

५१. [प्र. १] **सओ भंते ! नेरइया उववज्जंति, असओ नेरइया उववज्जंति? सओ असुरकुमारा उववज्जंति जाव सओ वेमाणिया उववज्जंति, असओ वेमाणिया उववज्जंति? सओ नेरइया उव्वट्टंति, असओ नेरइया उव्वट्टंति? सओ असुरकुमारा उव्वट्टंति जाव सओ वेमाणिया चयंति, असओ वेमाणिया चयंति?**

[उ.] **गंगेया ! सओ नेरइया उववज्जंति, नो असओ नेरइया उववज्जंति, सओ असुरकुमारा उववज्जंति, नो असओ असुरकुमारा उववज्जंति, जाव सओ वेमाणिया उववज्जंति, नो असओ वेमाणिया उववज्जंति। सओ नेरइया उव्वट्टंति, नो असओ नेरइया उव्वट्टंति; जाव सओ वेमाणिया चयंति, नो असओ वेमाणिया चयंति।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५१. [प्र. १] भगवन् ! नैरयिक जीव, सत् नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं या असत् नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं ? असुरकुमार देव, सत् असुरकुमार देवों में उत्पन्न होते हैं या असत् असुरकुमार देवों में ? इसी प्रकार यावत् सत् वैमानिक में उत्पन्न होते हैं या असत् वैमानिकों में ? तथा सत् नैरयिकों में से उद्वर्तते हैं या असत् नैरयिकों में से ? सत् असुरकुमारों में से उद्वर्तते हैं यावत् सत् वैमानिकों में से च्यवते हैं या असत् वैमानिकों में से च्यवते हैं ?

[उ.] गांगेय ! नैरयिक जीव सत् नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं, किन्तु असत् नैरयिकों में उत्पन्न नहीं होते। सत् असुरकुमारों में उत्पन्न होते हैं, असत् असुरकुमारों में नहीं। इसी प्रकार यावत् सत् वैमानिकों में उत्पन्न होते हैं, असत् वैमानिकों में नहीं। (इसी प्रकार) सत् नैरयिकों में से उद्वर्तते हैं, असत् नैरयिकों में से नहीं। यावत् सत् वैमानिकों में से च्यवते हैं, असत् वैमानिकों में से नहीं।

51. [Q. 1] *Bhante* ! Are infernal beings born among the existent infernal beings or the non-existent infernal beings ? Are *Asur Kumar* gods born among the existent *Asur Kumar* gods or the non-existent *Asur Kumar* gods ? ... and so on up to... Are *Vaimanik* gods born among the existent *Vaimanik* gods or the non-existent *Vaimanik* gods ? And do infernal beings die from among the existent infernal beings or the non-existent infernal beings ? Do *Asur Kumar* gods die from among the existent *Asur Kumar* gods or the non-existent *Asur Kumar* gods ? ... and so on up to... Do *Vaimanik* gods descend from among the existent *Vaimanik* gods or the non-existent *Vaimanik* gods ?

[Ans.] Gangeya ! Infernal beings are born among the existent infernal beings and not among the non-existent infernal beings. *Asur Kumar* gods are born among the existent *Asur Kumar* gods and not among the non-existent *Asur Kumar* gods. ... and so on up to... *Vaimanik* gods are born among the existent *Vaimanik* gods and not among the non-existent *Vaimanik* gods. And infernal beings die from among the existent infernal beings and not from among the non-existent infernal beings. ... and so on up to... *Vaimanik* gods descend from among the existent *Vaimanik* gods and not from among the non-existent *Vaimanik* gods.

५१. [प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सओ नेरइया उववज्जंति, नो असओ नेरइया उववज्जंति; जाव सओ वेमाणिया चयंति, नो असओ वेमाणिया चयंति ?

[उ.] से नूणं गंगेया ! पासेणं अरहया पुरिसादाणीएणं सासए लोए बुइए, अणाईए अणवयग्गे जहा पंचमे सए (स. ५, उ. ९, सु. १४ [२]) जाव जे लोक्कइ से लोए, से तेणट्ठेणं गंगेया ! एवं वुच्चइ जाव सओ वेमाणिया चयंति, नो असओ वेमाणिया चयंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५१. [प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है कि नैरयिक सत् नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं, असत् नैरयिकों में नहीं। इसी प्रकार यावत् सत् वैमानिकों में से च्यवते हैं, असत् वैमानिकों में से नहीं ?

[उ.] गांगेय ! निश्चित ही पुरुषादानीय अरह (अर्हन्) श्री पार्श्वनाथ ने लोक को शाश्वत, अनादि और अनन्त कहा है इत्यादि, पंचम शतक के नौवें उद्देशक में कहे अनुसार जानना चाहिए, यावत् जो अवलोकन किया जाए, उसे लोक कहते हैं। इस कारण, हे गांगेय ! ऐसा कहा जाता है कि यावत् सत् वैमानिकों में से च्यवते हैं, असत् वैमानिकों में से नहीं।

51. [Q. 2] *Bhante !* Why is it said that infernal beings are born among the existent infernal beings and not among the non-existent infernal beings... and so on up to... *Vaimanik* gods descend from among the existent *Vaimanik* gods and not from among the non-existent *Vaimanik* gods ?

[Ans.] Gangeya ! Arhat Parshva, the best among men (*Purushadaniya*) has called the *Lok* (occupied space or universe) eternal, without a beginning and without an end... (quote from the ninth lesson of the fifth chapter) ... and so on up to... what is visible is the *Lok*. That is the reason, Gangeya ! it said ... and so on up to... *Vaimanik* gods descend from among the existent *Vaimanik* gods and not from among the non-existent *Vaimanik* gods.

विवेचन : सत् ही उत्पन्न होने आदि का रहस्य—सत् अर्थात् द्रव्यार्थतया विद्यमान नैरयिक आदि ही नैरयिक आदि में उत्पन्न होते हैं, सर्वथा असत् (अविद्यमान) द्रव्य तो कोई भी उत्पन्न नहीं होता, क्योंकि वह तो गधे के सींग के समान असत् है। इन जीवों में सत्त्व (विद्यमानत्व या अस्तित्व) जीवद्रव्य की अपेक्षा से, अथवा नारक-पर्याय की अपेक्षा से समझना चाहिए, क्योंकि भावी नारक-पर्याय की अपेक्षा से द्रव्यतः नारक ही नारकों में उत्पन्न होते हैं। अथवा यहाँ से मरकर नरक में जाते समय विग्रहगति में नरकायु का उदय हो जाने से वे जीव भावनारक होकर ही नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं।

Elaboration—Explanation of why only existent is born – Only those infernal and other beings that are existent (*sat*) from *dravyarthik naya* (existent material aspect) get born in different respective genuses. No non-existent (in the form under consideration) entity ever takes birth because that is unreal like chimera. Here the existence of these souls is in context of the soul entity as well as the infernal mode. This is because in terms of future mode as infernal beings only infernal beings are born in that realm. Even those souls that end their lives in some other genus and are destined to be born in the infernal realm turn to the infernal state during their passage to infernal realm. Thus they also satisfy the aforesaid theory.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५२. [प्र. १] सयं भंते ! एतेवं जाणह उदाहु असयं ? असोच्चा एतेवं जाणह उदाहु सोच्चा 'सओ नेरइया उववज्जंति, नो असओ नेरइया उववज्जंति जाव सओ वेमाणिया चयंति, नो असओ वेमाणिया चयंति ?'

[उ.] गंगेया ! सयं एतेवं जाणामि, नो असयं; असोच्चा एतेवं जाणामि, नो सोच्चा; 'सओ नेरइया उववज्जंति, नो असओ नेरइया उववज्जंति, जाव सओ वेमाणिया चयंति, नो असओ वेमाणिया चयंति।'

५२. [प्र. १] भगवन् ! आप स्वयं इसे इस प्रकार जानते हैं, अथवा अस्वयं जानते हैं ? तथा बिना सुने ही इसे इस प्रकार जानते हैं, अथवा सुनकर जानते हैं कि 'सत् नैरयिक उत्पन्न होते हैं, असत् नैरयिक नहीं ? यावत् सत् वैमानिकों में से च्यवन होता है, असत् वैमानिकों में से नहीं ?'

[उ.] गांगेय ! यह सब इस रूप में मैं स्वयं जानता हूँ, अस्वयं नहीं तथा बिना सुने ही मैं इसे इस प्रकार जानता हूँ, सुनकर ऐसा नहीं जानता कि सत् नैरयिक उत्पन्न होते हैं, असत् नैरयिक नहीं, यावत् सत् वैमानिकों में से च्यवते हैं, असत् वैमानिकों में से नहीं।

52. [Q. 1] *Bhante !* Do you know yourself, or not yourself, by hearing or not by hearing that 'only the existent (*sat*) infernal beings are born and not the non-existent (*asat*) infernal beings. Descent is only from among the existent (*sat*) *Vaimaniks* and not from among the non-existent (*asat*) *Vaimaniks* ?

[Ans.] Gangeya ! I know all this myself and not otherwise, not by hearing but without hearing that 'only the existent (*sat*) infernal beings are born and not the non-existent (*asat*) infernal beings. Descent is only from among the existent (*sat*) *Vaimaniks* and not from among the non-existent (*asat*) *Vaimaniks*.

५२. [प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ तं चेव जाव नो असओ वेमाणिया चयंति ?

[उ.] गंगेया ! केवली णं पुरत्थिमेणं मियं पि जाणइ, अमियं पि जाणइ, दाहिणेणं एवं जहा सद्दुद्देसए (स. ५, उ. ४, सु. ४ [२]) जाव निव्वुडे नाणे केवलिस्स, से तेणट्ठेणं गंगेया ! एवं वुच्चइ तं चेव जाव नो असओ वेमाणिया चयंति।

५२. [प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है कि मैं स्वयं जानता हूँ, इत्यादि; (पूर्वोक्तवत्) यावत् सत् वैमानिकों में से च्यवते हैं, असत् वैमानिकों में से नहीं ?

[उ.] गांगेय ! केवलज्ञानी पूर्व (दिशा) में मित (मर्यादित) भी जानते हैं, अमित (अमर्यादित) भी जानते हैं। इसी प्रकार दक्षिण (दिशा) में भी जानते हैं। इस प्रकार शब्द-उद्देशक (भगवती, श. ५, उ. ४) में कहे अनुसार कहना चाहिए। यावत् केवली का ज्ञान निरावरण होता है। इसलिए हे गांगेय ! इस कारण से ऐसा कहा जाता है कि मैं स्वयं जानता हूँ, इत्यादि; यावत् असत् वैमानिकों में से नहीं च्यवते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

52. [Q. 2] *Bhante !* Why do you say that 'I know all this myself ... and so on up to... Descent is only from among the existent (*sat*) *Vaimaniks* and not from among the non-existent (*asat*) *Vaimaniks*' ?

[**Ans.**] Gangeya ! Omniscients know all things in the east within a limit as well as beyond limit. In the same way they know all things in the south. In the same way quote from the lesson titled *Shabd* (Ch. 5, Lesson 4, aphorism 4/2) ... and so on up to... the knowledge of omniscients has no veil. That is why, Gangeya ! I say that 'I know all this myself ... and so on up to... Descent is only from among the existent (*sat*) *Vaimaniks* and not from among the non-existent (*asat*) *Vaimaniks*'.

नैरयिक आदि की स्वयं उत्पत्ति **BIRTH OF LIVING BEINGS OF THEIR OWN ACCORD**

५३. [प्र. १] **सयं भंते ! नेरइया नेरइएसु उववज्जंति ? असंय नेरइया नेरइएसु उववज्जंति ?**

[उ.] **गंगेया ! सयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति, नो असयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति।**

५३. [प्र. १] हे भगवन् ! क्या नैरयिक, नैरयिकों में स्वयं उत्पन्न होते हैं या अस्वयं उत्पन्न होते हैं ?

[उ.] गांगेय ! नैरयिक, नैरयिकों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते।

53. [Q. 1] *Bhante !* Do infernal beings get born among infernal beings of their own accord or they get born not of their own accord ?

[**Ans.**] Gangeya ! Infernal beings get born among infernal beings of their own accord and not otherwise.

५३. [प्र. २] **से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव उववज्जंति ?**

[उ.] **गंगेया ! कम्मोदएणं कम्मगुरुयत्ताए कम्मभारियत्ताए कम्मगुरुसंभारियत्ताए, असुभाणं कम्माणं उदएणं, असुभाणं कम्माणं विवागेणं, असुभाणं कम्माणं फलविवागेणं सयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति, नो असयं नेरइया नेरइएसु उववज्जंति, से तेणट्ठेणं गंगेया ! जाव उववज्जंति।**

५३. [प्र. २] भगवन् ! ऐसा क्यों कहते हैं कि यावत् अस्वयं नहीं उत्पन्न होते ?

[उ.] गांगेय ! कर्म के उदय से, कर्मों की गुरुता के कारण, कर्मों के भारीपन से, कर्मों के अत्यन्त गुरुत्व और भारीपन से, अशुभ कर्मों के उदय से, अशुभ कर्मों के विपाक से तथा अशुभ कर्मों के फलपरिपाक से, नैरयिक, नैरयिकों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं (परप्रेरित) उत्पन्न नहीं होते। इसी कारण से हे गांगेय ! यह कहा जाता है कि नैरयिक, नैरयिकों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते। (इस उत्तर में आत्मा का स्व-कर्तत्व स्थापित कर ईश्वर कर्तत्व का निषेध दिया गया है।)

53. [Q. 2] *Bhante !* Why do you say that infernal beings get born among infernal beings of their own accord and not otherwise ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gangeya ! Infernal beings get born among infernal beings of their own accord due to fruition of *karmas*, due to magnitude of *karmas*, due to mass of *karmas*, due to excessive magnitude and mass of *karmas*, due to fruition of ignoble *karmas*, due to consequence of ignoble *karmas* and due to maturing of fruits of ignoble *karmas* and not otherwise (or not due to influence of some other agency). That is why, Gangeya ! I say that infernal beings get born among infernal beings of their own accord and not otherwise. (This answer establishes action of the self as the cause and negates any outside cause including God.)

५४. [प्र. १] सयं भंते ! असुरकुमारा० ? पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! सयं असुरकुमारा जाव उववज्जंति, नो असयं असुरकुमारा जाव उववज्जंति।

५४. [प्र. १] भंते ! असुरकुमार, असुरकुमारों में स्वयं उत्पन्न होते हैं या अस्वयं ? इत्यादि पृच्छा।

[उ.] गांगेय ! असुरकुमार, असुरकुमारों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते।

54. [Q. 1] *Bhante !* Do *Asur Kumar* gods get born among *Asur Kumar* gods of their own accord or they get born not of their own accord ?

[Ans.] Gangeya ! *Asur Kumar* gods get born among *Asur Kumar* gods of their own accord and not otherwise.

५४. [प्र. २] से केणट्ठेणं तं चेव जाव उववज्जंति ?

[उ.] गंगेया ! कम्मोदएणं कम्मविगतीए कम्मविसोहीए कम्मविसुद्धीए, सुभाणं कम्माणं उदएणं, सुभाणं कम्माणं विवागेणं, सुभाणं कम्माणं फलविवागेणं सयं असुरकुमारा असुरकुमारत्ताए उववज्जंति, नो असयं असुरकुमारा असुरकुमारत्ताए उववज्जंति। से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति। एवं जाव थणियकुमारा।

५४. [प्र. २] भगवन् ! ऐसा कहने का क्या कारण है कि यावत् अस्वयं उत्पन्न नहीं होते ?

[उ.] हे गांगेय ! कर्म के उदय से, (अशुभ) कर्म के अभाव से, कर्म की विशोधि से, कर्मों की विशुद्धि से, शुभ कर्मों के उदय से, शुभ कर्मों के विपाक से, शुभ कर्मों के फलविपाक से असुरकुमार, असुरकुमारों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते। इसलिए हे गांगेय ! पूर्वोक्त रूप से कहा गया है। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक जानना चाहिए।

54. [Q. 2] *Bhante !* Why do you say that *Asur Kumar* gods get born among *Asur Kumar* gods of their own accord and not otherwise ?

[Ans.] Gangeya ! *Asur Kumar* gods get born among *Asur Kumar* gods of their own accord due to fruition of *karmas*, due to absence of (ignoble) *karmas*, due to purification of *karmas*, due to purity of *karmas*, due to fruition of noble *karmas*, due to consequence of noble *karmas* and due to maturing of fruits of noble *karmas* and not otherwise (or not due to influence of some other agency). That is why, Gangeya ! I say as aforesaid. The same holds good up to *Stanit Kumar* gods.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५५. [प्र. १] सयं भंते ! पुढविक्काइया० पुच्छा।

[उ.] गंगेया ! सयं पुढविकाइया जाव उववज्जंति, नो असयं पुढविक्काइया जाव उववज्जंति।

५५. [प्र. १] भगवन् ! क्या पृथ्वीकायिक, पृथ्वीकायिकों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, या अस्वयं उत्पन्न होते हैं ?

[उ.] गांगेय ! पृथ्वीकायिक, पृथ्वीकायिकों में स्वयं यावत् उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते।

55. [Q. 1] *Bhante !* Do earth-bodied beings get born among earth-bodied beings of their own accord or they get born not of their own accord?

[Ans.] Gangeya ! Earth-bodied beings get born among earth-bodied beings of their own accord and not otherwise.

५५. [प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव उववज्जंति ?

[उ.] गंगेया ! कम्मोदएणं कम्मगुरुयत्ताए कम्मभारियत्ताए कम्मगुरुसंभारित्ताए, सुभासुभाणं कम्माणं उदएणं, सुभासुभाणं कम्माणं विवागेणं, सुभासुभाणं कम्माणं फलविवागेणं सयं पुढविकाइया जाव उववज्जंति, नो असयं पुढविकाइया जाव उववज्जंति। से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति।

५६. एवं जाव मणुस्सा।

५५. [प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं कि पृथ्वीकायिक स्वयं उत्पन्न होते हैं, इत्यादि ?

[उ.] गांगेय ! कर्म के उदय से, कर्मों की गुरुता से, कर्म के भारीपन से, कर्म के अत्यन्त गुरुत्व और भारीपन से, शुभाशुभ कर्मों के उदय से, शुभाशुभ कर्मों के विपाक से, शुभाशुभ कर्मों के फलविपाक से पृथ्वीकायिक, पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते। इसलिए हे गांगेय ! पूर्वोक्त रूप से कहा गया है।

५६. इसी प्रकार यावत् मनुष्य तक जानना चाहिए।

55. [Q. 2] *Bhante* ! Why do you say that earth-bodied beings get born among earth-bodied beings of their own accord and not otherwise ?

[Ans.] Gangeya ! Earth-bodied beings get born among earth-bodied beings of their own accord due to fruition of *karmas*, due to magnitude of *karmas*, due to mass of *karmas*, due to excessive magnitude and mass of *karmas*, due to fruition of noble-ignoble *karmas*, due to consequence of noble-ignoble *karmas* and due to maturing of fruits of noble-ignoble *karmas* and not otherwise (or not due to influence of some other agency). That is why, Gangeya ! I say as aforesaid.

56. The same holds good for all living beings up to human beings.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५७. वाणमंतर–जोइसिय–वेमाणिया जहा असुरकुमारा। से तेणट्ठेणं गंगेया ! एवं वुच्चइ–सयं वेमाणिया जाव उववज्जंति, नो असयं जाव उववज्जंति।

५७. जिस प्रकार असुरकुमारों के विषय में कहा, उसी प्रकार वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकों के विषय में भी जानना चाहिए। इसी कारण से, हे गांगेय ! मैं ऐसा कहता हूँ कि यावत् वैमानिक, वैमानिकों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं नहीं होते।

57. *Vanavyantar*, *Jyotishk* and *Vaimanik* gods follow the pattern of *Asur Kumar* gods. That is why, Gangeya ! I say that ... and so on up to... Vaimanik gods get born among infernal beings of their own accord and not otherwise.

विवेचन : जीवों की नारक, देव आदि रूप में स्वयं उत्पत्ति के कारण–(१) कर्मोदयवश, (२) कर्मों की गुरुता से, (३) कर्मों के भारीपन से, (४) कर्मों के गुरुत्व और भारीपन की अतिप्रकर्षावस्था से, (५) कर्मों के उदय से, (६) विपाक से (यानी कर्मों के फलभोग से), अथवा यथाबद्ध रसानुभूति से, फलविपाक से रस की प्रकर्षता से।

उपर्युक्त शब्दों में किञ्चित् अर्थभेद है अथवा ये शब्द एकार्थक हैं। अर्थ के प्रकर्ष को बतलाने के लिए अनेक शब्दों का प्रयोग किया गया है।

Elaboration—Cause of birth of living beings of their own accord – (1) due to fruition of *karmas* (*karmodaya*), (2) due to magnitude of *karmas* (*karma guruta*), (3) due to mass of *karmas* (*karma sambhaar*), (4) due to excessive magnitude and mass of *karmas*, (5) due to fruition of *karmas*, (6) due to consequence of *karmas* (*vipaak*) and (7) due to maturing of fruits or intensity of *karmas* (*karma phal-vipaak*).

All these terms could be called synonymous as they have only slight differences in their meanings. This variety of words has been used to elaborate the range of meanings the concept covers.

भगवान के सर्वज्ञत्व पर श्रद्धा और पंचमहाव्रत धर्म–स्वीकार

BELIEF IN OMNISCIENCE AND EMBRACING OF THE FIVE-VOW PATH

५८. तप्पभिइं च णं से गंगेये अणगारे समणं भगवं महावीरं पच्चभिजाणइ सव्वण्णू सव्वदरिसी।

५८. तब से अर्थात् इन प्रश्नोत्तरों के समय से गांगेय अनगार ने श्रमण भगवान महावीर को सर्वज्ञ और सर्वदर्शी के रूप में पहचाना।

58. Since this moment (of dialogue) ascetic Gangeya recognized Shraman Bhagavan Mahavir as all knowing and all seeing (omniscient).

५९. तए णं से गंगेये अणगारे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणयपाहिणं करेइ, करेत्ता वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतियं चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं एवं जहा कालासवेसियपुत्तो (स. १, उ. ९, सु. २३–२४) तहेव भाणियव्वं जाव सव्वदुक्खप्पहीणे।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ नवम सए: बत्तीसइमो उद्देसओ समत्तो॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५९. इसके पश्चात् गांगेय अनगार ने श्रमण भगवान महावीर को तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा की, वन्दन-नमस्कार किया और निवेदन किया-

भगवन् ! मैं आपके पास चातुर्यामरूप धर्म से पंचममहाव्रतरूप धर्म को अंगीकार करना चाहता हूँ। इसका सारा वर्णन संघ प्रवेश, तपस्या और कैवल्य प्राप्ति तक प्रथम शतक के नौवें उद्देशक में कथित कालास्यवेषिकपुत्र अनगार के समान जानना चाहिए। यावत् गांगेय अनगार सिद्ध, बुद्ध, मुक्त यावत् सर्वदुःखों से रहित बने।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ! हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है !

59. After that ascetic Gangeya went around Shraman Bhagavan Mahavir three times, bowed before him, paid homage and said —

Bhante ! Shifting from my present four-limbed religion, I want to embrace the religion of five great vows and get initiated by you. Quote the details of entry into the order, austerities and attaining omniscience from the story of Kaalashyaveshik-putra in the ninth lesson of the first chapter. ... and so on up to... Ascetic Gangeya became perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), and liberated (*mukta*) to end all miseries.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : प्रस्तुत दो सूत्रों (५८-५९) में यह प्रतिपादन किया गया है कि जब गांगेय अनगार को जिज्ञासा समाधान प्राप्त होने पर भगवान के सर्वज्ञत्व पर दृढ़ विश्वास हो गया, तब उन्होंने भगवान से चातर्यामधर्म के स्थान पर पंचमहाव्रतरूप धर्म स्वीकार किया और क्रमशः सिद्ध-बुद्ध-मुक्त हुए।

Elaboration—The two aforesaid aphorisms (58-59) inform that on getting his doubts removed by Bhagavan Mahavir, ascetic Gangeya was completely convinced of the omniscience of Bhagavan Mahavir. After that, leaving his four-limbed religion, he embraced Mahavir's religion of five great vows and in due course became perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), and liberated (*mukta*).

॥ नवम शतक : बत्तीसवाँ उद्देशक समाप्त ॥

● END OF THE THIRTY SECOND LESSON OF THE NINTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेत्तीसइमो उद्देसो : 'कुंडग्गामे'

नवम शतक : तेतीसवाँ उद्देशक : कुण्डग्राम (ऋषभदत्त और देवानन्दा)

NAVAM SHATAK (Chapter Ninth) : THIRTY-THIRD LESSON : KUNDAGRAM

[Rishabh-datt and Devananda]

संक्षिप्त परिचय BRIEF INTRODUCTION

१. तेणं कालेणं तेणं समएणं माहणकुंडग्गामे नयरे होत्था। वण्णओ। बहुसालए चेतिए। वण्णओ।

१. उस काल और उस समय में ब्राह्मणकुण्डग्राम नामक नगर था। उसका वर्णन नगर-वर्णन के समान समझ लेना चाहिए। वहाँ बहुशाल नामक चैत्य (उद्यान) था। उसका वर्णन भी (औपपातिकसूत्र से) करना चाहिए।

1. During that period of time there was a city called Brahman Kundagram. Description (as in *Aupapatik sutra*). Outside the city there was a Chaitya called Bahushal. Description (as in *Aupapatik sutra*).

२. तत्थ णं माहणकुंडग्गामे नयरे उसभदत्ते नामं माहणे परिवसति-अड्ढे दित्ते वित्ते जाव अपरिभूए। रिउवेद-जजुवेद-सामवेद-अथव्वणवेद जहा खंदओ (स. २, उ. १, सु. १२) जाव अन्नेसु य बहुसु बंभण्णएसु नएसु सुपरिनिट्ठिए समणोवासए अभिगयजीवाजीवे उवलद्धपुण्ण-पावे जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरति।

२. उस ब्राह्मणकुण्डग्राम नगर में ऋषभदत्त नाम का ब्राह्मण रहता था। वह आढ्य (धनवान्), दीप्त (तेजस्वी), प्रसिद्ध, यावत् अपरिभूत था। वह ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में निपुण था। (शतक २, उद्देशक १, सू. १२ में कथित) स्कन्दक तापस की तरह वह भी ब्राह्मणों के अन्य बहुत से नयों (शास्त्रों) में निष्णात विशेषज्ञ था। वह श्रमणों का उपासक, जीव-अजीव आदि तत्त्वों का ज्ञाता, पुण्य-पाप के तत्त्व को उपलब्ध (हृदयंगम किया हुआ), यावत् आत्मा को भावित करता हुआ विहरण (जीवन-यापन) करता था।

2. In that Brahman Kundagram lived a Brahmin named Rishabh-datt. He was very rich (*aadhya*), opulent (*deept*), famous ... and so on up to... insuperable (*aparibhoot*). He was an expert of four *Vedas* namely *Rigveda*, *Yajurveda*, *Saam-veda*, *Atharvaveda*. Like Skandak Tapas he was a scholar of many other Brahmin scriptures (*Bhagavati Sutra*, Vol.1, 2/1/12). He was a devotee of *Shramans*, understood the fundamental entities including soul and matter, and very much aware of the basics about virtues and vices ... and so on up to... He spent his life enkindling (*bhaavit*) his soul (with ascetic religion and austerities).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 19

Illustration No. 19

ऋषभदत्त और देवानंदा

एक बार भगवान महावीर क्षत्रिय कुंड में पधारे तब ब्राह्मण कुंड निवासी ऋषभदत्त ब्राह्मण और देवानंदा ब्राह्मणी भगवान के दर्शन के लिये समवसरण में आये। भगवान को देखते ही माता देवानंदा के नेत्र आनन्द अश्रुओं से भीग गये। वे इतनी प्रफुल्लित हुई कि उनकी भुजाओं और बाजुबन्दों के कड़े तंग हो टूटकर धरती पर गिर गये। उनके शरीर का रोम-रोम हर्ष से नाच उठा और वात्सल्यता के कारण उनके स्तनों से दूध की धाराएँ बहने लगीं। वे भगवान महावीर को अनिमेष दृष्टि से निहारने लगीं।

गौतम स्वामी भगवान के पास ही विराजित थे। उन्होंने यह दृश्य देखा। ब्राह्मण दम्पत्ति के जाने के पश्चात् उन्होंने भगवान से पूछा—हे भगवन्! इस देवानंदा ब्राह्मणी को किस प्रकार पाना चढ़ा? (स्तनों में से दूध क्यों आ गया?)

भगवान महावीर स्वामी ने कहा—गौतम! ये मेरी माता हैं। मैं इनका आत्मज हूँ। इसलिए पुत्र-स्नेहानुराग से ये इतनी रोमांचित हो गई कि इनको पाना चढ़ आया।

ऋषभदत्त और देवानंदा ने भगवान की देशना सुनी और उन्हें वैराग्य उत्पन्न हो गया। उन्होंने भगवान के पास दीक्षा ग्रहण की और ज्ञान, ध्यान, तप द्वारा आत्मा को भावित करके उसी भव में मोक्ष गये।

—शतक 9, उ. 33

RISHABH-DATT AND DEVANANDA

Once when Bhagavan Mahavir arrived in Kshatriyakund, Rishabh-datt Brahmin and his wife Devananda came to the Samavasaran to pay homage. When she saw Bhagavan eyes of Devananda got wet with tears. Her arms swelled due to excess of joy and her armlets broke and fell. All body-hair danced with joy and due to upsurge of motherly affection she had a natural flow of milk in her breasts. She steadily stared at Bhagavan Mahavir.

Gautam Swami was sitting near Bhagavan and he saw all this. After the Brahmin couple left Gautam asked Bhagavan, "*Bhante!* Why is there ooze of milk from the breasts of this Brahmani Devananda?"

Bhagavan Mahavir replied – "O Gautam! Brahmani Devananda is my mother. I am Devananda's son. That is why out of the natural love for her son there is ooze of milk."

Rishabh-datt and Devananda listened to Bhagavan's sermon and got detached. They got initiated and enkindled their souls by study, meditation and unique austerities. They got liberated in that very birth.

—Shatak-9, lesson-33

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. तस्स णं उसभदत्तमाहणस्स देवाणंदा नामं माहणी होत्था, सुकुमालपाणि-पाया जाव पियदंसणा सुरूवा समणोवासिया अभिगयजीवाजीवा उवलद्धपुण्ण-पावा जाव विहरइ।

३. उस ऋषभदत्त ब्राह्मण की देवानन्दा नाम की ब्राह्मणी (धर्मपत्नी) थी। उसके हाथ-पैर सुकुमाल थे, यावत् उसका दर्शन भी प्रिय था। उसका रूप सुन्दर था। वह श्रमणोपासिका थी, जीव-अजीव आदि तत्त्वों की जानकार थी तथा पुण्य-पाप का मर्म समझने वाली थी यावत् विहरण करती थी।

3. That Brahmin Rishabh-datt had a wife named Devananda. Her limbs were delicate ... and so on up to... she was charming and beautiful. She was a devotee of *Shramans*, understood the fundamental entities including soul and matter, and very much aware of the basics about virtues and vices, ... and so on up to... She spent her life enkindling (*bhaavit*) her soul (with ascetic religion and austerities).

विवेचन : वैशाली के निकट कुण्डपुर नामक छोटा नगर था, जिसके दो उपनगर थे। पश्चिम दिशा में क्षत्रियकुण्ड जो क्षत्रियों का मुख्य केन्द्र था, वहाँ राजा सिद्धार्थ रहते थे। दूसरा पूर्व में ब्राह्मणकुण्ड, जहाँ ब्राह्मणों की अधिक संख्या थी।

इस वर्णन से ज्ञात होता है कि ऋषभदत्त पहले ब्राह्मण-संस्कृति का अनुगामी रहा होगा, साथ ही अपने समाज का मुखिया धनाढ्य भी था। वह चारों वेदों का ज्ञाता तथा अन्य अनेक ब्राह्मण-ग्रन्थों का विद्वान् था। किन्तु बाद में भगवान पार्श्वनाथ के सन्तानीय मुनियों के सम्पर्क से वह श्रमणोपासक बना। श्रमणधर्म का तत्त्वज्ञ हुआ।

Elaboration — Kundapur was a small township near Vaishali. It had two suburbs. The eastern suburb was the main center of *Kshatriyas* (the warrior clans) and was called Kshatriyakund. King Siddharth lived there. The western suburb had a larger population of Brahmins (the priestly clans) and was called Brahmankund.

The aforesaid description informs that originally Rishabh-datt must have been a follower of Brahmin culture. He was also rich and prominent in his society. He was a scholar of the four *Vedas* and many other Brahmin scriptures. But later he must have come in contact with the ascetic followers of Bhagavan Parshvanaath and embraced the *Shraman* religion. In due course he became a scholar of *Shraman* religion.

भगवान की सेवा में वन्दना-पर्युपासनादि के लिए जाने का निश्चय

DECISION TO PAY HOMAGE TO BHAGAVAN MAHAVIR

४. तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे। परिसा जाव पज्जुवासति।

४. उस काल और उस समय में (श्रमण भगवान महावीर) स्वामी वहाँ पधारे। समवसरण लगा। परिषद् यावत् पर्युपासना करने लगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

4. During that period of time Bhagavan Mahavir arrived there and the religious assembly started. People came out to pay homage and attend the discourse.

५. तए णं से उसभदत्ते माहणे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठ जाव हियए जेणेव देवाणंदा माहणी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता देवाणंदं माहणिं एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिए ! समणे भगवं महावीरे आदिगरे जाव सव्वण्णू सव्वदरिसी आगासगएणं चक्केणं जाव सुहंसुहेणं विहरमाणे जाव बहुसालए चेइए अहापडिरूवं जाव विहरइ। तं महाफलं खलु देवाणुप्पिए ! तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं नाम–गोयस्स वि सवणयाए किमंग पुण अभिगमण–वंदण–नमंसण–पडिपुच्छण–पज्जुवासणयाए ? एगस्स वि आरियस्स धम्मियस्स सुवयणस्स सवणयाए किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए ? तं गच्छामो णं देवाणुप्पिए ! समणं भगवं महावीरं वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो। एयं णं इहभवे य परभवे य हियाए सुहाए खमाए निस्सेसाए आणुगामियत्ताए भविस्सइ।

५. श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पदार्पण की बात को सुनकर वह ऋषभदत्त ब्राह्मण अत्यन्त हर्षित और सन्तुष्ट हुआ, हृदय में उल्लसित हुआ और देवानन्दा ब्राह्मणी के पास आकर इस प्रकार बोला–हे देवानुप्रिये ! धर्म की आदि करने वाले यावत् सर्वज्ञ सर्वदर्शी श्रमण भगवान महावीर आकाश में रहे हुए चक्र (भगवान के आगे आकाश में धर्मचक्र चलता था) से युक्त यावत् सुखपूर्वक विहार करते हुए यहाँ पधारे हैं, यावत् बहुशालक नामक चैत्य (उद्यान) में योग्य अवग्रह (स्थान आदि) ग्रहण करके विचरण करते हैं। हे देवानुप्रिये ! उन तथारूप अरिहन्त भगवान के नाम–गोत्र के श्रवण से भी महाफल प्राप्त होता है, तो उनके सम्मुख जाने, वन्दन–नमस्कार करने, प्रश्न पूछने और पर्युपासना करने आदि से होने वाले फल के विषय में तो कहना ही क्या ! (उनके) एक भी आर्य और धार्मिक सुवचन के श्रवण से महान् फल होता है, तो फिर विपुल अर्थ को ग्रहण करने से महाफल हो, इसमें तो कहना ही क्या है ! इसलिए हे देवानुप्रिये ! हम चलें और श्रमण भगवान महावीर को वन्दन–नमन करें यावत् उनकी पर्युपासना करें। यह कार्य हमारे लिए इस भव में तथा परभव में हित के लिए, सुख के लिए, क्षमता (–संगतता) के लिए, निःश्रेयस के लिए और आनुगामिकता (–शुभ अनुबन्ध) के लिए होगा।

5. On hearing about the arrival of Bhagavan Mahavir, Rishabh-datt was very happy ... and so on up to... filled with joy. He came to Brahmini Devananda and said — "O Beloved of gods! The propagator of the religious order ... and so on up to... all-knowing and all-seeing Shraman Bhagavan Mahavir endowed with the divine disc in the sky (*Tirthankar* is preceded by the airborne divine disc of religion) ... and so on up to... moving with comfort has arrived here ... and so on up to... has taken his lodge according to the ascetic code and settled down in Bahushalak Chaitya. O Beloved of gods! What to say of being able to go near him, pay homage to him, bow to him, ask questions to him, worship him, and avail of his company when mere hearing of the name and lineage of that

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Arihant Bhagavan (the Omniscient Lord) is highly meritorious! What to say of the benefits of listening to his complete sermon when hearing even a single pious word uttered by him is a great achievement! Therefore, O beloved of gods! It would be good for us to go there and pay homage to Shraman Bhagavan Mahavir. ... and so on up to... Let us go there to worship him and sit near him. This act of obeisance will prove to be beneficial, blissful, peace giving, and means of salvation for us in this, next and following births."

६. तए णं सा देवाणंदा माहणी उसभदत्तेणं माहणेणं एवं वुत्ता समाणी हट्ठ जाव हियया करयल जाव कट्टु उसभदत्तस्स माहणस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ।

६. तत्पश्चात् ऋषभदत्त ब्राह्मण से इस प्रकार का कथन सुनकर देवानन्दा ब्राह्मणी हृदय में अत्यन्त हर्षित यावत् उल्लसित हुई और उसने दोनों हाथ जोड़कर मस्तक पर अंजलि करके ऋषभदत्त ब्राह्मण के कथन को विनयपूर्वक स्वीकार किया।

6. Hearing this from Brahman Rishabh-datt, Brahmani Devananda was very happy ... and so on up to... filled with joy. She raised her joined palms to her forehead and humbly accepted his suggestion.

ब्राह्मण-दम्पति की दर्शनवन्दनार्थ जाने की तैयारी PREPARATIONS TO GO TO PAY HOMAGE

७. तए णं से उसभदत्ते माहणे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ कोडुंबियपुरिसे सद्दावेत्ता एवं वयासी– खिप्पामेव भो ! देवाणुप्पिया ! लहुकरणजुत्त–जोइय–समखुर–वालिधाण–समलिहियसिंगएहिं जंबूणयामयकलावजुत्तपइविसिट्ठएहिं रययामयघंटसुत्तरज्जुयवरकंचणनत्थपग्गहोग्गहियएहिं नीलुप्पल कयामेलएहिं पवरगोणजुवाणएहिं नाणामणिरयण घंटियाजालपरिगयं सुजायजुगजोत्तरज्जुयजुगपसत्थ सुविरचितनिम्मियं पवरलक्खणोववेयं धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तामेव उवट्ठवेह, उवट्ठवित्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह।

७. तत्पश्चात् उस ऋषभदत्त ब्राह्मण ने अपने कौटुम्बिक पुरुषों (सेवकों) को बुलाया और इस प्रकार कहा–देवानुप्रियो ! शीघ्र चलने वाले, प्रशस्त, सदृशरूप वाले, समान खुर और पूँछ वाले, एक समान सींग वाले, स्वर्ण-निर्मित कलापों (आभूषणों) से युक्त, उत्तम गति (चाल) वाले, चाँदी की घंटियों से युक्त, स्वर्णमय नाथ (नासारज्जु) द्वारा बाँधे हुए, नील कमल की कलंगी वाले दो उत्तम युवा बैलों से युक्त, अनेक प्रकार की मणिमय घंटियों के समूह से व्याप्त, उत्तम काष्ठमय जुए (धूसर) और जोत की उत्तम दो डोरियों से युक्त, श्रेष्ठ लक्षणों से युक्त, धार्मिक श्रेष्ठ यान (रथ) शीघ्र तैयार करके यहाँ उपस्थित करो और इस आज्ञा को वापस करो अर्थात् इस आज्ञा का पालन करके मुझे सूचना करो।

7. Then Brahman Rishabh-datt called his attendants (*kautumbik purush*) and said — "Beloved of gods! Prepare and bring soon the best religious carriage of superlative attributes, which is embellished with

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

bunches of a variety of gem-studded bells, and equipped with a yoke of best quality wood and two sets of quality bridle and reigns; and harnessed to which are two fine young bullocks, which are fast and graceful and look-alike having similar hooves, tails and horns. They must have graceful gait and be embellished with golden ornaments, silver bells, golden nose-rope, and plume made of blue lotus. Follow this order and report me back."

८. तए णं ते कोडुंबियपुरिसा उसभदत्तेणं माहणेणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठ जाव हियया करयल० एवं वयासी–सामी ! 'तह' त्ताणाए विणएणं वयणं जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव लहुकरणजुत्त० जाव धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तामेव उवट्ठवेत्ता जाव तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति।

८. जब ऋषभदत्त ब्राह्मण ने उन कौटम्बिक पुरुषों को इस प्रकार कहा, तब वे उसे सुनकर अत्यन्त हर्षित यावत् हृदय में आनन्दित हुए और मस्तक पर अंजलि करके इस प्रकार कहा– "स्वामिन् ! आपकी यह आज्ञा हमें मान्य है"। ऐसा कहकर विनयपूर्वक उनके वचनों को स्वीकार किया और (ऋषभदत्त की आज्ञानुसार) शीघ्र ही द्रुतगामी दो बैलों से युक्त यावत् श्रेष्ठ धार्मिक रथ को तैयार करके उपस्थित किया; यावत् उनकी आज्ञा के पालन की सूचना दी।

8. When Brahman Rishabh-datt said thus to his attendants they were very happy ... and so on up to... filled with joy and raising their joined palms to their heads they said — "Sir! We will do as you say." With these words they humbly accepted the order and soon prepared and brought the best religious carriage ... and so on up to... reported about completion of the mission.

९. तए णं से उसभदत्ते माहणे ण्हाए जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे साओ गिहाओ पडिनिक्खमइ, साओ गिहाओ पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला, जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढे।

९. तदनन्तर वह ऋषभदत्त ब्राह्मण स्नान यावत् अल्प भार (कम वजन के) और महामूल्य वाले आभूषणों से अपने शरीर को अलंकृत किये हुए अपने घर से बाहर निकला। घर से बाहर निकलकर जहाँ बाहरी उपस्थानशाला थी और जहाँ श्रेष्ठ धार्मिक रथ था, वहाँ आया। आकर उस रथ पर आरूढ़ हुआ।

9. After that Brahman Rishabh-datt took his bath ... and so on up to... adorned his body with ornaments that were light in weight and high in value. He then came out of his residence, proceeded to the outer courtyard where the carriage was parked. He then boarded the carriage.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. तए णं सा देवाणंदा माहणी ण्हाया जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा बहूहिं खुज्जाहिं चिलाइयाहिं जाव अंतेउराओ निग्गच्छइ; अंतेउराओ निग्गच्छित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला, जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता जाव धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढा।

१०. तब देवानन्दा ब्राह्मणी ने भी (अन्तःपुर में) स्नान किया, यावत् अल्प भार वाले महामूल्य आभूषणों से शरीर को सुशोभित किया। फिर बहुत-सी कुब्जा दासियों तथा चिलात देश की दासियों के साथ यावत् अन्तःपुर से निकली। अन्तःपुर से निकलकर जहाँ बाहर की उपस्थानशाला थी और जहाँ श्रेष्ठ धार्मिक रथ खड़ा था, वहाँ आई। उस श्रेष्ठ धार्मिक रथ पर आरूढ़ हुई।

10. Brahmani Devananda (in the inner quarters) also took her bath ... and so on up to... adorned her body with ornaments that were light in weight and high in value. She then came out of his residence accompanied by many maids including the hunchbacked ones and those from Chilat country. She proceeded to the outer courtyard where the carriage was parked. She then boarded the carriage.

११. तए णं से उसभदत्ते माहणे देवाणंदाए माहणीए सद्धिं धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढे समाणे णियगपरियालसंपरिवुडे माहणकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव बहुसालए चेइए तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता छत्तादीए तित्थकरातिसए पासइ, पासित्ता धम्मियं जाणप्पवरं ठवेइ, ठवेत्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छइ, तं जहा—सचित्ताणं दव्वाणं विओसरणयाए एवं जहा बिइयसए (स. २, उ. ५, सु. १४) जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ।

११. इसके पश्चात् वह ऋषभदत्त ब्राह्मण देवानन्दा ब्राह्मणी के साथ श्रेष्ठ धार्मिक रथ पर चढ़ा हुआ अपने परिवार से परिवृत्त होकर ब्राह्मणकुण्डग्राम नामक नगर के मध्य में होता हुआ निकला और बहुशालक नामक उद्यान में आया। वहाँ तीर्थंकर भगवान के छत्र आदि अतिशयों को देखा। देखते ही उसने श्रेष्ठ धार्मिक रथ को ठहराया और उस श्रेष्ठ धर्म-रथ से नीचे उतरा। रथ से उतरकर वह श्रमण भगवान महावीर के पास पाँच प्रकार के अभिगमपूर्वक गया। वे पाँच अभिगम इस प्रकार हैं—(१) सचित्त द्रव्यों का त्याग करना इत्यादि; द्वितीय शतक (के पंचम उद्देशक, सू. १४) में कहे अनुसार यावत् तीन प्रकार की पर्युपासना से उपासना करने लगा।

11. Then that Brahman Rishabh-datt along with Brahmani Devananda riding the best religious carriage and surrounded by his family crossed the city named Brahman Kundagram and arrived at Bahushalak garden. There he observed the divine canopy and other divine signs of a *Tirthankar*. He then stopped his best religious carriage and alighted from it. After getting down from the carriage he observed the five codes of courtesy meant for a religious assembly (*abhigam*) and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

went before Bhagavan Mahavir. The five codes being — (1) discarding of things infested with living organisms (*sachit*) etc. as mentioned in the second chapter (aphorism 14 of the fifth lesson) ... and so on up to... commenced his threefold worship — physical, vocal, and mental.

१२. तए णं सा देवाणंदा माहणी धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता० बहुयाहिं खुज्जाहिं जाव महत्तरगवंदपरिक्खित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छइ, तं जहा– सचित्ताणं दव्वाणं विओसरणयाए १ अचित्ताणं दव्वाणं अविमोयणयाए २ विणयोणयाए गायलट्ठीए ३ चक्खुफासे अंजलिपग्गहेणं ४ मणस्स एगत्तीभावकरणेणं ५। जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करेत्ता वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता उसभदत्तं माहणं पुरओ कट्टु ठिया चेव सपरिवारा सुस्सूसमाणी णमंसमाणी अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा पज्जुवासइ।

१२. तदनन्तर वह देवानन्दा ब्राह्मणी भी धार्मिक उत्तम रथ से नीचे उतरी और अपनी बहुत-सी दासियों आदि यावत् महत्तरिका-वृन्द से परिवृत होकर श्रमण भगवान महावीर के सम्मुख पंचविध अभिगमपूर्वक जाने लगी। वे पाँच अभिगम इस प्रकार हैं–(१) सचित्त द्रव्यों का त्याग करना, (२) अचित्त द्रव्यों का त्याग न करना, अर्थात् वस्त्र आदि को व्यवस्थित ढंग से धारण करना, (३) विनय से शरीर को नीचे झुकाना, (४) भगवान के दृष्टिगोचर होते ही दोनों हाथ जोड़ना, (५) मन को एकाग्र करना। इन पाँच अभिग्रहों द्वारा जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ वह आई और उसने भगवान को तीन बार आदक्षिण (दाहिनी ओर से) प्रदक्षिणा की, फिर वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार के बाद ऋषभदत्त ब्राह्मण को आगे करके अपने परिवार सहित शुश्रूषा करती हुई, नमन करती हुई, सम्मुख खड़ी रहकर विनयपूर्वक हाथ जोड़कर उपासना करने लगी।

12. Brahmani Devananda also alighted from the best religious carriage and surrounded by her numerous maids and attendants approached Shraman Bhagavan Mahavir observing the five codes of courtesy meant for a religious assembly (*abhigam*). The five codes being — (1) to discard things infested with living organisms (*sachit*; such as flowers, beetle-leaves etc.), (2) to carefully retain things free of living organisms (*achit*), (3) to place a one-piece shawl (*uttariya*) on shoulders, (4) to join palms the instant the senior ascetics are seen, and (5) to focus attention. Concluding the five *abhigams* she came near Shraman Bhagavan Mahavir and starting from right (*aadakshin*) went around *Bhagavan* three times and paid homage and obeisance. She than stood with her family, facing *Bhagavan*, behind her husband, and commenced worship carefully listening, bowing her head, and humbly joining her palms.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : पाँच अभिगम–त्यागी महापुरुषों के पास जाने की एक विशिष्ट मर्यादा को शास्त्रीय परिभाषा में 'अभिगम' कहा जाता है। वे पाँच प्रकार के हैं परन्तु स्त्री और पुरुष के लिए तीसरे अभिगम में अन्तर है। श्रावक के लिए है एक पट वाले दुपट्टे का उत्तरासंग करना, जबकि श्राविका के लिए है विनय से शरीर को झुकाना। साधु–साध्वियों के पास जाने के लिए इन पाँच अभिगमों का पालन करना आवश्यक है।

Elaboration — Five Abhigams – A special set of codes observed while approaching ascetics and other great renouncers is called *abhigam*. They are five in number. Of these the third one has variations for male and female. A man has to set his one-piece scarf on his shoulders in a specific way whereas a woman has just to humbly bow down. While approaching male or female ascetics it is mandatory to observe this set of five codes.

देवानन्दा की मातृवत्सलता DEVANANDA'S MOTHERLY AFFECTION

१३. तए णं सा देवाणंदा माहणी आगयपण्हया पप्फुयलोयणा संवरियवलयबाहा कंचुयपरिक्खित्तिया धाराहयकलंबगं पिव समूससियरोमकूवा समणं भगवं महावीरं अणिमिसाए दिट्ठीए देहमाणी देहमाणी चिट्ठइ।

१३. तदनन्तर उस देवानन्दा ब्राह्मणी के पाना चढ़ा (अर्थात् भगवान को देखने मात्र वात्सल्य के कारण उसके स्तनों में दूध आ गया)। उसके नेत्र हर्षाश्रुओं से भीग गये। हर्ष से प्रफुल्लित होती हुई उसकी बाहों को वलयों ने रोक लिया। (अर्थात् उसकी भुजाओं के कड़े–बाजूबंद तंग हो गये)। हर्षातिरेक से उसकी कञ्चुकी (कांचली) विस्तीर्ण हो गई। मेघ की धारा से विकसित कदम्ब–पुष्प के समान उसका शरीर रोमाञ्चित हो गया (शरीर का रोम–रोम हर्ष से नाच उठा)। फिर वह श्रमण भगवान महावीर को अनिमेष दृष्टि से (टकटकी लगाकर) देखती रही।

13. After that Brahmani Devananda had a natural flow of milk in her breasts (by looking at Bhagavan Mahavir there was a spontaneous upsurge of motherly affection in her mind). Her eyes were filled with tears of joy. Her arms swelled due to excess of joy tightening her armlets. This upsurge of joy stretched her brassieres. Like the bloom on the flowers of Kadamb tree due to rain drops her body was thrilled (all body-hair danced with joy). And she steadily stared at Bhagavan Mahavir without even a wink.

१४. [प्र.] 'भंते !' त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–किं णं भंते ! एसा देवाणंदा माहणी आगयपण्हया तं चेव जाव रोमकूवा देवाणुप्पियं अणिमिसाए दिट्ठीए देहमाणी देहमाणी चिट्ठइ ?

[उ.] 'गोयमा !' दि समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–एवं खलु गोयमा ! देवाणंदा माहणी मम अम्मगा, अहं णं देवाणंदाए माहणीए अत्तए। तेणं एसा देवाणंदा माहणी तेणं पुव्वपुत्तसिणेहाणुरागेणं आगयपण्हया जाव समूससियरोमकूवा ममं अणिमिसाए दिट्ठीए पेहमाणी पेहमाणी चिट्ठइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४. [प्र.] (यह देखकर) भगवान गौतम ने, 'भगवन् !' यों कहकर श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया। उसके पश्चात् इस प्रकार [प्रश्न] पूछा-भन्ते ! इस देवानन्दा ब्राह्मणी के स्तनों से दूध कैसे निकल आया? यावत् इसे रोमांच क्यों हो आया? और यह आप देवानुप्रिय को अनिमेष दृष्टि से देखती हुई क्यों खड़ी है?

14. [Q.] (Observing this) Bhagavan Gautam exclaimed — "*Bhante!*" Uttering thus he paid homage and obeisance. After that he asked — "'*Bhante!* Why is there ooze of milk from the breasts of this Brahmani Devananda? ... and so on up to... Why is she so thrilled? And why she stands steadily staring at you, O Beloved of gods?

[उ.] 'गौतम !' यों कहकर श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने भगवान गौतम से इस प्रकार कहा-हे गौतम ! देवानन्दा ब्राह्मणी मेरी माता है। मैं देवानन्दा का आत्मज (पुत्र) हूँ। इसलिए देवानन्दा को पूर्व-पुत्रस्नेहानुरागवश दूध आ गया, यावत् रोमाञ्च हुआ और यह मुझे अनिमेष दृष्टि से देख रही है।

[Ans.] "Gautam!" Addressing thus Shraman Bhagavan Mahavir replied to Bhagavan Gautam — "O Gautam! Brahmani Devananda is my mother. I am Devananda's son. That is why out of the natural love for her ex-son there is ooze of milk ... and so on up to... She is so thrilled and stands steadily staring at me.

विवेचन : कल्पसूत्र आदि के अनुसार भगवान महावीर का जीव दशवें स्वर्ग से च्यवकर दक्षिण ब्राह्मणकुण्ड के कोडाल गोत्रीय ऋषभदत्त ब्राह्मण की पत्नी देवानन्दा के गर्भ में आये। देवानन्दा ने चौदह स्वप्न देखे। बयासी रात्रि तक भगवान का जीव देवानन्दा के गर्भ में रहा। तदनन्तर त्रिशला क्षत्रियाणी के गर्भ में साहरण किया गया। अतः देवानन्दा त्रिशला माता की भाँति ही भगवान महावीर की माता थी। इस वर्णन से पता चलता है। गर्भ से हरण की यह घटना अब तक अज्ञात ही थी। भगवान ने गौतम के साथ प्रकट की।

Elaboration — According to *Kalpa Sutra* and other texts, the soul that was to be Bhagavan Mahavir descended from the tenth heaven and came in the womb of Devananda, the wife of Brahman Rishabh-datt of Kodal clan living in southern Brahman Kundagram. Devananda then saw fourteen dreams. The soul of Bhagavan Mahavir remained in the womb of Devananda for eighty-two nights. After that the fetus was transferred into the womb of Trishala Kshatriyani. Thus Devananda was also the mother of Bhagavan Mahavir just like mother Trishala. The aforesaid description informs that till that moment the incident of fetus transfer was not known. It was Bhagavan Mahavir who revealed it to Gautam.

ऋषभदत्त द्वारा प्रव्रज्या ग्रहण INITIATION OF RISHABH-DATT

१५. तए णं समणे भगवं महावीरे उसभदत्तस्स माहणस्स देवाणंदाए य माहणीए तीसे य महतिमहालियाए इसिपरिसाए जाव परिसा पडिगया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने ऋषभदत्त ब्राह्मण और देवानन्दा ब्राह्मणी तथा उस अत्यन्त बड़ी ऋषि-परिषद् (ज्ञानी साधकों की परिषद्) आदि को धर्मकथा कही; यावत् परिषद् वापस चली गई।

15. After this Shraman Bhagavan Mahavir gave his sermon to Brahman Rishabh-datt, Brahmani Devananda and the large gathering ... and so on up to... the assembly dispersed.

१६. तए णं से उसभदत्ते माहणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठाए उट्ठेत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आया० जाव नमंसित्ता एवं वयासी-'एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते !' जहा खंदओ (स. २, उ. १, सु. ३४) जाव 'से जहेयं तुब्भे वंदह' त्ति कट्टु उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमइ, उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमित्ता सयमेव आभरण-मल्लालंकारं ओमुयइ, सयमेव आभरण-मल्लालंकारं ओमुइत्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं जाव नमंसित्ता एवं वयासी-आलित्ते णं भंते ! लोए, पलित्ते णं भंते ! लोए, एवं जहा खंदओ (स. २, उ. १, सु. ३४) तहेव पव्वइओ जाव सामाइयमाइयाइं इक्कारस अंगाइं अहिज्जइ जाव बहूहिं चउत्थ-छट्ठ-ऽट्ठम-दसम जाव विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं सामण्णपरियायं पाउणइ, पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेइ, मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ, सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावो जाव तमट्ठं आराहेइ, २ जाव सव्वदुक्खप्पहीणे।

१६. इसके पश्चात् वह ऋषभदत्त ब्राह्मण, श्रमण भगवान महावीर के पास धर्म-श्रवण कर और उसे हृदय में धारण करके हर्षित और सन्तुष्ट होकर खड़ा हुआ। खड़े होकर उसने श्रमण भगवान महावीर की तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा की, यावत् वन्दन-नमन करके इस प्रकार निवेदन किया-'भगवन् ! आपने कहा, वैसा ही है, आपका कथन यथार्थ है भगवन् !' इत्यादि (दूसरे शतक के प्रथम उद्देशक, सू. ३४ में) स्कन्दक तापस-प्रकरण में कहे अनुसार; यावत् जो आप कहते हैं, वह उसी प्रकार है।' इस प्रकार शेष वर्णन करना चाहिए। तत्पश्चात् वह (ऋषभदत्त ब्राह्मण) ईशानकोण (उत्तर-पूर्व दिशा भाग) में गया। वहाँ जाकर उसने स्वयमेव आभूषण, माला और अलंकार उतार दिये। फिर स्वयमेव पंचमुष्टि केशलोच किया और श्रमण भगवान महावीर के पास आया। भगवान की तीन बार प्रदक्षिणा की, यावत् नमस्कार करके इस प्रकार कहा-भगवन् ! (जरा और मरण से) यह लोक चारों ओर से प्रज्वलित हो रहा है, भगवन् ! यह लोक चारों ओर से अत्यन्त जल रहा है, इत्यादि कहकर (द्वितीय शतक, प्रथम उद्देशक, सू. ३४ में) जिस प्रकार स्कन्दक तापस की प्रव्रज्या का प्रकरण है, तदनुसार (ऋषभदत्त ब्राह्मण ने) प्रव्रज्या ग्रहण की, यावत् सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया, यावत् बहुत-से उपवास (चतुर्थभक्त), बेला (षष्ठभक्त), तेला (अष्टमभक्त), चौला (दशमभक्त) इत्यादि विचित्र तपःकर्मों से आत्मा को भावित करते हुए, बहुत वर्षों तक श्रामण्य-पर्याय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(श्रमण–दीक्षा) का पालन किया और (अन्त में) एक मास की संल्लेखना से आत्मा को संलिखित करके साठ भक्तों का अनशन से छेदन किया और ऐसा करके जिस उद्देश्य से नग्नभाव (निर्ग्रन्थत्व–संयम) स्वीकार किया, यावत् उस निर्वाण रूप अर्थ की आराधना कर ली, यावत् वे सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत्त एवं सर्वदुःखों से रहित हुए।

16. On listening to and understanding the religious discourse given by Bhagavan Mahavir, that Brahman Rishabh-datt became happy, contented... and so on up to... his heart bloomed with bliss. He got up, went around Shraman Bhagavan Mahavir three times clockwise ... and so on up to... paid homage and obeisance and said — "*Bhante!* It is as you say. *Bhante!* It is the ultimate reality." Quote from the Skandak story (Chapter-2, Lesson-1, Aph. 34) ... and so on up to... "*Bhante!* It is exactly as you have stated." Then he (Brahman Rishabh-datt) went in the northeast direction (*Ishan Kone*) and discarded his ornaments, garlands and adornments. The five-fist pulling out of hair (*panchamushti kesh-locha*) followed this. He then returned near Shraman Bhagavan Mahavir, went around him three times... and so on up to... paid homage and said — "*Bhante!* This world is ablaze. *Bhante!* This world is being consumed by fire. *Bhante!* This world is ablaze and is being consumed by the fire of old age and death. etc." Saying thus ... and so on up to... (as mentioned in Chapter-2, Lesson-1) he (Brahman Rishabh-datt) got initiated ... and so on up to... studied the eleven limbs (*Anga*) of the canon ... and so on up to... he enkindled his soul by observing unique austerities including one day, two days, three days and four days fasts, spent many years as an ascetic and in the end performed the ultimate vow (*Sallekhana*) for one month to accomplish the purpose (liberation) for which he got initiated ... and so on up to... he got perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), liberated (*mukta*), free of cyclic rebirth (*parinivrit*), and ended all miseries.

विवेचन : प्रस्तुत सूत्र में ऋषभदत्त का प्रव्रज्या ग्रहण वर्णन संक्षेप में है। इस सन्दर्भ में उसका वैराग्य प्राप्त होना, अपनी पत्नी व परिवारजनों से आज्ञा–प्राप्ति, दीक्षाभिनिष्क्रमण शास्त्राध्ययन, तपश्चरण और अन्त में संल्लेखना संथारापूर्वक, समाधिमरण तक का समग्र वर्णन जान लेना चाहिए।

Elaboration — Here the description of Brahman Rishabh-datt's initiation has been given in brief. The details starting from the moment of detachment to meditational-death (*samadhi maran*) covering incidents including seeking permission from his wife and family, initiation, studies, austerities and taking the ultimate vow are same as mentioned about Skandak Parivrajak in Chapter-2, Lesson-1.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७. तए णं सा देवाणंदा माहणी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा० समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं जाव नमंसित्ता एवं वयासी—एवमेयं भंते! तहमेयं भंते, एवं जहा उसभदत्तो (सु. १६) तहेव जाव धम्ममाइक्खियं।

१७. तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर स्वामी से धर्म सुनकर एवं हृदयंगम करके वह देवानन्दा ब्राह्मणी अत्यन्त हृष्ट एवं तुष्ट (आनन्दित एवं सन्तुष्ट) हुई और श्रमण भगवान महावीर की तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा करके यावत् नमस्कार करके इस प्रकार बोली--भगवन् ! आपने जैसा कहा है, वैसा ही है, भगवन् ! आपका कथन यथार्थ है। इस प्रकार जैसे ऋषभदत्त ने (सू. १६ में) प्रव्रज्या ग्रहण करने के लिए निवेदन किया था, वैसे ही विरक्त देवानन्दा ने भी निवेदन किया; यावत् 'धर्म कहा'; यहाँ तक कहना चाहिए।

17. Listening to and understanding the religious discourse given by Bhagavan Mahavir, that Brahmani Devananda became happy, contented... and so on up to... her heart bloomed with bliss. She got up, went around Shraman Bhagavan Mahavir three times clockwise ... and so on up to... paid homage and obeisance and said — "*Bhante!* It is as you say. *Bhante!* It is the ultimate reality." This way, like Brahman Rishabh-datt had requested for initiation (Aphorism 16), detached Brahmani Devananda too requested for initiation. ... and so on up to... 'gave the sermon'.

१८. तए णं समणे भगवं महावीरे देवाणंदं माहणिं सयमेव पव्वावेइ, सयमेव मुंडावेइ, सयमेव अज्जचंदणाए अज्जाए सीसिणित्ताए दलयइ।

१८. तब श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने देवानन्दा ब्राह्मणी को स्वयमेव प्रव्रजित कराया, स्वयमेव मुण्डित कराया और स्वयमेव आर्यचन्दना आर्या को शिष्यारूप में सौंप दिया।

18. Then Shraman Bhagavan Mahavir himself got her initiated and tonsured and entrusted her as a disciple to Aryaa Chandana.

१९. तए णं सा अज्जचंदणा अज्जा देवाणंदं माहणिं सयमेव पव्वावेइ, सयमेव मुंडावेइ, सयमेव सेहावेइ, एवं जहेव उसभदत्तो तहेव अज्जचंदणाए अज्जाए इमं एयारूवं धम्मियं उवदेसं सम्मं संपडिवज्जइ—तमाणाए तहा गच्छइ जाव संजमेणं संजमइ।

१९. तत्पश्चात् आर्यचन्दना ने आर्या देवानन्दा ब्राह्मणी को स्वयं प्रव्रजित किया, स्वयमेव मुण्डित किया और स्वयमेव उसे (संयम की) शिक्षा दी। देवानन्दा (नवदीक्षित साध्वी) ने भी ऋषभदत्त के समान इस प्रकार के धार्मिक (श्रमणधर्मपालन सम्बन्धी) उपदेश को सम्यक् रूप से स्वीकार किया और वह उनकी (आर्या चन्दनबाला की) आज्ञानुसार चलने लगी, यावत् संयम (-पालन) में सम्यक् प्रवृत्ति करने लगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

19. After that Aryaa Chandana herself initiated, tonsured and taught her (ascetic discipline). Like Brahman Rishabh-datt, Devananda (newly initiated ascetic) too accepted the religious discourse (related to ascetic conduct) and followed the instructions (of Aryaa Chandana) ... and so on up to... sincerely indulged in ascetic-discipline.

२०. तए णं सा देवाणंदा अज्जा अज्जचंदणाए अज्जाए अंतियं सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ। सेसं तं चेव जाव सव्वदुक्खप्पहीणा।

२०. तदनन्तर आर्या देवानन्दा ने आर्य चन्दना से सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। विविध प्रकार के तप किये और अन्त में संल्लेखना-संथारा कर वह देवानन्दा आर्या सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत्त और समस्त दुःखों से रहित हुई।

20. Aryaa Devananda studied the eleven limbs (*Anga*) of the canon including *Samayik* under the tutelage of Aryaa Chandana. She observed a variety of austerities and in the end, after taking the ultimate vow, Aryaa Devananda got perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), liberated (*mukta*), free of cyclic rebirth (*parinivrit*), and ended all miseries.

जमालि-चरित

STORY OF JAMALI

क्षत्रियकुमार जमालि PRINCE JAMALI

२१. तस्स णं माहणकुंडग्गामस्स नगरस्स पच्चत्थिमेणं, एत्थ णं खत्तियकुंडग्गामे नामं नगरे होत्था। वण्णओ।

२१. उस ब्राह्मणकुण्डग्राम नामक नगर से पश्चिम दिशा में क्षत्रियकुण्डग्राम नामक एक नगर था। उसका यहाँ वर्णन समझ लेना चाहिए।

21. To the west of that Brahman Kundagram there was a town called Kshatriya Kundagram. Description (as in *Aupapatik Sutra*).

२२. तत्थ णं खत्तियकुंडग्गामे नयरे जमाली नामं खत्तियकुमारे परिवसइ, अड्ढे दित्ते जाव अपरिभूए उप्पिं पासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं बत्तीसतिबद्धेहिं नाडएहिंवरतरुणीसंपउत्तेहिं उवनच्चिज्जमाणे उवनच्चिज्जमाणे उवगिज्जमाणे उवगिज्जमाणे उवलालिज्जमाणे उवलालिज्जमाणे पाउस-वासारत्त-सरय-हेमंत-वसंत-गिम्हपज्जंते छप्पि उऊ जहाविभवेणं माणेमाणे, कालं गालेमाणे इट्ठे सद्द-फरिस-रस-रूव-गंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुभवमाणे विहरइ।

२२. उस क्षत्रियकुण्डग्राम नामक नगर में जमालि नाम का क्षत्रियकुमार रहता था। वह आढ्य (समृद्धिशाली), दीप्त (तेजस्वी) यावत् अपरिभूत (प्रभावशाली) था। उसके ऊँचे पुरसातों में मृदंग वाद्यों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की ध्वनि होती रहती थी, बत्तीस प्रकार के नाटकों के अभिनय और नृत्य होते रहते थे, अनेक प्रकार की सुन्दर तरुणियों द्वारा नृत्य और गुणगान (गायन) बार-बार किये जाते थे, उसकी प्रशंसा से भवन गुंजायमान होता रहता था, खुशियाँ मनाई जाती रहती थीं, ऐसे वैभव व सुखमय उच्च श्रेष्ठ प्रासाद-भवन में प्रावृट् (पावस), वर्षा, शरद, हेमन्त, वसन्त और ग्रीष्म; इन छह ऋतुओं में आनन्द (उत्सव) मनाता हुआ, समय बिताता हुआ, मनुष्य-सम्बन्धी पाँच प्रकार के इष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गन्ध वाले कामभोगों का अनुभव करता हुआ रहता था।

22. In that Kshatriya Kundagram town lived a *kshatriya* (belonging to the warrior clans) youth named Jamali. He was very rich (*aadhya*), opulent (*deept*), famous ... and so on up to... insuperable (*aparibhoot*). In his towering mansion *Mridangas* (a type of drums) were played all the time; thirty-two varieties of dances and dramas were regularly performed; and many beautiful young damsels gave dance and music performances from time to time. The building reverberated with eulogies in his praise and celebrations of joy. He lived in such grand and comfortable, tall and exclusive mansion spending his time enjoying amply during all the six seasons, namely *Pravrat* (monsoon), *Varsha* (monsoon), *Sharad* (autumn), *Hemant* (cold), *Vasant* (spring) and *Grishma* (summer), and experiencing and enjoying five kinds of coveted pleasurable human experiences gained through the senses of hearing, touch, taste, appearance and smell.

विवेचन : क्षत्रियकुण्डपुर निवासी धनाढ्य क्षत्रियकुमार जमालि भगवान महावीर की बड़ी बहन सुदर्शना का पुत्र था। भगवान की पुत्री प्रियदर्शना के साथ उसका विवाह हुआ था। *(आवश्यक मलयगिरि वृत्ति, पत्र ४०५)*

Elaboration — Affluent *Kshatriya* young man Jamali of Kshatriya Kundapur was the son of Sudarshana, the elder sister of Bhagavan Mahavir. He got married to *Bhagavan*'s daughter Priyadarshana. (*Malayagiri Commentary of Avashyak Sutra*, leaf 405)

दर्शन-वन्दनादि के लिए गमन GOING TO PAY HOMAGE

२३. तए णं खत्तियकुंडग्गामे नगरे सिंघाडग-तिय-चउक्क-चच्चर जाव बहुजणसद्दे इ वा जहा उववाइए जाव एवं पण्णवेइ, एवं परूवेइ-एवं खलु देवाणुप्पिया ! समणे भगवं महावीरे आइगरे जाव सव्वण्णू सव्वदरिसी माहणकुंडग्गामस्स नगरस्स बहिया बहुसालए चेइए अहापडिरूवं जाव विहरइ। तं महप्फलं खलु देवाणुप्पिया ! तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं जहा उववाइए जाव एगाभिमुहे खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छंति, निग्गच्छित्ता जेणेव माहणकुंडग्गामे नगरे जेणेव बहुसालए चेइए एवं जहा उववाइए जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३. उस दिन क्षत्रियकुण्डग्राम नामक नगर में शृंगाटक, त्रिक, चतुष्क और चौराहोत्वर यावत् महापथ पर बहुत-से लोगों का कोलाहल हो रहा था, इत्यादि सारा वर्णन औपपातिकसूत्रानुसार जानना चाहिए; यावत् बहुत-से लोग परस्पर एक-दूसरे से इस प्रकार कह रहे थे, यावत् बता रहे थे कि 'देवानुप्रियो ! आदिकर (धर्म-तीर्थ की आदि करने वाले) यावत् सर्वज्ञ, सर्वदर्शी श्रमण भगवान महावीर, इस ब्राह्मणकुण्डग्राम नगर के बाहर बहुशाल नामक उद्यान (चैत्य) में यथायोग्य अवग्रह ग्रहण करके यावत् विचरते हैं। अतः हे देवानुप्रियो ! तथारूप अरिहन्त भगवान के नाम, गोत्र के श्रवण-मात्र से महान् फल होता है; (तो उनके दर्शन-वंदन-पर्युपासना का तो कहना ही क्या?) इत्यादि वर्णन औपपातिकसूत्रानुसार जान लेना चाहिए, यावत् वह जनसमूह तीन प्रकार की (शरीर से नमन, वचन से स्तुति, मन से भक्ति उल्लासपूर्वक) पर्युपासना करता है।

23. During that period of time a large number of people gathered and contributed to the uproar at public places like triangular courtyards (*shringatak*), crossings of three, four and more paths ... and so on up to... and highways of Kshatriya Kundagram city. Mention all these details according to *Aupapatik Sutra*. ... and so on up to... Many were asking questions from others, and many were informing without being asked to — "Beloved of gods! Shraman Bhagavan Mahavir who is the first propounder of the *shrut-dharma* (Jainism) of his time (*aaigare or aadikar*); — and so on up to — the aspirant of and destined to attain the state of ultimate perfection (*Siddha gai or Siddha gati*) has arrived at Bahushal garden outside the city of Brahman Kundagram. He has taken his lodge according to the ascetic code and has settled down. "Beloved of gods! This is highly beneficial for us. (What to say of being able to go near him, pay homage to him, bow to him, ask questions to him, worship him, and avail of his company when —) mere hearing of his name and lineage is highly meritorious. This detailed description should be quoted from *Aupapatik sutra*. ... and so on up to... large group of people commenced the three-way worship (bodily by bowing, vocally by eulogizing and mentally by joyful submission).

२४. तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स तं महया जणसद्दं वा जाव जणसन्निवायं वा सुणमाणस्स वा पासमाणस्स वा अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-किं णं अज्ज खत्तियकुंडग्गामे नगरे इंदमहे इ वा, खंदमहे इ वा, मुगुंदमहे इ वा, नागमहे इ वा, जक्खमहे इ वा, भूयमहे इ वा, कूवमहे इ वा, तडागमहे इ वा, नइमहे इ वा, दहमहे इ वा, पव्वयमहे इ वा, रुक्खमहे इ वा, चेइयमहे इ वा, थूभमहे इ वा, जं णं एए बहवे उग्गा भोगा राइन्ना इक्खागा णाया कोरव्वा खत्तिया खत्तियपुत्ता भडा भडपुत्ता सेणावई २ पसत्थारो २ लेच्छई २ माहणा २ इब्भा २ जहा उववाइए जाव सत्थवाहप्पभिइओ ण्हाया कयबलिकम्मा जहा उववाइए जाव निग्गच्छंति ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भगवान के दर्शन के लिए जाता जमालि

जमालि द्वारा भावपूर्वक प्रभु प्रवचन श्रवण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 20

Illustration No. 20

क्षत्रिय कुमार जमालि

एक बार भगवान महावीर वैशाली नगर के बहुशालक उद्यान में पधारे। उस नगरी में जमालि नामक एक क्षत्रिय कुमार रहता था। जब उसे भगवान के पधारने का समाचार मिला तो वह अलंकारों से विभूषित होकर, बहुत ही सुन्दर अश्वरथ पर चढ़कर, पूरे ठाट-बाट के साथ अपने दास, दासी, सुभट, अश्व, छत्र, रथ, आयुध, पथदर्शकों आदि से परिवृत होकर भगवान के दर्शन के लिए गया।

बहुशालक उद्यान के पास पहुँचकर उसने भगवान को देखा और दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार किया। फिर रथ खड़ा करके नीचे उतरा और छत्र, जूते आदि सभी समवसरण के बाहर छोड़कर, एक पट्ट वाले वस्त्र का उत्तरासंग धारण करके, मस्तक पर दोनों हाथ जोड़े भगवान के पास पहुँचा और भगवान को तीन बार वंदना-प्रदक्षिणा की। श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने जमालीकुमार को तथा उस महापरिषद् को धर्मोपदेश दिया।

—शतक 9, उ. 33

PRINCE JAMALI

Once Bhagavan Mahavir came to Bahushalak garden in Vaishali city. In this city lived a prince named Jamali. When he got the news of Bhagavan's arrival he came to pay homage to Bhagavan after embellishing himself with beautiful ornaments and riding an excellent chariot. He was accompanied by all his regalia slaves, servants, guards, horses, canopies, chariots armaments and onlookers.

When he arrived at Bahushalak garden he saw Bhagavan and paid homage joining his palms. He then reigned the horses and stopped the chariot. Then he got down from the chariot and left his belongings including weapons and shoes there. He placed a single piece scarf on his shoulders. Jamali now placed his joined palms on his forehead and went near Shraman Bhagavan Mahavir. He moved around Bhagavan Mahavir three times and performed three-fold worship.

—Shatak-9, lesson-33

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं संपेहेइ, एवं संपेहित्ता कंचुइज्जपुरिसं सद्दावेति, कंचुइज्जपुरिसं सद्दावेत्ता एवं वयासि—किं णं देवाणुप्पिया ! अज्ज खत्तियकुंडग्गामे नगरे इंदमहे इ वा जाव निग्गच्छंति ?

२४. तब बहुत-से मनुष्यों के शब्द और उनका परस्पर मिलन सुन और देखकर उस क्षत्रियकुमार जमालि के मन में विचार यावत् संकल्प उत्पन्न हुआ—'क्या आज क्षत्रियकुण्डग्राम नगर में इन्द्र का उत्सव है ?, अथवा स्कन्द महोत्सव है ?, या मुकुन्द (वासुदेव) महोत्सव है ? नाग का उत्सव है, यक्ष का उत्सव है, अथवा भूत महोत्सव है ? या किसी कूप का, सरोवर का, नदी का या द्रह का उत्सव है ?, अथवा किसी पर्वत का, वृक्ष का, चैत्य का अथवा स्तूप का उत्सव है ?, जिसके कारण ये बहुत-से उग्र (उग्रकुल के क्षत्रिय), भोग (भोगकुल या भोजकुल के क्षत्रिय), राजन्य, इक्ष्वाकु (कुलीन), ज्ञातृ (कुलीन), कौरव्य क्षत्रिय, क्षत्रियपुत्र, भट (योद्धा), भटपुत्र, सेनापति, सेनापतिपुत्र, प्रशास्ता एवं प्रशास्तापुत्र, लिच्छवी (लिच्छवीगुण के क्षत्रिय), लिच्छवीपुत्र, ब्राह्मण (माहण), ब्राह्मणपुत्र एवं इभ्य (श्रेष्ठी) इत्यादि औपपातिकसूत्र में कहे अनुसार यावत् सार्थवाह-प्रमुख, स्नान आदि करके यावत् बाहर निकल रहे हैं ?

इस प्रकार विचार करके उसने कंचुकीपुरुष (सेवक) को बुलाया और उससे पूछा—"हे देवानुप्रियो ! क्या आज क्षत्रियकुण्डग्राम नगर के बाहर इन्द्र आदि का कोई उत्सव है, जिसके कारण यावत् ये सब लोग बाहर जा रहे हैं ?"

24. Looking at the large gathering and hearing the noise, *Kshatriya* youth Jamali thought and deliberated — 'Is the Kshatriya Kundagram town celebrating the festival of Indra or Kartikeya today? Or is it the festival of deities like Naag, Yaksha, or Bhoot? Or are there celebrations for some sacred river, pond, or lake? Or is it related to hill, tree or temple? Why these groups of variety of people are moving out of town after taking bath and getting ready (as mentioned in *Aupapatik sutra*)? The people include — Ugra clans, Bhog clans, members of the advisory council of the king (*rajanya*), Ikshvaku clans, Jnatra clans, Kauravya clans, people of the warrior clans (*Kshatriyas*) and their sons, soldiers (*bhat*) and their sons, commanders (*senapati*) and their sons, administrative officers (*prashasta*) and their sons, members of the Lichchhivi republic (Lichchhivi) and their sons (*Lichchhiviputra*), Brahmans and their sons, affluent people (*ibhya*) ... and so on up to... caravan chiefs (*sarthavaha*).'

With these thoughts Jamali, the *Kshatriya* youth, called his attendant and asked — "Beloved of gods! Is there a festival of Indra outside Kshatriya Kundagram town for which these throngs of people are going out of the town?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५. तए णं से कंचुइज्जपुरिसे जमालिणा खत्तियकुमारेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ० समणस्स भगवओ महावीरस्स आगमणगहियविणिच्छए करयल० जमालिं खत्तियकुमारं जएणं विजएणं वद्धावेइ, वद्धावेत्ता एवं वयासी-'णो खलु देवाणुप्पिया ! अज्ज खत्तियकुंडगामे नयरे इंदमहे इ वा जाव निग्गच्छंति। एवं खलु देवाणुप्पिया ! अज्ज समणे भगवं महावीरे आइगरे जाव सव्वण्णू सव्वदरिसी माहणकुंडग्गामस्स नगरस्स बहिया बहुसालए चेइए अहापडिरूवं उग्गहं जाव विहरति, तए णं एए बहवे उग्गा भोगा जाव अप्पेगइया वंदणवत्तियं जाव निग्गच्छंति।

२५. तब जमालि क्षत्रियकुमार के इस प्रकार पूछने पर वह कंचुकी पुरुष अत्यन्त हर्षित एवं सन्तुष्ट हुआ। उसने श्रमण भगवान महावीर का (नगर में) आगमन जानकर एवं निश्चित करके (पुनः आकर) हाथ जोड़कर जय-विजय ध्वनि से जमालि क्षत्रियकुमार को बधाई दी। तत्पश्चात् उसने इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रिय ! आज क्षत्रियकुण्डग्राम नगर के बाहर इन्द्र आदि का उत्सव नहीं है, जिसके कारण यावत् लोग नगर से बाहर जा रहे हैं, किन्तु हे देवानुप्रिय ! आदिकर यावत् सर्वज्ञ-सर्वदर्शी श्रमण भगवान महावीर स्वामी ब्राह्मणकुण्डग्राम नगर के बाहर बहुशाल नामक उद्यान में अवग्रह ग्रहण करके यावत् विचरते हैं; इसी कारण ये उग्रकुल, भोगकुल आदि के क्षत्रिय आदि तथा और भी अनेक जन वन्दन (धर्मश्रवण) के लिए यावत् जा रहे हैं।'

25. The attendant was excited at this question from Jamali. Finding about the arrival of Shraman Bhagavan Mahavir the attendant returned and explained to Jamali after joining his palms and wishing him victory (formal greeting), "Beloved of gods! It is not because of some religious festival that the crowd is going in one particular direction. Today Shraman Bhagavan Mahavir, the founder of the religious ford, has arrived in the town and settled in the Bahushal garden. That is why all the aforesaid groups of people are going to pay their homage to him."

२६. तए णं से जमाली खत्तियकुमारे कंचुइज्जपुरिसस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ० कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, कोडुंबियपुरिसे सद्दावइत्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह, उवट्ठवेत्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह।

२६. तदनन्तर कंचुकीपुरुष से यह बात सुनकर और हृदय में धारण करके (निश्चय करके) जमालि क्षत्रियकुमार हर्षित एवं सन्तुष्ट हुआ। उसने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और बुलाकर इस प्रकार कहा-'देवानुप्रियो ! तुम शीघ्र ही चार घण्टा वाले अश्वरथ को जोतकर यहाँ उपस्थित करो और मेरी इस आज्ञा का पालन करके निवेदन करो।'

26. Jamali, the *Kshatriya* youth, was pleased to get this information from the attendant. He called members of his staff and said, "Beloved of gods! Prepare my horse-drawn chariot with four bells and bring it here immediately and report to me once you have done as ordered."

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७. तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिया खत्तियकुमारेणं एवं वुत्ता समाणा जाव पच्चप्पिणंति।

२७. तब उन कौटुम्बिक पुरुषों ने क्षत्रियकुमार जमालि के इस आदेश को सुनकर तदनुसार कार्य करके यावत् निवेदन किया।

27. On getting the order the servants executed it ... and so on up to... and reported back.

२८. तए णं से जमाली खत्तियकुमारे जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता ण्हाए कयबलिकम्मे जहा उववाइए परिसा-वण्णओ तहा भाणियव्वं जाव चंदणोक्खित्तगायसरीरे सव्वालंकारविभूसिए मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ, मज्जणघराओ पडिणिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला, जेणेव चाउघंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता चाउघंटं आसरहं दुरूहेइ, चाउघंटं आसरहं दुरूहित्ता सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं महया भडचडकरपहकरवंदपरिक्खित्ते खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव माहणकुंडग्गामे नगरे जेणेव बहुसालए चेइए तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता तुरए निगिण्हेइ, तुरए निगिण्हित्ता रहं ठवेइ, रहं ठवित्ता रहाओ पच्चोरुहति, रहाओ पच्चोरुहित्ता पुप्फ-तंबोलाउहमादीयं वाहणाओ य विसज्जेइ, वाहणाओ विसज्जित्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ, एगसाडियं उत्तरासंगं करेत्ता आयंते चोक्खे परमसुइब्भूए अंजलिमउलियहत्थे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेत्ता जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासेइ।

२८. तदनन्तर वह जमालि क्षत्रियकुमार, जहाँ स्नानगृह था, वहाँ आया और वहाँ आकर उसने स्नान किया तथा अन्य सभी दैनिक क्रियाएँ कीं, यावत् शरीर पर चन्दन का लेपन किया; समस्त आभूषणों से विभषित हुआ और स्नानगृह से निकला आदि सारा वर्णन तथा परिषद् का वर्णन, जिस प्रकार औपपातिकसूत्र में है, उसी प्रकार यहाँ जानना चाहिए। फिर जहाँ बाहर की उपस्थानशाला थी और जहाँ सुसज्जित चतुर्घण्ट अश्वरथ था, वहाँ वह आया। उस अश्वरथ पर चढ़ा। कोरण्टपुष्प की माला से युक्त छत्र को मस्तक पर धारण किया हुआ तथा बड़े-बड़े सुभटों, दासों, पथदर्शकों आदि के समूह से परिवृत हुआ वह जमालि क्षत्रियकुमार क्षत्रियकुण्डग्राम नगर के मध्य में से होकर निकला और ब्राह्मणकुण्डग्राम नामक नगर के बाहर जहाँ बहुशाल नामक उद्यान था, वहाँ आया। वहाँ घोड़ों को रोककर रथ को खड़ा किया, तब वह रथ से नीचे उतरा। फिर उसने पुष्प, ताम्बूल, आयुध (शस्त्र) आदि तथा उपानह (जूते) वहीं छोड़ दिये। एक पट वाले वस्त्र का उत्तरासंग (उत्तरीय धारण) किया। तदनन्तर आचमन किया हुआ और अशुद्धि दूर करके अत्यन्त शुद्ध हुआ जमालि मस्तक पर दोनों हाथ जोड़े हुए श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पास पहुँचा। समीप जाकर श्रमण भगवान महावीर की तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा की, यावत् त्रिविध पर्युपासना की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

28. Then Jamali, the *Kshatriya* youth, went to his bathroom, took his bath and performed his daily routine ... and so on up to... applied sandal paste on his body; and putting on his royal dress and ornaments came out of the bathroom. All this description and that of the assembly should be quoted from *Aupapatik sutra*. After that he came out of the house to the courtyard where the chariot was standing. He boarded the chariot. With an umbrella embellished with garlands of Korant flowers over his head and surrounded by a group of many guards, attendants, guides etc., that Jamali, the *Kshatriya* youth, passed through Kshatriya Kundagram and arrived at Bahushalak garden outside Brahman Kundagram. There he reigned the horses and stopped the chariot. Then he got down from the chariot and left his belongings including flowers, beetle leaves, weapons and shoes there. He placed a single piece scarf (*uttarasanga*) on his shoulders. Now he washed his mouth clean. Thus cleansing himself well Jamali placed his joined palms on his forehead and went near Shraman Bhagavan Mahavir. He moved around Bhagavan Mahavir three times and performed three-fold worship.

प्रवचन–श्रवण और प्रव्रज्या की अभिव्यक्ति **DISCOURSE AND DESIRE FOR INITIATION**

२९. तए णं समणे भगवं महावीरे जमालिस्स खत्तियकुमारस्स तीसे य महतिमहालियाए इसि० जाव धम्मकहा जाव परिसा पडिगया।

२९. तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने उस क्षत्रियकुमार जमालि को तथा उस बहुत बड़ी ऋषिगण आदि की परिषद् को यावत् धर्मोपदेश दिया। धर्मोपदेश सुनकर यावत् परिषद् वापस लौट गई।

29. After that Shraman Bhagavan Mahavir gave his sermon to the large gathering of people including Jamali, many sages, and other people. After the discourse the assembly dispersed.

३०. तए णं से जमाली खत्तियकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठ–तुट्ठ जाव उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठाए उट्ठेत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी–सद्दहामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं, पत्तियामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं, रोएमि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं, अब्भुट्ठेमि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं, एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते ! असंदिद्धमेयं भंते ! जाव से जहेवं तुब्भे वदह, जं नवरं देवाणुप्पिया ! अम्मा–पियरो आपुच्छमि, तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वयामि। अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं।

३०. तत्पश्चात् श्रमण भगवान महावीर के पास से धर्म सुनकर उसे हृदयंगम करके हर्षित और सन्तुष्ट क्षत्रियकुमार जमालि उठा और खड़े होकर उसने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को तीन बार आदक्षिण–प्रदक्षिणा की यावत् वन्दन–नमन किया और इस प्रकार कहा–"हे भगवन् ! मैं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ-प्रवचन पर श्रद्धा (विश्वास) करता हूँ। भगवन् ! मैं निर्ग्रन्थ-प्रवचन पर प्रतीति (युक्तिपूर्ण आस्था) (विश्वास) करता हूँ। भन्ते ! निर्ग्रन्थ-प्रवचन में मेरी रुचि (श्रद्धा के अनुसार चलने की इच्छा) है। भगवन् ! मैं निर्ग्रन्थ-प्रवचन के अनुसार चलने के लिए तत्पर हुआ हूँ। भन्ते ! यह निर्ग्रन्थ-प्रवचन तथ्य है, सत्य है; भगवन् ! यह सन्देहरहित है, यावत् जैसा कि आप कहते हैं (वैसा ही है)। किन्तु हे देवानुप्रिय ! (प्रभो!) मैं अपने माता-पिता को (घर जाकर) पूछता हूँ और उनकी अनुज्ञा लेकर (गृहवास का परित्याग करके) आप देवानुप्रिय के समीप मुण्डित होकर अगारधर्म से अनगारधर्म में प्रव्रजित होना चाहता हूँ।" (भगवान ने कहा--) "देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो।"

30. On hearing and understanding Shraman Bhagavan Mahavir's sermon Jamali, the *Kshatriya* youth, felt delighted and contented. He got up, went around Bhagavan Mahavir three times ... and so on up to... paid homage and said — "*Bhante!* I have respect (*shraddha*) for the sermon of *Nirgranths* (Jain tenets). *Bhante!* I have faith (*pratiti*, or logical acceptance) in the same. *Bhante!* I have liking for the same. *Bhante!* I am ready to follow the same. *Bhante!* This sermon of *Nirgranths* is real and true; *Bhante!* It is authentic ... and so on up to... it is, indeed, as you have spoken. O Beloved of gods! Under your auspices and after seeking permission from my parents, I would like to get tonsured and accept the path of homeless ascetics renouncing the householder's duties. (*Bhagavan* responded —) "Beloved of gods! Do as you please. Do not procrastinate."

माता-पिता से दीक्षा की अनुज्ञा PERMISSION FROM PARENTS FOR INITIATION

३१. तए णं से जमाली खत्तियकुमारे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ० समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता तमेव चाउघंटं आसरहं दुरूहेइ, दुरूहित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ बहुसालाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता सकोरंट जाव धरिज्जमाणेणं महया भडचडगर० जाव परिक्खित्ते जेणेव खत्तियकुंडग्गामे नयरे तेणेव उवागगच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव सए गिहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता तुरए निगिण्हिइ, तुरए निगिण्हित्ता रहं ठवेइ, रहे ठवेत्ता रहाओ पच्चोरुहइ, रहाओ पच्चोरुहित्ता जेणेव अब्भिंतरिया उवट्ठाणसाला, जेणेव अम्मा-पियरो तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता अम्मा-पियरो जएणं विजएणं वद्धावेइ, वद्धावेत्ता एवं वयासी-एवं खलु अम्म ! ताओ ! मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मे निसंते, से वि य मे धम्मे इच्छिए, पडिच्छिए, अभिरुइए।

३१. जब श्रमण भगवान महावीर ने जमालि क्षत्रियकुमार से पूर्वोक्त प्रकार से कहा तो वह हर्षित और सन्तुष्ट हुआ। उसने श्रमण भगवान महावीर को तीन बार प्रदक्षिणा करके यावत् नमस्कार किया। फिर उस चार घंटा वाले अश्वरथ पर आरूढ हुआ और रथारूढ़ होकर श्रमण भगवान महावीर के पास

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से, बहुशाल नामक उद्यान से निकला, यावत् मस्तक पर कोरंटपुष्प की माला से युक्त छत्र धारण किए हुए सुभटों इत्यादि के समूह से परिवृत होकर जहाँ क्षत्रियकुण्डग्राम नामक नगर था, वहाँ आया। वहाँ से वह क्षत्रियकुण्डग्राम के बीचोंबीच होता हुआ, जहाँ अपना घर था और जहाँ बाहर की उपस्थानशाला थी, वहाँ आया। वहाँ पहुँचते ही उसने घोड़ों को रोका और रथ को खड़ा कराया। फिर वह रथ से नीचे उतरा और आन्तरिक (अन्दर की) उपास्थानशाला (बैठक) में, जहाँ कि उसके माता-पिता थे, वहाँ आया। आते ही (माता-पिता के चरणों में नमन करके) उसने जय-विजय शब्दों से बधाया, फिर इस प्रकार कहा-'हे माता-पिता ! मैंने श्रमण भगवान महावीर से धर्म सुना है, वह धर्म मुझे इष्ट, अत्यन्त इष्ट और रुचिकर प्रतीत हुआ है।'

31. When Shraman Bhagavan Mahavir said thus to *Kshatriya* youth Jamali, he was delighted and contented. He went around Bhagavan Mahavir three times ... and so on up to... paid homage. He then boarded the chariot with four bells and left Shraman Bhagavan Mahavir and Bahushalak garden ... and so on up to... with an umbrella embellished with garlands of Korant flowers over his head and surrounded by a group of many guards, attendants, guides etc., passed through Kshatriya Kundagram and arrived in the courtyard of his residence. There he reigned the horses and stopped the chariot. Then he got down from the chariot and entered the inner hall where his parents were sitting. After greeting them and paying respect he said — "Father and mother! I have been to the discourse of Shraman Bhagavan Mahavir. It has attracted me, it has inspired me strongly and I have developed an affinity for it."

३२. तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो एवं वयासि-धन्ने सि णं तुमं जाया !, कयत्थे सि णं तुमं जाया, कयपुण्णे सि णं तुमं जाया !, कयलक्खणे सि णं तुमं जाया !, जं णं तुमे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मे निसंते, से वि य ते धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए।

३२. यह सुनकर क्षत्रियकुमार जमालि से उसके माता-पिता ने (प्रसन्नतापूर्वक) इस प्रकार कहा-हे पुत्र ! तू धन्य है ! बेटा ! तू कृतार्थ हुआ है। पुत्र ! तू कृतपुण्य (भाग्यशाली) है। पुत्र ! तू कृतलक्षण (शुभ लक्षण) है कि तूने श्रमण भगवान महावीर स्वामी से धर्मश्रवण किया है और वह धर्म तुझे इष्ट, विशेष प्रकार से अभीष्ट और रुचिकर लगा है।

32. On hearing this, the parents replied (with joy) to Jamali, the *Kshatriya* youth, — "Son! You are to be commended. You are lucky and blessed that you have heard the sermon of Shraman Bhagavan Mahavir and found the same very impressive and inspiring."

३३. तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-पियरो दोच्च पि एवं वयासी-एवं खलु मए अम्म ! ताओ ! समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मे निसंते जाव अभिरुइए। तए णं अहं अम्म ! ताओ !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संसारभउव्विग्गे, भीए जम्मण–मरणेणं, तं इच्छामि णं अम्म ! ताओ ! तुब्भेहिं अब्भुणुण्णाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए।

३३. तदनन्तर क्षत्रियकुमार जमालि ने दूसरी बार भी अपने माता-पिता से इस प्रकार कहा हे माता-पिता ! मैंने श्रमण भगवान महावीर से वास्तविक धर्म सुना, जो मुझे इष्ट, अभीष्ट और रुचिकर लगा, इसलिए हे माता–पिता ! मैं संसार (चतुर्गति रूप संसार) के भय से उद्विग्न हो गया हूँ, जन्म-मरण से भयभीत हुआ हूँ। अतः मैं चाहता हूँ कि आप दोनों की आज्ञा प्राप्त होने पर श्रमण भगवान महावीर के पास मुण्डित होकर गृहवास त्याग करके अनगार धर्म में प्रवजित होऊँ।

33. Once again Jamali, the *Kshatriya* youth, submitted to his parents — "Father and mother! I have been to the discourse of Shraman Bhagavan Mahavir. It has attracted me, it has inspired me strongly and I have developed an affinity for it. O Father and mother! I am now haunted by a fear of this mundane existence (defined by cycles of rebirth in four genuses), I am afraid of birth, dotage and death. As such, I wish to seek your permission, go to Shraman Bhagavan Mahavir and get initiated into his ascetic order after renouncing the worldly life and getting my head tonsured."

माता शोकमग्न हुई MOTHER'S GRIEF

३४. तए णं सा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माता तं अणिट्ठं अकंतं अप्पियं अमणुण्णं अमणामं असुयपुव्वं गिरं सोच्चा निसम्म सेयागयरोमकूव–पगलंतविलीणगत्ता सोगभरपवेवियंगमंगी नित्तेया दीणविमणवयणा करयलमलिय व्व कमलमाला तक्खणओलुग्गदुब्बलसरीरलायन्नसुन्ननिच्छाया गयसिरीया पसिढिलभूसण–पडंतखुण्णियसंचुण्णियधवलवलयपब्भट्ठउत्तरिज्जा मुच्छावसणट्ठचेतगुरुई सुकुमाल विकिण्णकेसहत्था परसुणियत्त व्व चंपगलता निव्वत्तमहे व्व इंदलट्ठी विमुक्कसंधिबंधणा कोट्टिमतलंसि 'धस' त्ति सव्वंगेहिं सन्निवडिया।

३४. तब क्षत्रियकुमार जमालि की माता उसके उस (पूर्वोक्त) अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय, अमनोज्ञ, मन को अप्रिय और अश्रुतपूर्व (पहले कभी नहीं सुने हुए) (आघातकारक) वचन सुनकर और अवधारण करके (शोकमग्न हो गई।) रोमकूपों से बहते हुए पसीने से उसका शरीर भीग गया। शोक के भार से उसके अंग–अंग काँपने लगे। (चेहरे की कान्ति) निस्तेज हो गई। उसका मुख दीन और उन्मना (उदास) हो गया। हथेलियों से मसली हुई कमलमाला की तरह उसका शरीर तत्काल मुर्झा गया एवं दुर्बल हो गया। वह लावण्यशून्य, कान्तिरहित और शोभाहीन हो गई। (उसके शरीर पर पहने हुए) आभूषण ढीले हो गये। उसके हाथों की धवल चूड़ियाँ (श्वेत कंगन) नीचे गिरकर चूर–चूर हो गईं। उसका उत्तरीय वस्त्र (ओढ़ना) अंग से हट गया। मूर्च्छावश उसकी चेतना नष्ट हो गई। शरीर भारी–भारी हो गया। उसकी सुकोमल केशराशि बिखर गई। वह कुल्हाड़ी से काटी हुई चम्पकलता की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तरह एवं महोत्सव समाप्त होने के बाद इन्द्रध्वज (दण्ड) की तरह शोभाविहीन हो गई। उसके सन्धिबन्धन शिथिल हो गए और वह एकदम धस करती हुई (धड़ाम से) सारे ही अंगों सहित धरती के फर्श पर गिर पड़ी।

34. When *Kshatriya* youth Jamali's mother heard and understood these ominous, unpleasant, repelling, undesirable, unheard of and hard hitting words she was overwhelmed with grief. She became drenched with sweat oozing out of here body-pores. Her limbs started trembling with the load of grief. Like a garland of flowers crushed with palms, she became gloomy, depressed, and dull. Within a moment she lost all her beauty, radiance, and splendour. Her body became so shriveled that all her ornaments became ill fitting, so much so that her bracelets slipped out of her loosely hanging wrists, fell down on the floor and broke. Her dress was in disorder exposing her body. The deep shock made her unconscious. Her body became heavy. Her tender locks were disheveled. She lost her charm as if a vine was cut by blow of an axe or like a flag after celebrations were over. Her joints became loose and she fell prone on the floor.

विवेचन : कल्पना और आशा के विपरीत मन पर आघात करने वाले वचन सुनने पर शरीर व मन की क्या स्थिति होती है ? इसका बहुत ही भावपूर्ण वर्णन प्रस्तुत सूत्र में है।

Elaboration — It is a vivid and touching description of the condition of the mind and body of a mother on hearing unexpected and unimaginable tormenting words.

माता–पिता के साथ जमालि का संलाप DIALOGUE WITH PARENTS

३५. (माता) तए णं सा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया ससंभमोयत्तियाए तुरियं कंचणभिंगार–मुहविणिग्गयसीयलजल–विमलधारापसिच्चमाणनिव्ववियगायलट्ठी उक्खेवगतालियंटवीयणगजणियवाएणं सफुसिएणं अंतेउरपरिजणेणं आसासिया समाणी रोयमाणी कंदमाणी सोयमाणी विलवमाणी जमालिं खत्तियकुमारं एवं वयासी–तुमं सि णं जाया ! अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते पिए मणुण्णे मणामे थेज्जे वेसासिए सम्मए बहुमए अणुमए भंडकरंडगसमाणे रयणे रयणब्भूए जीविऊसविये हिययनंदिजणणे उंबरपुप्फं पिव दुल्लभे सवणयाए किमंग पुण पासणयाए ? तं नो खलु जाया ! अम्हे इच्छामो तुब्भं खणमवि विप्पओगं, तं अच्छाहि ताव जाया ! जाव ताव अम्हे जीवामो; तओ पच्छा अम्हेहिं कालगएहिं समाणेहिं परिणयवये वड्ढियकुलवंस–तंतुकज्जम्मि निरवयक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइहिसि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५. इसके पश्चात् क्षत्रियकुमार जमालि की व्याकुलतापूर्वक इधर-उधर गिरती हुई माता के शरीर पर शीघ्र ही दासियों ने स्वर्णकलसों के मुख से निकली हुई शीतल एवं निर्मल जलधारा का सिंचन करके शरीर को स्वस्थ किया। फिर (बाँस के बने हुए) उत्क्षेपकों (पंखों) तथा ताड़ के पत्तों से बने पंखों से जलकणों (फुहारों) सहित हवा की। तदनन्तर (मूर्च्छा दूर होते ही) अन्तःपुर के परिजनों ने उसे आश्वस्त किया। (मूर्च्छा दूर होने पर) रोती हुई, क्रन्दन करती हुई, शोक करती हुई एवं विलाप करती हुई माता क्षत्रियकुमार जमालि से इस प्रकार कहने लगी-पुत्र ! तू हमारा इकलौता ही पुत्र है, (इसलिए) तू हमें इष्ट है, कान्त है, प्रिय है, मनोज्ञ है, मनसुहाता है, आधारभूत है, विश्वासपात्र है, (इस कारण) तू सम्मत (सलाह देने योग्य), अनुमत (कार्य में सहायक) और बहुमत (बहुमान्य) है। तू आभूषणों के पिटारे (करण्डक) के समान है, रत्नस्वरूप है, रत्नतुल्य है, जीवन या जीवितोत्सव के समान है, हृदय को आनन्द देने वाला है; उदुम्बर (गूलर) के फूल के समान तेरा नाम-श्रवण भी दुर्लभ है, तो तेरा दर्शन दुर्लभ हो, इसमें कहना ही क्या ! इसलिए हे पुत्र ! तेरा क्षणभर का वियोग भी हम नहीं चाहते। इसलिए जब तक हम जीवित रहें, तब तक तू घर में ही रह। उसके पश्चात् जब हम (दोनों) कालधर्म को प्राप्त (परलोकवासी) हो जाएँ, तेरी उम्र भी परिपक्व हो जाए, (और तब तक) कुलवंश की वृद्धि (पुत्र-पौत्रादि होने पर) का कार्य हो जाए, तब (गृह-प्रयोजनों से) निरपेक्ष (निश्चिंत) होकर तू गृहवास का त्याग करके श्रमण भगवान महावीर के पास मुण्डित होकर अनगारधर्म में प्रव्रजित होना।

35. The attendants poured cold water on *Kshatriya* youth Jamali's grief stricken unsteady mother's face from a golden urn and she calmed down. Humid air was blown at her with water soaked fans made of bamboo and palm leaves. After that (when she gained consciousness) her relatives and staff members uttered words of encouragement to console her. (When she regained her consciousness) she started crying. Choked with anguish she lamented, wailed, sobbed and said to Jamali, the *Kshatriya* youth, — "Son! You are our only and cherished, lovely, adored, charming, and beloved son. You are the source of our peace and confidence. As you are faithful and obedient we consider you to be excellent not just good. You are like a chest full of ornaments or gems for us. You are the hope of our life and source of our joy. It is difficult to hear about a son like you, what to say of seeing one that is as rare as a Gular flower. Darling! We will not be able to tolerate separation from you even for a moment. As such, we implore you to enjoy the excitement and pleasures of human life as long as we live. When we breathe our last and you get middle aged, fulfill your duty of continuation of the clan, and have no desire of any worldly activity, you may go to Shraman Bhagavan Mahavir and get initiated following the prescribed procedure."

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६. (जमालि) तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-पियरो एवं वयासी-तहा वि णं तं अम्म ! ताओ ! जं णं तुब्भे मम एवं वदह 'तुमं सि णं जाया ! अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते तं चेव जाव पव्वइहिसि', एवं खलु अम्म! ताओ! माणुस्सए भवे अणेगजाइ-जरा-रोग-सारीर-माणसपकाम-दुक्खवेयण-वसण-सतोवद्दवाभिभूए अधुवे अणितिए असासए संझब्भरागसरिसे जलबुब्बुदसमाणे कुसग्गजलबिंदुसन्निभे सुविणगदंसणोवमे विज्जुलयाचंचले अणिच्चे सडण-पडण-विद्धंसणधम्मे पुव्विं वा पच्छा वा अवस्सविप्पजहियव्वे भविस्सइ, से केस णं जाणइ अम्म! ताओ! के पुव्विं गमणयाए? के पच्छा गमणयाए? तं इच्छामि णं अम्म! ताओ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए।

३६. (माता का कथन सुनकर) क्षत्रियकुमार जमालि ने अपने माता-पिता से इस प्रकार कहा हे माता-पिता ! अभी जो आपने कहा कि-हे पुत्र ! तुम हमारे इकलौते पुत्र हो, इष्ट, कान्त आदि हो, यावत् हमारे कालगत होने पर प्रव्रजित होना, इत्यादि; (उस विषय में मुझे यह कहना है कि) माताजी ! पिताजी ! यों तो यह मनुष्य-जीवन जन्म, जरा, मृत्यु, रोग तथा शारीरिक और मानसिक अनेक दुःखों की वेदना से और सैकड़ों व्यसनों (कष्टों) एवं उपद्रवों से ग्रस्त है। अध्रुव; है, अनियत है, अशाश्वत है, सन्ध्याकालीन बादलों के रंग-सदृश क्षणिक है, जल-बुद्‌बुद के समान (क्षण विनाशी) है, कुश की नोंक पर रहे हुए जलबिन्दु के समान (चंचल) है, स्वप्नदर्शन के तुल्य (अविश्वसनीय) है, विद्युतलता की चमक के समान चंचल और अनित्य है। सड़ने, पड़ने, गलने और विध्वंस होने के स्वभाव वाला है। पहले या पीछे इसे अवश्य ही छोड़ना पड़ेगा। अतः हे माता-पिता ! यह कौन जानता है कि हममें से कौन पहले जायेगा (मरेगा) और कौन पीछे जायेगा ? इसलिए हे माता-पिता ! मैं चाहता हूँ कि आपकी अनुज्ञा मिल जाए तो मैं श्रमण भगवान महावीर के पास मुण्डित होकर यावत् प्रव्रज्या अंगीकार कर लूँ।

36. *Kshatriya* youth Jamali replied to his parents — "Father and mother! You just said to me that I am your only and cherished ... and so on up to... beloved son. ... and so on up to... only when you breathe your last I should get initiated. In this regard (this is what I have to say —) please know that this human life is plagued by birth, dotage, death, diseases, numerous physical and mental afflictions as well as hundreds of vices and torments. It is transient (*adhruva*) , uncertain (*aniyat*) and temporary (*ashashvat*). Like the hue of the evening sky, like bubbles in water, like dewdrops on grass-tip, like a dream or the flash of lightening, this human life is short lived and ephemeral. Its nature is to rot, fall, decay and get destroyed. Sooner or later one has to part with it. Therefore, O parents! Who knows which one of us will die first and who

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

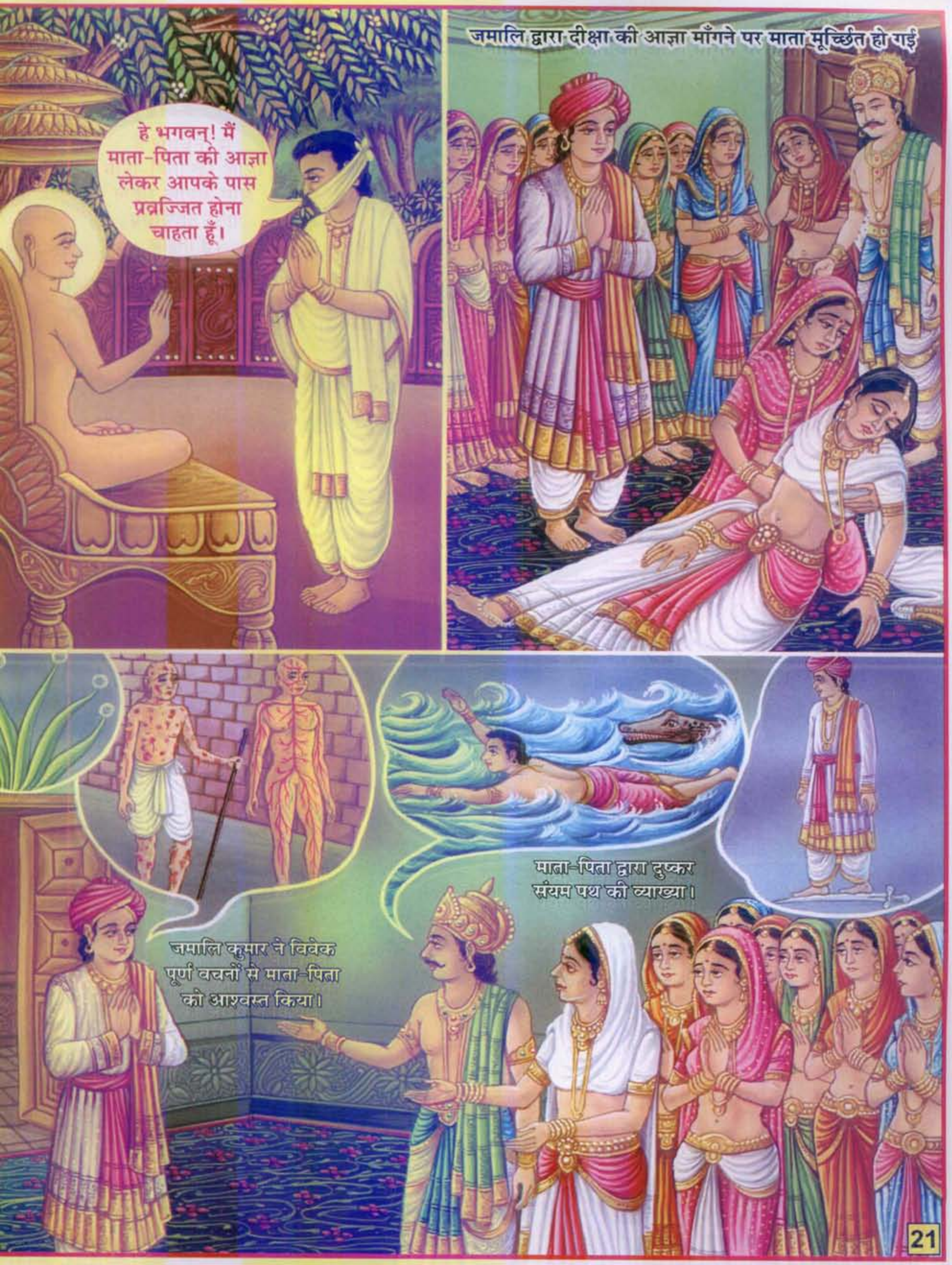

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 21

Illustration No. 21

जमालिकुमार का वैराग्य

भगवान महावीर की देशना सुनने से जमालि को वैराग्य प्राप्त हो गया। उन्होंने भगवान से निवेदन किया कि "हे भगवन्! मैं माता-पिता की अनुमति लेकर आपके पास प्रवज्जित होना चाहता हूँ।" फिर उन्होंने घर आकर माता-पिता से दीक्षा की आज्ञा माँगी, यह सुनते ही जमालिकुमार की माता निस्तेज हो गई और मूर्च्छित होकर जमीन पर गिर पड़ी। होश में आने के पश्चात् उन्होंने जमालि को संसार में रुकने के लिए धन और वैभव के बहुत प्रलोभन दिये। श्रमण जीवन की अनेक कठिनाईयाँ बताई। श्रमण जीवन के पालन को तलवार की धार पर चलने के समान बताया। महासमुद्र तैरने के समान पालन करने में अतीव कठिनाई वाला बताया। इस प्रकार अनेक अनुकूल और प्रतिकूल युक्तियाँ दीं, परन्तु जमालि ने अपने विवेकपूर्ण वैराग्य वचनों से माता-पिता को आश्वस्त कर दिया। उन्होंने कामभोगों को असार बताया और शरीर की नश्वरता का कथन करते हुए कहा कि यह मानव शरीर नाड़ियों और स्नायु के जाल से भरा हुआ दुर्बल है। अशुचि का भण्डार है। मानव जीवन को कुश की नोंक पर पड़ी हुई ओस की बूँद के समान क्षणभंगुर बताया। इस प्रकार उन्होंने माता-पिता को आश्वस्त कर दिया कि उनका वैराग्य पक्का है।

—शतक 9, उ. 33

DETACHMENT OF PRINCE JAMALI

Hearing to the sermon of Bhagavan Mahavir Jamali got detached. He submitted to Bhagavan, O Bhagavan! I desire to seek permission from my parents and get initiated by you." Then he went home and sought permission from his parents. At this request from Jamali his mother lost her composure, fainted and collapsed on the ground. After regaining her consciousness she enticed Jamali with wealth and grandeur to remain a householder. She also revealed many hardships of ascetic life. This way with favourable and unfavourable arguments she tried to dissuade him. But Jamali convinced his parents about his intention with balanced logic and spiritual words.

—Shatak-9, lesson-33

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

later? As such, father and mother, I want that if you allow me I will go to Shraman Bhagavan Mahavir and get initiated into his ascetic order ... and so on up to... getting my head tonsured."

विवेचन : प्रस्तुत सूत्र में जमालि ने माता-पिता के समक्ष विविध उपमाओं द्वारा जीवन की क्षणभंगुरता एवं अनित्यता का सजीव चित्र खींचा है। इन शब्दों से उसके दृढ़ वैराग्य की झलक मिलती है।

Elaboration — In this aphorism Jamali draws before his parents a vivid and lively picture of the transient nature of life with the help of a variety of metaphors. His strong resolve also finds expression in these words.

३७. (माता-पिता) तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मा-पियरो एवं वयासी-इमं च ते जाया ! सरीरगं पविसिट्ठरूवं लक्खण-वंजण-गुणोववेयं उत्तमबल-वीरिय-सत्तजुत्तं विण्णाणवियक्खणं ससोहग्गगुणसमुस्सियं अभिजायमहक्खमं विविहवाहिरोगरहियं निरुवहयउदत्तलट्ठपंचिंदियपडुं, पढमजोव्वणत्थं अणेगउत्तमगुणेहिं जुत्तं, तं अणुहोहि ताव जाव जाया ! नियगसरीर-रूवसोहग्गजोव्वणगुणे, तओ पच्छा अणुभूयनियगसरीररूवसोभग्गजोव्वणगुणे अम्हेहिं कालगएहिं समाणेहिं परिणयवये वड्ढियकुलवंसतंतुकज्जम्मि निरवयक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइहिसि।

३७. पुत्र का कथन सुनकर क्षत्रियकुमार जमालि से उसके माता-पिता ने कहा हे पुत्र ! तुम्हारा यह शरीर विशिष्ट रूप, लक्षणों, व्यंजनों (मस, तिल आदि चिह्नों) एवं गुणों से युक्त है, उत्तम बल, वीर्य और सत्त्व से सम्पन्न है, विज्ञान में विचक्षण है, सौभाग्य-गुण से उन्नत है, कुलीन (अभिजात) है, महान् समर्थ (क्षमतायुक्त) है, विविध व्याधियों और रोगों से रहित है, निरुपहत, उदात्त, मनोहर और पाँचों इन्द्रियों की पटुता से युक्त है तथा प्रथम (उत्कृष्ट) यौवन अवस्था में है, इत्यादि अनेक उत्तम गुणों से युक्त है। इसलिए, हे पुत्र ! जब तक तेरे शरीर में रूप, सौभाग्य और यौवन आदि उत्तम गुण हैं, तब तक तू इनका अनुभव (उपभोग) कर। इन सबका अनुभव करने के पश्चात् हमारे कालधर्म प्राप्त होने पर जब तेरी उम्र परिपक्व हो जाए और (पुत्र-पौत्रादि से) कुलवंश की वृद्धि का कार्य हो जाए तब (गृहस्थ-जीवन से) निरपेक्ष होकर श्रमण भगवान महावीर के पास मुण्डित होकर अगारवास छोड़कर अनगारधर्म में प्रव्रजित हो जाना।

37. Hearing this from their son, the parents of *Kshatriya* youth Jamali said to him — "O son! Your this body is endowed with unique beauty, signs, marks (mole, birthmarks etc.) and qualities. It also has great strength, potency and energy. It is rich in knowledge and good luck. It is noble, highly capable and free of ailments and diseases. It is unscathed, dignified and attractive. It has the perfection of five sense organs and is in the prime of youth. It is endowed with numerous such qualities. That is why, son, as long as you possess beauty, good luck, youth and other such noble qualities, indulge in and enjoy them. Later,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

when we breathe our last and you are in the autumn of your life, then fulfilling your duty of siring heirs for the family, you may get detached (from the household), go to Shraman Bhagavan Mahavir and get initiated into his ascetic order getting your head tonsured."

शरीर की नश्वरता का कथन FLEETING NATURE OF THE BODY

३८. (जमालि) तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-पियरो एवं वयासी-तहा वि णं तं अम्म ! ताओ ! जं णं तुब्भे ममं एवं वदह 'इमं च णं ते जाया ! सरीरगं० तं चेव जाव पव्वइहिसि' एवं खलु अम्म ! ताओ ! माणुस्सगं सरीरं दुक्खाययणं विविहवाहिसयसन्निकेतं अट्ठियकट्ठुट्ठियं छिरा-ण्हारु-जालओणद्ध-संपिणद्धं मट्टियभंडं व दुब्बलं असुइसंकिलिट्ठं अणिट्ठवियसव्वकालसंठप्पयं जराकुणिमजज्जरघरं व सडण-पडण-विद्धंसणधम्मं पुव्विं वा पच्छा वा अवस्स-विप्पजहियव्वं भविस्सइ, से केस णं जाणइ अम्म ! ताओ ! के पुव्विं०? तं चेव जाव पव्वइत्तए।

३८. तब क्षत्रियकुमार जमालि ने अपने माता-पिता से इस प्रकार कहा-हे माता-पिता ! आपने मुझे जो यह कहा कि पुत्र ! तेरा यह शरीर उत्तम रूप आदि गुणों से युक्त है, इत्यादि, यावत् हमारे कालगत होने पर तू प्रव्रजित होना। (किन्तु) हे माता-पिता ! यह मानव-शरीर दुःखों का आयतन है, अनेक प्रकार की सैकड़ों व्याधियों का निकेतन है, अस्थि-(हड्डी) रूप काष्ठ पर खड़ा हुआ है, नाड़ियों और स्नायुओं के जाल से वेष्टित है, मिट्टी के बर्तन के समान दुर्बल (नाजुक) है। अशुचि (गंदगी) से संक्लिष्ट (बुरी तरह दूषित) है, इसको टिकाये (संस्थापित) रखने के लिए सदैव इसकी सँभाल (व्यवस्था) रखनी पड़ती है, यह सड़े हुए शव के समान और जीर्ण घर के समान है, सड़ना, पड़ना और नष्ट होना, इसका स्वभाव है। इस शरीर को पहले या पीछे अवश्य छोड़ना पड़ेगा; तब कौन जानता है कि पहले कौन जायेगा और पीछे कौन? इत्यादि सारा वर्णन पूर्ववत् समझना चाहिए, यावत् इसलिए मैं चाहता हूँ कि आपकी आज्ञा प्राप्त होने पर मैं प्रवज्या ग्रहण कर लूँ।

38. *Kshatriya* youth Jamali replied to his parents — "Dear father and mother! You just said to me that my body is endowed with unique beauty and other qualities. ... and so on up to... when we breathe our last you may get initiated into the ascetic order. But father and mother, this human body is the abode of miseries and shelter of many diseases; it stands on wood-like bones, is replete with clumps of nerves and muscles and is fragile like a pot of clay. It is completely contaminated with filth and requires a lot of care all the time. It is like a decaying corpse and a dilapidated house with a tendency to decay, fall and get destroyed. Sooner or later one has to part with it. Who knows which one of us will die first and who later? ... and so on up to... As such, I want that if you allow me I will get initiated into the ascetic order."

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९. (माता–पिता) तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मा–पियरो एवं वयासी–इमाओ य ते जाया! विपुलकुलबालियाओ कलाकुसलसव्वकाललालिय–सुहोचियाओ मद्दवगुणजुत्त–निउणविणओवयार–पडिय–वियक्खणाओ मंजुलमिय–महुर–भणिय–विहसिय–विप्पेक्खिय–गतिविलास–चिट्ठियविसारदाओ अविकलकुल–सीलसालिणीओ विसुद्धकुलवंस–संताणतंतुवद्धणपगब्भ– वयभाविणीओ मणाणुकूलहियइच्छियाओ अट्ठ तुज्झ गुणवल्लभाओ उत्तमाओ निच्चं भावाणुरत्तसव्वंगसुंदरीओ भारियाओ, तं भुंजाहि ताव जाया! एतर्हि सद्धिं विउले माणुस्सए कामभोगे, तओ पच्छा भुत्तभोगी विसयविगय–वोच्छिन्नकोउ–हल्ले अम्हेहिं कालगएहिं जाव पव्वइहिसि।

३९. माता–पिता ने तब क्षत्रियकुमार जमालि से इस प्रकार कहा पुत्र ! ये तेरी गुणवल्लभा, उत्तम, तुझमें नित्य भावानुरक्त, सर्वांगसुन्दरी आठ पत्नियाँ हैं, जो विशाल कुल में उत्पन्न बालिकाएँ (नवयौवनाएँ) हैं, कलाकुशल हैं, सदैव लालित (लाड़-प्यार में रही हुई) और सुखभोग के योग्य हैं। ये मृदुतागुण से युक्त, निपुण, विनय–व्यवहार (उपचार) में कुशल एवं विचक्षण हैं। ये मंजुल, परिमित और मधुरभाषिणी हैं। ये (स्त्रियोचित) हास्य, विप्रेक्षित (कटाक्षपात), गति, विलास और चेष्टाओं में विशारद हैं। निर्दोष कुल और शील से सुशोभित हैं, विशुद्ध कुलरूप वंशतन्तु की वृद्धि करने में समर्थ एवं पूर्ण यौवन वाली हैं। ये मनोनुकूल एवं हृदय को इष्ट हैं। तेरी भावनाओं के अनुसार चलने वाली हैं। अतः हे पुत्र ! तू इनके साथ मनुष्य-सम्बन्धी विपुल कामभोगों का उपभोग कर और बाद में जब तू भुक्तभोगी हो जाए और विषय-विकारों में तेरी उत्सुकता (रुचि) समाप्त हो जाए, तब हमारे कालधर्म को प्राप्त हो जाने पर यावत् तू प्रव्रजित हो जाना।

39. The parents then said to *Kshatriya* youth Jamali — "Son! You have these eight beautiful wives. They are all perfectly beautiful, young and of noble lineage. Each one of them is skilled in arts, brought up with care, devoted to you and worthy of all comforts. They are tender, capable, modest and unique. They are delightful as well as measured and sweet in speech. They are accomplished in (womanly) laughter, gestures, movement, sensual enjoyments and other such acts. They are of unblemished lineage and endowed with noble virtues. They are youthful and capable of advancing the thread of pure lineage. They are lovable, desirable and accommodating to your wishes. Therefore, son, enjoy all the pleasures and joys of your marital life with them. When you are fully contented and apathetic to mundane desires, and after we are dead, then go and get initiated."

कामभोगों की असारता **WORTHLESSNESS OF PLEASURES**

४०. (जमालि) तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा–पियरो एवं वयासी–तहा वि णं तं अम्म! ताओ! जं णं तुब्भे मम एवं वयह 'इमाओ ते जाया! विपुलकुल० जाव पव्वइहिसि' एवं खलु अम्म! ताओ!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माणुस्सगा कामभोगा उच्चार–पासवण–खेल–सिंघाणग–वंत–पित्त–पूय–सुक्क–सोणियसमुब्भवा अमणुण्णदुरूव–मुत्त–पूइयपुरीसपुण्णा मयगंधुस्सासअसुभनिस्सासा उव्वेयणगा बीभच्छा अप्पकालिया लहुसगा कलमलाहिवासदुक्ख–बहुजणसाहारणा परिकिलेस–किच्छदुक्खसज्झा अबुहजणसेविया सदा साहुगरहणिज्जा अणंतसंसारवद्धणा कडुयफलविवागा चुडलि व्व अमुच्चमाण दुक्खाणुबंधिणो सिद्धिगमणविग्घा, से केस णं जाणति अम्म ! ताओ ! के पुव्विं गमणयाए ? के पच्छा गमणयाए ? तं इच्छामि णं अम्म ! ताओ ! जाव पव्वइत्तए।

४०. माता-पिता के पूर्वोक्त कथन के उत्तर में जमालि क्षत्रियकुमार ने इस प्रकार कहा–हे माता–पिता ! तथापि आपने जो यह कहा कि विशाल कुल में उत्पन्न तेरी ये आठ पत्नियाँ हैं, यावत् भुक्तभोग और वृद्ध होने पर तथा हमारे कालधर्म को प्राप्त होने पर दीक्षा लेना, किन्तु माताजी और पिताजी ! यह निश्चित है कि ये मनुष्य-सम्बन्धी कामभोग [अशुचि (अपवित्र) और अशाश्वत हैं], मल (उच्चार), मूत्र, श्लेष्म (कफ), सिंघाण (नाक का मैल-लींट), वमन, पित्त, मवाद (पूति), शुक्र और शोणित (रक्त या रज) से उत्पन्न होते हैं, ये अमनोज्ञ और दुरूप (असुन्दर), मूत्र तथा दुर्गन्धयुक्त विष्ठा से परिपूर्ण हैं; मृत कलेवर के समान दुर्गन्ध वाले उच्छ्वास एवं अशुभ निःश्वास से युक्त होने से उद्वेग (ग्लानि) पैदा करने वाले हैं। ये बीभत्स (घृणास्पद) हैं, अल्पकालस्थायी हैं, तुच्छ स्वभाव के हैं, कलमल (शरीर में रहा हुआ एक प्रकार का अशुभ द्रव्य) के स्थानरूप होने से दुःखरूप हैं और बहु-जनसमुदाय के लिए भोग्यरूप से साधारण हैं, ये अत्यन्त मानसिक क्लेश से तथा गाढ़ शारीरिक कष्ट से साध्य हैं। ये अज्ञानी जनों द्वारा ही सेवित हैं, साधु पुरुषों द्वारा सदैव निन्दनीय (गर्हणीय) हैं, अनन्त संसार की वृद्धि करने वाले हैं, परिणाम में कटु फल वाले हैं, जलते हुए घास के पूले के समान (एक बार लग जाने के बाद) कठिनता से छूटने वाले तथा दुःखानुबन्धी हैं, सिद्धि (मुक्ति) गमन में विघ्नरूप हैं। अतः हे माता-पिता ! यह भी कौन जानता है कि हममें से कौन पहले जायेगा, कौन पीछे ? इसलिए, हे माता-पिता ! आपकी आज्ञा प्राप्त होने पर मैं दीक्षा लेना चाहता हूँ।

40. Jamali replied, "Father and mother! You say that I have these eight beautiful wives of noble lineage. ... and so on up to... When I am fully contented, and after you are dead, I may go and get initiated. But please know that the source of these physical pleasures is the body (and it is impure and transient). It discharges stool, urine, phlegm, mucus of the nose (*singhaan*), vomit, bile, pus, semen, and blood (while indulging in these activities). It is filled with (as well as produces) impure things like repulsive, loathsome and malodorous excreta. And being the repository of impurities it is the source of misery. These pleasures produce repugnant inhalation and exhalation, stinking and abhorrent like a cadaver. They are despicable, short lived, base. Being common to masses they are ordinary but they are acquired through great mental turmoil and physical hardship. Only ignorant indulge in such things, the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

wise always despise and avoid them. They (mundane pleasures) extend the cycles of rebirth (*samsaar*) and bear bitter fruits. Like a burning bundle of hay they are difficult to get rid of and extremely distressing. They are the biggest hurdles on the road to salvation. Who knows which one of us will die first and who later? ... and so on up to... As such, O parents! With your permission I want get initiated into the ascetic order."

विवेचन : उक्त कथन से पता चलता है, मानवीय कामभोगों के प्रति जमालि के मन में कितनी गहरी विरक्ति हो गई थी और उसने उनकी असारता भलीभाँति समझ ली थी।

Elaboration — This statement conveys the intensity of repulsion for mundane pleasures in Jamali's mind. He had fully understood the worthlessness of the same.

४१. (माता-पिता) तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मापियरो एवं वयासी--इमे य ते जाया ! अज्जय-पज्जय-पिउपज्जयागए सुबहुहिरण्णे य सुवण्णे य कंसे य दूसे य विउलधणकणग० जाव संतसारसावएज्जे अलाहि जाव आसत्तमाओ कुलवंसाओ पकामं दातुं, पकामं भोत्तुं, पकामं परिभाएउं, तं अणुहोहि ताव जाया ! विउले माणुस्सए इड्ढिसक्कारसमुदए, तओ पच्छा अणुहूयकल्लाणे वड्ढियकुलवंसतंतु जाव पव्वइहिसि।

४१. तदनन्तर क्षत्रियकुमार जमालि से माता-पिता ने इस प्रकार कहा -"हे पुत्र ! तेरे पितामह, प्रपितामह और पिता के प्रपितामह से प्राप्त यह बहुत-सा हिरण्य, सुवर्ण, कांस्य, उत्तम वस्त्र (दूष्य), विपुल धन, कनक यावत् सारभूत द्रव्य विद्यमान है। यह द्रव्य इतना है कि सात पीढ़ी (कुलवंश) तक प्रचुर (मुक्त हस्त से) दान दिया जाय, पुष्कल भोगा जाय और बहुत-सा बाँटा जाय, तो भी पर्याप्त है (समाप्त नहीं हो सकता)। अतः हे पुत्र ! मनुष्य-सम्बन्धी इस विपुल ऋद्धि और सत्कार (सत्कार्य) समुदाय का अनुभव कर। फिर इस कल्याण (सुखरूप पुण्यफल) का अनुभव करके और कुलवंशतन्तु की वृद्धि करने के पश्चात् यावत् तू प्रव्रजित हो जाना।

41. The parents persisted, "There is abundant wealth including silver, gold, bronze, fine cloth, ... and so on up to... valuable things inherited from your grandfather, great-grandfather and great-great-grandfather. It is enough to last seven generations even if generously donated, spent or distributed. Therefore, son, you should humanly experience and enjoy this vast wealth and honour. Having experienced this beatitude and siring heirs for the family you may go and get initiated."

धन वैभव की नश्वरता TRANSIENCE OF WEALTH AND GRANDEUR

४२. (जमालि) तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-पियरो एवं वयासी--तहा वि णं तं अम्म ! ताओ ! जं णं तुब्भे ममं एवं वदह--'इमे य ते जाया ! अज्जग-पज्जग० जाव पव्वइहिसि' एवं खलु अम्म!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ताओ ! हिरण्णे य सुवण्णे य जाव सावएज्जे अग्गिसाहिए चोरसाहिए रायसाहिए मच्चुसाहिए दाइयसाहिए अग्गिसामन्ने जाव दाइयसामन्ने अधुवे अणितिए असासए पुव्विं वा पच्छा वा अवस्स-विप्पजहियव्वे भविस्सइ, से केस णं जाणइ० तं चेव जाव पव्वइत्तए।

४२. इस पर क्षत्रियकुमार जमालि ने माता-पिता से कहा-हे माता-पिता ! आपने जो यह कहा कि तेरे पितामह, प्रपितामह आदि से प्राप्त द्रव्य के दान, भोग आदि के पश्चात् यावत् प्रव्रज्या ग्रहण करना आदि, किन्तु हे माता-पिता ! यह हिरण्य, सुवर्ण यावत् सारभूत द्रव्य अग्नि-साधारण (नष्ट हो जाने वाला), चोर-साधारण, राज-साधारण, मृत्यु-साधारण एवं दायाद-साधारण (बँट जाने वाला) है, तथा अग्नि-सामान्य यावत् दायाद-सामान्य (अधीन) है। यह (धन) अध्रुव है, अनित्य है और अशाश्वत है। इसे पहले या पीछे एक दिन अवश्य छोड़ना पड़ेगा। अतः कौन जानता है कि कौन पहले जायेगा और कौन पीछे जायेगा? इत्यादि पूर्ववत् कथन जानना चाहिए; यावत् आपकी आज्ञा प्राप्त हो जाए तो मेरी दीक्षा ग्रहण करने की इच्छा है।

42. *Kshatriya* youth Jamali replied, "Parents! You say that there is abundant wealth ... and so on up to... I may go and get initiated. But please note that all these earthly things including silver, gold ... and so on up to... valuables can be consumed by fire. Thieves can take away this wealth. Government can confiscate it. Death can separate one from it and a partner can claim a share from it. In other words, this wealth is, in fact, under control of fire ... and so on up to... a partner. Moreover, it is mutable, transient and impermanent. As such, who knows which one of us will go first and who later? ... and so on up to... O parents! With your permission I want get initiated into the ascetic order."

विवेचन : माता-पिता ने जमालि के सामने, सुन्दर रमणियों के भोग की और यौवन की मोहकता का आर्कषण बताया, फिर शरीर व यौवन की सुन्दरता व सुदृढ़ता का अहंकार जगाने का प्रयास किया तथा धन वैभव का लोभ जगाने की चेष्टा की। परन्तु जमालि ने अपने अत्यन्त विवेक पूर्ण वैराग्य वचनों से उन सबकी निरर्थकता तथा नश्वरता बताकर माता-पिता को आश्वस्त किया कि उसका वैराग्य पक्का है।

Elaboration — Jamali's parents tried to entice him towards mundane life through attraction of beautiful women and pleasures of youth. Then they tried to inflame the ego of youthfulness and power and lastly the greed for wealth and grandeur. But Jamali convinced his parents about the depth of his feeling of detachment by logically proving the ephemeral nature of all these things.

संयम की दुष्करता HARDSHIPS OF ASCETIC-DISCIPLINE

४३. तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्म-ताओ जाहे नो संचाएंति विसयाणुलोमाहिं बहूहिं आघवणाहि य पण्णवणाहि य सन्नवणाहि य विण्णवणाहि य आघवित्तए वा पण्णवित्तए वा सन्नवित्तए वा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विण्णवित्तए वा ताहे विसयपडिकूलाहिं संजमभयुव्वेवणकरीहिं पण्णवणाहिं पण्णवेमाणा एवं वयासी—एवं खलु जाया ! निग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे केवले जहा आवस्सए जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंति, अहीव एगंतदिट्ठीए, खुरो इव एगंतधाराए, लोहमया जवा चावेयव्वा, वालुयाकवले इव निरस्साए, गंगा वा महानदी पडिसोयगमणयाए, महासमुद्दे वा भुजाहिं दुत्तरे, तिक्खं कमियव्वं, गरुयं लंबेयव्वं, असिधारगं वतं चरियव्वं।

नो खलु कप्पइ जाया ! समणाणं निग्गंथाणं आहाकम्मिए इ वा, उद्देसिए इ वा, मिस्सजाए इ वा, अज्झोयरए इ वा, पूइए इ वा, कीए इ वा, पामिच्चे इ वा, अच्छेज्जे इ वा, अणिसट्ठे इ वा, अभिहडे इ वा, कंतारभत्ते इ वा, दुब्भिक्खभत्ते इ वा, गिलाणभत्ते इ वा, वद्दलियाभत्ते इ वा, पाहुणगभत्ते इ वा, सेज्जायरपिंडे इ वा, रायपिंडे इ वा, मूलभोयणे इ वा, कंदभोयणे इ वा, फलभोयणे इ वा, बीयभोयणे इ वा, हरियभोयणे इ वा, भुत्तए वा पायए वा।

तुमं सि च णं जाया ! सुहसमुयिते णो चेव णं दुहसमुयिते, नालं सीयं, नालं उण्हं, नालं खुहा, नालं पिवासा, नालं चोरा, नालं वाला, नालं दंसा, नालं मसगा, नालं वाइय-पित्तिय-सेंभिय-सन्निवाइए विविहे रोगायंके परीसहोवसग्गे उदिण्णे अहियासेत्तए। तं नो खलु जाया ! अम्हे इच्छामो तुज्झं खणमवि विप्पयोगं, तं अच्छाहि ताव जाया ! जाव ताव अम्हे जीवामो, तओ पच्छा अम्हेहिं जाव पव्वइहिसि।

४३. जब क्षत्रियकुमार जमालि को उसके माता-पिता विषय के अनुकूल बहुत-सी उक्तियों, प्रज्ञप्तियों, संज्ञप्तियों और विज्ञप्तियों द्वारा कहने, बतलाने और समझाने-बुझाने में समर्थ नहीं हुए, तब विषय के प्रतिकूल तथा संयम के प्रति भय और उद्‌वेग उत्पन्न करने वाली उक्तियों से समझाते हुए इस प्रकार कहने लगे--हे पुत्र ! यह निर्ग्रन्थ-प्रवचन सत्य, अनुत्तर (अद्वितीय), परिपूर्ण न्याययुक्त, संशुद्ध, शल्य को काटने वाला, सिद्धिमार्ग, मुक्तिमार्ग, निर्याणमार्ग और निर्वाणमार्गरूप है। यह अवितथ (असत्यरहित, संदेहरहित) आदि आवश्यक के अनुसार यावत् सर्वदुःखों का अन्त करने वाला है। इसमें तत्पर जीव सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होते हैं, निर्वाण प्राप्त करते हैं एवं समस्त दुःखों का अन्त करते हैं। परन्तु यह (निर्ग्रन्थधर्म) सर्प की तरह एकान्त (चारित्र-पालन के प्रति निश्चय) दृष्टि वाला है, छुरे या खड्‌ग आदि तीक्ष्ण शस्त्र की तरह एकान्त (तीक्ष्ण) धार वाला है। यह लोहे के चने चबाने के समान दुष्कर है; बालु (रेत) के कौर (ग्रास) की तरह स्वादरहित (नीरस) है। गंगा आदि महानदी के प्रतिस्रोत (प्रवाह के सम्मुख) गमन के समान अथवा भुजाओं से महासमुद्र तैरने के समान पालन करने में अतीव कठिन है। (निर्ग्रन्थधर्म पालन करना) तीक्ष्ण (तलवार की तीखी) धार पर चलना है; महाशिला को उठाने के समान गुरुतर भार उठाना है। तलवार की तीक्ष्ण धार पर चलने के समान व्रत का आचरण करना (दुष्कर) है।

हे पुत्र ! निर्ग्रन्थ श्रमणों के लिए ये बातें कल्पनीय नहीं हैं। यथा-(१) आधाकर्मिक, (२) औद्देशिक, (३) मिश्रजात, (४) अध्यवपूरक, (५) पूतिक (पूतिकर्म), (६) क्रीत, (७) प्रामित्य, (८) अछेद्य, (९) अनिसृष्ट, (१०) अभ्याहृत, (११) कान्तारभक्त, (१२) दुर्भिक्षभक्त, (१३) ग्लानभक्त, (१४) वर्दलिकाभक्त, (१५) प्राघूर्णकभक्त, (१६) शय्यातरपिण्ड, और (१७) राजपिण्ड; (इन दोषों से युक्त आहार साधु को लेना कल्पनीय नहीं है।) इसी प्रकार मूल, कन्द, फल, बीज और हरित-हरी वनस्पति का भोजन करना या पीना भी उसके लिए अकल्पनीय है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हे पुत्र ! तू सुख में पला, सुख भोगने योग्य है, दुःख सहन करने योग्य नहीं है। तू (अभी तक) शीत, उष्ण, क्षुधा, पिपासा को तथा चोर, व्याल (सर्प आदि हिंस्र प्राणियों), डांस, मच्छरों के उपद्रव को एवं वात, पित्त, कफ एवं सन्निपात सम्बन्धी अनेक रोगों के आतंक को और उदय में आये हुए परीषहों एवं उपसर्गों को सहन करने में समर्थ नहीं है। हे पुत्र ! हम तो क्षणभर भी तेरा वियोग सहन करना नहीं चाहते। अतः पुत्र ! जब तक हम जीवित हैं, तब तक तू गृहस्थवास में रह। उसके बाद हमारे कालगत हो जाने पर, यावत् प्रव्रज्या ग्रहण कर लेना।

43. Thus when all enticing methods including telling, showing and explaining of suggestions, arguments, inducements, and allurements failed to break the resolve of *Kshatriya* youth Jamali, his parents resorted to repulsive methods like instilling fear and antipathy for ascetic discipline — "Son! The word of the *Nirgranth* (propagated by the omniscient) is true and unique. It is just, pure, and an antidote for thorns like illusion. It shows the path of purity, liberation, heaven and Nirvana. It is free from doubt as well as falsehood and is the means of removal of all sorrows. Those who follow the said path get perfected (*Siddha*), enlightened (*Buddha*), liberated (*mukta*), free of cyclic rebirth (nirvana), and end all miseries. However, to tread this path it is necessary to have a deep concentration like a snake has when it hunts its prey. This path is as sharp as a razor's edge. To tread this path is like biting iron bits. It is as tasteless as a mouthful of sand. To move on this path is like swimming against the current in a great river like the Ganges, swimming across an ocean, walking on spear points, suspending a heavy rock on the neck, and walking on the edge of a sword.

"Son! A wide range of eatables is prohibited for an ascetic; it includes— (1) *Adhakarmi* (food prepared for a specific ascetic), (2) *Auddeshik* (food generally cooked for ascetics or other seekers), (3) *Mishrajaat* (food prepared for self as well as ascetics), (4) *Adhyavapurak* (increasing the quantity of food when an ascetic comes for alms), (5) *Putik* (mixed with faulty food), (6) *Kreet* (food purchased for ascetics), (7) *Pramitya* (food borrowed for ascetic), (8) *Achhedya* (snatched from someone and given to ascetic), (9) *Anisrishta* (food offered without the knowledge of the owners), (10) *Abhyahrit* (food brought from some other place for ascetics), (11) *Kantar-bhakt* (food prepared for jungle travel), (12) *Durbhiksha-bhakt* (food prepared for drought), (13) *Glaan-bhakt* (food prepared for a sick person), (14) *Vardalika-bhakt* (food prepared for difficult times), (15) *Praghoorn-bhakt* (food prepared for guests), (16) *Shayyatar-pind* (food belonging to the shelter provider) and (17) *Raj-*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

pind (food from a king's kitchen or very tasty and nutritious food). Also prohibited are green vegetables including roots, bulbs, and fruits.

"Besides this, O son! you are born to enjoy the pleasures of life and not to suffer the pain. You are not accustomed to tolerate the extremes of cold and heat, neither can you tolerate numerous ailments caused by disturbed body humours including wind, bile, and phlegm as well as disturbances caused by thieves, ferocious animals including snakes and insects including drones and mosquitoes. It is beyond the limits of your tolerance to face various torments and afflictions. Besides, we cannot bear separation from you even for a moment. As such, son! you should remain a householder as long as we live. After that when we are no more you are free to get initiated into the order."

विवेचन : आधाकर्मिक आदि शब्दों का भावार्थ–आधाकर्मिक–किसी खास साधु के निमित्त सचित्त वस्तु को अचित्त करना या अचित्त को पकाना। **औद्देशिक**–सामान्यतया याचकों और साधुओं के उद्देश्य से आहारादि तैयार करना। **मिश्रजात**–अपने और साधुओं के लिए एक साथ पकाया हुआ आहार। **अध्यवपूरक**–साधुओं का आगमन सुनकर अपने बनते हुए भोजन में और मिला देना। **पूतिकर्म**–शुद्ध आहार में आधाकर्मादि का अंश मिल जाना। **क्रीत**–साधु के लिए खरीदा हुआ आहार। **प्रामित्य**–साधु के लिए उधार लिया हुआ आहारादि। **आछेद्य**–किसी से जबर्दस्ती छीनकर साधु को आहारादि देना। **अनिःसृष्ट**–किसी वस्तु के एक से अधिक स्वामी होने पर सबकी इच्छा के बिना देना। **अभ्याहृत**–साधु के सामने लाकर आहारादि देना। **कान्तारभक्त**–वन में रहे हुए भिखारी आदि के लिए तैयार किया हुआ आहारादि। **दुर्भिक्षभक्त**–दुष्काल पीड़ित लोगों को देने के लिए तैयार किया हुआ आहारादि। **ग्लानभक्त**–रोगियों के लिए तैयार किया हुआ आहारादि। **वार्दलिकाभक्त**–दुर्दिन या वर्षा के समय भिखारियों के लिए तैयार किया हुआ आहारादि। मेघाच्छादित दिन का नाम वार्दलिका है। **प्राघूर्णकभक्त**–पाहुनों के लिए बनाया हुआ आहारादि। **शय्यातरपिण्ड**–साधुओं को मकान देने वाले के घर से आहार लेना। **राजपिण्ड**–राजा के लिए बने हुए आहारादि में से देना।

Elaboration — Meanings of technical terms – Adhakarmi – To convert a *sachit* (living) thing to *achit* (non-living) or to cook *achit* thing specifically for an ascetics. **Auddeshik** – To prepare food or other consumable thing for ascetics or other alms-seekers. **Mishrajaat** – food jointly prepared for self as well as ascetics. **Adyavapurak** – increasing the quantity of food on getting information about an ascetic approaching for alms. **Putikarma** – food suitable for ascetics mixed with faulty food. **Kreet** – food purchased for ascetics. **Pramitya** – food etc. borrowed for ascetics. **Achhedya** – food snatched from someone and given to ascetic. **Anisrishta** – food belonging to more than one person and offered to ascetic without consent of all owners. **Abhyahrit** – food brought from some other place for ascetics with his knowledge. **Kantar-bhakt** – food prepared for jungle travel or seekers living in jungle. **Durbhiksha-**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

bhakt – food prepared for distributing in drought stricken areas. **Glan-bhakt** – food prepared for the ailing. **Vardalika-bhakt** – food prepared for a rainy day or difficult times. **Praghoorn-bhakt** – food prepared for guests. **Shayyatar-pind** – food from a house that provides facilities to ascetics for staying overnight. **Raj-pind** – food from a king's kitchen or very tasty and nutritious food.

४४. तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा–पियरो एवं वयासी–तहा वि णं तं अम्म ! ताओ ! जं णं तुब्भे ममं एवं वदह–एवं खलु जाया ! निग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे केवले तं चेव जाव पव्वइहिसि। एवं खलु अम्म ! ताओ ! निग्गंथे पावयणे कीवाणं कायराणं कापुरिसाणं इहलोगपडिबद्धाणं परलोगपरम्मुहाणं विसयतिसियाणं दुरणुचरे, पागयजणस्स। धीरस्स निच्छियस्स ववसियस्स नो खलु एत्थं किंचि वि दुक्करं करणयाए, तं इच्छामि णं अम्म ! ताओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए।

४४. तब क्षत्रियकुमार जमालि ने माता–पिता को उत्तर देते हुए कहा- हे माता–पिता ! आप मुझे यह जो कहते हैं कि यह निर्ग्रन्थ–प्रवचन सत्य है, अनुत्तर है, अद्वितीय है, यावत् तू समर्थ नहीं है इत्यादि यावत् बाद में प्रव्रजित होना; किन्तु हे माता–पिता ! यह निश्चित है कि क्लीबों (नामर्दों), कायरों, कापुरुषों तथा इस लोक में आसक्त और परलोक में पराङ्मुख (परलोक की चिंता से रहित) एवं विषयभोगों की तृष्णा वाले पुरुषों के लिए तथा प्राकृतजन (साधारण व्यक्ति) के लिए इस निर्ग्रन्थ–प्रवचन (धर्म) का आचरण करना दुष्कर है; परन्तु साहसिक, दृढ़ निश्चय एवं साधु नर के लिए संकलित्त पुरुष के लिए इसका आचरण करना कुछ भी दुष्कर नहीं है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप मुझे (प्रव्रज्या–ग्रहण की) आज्ञा दे दें तो मैं श्रमण भगवान महावीर के पास दीक्षा ले लूँ।

44. Jamali, the *Kshatriya* youth, replied, "Parents! You say that the word of the *Nirgranth* is true and unique ... and so on up to... That is beyond the limits of my tolerance ... and so on up to... therefore I should get initiated into the order later. But, parents, please know that this path of asceticism is difficult only for a weakling, a coward, spineless and other such timorous persons and also for those who are deeply involved only with earthly desires and pleasures having no awareness for the happiness of the other world or the next life. But it is not at all difficult for the brave and composed ones who have strong determination. As such, seeking your permission I wish to get initiated without any delay."

प्रव्रज्या–ग्रहण की अनुमति PERMISSION FOR INITIATION

४५. तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मा–पियरो जाहे नो संचाएंति विसयाणुलोमाहि य विसयपडिकूलाहि य बहूहि य आघवणाहि य पण्णवणाहि य सन्नवणाहि य विण्णवणाहि य आघवेत्तए वा जाव विण्णवेत्तए वा ताहे अकामाइं चेव जमालिस्स खत्तियकुमारस्स निक्खमणं अणुमन्नित्था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५. जब क्षत्रियकुमार जमालि के माता-पिता विषय के अनुकूल और विषय के प्रतिकूल बहुत-सी उक्तियों, प्रज्ञप्तियों, संज्ञप्तियों और विज्ञप्तियों द्वारा उसे समझा-बुझा न सके, तब अनिच्छा से (अनमने भावपूर्वक) क्षत्रियकुमार जमालि को दीक्षाभिनिष्क्रमण (दीक्षा-ग्रहण) की अनुमति दे दी।

45. When all methods including telling, showing and explaining of suggestions, arguments, inducements, and allurements as well as threats failed to break the resolve of *Kshatriya* youth Jamali, his parents reluctantly gave him permission to get initiated in the ascetic order.

अभिनिष्क्रमण-महोत्सव FESTIVE RENUNCIATION

४६. तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! खत्तियकुंडग्गामं नगरं सब्भिंतरबाहिरियं आसियसम्मज्जिओवलित्तं जहा उववाइए जाव पच्चप्पिणंति।

४६. तदनन्तर क्षत्रियकुमार जमालि के पिता ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और उन्हें इस प्रकार कहा हे देवानुप्रियो ! शीघ्र ही क्षत्रियकुण्डग्राम नगर के अन्दर और बाहर पानी का छिड़काव करो, झाड़/बुहारकर जमीन की सफाई करके उसे लिपाओ, यावत् नगर को सुसज्जित करो। यावत् जैसा औपपातिक सूत्र में वर्णन है वैसा कार्य करके उन कौटुम्बिक पुरुषों ने आज्ञा वापस सौंपी।

46. After this *Kshatriya* youth Jamali's father called his attendants and instructed them — "Beloved of gods! Be expeditious and sprinkle water inside and outside the city of Kshatriyakund, wipe and clean the ground, plaster it ... and so on up to... decorate it. ... and so on up to... the attendants reported back about completion of the order (as mentioned in *Aupapatik sutra*).

४७. तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया दोच्चं पि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! जमालिस्स खत्तियकुमारस्स महत्थं महग्घं महरिहं विपुलं निक्खमणाभिसेयं उवट्ठवेह।

४७. इसके पश्चात् क्षत्रियकुमार जमालि के पिता ने दुबारा उन कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और इस प्रकार कहा हे देवानुप्रियो ! शीघ्र ही जमालि क्षत्रियकुमार के महार्थ, महामूल्य, महार्ह (महान् पुरुषों के योग्य) और विपुल (विशाल) निष्क्रमणाभिषेक (दीक्षा महोत्सव) की तैयारी करो।

47. Once again *Kshatriya* youth Jamali's father called his attendants and instructed them — "Beloved of gods! Be expeditious and arrange for the festivities of great renunciation of Jamali, the *Kshatriya* youth, in a very ambitious, august, elaborate and grand manner befitting great men.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४८. तए णं ते कोडुंबियपुरिसा तहेव जाव पच्चप्पिणंति।

४८. इस पर कौटुम्बिक पुरुषों ने उनकी आज्ञानुसार कार्य करके आज्ञा वापस सौंपी।

48. In due course the attendants reported back about completion of the order.

४९. तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मा-पियरो सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहं निसीयावेंति, निसीयावेत्ता अट्ठसएणं सोवण्णियाणं कलसाणं एवं जहा रायप्पसेणइज्जे जाव अट्ठसएणं भोमिज्जाणं कलसाणं सव्विड्ढीए जाव रवेणं महया महया निक्खमणाभिसेगेणं अभिसिंचइ, निक्खमणाभिसेगेण अभिसिंचित्ता करयल जाव जएणं विजएणं वद्धावेंति, जएणं विजएणं वद्धावेत्ता एवं वयासी-भण जाया ! किं देमो ? किं पयच्छामो ? किणा वा ते अट्ठो ?

४९. तत्पश्चात् जमालि क्षत्रियकुमार के माता-पिता ने उसे उत्तम सिंहासन पर पूर्व की ओर मुख करके बिठाया। फिर एक सौ आठ सोने के कलशों से इत्यादि जिस प्रकार राजप्रश्नीयसूत्र में कहा है, तदनुसार यावत् एक सौ आठ मिट्टी के कलशों से सर्वऋद्धि (छत्र आदि राजचिह्न रूप ऋद्धि) के साथ यावत् (वाद्यों के) महाशब्द के साथ निष्क्रमणाभिषेक किया। निष्क्रमणाभिषेक पूर्ण होने के बाद (जमालिकुमार के माता-पिता ने) हाथ जोड़कर जय-विजय शब्दों से उसे बधाया। फिर उन्होंने उससे कहा-'पुत्र ! बताओ, हम तुम्हें विशेष रूप में क्या दें ? तुम्हारे किस कार्य में क्या (सहयोग) दें ? तुम्हारा क्या प्रयोजन है ?'

49. Then *Kshatriya* youth Jamali's parents seated him facing east on a grand throne. Having done that they performed the ritual of pre-renunciation anointing (*nishkramanabhishek*) with grand fanfare (including royal canopy and other regalia) using one hundred eight golden urns ... and so on up to... one hundred eight earthen urns, as described in *Rajaprashniya Sutra*. At the conclusion of the pre-renunciation anointing they (the parents) greeted him with joined palms and hails of victory. Finally they said — "Son! Tell us what may we give to you? In what mission may we assist you? What is it that you want us to do?"

५०. तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-पियरो एवं वयासी-इच्छामि णं अम्म ! ताओ ! कुत्तियावणाओ रयहरणं च पडिग्गहं च आणिउं कासवगं च सद्दाविउं।

५०. क्षत्रियकुमार जमालि ने माता-पिता से कहा-हे माता-पिता ! मैं कुत्रिकापण (देवाधिष्ठित दुकान जहाँ सब कुछ मिलता हो) से रजोहरण और पात्र मँगवाना चाहता हूँ और नापित को बुलाना चाहता हूँ।

50. Jamali, the *Kshatriya* youth, replied — "Parents! I want to get an ascetic-broom (*rajoharan*) and ascetic-bowls (*paatra*) from the market and also to call the barber."

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५१. तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! सिरिघराओ तिण्णि सयसहस्साइं गहाय सयसहस्सेणं सयसहस्सेणं कुत्तियावणाओ रयहरणं च पडिग्गहं च आणेह, सयसहस्सेणं च कासवगं सद्दावेह।

५१. तब क्षत्रियकुमार जमालि के पिता ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और कहा–"देवानुप्रियो ! शीघ्र ही श्रीघर (भण्डार) से तीन लाख स्वर्ण-मुद्राएँ (सोनैया) निकालकर उनमें से एक-एक लाख सोनैया देकर कुत्रिकापण से रजोहरण और पात्र ले आओ तथा (शेष) एक लाख सोनैया देकर नापित को बुलाओ।"

51. *Kshatriya* youth Jamali's father called his attendants and instructed them — "Beloved of gods! Be expeditious and collect three hundred thousand gold coins from the treasury. Then spend one hundred thousand each for ascetic-broom and bowl, and the remaining one hundred thousand for the barber to be called."

५२. तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा करयल जाव पडिसुणित्ता खिप्पामेव सिरिघराओ तिण्णि सयसहस्साइं तहेव जाव कासवगं सद्दावेंति।

५२. जमालि कुमार के पिता की उपर्युक्त आज्ञा सुनकर कौटुम्बिक पुरुष बहुत ही हर्षित एवं सन्तुष्ट हुए। उन्होंने हाथ जोड़कर यावत् स्वामी के वचन स्वीकार किये और शीघ्र ही श्रीघर (भण्डार) से तीन लाख स्वर्ण-मुद्राएँ निकालकर कुत्रिकापण से रजोहरण और पात्र लाये तथा नापित को बुलाया।

52. The attendants felt pleased and honoured to get this order from Jamali's father. They joined their palms ... and so on up to... accepted their master's order. They immediately collected three hundred thousand gold coins from the treasury and brought the ascetic-broom and bowl as well as called the barber."

५३. तए णं से कासवए जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणो कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविए समाणे हट्ठे तुट्ठे ण्हाए कयबलिकम्मे जाव सरीरे जेणेव जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता करयल० जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पियरं जएणं विजएणं वद्धावेइ, जएणं विजएणं वद्धावित्ता एवं वयासी–संदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! जं मए करणिज्जं।

५३. फिर जमालि के पिता के आदेश से कौटुम्बिक पुरुषों द्वारा नाई को बुलाये जाने पर वह बहुत ही प्रसन्न और तुष्ट हुआ। उसने स्नानादि किया, यावत् शरीर को अलंकृत किया, फिर जहाँ जमालि के पिता थे, वहाँ आया और उन्हें जय-विजय शब्दों से बधाया, फिर इस प्रकार कहा–"हे देवानुप्रिय ! मुझे करने योग्य कार्य का आदेश दीजिए।"

53. When the barber got the call he felt very much pleased and honoured. He took his bath ... and so on up to... embellished himself. He then came to Jamali's father, greeted him with hails of victory and said — "Beloved of gods! Kindly instruct me what to do?"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५४. तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तं कासवगं एवं वयासी--तुमं णं देवाणुप्पिया ! जमालिस्स खत्तियकुमारस्स परेणं जत्तेणं चउरंगुलवज्जे निक्खमणपाउग्गे अग्गकेसे कप्पेहि।

५४. इस पर क्षत्रियकुमार जमालि के पिता ने नापित से कहा हे देवानुप्रिय ! क्षत्रियकुमार जमालि के निष्क्रमण के योग्य अग्रकेश (सिर के आगे-आगे के बाल) चार अंगुल छोड़कर अत्यन्त यत्नपूर्वक (सावधानीपूर्वक) काट दो।

54. *Kshatriya* youth Jamali's father told the barber — "Beloved of gods! Please carefully trim *Kshatriya* youth Jamali's hair, leaving about four Angul (a linear measure equal to width of a finger) length suitable for the renunciation ritual.

केश मुण्डन TONSURING

५५. तए णं से कासवए जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे करयल जाव एवं सामी ! तहत्ताणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता सुरभिणा गंधोदएणं हत्थ-पादे पक्खालेइ, सुरभिणा गंधोदएणं हत्थ-पादे पक्खालित्ता सुद्धाए अट्ठपडलाए पोत्तीए मुहं बंधइ, मुहं बंधित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स परेणं जत्तेणं चउरंगुलवज्जे निक्खमणपाउग्गे अग्गकेसे कप्पेइ।

५५. क्षत्रियकुमार जमालि के पिता के द्वारा यह आदेश दिये जाने पर वह नापित अत्यन्त हर्षित एवं तुष्ट हुआ और हाथ जोड़कर यावत् बोला "स्वामिन् ! आपकी जैसी आज्ञा है, वैसा ही होगा;" इस प्रकार उसने विनयपूर्वक उनके वचनों को स्वीकार किया। फिर सुगन्धित गन्धोदक से हाथ-पैर धोए, आठ पट वाले शुद्ध वस्त्र से मुँह बाँधा और अत्यन्त यत्नपूर्वक क्षत्रियकुमार जमालि के निष्क्रमण-योग्य अग्रकेशों को चार अंगुल छोड़कर काटा।

55. On getting these instructions from *Kshatriya* youth Jamali's father, the barber felt very much pleased and honoured. Joining his palms, he said — "Master! I will do exactly as you have said." Thus he humbly accepted the order. He then washed his hands and feet with perfumed water, covered his mouth with a clean eight-fold cloth and carefully trimmed *Kshatriya* youth Jamali's hair leaving about four Angul length, suitable for the renunciation ritual.

विवेचन : विशेषार्थ-**णिक्खमणपाउग्गे अग्गकेसे**-दीक्षित होने वाले व्यक्ति के आगे के केश चार अंगुल छोड़कर काटे जाते थे, ताकि गुरु अपने हाथ से उनका लुञ्चन कर सकें, इसे निष्क्रमण-योग्य केशकर्तन कहा जाता था। **अट्ठपडलाए पोत्तीए**-आठ पटल (परत या तह) वाली पोतिका (मुखवस्त्रिका) से।

Elaboration — Technical terms – *Nikkhamanapaugge aggakese* – a person aspiring to get initiated into the ascetic order had to get his hair trimmed leaving about four Angul length. This was done so that the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

guru could conveniently pull out the remaining hair while performing the ritual of initiation. This was called hair trimming suited for renunciation. *Atthapadalaaye pottiye* – mouth-cover of eight-fold clothe.

५६. तए णं सा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया हंसलक्खणेणं पडसाडएणं अग्गकेसे पडिच्छइ, अग्गकेसे पडिच्छित्ता सुरभिणा गंधोदएणं पक्खालेइ, सुरभिणा गंधोदएणं पक्खालेत्ता अग्गेहिं वरेहिं गंधेहिं मल्लेहिं अच्चेति, अच्चित्ता सुद्धवत्थेणं बंधेइ, सुद्धवत्थेणं बंधित्ता रयणकरंडगंसि पक्खिवति, पक्खिवित्ता हार–वारिधार–सिंदुवार–छिन्नमुत्तावलिप्पगासाइं सुयवियोगदूसहाइं अंसूइं विणिम्मुयमाणी विणिम्मुयमाणी एवं वयासी–एस णं अम्हं जमालिस्स खत्तियकुमारस्स बहूसु तिहीसु य पव्वणीसु य उस्सवेसु य जण्णेसु य छणेसु य अपच्छिमे दरिसणे भविस्सति इति कट्टु ओसीसगमूले ठवेइ।

५६. इसके पश्चात् क्षत्रियकुमार जमालि की माता ने शुक्लवर्ण के या हंस-चिह्न वाले वस्त्र की चादर (शाटक) में उन अग्रकेशों को ग्रहण किया। फिर उन्हें सुगन्धित गन्धोदक से धोया, फिर प्रधान एवं श्रेष्ठ गन्ध (इत्र) एवं माला द्वारा उनका अर्चन किया और शुद्ध वस्त्र में उन्हें बाँधकर रत्नकरण्डक (रत्नों के पिटारे) में रखा। इसके बाद जमालिकुमार की माता हार, जलधारा, सिन्दुवार के पुष्पों एवं टूटी हुई मोतियों की माला के समान पुत्र के दुःसह (असह्य) वियोग के कारण आँसू बहाती हुई इस प्रकार कहने लगी–"ये (जमालिकुमार के अग्रकेश) हमारे लिए बहुत-सी तिथियों, पर्वों, उत्सवों और नागपूजादिरूप यज्ञों तथा (इन्द्र-) महोत्सवादिरूप क्षणों में क्षत्रियकुमार जमालि के अन्तिम दर्शनरूप होंगे (उसकी स्मृति के प्रतीक रहेंगे)।"–ऐसा विचार कर उन्हें अपने तकिये के नीचे रख दिया।

56. *Kshatriya* youth Jamali's mother then collected the hair on a piece of cloth, white like a swan. After that she washed them with scented water and performed the adoration ritual with best of perfumes and garlands. Having done that she wrapped them in a clean cloth and placed them in a jewelry box. Then lamenting the intolerable agony of separation of her son, and shedding tears like a broken necklace, a stream of water, a garland of Sinduwar flowers and a string of beads, *Kshatriya* youth Jamali's mother said — "These (hair of Jamali) will serve as symbols of the last beholding (or signs of the memory of the last meeting) on many dates (of occasions), festivals, celebrations, worships, sacrifices and ceremonies including those for Naag and Indra." With these words she placed the box under her pillow.

५७. तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स अम्मा–पियरो दुच्चं पि उत्तरावक्कमणं सीहासणं रयावेंति, दुच्चं पि उत्तरावक्कमणं सीहासणं रयावित्ता जमालिं खत्तियकुमारं सेयापीतएहिं कलसेहिं ण्हाणेंति, सेयापीतएहिं कलसेहिं ण्हाणेत्ता पम्हसुकुमालाए सुरभीए गंधकासाइए गायाइं लूहेंति, सुरभीए गंधकासाइए गायाइं लूहेत्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपंति, गायाइं अणुलिंपित्ता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नासानिस्सासवायवोज्झं चक्खुहरं वण्णफरिसजुत्तं हयलालापेलवातिरेगं धवलं कणगखचियंतकम्मं महरिहं हंसलक्खणं पडसाडगं परिहिंति, परिहित्ता हारं पिणद्धेंति, २ अद्धहारं पिणद्धेंति, अ० पिणद्धित्ता एवं जहा सूरियाभस्स अलंकारो तहेव जाव चित्तं रयणसंकडुक्कडं मउडं पिणद्धंति, किं बहुणा ? गंथिम–वेढिम–पूरिम–संघातिमेणं चउव्विहेणं मल्लेणं कप्परुक्खगं पिव अलंकियविभूसियं करेंति।

५७. इसके पश्चात् क्षत्रियकुमार जमालि के माता-पिता ने दूसरी बार भी उत्तरदिशाभिमुख सिंहासन रखवाया और क्षत्रियकुमार जमालि को श्वेत और पीत (चाँदी और सोने के) कलशों से स्नान करवाया। फिर रुएँदार सुकोमल गन्धकाषायित सुगन्धियुक्त वस्त्र (तौलिये या अंगोछे) से उसके अंग (गात्र) पोंछे। उसके बाद सरस गोशीर्षचन्दन का गात्रों पर लेपन किया। तदनन्तर नाक के निःश्वास की वायु से उड़ जाए, ऐसा बारीक, नेत्रों को आह्लादक (या आकर्षक) लगने वाला, सुन्दर वर्ण और कोमल स्पर्श से युक्त, घोड़े के मुख की लार से भी अधिक कोमल, श्वेत और (किनारे पर) सोने के तारों से जड़ा हुआ, महामूल्यवान् एवं हंस के चिह्न से युक्त पटशाटक (रेशमी वस्त्र) पहनाया। फिर हार (अठारह लड़ी वाला हार) एवं अर्द्ध-हार (नवसरा हार) पहनाया। जैसे राजप्रश्नीयसूत्र में सूर्याभदेव के अलंकारों का वर्णन है, उसी प्रकार यहाँ भी समझना चाहिए, यावत् विचित्र रत्नों से जटित मुकुट पहनाया। अधिक क्या कहें ! ग्रन्थिम (गूँथी हुई), वेष्टिम (लपेटी हुई), पूरिम (पूरी हुई-भरी हुई) और संघातिम (परस्पर संघात की हुई जोड़ी हुई) रूप से तैयार की हुई चारों प्रकार की मालाओं से कल्पवृक्ष के समान उस जमालिकुमार को अलंकृत एवं विभूषित किया गया।

57. Once again *Kshatriya* youth Jamali's parents got a throne placed facing north and helped him taking bath with water poured from white and yellow (silver and golden) pitchers; wiped his body dry with fragrant and perfumed soft towel, and applied best quality of sandal-wood paste (*saras Goshirsh-chandan*). Now they provided him a silk dress to wear. It was so fine as to wave with force of normal breathing. It was pleasant to the eyes, beautiful in colour and soft in touch. It was white, softer than the saliva from a horse's mouth and with a golden brocade border. It was very costly and printed with a swan-emblem. Having done that they placed a necklace (with eighteen strings) and half necklace (with nine strings) on his neck. After this they adorned him with numerous ornaments like those of Suryaabh Dev as described in *Rajprashniya Sutra* ... and so on up to... placed a gem studded crown on his head. Needless to add more to the description beyond saying that he was fully embellished with four kinds of garlands including *granthim* (made by stringing), *veshtim* (made by wrapping), *purim* (made by braiding or filling) and *sanghatim* (made by interweaving or entwining) so much so that he looked like a wish-fulfilling tree (*Kalp-vriksha*) in all respects.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : इस वर्णन से पता चलता है, उस युग में आभूषण-निर्माण तथा वस्त्र-निर्माण की कला अत्यन्त विकसित हो चुकी थी। जहाँ इतना कोमल, बारीक तथा कलापूर्ण वस्त्र तैयार होता था।

Elaboration — This description provides an important information about the advanced textile technology and craft of ornament making of that period. The fineness of the cloth and the range of the ornaments described provide ample evidence of this fact.

शिविकारोहण **BOARDING THE PALANQUIN**

५८. तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासि–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अणेगखंभसयसन्निविट्ठं लीलट्ठियसालभंजियागं जहा रायप्पसेणइज्जे विमाणवण्णओ जाव मणिरयणघंटियाजालपरिखित्तं पुरिससहस्सवाहणीयं सीयं उवट्ठवेह, उवट्ठवेत्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह।

५८. तदनन्तर क्षत्रियकुमार जमालि के पिता ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाकर कहा–हे देवानुप्रियो ! शीघ्र ही सैकड़ों खंभों से युक्त, लीलापूर्वक खड़ी हुई पुतलियों वाली मणि-रत्नों की घंटियों के समूह से चारों ओर से घिरी हुई, हजार पुरुषों द्वारा उठाई जाने योग्य (विशाल) शिविका (पालकी) (तैयार करके) उपस्थित करो और मेरी इस आज्ञा का पालन करके मुझे पुनः निवेदन करो।

58. Now *Kshatriya* youth Jamali's father called his staff and said, "Beloved of gods! Without delay arrange for a large palanquin with many pillars, and decorated with figures of dancing damsels. It should be decorated with bunches of small gem studded bells all around. It should be so large as to be carried by one thousand persons. Do that and report back."

५९. तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पच्चप्पिणंति।

५९. इस आदेश को सुनकर कौटुम्बिक पुरुषों ने उसी प्रकार की शिविका तैयार करके यावत् (उन्हें) निवेदन किया।

59. On getting this order the staff members arranged for the described palanquin ... and so on up to... reported back.

६०. तए णं से जमाली खत्तियकुमारे केसालंकारेणं वत्थालंकारेणं मल्लालंकारेणं आभरणालंकारेणं चउव्विहेणं अलंकारेण अलंकारिए समाणे पडिपुण्णालंकारे सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, सीहासणाओ अब्भुट्ठेत्ता सीयं अणुप्पदाहिणीकरेमाणे सीयं दुरूहइ, दुरूहित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे सन्निसण्णे।

६०. तत्पश्चात् क्षत्रियकुमार जमालि केशालंकार, वस्त्रालंकार, माल्यालंकार और आभरणालंकार; इन चार प्रकार के अलंकारों से अलंकृत यथास्थान साजसज्जा से युक्त होकर तथा प्रतिपूर्ण अलंकारों से सुसज्जित होकर सिंहासन से उठा। वह दक्षिण की ओर से (अथवा शिविका की प्रदक्षिणा करते हुए) शिविका पर चढ़ा और श्रेष्ठ सिंहासन पर पूर्व की ओर मुँह करके आसीन हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

60. After that *Kshatriya* youth Jamali, perfectly adorned with fourfold embellishments including hair adornments, dress, garlands and ornaments, rose from his throne. He then boarded the palanquin from the south (going around) and sat on the finest throne facing east.

६१. तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया ण्हाया कयबलिकम्मा जाव सरीरा हंसलक्खणं पडसाडगं गहाय सीयं अणुप्पदाहिणीकरेमाणी सीयं दुरूहइ, सीयं दुरूहित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स दाहिणे पासे भद्दासणवरंसि सन्निसण्णा।

६१. फिर क्षत्रियकुमार जमालि की माता स्नानादि करके यावत् शरीर को अलंकृत करके हंस के चिह्न वाला पटशाटक लेकर दक्षिण की ओर से शिविका पर चढ़ी और जमालिकुमार की दाहिनी ओर श्रेष्ठ भद्रासन पर बैठी।

61. Then *Kshatriya* youth Jamali's mother, after taking her bath ... and so on up to... embellishing her body, took the silken cloth with swan-emblem and boarded the palanquin from the left and sat on the throne to the right of Jamali.

६२. तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स अम्मधाई ण्हाया जाव सरीरा रयहरणं च पडिग्गहं च गहाय सीयं अणुप्पदाहिणीकरेमाणी सीयं दुरूहइ, सीयं दुरूहित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स वामे पासे भद्दासणवरंसि सन्निसणा।

६२. तदनन्तर क्षत्रियकुमार जमालि की धायमाता ने स्नानादि किया, यावत् शरीर को अलंकृत करके रजोहरण और पात्र लेकर दाहिनी ओर से शिविका पर चढ़ी और क्षत्रियकुमार जमालि के बाईं ओर श्रेष्ठ भद्रासन पर बैठी।

62. Then *Kshatriya* youth Jamali's governess after taking her bath ... and so on up to... embellishing her body, took the ascetic-broom as well as the bowl and boarded the palanquin from the right and sat on the throne to the left of Jamali.

६३. तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिट्ठओ एगा वरतरुणी सिंगारागारचारुवेसा संगय-गय जाव रूवजोव्वणविलासकलिया सुंदरथण० हिम-रयत-कुमुद-कुंदेंदुप्पगासं सकोरेंटमल्लदामं धवलं आयवत्तं गहाय सलीलं धारेमाणी धारेमाणी चिट्ठइ।

६३. फिर क्षत्रियकुमार जमालि के पृष्ठभाग में (पीछे) शृंगार की हुई सुन्दर वेश वाली, सुन्दर गति वाली, यावत् रूप और यौवन के विलास से युक्त तथा लावण्य, रूप एवं यौवन के गुणों से युक्त एक उत्तम तरुणी हिम (बर्फ), रजत (चाँदी), कुमुद, कुन्दपुष्प एवं चन्द्रमा के समान, कोरण्टक पुष्प की माला से युक्त, श्वेत छत्र (आतपत्र) हाथ में लेकर लीलापूर्वक (नृत्य मुद्रा में) धारण करती हुई खड़ी हुई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

63. Now came and stood at the back of *Kshatriya* youth Jamali a well embellished and beautifully dressed noble lady, amply endowed with charm and qualities of youth and beauty, in a dancing posture carrying a white umbrella that was adorned with garlands of Korant flowers as white as snow, silver, Kumud flower, Kunda flower and the moon.

६४. तए णं तस्स जमालिस्स उभयोपासिं दुवे वरतरुणीओ सिंगारागारचारु जाव कलियाओ नाणामणि–कणग–रयण–विमल–महरिह–तवणिज्जुज्जलविचित्तदंडाओ चिल्लियाओ संखंक–कुंदेंदु–दगरय–अमयमहियफेणपुंजसन्निकासाओ धवलाओ चामराओ गहाय सलीलं वीयमाणीओ वीयमाणीओ चिट्ठंति।

६४. तदनन्तर जमालिकुमार के दोनों (दाहिनी तथा बाईं) ओर शृंगार के घर के समान, सुसज्जित सुन्दर वेश वाली यावत् रूप–यौवन के विलास से युक्त दो उत्तम तरुणियाँ हाथ में चामर लिए हुए लीला सहित ढुलाती हुई खड़ी हो गईं। वे चामर अनेक प्रकार की मणियों, कनक (पीला सोना), रत्नों तथा विशुद्ध एवं महामूल्यवान् तपनीय (लाल स्वर्ण) से निर्मित उज्ज्वल एवं विचित्र दण्ड वाले तथा चमचमाते हुए (देदीप्यमान) थे और शंख, अंकरत्न, कुन्द–(मोगरा के) पुष्प, चन्द्र, जलबिन्दु, मथे हुए अमृत के फेन के पुँज के समान श्वेत थे।

64. After that came and stood on both flanks of *Kshatriya* youth Jamali two well embellished ... and so on up to... noble ladies, carrying whisks and waving them. The exquisite and glowing handles of these whisks were made of pure gold of immense value and studded with a variety of gems and beads. The hair of these whisks were spotless white like conch-shell, Anka gem, Kund (Mogra) flowers, the moon, drop of water, and foam of churned nectar.

६५. तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स उत्तरपुरत्थिमेणं एगा वरतरुणी सिंगारागार जाव कलिया सेयं रयतामयं विमलसलिलपुण्णं मत्तगयमहामुहाकितिसमाणं भिंगारं गहाय चिट्ठइ।

६५. और फिर क्षत्रियकुमार जमालि के उत्तरपूर्व (ईशानकोण) में शृंगार के गृह के समान, उत्तम वेश वाली यावत् रूप, यौवन और विलास से युक्त एक श्रेष्ठ तरुणी पवित्र (शुद्ध) जल से परिपूर्ण, उन्मत्त हाथी के महामुख के आकार के समान श्वेत रजत–निर्मित कलश (भृंगार) (हाथ में) लेकर खड़ी हो गई।

65. Then came and stood, on the northeast of *Kshatriya* youth Jamali, a well embellished ... and so on up to... noble lady, carrying a pure water filled pitcher made of white silver in the shape of the head of mad elephant.

६६. तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स दाहिणपुरत्थिमेणं एगा वरतरुणी सिंगारागार जाव कलिया चित्तं कणगदंडं तालयंटं गहाय चिट्ठइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६६. उसके बाद क्षत्रियकुमार जमालि के दक्षिणपूर्व (आग्नेयकोण) में शृंगार गृह के तुल्य यावत् रूप यौवन और विलास से युक्त एक श्रेष्ठ युवती विचित्र स्वर्णमय दण्ड वाले एक ताड़पत्र के पंखे को लेकर खड़ी हो गई।

66. After that came and stood, on the northeast of *Kshatriya* youth Jamali, a well embellished ... and so on up to... noble lady, carrying a palm leaf fan with an exquisite handle made of gold.

६७. तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, कोडुंबियपुरिसे सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! सरिसयं सरित्तयं सरिव्वयं सरिसलावण्ण–रूव–जोव्वणगुणोववेयं एगाभरणवसणगहियनिज्जोयं कोडुंबियवरतरुणसहस्सं सद्दावेह।

६७. तब क्षत्रियकुमार जमालि के पिता ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाकर कहा–'हे देवानुप्रियो ! शीघ्र ही एक सरीखे, समान त्वचा वाले, समान वय वाले, समान लावण्य, रूप और यौवन–गुणों से युक्त, एक सरीखे आभूषण, वस्त्र और परिकर धारण किये हुए एक हजार श्रेष्ठ कौटुम्बिक तरुणों को बुलाओ।'

67. Now *Kshatriya* youth Jamali's father called his staff and said, "Beloved of gods! Without delay call here a thousand young men of similar complexion, age and endowed with similar qualities of beauty, charm and youth to act as choicest attendants. They should be in similar dress, adornment and headgear.

६८. तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव सरिसयं सरित्तयं जाव सद्दावेंति।

६८. तब वे कौटुम्बिक पुरुष स्वामी के आदेश को यावत् स्वीकार करके शीघ्र ही एक सरीखे, समान त्वचा वाले यावत् एक हजार श्रेष्ठ कौटुम्बिक तरुणों को बुला लाए।

68. Then those staff members ... and so on up to... accepted their masters order and soon called a thousand young men ... and so on up to... to act as choicest attendants.

६९. तए णं ते कोडंबियपुरिस (? तरुणा) जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणो कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठतुट्ठ० ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता एगाभरणवसणगहियनिज्जोया जेणेव जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता करयल जाव वद्धावेत्ता एवं वयासी–संदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! जं अम्हेहिं करणिज्जं।

६९. कौटुम्बिक पुरुषों द्वारा बुलाये हुए वे एक हजार तरुण सेवक हर्षित और सन्तुष्ट होकर, स्नानादि से निवृत्त होकर बलिकर्म, कौतुक, मंगल एवं प्रायश्चित्त करके एक सरीखे आभूषण और वस्त्र तथा वेश धारण करके जहाँ जमालि क्षत्रियकुमार के पिता थे, वहाँ आए और हाथ जोड़कर यावत् उन्हें जय–विजय शब्दों से बधाकर बोले–हे देवानुप्रिय ! हमें जो कार्य करना है, उसका आदेश दीजिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

69. Being thus commissioned, one thousand youthful attendants were delighted and honoured. They took their bath and completed their ritual routines of awakening protective spirits, repentance for mistakes, offerings to gods, using auspicious things like curd, rice, mustard, grass, etc. Then they adorned themselves with similar ornaments and dresses and came to *Kshatriya* youth Jamali's father. They joined their palms, greeted him with hails of victory and submitted — "Beloved of gods! Please tell us what is to be done."

७०. तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तं कोडुंबियवरतरुणसहस्सं एवं वयासी–तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! ण्हाया कयबलिकम्मा जाव गहियनिज्जोगा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स सीयं परिवहह।

७०. तब क्षत्रियकुमार जमालि के पिता ने उन एक हजार तरुण सेवकों को इस प्रकार कहा–हे देवानुप्रियो! तुम स्नानादि करके यावत् एक सरीखे वेश में सुसज्ज होकर जमालिकुमार की शिविका को उठाओ।

70. *Kshatriya* youth Jamali's father said to those one thousand young attendants — "Beloved of gods! Take your bath ... and so on up to... wear uniforms and lift *Kshatriya* youth Jamali's palanquin."

७१. तए णं ते कोडुंबियपुरिसा (? तरुणा) जमालिस्स खत्तियकुमारस्स जाव पडिसुणेत्ता ण्हाया जाव गहियनिज्जोगा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स सीयं परिवहंति।

७१. तब वे कौटुम्बिक तरुण क्षत्रियकुमार जमालि के पिता का आदेश शिरोधार्य करके स्नानादि करके यावत् एक सरीखी पोशाक धारण किये हुए (उन तरुण सेवकों ने) क्षत्रियकुमार जमालि की शिविका उठाई।

71. The attendants accepted the order of *Kshatriya* youth Jamali's father. After taking bath ... and so on up to... wearing uniforms they lifted *Kshatriya* youth Jamali's palanquin.

७२. तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं दुरूढस्स समाणस्स तप्पढमयाए इमे अट्ठट्ठमंगलगा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तं०–सोत्थिय सिरिवच्छ जाव दप्पणा। तदणंतरं च णं पुण्णकलसभिंगारं जहा उववाइए जाव गगणतलमणुलिहंती पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया। एवं जहा उववाइए तहेव भाणियव्वं जाव आलोयं च करेमाणा 'जय जय' सद्दं च पउंजमाणा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया। तदणंतरं च णं बहवे उग्गा भोगा जहा उववाइए जाव महापुरिसवग्गुरा परिक्खित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पुरओ य मग्गओ य पासओ य अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया।

७२. हजार पुरुषों द्वारा उठाई जाने योग्य उस शिविका पर जब जमालि क्षत्रियकुमार आदि सब आरूढ़ हो गये, तब उस शिविका के आगे-आगे सर्वप्रथम ये आठ मंगल अनुक्रम से चले, यथा–(१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वस्तिक, (२) श्रीवत्स, (३) नन्द्यावर्त्त, (४) वर्धमानक, (५) भद्रासन, (६) कलश, (७) मत्स्य, और (८) दर्पण। इन आठ मंगलों के अनन्तर पूर्ण कलश चला; आकाश को स्पर्श करती हुई-सी वैजयन्ती (ध्वजा) भी आगे यथानुक्रम से रवाना हुई। यावत् आलोक करते हुए और जय-जयकार शब्द का उच्चारण करते हुए अनुक्रम से आगे चले। इसके पश्चात् बहुत से उग्रकुल के, भोगकुल के क्षत्रिय इत्यादि महापुरुषों के वर्ग से परिवृता होकर क्षत्रियकुमार जमालि के आगे, पीछे और आस-पास चलने लगे। यह समग्र वर्णन विस्तारयुक्त औपपातिकसूत्र में कूणिक के दर्शन मात्र प्रसंग अनुसार जान लेना चाहिए।

72. Once the palanquin was ready with *Kshatriya* youth Jamali and others boarding the same and being lifted by one thousand bearers, it was preceded by eight auspicious objects in this order — (1) *Swastika* (a specific graphic design resembling the mathematical sign of addition with a perpendicular line added to each of the four arms in clockwise direction), (2) *Shrivats* (a specific mark found on the chest of all *Tirthankars*), (3) *Nandyavart* (a specific elaborate graphic design resembling an extended swastika), (4) *Vardhamanak* (a specific design of vessel), (5) *Bhadrasan* (a specific design of seat), (6) *Kalash* (an urn), (7) *Matsya* (a fish), and (8) *Darpan* (a mirror). These were followed by the royal attendants carrying pitchers and jars filled with water ... and so on up to... the beautiful flag of victory (*vijaya-vaijayanti*) furling sky high with the wind. (as mentioned in *Aupapatik sutra*) ... and so on up to... People followed hailing victory for the hero. *Kshatriya* youth Jamali's said palanquin was surrounded by many prominent persons belonging to Ugra, Bhoga and other clans walking on its front, back and flanks. Detailed description is as mentioned in *Aupapatik sutra* in context of King Kunik going to behold Bhagavan Mahavir.

७३. तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया ण्हाए कयबलिकम्मे जाव विभूसिए हत्थिखंधवरगए सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं उद्धुव्वमाणीहिं हय-गय-रह-पवरजोहकलियाए चाउरंगिणीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडे महया भड-चडगर जाव परिक्खित्ते जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिट्ठओ पिट्ठओ अणुगच्छइ।

७३. तदनन्तर क्षत्रियकुमार जमालि के पिता ने स्नान आदि किया। यावत् विभूषित होकर उत्तम हाथी के कंधे पर चढ़े और कोरण्टक पुष्प की माला से युक्त छत्र धारण किये हुए, श्वेत चामरों से बिंजाते हुए, घोड़े, हाथी, रथ और श्रेष्ठ योद्धाओं से युक्त चतुरंगिणी सेना से परिवृत होकर तथा महासुभटों के समुदाय से घिरे हुए यावत् क्षत्रियकुमार के पीछे-पीछे चल रहे थे।

73. *Kshatriya* youth Jamali's father too took his bath ... and so on up to... embellished himself and rode the royal elephant. With an umbrella decorated with garlands of Korantak flowers over his head, fanned with a

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

pair of white whisks, surrounded by four pronged army including great warriors and soldiers riding elephants, horses and chariots as well as those walking on feet. ... and so on up to... followed Jamali, the *Kshatriya* youth.

७४. तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पुरओ महं आसा आसव (वा) रा, उभओ पासिं णागा णागवरा, पिट्ठओ रहा रहसंगेल्ली।

७४. साथ ही उस जमालि क्षत्रियकुमार के आगे बड़े-बड़े और श्रेष्ठ घुड़सवार तथा उसके दोनों बगल (पार्श्व) में उत्तम हाथी एवं पीछे रथ और रथसमूह चल रहे थे।

74. Ahead of *Kshatriya* youth Jamali were noble riders on excellent horses, on his flanks were best of elephants and on his rear came chariots.

७५. तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अब्भुग्गयभिंगारे पग्गहियतालियंटे ऊसवियसेतछत्ते पवीइसतसेतचामरबालवीयणीए सव्विड्ढीए जाव णादितरवेणं खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव माहणकुंडग्गामे नयरे जेणेव बहुसालए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

७५. इस प्रकार (दीक्षाभिलाषी) क्षत्रियकुमार जमालि सर्व ऋद्धि सहित यावत् बाजे-गाजे के साथ (वाद्यों के निनाद के साथ) चलने लगा। उसके आगे कलश और ताड़पत्र का पंखा लिए हुए पुरुष चल रहे थे। उसके सिर पर श्वेत छत्र धारण किया हुआ था। उसके दोनों ओर श्वेत चामर और छोटे पंखे बिंजाए जा रहे थे। [इनके पीछे बहुत-से लकड़ी, भाला, पुस्तक यावत् वीणा आदि लिए हुए लोग चल रहे थे। उनके पीछे एक सौ आठ हाथी आदि, फिर लाठी, खड्ग, भाला आदि, लिए हुए पदाति (पैदल चलने वाले)-पुरुष तथा उनके पीछे बहुत-से युवराज, धनाढ्यं, यावत् सार्थवाह प्रभृति तथा बहुत-से लोग यावत् गाते-बजाते, हँसते-खेलते चल रहे थे।] (इस प्रकार) क्षत्रियकुमार जमालि क्षत्रियकुण्डग्राम नगर के मध्य में से होकर जाता हुआ, ब्राह्मणकुण्डग्राम के बाहर जहाँ बहुशालक नामक उद्यान में श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, उस ओर गमन करने लगा।

75. Thus moved the procession of *Kshatriya* youth Jamali (aspiring for initiation) accompanied with all the grandeur ... and so on up to... sound of musical instruments. Ahead of him moved attendants carrying urns and palm-leaf fans. He had a white umbrella over his head. He was being fanned with white whisks and small fans from both sides. [On the rear came many people carrying staffs, spears, books ... and so on up to... *Veena* (a stringed musical instrument). Behind them came one hundred eight elephants etc. followed again by people carrying staffs, swords, etc. and walking on feet. After them came many princes, wealthy people ... and so on up to... caravan chiefs and many other people singing and dancing.] Moving through the city of Kshatriyakund, the procession proceeded towards Bahushalak garden outside Brahman Kundagram where Shraman Bhagavan Mahavir was stationed.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७६. तए णं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छमाणस्स सिंघाडग–तिग–चउक्क जाव पहेसु बहवे अत्थत्थिया जहा उववाइए जाव अभिनंदंता य अभित्थुणंता य एवं वयासी–जय जय णंदा ! धम्मेणं, जय जय णंदा ! तवेणं, जय जय णंदा ! भद्दं ते, अभग्गेहिं णाण–दंसण–चरित्तमुत्तमेहिं अजियाइं जिणाहि इंदियाइं, जियं च पालेहि समणधम्मं, जियविग्घो वि य वसाहि तं देव ! सिद्धिमज्झे, णिहणाहि य राग–दोसमल्ले तवेणं धितिधणियबद्धकच्छे, मद्दाहि अट्ठकम्मसत्तू झाणेणं उत्तमेणं सुक्केणं, अप्पमत्तो हराहि आराहणपडागं च धीर ! तिलोक्करंगमज्झे, पावय वितिमिरमणुत्तरं केवलं च णाणं, गच्छ य मोक्खं परं पदं जिणवरोवदिट्ठेणं सिद्धिमग्गेणं अकुडिलेणं, हंता परीसहचमुं, अभिभविय गामकंटकोवसग्गा णं, धम्मे ते अविग्घमत्थु ! त्ति कट्टु अभिनंदंति य अभिथुणंति य।

७६. जब क्षत्रियकुमार जमालि क्षत्रियकुण्डग्राम नगर के मध्य में से होकर जा रहा था, तब शृंगाटक, त्रिक, चतुष्क यावत् राजमार्गों पर बहुत-से अर्थार्थी (धनार्थी), कामार्थी इत्यादि लोग; औपपातिकसूत्र में कहे अनुसार इष्ट, कान्त, प्रिय आदि शब्दों से यावत् अभिनन्दन एवं स्तुति करते हुए इस प्रकार कहने लगे–"हे नन्द (आनन्ददाता) ! धर्म द्वारा तुम्हारी जय हो ! हे नन्द ! तप के द्वारा तुम्हारी जय हो ! हे नन्द ! तुम्हारा भद्र (कल्याण) हो ! हे देव ! अखण्ड उत्तम ज्ञान–दर्शन–चारित्र द्वारा (अब तक) अविजित इन्द्रियों को जीतो और विजित श्रमणधर्म का पालन करो। हे देव ! विघ्नों को जीतकर सिद्धि (मुक्ति) में जाकर बसो ! तप से धैर्यरूपी कच्छ को अत्यन्त दृढ़तापूर्वक बाँधकर राग–द्वेषरूपी मल्लों को पछाड़ो ! उत्तम शुक्लध्यान के द्वारा अष्टकर्मशत्रुओं का मर्दन करो ! हे धीर ! अप्रमत्त होकर त्रैलोक्य के रंगमंच (विश्वमण्डप) में आराधनारूपी पताका ग्रहण करो (अथवा फहरा दो) और अन्धकाररहित (विशुद्ध प्रकाशमय) अनुत्तर केवलज्ञान को प्राप्त करो ! तथा जिनवरोपदिष्ट सरल (अकुटिल) सिद्धिमार्ग पर चलकर परम पद रूप मोक्ष को प्राप्त करो ! परीषह-सेना को नष्ट करो तथा इन्द्रियग्राम के कण्टकरूप (प्रतिकूल) उपसर्गों पर विजय प्राप्त करो ! तुम्हारा धर्माचरण निर्विघ्न हो!" इस प्रकार से लोग अभिनन्दन एवं स्तुति करने लगे।

76. As *Kshatriya* youth Jamali passed through the city of Kshatriya Kundagram, on triangular courtyards (*singhatak*), crossings of three, four ... and so on up to... highways, he was greeted with auspicious words in coveted, pleasant, lovable, likable, joyous, desirable and blissful voice by masses of people among whom were many who sought wealth, many who desired worldly pleasures, and many who only desired food. They uttered — "O source of joy! May you be victorious on the religious path. O noble one! May you be victorious through austerities. May all go well with you O benefactor of the world! May you conquer the unconquerable sense organs through unhindered pure knowledge, perception and conduct, and follow the path of *Shramans* that you have accepted. O Divine one! May you cross all hurdles and attain liberation. With patience and resolve, may you annihilate the adversaries in the form of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

attachment and aversion by means of penance. May you subjugate the enemies in the form of eight types of *Karmas* with the help of pure ultimate meditation (*Shukla Dhyan*). O Epitome of patience! May you become ever alert and furl the flag of spiritualism on the universal stage. May you attain the ultimate state of pure knowledge or omniscience that is free of the darkness of ignorance. May you destroy the chain of afflictions and being free of them may you attain the stable and eternal state of liberation. May your spiritual endeavour be free of obstacles." And they repeatedly hailed for the auspicious victory.

७७. तए णं से जमाली खत्तियकुमारे नयणमालासहस्सेहिं पिच्छिज्जमाणे पिच्छिज्जमाणे एवं जहा उववाइए कूणिओ जाव णिग्गच्छति, निग्गच्छित्ता जेणेव माहणकुंडग्गामे नगरे जेणेव बहुसालए चेइए तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता छत्तादीए तित्थगरातिसए पासइ, पासित्ता पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं ठवेइ, ठवित्ता पुरिससहस्सवाहिणीओ सीयाओ पच्चोरुहइ।

७७. औपपातिकसूत्र में वर्णित कूणिक के वर्णनानुसार क्षत्रियकुमार जमालि (दीक्षार्थी के रूप में) हजारों (व्यक्तियों) की नयनावलियों द्वारा देखा जाता हुआ यावत् (क्षत्रियकुण्डग्राम नगर के बीचोंबीच होकर) निकला। फिर ब्राह्मणकुण्डग्राम नगर के बाहर बहुशालक नामक उद्यान के निकट आया और ज्यों ही उसने तीर्थंकर भगवान के छत्र आदि अतिशयों को देखा, त्यों ही हजार पुरुषों द्वारा उठाई जाने वाली उस शिविका को ठहराया और स्वयं उस सहस्रपुरुषवाहिनी शिविका से नीचे उतरा।

77. Like King Kunik, as detailed in *Aupapatik Sutra*, *Kshatriya* youth Jamali (aspiring initiation) witnessed by thousands of assembled people ... and so on up to... passed through Kshatriya Kundagram city and approached Bahushalak garden outside Brahman Kundagram. As soon as he saw the divine wonders around the *Tirthankar*, including the divine canopies, he stopped the thousand-bearer palanquin and got down from it.

प्रव्रज्या ग्रहण INITIATION

७८. तए णं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मा-पियरो पुरओ काउं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ; तेणेव उवागच्छित्ता, समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी-एवं खलु भंते ! जमाली खत्तियकुमारे अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते जाव किमंग पुण पासणयाए ? से जहानामए उप्पले इ वा पउमे इ वा जाव सहस्सपत्ते इ वा पंके जाए जले संवुड्ढे णोवलिप्पइ पंकरएणं णोवलिप्पइ जलरएणं एवामेव जमाली वि खत्तियकुमारे कामेहिं जाए भोगेहिं संवुड्ढे णोवलिप्पइ कामरएणं णोवलिप्पइ भोगरएणं णोवलिप्पइ मित्त-णाइ-नियग-सयण-संबंधि-परिजणेणं, एस णं देवाणुप्पिया ! संसारभउव्विग्गे, भीए जम्मण-मरणेणं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणागारियं पव्वयइ, तं एयं णं देवाणुप्पियाणं अम्हे सीसभिक्खं दलयामो, पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया सीसभिक्खं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७८. तदनन्तर क्षत्रियकुमार जमालि को आगे करके उसके माता-पिता, जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, वहाँ उपस्थित हुए और श्रमण भगवान महावीर को दाहिनी ओर से तीन बार प्रदक्षिणा की, यावत् वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार निवेदन किया-भगवन् ! यह क्षत्रियकुमार जमालि, हमारा इकलौता, इष्ट, कान्त और प्रिय पुत्र है। यावत्-इसका नाम सुनना भी दुर्लभ है तो दर्शन दुर्लभ हो, इसमें कहना ही क्या ! जैसे कोई कमल (उत्पल), पद्म या यावत् सहस्रदलकमल कीचड़ में उत्पन्न होने और जल में संवर्द्धित (बड़ा) होने पर भी पंकरज से लिप्त नहीं होता, न जल-कण (जलरज) से लिप्त होता है; इसी प्रकार क्षत्रियकुमार जमालि भी काम में उत्पन्न हुआ, भोगों में संवर्द्धित (बड़ा) हुआ; किन्तु काम में लेश मात्र भी लिप्त (आसक्त) नहीं हुआ और न ही भोग के अंश मात्र से लिप्त (आसक्त) हुआ और न यह मित्र, ज्ञाति, निज-सम्बन्धी, स्वजन-सम्बन्धी और परिजनों में लिप्त हुआ है। हे देवानुप्रिय ! यह संसार-(जन्म-मरणरूप) भय से उद्विग्न हो गया है, यह जन्म-मरण (के चक्र) के भय से भयभीत हो चुका है। अतः आप देवानुप्रिय के पास मुण्डित होकर, अगारवास छोड़कर अनगारधर्म में प्रव्रजित हो रहा है। इसलिए हम आप देवानुप्रिय को यह शिष्य-भिक्षा देते हैं। आप देवानुप्रिय इस शिष्यरूप भिक्षा को स्वीकार करें।

78. Now, keeping him in the lead *Kshatriya* youth Jamali's parents approached Shraman Bhagavan Mahavir and after going around him three times from the right ... and so on up to... paying due obeisance submitted thus — "*Bhante!* This is *Kshatriya* youth Jamali, our only and cherished, lovely, adored, charming, and beloved son. ... and so on up to... It is difficult to hear about a son like him, what to say of seeing one that is so rare. A lotus (Utpal, Padma etc.) sprouts in swamp and grows in water but still remains free from stains of mud or wetness of water. In the same way *Kshatriya* youth Jamali was born out of lust and grew amidst earthly pleasures but has still remained free from the slime of lust and wetness of indulgence in pleasures. He is equally detached from his relatives, kin, friends and servants. Beloved of gods! He has become apprehensive of the cycles of rebirth and the sequence of birth-aging-death. As such, renouncing his home and shaving his head he wants to become *Anagaar* (homeless ascetic) from *Aagaar* (house-holder) under your auspices. That is why we want to effect a disciple-donation and beseech you to accept him as a disciple."

७९. तए णं समणे भगवं महावीरे तं जमालिं खत्तियकुमारं एवं वयासी-अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं।

७९. इस पर श्रमण भगवान महावीर ने उस क्षत्रियकुमार जमालि से इस प्रकार कहा-"हे देवानुप्रिय ! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो, वैसा करो, किन्तु (धर्मकार्य में) विलम्ब मत करो।"

79. At this Shraman Bhagavan Mahavir said to *Kshatriya* youth Jamali — "O Beloved of gods! Do as you please and do not procrastinate."

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

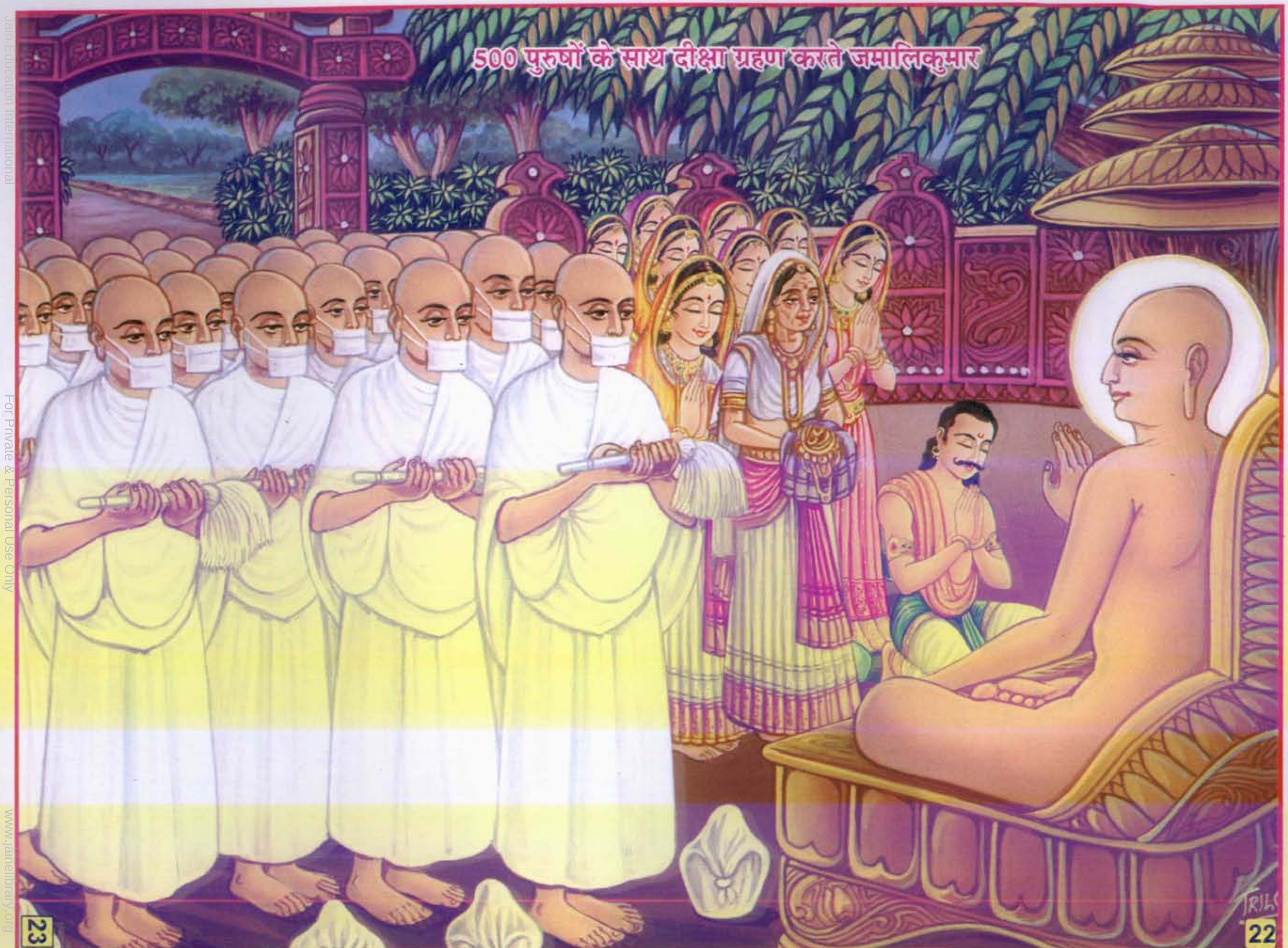

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 22

Illustration No. 22

जमालिकुमार की दीक्षा

जब जमालिकुमार के माता-पिता किसी भी उपाय से पुत्र को रोकने में समर्थ नहीं हुये तो उन्होंने उसे दीक्षा की अनुमति दे दी। जमालिकुमार ने 500 पुरुषों के साथ ब्राह्मणकुण्ड नगर के बाहर बहुशालक उद्यान में भगवान महावीर के पास प्रवज्या ग्रहण की।

—शतक 9, उ. 33

INITIATION OF PRINCE JAMALI

When the parents of prince Jamalikumar have failed to stop him after all efforts they allowed him to get initiated. Jamali got initiated along with 500 other aspirants by Bhagavan Mahavir at Bahushalak Garden outside Brahman Kundagram.

—Shatak-9, lesson-33

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८०. तए णं से जमाली खत्तियकुमारे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे समणं गवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं अवक्कमइ, अवक्कमित्ता सयमेव ाभरण–मल्लालंकारं ओमुयइ।

८०. भगवान के द्वारा स्वीकृति होने पर क्षत्रियकुमार जमालि हर्षित और तुष्ट हुआ; तत्पश्चात् मण भगवान महावीर को तीन बार प्रदक्षिणा कर यावत् वन्दना–नमस्कार कर, उत्तर–पूर्व दिशा ईशानकोण) में गया। वहाँ जाकर उसने स्वयं ही आभूषण, माला और अलंकार उतार दिये।

80. Being thus accepted by *Bhagavan*, *Kshatriya* youth Jamali was leased and contented. He went around Shraman Bhagavan Mahavir ... nd so on up to... paid homage and obeisance. Then he proceeded in the ortheast direction and removed all his ornaments and dress.

८१. तए णं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया हंसलक्खणेणं पडसाडएणं आभरण–मल्लालंकारं डिच्छति, पडिच्छित्ता हार–वारि जाव विणिम्मुयमाणी विणिम्मुयमाणी जमालिं खत्तियकुमारं एवं यासी– 'घडियव्वं जाया ! जइयव्वं जाया ! परक्कमियव्वं जाया ! अस्सिं च णं अट्ठे णो पमायेयव्वं' ति ट्टु जमालिस्स खत्तियकुमारस्स अम्मा–पियरो समणं भगवं महावीरं वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता, ामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया।

८१. इसके तत्पश्चात् जमालि क्षत्रियकुमार की माता ने उन आभूषणों, माला एवं अलंकारों को स के चिह्न वाले एक पटशाटक (रेशमी वस्त्र) में ग्रहण कर लिया और फिर टूटे मोती के हार, ालधारा, इत्यादि के समान यावत् आँसू गिराती हुई अपने पुत्र से इस प्रकार बोली–हे पुत्र ! संयम में ष्टा करना, पुत्र ! संयम में यत्न करना; हे पुत्र ! संयम में पराक्रम करना। इस (संयम के) विषय में रा भी प्रमाद न करना। इस प्रकार कहकर जमालि के माता-पिता श्रमण भगवान महावीर को न्दना–नमस्कार करके स्वस्थान को वापस चले गये।

81. *Kshatriya* youth Jamali's mother collected the dress and rnaments in a soft piece of silk with a swan mark and shedding tears ike a broken necklace, a stream of water etc. uttered — " Son! Put in all liligence, effort, and prowess into your practices and do not be ethargic." After this, *Kshatriya* youth Jamali's parents bowed before Shraman Bhagavan Mahavir with all reverence and went back in the lirection they came from.

८२. तए णं से जमाली खत्तियकुमारे सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेति, करित्ता जेणेव समणे भगवं हावीरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता एवं जहा उसभदत्तो (सूत्र १६) तहेव पव्वइओ, नवरं पंचहिं रिससएहिं सद्धिं तहेव सव्वं जाव सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, सामाइयमाइयाइं क्कारस अंगाइं अहिज्जेत्ता बहूहिं चउत्थ–छट्ठ–ऽट्ठम जाव मासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं प्पाणं भावेमाणे विहरइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८२. तत्पश्चात् जमालिकुमार ने स्वयमेव पंचमुष्टिक पाँचों अँगुलियों की मुट्ठी बाँधकर लोच किया, फिर श्रमण भगवान महावीर की सेवा में उपस्थित हुआ और ऋषभदत्त ब्राह्मण (सूत्र १६ में वर्णित) की तरह भगवान के पास प्रव्रज्या अंगीकार की। विशेषता यह है कि जमालि क्षत्रियकुमार ने ५०० पुरुषों के साथ प्रव्रज्या ग्रहण की, शेष सब वर्णन पूर्ववत् है। यावत् जमालि अनगार ने फिर सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया और बहुत-से उपवास, बेला (छट्ठ), यावत् अर्द्ध-मास, मासखमण (मासिक) इत्यादि विचित्र तपश्चर्याओं से अपनी आत्मा को भावित करता हुआ विचरण करने लगा।

82. *Kshatriya* youth Jamali then pulled out all his hair (formally termed as five-fistful pulling out of hair), came near Shraman Bhagavan Mahavir and got initiated by him like Brahman Rishabh-datt (as described in aphorism-16). The difference is that *Kshatriya* youth Jamali got initiated along with 500 persons, rest of the description is same. ... and so on up to... studied the eleven limbs (*Anga*) of the canon ... and so on up to... he enkindled his soul by observing unique austerities including one day, two days, three days and four days fasts, moving about as an ascetic.

जमालि का पृथक् विहार INDEPENDENT MOVEMENT OF JAMALI

८३. तए णं से जमाली अणगारे अन्नया कयाई जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-'इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं बहिया जणवयविहारं विहरित्तए।

८३. तदनन्तर एक दिन जमालि अनगार श्रमण भगवान महावीर के पास आए और भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार बोले-भगवन् ! आपकी आज्ञा प्राप्त होने पर मैं पाँच सौ अनगारों के साथ इस जनपद से बाहर (अन्य जनपदों में) विहार करना चाहता हूँ।

83. Later one day ascetic Jamali came to Shraman Bhagavan Mahavir and after paying his homage and obeisance said — "*Bhante!* If you kindly permit me I would like to move away from this region with my five hundred ascetics and roam about (in other areas)."

८४. तए णं से समणे भगवं महावीरे जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं णो आढाइ, णो परिजाणइ, तुसिणीए संचिट्ठइ।

८४. यह सुनकर श्रमण भगवान महावीर ने जमालि अनगार की इस बात को आदर (महत्त्व) नहीं दिया, स्वीकार नहीं किया और मौन रहे।

84. Shraman Bhagavan Mahavir did not pay any attention to this request from Jamali. He, in fact, did not approve of it.

८५. तए णं से जमाली अणगारे समणं भगवं महावीरं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी-इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं जाव विहरित्तए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 23

Illustration No. 23

जमालि अणगार

दीक्षित होने के पश्चात् जमालि अणगार ने सामायिक आदि 11 अंगों का अध्ययन किया। वे उपवास, बेला, तेला, अर्ध मासखमण, मासखमण आदि विविध तपस्या से अपनी आत्मा को भावित करते विचरने लगे। तपस्या से जमालि अणगार का शरीर कृश एवं दुर्बल हो गया था। एक बार जमालि अणगार ने भगवान के पास आकर 500 अणगारों के साथ अन्यत्र विचरने की आज्ञा माँगी। भगवान मौन रहे। तब जमालि अणगार ने यही बात दूसरी और तीसरी बार कही, परन्तु भगवान पूर्ववत् मौन रहे। तब मौन को स्वीकृति मानकर जमालि अणगार 500 अणगारों के साथ बहुशालक उद्यान से निकलकर अन्य जनपदों में विचरने लगे।

—शतक 9, उ. 33

ASCETIC JAMALI

After getting initiated ascetic Jamali studied the eleven limbs (*Anga*) of the canon. He enkindled his soul by observing unique austerities including one day, two days, three days, fifteen days and one month long fasts, moving about as an ascetic. Due to these austerities the body of ascetic Jamali became lean and weak. One day ascetic Jamali sought permission from Bhagavan Mahavir to move away from this region with his five hundred ascetics and roam about (in other areas). Bhagavan remained silent even after he sought the permission a second and third time. Considering his silence to be consent Jamali left the garden with his 500 disciples and moved about in other areas.

—Shatak-9, lesson-33

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८५. तब जमालि अनगार ने श्रमण भगवान महावीर से दूसरी बार और तीसरी बार भी इसी प्रकार कहा-भंते ! आपकी आज्ञा मिल जाये तो मैं पाँच सौ अनगारों के साथ अन्य जनपदों में विहार करना चाहता हूँ।

85. Then ascetic Jamali repeated his request second and third time — "*Bhante!* If you kindly permit me I would like to move away from this region with my five hundred ascetics and roam about (in other areas)."

८६. तए णं समणे भगवं महावीरे जमालिस्स अणगारस्स दोच्चं पि तच्चं पि एयमट्ठं णो आढाइ जाव तुसिणीए संचिट्ठइ।

८६. जमालि अनगार के दूसरी बार और तीसरी बार भी वही बात कहने पर श्रमण भगवान महावीर ने इस बात का आदर नहीं किया, यावत् मौन रहे।

86. Even the second and third time Shraman Bhagavan Mahavir paid no attention ... and so on up to... remained silent.

८७. तए णं से जमाली अणगारे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ बहुसालाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं बहिया जणवयविहारं विहरइ।

८७. तब (ऐसी स्थिति में) जमालि अनगार ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन नमस्कार किया और फिर उनके पास से, बहुशालक उद्यान से निकला और फिर वह पाँच सौ अनगारों के साथ बाहर के (अन्य) जनपदों में विचरण करने लगा।

87. Then (under these circumstances) ascetic Jamali finally paid his homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir, came out of Bahushalak garden and commenced his independent itinerant way with his five hundred ascetics in other regions.

विवेचन : उक्त स्वतंत्र वर्णन से प्रतीत होता है कि जमालि अनगार द्वारा स्वतन्त्र विचरण की महत्त्वाकांक्षा एवं सर्वज्ञ सर्वदर्शी भगवान द्वारा उसके स्वतन्त्र विचरण के पीछे अहंकार, महत्त्वाकांक्षा एवं अधैर्य के प्रादुर्भाव होने की और भविष्य में देव-गुरु आदि के विरोधी बन जाने की संभावना देखकर 'भाविदोषत्वेनोपेक्षणीयत्त्वादस्येति' स्वतन्त्र विहार की अनुज्ञा नहीं दी गई। किन्तु इस बात की अवहेलना करके जमालि अनगार भगवान महावीर से पृथक् विहार करने लगे।

Elaboration — From the aforesaid description it appears that Jamali was not given the permission to move about independently because omniscient Bhagavan Mahavir realized that the driving force in Jamali's mind was his ego, ambition, and impatience. This would ultimately lead him to defy the order and the guru. It was the future possibility of regression that restrained Bhagavan Mahavir from giving permission to Jamali and not due to any ill will. However, Jamali ignored this and went on his own.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८८. तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी नाम णयरी होत्था। वण्णओ। कोट्ठए चेइए। वण्णओ। जाव वणसंडस्स।

८८. उस काल उस समय में श्रावस्ती नाम की नगरी थी। उसका वर्णन वहाँ कोष्ठक नामक उद्यान था, यावत् वनखण्ड तक समग्र वर्णन जान लेना चाहिए।

88. During that period of time there was a city called Shravasti. Description (as in *Aupapatik Sutra*). There was a garden called Koshthak. Description. ... and so on up to... forest strip.

८९. तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नाम नयरी होत्था। वण्णओ। पुण्णभद्दे चेइए। वण्णओ। जाव पुढविसिलावट्टओ।

८९. उस काल और उस समय में चम्पा नाम की नगरी थी। उसका वर्णन वहाँ पूर्णभद्र नामक चैत्य था। उनका वर्णन (औपपातिकसूत्र से समझ लेना चाहिए) यावत् उसमें पृथ्वीशिलापट्ट था।

89. During that period of time there was a city called Champa. Description (as in *Aupapatik Sutra*). There was a garden called Purnabhadra. Description. ... and so on up to... Slab of stone.

९०. तए णं से जमाली अणगारे अन्नया कयाइ पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव सावत्थी नयरी जेणेव कोट्ठए चेइए तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हइ, अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

९०. एक बार वह जमालि अनगार, पाँच सौ अनगारों के साथ अनुक्रम से विचरण करता हुआ और ग्रामानुग्राम विहार करता हुआ श्रावस्ती नगरी में जहाँ कोष्ठक उद्यान था, वहाँ आया और मुनियों के कल्प के अनुरूप अवग्रह ग्रहण करके संयम और तप के द्वारा आत्मा में रमण करता हुआ विचरण करने लगा।

90. Once in course of his wanderings from one village to another, that ascetic Jamali, along with his group of five hundred ascetics, arrived at Koshthak garden in Shravasti City. He took the vows according to the ascetic code and camped in the garden devoting his time to ascetic discipline and austerities.

९१. तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव सुहंसुहेणं विहरमाणे जेणेव चंपा नगरी जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छइ; तेणेव उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हइ, अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९१. श्रमण भगवान महावीर भी एक बार अनुक्रम से विचरण करते हुए, यावत् सुखपूर्वक विहार करते हुए, जहाँ चम्पानगरी में पूर्णभद्र नामक चैत्य था, वहाँ पधारे; तथा अवग्रह आवास स्थान तथा पट्टे-चौकी आदि की याचना ग्रहण करके संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण कर रहे थे।

91. In course of his comfortable wanderings from one village to another, Shraman Bhagavan Mahavir also arrived at Purnabhadra Chaitya in Champa City. Seeking a suitable place and permission he stayed there enkindling his soul with ascetic-discipline and austerities.

जमालि अनगार के शरीर में रोगातंक ASCETIC JAMALI'S AILMENT

९२. तए णं तस्स जमालिस्स अणगारस्स तेहिं अरसेहि य विरसेहि य अंतेहि य पंतेहि य लूहेहि य तुच्छेहि य कालाइक्कंतेहि य पमाणाइक्कंतेहि य सीतएहि य पाण-भोयणेहिं अन्नया कयाइ सरीरगंसि विउले रोगातंके पाउब्भूए-उज्जले विउले पगाढे कक्कसे कडुए चंडे दुक्खे दुग्गे तिव्वे दुरहियासे, पित्तज्जरपरिगतसरीरे दाहवक्कंतिए यावि विहरइ।

९२. उस समय जमालि अनगार को अरस, विरस, अन्त, प्रान्त, रूक्ष और तुच्छ तथा कालातिक्रान्त और प्रमाणातिक्रान्त एवं ठण्डे पान (पेय पदार्थों) और भोजनों (भोज्य पदार्थों) (के सेवन) से एक बार शरीर में विपुल रोगांतक (व्याधि) उत्पन्न हो गया। वह रोग उज्ज्वल, विपुल, प्रगाढ़, कर्कश, कटुक, चण्ड, दुःख रूप, दुर्ग (कष्टसाध्य), तीव्र और दुःसह था। उसका शरीर पित्तज्वर से व्याप्त होने के कारण दाह से युक्त हो रहा था।

92. Now because of consuming food that was tasteless (*aras*), foul (*viras*), leftover (*ant*), not enough (*praant*), dry (*ruksh*), stale (*kaalatikrant*), excessive or meager (*pramaanaatikrant*) or due to intake of cold drinks or food, once Jamali suffered from a grave sickness. This ailment was excruciating (*ujjval*), intense (*vipul*), severe (*pragaadh*), harsh (*karkash*), agonizing (*chand*), bitter (*katuk*), miserable (*duhkha roop*), intolerable (*durg*), sharp (*tivra*) and unbearable (*duhsaha*). He suffered from bile fever and ran a very high temperature.

विवेचन : विशेष शब्दों का भावार्थ-अरसेहि-बिना रस वाले-बेस्वाद। **विरसेहि**-पुराने होने से खराब रस वाले। **अन्तेहिं**-अरस होने से सब धान्यों से तुच्छ धान्य वाला। **पंतेहि**-बचा-खुचा बासी आहार। **लूहेहि**-रूक्ष। **तुच्छेहि**-थोड़े से, या हल्की किस्म के। **कालाइक्कंतेहि : दो अर्थ**-जिसका काल व्यतीत हो चुका हो ऐसा आहार, अथवा भूख-प्यास का समय बीत जाने पर किया गया आहार। **पमाणाइक्कंतेहि**-भूख-प्यास की मात्रा के अनुपात में जो आहार न हो। **सीतएहि**-ठंडा आहार। **विउले**-विपुल-समस्त शरीर में व्याप्त। **उज्जले**-उत्कट ज्वलन-(दाह) कारक। **पगाढे**-तीव्र या प्रबल। **कक्कसे**-कठोर या अनिष्टकारी। **चंडे**-रौद्र-भयंकर। **दुक्खे**-दुःख रूप। **दुग्गे**-कष्टसाध्य। **दुरहियासे**-दुस्सह। **पित्तज्जरपरिगयसरीरे**-पित्तज्वर से व्याप्त शरीर वाला।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दाहवक्कंतिए–दाह (जलन) उत्पन्न हुआ। जमालि का शरीर अति सुकुमार था। अतः श्रमण जीवन के आहार–सम्बन्धी परीषह सहने में उनका शरीर अक्षम सिद्ध हुआ।

Elaboration — **Technical terms** – *Arasehi* — tasteless. *Virasehi* – decayed and foul tasting. *Antehim* – leftover having worst taste. *Pantehim* – not enough or leftover. *Luhehi* – dry. *Kaalaikkantehim* – of expiry date or stale. Also food eaten at odd time. *Pamaanaikkantehim* – of non-standard quantity; either excessive or meager. *Seetaehi* – cold food. *Ujjale (ujjval)* – with excruciating burning. *Viule (vipul)* – intense. *Pagaadhe (pragaadh)* – severe. *Kakkase (karkash)* – harsh. *Chande (chand)* – agonizing. *Kadue (katuk)* – bitter. *Dukkhe (duhkha roop)* – miserable. *Dugge (durg)* – intolerable. *Tivve (tivra)* – sharp. *Durahiyase (duhsaha)* – unbearable. *Pittajjarparigayasarire* – suffering from bile-fever. *Dahavakkantiye* – suffering from burning sensation or high fever. Jamali's body was very delicate and as such he failed to endure the afflictions caused by drab ascetic-food.

रुग्ण जमालि की सिद्धान्त–विरुद्ध प्ररूपणा ANTITHETICAL THEORY OF JAMALI

९३. तए णं से जमाली अणगारे वेयणाए अभिभूए समाणे समणे णिग्गंथे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी–तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! मम सेज्जासंथारगं संथरेह।

९३. वेदना से पीड़ित जमालि अनगार ने (अपने साथी) श्रमण निर्ग्रन्थों को बुलाकर कहा–हे देवानुप्रियो ! मेरे सोने (शयन) के लिए तुम संस्तारक (बिछौना) बिछा दो।

93. Suffering from such intense agony, Jamali summoned his (junior) ascetics and said – "Beloved of gods! Please spread my bed so that I may lie down."

९४. तए णं से समणा णिग्गंथा जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेंति, पडिसुणेत्ता जमालिस्स अणगारस्स सेज्जासंथारगं संथरेंति।

९४. तब श्रमण-निर्ग्रन्थों ने जमालि अनगार की यह बात विनयपूर्वक स्वीकार की और जमालि अनगार के लिए बिछौना बिछाने लगे।

94. The ascetics humbly accepted this request and started spreading the bed for ascetic Jamali.

९५. तए णं से जमाली अणगारे बलियतरं वेदणाए अभिभूए समाणे दोच्चं पि समणे निग्गंथे सद्दावेइ, सद्दावित्ता दोच्चं पि एवं वयासी–ममं णं देवाणुप्पिया ! सेज्जासंथारए किं कडे ? कज्जइ ? तए णं ते समणा निग्गंथा जमालिं अणगारं एवं वयासी–णो खलु देवाणुप्पियाणं सेज्जासंथारए कडे, कज्जति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जमालि अणगार की मिथ्या प्ररूपणा

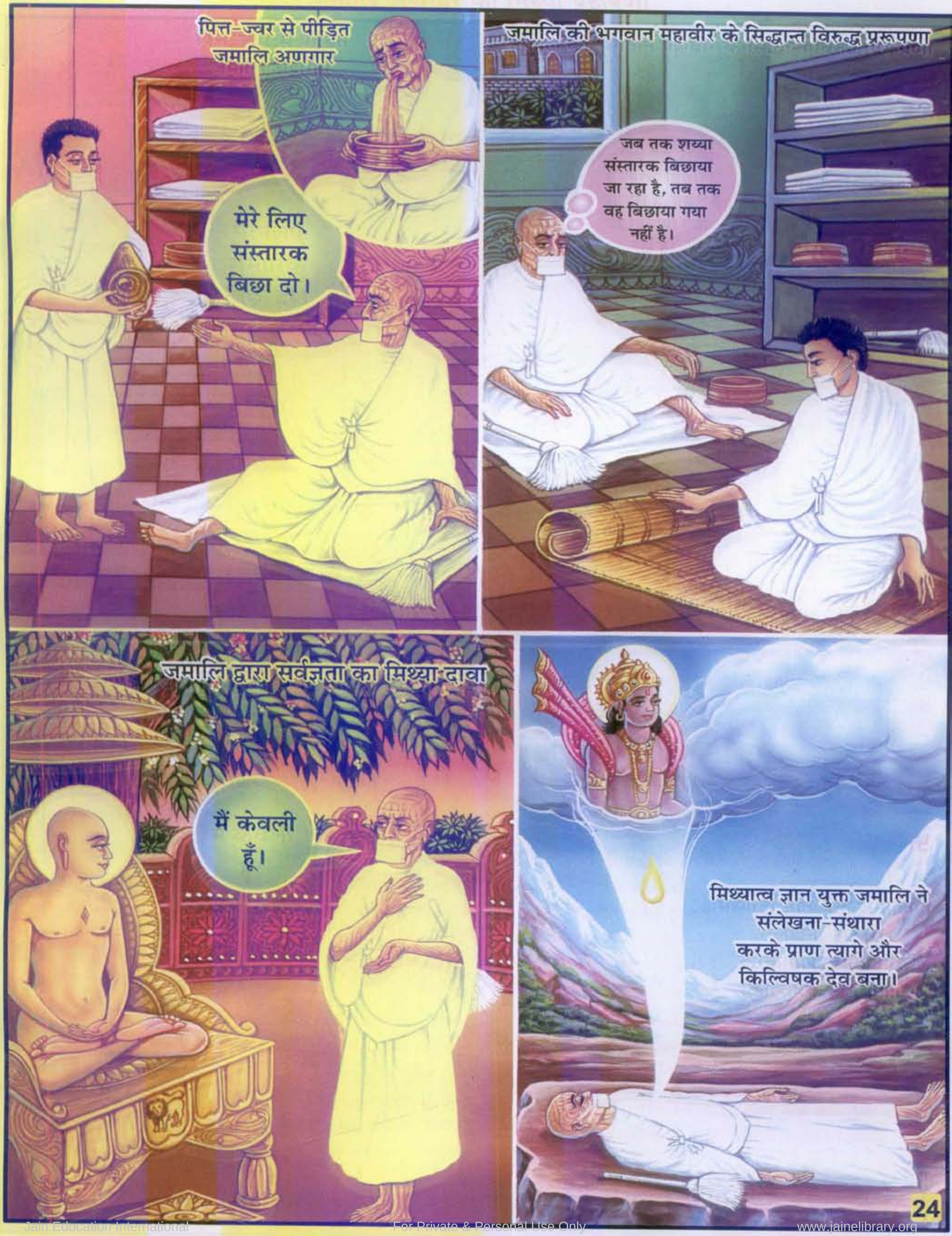

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय 24

Illustration No. 24

मिथ्या प्ररूपणा करते जमालि अणगार

जमालि अणगार को अरस, विरस, रुक्ष, तुच्छ आदि भोजन से एक बार शरीर में विपुल व्याधि (रोगांतक) उत्पन्न हो गया। उनका शरीर पित्त ज्वर से व्याधित होने के कारण दाह से युक्त हो गया। वेदना से पीड़ित जमालि अणगार ने अपने श्रमणों को बुलाकर कहा कि मेरे सोने के लिए संस्तारक (बिछौना) बिछा दो। श्रमण, जमालि अणगार के लिए बिछौना बिछा ही रहे थे तभी वेदना से पीड़ित जमालि अणगार अधीर होकर दुबारा पूछते हैं कि संस्तारक बिछा दिया या बिछा रहे हो ? उत्तर में श्रमणों ने कहा—"बिछौना बिछा नहीं, बिछाया जा रहा है।" तब जमालि अणगार के मन में ये विचार आया कि बिछौना बिछाया जा रहा है ? अब तक बिछा नहीं है। परन्तु भगवान महावीर तो कहते हैं—"चलमान चलित है, यावत् निर्जीर्यमाण निर्जीर्ण है।" अर्थात् जो हो रहा है वह हो गया। उनका यह कथन मिथ्या है। इस कारण चलमान चलित नहीं किन्तु अचलित है। इस पर विचार करते-करते उन्होंने भगवान के इस सिद्धांत को मिथ्या मान लिया।

व्याधि से मुक्त होने के बाद जमालि अणगार भगवान के पास आकर कहने लगे कि मैं केवलज्ञान और केवलदर्शन को धारण करने वाला हूँ अर्थात् मैं केवली हो गया हूँ।

तीर्थंकर की आशातना और मिथ्या मान्यता की आलोचना, प्रायश्चित्त नहीं करने से जमालि अणगार काल करके छट्ठे लांतक देवलोक में किल्विषिक देव रूप में उत्पन्न हुये।

—शतक 9, उ. 33

ANTITHETICAL THEORY OF JAMALI

Once because of consuming unhealthy food including tasteless, foul, and leftover, Jamali suffered from a grave sickness. He suffered from bile fever and ran a very high temperature. Suffering from such intense agony, Jamali summoned his juniors and asked them to spread his bed so that he could lie down. While they were spreading the bed, excruciating pain made ascetic Jamali impatient. He once again asked the juniors if they had spread the bed. The ascetics replied – "We have not yet spread the bed for you, it is still being spread." At this a thought flashed in ascetic Jamali's mind – "Bhagavan Mahavir says that moving means already moved... and so on up to... shedding means already shed. Which means that what is being done has been done. This assertion is false. Therefore, in fact, moving does not mean already moved but still unmoved." With these thoughts he decided that Bhagavan's doctrine was wrong.

After ascetic Jamali got cured of his ailment he went to Bhagavan Mahavir and said that he had acquired omniscience and ultimate perception and thus become *Kevali*.

As a consequence of insulting a Tirthankar and not doing critical review and repenting for his false belief Jamali reincarnated as a divine being among the *Kilvishik devs* in the Lantak Kalp (the sixth divine dimension).

—Shatak-9, lesson-33

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९५. किन्तु जमालि अनगार प्रबलतर वेदना से पीड़ित व अधीर हो उठा। इसलिए उन्होंने दुबारा फिर श्रमण निर्ग्रन्थों को बुलाया और इस प्रकार पूछा-देवानुप्रियो ! क्या मेरे सोने के लिए संस्तारक (बिछौना) बिछा दिया या बिछा रहे हो ? उत्तर में श्रमण-निर्ग्रन्थों ने इस प्रकार कहा-देवानुप्रिय के सोने के लिए बिछौना (अभी तक) बिछा नहीं, बिछाया जा रहा है।

95. The excruciating pain made ascetic Jamali impatient. He, therefore, summoned the ascetics once again and asked – "Beloved of gods! Are you still spreading the bed for me or have you spread the same." The ascetics replied – "We have not yet spread the bed for you, O Beloved of gods! It is still being spread."

९६. तए णं तस्स जमालिस्स अणगारस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-जं णं समणे भगवं महावीरे एवं आइक्खइ जाव एवं परूवेइ-'एवं खलु चलमाणे चलिए, उदीरिज्जमाणे उदीरिए जाव निज्जरिज्जमाणे णिज्जिण्णे' तं णं मिच्छा, इमं च णं पच्चक्खमेव दीसइ सेज्जासंथारए कज्जमाणे अकडे, संथरिज्जमाणे असंथरिए, जम्हा णं सेज्जासंथारए कज्जमाणे अकडे संथरिज्जमाणे असंथरिए तम्हा चलमाणे वि अचलिए जाव निज्जरिज्जमाणे वि अणिज्जिण्णे। एवं संपेहेइ; एवं संपेहेत्ता समणे निग्गंथे सद्दावेइ; समणे निग्गंथे सद्दावेत्ता एवं वयासी-जं णं देवाणुप्पिया ! समणे भगवं महावीरे एवं आइक्खइ जाव परूवेइ-एवं खलु चलमाणे चलिए तं चेव सव्वं जाव णिज्जरिज्जमाणे अणिज्जिण्णे।

९६. श्रमणों की यह बात सुनने पर जमालि अनगार के मन में इस प्रकार का अध्यवसाय उत्पन्न हुआ कि श्रमण भगवान महावीर जो इस प्रकार कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं कि 'चलमान चलित है, उदीर्यमाण उदीरित है, यावत् निर्जीर्यमाण निर्जीर्ण है', यह कथन मिथ्या है; क्योंकि यह प्रत्यक्ष दीख रहा है कि जब तक शय्या-संस्तारक बिछाया जा रहा है, तब तक वह बिछाया गया नहीं है, (अर्थात्-) बिछौना जब तक 'बिछाया जा रहा हो', तब तक वह 'बिछाया गया' नहीं है। इस कारण 'चलमान' 'चलित' नहीं, किन्तु 'अचलित' है, यावत् 'निर्जीर्यमाण' 'निर्जीर्ण' नहीं, किन्तु 'अनिर्जीर्ण' है। इस प्रकार विचार कर श्रमण-निर्ग्रन्थों को बुलाया और उनसे इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रियो ! श्रमण भगवान महावीर जो इस प्रकार कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं कि 'चलमान' 'चलित' (कहलाता) है; (इत्यादि पूर्ववत् सब कथन) यावत् (वस्तुतः) निर्जीर्यमाण निर्जीर्ण नहीं, किन्तु अनिर्जीर्ण है।

96. On hearing these words of his fellow ascetics, a thought flashed in ascetic Jamali's mind – "Shraman Bhagavan Mahavir asserts ... and so on up to... establishes that moving means already moved, fruiting means already fruited ... and so on up to... shedding means already shed. But this assertion is false because it is evident from the visible activity that as long as the bed is being spread it is still not already spread. In other words as long as the bed is being spread it cannot be taken as already spread. That is why moving does not mean already moved but in process

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of moving, fruiting does not mean already fruited but in process of fruiting ... and so on up to... shedding does not mean already shed but in process of being shed." With these thoughts he called his fellow ascetics and said – "Beloved of gods! Shraman Bhagavan Mahavir asserts ... and so on up to... establishes that moving means already moved ... and so on up to... shedding does not mean already shed but in process of being shed." (repeat as aforesaid)

श्रमणों द्वारा जमालि के सिद्धान्त का स्वीकार, अस्वीकार ACCEPTANCE AND REFUSAL OF JAMALI'S THEORY

९७. तए णं तस्स जमालिस्स अणगारस्स एवं आइक्खमाणस्स जाव परूवेमाणस्स अत्थेगइया समणा निग्गंथा एयमट्ठं सद्दहंति पत्तियंति रोयंति। अत्थेगइया समणा निग्गंथा एयमट्ठं णो सद्दहंति णो पत्तियंति णो रोयंति। तत्थ णं जे ते समणा निग्गंथा जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं सद्दहंति पत्तियंति रोयंति ते णं जमालिं चेव अणगारं उवसंपज्जित्ताणं विहरंति। तत्थ णं जे ते समणा निग्गंथा जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं णो सद्दहंति णो पत्तियंति णो रोयंति ते णं जमालिस्स अणगारस्स अंतियाओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता पुव्वाणुपुव्विं चरमाणा गामाणुगामं दूइज्जमाणा जेणेव चंपानयरी जेणेव पुण्णभद्दे चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति, करित्ता वंदंति, णमंसंति २ समणं भगवं महावीरं उवसंपज्जित्ताणं विहरंति।

९७. जमालि अनगार द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर यावत् प्ररूपणा किये जाने पर कई श्रमण निर्ग्रन्थों ने इस (उपर्युक्त) बात पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि की तथा कितने ही श्रमण निर्ग्रन्थों ने इस बात पर श्रद्धा, प्रतीति एवं रुचि नहीं की। उनमें से जिन श्रमण-निर्ग्रन्थों ने जमालि अनगार की बात पर श्रद्धा, प्रतीति एवं रुचि की, वे जमालि अनगार की निःश्राय में विचरण करने लगे और जिन श्रमण निर्ग्रन्थों ने जमालि अनगार की इस (जिन-वचन विरुद्ध) बात पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि नहीं की, वे जमालि अनगार के पास से, कोष्ठक उद्यान से निकल गये और अनुक्रम से विचरते हुए एवं ग्रामानुग्राम विहार करते हुए, चम्पा नगरी के बाहर जहाँ पूर्णभद्र नामक चैत्य था और जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, वहाँ उनके पास पहुँचे। उन्होंने श्रमण भगवान महावीर की तीन बार दाहिनी ओर से प्रदक्षिणा की, फिर वन्दना-नमस्कार करके वे भगवान की निःश्राय स्वीकार कर विचरने लगे।

97. When ascetic Jamali said ... and so on up to... propagated thus some ascetics expressed faith, interest, and acceptance while many others did not show any faith, interest, and acceptance. Those ascetics who expressed faith, interest, and acceptance in Jamali's doctrine, became disciples of Jamali. Those who had no faith, interest, and acceptance in Jamali's doctrine (that defied the Jina's word), left Jamali, came out of Koshthak garden and wandering from one village to another came to Purnabhadra Chaitya outside Champa City where Shraman

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Bhagavan Mahavir was stationed. They went clockwise around *Bhagavan* three times, paid homage and obeisance, and joined the group under his auspices.

विवेचन : 'चलमान चलित' : भगवान का सिद्धान्त है–इसका सयुक्तिक विवेचन भगवतीसूत्र के प्रथम शतक के प्रथम उद्देशक में किया गया है। जमालि अनगार ने इस सिद्धान्त के विरुद्ध एकान्तदृष्टि से प्ररूपणा की, इसलिए यह सिद्धान्त अयथार्थ है। इसका विवेचन विशेषावश्यकभाष्य निह्नववाद में है।

Elaboration — 'Moving is moved' – This is Bhagavan Mahavir's theory and its detailed explanation is available in the first lesson of the first chapter of Bhagavati Sutra. Jamali proposed his own doctrine in defiance of this from his absolutist viewpoint, therefore this doctrine is wrong. This is discussed in more details in *Visheshavashyak Bhashya, Nihnavavaad.*

जमालि द्वारा सर्वज्ञता का मिथ्या दावा FALSE CLAIM OF OMNISCIENCE BY JAMALI

९८. तए णं से जमाली अणगारे अन्नया कयाइ ताओ रोगायंकाओ विप्पमुक्के हट्ठे जाए अरोए बलियसरीरे सावत्थीओ नयरीओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव चंपा नयरी जेणेव पुण्णभद्दे चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते ठिच्चा समणं भगवं महावीरं एवं वयासी–जहा णं देवाणुप्पियाणं बहवे अंतेवासी समणा निग्गंथा छउमत्था भवेत्ता छउमत्थावक्कमणेणं अवक्कंता, णो खलु अहं तहा छउमत्थे भवित्ता छउमत्थावक्कमणेणं अवक्कंते, अहं णं उप्पन्नणाण–दंसणधरे अरहा जिणे केवली भवित्ता केवलिअवक्कमणेणं अवक्कंते।

९८. तदनन्तर किसी समय जमालि अनगार उस व्याधि पीड़ा से मुक्त और स्वस्थ हो गया, तथा नीरोग और बलवान शरीर वाला हुआ; तब श्रावस्ती नगरी के कोष्ठक उद्यान से निकला और अनुक्रम से विचरण करता हुआ, ग्रामानुग्राम विहार करता हुआ, जहाँ चम्पा नगरी में पूर्णभद्र चैत्य था, जिसमें श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, उनके पास आया। वह भगवान महावीर से न तो अत्यन्त दूर और न अति निकट खड़ा रहकर भगवान से इस प्रकार कहने लगा–जिस प्रकार आप देवानुप्रिय के बहुत से शिष्य छद्मस्थ रहकर छद्मस्थ अवस्था में ही (गुरुकुल से) निकलकर विचरण करते हैं, उस प्रकार मैं छद्मस्थ रहकर छद्मस्थ अवस्था में निकलकर विचरण नहीं करता; मैं उत्पन्न हुए केवलज्ञान–केवलदर्शन को धारण करने वाला अर्हत्, जिन, केवली होकर केवली–(अवस्था में निकलकर केवली–) विहार से विचरण कर रहा हूँ, अर्थात् मैं केवली हो गया हूँ।

98. After some time ascetic Jamali got cured of his ailment. He regained his health and his body became strong and free of any disease. He now left the Koshthak garden and Shravasti city. Moving from one village to another he came to Champa city. There he went to

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Purnabhadra Chaitya where Shraman Bhagavan Mahavir was staying. He stood neither far nor near Bhagavan Mahavir and said —"As many of your disciples do, I do not move about independently (away from your school) as a *chhadmasth* (one who is short of omniscience due to residual *karmic* bondage) while I am still a *chhadmasth*. I am endowed with self-acquired omniscience (*Keval-jnana*) and ultimate perception (*Keval-darshan*) and thus becoming an *Arhat* (Venerable), *Jina* (Conqueror of senses) and *Kevali* (Omniscient) I move about (independently) as an omniscient. (In other words, he conveyed that he had become an omniscient.)

गौतम के प्रश्नों का उत्तर देने में असमर्थ जमालि JAMALI FAILS TO ANSWER GAUTAM'S QUESTIONS

९९. तए णं भगवं गोयमे जमालिं अणगारं एवं वयासि–णो खलु जमाली ! केवलिस्स णाणे वा दंसणे वा सेलंसि वा थंभंसि वा थूभंसि वा आवरिज्जइ वा णिवारिज्जइ वा। जइ णं तुमं जमाली ! उप्पन्नणाण–दंसणधरे अरहा जिणे केवली भवित्ता केवलिअवक्कमणेणं अवक्कंते तो णं इमाइं दो वागरणाइं वागरेहि, 'सासए लोए जमाली ! असासए लोए जमाली ! सासए जीवे जमाली ! असासए जीवे जमाली ?

९९. इस पर भगवान गौतम ने जमालि अनगार से इस प्रकार कहा–हे जमालि ! केवली का ज्ञान या दर्शन पर्वत (शैल), स्तम्भ अथवा स्तूप (आदि) से अवरुद्ध नहीं होता और न इनसे रोका जा सकता है। तो हे जमालि ! यदि तुम उत्पन्न -केवलज्ञान--दर्शन के धारक, अर्हत्, जिन और केवली होकर केवली रूप से विचरण कर रहे हो तो इन दो प्रश्नों का उत्तर दो–(१) जमालि ! लोक शाश्वत है या अशाश्वत है ? एवं (२) जमालि ! जीव शाश्वत है अथवा अशाश्वत है ?

99. On hearing this, Bhagavan Gautam said to Jamali — "Jamali! The knowledge and perception of an omniscient is neither restricted nor obstructed by anything including a mountain, a pillar or a memorial-mound (*stupa*). So, Jamali, if you are endowed with self-acquired omniscience (*Keval-jnana*) and ultimate perception (*Keval-darshan*) and thus becoming an *Arhat* (Venerable), *Jina* (Conqueror of senses) and *Kevali* (Omniscient) you move about (independently) as an omniscient, then answer my two questions — (1) 'Jamali! Is the universe (*Lok*) eternal or transient?' and (2) 'Jamali! Is the soul (*jiva*) eternal or transient?'

१००. तए णं से जमाली अणगारे भगवया गोयमेणं एवं वुत्ते समाणे संकिए कंखिए जाव कलुससमावन्ने जाए यावि होत्था, णो संचाएइ भगवओ गोयमस्स किंचि वि पमोक्खमाइक्खित्तए, तुसिणीए संचिट्ठइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१००. भगवान गौतम द्वारा इस प्रकार (दो प्रश्नों के) जमालि अनगार से कहे जाने पर वह (जमालि) शंकित (अपने कथन में संशययुक्त) एवं कांक्षित (दूसरों के सिद्धान्त पर रुचियुक्त) हुआ, यावत् कलुषित परिणाम वाला हुआ। वह भगवान गौतम स्वामी को (इन दो प्रश्नों का) किंचित् भी उत्तर देने में समर्थ न हुआ। (फलतः) वह मौन होकर चुपचाप खड़ा रहा।

100. When Bhagavan Gautam put forth thus (the two questions) before Jamali, he was filled with doubt (*shanka*), desire for other faith (*kanksha*) ... and so on up to... spite (*kalush*). He failed to provide any answer to (the two questions of) Gautam Swami and stood dumb.

भगवान द्वारा समाधान **ANSWER BY BHAGAVAN**

१०१. 'जमाली' ति समणे भगवं महावीरे जमालिं अणगारं एवं वयासी–अत्थि णं जमाली ! ममं बहवे अंतेवासी समणा निग्गंथा छउमत्था जे णं पभू एयं वागरणं वागरित्तए जहा णं अहं, नो चेव णं एयप्पगारं भासं भासित्तए जहा णं तुमं।

सासए लोए जमाली ! जं णं कयावि णासि ण, कयावि ण भवति ण, न कदावि ण भविस्सइ; भुविं च, भवइ य, भविस्सइ य, धुवे णितिए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे। असासए लोए जमाली ! जओ ओसप्पिणी भवित्ता उस्सप्पिणी भवइ, उस्सप्पिणी भवित्ता ओसप्पिणी भवइ।

सासए जीवे जमाली ! जं णं न कयाइ णासि जाव णिच्चे। असासए जीवे जमाली ! जं णं नेरइए भवित्ता तिरिक्खजोणिए भवइ, तिरिक्खजोणिए भवित्ता मणुस्से भवइ, मणुस्से भवित्ता देवे भवइ।

१०१. तब श्रमण भगवान महावीर ने जमालि अनगार को सम्बोधित करके कहा–जमालि ! मेरे बहुत से श्रमण–निर्ग्रन्थ अन्तेवासी (शिष्य) छद्मस्थ हैं जो इन प्रश्नों का उत्तर देने में उसी प्रकार समर्थ हैं, जिस प्रकार मैं हूँ, फिर भी (जिस प्रकार तुम अपने आपको सर्वज्ञ, अर्हत्, जिन और केवली कहते हो;) इस प्रकार की भाषा वे नहीं बोलते।

जमालि ! लोक शाश्वत है, क्योंकि यह कभी नहीं था, ऐसा नहीं है; कभी नहीं है, ऐसा भी नहीं और कभी न रहेगा, ऐसा भी नहीं है; किन्तु लोक था, है और रहेगा। यह ध्रुव, नित्य, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित और नित्य है। (इसी प्रकार) हे जमालि ! (दूसरी अपेक्षा से) लोक अशाश्वत (भी) है, क्योंकि अवसर्पिणी काल होकर उत्सर्पिणी काल होता है, फिर उत्सर्पिणी काल (व्यतीत) होकर अवसर्पिणी काल होता है।

हे जमालि ! जीव शाश्वत है; क्योंकि जीव कभी नहीं था, ऐसा नहीं है; कभी नहीं है, ऐसा नहीं और कभी नहीं रहेगा, ऐसा भी नहीं है; इत्यादि यावत् जीव नित्य है। (इसी प्रकार) हे जमालि ! (किसी अपेक्षा से) जीव अशाश्वत (भी) है, क्योंकि वह नैरयिक होकर तिर्यंचयोनिक हो जाता है, तिर्यंचयोनिक होकर मनुष्य हो जाता है और (कदाचित्) मनुष्य होकर देव हो जाता है।

101. At that time Shraman Bhagavan Mahavir addressed ascetic Jamali — "Jamali! Many of my ascetic disciples are *chhadmasth*, and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

they are as competent to answer these questions as I am. Even then they do not use the language you use (claiming yourself to be an omniscient etc.).

"Jamali! This universe (*Lok*) is eternal (from one angle). This is because it is not that it never was, it is not that it never is, and also it is not that it never will be. The universe always existed, does exist and will exist. It is *dhruva* (constant), *niyat* (fixed), *shashvat* (eternal), *akshaya* (imperishable), *avyaya* (non-expendable), *avasthit* (steady), and *nitya* (perpetual). Also, Jamali! This universe is transient (from another angle). This is because progressive cycle of time (*Utsarpini kaal*) comes after regressive cycle of time (*Avasarpini kaal*) and regressive cycle of time comes after progressive cycle of time.

"Jamali! Soul (*jiva*) is eternal (from one angle). This is because it is not that it never was, it is not that it never is, and also it is not that it never will be. ... and so on up to... and nitya (perpetual). Also, Jamali! This soul is transient (from another angle). This is because existing as an infernal being it moves to the animal genus; from animal genus it moves to human genus; and from the human genus it has chances of moving to the divine genus."

मिथ्यात्वग्रस्त जमालि की विराधकता FALSEHOOD INSPIRED DEFIANCE OF JAMALI

१०२. तए णं से जमाली अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स एवमाइक्खमाणस्स जाव एवं परूवेमाणस्स एयमट्ठं णो सद्दहइ णो पत्तियइ णो रोएइ, एयमट्ठं असद्दहमाणे अपत्तियमाणे अरोएमाणे दोच्चं पि समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ आयाए अवक्कमइ, दोच्चं पि आयाए अवक्कमित्ता बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिणिवेसेहि य अप्पाणं च परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणे वुप्पाएमाणे बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणइ, पाउणित्ता अद्धमासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेइ, अत्ताणे झूसेत्ता तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ, छेदेत्ता तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा लंतए कप्पे तेरससागरोवमट्ठितीएसु देवकिब्बिसिएसु देवेसु देवकिब्बिसियत्ताए उववन्ने।

१०२. श्रमण भगवान महावीर स्वामी द्वारा जमालि अनगार को इस प्रकार कहे जाने पर, यावत् प्ररूपित करने पर भी जमालि ने इस बात पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि नहीं की और श्रमण भगवान महावीर की इस बात पर अश्रद्धा, अप्रतीति और अरुचि करता हुआ जमालि अनगार दूसरी बार भी स्वयं भगवान के पास से चला गया। इस प्रकार भगवान से पृथक् विचरण करके जमालि ने बहुत से असद्भूत (तथ्यहीन–असत्य) भावों को प्रकट करके तथा मिथ्यात्व के अभिनिवेशों (हठाग्रहों) से अपनी आत्मा को, पर को तथा उभय (दोनों) को भ्रान्त (गुमराह) करते हुए एवं मिथ्याज्ञानयुक्त करते हुए बहुत वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन किया। अन्त में अर्द्ध–मास (१५ दिन) की संलेखना द्वारा अपने शरीर को कृश करके तथा अनशन द्वारा तीस भक्तों का छेदन (त्याग) करके, (पूर्वोक्त मिथ्यात्वगत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पापस्थान की आलोचना एवं प्रतिक्रमण किये बिना ही, काल के समय में काल करके लान्तककल्प (देवलोक) में तेरह सागरोपम की स्थिति वाले किल्विषिक देवों में किल्विषिक देवरूप में उत्पन्न हुआ।

102. In spite of Shraman Bhagavan Mahavir's saying ... and so on up to... propagating as aforesaid before Jamali, he did not have any faith, inclination and interest in what *Bhagavan* said. Having no faith, inclination and interest in what *Bhagavan* said, ascetic Jamali left *Bhagavan* of his own accord. This way leading an independent itinerant ascetic life for many years, Jamali preached his false ideas, misled himself as well as others and filled wrong ideas in his mind as well as those of others through dogmatic falsehood. In the end he accepted the ultimate vow of half a month, emaciated his body by fasting for a fortnight missing thirty meals, left his earthly body (without critical review and repenting for the sins committed in the past) at the time of death and reincarnated as a divine being among the *Kilvishik devs* (servant gods) in the Lantak Kalp (a divine dimension) with a life span of thirteen Sagaropam (a metaphoric unit of time).

विवेचन : **किल्विषिक देव** : किल्विषिक देव उन्हें कहते हैं, जो अपने कृत पापकर्मों के कारण देवलोक में सेवा करने वाले निम्न स्तर के देव होते हैं। वे देवसभा में बार-बार अपमानित होते हैं। देवसभा में जब कुछ बोलने के लिए मुँह खोलते हैं तो महर्द्धिक देव उन्हें अपमानित करके बिठा देते हैं, बोलने नहीं देते। कोई देव उनका आदर-सत्कार नहीं करता।

Elaboration — Kilvishik Devs – These are the divine beings or gods of lower status who serve other gods. They are born in that status due to their sinful activities in the past life. The are treated and insulted like servants. In the assembly of gods when they stand up to say something they are reprimanded and never allowed to speak. No divine being honours or respects them.

किल्विषिक देवों में उत्पत्ति BIRTH AS KILVISHIK GOD

१०३. [प्र.] तए णं से भगवं गोयमे जमालिं अणगारं कालगयं जाणित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी कुसिस्से जमाली णामं अणगारे, से णं भंते ! जमाली अणगारे कालमासे कालं किच्चा कहिं गये ? कहिं उववन्ने ?

[उ.] 'गोयमा' दि समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–एवं खलु गोयमा ! मम अंतेवासी कुसिस्से जमाली नामं अणगारे से णं तदा मम एवं आइक्खमाणस्स ४ एयमट्ठं णो सद्दहइ णो पत्तियइ णो रोएइ, एयमट्ठं असद्दहमाणे अपत्तियमाणे अरोएमाणे दोच्चं पि ममं अंतियाओ आयाए अवक्कमइ, अवक्कमित्ता बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं तं चेव जाव देवकिब्बिसियत्ताए उववन्ने।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०३. [प्र.] जमालि अनगार को कालधर्म प्राप्त हुआ जानकर भगवान गौतम स्वामी श्रमण भगवान महावीर के पास आये और भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार पूछा-भगवन ! यह निश्चित है कि जमालि अनगार आप देवानुप्रिय का अन्तेवासी कुशिष्य था। भगवन् ! वह जमालि अनगार काल के समय काल करके कहाँ गया है, कहाँ उत्पन्न हुआ है ?

[उ.] हे गौतम ! इस प्रकार सम्बोधित करके श्रमण भगवान महावीर ने भगवान गौतम स्वामी से कहा-गौतम ! मेरा अन्तेवासी जमालि नामक अनगार वास्तव में कुशिष्य था। उस समय मेरे द्वारा (सत्सिद्धान्त) कहे जाने पर यावत् प्ररूपित किये जाने पर उसने मेरे कथन पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि नहीं की थी। उस कथन पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि न करता हुआ दूसरी बार भी वह अपने आप मेरे पास से चला गया और बहुत-से असद्भावों के प्रकट करने से, इत्यादि पूर्वोक्त कारणों से यावत् वह काल के समय काल करके किल्विषिक देव के रूप में उत्पन्न हुआ है।

103. [Q.] Having learnt about Jamali's death Bhagavan Gautam Swami came to Shraman Bhagavan Mahavir and after paying homage and obeisance asked — *Bhante!* I am curious to know where your rebel disciple, Jamali, has gone after death and where has he reincarnated?

[A.] "Gautam!" Addressing thus, Shraman Bhagavan Mahavir replied to Bhagavan Gautam Swami — "Gautam! My disciple ascetic Jamali was indeed a rebel. At that time he did not have any faith, inclination and interest in what I said. Having no faith, inclination and interest in what I said, he left me of his own accord. This way he preached his false ideas ... and so on up to... (as aforesaid) he left his earthly body and has reincarnated as a divine being among the *Kilvishik devs* (servant gods).

विवेचन : प्रस्तुत जमालिचरित की प्रेरणा-जमालि के दीक्षा ग्रहण तक के वर्णन से ऐसा प्रतीत होता है, उसका ज्ञान और वैराग्य उत्कृष्ट कोटि का था। माता-पिता के कथन का उसने जितनी निपुणता तथा युक्तिपूर्वक समाधान किया, उसमें उसके ज्ञान गर्भित वैराग्य की झलक मिलती है। दीक्षा लेने के पश्चात् भी उसने उग्र तपश्चरण कर शरीर को कृश कर डाला। किन्तु जब उसके मन में अपने ज्ञान का मिथ्या अहंकार जाग गया तो वह छद्मस्थ होते हुए भी स्वयं को सर्वज्ञ बताने का दुराग्रह करके सर्वज्ञ-वचनों के विपरीत प्ररूपणा करने लगा। इतनी उत्कृष्ट क्रिया, कठोर चारित्र पालन व तपश्चरण करके भी एकान्त दुराग्रहवश गुरु बनकर विराधक होकर संसार परिभ्रमण करता है। जमालि भगवान के कैवल्य-प्राप्ति के १४ वर्ष पश्चात् प्रथम प्रवचन निन्हव हुआ।

साध्वी प्रियदर्शना (जमालि की संसार-पक्षीया पत्नी) भी पूर्व अनुरागवश उसकी बात का समर्थन करने लगी। तब उसके शय्यातर ढंक कुंभकार ने उसे अनेक युक्तियों से इस मिथ्या कथन की अव्यावहारिकता तथा निरर्थकता को समझाया। तब वह जमालि का पक्ष छोड़कर अपनी हजार साध्वियों के साथ पुनः भगवान की शरण में चली गई। जमालि का सिद्धान्त 'बहुरत वाद' के नाम से जाना जाता है। (आवश्यकनिर्युक्ति तथा भाष्य)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration — Message of the story of Jamali – It appears from the description of Jamali's initiation that he was at a very high level of knowledge as well as sentiment of renunciation. The expert and apt refutation of what his parents said to dissuade him provides a glimpse of the knowledge-impregnated feeling of renunciation. Even after getting initiated he indulged in harsh austerities and emaciated his body. But when his bloated ego for knowledge consumed his sagacity he declared himself to be an omniscient, even though he still was a *chhadmasth*. He became dogmatic enough to preach against the word of the omniscient. In spite of such high level of practices and immaculate ascetic praxis, pushed by his pervert dogma he went against his guru. As a consequence he was caught in the vortex of cycles of rebirth. Fourteen years after Bhagavan Mahavir attained omniscience, Jamali became his first mendacious seceder (*Nihnava*).

Sadhvi Priyadarshana (Jamali's wife) supported Jamali's doctrine out of her past attachment as a householder. Then Potter Dhank, her host, explained her the uselessness and worthlessness of the false doctrine with irrefutable logic. This inspired her to abandon Jamali's side and rejoin Bhagavan Mahavir's religious organization along with her one thousand female ascetic disciples (*sadhvis*). Jamali's doctrine is popularly known as *Bahurat-vaad*. (*Avashyak Sutra, Niryukti and Bhashya*)

किल्विषिक देवों में उत्पत्तिकारण CAUSE OF REINCARNATION AS KILVISHIK GODS

१०४. [प्र.] कतिविहा णं भंते ! देवकिब्बिसिया पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तिविहा देवकिब्बिसिया पण्णत्ता, तं जहा–तिपलिओवमट्ठिईया, तिसागरोवमट्ठिईया, तेरससागरोवमट्ठिईया।

१०४. [प्र.] भगवन् ! किल्विषिक देव कितने प्रकार के होते हैं ?

[उ.] गौतम ! किल्विषिक देव तीन प्रकार के होते हैं–(१) तीन पल्योपम की स्थिति वाले, (२) तीन सागरोपम की स्थिति वाले, और (३) तेरह सागरोपम की स्थिति वाले।

104. [Q.] *Bhante!* How many types of *Kilvishik devs* (servant gods) are there?

[A.] Gautam! There are three types of *Kilvishik devs* (servant gods) – (1) With a life-span of three Palyopam (a metaphoric unit of time). (2) With a life-span of three Sagaropam (a metaphoric unit of time). (3) With a life-span of thirteen Sagaropam (a metaphoric unit of time).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०५. [प्र.] कहि णं भंते ! तिपलिओवमट्ठितीया देवकिब्बिसिया परिवसंति ?

[उ.] गोयमा ! उप्पिं जोइसियाणं, हिट्ठिं सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु, एत्थ णं तिपलिओवमट्ठिईया देवकिब्बिसिया परिवसंति।

१०५. [प्र.] भगवन् ! तीन पल्योपम की स्थिति वाले किल्विषिक देव कहाँ रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! ज्योतिष्क देवों के ऊपर और सौधर्म-ईशानकल्पों (देवलोकों) के नीचे तीन पल्योपम की स्थिति वाले देव रहते हैं।

105. [Q.] *Bhante!* Where do *Kilvishik devs* (servant gods) with a life-span of three Palyopam dwell?

[A.] Gautam! *Kilvishik devs* (servant gods) with a life-span of three Palyopam dwell higher than the *Jyotishk devs* (stellar gods) and lower than the *Saudharma* and *Ishan Kalps* (specific divine dimensions).

१०६. [प्र.] कहि णं भंते ! तिसागरोवमट्ठिईया देवकिब्बिसिया परिवसंति ?

[उ.] गोयमा ! उप्पिं सोहम्मीसाणाणं कप्पाणं, हिट्ठिं सणंकुमार-माहिंदेसु कप्पेसु, एत्थ णं तिसागरोवमट्ठिईया देवकिब्बिसिया परिवसंति।

१०६. [प्र.] भगवन् ! तीन सागरोपम की स्थिति वाले किल्विषिक देव कहाँ रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! सौधर्म और ईशानकल्पों के ऊपर तथा सनत्कुमार और माहेन्द्र देवलोक के नीचे तीन सागरोपम की स्थिति वाले देव रहते हैं।

106. [Q.] *Bhante!* Where do *Kilvishik devs* (servant gods) with a life-span of three Sagaropam dwell?

[A.] Gautam! *Kilvishik devs* (servant gods) with a life-span of three Sagaropam dwell higher than the *Saudharma* and *Ishan Kalps* (specific divine dimensions) and lower than the *Sanatkumar* and *Maahendra Kalps* (specific divine dimensions).

१०७. [प्र.] कहि णं भंते ! तेरससागरोवमट्ठिईया देवकिब्बिसिया देवा परिवसंति ?

[उ.] गोयमा ! उप्पिं बंभलोगस्स कप्पस्स, हिट्ठिं लंतए कप्पे, एत्थ णं तेरससागरोवमट्ठिईया देवकिब्बिसिया देवा परिवसंति।

१०७. [प्र.] भगवन् ! तेरह सागरोपम की स्थिति वाले किल्विषिक देव कहाँ रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! ब्रह्मलोक (पाँचवे देवलोक) के ऊपर तथा लान्तक कल्प के नीचे तेरह सागरोपम की स्थिति वाले किल्विषिक देव रहते हैं।

107. [Q.] *Bhante!* Where do *Kilvishik devs* (servant gods) with a life-span of thirteen Sagaropam dwell?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**A.**] Gautam! *Kilvishik devs* (servant gods) with a life-span of thirteen Sagaropam dwell higher than the Brahmalok (the fifth heaven) and lower than the Lantak Kalp (specific divine dimension).

१०८. [प्र.] **देवकिब्बिसिया णं भंते ! केसु कम्मादाणेसु देवकिब्बिसियत्ताए उववत्तारो भवंति ?**

[उ.] **गोयमा ! जे इमे जीवा आयरियपडिणीया उवज्झायपडिणीया कुलपडिणीया गणपडिणीया, संघपडिणीया, आयरिय–उवज्झायाणं अयसकरा अवण्णकरा अकित्तिकरा बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिनिवेसेहि य अप्पाणं च परं च उभयं च वुग्गाहेमाणा वुप्पाएमाणा बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणंति, पाउणित्ता तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवकिब्बिसिएसु देवकिब्बिसियत्ताए उववत्तारो भवंति; तं जहा–तिपलिओवमट्ठितीएसु वा तिसागरोवमट्ठितीएसु वा तेरससागरोवमट्ठितीएसु वा।**

१०८. [प्र.] भगवन् ! किन कर्मों के करने से किल्विषिक देव, किल्विषिक देव के रूप में उत्पन्न होते हैं ?

[उ.] गौतम ! जो जीव आचार्य के प्रत्यनीक (द्वेषी या विरोधी) होते हैं, उपाध्याय के प्रत्यनीक होते हैं, कुल, गण और संघ के प्रत्यनीक होते हैं तथा आचार्य और उपाध्याय का अयश (अपयश) करने वाले, अवर्णवाद बोलने वाले और अकीर्ति करने वाले हैं तथा बहुत से असत्य भावों (विचारों या पदार्थों) को प्रकट करने से, मिथ्यात्व के अभिनिवेशों (कदाग्रहों) से, अपनी आत्मा को, दूसरों को और स्व–पर दोनों को भ्रान्त और दुर्बोध करने वाले बहुत वर्षों तक श्रमण–पर्याय का पालन करके उसे अकार्य (पाप)–स्थान की आलोचना और प्रतिक्रमण किये बिना काल के समय काल करके निम्नोक्त तीन में (से) किन्हीं किल्विषिक देवों में किल्विषिक देवरूप में उत्पन्न होते हैं। जैसे कि–(१) तीन पल्योपम की स्थिति वालों में, (२) तीन सागरोपम की स्थिति वालों में, अथवा (३) तेरह सागरोपम की स्थिति वालों में।

108. [Q.] *Bhante!* What actions lead to reincarnation as *Kilvishik devs*?

[**A.**] Gautam! Those beings who are hostile (*pratyaneek*) to the *acharya* (head of the organization), hostile to the *upadhyaya* (teacher of the canon), and hostile to the *Kula*, *Gana* and *Sangh* (Lineage of a single *acharya* is called *Kula*. A friendly group of three *Kula*s is called *Gana*. An apex body of many *Gana*s having ascetics endowed with virtues of right knowledge- faith-conduct is called *Sangh.)*; those who speak ill of the *acharya* and *upadhyaya*, cast aspersions on them, spread calumny about them; those who preach falsehood and mislead themselves as well as others and fill wrong ideas in their minds as well as those of others through dogmatic falsehood; leading an independent itinerant ascetic life for many years and leave their earthly body, without critical review and repenting for the sins committed in the past, at the time of death, such

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

beings reincarnate as divine beings among the *Kilvishik devs* (servant gods) in any of the three following classes — (1) With a life-span of three Palyopam (a metaphoric unit of time). (2) with a life-span of three Sagaropam (a metaphoric unit of time). (3) with a life-span of thirteen Sagaropam (a metaphoric unit of time).

१०९. [प्र.] देवकिब्बिसिया णं भंते ! ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छंति ? कहिं उववज्जंति ?

[उ.] गोयमा ! जाव चत्तारि पंच नेरइय-तिरिक्खजोणिय-मणुस्स-देवभवग्गहणाइं संसारं अणुपरियट्टित्ता तओ पच्छा सिज्झंति बुज्झंति जाव अंतं करेंति। अत्थेगइया अणादीयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टंति।

१०९. [प्र.] भगवन् ! किल्विषिक देव उन देवलोकों से आयु का क्षय होने पर, भव क्षय होने पर और स्थिति का क्षय होने के बाद च्यवकर कहाँ जाते हैं, कहाँ उत्पन्न होते हैं ?

[उ.] गौतम ! कुछ किल्विषिक देव (बीच में मनुष्य व तिर्यंच का भव करके) नैरयिक, तिर्यंच, मनुष्य और देव के चार-पाँच भव करके और इतना संसार-परिभ्रमण करके तत्पश्चात् सिद्ध-बुद्ध-मुक्त होते हैं, यावत् सर्व-दुःखों का अन्त करते हैं और कितने ही किल्विषिक देव अनादि, अनन्त और दीर्घ मार्ग वाले चार गतिरूप संसार-कान्तार (संसाररूपी अटवी) में परिभ्रमण करते हैं।

109. [Q.] *Bhante!* When these *Kilvishik devs* exhaust their life-span, existence and stay in their specific divine realm and descend, where do they go and where are they born?

[A.] Gautam! Some of them pass through four or five births as infernal, animal, human and divine beings and then get perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), liberated (*mukta*) ... and so on up to... end all miseries. Some others continue to drift back and forth into one or the other of the four forms of existence on the long path, which is without a beginning or an end, in this vast wilderness of mundane life.

जमालि की उत्पत्ति का कारण REASON FOR JAMALI'S REINCARNATION

११०. [प्र.] जमाली णं भंते ! अणगारे अरसाहारे विरसाहारे अंताहारे पंताहारे लूहाहारे तुच्छाहारे अरसजीवी विरसजीवी जाव तुच्छजीवी उवसंतजीवी पसंतजीवी विवित्तजीवी ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जमाली णं अणगारे अरसाहारे विरसाहारे जाव विवित्तजीवी।

११० [प्र.] भगवन् ! क्या जमालि अनगार अरसाहारी, विरसाहारी, अन्ताहारी, प्रान्ताहारी, रूक्षाहारी, तुच्छाहारी, अरसजीवी, विरसजीवी यावत् तुच्छजीवी, उपशान्तजीवी, प्रशान्तजीवी और विविक्तजीवी था ?

[उ.] हाँ, गौतम ! जमालि अनगार अरसाहारी, यावत् विविक्तजीवी था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

110. [Q.] *Bhante!* Did ascetic Jamali consume food that was tasteless (*aras*), foul (*viras*), leftover (*ant*), not enough (*praant*), dry (*ruksh*), and poor (*tuchchha*)? Did he subsist on tasteless (*aras*), foul (*viras*) ... and so on up to... poor (*tuchchha*)? Did he lead a tranquil (*upashaant*), peaceful (*prashaant*), and solitary (*vivikta*) life?

[A.] Yes, Gautam! Jamali ascetic consume food that was tasteless (*aras*) ... and so on up to... he lead a solitary (*vivikta*) life.

१११. [प्र.] जति णं भंते ! जमाली अणगारे अरसाहारे विरसाहारे जाव विवित्तजीवी कम्हा णं भंते ! जमाली अणगारे कालमासे कालं किच्चा लंतए कप्पे तेरससागरोवमट्ठितीएसु देवकिब्बिसिएसु देवेसु देवकिव्विसियत्ताए उववन्ने ?

[उ.] गोयमा ! जमाली णं अणगारे आयरियपडिणीए उवज्झायपडिणीए आयरिय-उवज्झायाणं अयसकारए जाव वुग्गाहेमाणे वुप्पाएमाणे बहूई वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता अद्धमासियाए संलेहणाए तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ, तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा लंतए कप्पे जाव उववन्ने।

१११. [प्र.] भगवन् ! यदि जमालि अनगार अरसाहारी, यावत् विविक्तजीवी था, तो काल के समय काल करके वह लान्तककल्प में तेरह सागरोपम की स्थिति वाले किल्विषिक देवों में किल्विषिक देव के रूप में क्यों उत्पन्न हुआ ?

[उ.] गौतम ! जमालि अनगार आचार्य का प्रत्यनीक (द्वेषी), उपाध्याय का प्रत्यनीक तथा आचार्य और उपाध्याय का अपयश करने वाला और उनका अवर्णवाद करने वाला था, यावत् वह मिथ्याभिनिवेश द्वारा अपने आपको, दूसरों को और उभय को भ्रान्ति में डालने वाला और दुर्विदग्ध (मिथ्याज्ञान के अहंकार वाला) बनाने वाला था, यावत् बहुत वर्षों तक श्रमण-पर्याय का पालन कर, अर्द्ध-मासिक संलेखना से शरीर को कृश करके तथा तीस भक्त का अनशन द्वारा छेदन (छोड़) कर उस अकृत्यस्थान (पाप) की आलोचना और प्रतिक्रमण किये बिना ही, उसने काल के समय काल किया, जिससे वह लान्तक देवलोक में तेरह सागरोपम की स्थिति वाले किल्विषिक देवों में किल्विषिक देवरूप में उत्पन्न हुआ।

111. [Q.] *Bhante!* If ascetic Jamali consumed food that was tasteless (*aras*) ... and so on up to... he led a solitary (*vivikta*) life, then why did he leave his earthly body at the time of death and reincarnated as a divine being among the *Kilvishik devs* (servant gods) in the Lantak Kalp (a divine dimension) with a life span of thirteen Sagaropam (a metaphoric unit of time)?

[A.] Gautam! Ascetic Jamali was hostile (*pratyaneek*) to the *acharya* (head of the organization), hostile to the *upadhyaya* (teacher of the canon), and hostile to the *Kula*, *Gana* and *Sangh*; he spoke ill of the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

acharya and *upadhyaya*, cast aspersions on them, spread calumny about them; he preached falsehood and misled himself as well as others and filled wrong ideas in his mind as well as those of others through dogmatic falsehood; ... and so on up to... leading an independent itinerant ascetic life for many years he left his earthly body, without critical review and repenting for the sins committed in the past, at the time of death. Therefore he reincarnated as a divine being among the *Kilvishik devs* (servant gods) in the Lantak Kalp (a divine dimension) with a life span of thirteen Sagaropam (a metaphoric unit of time).

जमाली का भविष्य FUTURE OF JAMALI

११२. [प्र.] जमाली णं भंते ! देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं जाव कहिं उववज्जिहिति ?

[उ.] गोयमा ! जाव पंच तिरिक्खजोणिय–मणुस्स–देवभवग्गहणाइं संसारं अणुपरियट्टित्ता ततो पच्छा सिज्झिहिइ जाव अंतं काहिइ।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ जमाली समत्तो ॥

११२. [प्र.] भगवन् ! वह जमालि देव उस देवलोक से आयु क्षय होने पर यावत् कहाँ उत्पन्न होगा ?

[उ.] गौतम ! तिर्यञ्चयोनिक, मनुष्य और देव के पाँच भव ग्रहण करके और इतना संसार–परिभ्रमण करके तत्पश्चात् वह सिद्ध होगा, बुद्ध होगा यावत् सर्वदुःखों का अन्त करेगा।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, यों कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरण करने लगे।

112. [Q.] *Bhante!* When that Jamali Dev exhausts his life-span, existence and stay in that divine realm ... and so on up to... where will he go and where will he be born?

[A.] Gautam! He will pass through five births as animal, human and divine beings. After undergoing these rebirths he will get perfected (*Siddha*), enlightened (*Buddha*), liberated (*mukta*) ... and so on up to... end all miseries.

"*Bhante!* Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : शंका–समाधान–यहाँ शंका उपस्थित होती है कि भगवान सर्वज्ञ थे और जमालि के भविष्य में प्रत्यनीक होने की घटना को जानते थे, फिर भी उसे क्यों प्रव्रजित किया ? इसका समाधान वृत्तिकार इस प्रकार करते हैं–अवश्यम्भावी भवितव्य को महापुरुष भी टाल नहीं सकते अथवा इसी प्रकार ही उन्होंने गुणविशेष देखा होगा। अर्हन्त भगवान अमूढलक्षी होने से किसी भी क्रिया में निष्प्रयोजन प्रवृत्त नहीं होते। *(वृत्ति, पत्र ४९०)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration — A clarification - Here a doubt arises that Bhagavan Mahavir, being an omniscient, knew about Jamali's turning into a defier in future; why then he initiate Jamali in the first place? The commentator (*Vritti*) provides and answer – Even great men with supernatural powers cannot alter the inevitable future. Bhagavan Mahavir must have marked some such inevitability. Also, Omniscient Arihant is an uninvolved observer, he does not involve himself in any activity without a purpose. (*Vritti* leaf 490)

● END OF JAMALI'S STORY ●

॥ नवम शतक : तेतीसवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

● END OF THE THIRTY THIRD LESSON OF THE NINTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चउत्तीसइमो उद्देसो : 'पुरिसे'

नवम शतक : चौंतीसवाँ उद्देशक : पुरुष (पुरुष और नोपुरुष का घातक)

NAVAM SHATAK (Chapter Ninth) : THIRTY FOURTH LESSON : PURUSH (MAN)

उपोद्घात INTRODUCTION

१. तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव एवं वयासी--

१. उस काल और उस समय में राजगृह नगर था। वहाँ भगवान गौतम ने यावत् भगवान से इस प्रकार पूछा-

1. During that period of time there was a city called Rajagriha. ... and so on up to... Bhagavan Gautam asked Bhagavan Mahavir—

पुरुष के द्वारा अश्वादिघात सम्बन्धी प्रश्नोत्तर QUESTIONS ABOUT KILLING HORSE AND OTHERS

२. [प्र. १] पुरिसे णं भंते ! पुरिसं हणमाणे किं पुरिसं हणति, नोपुरिसं हणति ?

[उ.] गोयमा ! पुरिसं पि हणति, नोपुरिसे वि हणति।

२. [प्र. १] भगवन् ! कोई पुरुष, पुरुष की घात करता हुआ क्या पुरुष की ही घात करता है अथवा नोपुरुष (पुरुष के सिवाय अन्य जीवों) की भी घात करता है ?

[उ.] गौतम ! वह (पुरुष) पुरुष की भी घात करता है और नोपुरुष की भी घात करता है।

2. [Q. 1] *Bhante* ! While a person is killing a man, does he kill just a man (*purush*) or a non-man (*nopurush*; living beings other than man) also ?

[Ans.] Gautam ! He kills man (*purush*) as well as non-man (*nopurush*; living beings other than man).

२. [प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'पुरिसं पि हणइ, नोपुरिसे वि हणइ' ?

[उ.] गोयमा ! तस्स णं एवं भवइ--'एवं खलु अहं एगं पुरिसं हणामि' से णं एगं पुरिसं हणमाणे अणेगे जीवे हणइ। से तेण्ट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ 'पुरिसं पि हणइ नोपुरिसे वि हणति'।

२. [प्र. २] भगवन् ! किस हेतु से ऐसा कहा जाता है कि वह पुरुष की भी घात करता है, नोपुरुष की भी घात करता है ?

[उ.] गौतम ! (घात करने के लिए उद्यत) उस पुरुष के मन में ऐसा विचार होता है कि मैं एक ही पुरुष को मारता हूँ; किन्तु वह एक पुरुष को मारता हुआ अन्य अनेक जीवों को भी मारता है। इसी दृष्टि से, हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि वह घातक, पुरुष को भी मारता है और नोपुरुष को भी मारता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

2. [Q. 2] *Bhante* ! Why do you say that he kills man (*purush*) as well as non-man (living beings other than man)?

[Ans.] Gautam ! (When ready to kill) that person thinks that he is killing just one man. But, in fact, while killing just one man he kills many other living beings as well. That is why, Gautam ! It is said that he kills man as well as living beings other than man.

३. [प्र. १] पुरिसे णं भंते ! आसं हणमाणे किं आसं हणइ, नोआसे वि हणइ ?

[उ.] गोयमा ! आसं पि हणइ, नोआसे वि हणइ।

३. [प्र. १] भगवन् ! अश्व को मारता हुआ कोई पुरुष क्या अश्व को ही मारता है या नोअश्व (अश्व के सिवाय अन्य जीवों को भी) मारता है?

[उ.] गौतम ! वह (अश्वघात के लिए उद्यत पुरुष) अश्व को भी मारता है और नोअश्व (अश्व के अतिरिक्त दूसरे जीवों) को भी मारता है।

3. [Q. 1] *Bhante* ! While a person is killing a horse does he kill just a horse (*ashva*) or non-horse (*noashva*; living beings other than horse) also?

[Ans.] Gautam ! He kills horse (*ashva*) as well as non-horse (living beings other than horse).

३. [२] से केणट्ठेणं ? अट्ठो तहेव।

४. एवं हत्थिं सीहं वग्घं जाव चिल्ललगं।

३. [२] भगवन् ! ऐसा कहने का क्या कारण है? (इसका उत्तर पूर्ववत् समझना चाहिए।)

४. इसी प्रकार हाथी, सिंह, व्याघ्र (बाघ) यावत् चित्रल (एक तरह का जंगली जानवर) तक समझना चाहिए।

3. [2] *Bhante* ! Why do you say that he kills horse (*ashva*) as well as non-horse (living beings other than horse)? The answer is same as aforesaid (aphorism 2).

4. The same holds good for killing of elephant, lion, tiger ... and so on up to... Chitral (a split hoofed wild animal; may be elk or reindeer).

५. [प्र. १] पुरिसे णं भंते ! अन्नयरं तसपाणं हणमाणे किं अन्नयरं तसपाणं हणइ, नोअन्नयरे तसे पाणे हणइ ?

[उ.] गोयमा ! अन्नयरं पि तसपाणं हणइ, नोअन्नयरे वि तसे पाणे हणइ।

५. [प्र. १] भगवन् ! कोई पुरुष किसी एक त्रसप्राणी को मारता हुआ क्या उसी त्रसप्राणी को मारता है, अथवा उसके सिवाय अन्य त्रसप्राणियों को भी मारता है?

[उ.] गौतम ! वह उस त्रसप्राणी को भी मारता है और उसके सिवाय अन्य त्रसप्राणियों को भी मारता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

5. [Q. 1] *Bhante* ! While a person is killing some mobile being (*tras jiva*) does he kill just that mobile being or other mobile beings as well ?

[Ans.] Gautam ! He kills that mobile being (*tras jiva*) as well as mobile beings other than the one he is killing.

५. [प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'अन्नयरं पि तसपाणं (हणइ) नोअन्नयरे वि तसे पाणे हणइ'?

[उ.] **गोयमा ! तस्स णं एवं भवइ–एवं खलु अहं एगं अन्नयरं तसं पाणं हणामि, से णं एगं अन्नयरं तसं पाणं हणमाणे अणेगे जीवे हणइ। से तेणट्ठेणं गोयमा ! तं चेव। एए सव्वे वि एक्कगमा।**

५. [प्र २] भगवन् ! किस हेतु से आप ऐसा कहते हैं कि वह पुरुष उस त्रसजीव को भी मारता है और उसके सिवाय अन्य त्रसजीवों को भी मार देता है ?

[उ.] गौतम ! उस त्रसजीव को मारने वाले पुरुष के मन में ऐसा विचार होता है कि मैं उसी त्रसजीव को मार रहा हूँ, किन्तु वह उस त्रसजीव को मारता हुआ, उसके सिवाय अन्य अनेक त्रसजीवों को भी मारता है। इसलिए, हे गौतम ! पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिए। इन सभी का एक समान पाठ (आलापक) है।

5. [Q. 2] *Bhante* ! Why do you say that he kills that mobile being (*tras jiva*) as well as mobile beings other than the one he is killing ?

[Ans.] Gautam ! (When ready to kill) that person thinks that he is killing just one particular mobile being. But, in fact, while killing just one particular mobile being he kills many other mobile beings as well. That is why, Gautam ! It is stated as above. All these questions have the same answer.

ऋषिघातक SAGE KILLER

६. [प्र. १] पुरिसे णं भंते ! इसिं हणमाणे किं इसिं हणइ, नोइसिं हणइ ?

[उ.] **गोयमा ! इसिं पि हणइ नोइसिं पि हणइ।**

६. [प्र. १] भगवन् ! कोई पुरुष, ऋषि को मारता हुआ क्या ऋषि को ही मारता है, अथवा नोऋषि (ऋषि के सिवाय अन्य जीवों) को भी मारता है ?

[उ.] गौतम ! वह (ऋषि को मारने वाला पुरुष) ऋषि को भी मारता है, नोऋषि को भी मारता है।

6. [Q. 1] *Bhante* ! While a person is killing a sage (*rishi*) does he kill just that sage (*rishi*) or non-sage (*norishi*; living beings other than sage) also ?

[Ans.] Gautam ! He kills sage (*rishi*) as well as non-sage (*norishi*; living beings other than sage).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. [प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव नोइसिं पि हणइ ?

[उ.] **गोयमा ! तस्स णं एवं भवइ–एवं खलु अहं एगं इसिं हणामि, से णं एगं इसिं हणमाणे अणंते जीवे हणइ से तेणट्ठेणं निक्खेवओ।**

६. [प्र. २] भगवन् ! ऐसा कहने का क्या कारण है कि ऋषि को मारने वाला पुरुष ऋषि को भी मारता है और नोऋषि को भी ?

[उ.] गौतम ! ऋषि को मारने वाले उस पुरुष के मन में ऐसा विचार होता है कि मैं एक ऋषि को मारता हूँ; किन्तु वह एक ऋषि को मारता हुआ अनन्त जीवों को मारता है। इस कारण, हे गौतम ! पूर्वोक्त रूप से कहा गया है।

6. [Q. 2] *Bhante* ! Why do you say that he kills sage (*rishi*) as well as non-sage (*norishi*; living beings other than sage) ?

[Ans.] Gautam ! (When ready to kill) that person thinks that he is killing just one sage. But, in fact, while killing just one sage he kills infinite other living beings as well. That is why, Gautam ! It is as stated above.

विवेचन : प्राणिघात के सम्बन्ध में सापेक्ष सिद्धान्त–(१) कोई व्यक्ति किसी पुरुष को मारता है तो कभी केवल उसी पुरुष का वध करता है, कभी उसके साथ एक जीव का और कभी अन्य अनेक जीवों का वध भी करता है, यों तीन भंग होते हैं, क्योंकि कभी उस पुरुष के आश्रित जूं, लीख, कृमि–कीड़े आदि या रक्त, मवाद आदि के आश्रित अनेक जीवों का वध कर डालता है। शरीर को सिकोड़ने–पसारने आदि में भी अनेक जीवों का वध सम्भव है।

(२) ऋषि का घात करता हुआ व्यक्ति अनन्त जीवों का घात करता है, यह एक ही भंग है। इसका कारण यह है कि ऋषि-अवस्था में वह सर्वविरत होने से अनन्त जीवों का रक्षक होता है, किन्तु मर जाने पर वह अविरत होकर अनन्त जीवों का घातक बन जाता है। अथवा जीवित रहता हुआ ऋषि अनेक प्राणियों को प्रतिबोध देता है, वे प्रतिबोध-प्राप्त प्राणी क्रमशः मोक्ष पाते हैं। मुक्त जीव अनन्त संसारी प्राणियों के अघातक होते हैं। अतः उन अनन्त जीवों की रक्षा में जीवित ऋषि कारण है। इसलिए कहा गया है कि ऋषिघातक व्यक्ति अन्य अनन्त जीवों की घात करता है। *(वृत्ति ४९१)*

Elaboration—Wider ramification of killing—(1) When a person kills a man there are three probabilities. In some case he kills just that particular man, in some case he kills one other living being and in some case he kills many other living beings. This is because sometimes he kills many parasites like louse, nit, worms or some microorganism in blood, pus etc. There are chances of killing many living beings in contraction and spreading of body and limbs as well.

(2) In case of killing a sage there is just one other option, that of killing infinite living beings. The reason for this is that a sage or ascetic

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

is absolutely detached and thus he is a protector of infinite beings. When he is killed he does not remain detached anymore and thus becomes a killer of infinite beings. Also, while alive a sage enlightens many living beings who, in turn, progress towards liberation. A liberated soul terminates cyclic rebirth and as a consequence avoids killing infinite living beings he would have otherwise killed. Thus a living sage is the cause of protection of those infinite number of beings. That is the reason it has been stated that a killer of a sage is a killer of infinite living beings. *(Vritti, leaf 491)*

घातक व्यक्ति को वैरस्पर्श की प्ररूपणा FEELING OF MALICE IN A KILLER

७. [प्र. १] पुरिसे णं भंते ! पुरिसं हणमाणे किं पुरिसवेरेणं पुट्ठे, नोपुरिसवेरेणं पुट्ठे ?

[उ.] गोयमा ! नियमा ताव पुरिसवेरेणं पुट्ठे १, अहवा पुरिसवेरेण य णोपुरिसवेरेण य पुट्ठे २, अहवा पुरिसवेरेण य नोपुरिसवेरेहि य पुट्ठे ३।

७. **[प्र. १]** भगवन् ! पुरुष को मारता हुआ कोई भी व्यक्ति क्या पुरुष-वैर से स्पृष्ट होता है, अथवा नोपुरुष-वैर (पुरुष के सिवाय अन्य जीव के साथ वैर) से स्पृष्ट भी होता है ?

[उ.] गौतम ! वह व्यक्ति नियम से (निश्चित रूप से) पुरुष-वैर से स्पृष्ट होता ही है। अथवा पुरुष-वैर से और नोपुरुष-वैर से स्पृष्ट होता है, अथवा पुरुष-वैर से और नोपुरुष-वैरों (पुरुषों के अतिरिक्त अनेक जीवों के वैर) से स्पृष्ट होता है।

7. [Q. 1] *Bhante* ! While a person is killing a man, is he touched by malice against man (*purush-vair*) or by malice against non-man (*nopurush-vair*; malice against living beings other than man) also ?

[Ans.] Gautam ! As a rule he is touched by malice against man (*purush-vair*). Also, he may be touched by malice against man (*purush-vair*) as well as malice against non-man (*nopurush-vair*), or he may be touched by malice against man (*purush-vair*) as well as malice against numerous non-man (*nopurush-vairs*; malice against many living beings other than man).

७. [२] एवं आसं, एवं जाव चिल्ललगं जाव अहवा चिल्ललगवेरेण य णोचिल्ललगवेरेहि य पुट्ठे।

७. [२] इसी प्रकार अश्व से लेकर यावत् चित्रल के विषय में भी जानना चाहिए; यावत् अथवा चित्रल-वैर से और नोचित्रल-वैरों से स्पृष्ट होता है।

7. [2] The same is true for horse ... and so on up to... Chitral (elk or reindeer); ... and so on up to... or he may be touched by malice against Chitral (*chitral-vair*) and malice against numerous non-Chitral (*nochitral-vairs*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८. [प्र.] पुरिसे णं भंते ! इसिं हणमाणे किं इसिवेरेणं पुट्ठे, णोइसिवेरेणं पुट्ठे ?

[उ.] गोयमा ! नियमा ताव इसिवेरेणं पुट्ठे १, अहवा इसिवेरेण य णोइसिवेरेण य पुट्ठे २, अहवा इसिवेरेण य नोइसिवेरेहि य पुट्ठे ३।

८. [प्र.] भगवन् ! ऋषि को मारता हुआ कोई पुरुष, क्या ऋषि-वैर से स्पृष्ट होता है, या नोऋषि-वैर से स्पृष्ट होता है ?

[उ.] गौतम ! वह (ऋषिघातक) नियम से ऋषि-वैर और नोऋषि-वैरों से स्पृष्ट होता है।

8. [Q.] *Bhante* ! While a person is killing a sage (*rishi*) is he touched by malice against sage (*rishi-vair*) or by malice against non-sage (*norishi-vair*; malice against living beings other than a sage) also ?

[Ans.] Gautam ! As a rule he is touched by malice against a sage (*rishi-vair*) and malice against non-sage (*norishi-vair*).

विवेचन : घातक व्यक्ति के लिए वैरस्पर्श प्ररूपणा-(क) पुरुष को मारने वाले व्यक्ति के लिए वैरस्पर्श के तीन भग होते हैं (१) वह नियम से पुरुष-वैर से स्पृष्ट होता है, (२) पुरुष को मारते हुए किसी दूसरे प्राणी का वध करे तो एक पुरुष-वैर से और एक नोपुरुष-वैर से स्पृष्ट होता है, (३) यदि एक पुरुष का वध करता हुआ, अन्य अनेक प्राणियों का वध करे तो वह पुरुष-वैर से और अन्य अनेक नोपुरुष-वैरों से स्पृष्ट होता है। हस्ती, अश्व आदि के सम्बन्ध में भी सर्वत्र ये ही तीन भंग होते हैं। (ख) सोपक्रम आयु वाले ऋषि का कोई वध करे तो वह प्रथम और तृतीय भंग का अधिकारी बनता है। यथा-वह ऋषि-वैर से तो स्पृष्ट होता ही है, किन्तु जब सोपक्रम आयु वाले अचरम-शरीरी ऋषि का पुरुष का वध होता है तब उसकी अपेक्षा से यह तीसरा भंग कहा गया है।

Elaboration—Feeling of malice in a killer—(a) There are three alternatives of touch by malice for a person killing a man – (1) As a rule he is touched by malice against man (*purush-vair*). (2) If while killing a man he also kills another living being he is touched by malice against man (*purush-vair*) and malice against non-man (*nopurush-vair*). If while killing a man he also kills many other living beings he is touched by malice against man (*purush-vair*) and malice against numerous non-man (*nopurush-vairs*; malice against many living beings other than man). These three alternatives also apply to elephant, horse etc. (b) If someone kills a sage with terminable life-span (*sopakram ayushya*) then he is liable to the first and third alternative related to touch of malice. Which means that, besides being touched by malice for the sage he has killed, he is also touched by malice for a sage who is not in his last incarnation before liberation (*acharama shariri*) and who may kill many beings on reincarnation.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९. [प्र.] पुढविकाइये णं भंते ! पुढविकायं चेव आणमति वा पाणमति वा ऊससति वा नीससति वा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! पुढविक्काइए पुढविक्काइयं चेव आणमति वा जाव नीससति वा।

९. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, पृथ्वीकायिक जीव को आभ्यन्तर और बाह्य श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करता है और छोड़ता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव, पृथ्वीकायिक जीव को आभ्यन्तर और बाह्य श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करता है और छोड़ता है।

9. [Q.] *Bhante* ! Do earth-bodied beings (*prithvikayik jiva*) inhale and exhale or take in and put out other earth-bodied beings during or as a part of their respiration ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Earth-bodied beings (*prithvikayik jiva*) do inhale and exhale or take in and put out other earth-bodied beings during or as a part of their respiration.

१०. [प्र.] पुढविक्काइए णं भंते ! आउक्काइयं आणमति वा जाव नीससति वा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! पुढविक्काइए आउक्काइयं आणमति वा जाव नीससति वा।

१०. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, अप्कायिक जीव को यावत् श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करता और छोड़ता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव, अप्कायिक जीव को (आभ्यन्तर और बाह्य श्वासोच्छ्वास के रूप में) ग्रहण करता और छोड़ता है।

10. [Q.] *Bhante* ! Do earth-bodied beings (*prithvikayik jiva*) inhale and exhale ... and so on up to... water-bodied beings (*apkayik jiva*) during respiration ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Earth-bodied beings (*prithvikayik jiva*) do inhale and exhale ... and so on up to... water-bodied beings during respiration.

११. एवं तेउक्काइयं वाउक्काइयं। एवं वणस्सइकाइयं।

११. इसी प्रकार तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीव को भी यावत् ग्रहण करता और छोड़ता है।

11. In the same way they inhale and exhale fire-bodied (*tejaskayik*), air-bodied (*vayukayik*) and plant-bodied (*vanaspatikayik*) beings.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. [प्र.] **आउक्काइए णं भंते ! पुढविक्काइयं आणमति वा पाणमति वा० ?**

[उ.] **एवं चेव।**

१२. [प्र.] भगवन् ! अप्कायिक जीव, पृथ्वीकायिक जीवों को आभ्यन्तर एवं बाह्य श्वासोच्छ्‌वास के रूप में ग्रहण करते और छोड़ते हैं ?

[उ.] (गौतम !) पूर्वोक्त रूप से ही जानना चाहिए।

12. *Bhante* ! Do water-bodied beings (*apkayik jiva*) inhale and exhale ... and so on up to... earth-bodied beings (*prithvikayik jiva*) during respiration ?

[Ans.] Gautam ! It is same as aforesaid.

१३. [प्र.] **आउक्काइए णं भंते ! आउक्काइयं चेव आणमति वा० ?**

[उ.] **एवं चेव।**

१४. **एवं तेउ–वाउ–वणस्सइकाइयं।**

१३. [प्र.] भगवन् ! अप्कायिक जीव, अप्कायिक जीव को आभ्यन्तर एवं बाह्य श्वासोच्छ्‌वास के रूप में ग्रहण करता और छोड़ता है ?

[उ.] (हाँ, गौतम !) पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिए।

१४. इसी प्रकार तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक के विषय में भी जानना चाहिए।

13. *Bhante* ! Do water-bodied beings (*apkayik jiva*) inhale and exhale ... and so on up to... water-bodied beings (*apkayik jiva*) during respiration?

[Ans.] Gautam ! It is same as aforesaid.

14. The same is true for fire-bodied (*tejaskayik*), air-bodied (*vayukayik*) and plant-bodied (*vanaspatikayik*) beings.

१५. [प्र.] **तेउक्काइए णं भंते ! पुढविक्काइयं आणमति वा ? एवं जाव वणस्सइकाइए णं भंते ! वणस्सइकाइयं चेव आणमति वा० ?**

[उ.] **तहेव।**

१५. [प्र.] भगवन् ! तेजस्कायिक जीव पृथ्वीकायिक जीवों को आभ्यन्तर एवं बाह्य श्वासोच्छ्‌वास के रूप में ग्रहण करता और छोड़ता है ? इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक जीव वनस्पतिकायिक जीव को आभ्यन्तर एवं बाह्य श्वासोच्छ्‌वास के रूप में ग्रहण करता और छोड़ता है ?

[उ.] (गौतम !) यह सब पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

15. *Bhante* ! Do fire-bodied beings (*tejaskayik jiva*) inhale and exhale ... and so on up to... earth-bodied beings (*prithvikayik jiva*) during respiration ? ... and so on up to... Do plant-bodied beings (*vanaspatikayik jiva*) inhale and exhale ... and so on up to... plant-bodied beings (*vanaspatikayik jiva*) ?

[Ans.] Gautam ! All that is same as aforesaid.

श्वासोच्छ्वास करते समय क्रिया-प्ररूपणा INVOLVEMENT IN ACTIVITY DURING RESPIRATION

१६. [प्र.] पुढविक्काइए णं भंते ! पुढविकाइयं चेव आणममाणे वा पाणममाणे वा ऊससमाणे वा नीससमाणे वा कइकिरिए ?

[उ.] **गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए।**

१६. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, पृथ्वीकायिक जीव को आभ्यन्तर एवं बाह्य श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते और छोड़ते हुए कितनी क्रिया वाले होते हैं ?

[उ.] गौतम ! कदाचित् तीन क्रिया वाले, कदाचित् चार क्रिया वाले और कदाचित् पाँच क्रिया वाले होते हैं।

16. *Bhante* ! When earth-bodied beings (*prithvikayik jiva*) inhale and exhale other earth-bodied beings during their respiration, in how many activities (*kriya*) are they involved ?

[Ans.] Gautam ! They are involved sometimes in three, sometimes in four and sometimes in five activities.

१७. [प्र.] पुढविक्काइए णं भंते ! आउक्काइयं आणममाणे वा० ?

[उ.] **एवं चेव।**

१७. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, अप्कायिक जीवों को आभ्यन्तर एवं बाह्य श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते और छोड़ते हुए कितनी क्रिया वाले होते हैं ?

[उ.] हे गौतम ! पूर्वोक्त प्रकार से ही जानना चाहिए।

17. *Bhante* ! When earth-bodied beings (*prithvikayik jiva*) inhale and exhale water-bodied beings during their respiration, in how many activities (*kriya*) are they involved ?

[Ans.] Gautam ! It is same as aforesaid.

१८. एवं जाव वणस्सइकाइयं।

१८. इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक तक कहना चाहिए।

18. The same holds good ... and so on up to... plant-bodied beings.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९. एवं आउक्काइएण वि सव्वे वि भाणियव्वा।

१९. इसी प्रकार अप्कायिक जीवों के साथ भी पृथ्वीकायिक आदि सभी का कथन करना चाहिए।

19. In the same way repeat with regard to water-bodied beings for exhaling and inhaling earth-bodied beings and others.

२०. एवं तेउक्काइएण वि।

२०. इसी प्रकार तेजस्कायिक के साथ भी पृथ्वीकायिक आदि का कथन करना चाहिए।

20. In the same way repeat with regard to fire-bodied beings for exhaling and inhaling earth-bodied beings and others.

२१. एवं वाउक्काइएण वि।

२१. इसी प्रकार वायुकायिक जीवों के साथ भी पृथ्वीकायिक आदि का कथन करना चाहिए।

21. In the same way repeat with regard to plant-bodied beings for exhaling and inhaling earth-bodied beings and others.

२२. [प्र.] **वणस्सइकाइए णं भंते ! वणस्सइकाइयं चेव आणममाणे वा० ? पुच्छा।**

[उ.] **गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए।**

२२. [प्र.] भगवन् ! वनस्पतिकायिक जीव, वनस्पतिकायिक जीवों को आभ्यन्तर और बाह्य श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते और छोड़ते हुए कितनी क्रिया वाले होते हैं ?

[उ.] गौतम ! कदाचित् तीन क्रिया वाले, कदाचित् चार क्रिया वाले और कदाचित् पाँच क्रिया वाले होते हैं।

22. *Bhante* ! When plant-bodied beings (*vanaspatikayik jiva*) inhale and exhale other plant-bodied beings (*vanaspatikayik jiva*) during their respiration, in how many activities (*kriya*) are they involved ?

[Ans.] Gautam ! They are involved sometimes in three, sometimes in four and sometimes in five activities.

विवेचन : **श्वासोच्छ्वास में क्रिया–प्ररूपणा**–पृथ्वीकायिकादि जीव पृथ्वीकायिकादि जीवों को श्वासोच्छ्वास रूप में ग्रहण करते हुए, छोड़ते हुए, जब तक उनको पीड़ा उत्पन्न नहीं करते, तब तक (१) कायिकी, (२) आधिकरणिकी, (३) प्राद्वेषिकी; तीन क्रियाएँ लगती हैं, जब पीड़ा उत्पन्न करते हैं तब पारितापनिकी सहित चार क्रियाएँ लगती हैं और जब उन जीवों का वध करते हैं तब प्राणातिपातिकी सहित पाँचों क्रियाएँ लगती हैं।

Elaboration—Involvement in activity during respiration—While inhaling and exhaling earth-bodied and other beings during their respiration, as long as the earth-bodied beings (*prithvikayik jiva*) do not cause any pain to them they are involved in three activities—(1) *kayiki*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(physical activity), (2) *adhikaraniki* (activity of collecting instruments of violence), and *pradveshiki* (activity of harbouring aversion). However, when they cause pain to those beings they are also involved in the fourth activity, namely *paritapaniki* (activity of inflicting pain); and when they kill those beings they are also involved in the fifth activity, namely *pranatipatiki* (activity of killing a living being).

वृक्षमूलादि कँपाने–गिराने सम्बन्धी क्रिया INVOLVEMENT IN ACTIVITY DURING UPROOTING TREES

२३. [प्र.] वाउक्काइए णं भंते ! रुक्खस्स मूलं पचालेमाणे वा पवाडेमाणे वा कइकिरिए ?

[उ.] गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए।

२३. [प्र.] भगवन् ! वायुकायिक जीव, वृक्ष के मूल को कंपाते हुए और गिराते हुए कितनी क्रिया वाले होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे कदाचित् तीन क्रिया वाले, कदाचित् चार क्रिया वाले और कदाचित् पाँच क्रिया वाले होते हैं।

23. While shaking and uprooting trees in how many activities are air-bodied beings involved ?

[Ans.] Gautam ! They are involved sometimes in three, sometimes in four and sometimes in five activities.

२४. एवं कंदं।

२४. इसी प्रकार कंद को कँपाने आदि के सम्बन्ध में जानना चाहिए।

24. The same is true for shaking and uprooting bulbous root (*kand*).

२५. [प्र.] एवं जाव बीयं पचालेमाणे वा० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिए चउकिरिए, सिय पंचकिरिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ चउत्तीसइमो उद्देसो समत्तो॥

॥ नवमं सतं समत्तं ॥ ९॥

२५. [प्र.] इसी प्रकार यावत् बीज को कँपाते या गिराते हुए आदि की क्रिया से सम्बन्धित प्रश्न।

[उ.] गौतम ! वे कदाचित् तीन क्रिया वाले, कदाचित् चार क्रिया वाले, कदाचित् पाँच क्रिया वाले होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरते हैं।

॥ नवम शतक : चौंतीसवाँ उद्देशक समाप्त ॥

॥ नवम शतक समाप्त ॥

॥ भगवती सूत्र तृतीय भाग समाप्त ॥

25. The same question for shaking and uprooting ... and so on up to... seed ?

[**Ans.**] Gautam ! They are involved sometimes in three, sometimes in four and sometimes in five activities.

"Bhante ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE THIRTY FOURTH LESSON OF THE NINTH CHAPTER ●

● END OF THE NINTH CHAPTER ●

● END OF ILLUSTRATED BHAGAVATI SUTRA PART THREE ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट
APPENDIX

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Appendix-1

Technical Terms

SHRI BHAGAVATI SUTRA (VYAKHYAPRAJNAPTI) Part-3

The alphabetical index of technical terms according to aphorism number. First numeral is Shatak (chapter), second is Uddeshak (lesson) and third is Sutra (aphorism) number.

(A)

Aabhaasik (9/3-30/3)

Aadakshin = starting from right (9/33/12)

Aadesh = instinctive or inherited traits as mentioned in scriptures or recorded information (8/2/128)

Aadhikaraniki Kriya = activity of collecting instruments of violence (8/4/1; 8/6/29)

Aadhya = very rich (9/33/2, 22)

Aadikar (9/33/23)

Aagaar = house-holder (9/33/78)

Aaghvejj = to explain the meaning of scriptures to disciples or get honoured by explaining the meaning (9/31/31)

Aahaarak = telemigratory (8/6/29); with food intake (8/2/126)

Aahaarak Jivas = beings with intake (8/2/127)

Aahaarak Sharira = telemigratory body; body with intake (8/6/29)

Aahaarak-Dvar (8/2/127)

Aakaar = form (8/2/127)

Aakrosh-Parishaha = insult related affliction (8/8/28, 34)

Aalaapan-Bandh = colligative bondage (8/9/12, 13)

Aam = mango (8/3/4)

Aayat Samsthaan-Parinaam = transformation as rectangular shape (8/10/22)

Abandhak = one who does not acquire bondage of karmas (8/8/34; 8/9/ 50, 82, 89, 96, 117-119, 129)

Abhavasiddhik = those never to be liberated (8/2/70)

Abhavasiddhik Jivas = beings unworthy of being liberated in future (8/2/68)

Abhavasth Jivas = nonexistent beings or souls that are not born in any genus (8/2/66)

Abhavya = not destined to be liberated (8/2/139; 8/8/22; 8/9/96)

Abhigam = five codes of courtesy meant for a religious assembly (9/33/11, 12)

Abhinibodhik Jnana-Labdhi Jivas = living beings having

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

attained the ability of sensual knowledge (8/2/80)

Abhinibodhik Jnani = endowed with sensory knowledge (8/2/137, 139)

Abhinibodhik-Jnana = mati-jnana; sensory knowledge or to know the apparent form of things coming before the soul by means of five sense organs and the mind (8/2/19, 20, 23, 82, 83, 95, 102, 114, 127, 128, 139, 140, 144, 146; 9/31/8, 9, 13, 16, 35)

Abhinibodhik-Jnana Saakaar Upayoga = cognitive involvement related to sensual knowledge (8/2/107)

Abhinibodhik-Jnanaavaraniya Karma = sensual knowledge obscuring karma (9/31/8, 13)

Abhinibodhik-Jnana-Labdhi = attainment of ability of sensual knowledge (8/2/72, 105)

Abhitaap = rise in intensity of radiation (8/8/37)

Abhra = cloud formations (8/9/11)

Abhra-Vriksha = clouds in shape of a tree (8/9/11)

Abhyahrit = food brought from some other place for ascetics (9/33/43)

Abhyantar Pushkarardha (9/2/4, 5)

Achakshu-Darshan Anaakaar Upayoga = darshanopayoga or perceptive involvement related to non-visual perception (8/2/113)

Acharam = not the last (8/3/8)

Acharama Shariri = not in his last incarnation before liberation (9/34/8)

Acharya = head of the order and teacher of the authentic meaning (8/8/7; 9/33/108, 111)

Acharya-Pratyaneek = adversary of acharya (8/8/2)

Achela-Parishaha = garb related affliction (8/8/28, 34)

Achhedya = snatched from someone and given to ascetic (9/33/43)

Achit = free of living organisms (9/33/12); non-living (9/33/43)

Achyut Devlok (8/9/79)

Achyut Kalp Vaimanik (8/9/61)

Achyut Kalpopapannak Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to the Achyut Kalp (8/2/16)

Adarsh-Mukh (9/3-30/3)

Adarshan Parishaha = conduct related affliction (8/8/24, 34)

Adatt = not given (8/7/6-9, 13-15)

Adattadaan = stealing (8/5/6)

Adhah-Saptama Prithvi = the seventh hell (8/3/7; 8/9/55, 68, 76; 9/32/16-29)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Adhah-Saptama Prithvi Nairayik-Praveshanak = entrance into the seventh hell (9/32/15)

Adhai Dveep = two and a half continents (8/2/17, 131; 9/31/30, 43)

Adhai-Dveep-Samudra = two and a half continents and oceans (8/2/131)

Adhakarmi = food prepared for a specific ascetic (9/33/43)

Adharmastikaaya = rest entity (8/2/18; 8/9/11)

Adharmastikaaya Anyonya-Anaadik Visrasa Bandh = rest entity related mutually interdependent natural bondage without a beginning (8/9/3, 5, 7)

Adhikaraniki = activity of collecting instruments of violence (9/34/22)

Adho-Lok = the lower world (9/31/30, 43)

Adhruva = transient (9/33/36)

Adhyavasaaya = mental activity (9/31/25, 39)

Adhyavasanavaraniya Karma = conation obscuring karma;here it is cognition obscuring karma related to conduct (9/31/7, 13)

Adyavapurak = increasing the quantity of food when an ascetic comes for alms (9/33/43)

Agad = well (8/9/17)

Agam-Balik = endowed with the knowledge of the canon (8/8/9)

Agam-Vyavahaar = behaviour according to the canon (8/8/8, 9)

Agneya Kone = southeast direction (8/8/45)

Ahaarak Sharira = telemigratory body (8/9/88, 120, 123, 125, 126, 129)

Ahaarak-Sharira-Bandh (8/9/89)

Ahaarak-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to telemigratory body formation (8/9/24, 83-87)

Ahaarak-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for telemigratory body formation (8/9/85)

Ahoratra = day and night (8/9/50)

Ajaaya = not wife (8/5/3, 4)

Ajivakopasak = followers of the Ajivak doctrine (8/5/10, 11)

Ajivaks = followers of Goshalak (8/5/1, 7-9, 11)

Ajna (8/8/8)

Ajnana = absence of right knowledge; ignorance or wrong knowledge (8/2/21, 26-32, 34, 35, 37, 41 43, 45, 52, 54-56, 58-60, 63, 70, 85, 87-90, 92, 93, 98, 105)

Ajnana Parishaha = affliction related to ignorance (8/8/34)

Ajnana-Labdhi = attainment of ability of non-knowledge or wrong knowledge (8/2/73, 86, 105)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Ajnana-Labdhi Jivas = living beings having attained the ability of wrong knowledge (8/2/85)

Ajnani = ignorant or with wrong knowledge (8/2/26-31, 35, 36, 41, 42, 44-46, 51, 54, 56, 58-65, 67, 68, 70, 79, 80, 85, 88, 93, 95, 104, 106, 139)

Ajna-Vyavahaar = behaviour according to the directive commands of accomplished ascetics (8/8/8, 9)

Akaashastikaaya = space entity (8/2/18; 8/9/11)

Akaashastikaaya Anyonya-Anaadik Visrasa Bandh = space entity related mutually interdependent natural bondage without a beginning (8/9/3, 5, 7)

Akaayik = without body (8/2/47)

Akaayik Jivas (8/2/70)

Akarmabhumis (8/2/131)

Akarn (9/3-30/3)

Akashaayi = without passions (9/31/24, 38, 44)

Akashaayi Jivas = beings without passions (8/2/123, 125)

Akhyanti = say (8/10/2)

Akshar-Shrut = literal or vocal knowledge (8/2/146)

Akshaya = imperishable (9/33/101)

Aksheen Kashaayi = without destroying passions (9/31/44)

Alaabh-Parishaha = affliction of non-attainment (8/8/29, 31, 34)

Aleshya Jivas = beings without soul complexion (8/2/121)

Allikaapan-Bandh = seamless bondage (8/9/12, 14, 20)

Alochana = to appraise one's action (8/6/7-10)

Alok = unoccupied space (8/2/130; 9/31/33)

Alpabahutva = comparative numbers (8/2/139)

Amogh = black and red lines appearing in the sky at dawn and sunset (8/9/11)

Amratak (8/3/5)

Anaadi-Aparyavasit = without a beginning and without an end (8/2/139; 8/8/15, 21, 22; 8/9/12, 23, 94, 95, 113, 115)

Anaadik Visrasa Bandh = natural bondage without a beginning (8/9/2, 3)

Anaadi-Saparyavasit = without a beginning and with an end (8/2/139; 8/8/15, 21, 22; 8/9/23, 94, 95, 113, 115)

Anaahaarak Jivas = beings without intake (8/2/127)

Anaakaar Upayoga = darshanopayoga or perceptive involvement (8/2/112, 127; 9/31/18, 25)

Anagaar = homeless-ascetic (9/31/4; 9/33/78)

Anakshar = non-vocal or non-literal knowledge (8/2/146)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Anand Gaathapati (9/32/2)

Anant = infinite (9/31/26)

Anantanubandhi = extreme bond-intensity (9/31/26)

Anat Kalpopapannak Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to Anat Kalp (8/2/16)

Anat-Devlok-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to transmutable body formation of divine beings of the Anat dimension (8/9/79)

Aneshaniya = things with faults (8/6/3)

Angaar Karma = trade using fire (8/5/11)

Angas = eleven limbs of the canon (8/10/18; 9/33/16, 20)

Angul = a linear unit equivalent to width of a finger (8/2/130, 131; 9/31/14, 33; 9/33/54)

Anindriya = without sense organs (8/2/44)

Anishritopashrit = free of attachment and aversion, devoid of hankering for fame and status and away from feelings of partiality and revenge (8/8/9)

Anisrishta = food offered without the knowledge of the owners (9/33/43)

Anivritti-Baadar (8/2/127)

Aniyat = uncertain (9/33/36)

Anka = a gem (9/33/64)

Ankolla = Dhela; · Alangium Lamarckii thwaites (8/3/5)

Anriddhiprapt-Pramattasamyat-Samyagdrishti-Paryapt-Sankhyeyavarhsayushk-Karmabhumij-Garbhaj-Manushya = righteous and accomplished but negligent fully developed human being, born out of womb, from the land of endeavour, having a life-span of countable years, but without special powers (8/9/84)

Ant = leftover (9/33/92, 110)

Antar Kaal = intervening period (8/2/138, 139)

Antaraaya (9/31/26)

Antaraya Karma = power hindering karma (8/8/23, 25, 29; 8/10/31, 36, 41, 45, 46, 50, 52, 55, 57, 58)

Antaraya-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to power hindering karmic body formation (8/9/97, 111, 112, 114, 116, 118)

Antaraya-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for power hindering karmic body formation (8/9/111)

Antardveep = middle islands (9/1/1; 9/3-30/3)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Antardveepak = middle island men (9/3-30/3)

Antarmuhurt = less than one Muhurt or 48 minutes (8/2/136, 139; 8/9/10, 13, 15-17, 19, 42, 44, 46, 50, 67, 73, 75, 76, 87, 88)

Anukampya = object of compassion (8/8/5)

Anukampya-Pratyaneek (8/8/7)

Anupaalak = a sect of followers of the Ajivak doctrine (8/5/9)

Anuparat-Kaaya-Kriya = physical activity of a person who has not resolved to abstain from sinful activities (8/4/1)

Anuttar = supreme (9/31/26)

Anuttaraupapatik-Devlok-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to transmutable body formation of divine beings of the Anuttaraupapatik dimension (8/9/81)

Anuttaraupapatikvaimanik Dev (8/9/61, 65, 70)

Anvala = hog-plum; Emblica officinalis (8/3/5)

Anyathanupapatti = causitive inference (8/2/131)

Anyatirthik = people of other faiths or heretics (8/7/1; 8/10/2)

Anyonya-Anaadik Visrasa Bandh = mutually interdependent natural bondage without a beginning (8/9/11)

Apagat-Veda = non-genderic beings (8/8/22)

Apan = shop or marketplace (8/9/17)

Apardh-Pudgal Paravartan Kaal = the time taken by a soul to touch each and every matter particle in the whole universe is called Pudgalaparavartan kaal; it is equivalent to innumerable avasarpini-utsarpinis (8/2/139)

Aparibhoot = insuperable (9/33/2)

Aparyapt Asankhyat Varsh Ayushya Garbhaj Manushya-Karma-Ashivish = poisonous by action among underdeveloped humans born out of womb with a life-span of innumerable years (8/2/10)

Aparyapt Asankhyat Varsh Ayushya Garbhaj Panchendriya-Tiryanch-Yonik-Karma-Ashivish = poisonous by action among underdeveloped five-sensed animals born out of womb with a life-span of innumerable years (8/2/9)

Aparyapt Asur Kumaradi Bhavan-Vaasi Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among underdeveloped Asur Kumar and other abode dwelling divine beings (8/2/13)

Aparyapt Sahasrar Kalpopapannak Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

action among underdeveloped celestial vehicular divine beings belonging to the Sahasrar Kalp (8/2/17)

Aparyapt Saudharma Kalpopapannak Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among underdeveloped celestial vehicular divine beings belonging to Saudharma Kalp (8/2/17)

Aparyaptak = underdeveloped (8/2/56)

Aparyaptak Dvindriya Jivas = underdeveloped two-sensed beings (8/2/58)

Aparyaptak Jivas = underdeveloped beings (8/2/55)

Aparyaptak Jyotishk Devs = underdeveloped stellar divine beings (8/2/60)

Aparyaptak Manushya = underdeveloped human beings (8/2/59)

Aparyaptak Nairayik Jivas = underdeveloped infernal beings (8/2/56)

Aparyaptak Panchendriya Tiryanchayonik Jivas = underdeveloped five-sensed animals (8/2/58)

Aparyaptak Vaimanik Devs = underdeveloped celestial vehicular divine beings (8/2/60)

Aparyaptak Vanavyantar Devs = underdeveloped interstitial divine beings (8/2/59)

Aparyapt-Sarvarthasiddha-Anuttaraupapatik-Kalpateet-Vaimanik-Dev-Panchendriya-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to transmutable body formation of underdeveloped Sarvarthasiddha-anuttaraupapatik celestial vehicular gods beyond the Kalps (8/9/52)

Aparyapt-Sarvarthsiddha-Anuttaraupapatik-Kalpateet-Vaimanik-Dev-Panchendriya-Taijas-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to fiery body formation of underdeveloped five-sensed divine beings of Sarvarthsiddha-anuttaraupapatik celestial vehicles beyond the Kalps (8/9/91)

Apkayik Jiva (9/34/10, 12, 13)

Apoh = to ascertain through contemplation (9/31/14)

Apramatta Gunasthaan (8/2/139)

Aprasuk = living or infested with living organism (8/6/3)

Apratihat = devoid of control on sinful indulgence (8/7/4-7)

Apratyakhyan = devoid of renunciation of sinful indulgence (8/7/4-7)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Apratyakhyan Kashaya = unrenounced passions (9/31/26)

Apurvakaran = unprecedented purity; eighth Gunasthan (9/31/26).

Araadhak = steadfast (8/6/7-11)

Araadhana = steadfast practice (8/10/2); spiritual endeavour (8/10/3)

Aran Kalpopapannak Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to Aran Kalp (8/2/16)

Aras = tasteless (9/33/92, 110, 111)

Arati-Parishaha = affliction related to disturbance, disinterest or apathy in observing ascetic-discipline (8/8/28, 34)

Ardha-Pudgal-Paravartan = time taken by a soul to touch half of the matter particles in the Lok (8/9/88)

Arhat = Venerable (9/33/98)

Arihant Bhagavan = the Omniscient Lord (9/33/5)

Arthavagraha = acquisition of meaning (8/2/23)

Arth-Pratyaneek = defier of the meaning (8/8/6, 7)

Aryaa Chandana (9/33/18)

Asamyat = devoid of restraint (8/7/4-7, 11, 12, 16-21)

Asamyat Samyagdrishti = indisciplined righteous beings (8/2/105)

Asan = seat (8/9/19)

Asanjni Jivas = non-sentient beings (8/2/70)

Asanjni Panchendriya Tiryanch = non-sentient five-sensed animal (8/2/35)

Asankhyat = innumerable (9/32/27, 39)

Asankhyat Dev-Praveshanak = entrance for innumerable divine beings (9/32/44)

Asankhyat Tiryanch-Yonik Praveshanak = entrance for innumerable animals (9/32/32, 33)

Asat = non-existent (9/32/49, 50, 52)

Asatavedaniya-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to displeasure experiencing karmic body formation (8/9/101)

Asatavedaniya-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for displeasure experiencing karmic body formation (8/9/101)

Asatiposhanata = immoral traffic of women (8/5/11)

Ashan = staple food (8/6/1)

Asharira-Pratibaddha Jiva = unembodied soul (8/2/18)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Ashashvat = temporary (9/33/36)

Ashi = fangs; teeth; molars; sting (8/2/17)

Ashivish = living beings having poisonous fangs (8/2/1, 17)

Ashrutva = non-listener (9/1/1)

Ashrutva Kevali = self-enlightened omniscient (9/31/27)

Ashubh-Naam-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to ignoble destiny and species determining karmic body formation (8/9/108)

Ashubh-Naam-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for ignoble destiny and species determining karmic body formation (8/9/108)

Ashva = horse (9/34/3)

Ashvakarn (9/3-30/3)

Ashvamukh (9/3-30/3)

Ashvattha = Pipal; Ficus religiosa (8/3/5)

Asochcha = without hearing (9/31/32, 36)

Asochcha Avadhi-Jnani (9/31/44)

Asochcha Kevali = Ashrutva Kevali (9/31/39, 43)

Asur Kumar Or Asur Kumar Dev = divine being of Asur Kumar class (8/2/28; 8/6/16; 8/9/70, 78; 9/32/4, 48, 51, 54, 57)

Asur Kumar Bhavanavasi Dev-Panchendriya-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to transmutable body formation of five-sensed Asur Kumar abode dwelling gods (8/9/58)

Asur Kumar Bhavan-Vaasi Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among Asur Kumar abode dwelling divine beings (8/2/12, 13)

Atharvaveda (9/33/2)

Atma-Ninda = self-censure (8/6/7, 10)

Attalak = bastion on a rampart (8/9/17)

Atthapadalaaye Pottiye = mouth-cover of eight-fold clothe.

Audarik = gross physical (8/2/70)

Audarik Sharira ()

Audarik Sharira = gross physical body (8/6/14-16, 18-23; 8/9/41, 50, 120, 121, 123-129)

Audarik-Sharira-Bandh (8/9/50)

Audarik-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to gross physical body formation (8/9/24, 25, 27, 33, 37, 50, 82)

Audarik-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for gross physical body formation (8/9/27, 50)

Audayik = state of fruition (8/2/129)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Audayik Bhaava = state of fruition (8/2/128)

Auddeshik = food generally cooked for ascetics or other seekers (9/33/43)

Aughik = general statement (8/6/17, 19, 21, 24, 27; 8/10/39)

Aupapatik Sutra (9/1/2; 9/32/1; 9/33/1, 23, 24, 28, 46, 72, 77, 88, 89)

Autpattiki Buddhi = spontaneous wisdom (8/2/135)

Avaaya = to conclude (8/2/20)

Avadhi-Darshan = perceptive involvement (8/2/127)

Avadhi-Darshan Anaakaar Upayoga = darshanopayoga or perceptive involvement related to extrasensory perception of the physical dimension (8/2/114)

Avadhi-Jnana = extrasensory perception of the physical dimension; something akin to clairvoyance (8/2/18, 19, 25, 70, 82, 83, 95, 105, 114, 130, 139, 141, 144; 8/8/8, 9; 9/31/10, 14, 16, 33, 35, 44)

Avadhi-Jnana Saakaar Upayoga = cognitive involvement related to avadhi-jnana (8/2/108)

Avadhi-Jnanaavaraniya Karma = karma that obscures extrasensory perception of the physical dimension (9/31/10, 13, 32)

Avadhi-Jnana-Labdhi Jivas = living beings having attained the ability of extrasensory knowledge (8/2/82)

Avadhi-Jnani = endowed with extrasensory perception of the physical dimension; something akin to clairvoyance (8/2/26, 27, 139; 9/31/15, 16, 24, 26, 34, 35, 38, 44)

Avagraha = acquiring cursory knowledge through sense organs (8/2/20, 22, 23, 128, 135, 146)

Avalika = a micro-unit of time (8/2/35, 130; 8/9/48-50, 71)

Avasarpini = regressive cycle of time (8/2/130)

Avasarpini Kaal = regressive cycle of time (9/33/101)

Avasarpini-Utsarpini = progressive and regressive cycles of time (8/9/48)

Avashyak Sutra (9/33/22, 103)

Avasthit = steady (9/33/101)

Avavidh = a sect of followers of the Ajivak doctrine (8/5/9)

Avaya = to conclude (8/2/22); to validate and conclusively classify (8/2/128)

Avayukaayik-Ekendriya-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to one-sensed non-air-bodied transmutable body formation (8/9/52)

Avedak = non-genderic beings (8/2/127)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Avedak Jivas = beings without gender (8/2/125)

Avedi = non-genderic (9/31/23, 37)

Avibhaag = indivisible (8/10/36)

Avibhaag Parichchhed = ultimate fraction (8/10/33-36)

Avirat = devoid of detachment (8/7/4-7)

Avirati = absence of restraint (8/8/22)

Avirat-Samyagdrishti = righteous but with attachment (8/10/2)

Avyaya = non-expendable (9/33/101)

Ayambul = a sect of followers of the Ajivak doctrine (8/5/9)

Ayogi = without association or activity (9/31/17, 36)

Ayogi Avastha = the level of dissociation or inactivity (9/31/25)

Ayogi Bhavasth Kevali = living omniscient without association (8/8/34)

Ayogi Jivas = living beings without association/action (8/2/117)

Ayomukh (9/3-30/3)

Ayushya = life-span (8/9/27, 50, 53-56, 85, 92, 118)

Ayushya Karma = life-span determining karma (8/2/35; 8/10/41, 45, 48, 49, 51, 53-55, 58)

Ayushya-Karman-Sharira-Bandh (8/9/119)

(B)

Baadar Jivas = gross living beings (8/2/49)

Baal-Pandit-Virya-Labdhi = attainment of ability of potency of an indisciplined and disciplined both; or that which helps indulgence in partial discipline or partial renunciation (8/2/77, 100, 105)

Baal-Virya-Labdhi = attainment of ability of potency of an indisciplined; or that which helps indulgence in indiscipline (8/2/77, 98, 105)

Bahurat-Vaad (9/33/103)

Bahushal Chaitya (9/33/1, 23)

Bakul = Maulashri; Mimusops elengi (8/3/5)

Balaharan = beams (8/6/13)

Balukaprabha Prithvi (9/32/17-28)

Bandh = karmic bondage (8/8/10, 22; 8/9/1)

Bandhan Pratyayik = related to binding force (8/9/8, 11)

Bandhan Pratyayik Saadik Visrasa Bandh = binding force related natural bondage (8/9/9)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Bandhan-Chhedan-Gati = the movement related to bondage termination (8/7/25)

Basad Patti (9/32/2)

Bavadi = rectangular reservoir (8/9/17)

Beej = seed (8/3/5)

Bel = Bilva; Bengal Quince; Aegle marmelos corr (8/3/5)

Bhaajan = place of storage (8/9/11)

Bhaajan Pratyayik = related to container or storage (8/9/8, 11)

Bhaajan Pratyayik Saadik Visrasa Bandh = storage related natural bondage (8/9/10)

Bhaati Karma = transport trade (8/5/11)

Bhaava = mode or state of existence of things (8/2/128-135); spiritual state (8/8/7)

Bhaava-Pratyaneek = to act against spiritual purification, defined as states of destruction of karmas (8/8/7)

Bhaavit = enkindling (8/7/3; 9/33/2, 3)

Bhadrasan = a specific design of seat (9/33/72)

Bhajana = probability or may and may not (8/10/58)

Bhand = earthen pots (8/9/19)

Bharat (8/2/3, 4)

Bhat = soldiers (9/33/24)

Bhava = genus (8/9/27, 50)

Bhavakarsh = acquisition of bondage during past several births (8/8/14, 22)

Bhavan-Vaasi Dev = abode-dwelling gods (8/2/11; 8/5/12; 9/31/30; 9/32/43-45)

Bhavan-Vaasi Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among abode dwelling divine beings (8/2/11, 12)

Bhavan-Vaasi Dev-Praveshanak = entrance into the realm of abode-dwelling gods (9/32/42, 46)

Bhavapratyayik = innate or acquired naturally by birth (8/2/70; 8/9/82)

Bhavapratyayik Avadhi-Jnana = innate extrasensory perception (8/2/35)

Bhavapratyayik Vibhang-Jnana = innate pervert knowledge (8/2/70)

Bhavasiddhik Jivas = beings worthy of being liberated in future (8/2/67, 70)

Bhavasiddhik-Dvar = state of righteousness leading to liberation (8/2/70)

Bhavasth-Dvar = state of existence in a genus (8/2/70)

Bhava-Upapaat (8/7/25)

Bhava-Upapaat-Gati = rebirth in different genus due to bondage of karmas (8/7/25)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Bhavya = destined to be liberated (8/2/139; 8/8/22; 8/9/96)

Bhog = name of a clan (9/33/24)

Bhoga = enjoyment (9/33/72)

Bhogaantaraya Karma = enjoyment hindering karma (8/2/105)

Bhoga-Labdhi = ability of enjoyment (8/2/71, 76, 105)

Bhoot = a class of lower gods (9/33/24)

Bhoots = immobile beings; plant-bodied beings (8/9/100)

Bhoot-Vriksha = Walnut tree (8/3/5)

Bil-Pankti = row of narrow wells or water-pits (8/9/17)

Brahmalok = the fifth heaven (9/33/107)

Brahman Kundagram (9/33/1)

Brahmankund (9/33/3)

Brihatsangrahani (8/8/45)

Buddha = enlightened (9/31/42; 9/32/59; 9/33/16, 20, 43, 109, 112)

(C)

Chaaritraachaaritra-Labdhi = ability of partial renunciation (8/2/71, 76, 105)

Chaaritraachaaritra-Labdhi Jivas = living beings having attained the ability of partial renunciation (8/2/95)

Chaaritra-Araadhana = practice of right conduct (8/10/3, 6, 18)

Chaaritra-Labdhi = attainment of ability of conduct (8/2/71, 75, 105)

Chaaritra-Labdhi Jivas = living beings having attained the ability of conduct (8/2/92)

Chaaritra-Mohaniya Karma = conduct deluding karma (8/2/105; 8/8/28; 9/31/4)

Chaaritra-Pratyaneek = maligner of spiritual conduct (8/8/7)

Chaaritravaraniya Karma = conduct obscuring karma (9/31/13)

Chakshu-Darshan Anaakaar Upayoga = darshanopayoga or perceptive involvement related to visual perception (8/2/113)

Chakshurindriya-Labdhi = attainment of ability of the sense organ of seeing (8/2/103, 105)

Champa (9/1/2; 9/33/91)

Chand = agonizing (9/33/92)

Charam = last one (8/3/8)

Charika = an eight cubit wide pathway between moat and rampart (8/9/17)

Charmavriksha = Bhojapatra tree; Himalayan Silver Birch (8/3/5)

Charya-Parishaha = movement or wandering related affliction (8/8/27, 34)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Chaturindriya Jivas = four-sensed living beings (8/2/30)

Chaturindriya-Audarik-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to four-sensed gross physical body formation (8/9/25)

Chaturindriya-Taijas-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to four-sensed fiery body formation (8/9/90)

Chaturindriya-Tiryanch-Yonik-Karma-Ashivish = poisonous by action among four-sensed animals (8/2/8)

Chaturmukh = a temple with gates on all four sides (8/9/17)

Chatushk = meeting point of four roads (8/9/17)

Chatvar = a square, court, circus, or plaza (8/9/17)

Chhaadan = thatch (8/6/13)

Chhaal = bark (8/3/5)

Chhadmasth = one who is short of omniscience due to residual karmic bondage (8/2/18, 105, 127; 8/8/32, 33; 9/33/98, 101, 103)

Chhatra = umbrella (8/10/59)

Chhatri = the owner of umbrella (8/10/59)

Chhed = abandoned (8/2/105)

Chhedopasthaanik-Labdhi = attainment of ability of re-accepting five great vows one by one (8/2/75, 105)

Chhedopasthapanik Chaaritra = conduct conforming to the code of re-initiation after rectifying faults (8/10/18)

Chhilvar = covering mat (8/6/13)

Chilat (9/33/10)

Chitral = a split hoofed wild animal; may be elk or reindeer (9/34/4, 7)

Chitral-Vair = malice against Chitral (9/34/7)

Cholapattak = a piece of cloth (8/6/6)

Chullahimavant (9/3-30/2, 3)

Chyavan = descent (9/32/13, 48)

(D)

Daanaantaraya Karma = charity hindering karma (8/2/105)

Daan-Labdhi = ability of charity (8/2/71, 76, 105)

Daan-Labdhi Jivas = beings having attained the ability of charity (8/2/96)

Dadim = Anaar; Pomegranate (8/3/5)

Damsh-Mashak-Parishaha = affliction of sting (8/8/27, 31, 34)

Dand = staff (8/10/59)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Dandak = places of suffering (8/6/29; 8/10/58, 61)

Dandi = the owner of a staff (8/10/59)

Danta Vanijya = trading in teeth, bone and skin (8/5/11)

Darpan = a mirror (9/33/72)

Darshan = perception/faith (8/9/99)

Darshanaachaar (8/10/18)

Darshan-Araadhana = practice of right perception/faith (8/10/3, 5, 18)

Darshanavaraniya Karma = perception/faith obscuring karma (8/10/40-42, 45, 46, 58; 9/31/3, 26)

Darshanavaraniya-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to perception/faith obscuring karmic body formation (8/9/99)

Darshanavaraniya-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for perception/faith obscuring karmic body formation (8/9/99)

Darshan-Labdhi = attainment of ability of perception/faith (8/2/71, 74, 105)

Darshan-Labdhi Jivas = living beings having attained the ability of perception/faith (8/2/88)

Darshan-Mohaniya Karma = perception/faith deluding karma (8/8/28)

Darshanopayoga = perceptive involvement (8/2/127; 9/31/25)

Darshan-Parishaha = perception/faith related affliction (8/8/24, 28, 34)

Darshan-Pratyaneek = maligner of perception/faith (8/8/7)

Datt = given (8/7/9-11)

Davagnidapanata = causing forest fire (8/5/11)

Deept = opulent (9/33/2, 22)

Deep-Yashti = pot of the lamp (8/6/12)

Desh Samhanan-Bandh = partial integrative bondage (8/9/18, 19)

Desh-Araadhak = partially steadfast spiritual aspirant (8/10/2)

Desh-Bandh = bondage in part or bondage of a part (8/9/4, 33, 34, 36-45, 48-50, 62-64, 66-68, 70-73, 75, 76, 79-82, 86-88, 93, 96, 112, 118, 120, 121, 123, 124, 126-128)

Desh-Bandhak = one that acquires bondage of a part (8/9/50, 82, 89, 96, 117, 119, 129)

Deshonakoti-Purva = less then ten million purva; a metaphoric unit of time (8/2/139)

Desh-Viraadhak = partially faltering spiritual aspirant (8/10/2)

Dev Gati = divine genuses (8/2/39)

Devakul = temples (8/9/17)

Devananda (9/33/3)

Dev-Ayushya-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

to divine life-span determining karmic body formation (8/9/106)

Dev-Ayushya-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for divine life-span determining karmic body formation (8/9/106)

Dev-Bhavasth Jivas = existing divine beings (8/2/65)

Dev-Gati = genus of divine beings (8/2/70)

Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among divine beings (8/2/7, 11)

Dev-Praveshanak = entrance into divine genus (9/32/14, 42, 47)

Dhaaran = load-bearing pillars (8/6/13)

Dhaarana = understanding (8/8/8, 9); to finally acquire or absorb into memory (8/2/20, 22, 128)

Dhaarana-Vyavahaar = behaviour according to one's own interpretation of directive commands given in the past (8/8/8, 9)

Dhank (9/33/103)

Dhanush = a linear measure (9/31/21)

Dharmantarayik Karma = religion hindering karma (9/31/4, 13)

Dharmastikaaya = motion entity (8/2/11, 18, 128, 129)

Dharmastikaaya Anyonya-Anaadik Visrasa Bandh = motion entity related mutually interdependent natural bondage without a beginning (8/9/3, 4, 6)

Dhatakikhand Dveep (9/2/4, 5)

Dhoom-Prabha Prithvi (9/32/17-28)

Dhruva = constant (9/33/101)

Dirghika = large lake (8/9/17)

Draha = lake (8/9/17)

Dravya = substance or matter (8/2/128-135); entity or element (8/10/23-26, 28)

Dravya-Desh = part of an element; element-part (8/10/23-26, 28)

Dravyarthik Naya = existent material aspect (9/32/51)

Duhkha Roop = miserable (9/33/92)

Duhsaha = unbearable (9/33/92)

Durbhiksha-Bhakt = food prepared for drought (9/33/43)

Durg = intolerable (9/33/92)

Dushprayukata-Kaaya-Kriya = physical activity of a pervert ascetic with sensual and mental cravings (8/4/1)

Dvar = door (8/9/17)

Dvindriya Jiva = two-sensed beings (8/2/30, 70; 9/32/6, 10)

Dvindriya-Audarik-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

to two-sensed gross physical body formation (8/9/25)

Dvindriya-Taijas-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to two-sensed fiery body formation (8/9/90)

Dvindriya-Tiryanch-Yonik-Karma-Ashivish = poisonous by action among two-sensed animals (8/2/8)

Dyutipalash (9/32/1)

(E)

Ekaant Baal = complete ignorant (8/7/4-8; 11-21)

Ekaant Pundit = perfectly prudent (8/7/9-11, 19)

Ekasthik = having one bone; having single carnal or seed (8/3/5)

Ekendriya = with one sense organ (8/2/42; 8/9/43)

Ekendriya Tiryanch-Yonik-Praveshanak = entrance into the one-sensed animal genus (9/32/30, 34)

Ekendriya-Audarik-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to one-sensed gross physical body formation (8/9/25, 26, 28, 34, 38, 42, 47, 50)

Ekendriya-Taijas-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to one-sensed fiery body formation (8/9/90, 91)

Ekendriya-Tiryanch-Yonik-Karma-Ashivish = poisonous by action among one-sensed animals (8/2/8)

Ekendriya-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to one-sensed transmutable body formation (8/9/51, 52)

Ekoruk (9/3-30/2, 3)

Eshaniya = free of various prescribed faults related to alms-collection by an ascetic (8/6/3)

(G)

Gajakarn (9/3-30/3)

Gana = a friendly group of three Kulas (8/8/7; 9/33/108, 111)

Gana-Pratyaneek = adversary to a Gana or a friendly group of three kulas (8/8/4, 7)

Gandavi (9/32/2)

Gandh = smell (8/2/18)

Gandhapaati = a mountain (9/31/30)

Gandharva = a class of divine beings (8/2/25)

Gandharva Vanavyantar Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among Gandharva interstitial divine beings (8/2/14)

Gandh-Parinaam = transformation as smell (8/10/19, 21)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Gangeya = name of an ascetic (9/1/1; 9/32/52)

Garbhaj Manushya-Karma-Ashivish = poisonous by action among humans born out of womb (8/2/10)

Garbhaj Manushya-Praveshanak = entrance into the human genus of placental origin (9/32/35, 39, 41)

Garbhaj Panchendriya-Tiryanch-Yonik-Karma-Ashivish = poisonous by action among five-sensed animals born out of womb (8/2/9)

Garha = to condemn (8/6/7, 10)

Garta = chasms (9/31/30)

Gati = transmigration (8/8/3)

Gati-Dvar = state of genuses (8/2/70)

Gatiprapaat = flow of movement (8/7/24, 25); the study of flow of movement (8/7/25)

Gati-Pratyaneek = those who behave contradictory to the norms of the genus they are born in (8/8/7)

Gatipravaad = the study of flow of movement (8/7/25)

Gaveshana = the comparison with opposing values and their negation (9/31/14)

Ghaati Karmas = vitiating karmas (8/10/41, 58)

Ghanadant (9/3-30/3)

Ghat = urn (8/10/59)

Ghati = the owner of urn (8/10/59)

Ghranendriya-Labdhi = attainment of ability of the sense organ of smell (8/2/105)

Gilli = howda or a seat on elephant's back (8/9/19)

Glaan-Bhakt = food prepared for a sick person (9/33/43)

Glana = ailing ascetic (8/8/7)

Glana-Pratyaneek = adversary to ailing ascetic (8/8/5)

Gokarn (9/3-30/3)

Gomukh (9/3-30/3)

Goodhadant (9/3-30/3)

Gopur = main gate of entrance into a town (8/9/17)

Gotra Karma = status determining karma (8/10/41, 45, 49, 52, 54, 56, 58)

Grahanakarsh = acquisition of bondage during a specific birth (8/8/14, 22)

Graiveyak Kalpateet Dev (8/9/80)

Graiveyak Vaimanik Dev (8/9/61)

Granthim = made by stringing (9/33/57)

Grishma = summer season (9/33/22)

Guchchhak = a piece of cloth meant for wiping pots (8/6/6)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Gunasthaan = levels of spiritual ascendance or purity of soul (8/2/75, 105, 127; 8/8/22)

Gunavrats = restraints that reinforce the practice of anuvrats (8/5/2, 4)

Gunjalika = canal (8/9/17)

Guptis = self-restraints (8/10/18)

Guru-Pratyaneek (8/8/7)

(H)

Haimavat (9/3-30/3)

Hastimukh (9/3-30/3)

Hayakarn (9/3-30/3)

Hemant = cold season (9/33/22)

Hinguvriksha = Asafoetida tree (8/3/5)

(I)

Ibhya = affluent people (9/33/24)

Iha = effort to acquire knowledge or conceiving of the proper meaning; to study; to match with the recorded information (8/2/20, 22, 128; 9/31/14, 33)

Ihalok-Pratyaneek = maligner of this life (8/8/3, 7)

Ikshvaku (9/33/24)

Indra Sthaan = seat of king of gods (8/8/47)

Indriya-Dvar = state of sense organs (8/2/70)

Indriya-Labdhi = ability of sense organs (8/2/71, 78, 101, 102, 105)

Iryapathik-Bandh = karmic bondage due to passion-free activity (8/8/10)

Iryapathik-Karma (8/8/11-16, 19, 22)

Iryapathik-Karma Bandh (8/8/22)

Ishaan Kone = northeast direction (8/8/45; 9/33/16)

Ishan Kalp = specific divine dimension (9/33/105, 106)

Ishatpragbhara Prithvi = Siddhashila (8/3/7)

Itvar-Kaalik = temporary or for a limited period (8/2/105)

(J)

Jaai = Jasmine (8/3/5)

Jaanai = knows (8/2/131)

Jaati-Ashivish = poisonous by birth or innately poisonous or physically poisonous (8/2/1, 17)

Jaati-Ashivish Manduk = frog of venomous breed (8/2/4)

Jaati-Ashivish Manushya = man of venomous breed (8/2/6)

Jaati-Ashivish Urag = snake of venomous breed (8/2/5)

Jaati-Ashivish Vrishchik = scorpion of venomous breed (8/2/3)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jaati-Naam Karma = genus determining karma (8/2/105)

Jaaya = wife (8/5/3, 4)

Jaghanya = lowly (8/10/4, 9)

Jaghanya Chaaritra-Araadhana = lowly practice of right conduct (8/10/18)

Jaghanya Darshan-Araadhana = lowly practice of right perception/faith (8/10/17, 18)

Jaghanya Jnana-Araadhana = lowly practice of right knowledge (8/10/16, 18)

Jalla-Parishaha = dirt or slime related affliction (8/8/27, 34)

Jamali (9/33/22)

Jambudveep = Jambu continent (8/2/5, 17; 9/1/1)

Jambudveep Prajnapti (9/1/3; 9/2/2, 3)

Jamun = rose-apple; Eugenia Jambolana (8/3/4)

Jatisampanna = belonged to high castes (8/7/3)

Jeet-Vyavahaar = behaviour according to the tradition followed by accomplished ascetics (8/8/8, 9)

Jihvendriya-Labdhi = attainment of ability of the sense organ of taste (8/2/104)

Jina = Conqueror of senses (9/33/98)

Jiva = living being or soul (8/2/70)

Jiva Pradesh = soul-space-points (8/8/22)

Jivabhigam Sutra (8/2/138, 139; 8/8/46, 47; 9/2/4, 5; 9/3-30/2, 3)

Jivapradesh = soul-space-points (8/9/22)

Jnana = knowledge; right knowledge (8/2/19, 30-32, 34, 35, 37, 41, 43, 45, 52, 54-56, 58-60, 63, 70, 88, 90, 92, 93, 98, 105, 146; 9/31/16, 35)

Jnanaachaar (8/10/18)

Jnana-Araadhana = practice of right knowledge (8/10/3, 4, 18)

Jnana-Darshn-Chaaritra = knowledge-faith-conduct (8/10/2)

Jnana-Labdhi = attainment of ability of right knowledge (8/2/71, 72, 105)

Jnana-Labdhi Jivas = living beings having attained the ability of knowledge (8/2/79)

Jnana-Mati (8/2/127)

Jnana-Parishaha = knowledge related affliction or ignorance (8/8/26, 34)

Jnana-Pratyaneek = maligner of knowledge (8/8/7)

Jnanavaraniya = knowledge obscuring (8/8/23, 25, 31; 9/31/26)

Jnanavaraniya Karma = knowledge obscuring karma (8/2/105; 8/8/26; 8/9/119 8/10/33, 35, 36-38, 40-45, 58; 9/31/2, 13)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jnanavaraniya-Karman-Sharira = knowledge obscuring karmic body (8/9/115)

Jnanavaraniya-Karman-Sharira-Bandh (8/9/117)

Jnanavaraniya-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to knowledge obscuring karmic body formation (8/9/97, 98, 112, 113, 119)

Jnanavaraniya-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for knowledge obscuring karmic body formation (8/9/98)

Jnani = endowed with right knowledge (8/2/26-31, 35, 36, 41, 42, 44-46, 8/2/51, 54, 56, 58-65, 67, 68, 70, 8/2/79, 80, 85, 88, 93, 95, 104, 106)

Jnanopayoga = cognitive involvement (8/2/127; 9/31/25)

Jnatra (9/33/24)

Jyotish = Stellar gods (9/1/1)

Jyotish Chakra (8/2/131)

Jyotishk = Stellar gods (8/5/12; 8/9/60; 9/32/50, 57)

Jyotishk Dev = Stellar god (8/2/11, 14, 34, 54; 8/8/46; 9/32/12, 43-45, 48; 9/33/105)

Jyotishk Dev-Praveshanak = entrance into the realm of stellar gods (9/32/42, 46)

(K)

Kaal = time (8/2/128- 135)

Kaalatikrant = stale (9/33/92)

Kaalodadhi (9/2/4)

Kaatarak = a sect of followers of the Ajivak doctrine (8/5/9)

Kaaya = nature's call including disposing (8/7/19, 24)

Kaaya-Dvar = state of body (8/2/70)

Kaayayogi = having physical association (8/2/116); with activity of body (9/31/17)

Kaayiki = physical (8/6/29)

Kaayiki Kriya = physical activity (8/6/29)

Kadachi = serving spoons (8/9/19)

Kadali = banana (8/3/5)

Kalash = an urn (9/33/72)

Kaloda (9/2/5)

Kalpa Sutra (9/33/15)

Kalpateet = divine beings beyond the Kalps (8/10/10, 12)

Kalpateet Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among celestial vehicular divine beings beyond the Kalps (8/2/15)

Kalpopapanna = divine beings in Kalp divine realms (8/10/10)

Kalpopapannak Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

action among celestial vehicular divine beings belonging to Kalps (8/2/15, 16)

Kalp (8/9/61)

Kalp-Vriksha = wish-fulfilling tree (9/33/57)

Kalush = spite (9/33/100)

Kand = trunk (8/3/5); bulbous root (9/34/24)

Kanksha = desire for other faith (8/10/18; 9/33/100)

Kantar-Bhakt = food prepared for jungle travel (9/33/43)

Kapot Leshya = pigeon complexion of soul (8/2/119)

Kar = hand (8/10/59)

Karan = means; methods (8/5/5, 6; 8/7/4-7, 8/7/9, 11, 12, 16-21)

Karanj = Indian Beech; Pongamia Glabra Vent (8/3/5)

Kari = the owner of hand (8/10/59)

Karkash = harsh (9/33/92)

Karma Bhumi = land of endeavour (8/2/131; 9/31/30)

Karma Guruta = magnitude of karmas (9/32/57)

Karma Phal-Vipaak = maturing of fruits or intensity of karmas (9/32/57)

Karma Sambhaar = mass of karmas (9/32/57)

Karma-Ashivish = poisonous by action (8/2/1, 7, 17)

Karman = karmic (8/6/23, 29)

Karman Sharira = karmic body; the lump or aggregate of eight types of karma particles (8/6/29; 8/9/119, 120, 127-129)

Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to karmic body formation (8/9/24, 97)

Karma-Prakriti = karma species (8/8/23; 8/10/31, 32)

Karmodaya = fruition of karmas (9/32/57)

Karnppravaran (9/3-30/3)

Kartikeya (9/33/24)

Kashaaya = passions (8/8/22)

Kashaaya-Dvar (8/2/127)

Katuk = bitter (9/33/92)

Kauravya (9/33/24)

Kautumbik Purush = attendants (9/33/7)

Kavittha = Kaith; Wood apple or Elephant apple; Feronia elephantum (8/3/5)

Kayiki = physical activity (8/4/1; 9/34/22)

Kayiki Kriya = bodily or physical activity (8/4/1; 8/6/29)

Kesh Vanijya = trading in hair including wool (8/5/11)

Ketaki = Kevada; Screw Pine (8/3/5)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Keval-Darshan = ultimate perception (9/31/26; 9/33/98)

Kevali = Omniscient (8/2/105; 9/31/2; 9/33/98)

Kevali Samudghaat (8/2/127; 8/9/23; 8/10/30)

Kevali-Paakshik = self-enlightened omniscient (9/31/2, 32)

Kevali-Shravak = a lay disciple who has asked a question or listened to the Kevali in person (9/31/2)

Kevali-Upaasak = a devotee who indirectly knows about the Kevali and his sermon (9/31/2)

Keval-Jnana = ultimate knowledge; omniscience (8/2/19, 35, 40, 70, 80, 96,102, 104, 105, 126, 132, 139, 141, 144, 146; 8/8/8, 9; 9/31/12, 13, 26, 31, 39, 44; 9/33/98)

Keval-Jnana Labdhi (8/2/115)

Keval-Jnana Saakaar Upayoga = cognitive involvement related to Keval-jnana or ultimate knowledge (8/2/110, 115)

Keval-Jnanaavaraniya Karma = karma that obscures omniscience (9/31/12, 13, 32)

Keval-Jnana-Labdhi = attainment of ability of omniscience or ultimate knowledge (8/2/72)

Keval-Jnana-Labdhi Jivas = living beings having attained the ability of ultimate knowledge or omniscience (8/2/84)

Keval-Jnani = omniscient (8/2/26, 70, 137)

Khadya = general food (8/6/1)

Khai = trench or gully (8/9/17)

Khajoor = date (8/3/5)

Khambh = pillar (8/9/19)

Kilvishik Devs = servant gods (9/33/102-9, 111)

Kimpurush (8/2/25)

Kunik (9/33/72)

Kinnar (8/2/25)

Kodakodi = ten million times ten million; 10^{14} (9/2/2)

Korant (9/33/28)

Korantak = a flower (9/33/73)

Kosamb = Ceylo Oak; Schleichera trijuga (8/3/5)

Koshthak (9/33/88)

Kotakoti = ten million times ten million; 10^{14} (9/2/4)

Koti-Purva (8/2/139)

Kreet = food purchased for ascetics (9/33/43)

Krishna Leshya = black complexion of soul (8/2/119; 9/31/34)

Kritsna = complete (9/31/26)

Kriya = inclination or activity leading to karmic bondage (8/4/1); activities (8/6/29; 9/34/16, 17, 22)

Krodh = anger (8/2/122)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Kshapak Shreni = progressive spiritual ascent through destruction of karmas (8/8/22; 9/31/44)

Kshatriya = one belonging to the warrior clans (9/33/3, 22, 24)

Kshatriyakund (9/33/3)

Kshaya = destruction (8/8/22)

Kshayik Samyaktva = extinction of karma (8/10/18)

Kshayopasham = destruction-cum-pacification (8/2/146)

Kshayopashamik Samyaktva = intense destruction-cum-pacification of karma (8/10/18)

Ksheen Moha = twelfth Gunasthaan (8/8/22)

Ksheen-Kashaayi = with destroyed passions (9/31/38)

Ksheen-Vedi = with destroyed gender-karma (8/8/22); with absence of gender (9/31/37)

Kshetra = area or space (8/2/128-135)

Kshetra-Upapaat (8/7/25)

Kshetra-Upapaat-Gati = rebirth in infernal and divine realms as well as the realm of the liberated (8/7/25)

Kshudha-Parishaha = affliction of hunger (8/8/24, 27, 31, 34)

Kshullak-Bhava = rebirth of shortest life-span particular to a genus and a body (8/9/50)

Kshullak-Bhava-Grahan = time taken in taking rebirths of shortest life-span specific to the body-type (8/9/39, 40, 41, 42, 44, 45, 47, 48, 50)

Kudya = walls (8/9/15)

Kula = lineage of a single acharya (8/8/7; 9/33/108, 111)

Kula-Pratyaneek = adversary to the lineage of a single acharya (8/8/4, 7)

Kulasampanna = from noble families (8/7/3)

Kumud = a flower (9/33/63)

Kund = a flower (9/33/63, 64)

Kundagram = Brahmin Kundagram (9/1/1)

Kundapur (9/33/3)

Kut = mats (8/9/15)

Kuttim = floors (8/9/15)

(L)

Laabhaantaraya Karma = gain hindering karma (8/2/105)

Laabh-Labdhi = ability of gain (8/2/71, 8/2/76, 105)

Labdhi = attainment of ability (8/2/71, 105, 127; 8/9/54); attainment of special power (8/9/53)

Labdhi-Dvar (8/2/105)

Laksha Vanijya = Shelac trade (8/5/11)

Langoolik (9/3-30/3)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Lantak Kalp = a divine dimension (9/33/102, 107, 111)

Lashtadant (9/3-30/3)

Lavan Samudra (9/2/5; 9/3-30/3)

Lavangvriksha = clove tree (8/3/5)

Layan = a dugout or cave on a hill (8/9/17)

Leshya = radiation (8/8/37); soul complexion (8/2/127; 9/31/15, 34, 44)

Leshya-Dvar (8/2/127)

Lichchhivi (9/33/24)

Lichchhiviputra (9/33/24)

Ling = physical manifestation of gender (8/8/22)

Lobh = greed (8/2/122)

Lodhi = small grinding stone (8/9/19)

Lohakatah = steel cauldron (8/9/19)

Lok = occupied space or universe (8/2/130; 8/9/23, 48, 49; 8/10/30; 9/31/33; 9/32/51; 9/33/99, 101)

Lokakaash = occupied space (8/10/29, 30)

(M)

Maahendra Kalp = specific divine dimension (9/33/106)

Maan = conceit (8/2/122)

Maaya = deceit (8/2/122)

Madhyam = mediocre (8/10/4, 9)

Madhyam Chaaritra-Araadhana = Medium practice of right conduct (8/10/15, 18)

Madhyam Darshan-Araadhana = medium practice of right perception/faith (8/10/14, 18)

Madhyam Jnana-Araadhana = mediocre practice of right knowledge (8/10/13, 14, 18)

Mahan = one who has taken the vow of non-violence (8/6/1, 2)

Mahapath = highway (8/9/17)

Mahorag (8/2/25)

Maithun = libido (8/5/6)

Malayagiri (9/33/22)

Malla = pillars (8/6/13)

Maluk = Krishna Tulsi; Ocimum Sanctum (8/3/5)

Malyavant = a mountain (9/31/30)

Manah-Paryav Jnana-Labdhi Jivas = living beings having attained the ability of clairvoyant knowledge (8/2/83)

Manah-Paryav-Jnana = extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings, something akin to telepathy (8/2/19, 82, 92, 99, 105, 114, 127, 131, 139, 141, 144; 8/8/8, 9; 9/31/11, 13, 44, 35)

Manah-Paryav-Jnana Saakaar Upayoga = cognitive involvement related to manah-paryav-jnana (8/2/109)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Manah-Paryav-Jnanaavaraniya Karma = karma that obscures extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings (8/2/131; 9/31/11, 13)

Manah-Paryav-Jnani = endowed with extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings, something akin to telepathy (8/2/26, 139)

Manduk Jaati-Ashivish = venomous breed of frogs (8/2/2)

Manibhadra (9/1/2)

Mankhaliputra Goshalak (8/5/11)

Manodravya = thought-particles; may be neuronic activity (8/2/131)

Manoyogi = having mental association (8/2/116); with activity of mind (9/31/17)

Manthan = churning process (8/9/23)

Manushottar = a mountain (8/8/46, 47)

Manushya Jaati-Ashivish = venomous breed of men (8/2/2)

Manushya Kshetra = area inhabited by humans (9/2/4, 5; 9/32/47)

Manushya Lok = world of humans (8/2/131)

Manushya-Ayushya-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to human life-span determining karmic body formation (8/9/105)

Manushya-Ayushya-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for human life-span determining karmic body formation (8/9/105)

Manushya-Bhavasth Jivas = existing human beings (8/2/64)

Manushya-Gati = genus of human beings (8/2/38, 70)

Manushya-Karma-Ashivish = poisonous by action among humans (8/2/7, 10)

Manushya-Panchendriya-Audarik-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to gross physical body formation of five-sensed human beings (8/9/32, 36)

Manushya-Panchendriya-Audarik-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for gross physical body formation of five-sensed human beings (8/9/32)

Manushya-Panchendriya-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to transmutable body formation of five-sensed human being (8/9/57)

Manushya-Praveshanak = entrance into human genus (9/32/14, 35, 39, 47)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Margana = the search for supporting values (9/31/14)

Mati-Ajnana = wrong sensory knowledge (8/2/21-23, 46, 102, 104, 114, 133, 139, 142, 145, 146)

Mati-Ajnana Saakaar Upayoga = cognitive involvement related to mati-ajnana (8/2/111)

Mati-Ajnana-Labdhi = attainment of ability of wrong sensory knowledge (8/2/73, 105, 137, 139)

Mati-Ajnani = one with wrong sensual knowledge (8/2/26, 29, 86)

Mati-Jnana = sensual knowledge (8/2/70, 105, 139; 9/31/8)

Mati-Jnanavaraniya Karma = sensual knowledge obscuring karma (8/2/105)

Mati-Jnani = endowed with sensual knowledge (8/2/26, 27, 30)

Matsya = a fish (9/33/72)

Matulung = Bijora; Citron; Citrus medica (8/3/5)

Mayapratyayiki Kriya (8/4/1)

Meghmukh (9/3-30/3)

Mendhramukh (9/3-30/3)

Meru = a mountain (8/8/45; 9/3-30/2)

Mishra Mohaniya Karma = deluding karma that causes partial unrighteousness or neither liking nor dislike for right perception/faith (8/2/105)

Mishrajaat = food prepared for self as well as ascetics (9/33/43)

Mithila (9/1/2)

Mithyadarshan-Labdhi = attainment of ability of false perception/faith (8/2/74, 91, 105)

Mithyadarshan-Labdhi Jivas = living beings having attained the ability of false perception/faith (8/2/90)

Mithyadrishti = unrighteous (8/2/70; 8/10/2)

Mithyadrishti Jiva = unrighteous being (8/2/70)

Mithyadrishti Sanjni Panchendriya Jiva = sentient five-sensed being with false perception/faith (8/2/35)

Mithyatva = unrighteousness (8/8/22; 9/31/14)

Mithyatva Mohaniya Karma = deluding karma that causes unrighteousness or false perception/faith (8/2/105)

Mochaki = Semal; Silk Cotton tree; Bombax malabaricum (8/3/5)

Mogra = a flower (9/33/64)

Mohaniya = deluding (8/8/25; 9/31/26)

Mohaniya Karma = deluding karma (8/8/22; 8/10/41, 44, 47, 51, 58)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Mohaniya-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to deluding karmic body formation (8/9/102)

Mohaniya-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for deluding karmic body formation (8/9/102)

Mridanga = a type of drum (9/33/22)

Mrishavaad = falsehood (8/5/6)

Mukta = liberated (9/32/59; 9/33/16, 20, 43, 109, 112)

Mundavejj = to tonsure by pulling out hair (9/31/31)

(N)

Na Bandhi = one who did not acquire (8/8/22)

Naag Kumar = a class of divine beings; serpent-god (8/9/70, 78; 9/33/24, 56)

Naam Karma = form determining karma (8/10/41, 45, 49, 52, 53, 56-58)

Naamodaya = a sect of followers of the Ajivak doctrine (8/5/9)

Naarikel = coconut (8/3/2, 5)

Nadi = river (8/9/17)

Nairayik Or Nairayik Jiva = infernal being (8/8/11, 17; 8/10/60)

Nairayik-Ayushya-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for infernal life-span determining karmic body formation (8/9/103)

Nairayik-Karma-Ashivish = poisonous by action among infernal beings (8/2/7)

Nairayik-Praveshanak = entrance into infernal genus (9/32/14, 15, 47)

Nandi Sutra (8/2/23-25, 130, 131)

Nandyavart = a specific elaborate graphic design resembling an extended swastika (9/33/72)

Napumsak Vedak = neuter gender (8/2/124)

Napumsak-Pashchaatkrit (8/8/22)

Napumsak-Pashchaatkrit Jiva = a being who was eunuch in the past but non-genderic now (8/8/13, 19, 22)

Napumsak-Vedi = neuter (9/31/23, 37)

Narak-Gati = genus of infernal beings (8/2/36, 70)

Narmodaya = a sect of followers of the Ajivak doctrine (8/5/9)

Neech-Gotra-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to low caste determining karmic body formation (8/9/110)

Neech-Gotra-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for low caste

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

determining karmic body formation (8/9/110)

Neel Leshya = blue complexion of soul (8/2/119)

Neem = Margosa; Melia azadirachta (8/3/4, 5)

Nihnava = mendacious seceder (9/33/103)

Nihnavavaad (9/33/97)

Nikkhamanapaugge Aggakese = hair trimming suited for renunciation

Niraakaar Upayoga = darshanopayoga or perceptive involvement (8/2/127)

Nirantar = continually (9/32/3-5, 7, 9, 10, 12, 13)

Niratichaar = without relaxation (8/2/105)

Niravaran = unveiled or unclouded (9/31/26)

Niraya-Bhavasth = already born as infernal being or existing as infernal being (8/2/70)

Niraya-Bhavasth Jivas = existing infernal beings (8/2/62, 8/2/65)

Niraya-Gatik Jivas (8/2/70)

Nirgranth = a male ascetic (8/6/7-9)

Nirgranthi = a female ascetic (8/6/10)

Nirlanchhan Karma = castration activity (8/5/11)

Nirvana = free of cyclic rebirth (9/33/43)

Nirvartan-Aadhikaranik-Kriya = act of making weapons from scratch (8/4/1)

Nirvishtakaayik = at conclusion of the process of purification (8/2/105)

Nirvishyamanak = in process of purification (8/2/105)

Nirvyaghaat = unobstructed (9/31/26)

Nishadh = a mountain (8/8/45)

Nishadya-Parishaha = accommodation related affliction (8/8/28, 34)

Nishkramanabhishek = ritual of pre-renunciation anointing (9/33/49)

Nitya = perpetual (9/33/101)

Niyama = essentially or as a rule (8/10/58)

Niyat = fixed (9/33/101)

Noashva = non-horse; living beings other than horse (9/34/3)

No-Bhavasiddhik-No-Abhavasiddhik Jivas = beings neither worthy not unworthy of being liberated in future (8/2/69)

No-Bhava-Upapaat (8/7/25)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

No-Bhava-Upapaat-Gati = rebirth not related to karmic bondage is called (8/7/25)

No-Chaaritri-No-Achaaritri (8/2/105)

Nochitral-Vairs = malice against numerous non-Chitral (9/34/7)

No-Ekendriya = living being other than one-sensed (8/9/47)

No-Indriya Dhaarana = non-sensual absorption (8/2/23)

Noparyaptak-Noaparyaptak = neither fully developed nor underdeveloped (8/2/61)

No-Prithvikaayik = living being other than earth-bodied (8/9/48)

Nopurush = non-man; living beings other than man (9/34/2)

Nopurush-Vair = malice against non-man; malice against living beings other than man (9/34/7, 8)

Norishi = non-sage; living beings other than sage (9/34/6)

Norishi-Vair = malice against non-sage; malice against living beings other than a sage (9/34/8)

No-Sanjni-No-Asanjni Jivas = neither sentient nor non-sentient beings (8/2/70)

Nosukshma Nobaadar = neither minute nor gross (8/2/50)

No-Vayu-Kaayik = living being other than air-bodied (8/9/75)

(O)

Obhaasanti = enlighten (8/8/39)

Opashamik Samyaktva = intense pacification of karma (8/10/18)

(P)

Paakhandasth = ritual observer of vows (9/31/14)

Paan = liquids (8/6/1)

Paap Karma = demeritorious karma (8/6/1-3)

Paaritapaniki Kriya = activity of inflicting pain (8/6/29)

Paasai = sees (8/2/131)

Paatra = ascetic-bowls (9/33/50)

Padma = type of lotus (9/33/78)

Padma Leshya = yellow complexion of soul (8/2/119; 9/31/15)

Padmavarvedika = plateau (9/3-30/2)

Palash = Forest Flame; Burea frondosakoen (8/3/5)

Palyopam = a metaphoric unit of time (8/2/131; 8/9/37, 40, 72; 9/3-30/3; 9/33/104, 108)

Panchamushti Kesh-Locha = five-fist pulling out of hair (9/33/16)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Panchendriya Tiryanchayonik Jivas = five-sensed animals (8/2/31)

Panchendriya Tiryanch-Yonik-Praveshanak = entrance into the five-sensed animal genus (9/32/30, 34)

Panchendriya-Audarik-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to five-sensed gross physical body formation (8/9/25)

Panchendriya-Taijas-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to five-sensed fiery body formation (8/9/90)

Panchendriya-Tiryanch-Yonik-Karma-Ashivish = poisonous by action among five-sensed animals (8/2/8, 9)

Panchendriya-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to five-sensed transmutable body formation (8/9/51)

Pandit-Virya-Labdhi = attainment of ability of potency of a disciplined (8/2/77, 99, 105)

Panduk = a forest (9/31/30)

Pankaprabha Prithvi (9/32/17-28)

Pannavejj = to explain by showing the differences or explain by splitting (9/31/31)

Paralok-Pratyaneek = maligner of next life (8/8/3, 7)

Paramanu = ultimate particle of matter (8/9/9, 11)

Paramanu-Pudgala = ultimate particle of matter (8/2/18)

Parichchhed = part or fraction (8/10/36)

Parigraha = possession (8/5/6)

Pariharavishuddhik-Labdhi = attainment of ability of to observe special austerities according to the prescribed procedure aimed at enhanced purification (8/2/75, 105)

Parihar-Vishuddhi Chaaritra = conduct conforming to the level of destruction of karma through special austerities (8/10/18)

Parikha = a moat or trench with narrow bottom and wide top (8/9/17)

Parimandal Samsthaan-Parinaam = transformation as circular shape (8/10/22)

Parinaam Pratyayik = related to transformation (8/9/8, 11)

Parinaam Pratyayik Saadik Visrasa Bandh = transformation related natural bondage (8/9/11)

Parinivrit (9/33/16, 20)=

Parishaha = afflictions (8/8/24, 34)

Paritapaniki = activity of inflicting pain (8/4/1; 9/34/22)

Par-Paryaya = relative modes (8/2/146)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Parshvapatya = in the lineage of Purushadaniya Bhagavan Parshvanaath (9/32/2)

Paruvejj = to authenticate with the help of etymology (9/31/31)

Paryapt Asur Kumaradi Bhavan-Vaasi Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among fully developed Asur Kumar and other abode dwelling divine beings (8/2/13)

Paryapt Jivas = fully developed beings (8/2/70)

Paryapt Manushya = fully developed humans (8/2/54)

Paryapt Sahasrar Kalpopapannak Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among fully developed celestial vehicular divine beings belonging to the Sahasrar Kalp (8/2/17)

Paryapt Sankhyat Varsh Ayushya Garbhaj Panchendriya-Tiryanch-Yonik-Karma-Ashivish = poisonous by action among fully developed five-sensed animals born out of womb with a life-span of countable years (8/2/9)

Paryapt Sankhyat Varsh Ayushya Karmabhumij Garbhaj Manushya-Karma-Ashivish = poisonous by action among fully developed humans born out of womb with a life-span of countable years in the land of endeavour (8/2/10)

Paryapt Saudharma Kalpopapannak Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among fully developed celestial vehicular divine beings belonging to Saudharma Kalp (8/2/17)

Paryaptak = fully developed (8/2/53)

Paryaptak Jivas = fully developed beings (8/2/51)

Paryaptak Nairayik Jivas = fully developed infernal beings (8/2/52)

Paryaptak Panchendriya Tiryanchayonik Jivas = fully developed five-sensed animals (8/2/54)

Paryaptak Vanavyantar (8/2/54)

Paryapt-Aparyapt Naam-Karma = karma determining the states of full or partial development (8/2/70)

Paryapt-Dvar = state of full development (8/2/70)

Paryapt-Garbhaj-Manushya-Panchendriya-Audarik-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to gross physical body formation of fully developed five-sensed human born out of womb (8/9/26)

Paryapt-Naam Karma = full development ensuring karma (8/2/105)

Paryapt-Sarvarthasiddha-Anuttaraupapatik-Kalpateet-Vaimanik-Dev-Panchendriya-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to transmutable body formation of fully developed Sarvarthasiddha-anuttaraupapatik celestial vehicular gods beyond the Kalps (8/9/52)

Paryapt-Sarvarthsiddha-Anuttaraupapatik-Kalpateet-Vaimanik-Panchendriya-Taijas-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to fiery body formation of fully developed five-sensed divine beings of Paryapt-sarvarthsiddha-anuttaraupapatik celestial vehicles beyond the Kalps (8/9/91)

Paryaya = mode or sub-category (8/2/140, 141, 143-146)

Pat = piece of cloth (8/10/59)

Patal-Kalash (9/31/30)

Pati = the owner of piece of cloth (8/10/59)

Paushadhopavas = partial ascetic vow and fasting (8/5/2, 4)

Pavvavejj = to initiate by giving the ascetic garb and equipment (9/31/31)

Phal = fruit (8/3/5)

Phanas = Katahal; Jack fruit; Artocarpus integrifolia (8/3/5)

Pilu = Salvadora Persica (8/3/5)

Pipaasa-Parishaha = affliction of thirst (8/8/24, 27, 31, 34)

Pipal = long pepper (8/5/10)

Pishaach Vanavyantar Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among Pishaach interstitial divine beings (8/2/14)

Poogaphali = betel-nut palm (8/3/5)

Praadveshiki Kriya = activity of harbouring aversion (8/6/29)

Praan = two to four sensed beings; beings (8/7/4; 8/9/100)

Praani = one-sensed beings (8/9/100)

Praant = not enough (9/33/92, 110)

Pradesh = space-points (8/9/12, 23)

Pradveshiki = hostile action (8/4/1); activity of harbouring aversion (9/34/22)

Pragaadh = severe (9/33/92)

Praghoorn-Bhakt = food prepared for guests (9/33/43)

Prajnapana Sutra (8/2/9, 10, 137, 139; 8/3/2, 4, 8; 8/4/1; 8/6/29; 8/7/25; 8/9/26, 52, 84, 91; 9/3-30/3)

Prajna-Parishaha = enlightenment related affliction (8/8/26, 34)

Prakar = parapet wall (8/9/17)

Pramaad = stupor (8/8/22; 8/9/27, 50)

Pramaanaatikrant = excessive or meager (9/33/92)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Pramitya = food borrowed for ascetic (9/33/43)

Pranat Kalpopapannak Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to Pranat Kalp (8/2/16)

Pranatipatiki = act of harming or destroying life (8/4/1; 8/6/29; 9/34/22)

Prapa = water-hut (8/9/17)

Prarupayanti = propagate (8/10/2)

Prasad = palace (8/9/17)

Prashaant = peaceful (9/33/110)

Prashast = noble (9/31/25)

Prashast Adhyavasaaya = noble mental activity (9/31/26)

Prashasta = administrative officers (9/33/24)

Prasuk = non-living or not infested with living organism (8/6/3)

Pratighaat = fall; fall in intensity of radiation (8/8/37)

Pratihat (8/7/9)

Pratikraman = critical review and atonement (8/5/5, 6; 8/6/7, 10)

Pratipadyamaan = in process of acquiring (8/8/22)

Pratipurna = perfect (9/31/26)

Pratiti = faith; logical acceptance (9/33/30)

Pratyakhyan = to renounce; codes of renouncing (8/5/2, 4, 6; 8/7/9)

Pratyaneek = an adversary or maligner or defier or one who goes against the established norms (8/8/2, 4, 5, 7); hostile (9/33/108, 111)

Pratyutpanna-Prayoga-Pratyayik = related to present application (8/9/21, 23)

Pravachan Matrika = matrices of doctrine (8/10/18)

Praval = sprout (8/3/5)

Pravartini = head of female ascetics (8/6/10)

Praveshanak = entrance; act of genus shift or entrance into a new genus; rebirth in a genus other than the one in which a living being has died (9/32/14, 29, 34, 41)

Pravrat = monsoon season (9/33/22)

Prayoga Bandh = bondage acquired by action (8/9/1, 12, 23)

Prayoga-Gati = the intentional movement with 15 types of association or yoga (8/7/25)

Prithvikaaya = earth-bodied (8/2/46)

Prithvikaaya Jivas = earth-bodied beings (8/7/18, 19, 21)

Prithvikaayik = earth-bodied beings (8/2/29, 42)

Prithvikaayik Jivas = earth-bodied beings (9/32/5, 9; 9/34/9, 10, 12, 15-17, 22)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Prithvikaayik-Ekendriya-Audarik-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to earth-bodied one-sensed gross physical body formation (8/9/26, 29, 35, 39, 43, 48, 49)

Prithvis = worlds; here it means hells (8/3/7)

Priyadarshana (9/33/22)

Pudgal = matter (8/10/59-61)

Pudgal Parinaam = transformation of matter (8/10/19)

Pudgali = possessor of matter (8/10/59-61)

Pudgal-Paravartan = time taken by a soul to touch each and every matter particle in the Lok (8/9/48-50, 71)

Purim = made by braiding or filling (9/33/57)

Purnabhadra Chaitya (9/33/91)

Purush Vedak = masculine gender (8/2/124)

Purushadaniya = the best among men (9/32/51)

Purush-Napumsak = masculine-neuter (9/31/23, 37)

Purush-Pashchaatkrit Jiva = a being who was man in the past but non-genderic now (8/8/13, 19, 22)

Purush-Vair = malice against man (9/34/7, 8)

Purush-Vedi = masculine (9/31/23, 37)

Purva Pratipanna (8/8/22)

Purvakoti = One crore or ten million Purva is called Purvakoti. Where one Purvanga is 8.4 million years and one Purva is 84 Purvanga (8/9/41, 45; 9/31/22)

Purvakoti-Prithakatva = 2 to 9 Purvakoti (8/9/73)

Purva-Prayoga-Pratyayik = related to past application (8/9/21, 22)

Purvas = the subtle canon (8/8/8, 9, 8/9/129, 8/10/18)

Pushkarardha (9/2/5)

Pushkaravar Dveep (9/2/4, 5)

Pushkarini = lake or pond with lotuses (8/9/17)

Pushkarod (9/2/5)

Pushp = flower (8/3/5)

Putik = mixed with faulty food (9/33/43)

(R)

Rajagriha (8/5/1; 9/34/1)

Rajanya = king (9/33/24)

Rajaprashniya Sutra (8/2/20; 9/33/49, 57)

Rajoharan = ascetic-broom (8/6/6; 9/33/50)

Raj-Pind = food from a king's kitchen or very tasty and nutritious food (9/33/43)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Rasa Vanijya = trading of drinks and beverages (8/5/11)

Rasa-Parinaam = transformation as taste (8/10/19, 21)

Rath = chariot (8/9/19)

Ratnaprabha Prithvi (8/2/131; 8/3/7, 8; 8/9/58; 9/32/16-29)

Ratna-Prabha Prithvi Nairayik-Praveshanak = entrance into the first hell (9/32/15)

Ratnaprabha-Prithvi (8/9/78)

Ratnaprabha-Prithvi-Nairayik-Panchendriya-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to transmutable body formation of five-sensed infernal being of Ratnaprabha-prithvi (8/9/55)

Ratnaprabha-Prithvi-Nairayik-Panchendriya-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for transmutable body formation of five-sensed infernal being of Ratnaprabha-prithvi (8/9/55)

Ratnaprabha-Prithvi-Nairayik-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to transmutable body formation of infernal beings of the Ratnaprabha-prithvi (8/9/64, 68, 76)

Riddhiprapt-Pramattasamyat-Samyagdrishti-Paryapt-Sankhyeyavarhsyushk-Karmabhumij-Garbhaj-Manushya = righteous and accomplished but negligent fully developed human being, born out of womb, from the land of endeavour, having a life-span of countable years, and endowed with special powers (8/9/84)

Rigveda (9/33/2)

Rijumati = limited intellectual capacity (8/2/131)

Rishabh-Datt (9/33/2)

Rishi = sage (9/34/6, 8)

Rishi-Vair = malice against sage (9/34/8)

Ritu = protecting life forms including water-bodied beings (8/7/19, 24)

Roag-Parishaha = ailment related affliction (8/8/27, 34)

Ruksh = dry (9/33/92, 110)

(S)

Saadi-Aparyavasit = with a beginning and without an end (8/2/136, 139; 8/8/15, 21, 22; 8/9/12, 23)

Saadi-Aparyavasit Bandh = bondage with a beginning and without an end (8/9/12)

Saadik Visrasa Bandh = natural bondage with a beginning (8/9/2, 8)

Saadi-Saparyavasit = with a beginning and with an end (8/2/136, 139; 8/8/15, 21, 22; 8/9/12)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Saadi-Saparyavasit Bandh = bondage with a beginning and with an end (8/9/12, 23)

Saakaar = special or vivid understanding (8/2/127)

Saakaar Upayoga = jnanopayoga or cognitive involvement (8/2/106, 127; 9/31/18, 25)

Saal = Shorea robusta (8/3/5)

Saamaayik-Chaaritra-Labdhi = attainment of ability of abstaining from all kinds of sinful acts and consequent equanimity (8/2/75, 105)

Saam-Veda (9/33/2)

Saantar = with interruption (9/32/3-5, 7, 9, 10, 12, 13)

Saarkalyan = black catechu; Acacia Catachu (8/3/5)

Saasvadan Samyagdrishti = state of fleeting righteousness (8/2/105)

Saatichaar = with relaxation (8/2/105)

Sabha = assembly hall (8/9/17)

Sachit = infested with living organisms (9/33/11,12); living (9/33/43)

Saddravyata = available matter particles (8/9/27, 32, 50, 53-56, 85, 92)

Sadhvi Priyadarshana = Jamali's wife (9/33/103)

Sadhvi = female ascetic disciple (9/33/103)

Sagaropam = a metaphoric unit of time (8/2/136, 139; 8/9/41, 47, 66, 68, 70, 79-81; 9/33/102, 104, 108, 111)

Sahasrar (8/9/78)

Sahasrar Kalpopapannak Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to the Sahasrar Kalp (8/2/16)

Sakaayik Or Sakaayik Jivas = living beings with body or embodied beings (8/2/45, 46, 49, 51, 54, 64, 67, 68, 70, 116, 118)

Sakashaaya Jivas = beings with passions (8/2/126)

Sakashaayi = living beings with passions (8/2/122; 9/31/24, 38, 44)

Saleshya Jivas = living beings with soul complexion (8/2/118, 120)

Sallaki = Boswellia serrata (8/3/5)

Sallekhana = ultimate vow (9/33/16)

Samadhi Maran = meditational-death (9/33/16)

Samavatar = associated (8/8/25)

Samaya = the ultimate fractional unit of time (8/2/35, 139; 8/8/22)

Samaya Kshetra (8/2/6)

Samayik = Jain system of periodic meditation performed in slots of 45 minutes (8/5/1-3; 9/33/20)

Samayik Chaaritra = equanimous conduct (8/10/18)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Samayik Chaaritra-Labdhi Jivas = living beings having attained the ability of equanimous conduct (8/2/93)

Samhanan = body constitution (9/31/19, 36)

Samhanan-Bandh = integrative bondage (8/9/14, 18)

Samharan = migration (9/31/30)

Samitis = self-regulations (8/10/18)

Sammurchhim Manushya-Karma-Ashivish = poisonous by action among humans of asexual origin (8/2/10)

Sammurchhim Manushya-Praveshanak = entrance into the human genus of asexual origin (9/32/35, 39, 41)

Sammurchhim Panchendriya-Tiryanch-Yonik-Karma-Ashivish = poisonous by action among five-sensed animals of asexual origin (8/2/9)

Samparaaya = passion (8/8/22)

Samparayik-Bandh = karmic bondage due to passion-inspired activity (8/8/10)

Samparayik-Karma (8/8/17, 18, 20-22)

Samparayik-Karma Bandh (8/8/22)

Samsaar = cycles of rebirth (9/33/40)

Samsthaan = structure (9/1/3); body structure (9/31/20, 36)

Samsthaan-Parinaam = transformation as structure of shape (8/10/19, 22)

Samuchchaya-Bandh = organized accumulative bondage (8/9/14, 17)

Samudghat (8/9/22, 23)

Samuha = group or ascetic organization (8/8/4)

Samuha-Pratyaneek (8/8/7)

Samvar = refraining from killing (8/5/5, 6)

Samvidh = a sect of followers of the Ajivak doctrine (8/5/9)

Samyagdarshan-Labdhi = attainment of ability of right perception/faith (8/2/74, 89, 105)

Samyagdrishti = endowed with right perception or faith (8/2/35, 70; 8/10/2)

Samyagdrishti Jiva = righteous being (8/2/70)

Samyagmithyadarshan-Labdhi = attainment of ability of right-false or mixed perception/faith (8/2/74, 91, 105)

Samyaktva (8/10/18; 9/31/14, 25)

Samyam-Yatana = practice of ascetic-discipline (9/31/6, 13)

Samyat = observe restraint (8/7/9, 11, 19)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Samyogata (8/9/32)

Samyojan-Aadhikaranik-Kriya = the act of assembling weapon with already made components (8/4/1)

Sanatkumar = specific divine dimensions (9/33/106)

Sangh = an apex body of many ganas (8/8/7; 9/33/108, 111)

Sanghatim = made by interweaving or entwining (9/33/57)

Sangh-Pratyaneek = adversary to the apex body of many ganas (8/8/4, 7)

Sanjni Jivas = sentient beings (8/2/70)

Sanjni-Dvar = state of sentience (8/2/70)

Sanjni-Panchendriya-Paryaptak Jivas = sentient fully developed five sensed living beings (8/2/131)

Sanjvalan = evanescent (9/31/24, 26, 38)

Sanjvalan Kashaaya = evanescent passions (9/31/44)

Sankhyat = countable; the general term covering all numbers starting from eleven to Sheershaprahelika or 10^{257} (9/32/26, 38)

Sanklishyamaan = in state of descent (8/2/105)

Sanyasi (8/6/3)=

Saraag = with attachment (8/8/32)

Saral = Cheed; Long leafed Pine; Chir Pine (8/3/5)

Saran = thatched hut (8/9/17)

Saras Goshirsh-Chandan = sandal-wood paste (9/33/57)

Saro-Hrid-Tadaag Shoshanata = removing water from water bodies including lakes, ponds, and pools (8/5/11)

Sarovar = natural lake (8/9/17)

Sar-Pankti = row of lakes (8/9/17)

Sar-Sar-Pankti = row of lakes connected with canals (8/9/17)

Sarthavaha = caravan chiefs (9/33/24)

Sarva Bandh = bondage in whole (8/9/4)

Sarva Samhanan-Bandh = complete integrative bondage (8/9/18, 20)

Sarva-Araadhak = fully steadfast spiritual aspirant (8/10/2)

Sarva-Bandh = bondage of the whole (8/9/33, 34, 36-45, 47-50, 62-64, 66-68, 70-73, 75, 76, 79-82, 86-88, 93, 112, 120, 123, 125, 127, 129)

Sarva-Bandhak = one who acquires bondage of the whole (8/9/50, 82, 89)

Sarvabhaava = from all angles (8/2/18)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Sarvaddha = forever (8/9/6)

Sarva-Viraadhak = fully faltering spiritual aspirant (8/10/2)

Sasvadan Gunasthaan = the level where there is a fleeting taste of righteousness (8/2/70)

Sasvadan Samyagdrishti (8/2/139)

Sat = existent (9/32/49-52)

Satari = Shatavari; wild asparagus (8/5/10)

Sata-Vedaniya Karma = the karma that causes feelings of pleasure (8/8/22)

Satavedaniya-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to pleasure experiencing karmic body formation (8/9/100)

Satavedaniya-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for pleasure experiencing karmic body formation (8/9/100)

Satkaar-Puraskaar-Parishaha = affliction related to fame, honour and prize (8/8/28, 34)

Sattva = immobile beings; entities (8/7/4); earth-bodied beings, water-bodied beings, fire-bodied beings, and air-bodied beings (8/9/100)

Saudharma Kalp (8/9/61)

Saudharma Kalpopapannak Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among celestial vehicular divine beings belonging to the Saudharma Kalp (8/2/16, 17)

Saudharma= specific divine dimension (9/33/105, 106)

Saumanas = a forest (9/31/30)

Savedak = living beings with gender (8/2/124; 9/31/44)

Savedi = genderic (9/31/23, 37)

Saviryata (8/9/27, 32, 50, 53-56, 82, 85, 92)

Sayogata = available intent of activity; available intensity of thought (8/9/27, 50, 53-56, 82, 85, 92)

Sayogi = with association or activity (8/2/127; 8/8/22; 8/9/23; 9/31/17, 36)

Sayogi Bhavasth Kevali = living omniscient with association (8/8/33)

Sayogi Jivas = living beings with association/action (8/2/116)

Sayogi Kevali = thirteenth Gunasthaan (8/8/22)

Se-Indriya Or Sendriya = with sense organs (8/2/41, 43, 70)

Senapati = commanders (9/33/24)

Sendriya Jivas = living beings with sense organs (8/2/70, 119, 122, 124)

Sfota Karma = digging work (8/5/11)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Shabd = sound (8/2/18)

Shabdapaati = a mountain (9/31/30)

Shaiksha = newly initiated ascetic (8/8/7)

Shaiksha-Pratyaneek = adversary to newly initiated ascetic (8/8/5)

Shaileshi = rock-like steady (8/8/22)

Shakat = cart (8/9/19)

Shakati Karma = trade related to vehicles (8/5/11)

Shakha = branch (8/3/5)

Shanka = doubt (8/10/18; 9/33/100)

Shankhapaalak = a sect of followers of the Ajivak doctrine (8/5/9)

Sharad = autumn season (9/33/22)

Sharira-Bandh = bondage related to body (8/9/12, 21, 23)

Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to body formation (8/9/12, 24, 50)

Sharkaraprabha Prithvi (9/32/16-29)

Shashkulikarn (9/3-30/3)

Shashvat = eternal (9/33/101)

Shayan = bed (8/9/19)

Shayya-Parishaha – Affliction Related To Unsuitable Place Of Stay Or Accommodation (8/8/27, 34)

Shayyatar-Pind = food belonging to the shelter provider (9/33/43)

Sheel = right conduct (8/10/2)

Sheel-Vrats = instructive or complimentary vows of spiritual discipline (8/5/2, 4)

Sheershaprahelika = 10^{257} (9/32/26)

Sheet-Parishaha = affliction of cold (8/8/27, 31, 34)

Shikhari (9/3-30/3)

Shivika = covered palanquin (8/9/19)

Shleshana-Bandh = agglutinative bondage (8/9/14, 15)

Shraddha = respect (9/33/30)

Shraman = ascetic (8/5/7, 11; 8/6/4, 5; 9/33/2, 3)

Shraman Nirgranth = ascetic (8/8/9)

Shramanopasak = lay follower; Jain laity; male disciple (8/5/11; 8/6/1-3)

Shravak = lay follower; Jain laity; male disciple (8/5/1-6; 9/31/2)

Shravak Pratima = special resolves meant for a lay follower (8/5/6)

Shravanendriya-Labdhi = attainment of ability of the sense organ of hearing (8/2/103)

Shravasti (9/33/88)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Shravika = female disciple (9/31/2)

Shringaber = ginger (8/3/5)

Shringatak = a triangular marketplace (8/9/17); triangular courtyards (9/33/23)

Shrivats = a specific mark found on the chest of all Tirthankars (9/33/72)

Shrotrendriya-Labdhi = attainment of ability of the sense organ of hearing (8/2/78, 102, 103, 105)

Shrut = scriptures; the canon (8/8/6, 8; 8/10/2, 18)

Shrut Ajnani = one with ignorance related to scriptural knowledge or wrong scriptural knowledge (8/2/29)

Shrut Jnani = endowed with scriptural knowledge (8/2/30)

Shrut-Ajnana (8/2/)

Shrut-Ajnana = absence of scriptural knowledge or wrong scriptural knowledge (8/2/21, 24, 46, 102,.104, 114, 134, 142, 145, 146)

Shrut-Ajnana Saakaar Upayoga = cognitive involvement related to shrut-ajnana (8/2/111)

Shrut-Ajnana-Labdhi = attainment of ability of wrong scriptural knowledge (8/2/73, 86, 105)

Shrut-Ajnani = with ignorance related to scriptural knowledge or wrong scriptural knowledge (8/2/26, 137, 139)

Shrut-Dharma = Jainism (9/33/23)

Shrut-Jnana = scriptural knowledge (8/2/19, 70, 82, 83, 95, 102, 105, 129, 139, 141, 144; 8/8/9, 9/31/9, 16, 35)

Shrut-Jnana Saakaar Upayoga = cognitive involvement related to scriptural knowledge (8/2/107)

Shrut-Jnanaavaraniya Karma = scriptural knowledge obscuring karma (9/31/9, 13)

Shrut-Jnana-Labdhi = the ability of scriptural knowledge (8/2/81)

Shrut-Jnani = endowed with scriptural knowledge (8/2/26, 27); Shrut-kevalis including the scholars of ten Purvas (8/2/129, 139)

Shrut-Pratyaneek = to defy, refute and slander scriptures (8/8/7)

Shrut-Vyavahaar = behaviour according to the scriptures or texts other than Agams (8/8/8, 9)

Shubh-Naam-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to noble destiny and species determining karmic body formation (8/9/107)

Shubh-Naam-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for noble destiny and species determining karmic body formation (8/9/107)

Shuddha Samvar = perfect blockage of inflow of karmas (9/31/7)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Shuddhadant (9/3-30/3)

Shuddhadant Dveep (9/3-30/2)

Shukla Dhyan = pure ultimate meditation (9/33/76)

Shukla Leshya = white soul complexion (8/2/120; 9/31/15, 34)

Shvasochchhvas = breath (8/9/50)

Siddha = perfected soul or liberated soul (8/2/35, 44, 47, 50, 61, 66, 69, 70, 105, 139; 9/31/42; 9/32/59; 9/33/16, 20, 43)

Siddha Jiva = liberated soul (8/10/61)

Siddha-Gati = genus of liberated beings (8/2/40, 70; 9/33/23)

Siddharth (9/33/3)

Simhakarn (9/3-30/3)

Simhamukh (9/3-30/3)

Simundi = ginger (8/3/5)

Sinduwar = a kind of flower (9/33/56)

Singhaan = mucus of the nose (9/33/40)

Skandak Parivrajak (9/33/16)

Skandak Tapas (9/33/2)

Skandh = thick branch (8/3/5); aggregate (8/10/28)

Snusha = daughter-in-law (8/5/4)

Sochcha = accomplished due to hearing the sermon (9/31/32, 36)

Sochcha Kevali = omniscient by hearing the sermon (9/31/39, 43)

Sopakram Ayushya = terminable life-span (9/34/8)

Sparshanendriya-Labdhi = attainment of ability of the sense organ of touch (8/2/78, 105)

Sparsh-Parinaam = transformation as touch (8/10/19, 21)

Sringhatak (9/33/76)

Stanit Kumar (8/2/28, 53, 56; 8/9/58)

Stanit Kumar Bhavan-Vaasi Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among Stanit Kumar abode dwelling divine beings (8/2/12, 13)

Stanit Kumar Dev (9/32/4, 8, 48)

Sthaan = things (8/2/18)

Sthananga Sutra (8/10/22)

Sthavir = accomplished senior ascetic (8/5/1; 8/6/4, 5; 8/8/7)

Sthavir Bhagavant = senior ascetic disciple (8/7/3, 4)

Sthavir-Pratyaneek = adversary of sthavir (8/8/2)

Stree Vedak = feminine gender (8/2/124)

Stree-Parishaha = affliction related to opposite sex (8/8/28, 34)

Stree-Pashchaatkrit Jiva = a being who was woman in the past but non-genderic now (8/8/13, 19, 22)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Strivedi = feminine (9/31/23, 37)

Stupa = a memorial pillar or mound (8/9/17; 9/33/99)

Sudarshana (9/33/22)

Sukshma Jivas = minute living beings (8/2/48)

Sukshma Nigod = minute dormant being (8/9/50)

Sukshma Samparaya Chaaritra = conduct conforming to the level of residual subtle passions (8/10/18)

Sukshma-Dvar = state of minuteness (8/2/70)

Sukshmasamparaya-Labdhi = attainment of ability of the discipline prescribed for tenth Gunasthaan aimed at removing traces of attachment (8/2/75, 105)

Suryaabh Dev (9/33/57)

Sutra-Pratyaneek = defier of the text (8/8/6, 7)

Svadya Ahaar = savoury food (8/6/1)

Sva-Paryaya = own modes (8/2/146)

Svayambhuraman (9/2/5)

Swami = Genus (8/8/22)

Swastika = a specific graphic design resembling the mathematical sign of addition with a perpendicular line added to each of the four arms in clockwise direction (9/33/72)

Syandamanika = a palanquin as long as a man (8/9/19)

(T)

Taad = palm tree (8/3/2, 5)

Taal = a sect of followers of the Ajivak doctrine (8/5/9, 11)

Taal-Pralamb = a sect of followers of the Ajivak doctrine (8/5/9, 11)

Taati = partitions (8/6/13)

Tadag = pond (8/9/17)

Tadubhaya-Pratyaneek = defier of both (8/8/6, 7)

Taijas = fiery (8/6/29; 8/9/23)

Taijas Sharira = fiery body (8/9/95, 120, 127, 129)

Taijas-Sharira-Bandh (8/9/96)

Taijas-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to fiery body formation (8/9/24, 90, 92, 93, 94, 95, 113, 115, 117)

Taijas-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for fiery body formation (8/9/92)

Takkali = Premna Interfolia (8/3/2, 5)

Tamaal = an evergreen tree; Crateva nurvala Buch (8/3/2, 5)

Tamah-Prabha Prithvi (9/32/17-28)

Tamastama Prithvi (8/3/7)

Tapasvi = austerity observing ascetic (8/8/7)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Tapasvi-Pratyaneek = adversary to austerity observing ascetic (8/8/5)

Tat-Gati = extended or exploratory movement (8/7/25)

Tatharupa Shraman = an ascetic conforming to the description in Agams (8/6/1, 2, 3)

Tattvarth Sutra (8/9/11)

Tejaskayik (9/34/11, 14)

Tejaskayik Jiva (9/34/15)

Tejoleshya = fiery complexion of soul (8/2/119; 9/31/15)

Tetali = Titali; Euphorbia Dracunculoides (8/3/2, 5)

Thilli = a coach driven by two horses (8/9/19)

Tinduk = Tendu; Gaub Persimon; Diospyrosembryopteris (8/3/5)

Tiryagyonik-Praveshanak = entrance into animal genus (9/32/14, 47)

Tiryak-Lok = the middle world (9/31/30, 43)

Tiryanch Gati = animal genuses (8/2/37, 70)

Tiryanch-Bhavasth (8/2/70)

Tiryanch-Bhavasth Jivas = existing animals (8/2/63)

Tiryanch-Gatik Jivas (8/2/70)

Tiryanch-Panchendriya-Audarik-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to gross physical body formation of five-sensed animals (8/9/31, 45)

Tiryanch-Yonik = animal (8/8/11, 17)

Tiryanch-Yonik-Ayushya-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to animal life-span determining karmic body formation (8/9/104)

Tiryanch-Yonik-Ayushya-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for animal life-span determining karmic body formation (8/9/104)

Tiryanch-Yonik-Karma-Ashivish = poisonous by action among animals (8/2/7, 8)

Tiryanch-Yonik-Panchendriya-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to transmutable body formation of five-sensed animal (8/9/56, 73)

Tiryanch-Yonik-Praveshanak = entrance into animal genus (9/32/30)

Tivra = sharp (9/33/92)

Torana = ornamental entrance (8/9/17)

Tras Jiva = mobile being (9/34/5)

Traskaayik Jivas = mobile-bodied beings (8/2/46)

Trik = meeting point of three roads (8/9/17)

Trinasparsh-Parishaha = hay or straw related affliction (8/8/27, 34)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Trindriya Jivas = three-sensed living beings (8/2/30)

Trindriya-Audarik-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to three-sensed gross physical body formation (8/9/25)

Trindriya-Taijas-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to three-sensed fiery body formation (8/9/90)

Trindriya-Tiryanch-Yonik-Karma-Ashivish = poisonous by action among three-sensed animals (8/2/8)

Trishala Kshatriyani (9/33/15)

Tuchchha = poor (9/33/110)

(U)

Ubhayalok-Pratyaneek = he who indulges in despicable acts and spoils this and the next life (8/8/3, 7)

Uchcha-Gotra-Karman-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to high caste determining karmic body formation (8/9/109)

Uchcha-Gotra-Karman-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for high caste determining karmic body formation (8/9/109)

Uchchaya-Bandh = accumulative bondage (8/9/14, 16)

Udaya = a sect of followers of the Ajivak doctrine (8/5/9)

Udaya = fruition (8/9/27, 32, 50, 53-56, 85, 92, 98, 99, 100-111)

Udbhasit = enlighten (8/8/39)

Udumbar = Gular; Ficus glomerata (8/3/5; 8/5/10, 11)

Udvartan = die (9/32/13, 48)

Udvidh = a sect of followers of the Ajivak doctrine (8/5/9)

Udyotit = brighten (8/8/41)

Ugra (9/33/24, 72)

Ujjoventi = brighten (8/8/41)

Ujjval = excruciating (9/33/92)

Ulkamukh (9/3-30/3)

Upaasak = male devotee (9/31/2)

Upaasak Dashanga Sutra (8/5/11)

Upaasika = female devotee (9/31/2-9, 12, 13, 31, 32, 36, 44)

Upabhogaantaraya Karma = extended enjoyment hindering karma (8/2/105)

Upabhoga-Labdhi = ability of extended enjoyment (8/2/71, 76, 105)

Upadhyaya = teacher of the canon (8/8/7; 9/33/108, 111)

Upadhyaya-Pratyaneek = adversary of upadhyaya (8/8/2)

Upapaad = birth (9/32/48)

Upapaat = birth (9/32/13)

Upapaat-Gati = movement involved in rebirth; the movement

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of soul when the bondage of body is terminated (8/7/25)

Upashaant = tranquil (9/33/110)

Upashaant Moha = eleventh Gunasthaan (8/8/22)

Upasham = pacification (8/8/22)

Upasham Shreni = path of progressive pacification of karmas (8/8/22)

Upashantavedi = with pacified gender-karma (8/8/22)

Upashraya = ascetic-lodge (8/5/1, 3)

Upayoga = involvement (8/2/127, 129)

Upayoga-Dvar (8/2/127)

Upshaant-Kashaayi = with subdued passions (9/31/38)

Upshaant-Vedi = with subdued gender (9/31/37)

Urag Jaati-Ashivish = venomous breed of snakes (8/2/2)

Urdhva Lok = the upper world (8/8/46; 9/31/30, 43)

Ushna-Parishaha = affliction of heat (8/8/27, 31, 34)

Utkrisht = maximum; superlative (8/10/4, 9; 9/32/28, 33, 40, 45)

Utkrisht Chaaritra-Araadhana = Superlative practice of right conduct (8/10/8, 9, 12, 18)

Utkrisht Darshan-Araadhana = superlative practice of right perception/faith (8/10/7, 9, 11, 18)

Utkrisht Jnana-Araadhana = superlative practice of right knowledge (8/10/7, 10-12, 18)

Utpal = a type of lotus (9/33/78)

Utsarpini (8/2/130)

Utsarpini Kaal = progressive cycle of time (9/33/101)

Uttaradhyayan Sutra (8/6/4)

Uttarasanga = single piece scarf (9/33/28)

Uttariya = one-piece shawl (9/33/12)

Uttar-Prakriti = auxiliary species (9/31/26)

(V)

Vachan-Yogi = having vocal association or activity of speech (8/2/116; 9/31/17)

Vadh-Parishaha = punishment related affliction (8/8/27, 34)

Vaikriya (8/9/50)

Vaikriya Sharira = transmutable body (8/2/9, 10; 8/6/25; 8/9/40, 50, 52, 71, 120, 121, 123-125, 127, 129)

Vaikriyakaran Labdhi = attaining of special power of body transmutation (8/9/82)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Vaikriya-Sharira-Bandh (8/9/82)

Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to transmutable body formation (8/9/24, 51, 53, 62, 66, 72, 82)

Vaikriya-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for transmutable body formation (8/9/53)

Vaimanik Dev Or Vaimanik = a class of divine beings; celestial-vehicular gods (8/2/11, 34, 54; 8/5/12; 8/6/17, 19, 21, 24, 27, 29; 8/10/32, 35, 36, 39, 40, 60; 9/32/6, 13, 43-45, 48-52, 57)

Vaimanik Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among celestial vehicular divine beings (8/2/11, 15)

Vaimanik Dev-Praveshanak = entrance into the realm of celestial-vehicular gods (9/32/42, 46)

Vaishaanik (9/3-30/3)

Vaishali (9/32/2; 9/33/3)

Vajiya (9/32/2)

Vajra-Rishabh-Narach Samhanan = a specific type of constitution of human body where the joints are perfect and strongest (9/31/19)

Vana Karma = trade connected with forest (8/5/11)

Vanaspati-Kaal = infinite period (8/9/75, 76, 79, 80)

Vanaspatikaaya = plant-bodied (8/2/46)

Vanaspatikaayik Or Vanaspatikaayik Jivas = plant-bodied beings (8/2/29; 9/32/5, 9; 9/34/11, 14, 15, 22)

Vanaspatikaayik-Ekendriya-Audarik-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to plant-bodied one-sensed gross physical body formation (8/9/30)

Vanavyantar Or Vanavyantar Dev = interstitial god (8/2/11, 33; 8/5/12; 8/9/59; 9/32/11, 43-45, 48, 57)

Vanavyantar Dev-Karma-Ashivish = poisonous by action among interstitial divine beings (8/2/14)

Vanavyantar Dev-Praveshanak = entrance into the realm of interstitial gods (9/32/42, 46)

Vanijyagram (9/32/1)

Vapi = rectangular reservoir (8/9/17)

Varatra = leather (8/9/13)

Vardalika-Bhakt = food prepared for difficult times (9/33/43)

Vardhamanak = a specific design of vessel (9/33/72)

Varga = tie-ropes (8/6/13)

Varna-Parinaam = transformation as colour (8/10/19, 20)

Varsha = monsoon (9/33/22)

Varshadhar = mountain marking the border of an area (8/2/25; 9/3-30/2)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Varsh-Prithakatva = two to nine years (8/9/79-81)

Varunavar Dveep (9/2/5)

Varunod (9/2/5)

Vasant = spring season (9/33/22)

Vat = Banyan tree; Ficus bengalensis (8/3/5)

Vayu = air (8/2/18)

Vayukaayik Or Vayukaayik Jivas (8/9/44, 69; 9/34/11, 14)

Vayukaayik-Ekendriya-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Bandh = bondage related to air-bodied one-sensed transmutable physical body formation (8/9/52, 54, 63, 67, 75)

Vayukaayik-Ekendriya-Vaikriya-Sharira-Prayoga-Naam-Karma = karma responsible for transmutable body formation of one-sensed air-bodied being (8/9/54)

Veda = gender-karma (8/8/22)

Veda Rahit = non-genderic beings (8/8/22)

Veda-Dvar (8/2/127)

Vedaniya = pain and pleasure causing (8/8/25)

Vedaniya Karma = karma that produces sensation of pleasure and pain (8/8/27;8/10/41, 43, 45, 47-50, 58)

Vedarahit = non-genderic (8/8/12, 18, 19)

Vedas (8/2/24; 9/33/2)

Veena = a stringed musical instrument (9/33/75)

Veshtim = made by wrapping (9/33/57)

Vibhanga-Jnana = pervert knowledge (8/2/21, 25, 35, 70, 114, 135, 139, 143, 145, 146; 9/31/14, 25)

Vibhang-Jnana Labdhi = attainment of ability of pervert knowledge (8/2/73, 87, 105)

Vibhang-Jnana Saakaar Upayoga = cognitive involvement related to vibhang-jnana (8/2/111)

Vibhanga-Jnani = one having pervert knowledge (8/2/137, 139; 9/31/14, 25)

Vibhang-Jnani = having pervert knowledge (8/2/26)

Vichaar Bhumi = place of study (8/6/8)

Vidyuddant (9/3-30/3)

Vidyunmukh (9/3-30/3)

Vigraha Gati = state of movement (8/2/70); pre-birth movement (8/2/127); oblique movement (8/9/128)

Vihaar Bhumi = place of excretion (8/6/8)

Vihaayo-Gati = aerial movement or movement in space (8/7/25)

Vijaya-Vaijayanti = flag of victory (9/33/72)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Vikalendriya or Vikalendriya Jiva = two to four sensed being (8/2/70, 105)

Vikatapaati = a mountain (9/31/30)

Vimatra = unequal intensity (8/9/9)

Vipaak = consequence of karmas (9/32/57)

Vipul = intense (9/33/92)

Vipul-Mati = elaborate (8/2/131)

Viraadhak = faltering in conduct (8/6/7-11)

Viraadhana = faltering practice (8/10/2)

Viraman-Vrats = five minor vows (8/5/2, 4)

Viras = foul (9/33/92, 110)

Virat = observe detachment (8/7/9)

Virya-Labdhi = ability of potency (8/2/71, 77, 97, 105)

Viryantaraya Karma = potency hindering karma (8/2/105; 8/9/50; 9/31/4)

Vish Vanijya = trading of drugs and toxins (8/5/11)

Vishaya = scope (8/2/128-135)

Visheshavashyak Bhashya (9/33/97)

Vishudhyamaan = in state of ascent (8/2/105)

Visrasa Bandh = bondage acquired naturally or spontaneously (8/9/1, 2, 11)

Vitaraag = without attachment (8/8/33)

Vivikta = solitary (9/33/110, 111)

Vrishabh (8/2/25)

Vrishchik Jaati-Ashivish = venomous breed of scorpions (8/2/2)

Vritta Vaitadhya = a class of mountains (9/31/30)

Vyaghramukh (9/3-30/3)

Vyanjanavagraha = acquisition of attributes (8/2/23)

Vyavahaar = ascetic-behaviour (8/8/8)

(Y)

Yaachana-Parishaha = affliction related to alms seeking (8/8/28, 34)

Yaan = vehicle (8/9/19)

Yajurveda (9/33/2)

Yaksha (9/33/24)

Yantrapidan Karma = mechanical crushing industry including oil press (8/5/11)

Yatanavaraniya Karma = endeavour obscuring karma; here it is potency hindering karma related to conduct (9/31/6, 13)

Yathakhyat Chaaritra = conduct conforming to perfect purity (8/10/18); the ultimate discipline of detachment related to beings at eleventh and higher Gunasthaans (8/8/22)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Yathakhyata-Chaaritra-Labdhi = attainment of ability of the ultimate discipline of detachment related to beings at eleventh and higher Gunasthaans (8/2/75, 105)

Yathakhyat-Chaaritra-Labdhi Jivas = living beings having attained ability of the ultimate discipline of detachment related to beings at eleventh and higher Gunasthaans (8/2/75, 105)

Yavatkathit = lifelong (8/2/105)

Yoga = association; activity; means; methods (8/5/5, 6; 8/7/4, 11, 16-21; 8/8/22; 8/9/27, 50; 9/31/36); serving the ailing (8/7/19, 24)

Yoga-Dvar (8/2/127)

Yogi (8/6/3)

Yugalia = twins – one male and one female (9/3-30/3)

Yugyavahan = a palanquin with two cubit long seat (8/9/19)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-२

आगमों का अनध्यायकाल

(स्व. आचार्यप्रवर श्री आत्माराम जी महाराज द्वारा सम्पादित नन्दी सूत्र से उद्धृत)

स्वाध्याय के लिए आगमों में जो समय बताया गया है, उसी समय शास्त्रों का स्वाध्याय करना चाहिए। अनध्यायकाल में स्वाध्याय वर्जित है।

मनुस्मृति आदि स्मृतियों में भी अनध्यायकाल का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। वैदिक लोग भी वेद के अनध्यायों का उल्लेख करते हैं। इसी प्रकार अन्य आर्ष ग्रन्थों का भी अनध्याय माना जाता है। जैनागम भी सर्वज्ञोक्त, देवाधिष्ठित तथा स्वर-विद्या संयुक्त होने के कारण, इनका भी शास्त्रों में अनध्यायकाल वर्णित किया गया है।

स्थानांग सूत्र के अनुसार, दस आकाश से सम्बन्धित, दस औदारिक शरीर से सम्बन्धित, चार महाप्रतिपदा, चार महाप्रतिपदा की पूर्णिमा और चार सन्ध्या। इस प्रकार बत्तीस अनध्यायकाल माने गए हैं, जिनका संक्षेप में निम्न प्रकार से वर्णन है

आकाश सम्बन्धी दस अनध्याय

१. उल्कापात-तारापतन-यदि महत् तारापतन हुआ है तो एक प्रहर पर्यन्त शास्त्र-स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

२. दिग्दाह-जब तक दिशा रक्तवर्ण की हो अर्थात् ऐसा मालूम पड़े कि दिशा में आग-सी लगी है, तब भी स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

३. गर्जित-बादलों के गर्जन पर एक प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय न करे।

४. विद्युत्-बिजली चमकने पर एक प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय न करे।

किन्तु गर्जन और विद्युत् का अस्वाध्याय चातुर्मास में नहीं मानना चाहिए। क्योंकि वह गर्जन और विद्युत् प्रायः ऋतु-स्वभाव से ही होता है। अतः आर्द्रा से स्वाति नक्षत्र पर्यन्त अनध्याय नहीं माना जाता।

५. निर्घात-बिना बादल के आकाश में व्यन्तरादिकृत घोर गर्जना होने पर दो प्रहर तक अस्वाध्यायकाल है।

६. यूपक-शुक्ल पक्ष में प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया को सन्ध्या की प्रभा और चन्द्रप्रभा के मिलने को यूपक कहा जाता है। इन दिनों प्रहर रात्रि पर्यन्त स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

७. यक्षादीप्त-कभी किसी दिशा में बिजली चमकने जैसा, थोड़े-थोड़े समय पीछे जो प्रकाश होता है वह यक्षादीप्त कहलाता है। अतः आकाश में जब तक यक्षाकार दीखता रहे तब तक स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

८. धूमिका-कृष्ण-कार्तिक से लेकर माघ मास तक का समय मेघों का गर्भमास होता है। इसमें धूम्र वर्ण की सूक्ष्म जलरूप धुंध पड़ती है। वह धूमिका-कृष्ण कहलाती है। जब तक वह धुंध पड़ती रहे, तब तक स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

९. मिहिकाश्वेत-शीतकाल में श्वेत वर्ण की सूक्ष्म जलरूप धुंध मिहिका कहलाती है। जब तक यह गिरती रहे, तब तक अस्वाध्यायकाल है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. रज–उद्‌घात–वायु के कारण आकाश में चारों ओर धूल छा जाती है। जब तक यह धूल फैली रहती है, स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

औदारिक शरीर सम्बन्धी दस अनध्याय

११–१३. **हड्डी, माँस और रुधिर**–पंचेन्द्रिय, तिर्यंच की हड्डी, माँस और रुधिर यदि सामने दिखाई दें, तो जब तक वहाँ से यह वस्तुएँ उठाई न जाएँ, तब तक अस्वाध्याय है। वृत्तिकार आसपास के ६० हाथ तक इन वस्तुओं के होने पर अस्वाध्याय मानते हैं।

इसी प्रकार मनुष्य सम्बन्धी अस्थि, माँस और रुधिर का भी अनध्याय माना जाता है। विशेषता इतनी है कि इनका अस्वाध्याय सौ हाथ तक तथा एक दिन–रात का होता है। स्त्री के मासिक धर्म का अस्वाध्याय तीन दिन तक तथा बालक एवं बालिका के जन्म का अस्वाध्याय क्रमशः सात एवं आठ दिन पर्यन्त का माना जाता है।

१४. **अशुचि**–मल–मूत्र सामने दिखाई देने तक अस्वाध्याय है।

१५. **श्मशान**–श्मशान भूमि के चारों ओर सौ–सौ हाथ पर्यन्त अस्वाध्याय माना जाता है।

१६. **चन्द्रग्रहण**–चन्द्रग्रहण होने पर जघन्य आठ, मध्यम बारह और उत्कृष्ट सोलह प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

१७. **सूर्यग्रहण**–सूर्यग्रहण होने पर भी क्रमशः आठ, बारह और सोलह प्रहर पर्यन्त अस्वाध्यायकाल माना गया है।

१८. **पतन**–किसी बड़े मान्य राजा अथवा राष्ट्र–पुरुष का निधन होने पर जब तक उसका दाह–संस्कार न हो, तब तक स्वाध्याय नहीं करना चाहिए अथवा जब तक दूसरा अधिकारी सत्तारूढ़ न हो, तब तक शनैः–शनैः स्वाध्याय करना चाहिए।

१९. **राजव्युद्‌ग्रह**–समीपस्थ राजाओं में परस्पर युद्ध होने पर जब तक शान्ति न हो जाए, तब तक और उसके पश्चात् भी एक दिन–रात्रि स्वाध्याय नहीं करे।

२०. **औदारिक शरीर**–उपाश्रय के भीतर पंचेन्द्रिय जीव का वध हो जाने पर जब तक कलेवर पड़ा रहे, तब तक तथा १०० हाथ तक यदि निर्जीव कलेवर पड़ा हो तो स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

२१–२८. **चार महोत्सव और चार महाप्रतिपदा**–आषाढ़–पूर्णिमा, आश्विन–पूर्णिमा, कार्तिक–पूर्णिमा और चैत्र पूर्णिमा ये चार महोत्सव हैं। इन पूर्णिमाओं के पश्चात् आने वाली प्रतिपदा को महाप्रतिपदा कहते हैं। इनमें स्वाध्याय करने का निषेध है।

२९–३२. **प्रातः, सायं, मध्याह्न और अर्ध–रात्रि**–प्रातः सूर्य उगने से एक घड़ी पहले तथा एक घड़ी पीछे, सूर्यास्त होने से एक घड़ी पहले तथा एक घड़ी पीछे, मध्याह्न अर्थात् दोपहर में एक घड़ी पहले और एक घड़ी पीछे एवं अर्ध–रात्रि में भी एक घड़ी पहले तथा एक घड़ी पीछे स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

इस प्रकार अस्वाध्यायकाल टालकर दिन–रात्रि में चार काल का स्वाध्याय करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Appendix-2

INAPPROPRIATE TIME FOR STUDY OF AGAMS

(Quoted from Nandi Sutra edited by Late Acharya Pravar Shri Atmaram ji M.)

Scriptures should be studied only at the appropriate time as prescribed in the *Agams*. Study of scriptures at a 'time inappropriate for studies' (*anadhyaya kaal*) is prohibited.

Detailed description of *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies) is also included in *Smritis* (the corpus of *Sanatan Dharmashastra*) like *Manusmriti*. Vedic people also mention about the *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies) of the *Vedas*. This rule is applicable to other Aryan holy books. As Jain *Agams* are sermons of the Omniscient, ensconced by the *devas*, and phonetically composed, discussion about the *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies) is also included in the scriptures. For example :

According to *Sthananga Sutra* there are thirty two slots of time defined as *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies)—ten related to sky, ten related to the gross physical body (*audarik sharira*), four relating to *mahapratipada* (the date following a specific full moon night), four relating to the date of the said full moon night, and four relating to *sandhya* (the four junctions of parts of the day, viz. morning, noon, evening and midnight). They are briefly described as follows :

RELATING TO SKY

1. Ulkapat or Tarapatan—If a falling star or a comet is visible in the sky, scriptures should not be studied for three hours following the incident.

2. Digdaha—As long as the sky looks crimson in any direction, as if there was a fire, then study of scriptures should not be done.

3. Garjit—For three hours following thunder of clouds such studies are prohibited.

4. Vidyut—For three hours following lightening such studies are prohibited.

However, the prohibition related to thunder and lightening is not applicable during the four months of monsoon. This is because frequent thunder and lightening is an essential attribute of that season. Thus this prohibition is relaxed starting from *Ardra* till *Svati Nakshatra* (lunar mansion or 27/28 divisions of the ecliptic on the path of the moon).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

5. Nirghat—For six hours following thunder without clouds (demonic or otherwise) such studies are prohibited.

6. Yupak—The conjunction of solar and lunar glows at twilight hour on first, second and third days of the bright half of a month (*Shukla Paksha*) is called *Yupak*. During these dates such studies are prohibited during the first quarter of the night.

7. Yakshadeepti—Some times there is a lightening like intermittent glow visible in the sky. This is called *Yakshadeepti*. As long as such glow is visible in the sky such studies are prohibited.

8. Dhoomika-krishna—The months from *Kartik* to *Maagh* are months of cloud formation. During this period smoky fog of suspended water particles is a frequent phenomenon. This is called *Dhoomika-krishna*. As long as this fog exists such studies are prohibited.

9. Mihikashvet—The white mist during winter season is called *Mihikashvet*. As long as this exists such studies are prohibited.

10. Raj-udghat—High speed wind causes dust storm. This is called *Raj-udghat*. As long as the sky is filled with dust such studies are prohibited.

RELATING TO GROSS PHYSICAL BODY

11-13. Bone, flesh and blood—As long as bone, flesh and blood of five sensed animals are visible and not removed from sight such studies are prohibited. According to the commentator (*Vritti*) if such things are lying up to a distance of 60 yards the prohibition is effective.

This rule is applicable to human bones, flesh and blood with the amendment that the distance is 100 cubits and the effective period is one day and night. The period prohibited for studies is three days in case of a women in menstruation, seven days in case of male-child birth and eight days in case of a female-child birth.

14. Ashuchi—As long as excreta is visible and not removed from sight such studies are prohibited.

15. Smashan—Up to a distance of hundred yards in any direction from a cremation ground such studies are prohibited.

16. Chandra grahan—At the time of lunar eclipse such studies are prohibited for eight, twelve or sixteen hours.

17. Surya grahan—At the time of solar eclipse such studies are prohibited for eight, twelve or sixteen hours.

18. Patan—On the death of a king or some other nationally eminent person such studies are prohibited as long as he is not cremated. Even after that, the period of study is kept limited as long as his successor does not take over.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

19. Raaj-vyudgraha—During a war between neighbouring states such studies are prohibited as long as peace does not prevail. Studies should be resumed only 24 hours after peace is established.

20. Audarik Sharira—In case a five sensed animal dies or is killed in an *upashraya* (place of stay for ascetics) such studies are prohibited as long as the dead body is not removed. This prohibition also applies if a dead body is lying within 100 yards of the place of stay.

21-28. Four Mahotsavas and four Mahapratipada—*Ashadh, Ashvin, Kartik* and *Chaitra purnimas* (the full moon days of these four months) are called great festival days. The days after these festival days are called *Mahapratipada*. On all these days such studies are prohibited.

29-32. Sandhya—During the twenty four minutes preceding and following the four junctions of parts of the day, viz. morning, noon, evening and midnight such studies are prohibited.

Studies of scriptures or other holy books should be done avoiding all these *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विश्व में पहली बार जैन साहित्य के इतिहास में एक नये ज्ञान युग का शुभारम्भ

(जैन आगम, हिन्दी एवं अंग्रेजी भावार्थ और विवेचन के साथ। शास्त्र के भावों को उद्‌घाटित करने वाले बहुरंगे चित्रों सहित)

१. **सचित्र उत्तराध्ययन सूत्र** — मूल्य ५००/–

भगवान महावीर की अन्तिम वाणी। आदर्श जीवन विज्ञान तथा तत्त्वज्ञान से युक्त मोक्षमार्ग के सम्पूर्ण अंगों का सारपूर्ण वर्णन। एक ही सूत्र में सम्पूर्ण जैन आचार, दर्शन और सिद्धान्तों का समग्र सद्‌बोध।

२. **सचित्र दशवैकालिक सूत्र** — मूल्य ५००/–

जैन श्रमण की अहिंसा व यतनायुक्त आचार संहिता। जीवन में पद–पद पर काम आने वाले विवेकयुक्त, संयत व्यवहार, भोजन, भाषा, विनय आदि की मार्गदर्शक सूचनाएँ। आचार विधि को रंगीन चित्रों के माध्यम से आकर्षक और सुबोध बनाया गया है।

३. **सचित्र नन्दी सूत्र** — मूल्य ६००/–

मतिज्ञान–श्रुतज्ञान आदि पाँचों ज्ञानों का विविध उदाहरणों सहित विस्तृत वर्णन।

४. **सचित्र अनुयोगद्वार सूत्र (भाग १, २)** — मूल्य १,२००/–

यह शास्त्र जैनदर्शन और तत्वज्ञान को समझने की कुंजी है। नय, निक्षेप, प्रमाण, जैसे दार्शनिक विषयों के साथ ही गणित, ज्योतिष, संगीतशास्त्र, काव्यशास्त्र, प्राचीन लिपि, नाप–तौल आदि सैकड़ों विषयों का वर्णन है। यह सूत्र गम्भीर भी है और बड़ा भी है। अतः दो भागों में प्रकाशित किया है।

५. **सचित्र आचारांग सूत्र (भाग १, २)** — मूल्य १,०००/–

यह ग्यारह अंगों में प्रथम अंग है। भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित अहिंसा, सम्यक्त्व, संयम, तितिक्षा आदि आधारभूत तत्त्वों का बहुत ही सुन्दर वर्णन है। भगवान महावीर का जीवन–चरित्र, उनकी छद्मस्थ चर्या का आँखों देखा वर्णन तथा जैन श्रमण का आचार–विचार दूसरे भाग में है। दोनों भाग विविध ऐतिहासिक व सांस्कृतिक चित्रों से युक्त।

६. **सचित्र स्थानांग सूत्र (भाग १, २)** — मूल्य १,२००/–

यह चौथा अंग सूत्र है। अपनी खास संख्या प्रधान शैली में संकलित यह शास्त्र ज्ञान, विज्ञान, ज्योतिष, भूगोल, गणित, इतिहास, नीति, आचार, मनोविज्ञान, पुरुष–परीक्षा आदि सैकड़ों प्रकार के विषयों का ज्ञान देने वाला बहुत ही विशालकाय शास्त्र है। भावार्थ और विवेचन के कारण प्रत्येक पाठक के लिए समझने में सरल और ज्ञानवर्धक है।

७. **सचित्र ज्ञाताधर्मकथा सूत्र (भाग १, २)** — मूल्य १,०००/–

भगवान महावीर द्वारा प्रवचनों में प्रयुक्त धर्मकथाएँ, उद्‌बोधक, रूपक, दृष्टान्त आदि जिनके माध्यम से तत्त्वज्ञान सहज ही ग्राह्य हो गया है। विविध रोचक रंगीन चित्रों से युक्त। दो भागों में सम्पूर्ण आगम।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८. सचित्र उपासकदशा एवं अनुत्तरौपपातिकदशा सूत्र — मूल्य ६००/–

सप्तम अंग उपासकदशा में भगवान महावीर के प्रमुख १० श्रावकों का जीवन-चरित्र तथा उनके श्रावक धर्म का रोचक वर्णन है। नवम अंग अनुत्तरौपपातिकदशा में उत्कृष्ट तप:साधना करने वाले ३३ श्रमणों की तप ध्यान-साधना का रोमांचक वर्णन है। भावों को स्पष्ट करने वाले कलात्मक रंगीन चित्रों सहित।

९. सचित्र निरयावलिका एवं विपाक सूत्र — मूल्य ६००/–

निरयावलिका में पाँच उपांग हैं। भगवान महावीर के परम भक्त राजा कूणिक के जन्म आदि का वर्णन तथा वैशाली गणतंत्राध्यक्ष चेटक के साथ हुए महाशिलाकंटक युद्ध का रोमांचक चित्रण तथा भगवान अरिष्टनेमि एवं भगवान पार्श्वनाथ के शासन में दीक्षित अनेक श्रमण-श्रमणियों का चरित्र इनमें है।

विपाक सूत्र में अशुभ कर्मों के अत्यन्त कटु फल का वर्णन है, जिसे सुनते ही हृदय द्रवित हो जाता है, तथा सुखविपाक में दान, तप आदि शुभ कर्मों के महान् सुखदायी पुण्य फलों का मुँह बोलता वर्णन है। भावपूर्ण रोचक कलापूर्ण चित्रों के साथ।

१०. सचित्र अन्तकृद्दशा सूत्र — मूल्य ५००/–

आठवें अंग अन्तकृद्दशा सूत्र में मोक्षगामी ९० महान् आत्म-साधक श्रमण-श्रमणियों के तपोमय साधना जीवन का प्रेरक वर्णन है। यह सूत्र पर्युषण में विशेष रूप में पठनीय है। विविध चित्र व तपों के चित्रों से समझने में सरल सुबोध है।

११. सचित्र औपपातिक सूत्र — मूल्य ६००/–

यह प्रथम उपांग है। इसमें राजा कूणिक का भगवान महावीर की वन्दनार्थ प्रस्थान, दर्शन-यात्रा तथा भगवान की धर्मदेशना, धर्म प्ररूपणा आदि विषयों का बहुत ही विस्तृत लालित्ययुक्त वर्णन है। इसी में अम्बड़ परिव्राजक आदि अनेक परिव्राजकों की तप:साधना का वर्णन भी है।

१२. सचित्र रायपसेणिय सूत्र — मूल्य ६००/–

यह द्वितीय उपांग है। धर्मद्वेषी प्रदेशी राजा को धर्मबोध देकर धार्मिक बनाने वाले ज्ञानी आचार्य केशीकुमार श्रमण के साथ आत्मा, परलोक, पुनर्जन्म आदि विषयों पर हुई अध्यात्म-चर्चा प्रत्येक जिज्ञासु के लिए पठनीय ज्ञानवर्द्धक है। आत्मा और शरीर की भिन्नता समझाने वाले उदाहरणों के चित्र भी बोधप्रद हैं।

१३. सचित्र कल्प सूत्र — मूल्य ६००/–

कल्प सूत्र का पठन, पर्युषण में विशेष रूप में होता है। इसमें २४ तीर्थंकरों का जीवन-चरित्र है। साथ ही भगवान महावीर का विस्तृत जीवन-चरित्र, श्रमण समाचारी तथा स्थविरावली का वर्णन है। २४ तीर्थंकरों के जीवन से सम्बन्धित सुरम्य चित्रों के कारण सभी के लिए आकर्षक उपयोगी है।

१४. सचित्र छेद सूत्र (दशा-कल्प-व्यवहार) — मूल्य ६००/–

आचार-शुद्धि के लिए जिन आगमों में विशेष विधान है, उन्हें 'छेद सूत्र' कहा गया है। छेद सूत्रों में आचार-शुद्धि के सूक्ष्म से सूक्ष्म नियमों का वर्णन है। चार छेद सूत्रों में दशाश्रुतस्कन्ध, बृहत्कल्प तथा व्यवहार-ये तीन छेद सूत्र सभी श्रमण-श्रमणियों के लिए विशेष पठनीय हैं। प्रस्तुत भाग में तीनों छेद सूत्रों का भाष्य आदि के आधार पर विवेचन है। यह अंग्रेजी अनुवाद तथा १५ रंगीन चित्रों सहित है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. सचित्र भगवती सूत्र (भाग १, २, ३)

मूल्य १८००/–

पंचम अंग व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र 'भगवती' के नाम से अधिक प्रसिद्ध है। इसमें जीव, द्रव्य, पुद्गल, परमाणु, लोक आदि चारों अनुयोगों से सम्बन्धित हजारों प्रश्नोत्तर हैं। यह विशाल आगम जैन तत्त्व विद्या का महासागर है। संक्षिप्त और सुबोध अनुवाद व विवेचन के साथ यह आगम लगभग ६ भाग में पूर्ण होने की सम्भावना है। प्रथम भाग १ से ४ शतक तक तथा १५ रंगीन चित्रों सहित प्रकाशित है। द्वितीय भाग में ५ से ७ शतक सम्पूर्ण तथा ८वें शतक का प्रथम उद्देशक लिया गया है। इस भाग में १५ रंगीन चित्र लिये गये हैं। तृतीय भाग में आठवें शतक के द्वितीय उद्देशक से नवें शतक तक सम्पूर्ण लिया गया है। साथ ही यह विषय को स्पष्ट करने वाले २२ रंगीन भाव पूर्ण चित्रों से युक्त है।

१६. सचित्र जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र

मूल्य ६००/–

यह छठा उपांग है। इस सूत्र का मुख्य विषय जम्बूद्वीप का विस्तृत वर्णन हैं। जम्बूद्वीप में आये मानव क्षेत्र, पर्वत, नदियाँ, महाविदेह क्षेत्र, मेरु पर्वत तथा मेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करते सूर्य–चन्द्र आदि ग्रह नक्षत्र, अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी आदि के विस्तृत वर्णन के साथ ही चौदह कुलकर, प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव का चरित्र, सम्राट् भरत चक्रवर्ती की षट्खण्ड विजय आदि अनेक विषयों का वर्णन भी इस सूत्र में आता है। इसमें दिये रंगीन चित्र जम्बूद्वीप की भौगोलिक स्थिति, सूर्य–चन्द्र आदि ग्रहों की गति समझने में काफी उपयोगी सिद्ध होंगे। यह सूत्र जैन, भूगोल, खगोल और इतिहास का ज्ञानकोष है।

१७. सचित्र प्रश्नव्याकरण सूत्र

मूल्य ६००/–

प्रश्नव्याकरण अर्थात् प्रश्नों का व्याकरण, समाधान, उत्तर। मानव मन में सदा से यह प्रश्न उठता रहा है कि राग–द्वेष जनित वे कौन-से भयंकर विकार हैं जो आत्मा को मलिन करके दुर्गति में ले जाते हैं और इनसे कैसे बचा जाए? इन प्रश्नों के समाधान स्वरूप प्रश्नव्याकरण सूत्र में इनका विस्तृत वर्णन किया गया है। इन्हें आगम की भाषा में आश्रव कहते हैं। ये आश्रव हैं–हिंसा, असत्य, चौर्य, अब्रह्मचर्य और परिग्रह। इन आश्रवों का स्वरूप और उनसे होने वाले दुःखों को इस सूत्र में भलीभाँति समझाया गया है।

साथ ही इन पाँच आश्रवरूपी शत्रुओं से बचने हेतु अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह--यह पाँच संवर बताये गये हैं। सवंर से भावित आत्मा, राग–द्वेष जनित विकारों से दूर रहती है। आश्रव-संवर वर्णन में ही समग्र जिन प्रवचन का सार आ जाता है।

- इस प्रकार २३ जिल्दों में २४ आगम तथा कल्प सूत्र प्रकाशित हो चुके हैं। प्राकृत अथवा हिन्दी का साधारण ज्ञान रखने वाले व्यक्ति भी अंग्रेजी माध्यम से जैनशास्त्रों का भाव, उस समय की आचार–विचार प्रणाली आदि को अच्छी प्रकार से समझ सकते हैं। अंग्रेजी शब्द कोष भी दिया गया है। पुस्तकालयों, ज्ञान–भण्डारों तथा संत–सतियों, स्वाध्यायियों के लिए विशेष रूप से संग्रह करने योग्य है।
- इस आगममाला के प्रकाशन में परम श्रद्धेय उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. की अत्यन्त बलवती प्रेरणा रही है। उनके शिष्यरत्न जैन शासन दिवाकर आगमज्ञाता उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म. द्वारा सम्पादित है, इनके सह–सम्पादक हैं प्रसिद्ध विद्वान् श्रीचन्द सुराना। अंग्रेजी अनुवादकर्त्ता हैं श्री सुरेन्द्र बोथरा तथा सुश्रावक श्री राजकुमार जी जैन।

●●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

IN THE HISTORY OF JAIN LITERATURE BEGINNING OF A NEW ERA OF KNOWLEDGE FOR THE FIRST TIME IN THE WORLD

(Jain Agams published with free flowing translation in Hind and English. Also included are multicoloured illustrations vividly exemplifying various themes contained in scriptures)

1. **Illustrated Uttaradhyayan Sutra** — **Price Rs. 500/-**

   The last sermon of Bhagavan Mahavir. Essence of the ideal way of life and path of liberation based on philosophical knowledge contained in all Angas. The pious discourse encapsulating complete Jain conduct, philosophy and principles.

2. **Illustrated Dashavaikalik Sutra** — **Price Rs. 500/-**

   The simple rule book of ahimsa and caution based Shraman conduct rendered vividly with the help of multicoloured illustrations. Useful at every step in life, even of common man, as a guide book of good behaviour, balanced conduct and norms of etiquette, food and speech.

3. **Illustrated Nandi Sutra** — **Price Rs. 600/-**

   All enveloping discussion of the five facets of knowledge including Mati-jnana and Shrut-jnana.

4. **Illustrated Anuyogadvar Sutra (Parts 1 and 2)** — **Price Rs. 1,200/-**

   This scripture is the key to understanding Jain philosophy and metaphysics. Besides philosophical topics like Naya, Nikshep and Praman it contains discussion about hundreds of other subjects including mathematics, astrology, music, poetics, ancient scripts and weights and measures. The complexity and volume of this could be covered only in two volumes.

5. **Illustrated Acharanga Sutra (Parts 1 and 2)** — **Price Rs. 1,000/-**

   This is the first among the eleven Angas. It contains lucid description of ahimsa, samyaktva, samyam, titiksha and other fundamentals propagated by Bhagavan Mahavir. Eye-witness-like description of the life of Bhagavan Mahavir and his pre-omniscience praxis as well as details about ascetic conduct and praxis form the second part. Both parts contain multi-coloured illustrations on a variety of historical and cultural themes.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

6. **Illustrated Sthananga Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,200/-**

This is the fourth Anga Sutra. Compiled in its unique numerical placement style, this scripture is a voluminous work containing information about scriptural knowledge, science, astrology, geography, mathematics, history, ethics, conduct, psychology, judging man and hundreds of other topics. The free flowing translation and elaboration make the contents easy to understand and edifying even for common readers.

7. **Illustrated Jnata Dharma Katha Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,000/-**

Famous inspiring and enlightening religious tales, allegories and incidents told by Bhagavan Mahavir presented with attractive colourful illustrations. This works makes the abstract philosophical principles easy to understand. This is the sixth Anga complete in two volumes.

8. **Illustrated Upasak Dasha and Anuttaraupapatik Dasha Sutra** **Price Rs. 500/-**

This book contains the seventh and the ninth Angas. The seventh Anga, Upasak Dasha, contains the stories of life of ten prominent Shravak disciples of Bhagavan Mahavir with a special emphasis on their religious conduct. The ninth Anga Anuttaraupapatik Dasha contains thrilling description of the lofty austerities and meditation done by thirty three specific ascetics. With colourful illustrations.

9. **Illustrated Niryavalika and Vipaak Sutra** **Price Rs. 600/-**

Niryavalika has five Upangas that contain the story of the birth of king Kunik, a devout disciple of Bhagavan Mahavir. This also contains the thrilling and illustrated description of the famous Mahashilakantak war between Kunik and Chetak, the president of the republic of Vaishali. Besides these it also has life-stories of many Shramans and Shramanis of the lineage of Bhagavan Parshva Naath.

Vipaak Sutra contains the description of the extremely bitter fruits of ignoble deeds. This touching description inspires one towards noble deeds like charity and austerities the fruits of which have been lucidly described in its second section titled Sukha-vipaak. The colourful artistic illustrations add to the attraction.

10. **Illustrated Antakriddasha Sutra** **Price Rs. 500/-**

This eighth Anga contains the inspiring stories of the spiritual pursuits of ninety great men destined to be liberated. This Sutra is specially read during the Paryushan period. The illustrations related to austerities are specially informative.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

11. Illustrated Aupapatik Sutra **Price Rs. 600/-**

This the first Upanga. This contains lucid and poetic description of numerous topics including King Kunik's preparations to go to pay homage to Bhagavan Mahavir, Bhagavan's sermon and establishment of the religious order. This also contains the description of austerities observed by Ambad and many other Parivrajaks.

12. Illustrated Raipaseniya Sutra **Price Rs. 600/-**

This is the third Upanga. It provides an interesting and edifying reading of the discussions between Acharya Keshi Kumar Shraman and the anti-religious king Pradeshi on topics like soul, next life, and rebirth. This dialogue turned him into a great religionist. The illustrations of the examples showing the difference between soul and body are also instructive.

13. Illustrated Kalpa Sutra **Price Rs. 600/-**

Kalpa Sutra is widely read and recited during the Paryushan festival. It contains stories of life of 24 Tirthankars with more details about Bhagavan Mahavir's life. It also contains the disciple lineage of Bhagavan Mahavir and detailed ascetic praxis. The illustrations connected with the 24 Tirthankars add to its attraction as well as utility.

14. Illustrated Chheda Sutra **Price Rs. 600/-**

The Agams that contain special procedures for purity of conduct are called Chheda Sutra. These Sutras enumerate subtle rules for purity of conduct. Of the four Chheda Sutras three should be specially read by all ascetics – Dashashrut-skandh, Brihatkalpa and Vyavahar. This edition contains these three Chhed Sutras with elaboration based on commentaries (Bhashya) and other works. It also includes English translation and 15 multicolour illustrations.

15. Illustrated Bhagavati Sutra (Parts 1, 2 & 3) **Price Rs. 1800/-**

Vyakhyaprajnapti, the fifth Anga, is popularly known as Bhagavati. It contains thousands of questions and answers on various topics from four Anuyogas, such as soul, entities, matter, ultimate particle and universe. This voluminous Agam is an ocean of Jain metaphysics. With simple translation and brief elaboration it is expected to be completed in six volumes. The first volume contains one to four Shataks and 15 illustrations. The second volume contains five to seven Shataks complete

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

and first Uddeshak of the eighth Shatak. As usual 15 colourful illustrations have also been included. The third volume contains second Uddeshak of the eighth Shatak and complete ninth Shatak. 22 colourful illustrations have also been included. These will make the complex topics simple and easy to understand. This is probably for the first time that an English translation of this Agam is being published.

16. **Illustrated Jambudveep Prajnapti Sutra** **Price 600/-**

This is the sixth Upanga. The central theme of this Sutra is detailed description of Jambudveep. The list of topics discussed in this include inhabited areas of Jambudveep continent, mountains, rivers, Mahavideh area, Meru mountain, the sun, the moon, planets, and constellations moving around the Meru; regressive and progressive cycles of time; people like the fourteen Kulakars, the first Tirthankar Bhagavan Risabhadeva; and incidents like the conquest of the six divisions of the Bharat area. The colourful illustrations included in this volume will be helpful in understanding the geographical conditions of Jambudveep as well as the movement of the sun, the moon and planets. The readers will find the beautiful multicoloured illustrations of incidents from Bhagavan Risabhadeva's life very lively. This Sutra is a compendium of Jain geography, cosmology and history.

17. **Illustrated Prashnavyakaran Sutra** **Price 600/-**

Prashnavyakaran means the grammer of questions, solutions and answers. Human mind is always faced with the question that what are those terrible perversions caused by attachment and aversion that tarnish the soul and push it to a tormenting rebirth, and how to avoid them? In order to answer these questions Prashnavyakaran Sutra starts by giving detailed description of these perversions. In Agamic terms they are called Aashravas. They are - violence, falsity, stealing, non-celibacy and covetousness. This Sutra vividly explains the definitions of these Aashravas and the miseries caused by them.

In order to protect oneself from these five Aashravas, the tormenters of mind, five Samvars have been defined. They are - Ahimsa, truth, non-stealing, celibacy and non-covetousness. A soul energized by Samvar remains free of the perversions caused by attachment and aversion. The descriptions of Aashrava and Samvar encapsulate the gist of the whole sermon of the Jina.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- Till date 24 Agams (including three parts of Bhagavati) and Kalpa Sutra have been published in 23 books. The English translation makes it possible for those with passing knowledge of Prakrit and Hind to understand the content of Jain Agams including the religious practices as prevalent in ancient times. Also included in some of these editions are glossaries of Jain terms with their meaning in English.
- Due to its demand by libraries, Jnana Bhandars, ascetics and lay readers this unique series may soon go out of print.
- The publication of this Agam series has been inspired by Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padmachandra ji M. S. Its editor is his able disciple Uttar Bharatiya Pravartak Shri Amar Muni ji Maharaj. His team includes renowned scholar Shri Shrichand Surana as associate editor, Shri Surendra Bothara and Sushravak Shri Raj Kumar Jain, as English translators.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

सचित्र

श्री भगवती सूत्र

भाग 3

प्रवर्त्तक
श्री अमर मुनि

प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म.

प्रस्तुत सूत्र के सम्पादक श्री अमर मुनि जी म., श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रमणसंघ के एक तेजस्वी संत हैं।

जिनवाणी के परम उपासक गुरुभक्त श्री अमर मुनि जी का जन्म वि. सं. १९९३ भादवा सुदि ५ (सन् १९३६), क्वेटा (बलूचिस्तान) के मल्होत्रा परिवार में हुआ।

११ वर्ष की लघुवय में आप जैनागम रत्नाकर आचार्यसम्राट् श्री आत्माराम जी महाराज की चरण-शरण में आये और आचार्यदेव ने अपने प्रिय शिष्यानुशिष्य भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी महाराज को इस रत्न को तराशने/सँवारने का दायित्व सौंपा। गुरुदेव श्री भण्डारी जी महाराज ने अमर को सचमुच अमरता के पथ पर बढ़ा दिया। आपने संस्कृत-प्राकृत-आगम-व्याकरण-साहित्य आदि का अध्ययन करके एक ओजस्वी प्रवचनकार, तेजस्वी धर्म-प्रचारक तथा जैन आगम साहित्य के अध्येता और व्याख्याता के रूप में जैन समाज में प्रसिद्धि प्राप्त की।

आपश्री ने भगवती सूत्र (४ भाग), प्रश्नव्याकरण सूत्र (२ भाग), सूत्रकृतांग सूत्र (२ भाग) आदि आगमों की सुन्दर विस्तृत व्याख्याएँ की हैं।

Pravartak Shri Amar Muni Ji M.

The editor-in-chief of this Sutra, Pravartak Shri Amar Muni Ji M. is a brilliant ascetic affliated with Shri Vardhaman Sthanakvasi Jain Shraman Sangh.

A great worshiper of the tenets of Jina and a devotee of his Guru, Shri Amar Muni Ji was born in a Malhotra family of Queta (Baluchistan) on Bhadva Sudi 5th in the year 1993 V.

He took refuge with Jainagam Ratnakar Acharya Samrat Shri Atmaram Ji M. at an immature age of eleven years. Acharya Samrat entrusted his dear grand-disciple, Bhandari Shri Padmachandra Ji M. with the responsibility of cutting and polishing this raw gem. Gurudev Shri Bhandari Ji M. indeed, put Amar (immortal) on the path of immortality. He studied Sanskrit, Prakrit, Agams, Grammar and Literature to gain fame in the Jain society as an eloquent orator, an effective religions preacher and a scholar and interpreter of Jain Agam literature.

He has written nice and detailed commentaries of Bhagavati Sutra (in four

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सचित्र आगम साहित्य

PUBLISHER & DISTRIBUTORS :

Publisher :
Padam Prakashan
Padma Dham, Narela Mandi, Delhi - 110 040
email : padamprakashan@gmail.com

Distributors
Shree Diwakar Prakashan
A-7, Awagarh House, M.G. Road, Agra - 282 002
Phone : 0562-2851165, M-09319203291
email : sansuman21@rediffmail.com

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org